श्री राधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

(सचित्र 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम्)

अष्टम खण्ड

(षष्ठः स्कन्धः सप्तमः स्कन्धश्च)

दयालोक प्रकाशन संस्थान

महर्षि पतंजलि विद्या मन्दिर समिति

2, स्टैनली रोड, इलाहाबाद- 211004

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

(सचित्रं 'तत्त्वप्रबोधिनी' सरल-हिन्दी-टीका-सहितम्)

अष्टमः खण्डः

(एकादशः स्कन्धः द्वादशः स्कन्धश्च)

टीकाकर्त्री

श्रीमती दयाकान्ति देवी

धर्मपत्नी—श्रीलोकमणिलाल

दयालोक प्रकाशन संस्थान

महर्षि पतंजलि विद्या मन्दिर, समिति

२, स्टैनली रोड, इलाहाबाद–२११००४

श्रीमती दयाकान्ति देवी 'माता जी'
(1920–1995)

नम्र निवेदन

भगवान् का प्रतिपादक होने से इस पुराण का नाम 'भागवत' है। इस श्रीमद्भागवत पुराण के एकादश तथा द्वादश स्कन्धों में भगवान् की 'श्री' का विशद रूप से निरूपण किया गया है। इसके एकादश में विशेष रूप से 'मुक्ति' के साधन बताये गये हैं। तथा भगवान् के उनके परमानन्द और परम शान्ति प्रदान करने वाले उपदेशों का वर्णन है।

जिस प्रकार गीता में भगवान् ने भक्तश्रेष्ठ सखा अर्जुन की भक्ति पर रीझ कर उसके सामने अपना दिल खोल कर रख दिया है, इसी प्रकार एकादश में भक्त प्रवर सखा उद्धव को उन्होंने विस्तारपूर्वक विविध उपदेश दिये हैं। एकादश स्कन्ध के कुल ३१ अध्यायों में—अध्याय ७ से लेकर २६ तक पूरे तेईस अध्यायों में केवल श्रीकृष्ण-उद्धव-संवाद ही है। इसको 'उद्धव-गीता कहा जाता है। इसके सिवा श्रीवासुदेव-नारद संवाद में राजा निमि और नौ योगीश्वरों का भी बड़ा ही उपदेशपूर्ण संवाद है। एकादश स्कन्ध के उपदेशों की वर्णन-शैली बड़ी ही सुगम, सुबोध और हृदयग्राही है। अवधूत के चौबीस गुरुओं का इतिहास इसी में है। इस स्कन्ध के उपदेशों में से कुछ को भी कार्यान्वित कर लेने से मनुष्यजीवन सहज ही सफल हो सकता है। इसीसे महात्माओं ने इसको 'भक्ति-स्कन्ध' भी कहा गया है।

इस स्कन्ध में भक्ति की महिमा सर्वत्र कही गयी है। प्रीति रस से युक्त होकर सर्वात्मा भगवान् में वृत्ति का हो जाना ही भक्ति है।

अयं हि सर्वकल्पानां सध्रीचीनो मतो मम।
मद्भावः सर्वभूतेषु मनोवाक्काय वृत्तिभिः।।

द्वादश स्कन्ध को 'निरोध' या 'आश्रय' कहते हैं। इसमें विशद रूप से प्रलय का वर्णन है। अन्त में माया का वर्णन करके ब्रह्म तथा आत्मा की एकता दिखायी गयी है। जैसे इसका प्रारम्भ **'सत्यं परं धीमहि'** कहकर ब्रह्म के ध्यान से हुआ है, उसी तरह समाप्ति भी इसी **'सत्यं परं धीमहि'** पद से की गयी है।

अन्त में अपने नाथ परमेश्वर से जन्म-जन्म में भक्ति की मांग तथा भगवान् के नाम संकीर्तन को पापनाशक व उनको समर्पित प्रणाम को दुःख नाशक कहकर परब्रह्म स्वरूप परमात्मा को प्रणाम किया गया है।

भवे भवे यथा भक्तिः पादयोस्तव जायते।
तथा कुरुष्व देवेश नाथस्त्वं नो यतः प्रभो।।
नामसङ्कीर्तनं यस्य सर्वपाप प्रणाशनम्।
प्रणामो दुःखशमनस्तं नमामि हरिं परम्।।

इस भागवत ग्रन्थ का श्रवण-मनन तथा नियमित पारायण करने वालों को भगवान् अपनी भक्ति प्रदान करें। यही उनके चरणों में निवेदन है।

गंगा दशहरा
संवत् २०५२, ९ जून १९९५

निवेदिका
दयाकान्तिदेवी

प्रकाशकीय

महर्षि वेदव्यास प्रणीत श्रीमद्भागवतमहापुराण का यह अष्टम खण्ड प्रकाशित करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष हो रहा है। इस ग्रन्थ में प्रत्येक श्लोक के पदच्छेद के साथ-साथ प्रत्येक शब्द का पृथक-पृथक अर्थ तथा श्लोकार्थ सहित तत्त्वबोधिनी सरल हिन्दी टीका सम्पूर्ण रूप में प्रकाशित हो रही है।

मन में इतना ही हार्दिक दुःख है कि मेरी मातृतुल्या सासजी पूज्या दयाकान्ति देवी जी, जो इस महापुराण की टीकाकर्त्री हैं, अब हमारे बीच नहीं हैं।

गत दस वर्षों से इस ग्रन्थ के प्रकाशन में एक-एक श्लोक को अपने हस्तलिपि में अर्थ सहित तैयार करने में वे अहर्निश, सतत साधिका की तरह समर्पित रही हैं। ये आठ खण्ड उनकी अमर कीर्ति के पुष्ट प्रमाण हैं। इस गुरुतर कार्य में मेरे पूज्य श्वसुर स्वर्गीय श्री लोकमणि लाल जी का उन्हें सदैव प्रोत्साहन एवं सहयोग प्राप्त था। आचार्य तारिणीश झा, पं० आजाद मिश्र एवं डा० सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी का अमूल्य योगदान इन खण्डों के प्रकाशन में रहा है, इनके प्रति मैं हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। ग्रन्थ के सुन्दर प्रकाशन का श्रेय शाकुन्तल मुद्रणालय को है। राष्ट्रपति सम्मानित डॉ० चन्द्रभानु त्रिपाठी का प्रबुद्ध मार्गदर्शन प्राप्त हुआ तथा श्री उपेन्द्र त्रिपाठी जी ने इस ग्रन्थ के मुद्रण में अपनी पूर्ण निष्ठा एवं लगन का अविस्मरणीय परिचय दिया है। करुणा-वरुणालय भगवान् की असीम अनुकम्पा से ही इस महापुराण के टीका लेखन का यह महायज्ञ पूर्ण हुआ है।

इस संस्करण के प्रस्तुत अष्टम भाग में दो स्कन्ध रखे गये हैं—एकादश तथा द्वादश। भागवतमहापुराण भारतीय संस्कृति का एक विश्वकोश है। भारत के जनमानस को सुसंस्कारित करने एवं उनके मानसिक ज्ञान क्षितिज को विस्तृत करने में इस महापुराण का अशेष महत्व है।

ऐसे महनीय "प्रस्थान चतुष्टय" में समादृत महाग्रन्थ का पदच्छेद तथा हिन्दी अर्थ सहित प्रकाशन कर हमारा परिवार गौरव का अनुभव कर रहा है।

कृष्णजन्माष्टमी
५–९–१९९६

डा० कृष्णा गुप्ता
सचिव
महर्षि पतंजलि विद्या मंदिर समति, इलाहाबाद

—: ★ :—

श्रीहरिः

विषय-सूची

एकादश स्कन्ध

१. प्रकाशकीय   २. नम्र निवेदन   ३. विषय-सूची

द्वादश स्कन्ध

-:★:-

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

एकादशः स्कन्धः

सगुणो निर्गुणो भावः शून्याशून्यात्मकस्तथा ।
लीलाविलासो यस्यैव तं वन्दे बालवत्सपम् ॥

शुकदेवजी से—राजापरीक्षित का प्रश्न

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

प्रथमो अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीबादरायणिरुवाच—कृत्वा दैत्यवधं कृष्णः सरामो यदुभिर्वृतः ।
भुवोऽवतारयद् भारं जविष्ठं जनयन् कलिम् ॥१॥

पदच्छेद— कृत्वा दैत्यवधम् कृष्णः सरामो यदुभिः वृतः ।
भुवः अवतारयत् भारम् जविष्ठम् जनयन् कलिम् ॥

शब्दार्थ—

कृत्वा	६.	किया (और)	भुवः	१०.	पृथ्वी का
दैत्यवधम्	५.	दैत्यों का संहार	अवतारयत्	१२.	उतार दिया ।
कृष्णः	१.	भगवान् श्रीकृष्ण ने	भारम्	११.	भार
सरामो	४.	बलराम जी को साथ लेकर	जविष्ठम्	७.	अत्यन्त प्रबल
यदुभिः	२.	यदुवंशियों के साथ	जनयन्	९.	उत्पन्न करके
वृतः ।	३.	मिलकर (तथा)	कलिम् ॥	८.	कलह

श्लोकार्थ—हे परीक्षित् ! भगवान् श्री कृष्ण ने यदुवंशियों के साथ मिलकर तथा बलराम जी को साथ लेकर दैत्यों का संहार किया और अत्यन्त प्रबल कलह उत्पन्न करके पृथ्वी का भार उतार दिया ॥

द्वितीयः श्लोकः

ये कोपिताः सुबहु पाण्डुसुताः सपत्नैर्दुर्द्यूतहेलनकचग्रहणादिभिस्तान् ।
कृत्वा निमित्तमितरेतरः समेतान् हत्वा नृपान् निरहरत् क्षितिभारमीशः ॥२॥

पदच्छेद — ये कोपिताः सुबहुपाण्डुसुताः सपत्नैः दुर्द्यूत हेलन कचग्रहण आदिभिः तान् ।
कृत्वा निमित्तम् इतर-इतरतः समेतान् हत्वा नृपान् निरहरत् क्षितिभारम् ईशः ॥

शब्दार्थ—

ये	५.	जो	कृत्वानिमित्तम्	११.	निमित्त बनाकर
कोपिता	७.	क्रोधित कर दिया था	इतर-इतरतः	१०.	परस्पर
सुबहुपाण्डुसुताः	६.	पाण्डु पुत्रों को अत्यन्त	समेतान्	९.	एकत्रित करके
सपत्नैः दुर्द्यूत	१.	कौरवों ने कपट पूर्ण जुये से	हत्वा	१४.	मरवा कर
हेलन	२.	तरह-तरह के अपमानों से	नृपान्	१३.	उन्हीं राजाओं को
कचग्रहण	३.	द्रौपदी के केश खींचने	निरहरत्	१६.	हल्का कर दिया ।
आदिभिः	४.	आदि अत्याचारों से	क्षितिभारम्	१५.	पृथ्वी का भार
तान् ।	८.	उन्हें ही	ईशः ॥	१२.	भगवान् श्रीकृष्ण ने

श्लोकार्थ—कौरवों ने कपट पूर्ण जुये से तरह-तरह के अपमानों से द्रौपदी के केश खींचने आदि अत्याचारों से जो पाण्डुपुत्रों को अत्यन्त क्रोधित कर दिया था । उन्हें ही एकत्रित करके और परस्पर निमित्त बनाकर भगवान् श्रीकृष्ण ने उन्हीं राजाओं को मरवा कर पृथ्वी का भार हल्का कर दिया ॥

तृतीयः श्लोकः

भूभारराजपृतना यदुभिर्निरस्य गुप्तैः स्वबाहुभिरचिन्तयदप्रमेयः ।
मन्येऽवनेर्ननु गतोऽप्यगतं हि भारं यद् यादवं कुलमहो अविषह्यमास्ते ॥३॥

पदच्छेद— भूभार राजपृतना यदुभिः निरस्य गुप्तैः स्वबाहुभिः अचिन्तयत् अप्रमेयः ।
मन्ये अवनेः ननु गतः अपि अगतम् हिभारम्यत् यादवम्कुलम् अहोअविषह्यम् आस्ते ॥

शब्दार्थ—

भूभार	४. पृथ्वी के भार रूप	मन्ये	१२. मैं ऐसा मानता हूँ कि
राजपृतना	५. राजा और उनकी सेना का	अवनेः	९. पृथ्वी का भार
यदुभिः	३. यदुवंशियों के द्वारा	ननु	११: क्योंकि
निरस्य	६. विनाश करके	गतः अपि	१०. दूर नहीं हुआ है
गुप्तैः	२. सुरक्षित	अगतम्	१४. मेरी दृष्टि से दूर नहीं हुआ है
स्वबाहुभिः	१. अपने बाहुवल से	हिभारम्यत्	१३. वह भार
अचिन्तयत्	८. सोचा कि	यादवम्कुलम्	१६. यदुवंश तो अभी
अप्रमेयः ।	७. ज्ञान के विषय न होने वाले श्रीकृष्ण ने	अहोअविषह्यम्	१५. अहोअजय
		आस्ते ॥	१७. पृथ्वी पर विद्यमान है

श्लोकार्थ—अपने बाहुवल से सुरक्षित यदुवंशियों के द्वारा पृथ्वी के भार रूप राजा और उनकी सेना का विनाश करके ज्ञान के विषय न होने वाले श्रीकृष्ण ने सोचा कि पृथ्वी का भार दूर नहीं हुआ है। क्योंकि मैं ऐसा मानता हूँ कि वह भार मेरी दृष्टि से दूर नहीं हुआ है। अहो अजेय यदुवंश तो अभी पृथ्वी पर विद्यमान है।

चतुर्थः श्लोकः

नैवान्यतः परिभवोऽस्य भवेत् कथञ्चिन्मत्संश्रयस्य विभवोन्नहनस्य नित्य ।
अन्तःकलिं यदुकुलस्य विधाय वेणुस्तम्बस्य वह्निमिव शान्तिमुपैमि धाम ॥४॥

पदच्छेद—नैव अन्यतः परिभवः अस्य भवेत् कथञ्चित् मत् संश्रयस्य विभव उन्नहनस्य नित्यम् ।
अन्तः कलिम् यदुकुलस्य विधाय वेणुः स्तम्बस्य वह्निम्इव शान्तिम् उपैमि धाम ॥

शब्दार्थ—

नैव	७. नहीं	अन्तः कलिम्	१३. अन्दर कलह
अन्यतः	४. अन्य किसी से भी	यदुकुलस्य	१२. यदुवंश के
परिभवः अस्य	६. इसकी पराजय	विधाय	१४. उत्पन्न करके
भवेत्	८. हो सकती है (अतः)	वेणुः	९. बांस के
कथञ्चित्	५. किसी प्रकार	स्तम्बस्य	१०. वन में लगने वाली
मत् संश्रयस्य	१. यह यदुवंश मेरे आश्रित है	वह्निम्इव	११. अग्नि के समान
विभव उन्नहनस्य	२. विशाल वैभव से उच्छृङ्खल है	शान्तिम्	१५. शान्ति प्राप्त करके
नित्यम् ।	३. नित्य	उपैमिधाम ॥	१६. अपने धाम जाऊँगा ।

श्लोकार्थ—यह यदुवंश मेरे आश्रित है। विशाल वैभव से नित्य उच्छृङ्खल है, अन्य किसी से भी किसी प्रकार इसकी पराजय नहीं हो सकती है। अतः बांस के वन में लगने वाली अग्नि के समान यदुवंश के अन्दर कलह उत्पन्न करके शान्ति प्राप्त करके अपने धाम जाऊँगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

एवं व्यवसितो राजन् सत्यसङ्कल्प ईश्वरः।
शापव्याजेन विप्राणां संजह्रे स्वकुलं विभुः ॥५॥

पदच्छेद— एवम् व्यवसितो राजन् सत्य सङ्कल्प ईश्वरः।
शाप व्याजेन विप्राणाम् संजह्रे स्वकुलम् विभुः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	६.	इस प्रकार	शाप	९.	शाप के
व्यवसितो	७.	निश्चय करके	व्याजेन	१०.	बहाने
राजन्	१.	हे राजन् !	विप्राणाम्	८.	ब्राह्मणों के
सत्य	२.	सत्य	संजह्रे	१२.	संहार कर डाला
सङ्कल्प	३.	सङ्कल्प	स्वकुलम्	११.	अपने ही वंश का
ईश्वरः।	५.	परमात्मा ने	विभुः ॥	४.	सर्वव्यापी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सत्य सङ्कल्प सर्वव्यापी परमात्मा ने इस प्रकार निश्चय करके ब्राह्मणों के शाप के बहाने अपने ही वंश का संहार कर डाला ॥

षष्ठः श्लोकः

स्वमूर्त्या लोकलावण्यनिर्मुक्त्या लोचनं नृणाम्।
गीर्भिस्ताः स्मरतां चित्तं पदैस्तानीक्षतां क्रियाः ॥६॥

पदच्छेद— स्वमूर्त्या लोक लावण्य निर्मुक्त्या लोचनम् नृणाम्।
गीर्भिस्ताः स्मरताम् चित्तम् पदैः तानीक्षताम् क्रियाः ॥

शब्दार्थ—

स्वमूर्त्या	४.	अपनी मूर्ति से वे	गीर्भिस्ताः	७.	वाणी के द्वारा
लोक	१.	त्रिलोकी के	स्मरताम्	८.	स्मरण करने वालों का
लावण्य	२.	सौन्दर्य का	चित्तम्	९.	चित्त और
निर्मुक्त्या	३	तिरस्कार करने वाली	पदैः	१०.	चरण चिह्नों का
लोचनम्	६.	नयनों को आकर्षित कर रहे थे	तानीक्षताम्	११.	दर्शन करने वालों की
नृणाम्।	५.	लोगों के	क्रियाः ॥	१२.	बुद्धि का हरण कर लिया

श्लोकार्थ—त्रिलोकी के सौन्दर्य का तिरस्कार करने वाली अपनी मूर्ति से वे लोगों के नयनों को आकर्षित कर रहे थे। वाणी के द्वारा स्मरण करने वालों का चित्त और चरण चिह्नों का दर्शन करने वालों की बुद्धि का हरण कर लिया ॥

सप्तमः श्लोकः

आच्छिद्य कीर्तिं सुश्लोकां वितत्य ह्यञ्जसा नु कौ ।
तमोऽनया तरिष्यन्तीत्यगात् स्वं पदमीश्वरः ॥७॥

पदच्छेद— आच्छिद्य कीर्ति सुश्लोकाम् वितत्य हि अञ्जसा नु कौ ।
तमः अनया तरिष्यन्ति इति अगात् स्वम् पदम् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

आच्छिद्य	४.	दूर कर	तमः	८.	लोग अज्ञान के अन्धकार से
कीर्तिम्	३.	अपनी कीर्ति का	अनया	७.	इसका गान करके
सुश्लोकाम्	५.	जिसका सुन्दर श्लोकों में	तरिष्यन्ति इति	९.	पार हो जायेंगे ऐसा सोचकर
वितत्य	६.	विस्तार दिया है	अगात्	१२.	चले गये
हि अञ्जसा	१.	उन्होंने अनायास ही	स्वम् पदम्	११.	अपने धाम को
नु कौ ।	२.	पृथ्वी में	ईश्वरः ॥	१०.	परम ऐश्वर्यशाली श्रीकृष्ण

श्लोकार्थ—उन्होंने अनायास ही पृथ्वी में अपनी कीर्ति का विस्तार कर दिया । जिसका सुन्दर श्लोकों में विस्तार कर दिया है । इसका गान करके लोग अज्ञान के अन्धकार से पार जायेंगे, ऐसा सोचकर परम ऐश्वर्यशाली श्रीकृष्ण अपने धाम को चले गये ॥

अष्टमः श्लोकः

राजोवाच— **ब्रह्मण्यानां वदान्यानां नित्यं वृद्धोपसेविनाम् ।**
विप्रशापः कथमभूद् वृष्णीनां कृष्णचेतसाम् ॥८॥

पदच्छेद— ब्रह्मण्यानाम् वदान्यानाम् नित्यम् वृद्ध उपसेविनाम् ।
विप्रशापः कथम् अभूत् वृष्णीनाम् कृष्णचेतसाम् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मण्यानाम्	३.	ब्राह्मण भक्त	विप्रशापः	८.	उनसे ब्राह्मणों का अपराध
वदान्यानाम्	४.	बड़े उदार और	कथम्	९.	कैसे
नित्यम्	६.	नित्य-निरन्तर	अभूत्	१०.	हो गया
वृद्ध	५.	कुल-वृद्धों की	वृष्णीनाम्	१.	यदुवंशी तो
उपसेविनाम् ।	७.	सेवा करने वाले थे	कृष्णचेतसाम् ॥	२.	श्रीकृष्ण में तन्मय चित्त वाले

श्लोकार्थ—यदुवंशी तो श्रीकृष्ण में तन्मय चित्त वाले, ब्राह्मण भक्त, बड़े उदार और नित्य-निरन्तर कुल वृद्धों की सेवा करने वाले थे । उनसे ब्राह्मणों का अपराध कैसे हो गया ॥

नवमः श्लोकः

यन्निमित्तः स वै शापो यादृशो द्विजसत्तम ।
कथमेकात्मनां भेद एतत् सर्वं वदस्व मे ॥९॥

पदच्छेद— यत् निमित्तः सः वै शापः यादृशः द्विजसत्तमः ।
कथम् एक आत्मनाम् भेदः एतत् सर्वम् वदस्व मे ॥

शब्दार्थ—

यत्	४. जो	कथम्	१०. कैसे हुई
निमित्तः	५. कारण था और	एक	७. द्वेष रहित
सः वै	२. उस	आत्मनाम्	८. यदुवंशियों में
शापः	३. शाप का	भेदः	९. भेद दृष्टि
यादृशः	६. जो स्वरूप था (तथा)	एतत् सर्वम्	११. यह सब
द्विजसत्तमः ।	१. हे श्रेष्ठ विप्रवर !	वदस्व मे ॥	१२. आप मुझे बताइये

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ विप्रवर ! उस शाप का जो कारण था । और जो स्वरूप था, तथा द्वेष रहित यदुवंशियों में भेद दृष्टि कैसे हुई । यह सब आप मुझे बताइये ॥

दशमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—

बिभ्रद् वपुः सकलसुन्दरसन्निवेशं कर्माचरन् भुवि सुमङ्गलमाप्तकामः ।
आस्थाय धाम रममाण उदारकीर्तिः संहर्तुमैच्छत कुलं स्थितकृत्यशेषः ॥१०॥

पदच्छेद—बिभ्रद् वपुः सकलसुन्दर सन्निवेशम् कर्म आचरन् भुवि सुमङ्गलम् आप्तकामः ।
आस्थाय धाम रममाण उदारकीर्तिः संहर्तुम् ऐच्छत कुलम् स्थितकृत्यशेषः ॥

शब्दार्थ—

बिभ्रद्	४. धारण करके	आस्थाय	१०. रह कर
वपुः	३. शरीर को	धाम	९. द्वारका धाम में
सकलसुन्दर	१. समस्त सुन्दर	रममाण	११. क्रीडा करते रहे (उन्होंने)
सन्निवेशम्	२. समावेश वाले	उदारकीर्तिः	१२. कीर्ति की स्थापना और
कर्म आचरन्	७. कर्मों का आचरण किया ।	संहर्तुम्	१४. संहार की
भुवि	५. पृथ्वी में	ऐच्छत	१५. इच्छा की (क्योंकि अब)
सुमङ्गलम्	६. कल्याणकारी	कुलम्	१३. अन्त में कुल के
आप्तकामः ।	८. पूर्णकाम प्रभु	स्थितकृत्यशेषः ॥	१६. इतना ही कार्य शेष रह गया था

श्लोकार्थ—समस्त सुन्दर समावेश वाले शरीर को धारण करके पृथ्वी में कल्याणकारी कर्मों का आचरण किया । पूर्ण काम प्रभु द्वारका धाम में रह कर क्रीडा करते रहे, और उन्होंने कीर्ति की स्थापना और अन्त में कुल के संहार की इच्छा की, क्योंकि अब इतना ही कार्य शेष रह गया था ॥

एकादशः श्लोकः

कर्माणि पुण्यनिवहानि सुमङ्गलानि गायज्जगत्कलिमलापहराणि कृत्वा ।
कालात्मना निवसता यदुदेवगेहे पिण्डारकं समगमन् मुनयो निसृष्टाः ॥११॥

पदच्छेद—कर्माणि पुण्य निवहानि सुमङ्गलानि गायन् जगत् कलिमल अपहराणि कृत्वा ।
काल आत्मना निवसता यदुदेव गेहे पिण्डारकम् समगमन् मुनयो निसृष्टाः ॥

शब्दार्थ—

कर्माणि	४.	कर्मों को	काल आत्मना	९.	कालस्वरूप श्रीकृष्ण
पुण्य	१.	उन्होंने पुण्य	निवसता	१२.	निवास कर रहे थे उस समय
निवहानि	२.	दायक	यदुदेव	१०.	वसुदेव के
सुमङ्गलानि	३.	मङ्गलमय	गेहे	११.	घर में
गायन् जगत्	६.	गान करने वाले संसार के	पिण्डारकम्	१५.	पिण्डारक क्षेत्र में
कलिमल	७.	कलियुग के मलों से	समगमन्	१६.	जाकर रहने लगे थे
अपहराणि	८.	दूर हो जाते हैं	मुनयो	१४.	बड़े-बड़े ऋषि
कृत्वा ।	५.	किया जिनका	निसृष्टाः ॥	१३.	समस्त

श्लोकार्थ—उन्होंने पुण्य दायक मङ्गलमय कर्मों को किया, जिनका गान करने वाले संसार के कलियुग के मलों से दूर हो जाते हैं। काल स्वरूप श्रीकृष्ण वसुदेव के घर में निवास कर रहे थे। उस समय समस्त बड़े-बड़े ऋषि पिण्डारक क्षेत्र में जाकर रहने लगे थे ॥

द्वादशः श्लोकः

विश्वामित्रोऽसितः कण्वो दुर्वासा भृगुरङ्गिराः ।
कश्यपो वामदेवोऽत्रिर्वसिष्ठो नारदादयः ॥१२॥

पदच्छेद— विश्वामित्रो असितः कण्वः दुर्वासा भृगुः अङ्गिराः ।
कश्यपः वामदेवो अत्रिः वसिष्ठः नारदः आदयः ॥

शब्दार्थ—

विश्वामित्रो	१.	विश्वामित्र	कश्यपः	७.	कश्यप
असितः	२.	असित	वामदेवो	८.	वामदेव
कण्वः	३.	कण्व	अत्रिः	९.	अत्रि
दुर्वासा	४.	दुर्वासा	वसिष्ठः	१०.	वशिष्ठ और
भृगुः	५.	भृगुः	नारद	११.	नारद
अङ्गिराः ।	६.	अङ्गिरा	आदयः ॥	१२.	आदि थे (सब वहीं रहने लगे)

श्लोकार्थ—जिनमें विश्वामित्र, असित, कण्व, दुर्वासा, भृगु, अङ्गिरा, कश्यप, वामदेव, अत्रि, वशिष्ठ और नारद आदि थे। सब वहीं रहने लगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

क्रीडन्तस्तानुपव्रज्य कुमारा यदुनन्दनाः ।
उपसंगृह्य पप्रच्छुरविनीता विनीतवत् ॥१३॥

पदच्छेद— क्रीडन्तः तान् उपव्रज्य कुमारा यदुनन्दनाः ।
उपसंगृह्य पप्रच्छुः अविनीता विनीवतत् ॥

शब्दार्थ—

क्रीडन्तः	४.	खेलते-खेलते	उपसंगृह्य	७	पास जाकर
तान्	५.	उनके	पप्रच्छुः	१०.	उनसे प्रश्न किया
उपव्रज्य	६.	पास जा पहुँचे	अविनीता	२.	कुछ उद्दण्ड
कुमारा	३.	कुमार	विनीत्	८.	विनम्रता
यदुनन्दनाः ।	१.	(एक दिन) यदुवंश के	वत् ॥	९.	पूर्वक

श्लोकार्थ—एक दिन यदुवंश के कुछ उद्दण्ड कुमार खेलते-खेलते उनके पास जा पहुँचे। पास जाकर विनम्रता पूर्वक उनसे प्रश्न किया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

ते वेषयित्वा स्त्रीवेषैः साम्बं जाम्बवतीसुतम् ।
एषा पृच्छति वो विप्रा अन्तर्वत्न्यसितेक्षणा ॥१४॥

पदच्छेद— ते वेषयित्वा स्त्रीवेषैः साम्बम् जाम्बवती सुतम् ।
एषा पृच्छति वः विप्राः अन्तर्वत्नी असितईक्षणा ॥

शब्दार्थ—

ते	१.	वे	एषा	८.	यह
वेषयित्वा	६.	सजा कर ले गये (और बोले)	पृच्छति	१२.	पूछना चाहती है
स्त्रीवेषैः	५.	स्त्री के वेश में	वः	११.	आप लोगों से कुछ
साम्बम्	४.	साम्ब को	विप्राः	७.	हे ब्राह्मणो
जाम्बवती	२.	जाम्बवती	अन्तर्वत्नी	१०.	गर्भवती स्त्री
सुतम् ।	३.	नन्दन	असितईक्षणा ॥	९.	कजरारी आँखों वाली

श्लोकार्थ—वे जाम्बवती नन्दन साम्ब को स्त्री के वेष में सजा कर ले गये, और बोले। हे ब्राह्मणो ! यह कजरारी आँखों वाली गर्भवती स्त्री आप लोगों से कुछ पूछना चाहती है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

प्रष्टुं विलज्जती साक्षात् प्रब्रूतामोघदर्शनाः ।
प्रसोष्यन्ती पुत्रकामा किंस्वित् सञ्जनयिष्यति ॥१५॥

पदच्छेद— प्रष्टुम् विलज्जती साक्षात् प्रब्रूत अमोघ दर्शनाः ।
प्रसोष्यन्ती पुत्रकामा किम् स्वित् सञ्जनयिष्यति ॥

शब्दार्थ—

प्रष्टुम्	२.	पूछने में	प्रसोष्यन्ती	६.	इसका प्रसव निकट है (अतः)
विलज्जती	३.	सकुचाती है	पुत्रकामा	७.	पुत्र की कामना वाली
साक्षात्	१.	यह स्वयम्	किम्	९.	क्या
प्रब्रूत	१२.	सो आप बताइये	स्वित्	८.	यह
अमोघ	५.	अमोघ है	सञ्जन·	१०.	उत्पन्न
दर्शनाः ।	४.	आप का ज्ञान	यिष्यति ॥	११.	करेगी

श्लोकार्थ—यह स्वयम् पूछने में सकुचाती है, आपका ज्ञान अमोघ है । इसका प्रसव निकट है । अतः पुत्र की कामना वाली यह क्या उत्पन्न करेगी । सो आप बताइये ॥

षोडशः श्लोकः

एवं प्रलब्धा मुनयस्तानूचुः कुपिता नृप ।
जनयिष्यति वो मन्दा मुसलं कुलनाशनम् ॥१६॥

पदच्छेद— एवम् प्रलब्धा मुनयः तान् ऊचुःकुपिता नृप ।
जनयिष्यति वो मन्दा मुसलम् कुलनाशनम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	४.	इस प्रकार	जनयिष्यति	९.	उत्पन्न करेगी (जो) तुम्हारे
प्रलब्धा	५.	धोखा देना चाहा तब	वो	१०.	तुम्हारे
मुनयः	३.	मुनियों को	मन्दा	७.	अरे मूर्खों !
तान्	२.	जब उन कुमारों ने	मुसलम्	८.	ये एक मूसल
ऊचुःकुपिताः	६.	वे क्रोधित होकर बोले	कुल-	११.	कुल का
नृप ।	१.	हे राजन् !	नाशनम् ॥	१२.	नाश करने वाला होगा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जब उन कुमारों ने मुनियों को इस प्रकार धोखा देना चाहा, तब वे क्रोधित होकर बोले । अरे मूर्खों ! ये एक मूसल उत्पन्न करेगी । जो तुम्हारे कुल का नाश करने वाला होगा ॥

सप्तदशः श्लोकः

तच्छ्रुत्वा तेऽतिसन्त्रस्ता विमुच्य सहसोदरम् ।
साम्बस्य ददृशुस्तस्मिन् मुसलं खल्वयस्मयम् ॥१७॥

पदच्छेद— तत् श्रुत्वा तेऽति सन्त्रस्ता विमुच्य सहसा उदरम् ।
साम्बस्य ददृशुः तस्मिन् मुसलम् खलु अयस्मयम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. मुनियों की यह बात	साम्बस्य	५. साम्ब का
श्रुत्वा तेऽति	२. सुनकर वे बालक	ददृशुः	८. देखा
सन्त्रस्ता	३. बहुत ही डर गये	तस्मिन्	९. तो उसमें
विमुच्य	७. खोलकर	मुसलम् खलु	११. मूसल निकला
सहसा	४. उन्होंने तुरन्त	अयस्मयम् ॥	१०. एक लोहे का
उदरम् ।	६. पेट		

श्लोकार्थ—मुनियों की यह बात सुनकर वे बालक बहुत ही डर गये । उन्होंने तुरन्त साम्ब का पेट खोल कर देखा तो उसमें एक लोहे का मूसल निकला ॥

अष्टादशः श्लोकः

किं कृतं मन्दभाग्यैर्नः किं वदिष्यन्ति नो जनाः ।
इति विह्वलिता गेहानादाय मुसलं ययुः ॥१८॥

पदच्छेद— किम् कृतम् मन्द भाग्यैः नः किम् वदिष्यन्ति नः जनाः ।
इति विह्वलिता गेहान् आदाय मुसलम् ययुः ॥

शब्दार्थ—

किम् कृतम्	४. यह क्या किया	इति	७. इस प्रकार
मन्द	२. मन्द	विह्वलिता	८. व्याकुल होते हुये
भाग्यैः	३. भाग्य लोगों ने	गेहान्	११. अपने निवास स्थान में
नः	१. हम	आदाय	१०. लेकर
किम् वदिष्यन्ति	६. क्या कहेंगे	मुसलम्	९. वे मूसल को
न जनाः ।	५. लोग हमें	ययुः ॥	१२. गये

श्लोकार्थ—हम मन्द भाग्य लोगों ने यह क्या किया, लोग हमें क्या कहेंगे । इस प्रकार व्याकुल होते हुये वे मूसल को लेकर अपने निवास स्थान में गये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तच्चोपनीय सदसि परिम्लानमुखश्रियः ।
राज्ञ आवेदयाञ्चक्रुः सर्वयादवसन्निधौ ॥१६॥

पदच्छेद— तत् च उपनीय सदसि परिम्लान मुख श्रियः ।
राज्ञ आवेदयान् चक्रुः सर्व यादव सन्निधौ ॥

शब्दार्थ—

तत् च	४.	उन्होंने उस मूसल को	राज्ञ	१०.	राजा उग्रसेन से
उपनीय	५.	लेकर	आवेदयान्	११.	सारी घटना
सदसि	६.	सभा में रख दिया (और)	चक्रुः	१२.	कह सुनायी
परिम्लान	३.	फीकी पड़ गई थी	सर्व	६.	समस्त
मुख	१.	उनके मुख की	यादव	७.	यादवों के
श्रियः ।	२.	कान्ति	सन्निधौ ॥	८.	सामने

श्लोकार्थ—उनके मुख की कान्ति फीकी पड़ गई थी । उन्होंने उस मूसल को लेकर समस्त यादवों के सामने सभा में रख दिया । और राजा उग्रसेन से सारी घटना कह सुनाई ॥

विंशः श्लोकः

श्रुत्वामोघं विप्रशापं दृष्ट्वा च मुसलं नृप ।
विस्मिता भयसन्त्रस्ता बभूवुर्द्वारकौकसः ॥२०॥

पदच्छेद— श्रुत्वा अमोघम् विप्रशापम् दृष्ट्वा च मुसलम् नृप ।
विस्मिता भय सन्त्रस्ताः बभूवुः द्वारका ओकसः ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	४.	सुनकर	विस्मिता	६.	आश्चर्य चकित तथा
अमोघम्	२.	झूठा न होने वाले	भय	१०.	भय
विप्रशापम्	३.	ब्राह्मणों के शाप को	सन्त्रस्ताः	११.	भीत
दृष्ट्वा	६.	देखकर	बभूवुः	१२.	हो गये
च मुसलम्	५.	और उस मूसल को	द्वारका	७.	द्वारका
नृप ।	१.	हे राजन् !	ओकसः ॥	८.	वासी

श्लोकार्थ - हे राजन् ! झूठा न होने वाले उस शाप को सुनकर और उस मूसल को देखकर द्वारका-वासी आश्चर्य चकित तथा भयभीत हो गये ॥

एकविंशः श्लोकः

तच्चूर्णयित्वा मुसलं यदुराजः स आहुकः ।
समुद्रसलिले प्रास्यल्लोहं चास्यावशेषितम् ॥२१॥

पदच्छेद— तत् चूर्णयित्वा मुसलम् यदुराजः सः आहुकः ।
समुद्र सलिले प्रास्यत् लोहम् च अस्य अवशेषितम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	६.	उस चूरे को	समुद्र सलिले	११.	समुद्र के जल में
चूर्णयित्वा	५.	चूरा-चूरा कर डाला	प्रास्यत्	१२.	फेंकवा दिया
मुसलम्	४.	मूसल का	लोहम्	१०.	लोहे के छोटे टुकड़े को
यदुराजः	१.	यदुराज	च	७.	और
सः	३.	उस	अस्य	८.	उसके
आहुकः ।	२.	उग्रसेन ने	अवशेषितम् ॥	९.	बचे हुये

श्लोकार्थ—यदुराज उग्रसेन ने उस मूसल का चूरा-चूरा करा डाला । उस चूरे को और उसके बचे हुये लोहे के छोटे टुकड़े को समुद्र के जल में फेंकवा दिया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

कश्चिन्मत्स्योऽग्रसील्लोहं चूर्णानि तरलैस्ततः ।
उह्यमानानि वेलायां लग्नान्यासन् किलैरकाः ॥२२॥

पदच्छेद— कश्चित् मत्स्यः अग्रसीत् लोहम् चूर्णानि तरलैः ततः ।
उह्यमानानि वेलायाम् लग्नानि आसन् किल एरकाः ॥

शब्दार्थ—

कश्चित्	२.	कोई	उह्यमानानि	७.	बह-बह कर
मत्स्यः	३.	मछली	वेलायाम्	८.	समुद्र के किनारे
अग्रसीत्	४.	निगल गयी	लग्नानि	९.	आ लगा (वह)
लोहम्	१.	लोहे के टुकड़े को	आसन् किल	११.	उग आया
चूर्णानि तरलैः	६.	चूरा तरंगों के साथ	एरकाः ॥	१०.	एरका नाम वाली घास के रूप में
ततः ।	५.	वह			

श्लोकार्थ—लोहे के टुकड़े को कोई मछली निगल गयी, वह चूरा तरंगों के साथ बह-बह कर समुद्र के किनारे आ लगा । वह एरका नाम वाली घास के रूप में उग आया ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

मत्स्यो गृहीतो मत्स्यघ्नैर्जालेनान्यैः सहार्णवे ।
तस्योदरगतं लोहं स शल्ये लुब्धकोऽकरोत् ॥२३॥

पदच्छेद— मत्स्यः गृहीतः मत्स्यघ्नैः जालेन अन्यैः सह अर्णवे ।
तस्य उदर गतम् लोहम् सशल्ये लुब्धकः अकरोत् ॥

शब्दार्थ—

मत्स्यः	५. उस मछली को भी	तस्यउदर	७.	उसके उदर से
गृहीतः	६. पकड़ लिया	गतम्	८.	निकले
मत्स्यघ्नैः	१. मछली पकड़ने वाले मछुओं ने	लोहम्	९.	लोहे के टुकड़े को
जालेन	४. जाल से	सशल्ये	११.	बाण के नोक में
अन्यैः सह	२. दूसरी मछलियों के साथ	लुब्धकः	१०.	जरा नामक व्याध ने
अर्णवे ।	३. समुद्र में	अकरोत् ॥	१२.	लगा लिया

श्लोकार्थ—मछली पकड़ने वाले मछुओं ने दूसरी मछलियों के साथ समुद्र में जाल से उस मछली को भी पकड़ लिया । उसके उदर से निकले लोहे के टुकड़े को जरा नामक व्याध ने बाण के नोक में लगा लिया ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

भगवाञ्ज्ञातसर्वार्थ ईश्वरोऽपि तदन्यथा ।
कर्तुं नैच्छद् विप्रशापं कालरूप्यन्वमोदत ॥२४॥

पदच्छेद— भगवान् ज्ञात सर्वार्थः ईश्वरः अपि तत् अन्यथा ।
कर्तुम् न ऐच्छत् विप्रशापम् कालरूपी अन्वमोदत ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	१. भगवान् श्रीकृष्ण	कर्तुम्	८.	ऐसा करने की
ज्ञात	३. जानते थे	न	१०.	नहीं की अपितु
सर्वार्थः	२. सब कुछ	ऐच्छत्	९.	इच्छा
ईश्वरः अपि	६. समर्थ भी थे	विप्रशापम्	११.	ब्राह्मणों के शाप का
तत्	४. वे उस शाप को	कालरूपी	७.	परन्तु काल रूपधारी प्रभु ने
अन्यथा ।	५. उलटने में	अन्वमोदत ॥	१२.	अनुमोदन ही किया

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण सब कुछ जानते थे । वे उस शाप को उलटने में समर्थ भी थे । परन्तु काल रूपधारी प्रभु ने ऐसा करने की इच्छा नहीं की, अपितु ब्राह्मणों के शाप का अनुमोदन ही किया ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां एकादशे स्कन्धे
प्रथमः अध्यायः ॥१॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— गोविन्दभुजगुप्तायां द्वारवत्यां कुरूद्वह ।
अवात्सीन्नारदोऽभीक्ष्णं कृष्णोपासनलालसः ॥१॥

पदच्छेद— गोविन्द भुज गुप्तायाम् द्वारवत्याम् कुरूद्वह ।
अवात्सीत् नारदः अभीक्ष्णम् कृष्ण उपासन लालसः ॥

शब्दार्थ—

गोविन्द	६.	वे श्रीकृष्ण के	अवात्सीत्	११.	रहा करते थे
भुज	७.	निज बाहुओं से	नारदः	२.	देवर्षि नारद के मन में
गुप्तायाम्	८.	सुरक्षित	अभीक्ष्णम्	१०.	बारम्बार आकर
द्वारवत्याम्	९.	द्वारका में	कृष्ण	३.	श्रीकृष्ण की
कुरूद्वह ।	१.	हे कुरुनन्दन !	उपासन	४.	सन्निधि में रहने की
			लालसः ॥	५.	बड़ी लालसा थी (अतः)

श्लोकार्थ—हे कुरूनन्दन ! देवर्षि नारद के मन में श्रीकृष्ण की सन्निधि में रहने की बड़ी लालसा थी। अतः वे श्रीकृष्ण के निज बाहुओं से सुरक्षित द्वारका में बारम्बार आकर रहा करते थे ॥

द्वितीयः श्लोकः

को नु राजन्निन्द्रियवान् मुकुन्दचरणाम्बुजम् ।
न भजेत् सर्वतोमृत्युरुपास्यममरोत्तमैः ॥२॥

पदच्छेद— कः नु राजन् इन्द्रियवान् मुकुन्द चरण अम्बुजम् ।
न भजेत् सर्वतः मृत्युः उपास्यम् अमरोत्तमैः ॥

शब्दार्थ—

कः नु	४.	ऐसा कौन प्राणी है	न	१२.	न करना चाहें
राजन्	१.	हे राजन् !	भजेत्	११.	सेवन
इन्द्रियवान्	५.	जो इन्द्रियों से युक्त होने पर भी	सर्वतः	२.	सब ओर
मुकुन्द	८.	भगवान् श्रीकृष्ण के	मृत्युः	३.	मृत्यु से घिरा हुआ
चरण	९.	चरण	उपास्यम्	७.	सेवित
अम्बुजम् ।	१०.	कमलों का	अमरोत्तमैः ॥	६.	बड़े-बड़े देवों से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सब ओर मृत्यु से घिरा हुआ ऐसा कौन प्राणी है । जो इन्द्रियों से युक्त होने पर भी बड़े-बड़े देवों से सेवित भगवान् श्रीकृष्ण के चरण कमलों का सेवन न करना चाहें ॥

तृतीयः श्लोकः

तमेकदा तु देवर्षिं वसुदेवो गृहागतम् ।
अर्चितं सुखमासीनमभिवाद्येदमब्रवीत् ॥३॥

पदच्छेद— तम् एकदा तु देवर्षिं वसुदेवः गृह आगतम् ।
अर्चितम् सुखम् आसीनम् अभिवाद्य इदम् अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ —

तम्	१०.	उन नारद जी से	अर्चितम्	७.	पूजा करके
एकदा	१.	एक बार	सुखम्	८.	सुख पूर्वक
तु देवर्षि	२.	देवर्षि नारद	आसीनम्	९.	बैठ जाने पर वसुदेव जी ने
वसुदेवः	३.	वसुदेव जी के	अभिवाद्य	६.	उनका अभिवादन एवम्
गृह	४.	निवास स्थान में	इदम्	११.	इस प्रकार
आगतम् ।	५.	पधारे	अब्रवीत् ॥	१२.	कहा

श्लोकार्थ—एक बार देवर्षि नारद वसुदेव जी के निवास स्थान में पधारे। उनका अभिवादन एवम् पूजा करके सुख पूर्वक बैठ जाने पर वसुदेव जी ने उन नारद जी से इस प्रकार कहा ॥

चतुर्थः श्लोकः

वसुदेव उवाच—भगवन् भवतो यात्रा स्वस्तये सर्वदेहिनाम् ।
कृपणानां यथा पित्रोरुत्तमश्लोकवर्त्मनाम् ॥४॥

पदच्छेद— भगवन् भवतः यात्रा स्वस्तये सर्व देहिनाम् ।
कृपणानाम् यथा पित्रोः उत्तम श्लोक वर्त्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

भगवन्	१.	हे भगवन् !	कृपणानाम्	६.	दीन दुखियों की यात्रा होती है
भवतः	२.	आपकी	यथा	७.	जैसे
यात्रा	३.	यात्रा	पित्रोः	१०.	माता-पिता का आ पुत्रों के लिये
स्वस्तये	६.	कल्याण के लिये होती है	उत्तम	८.	पवित्र
सर्व	४.	समस्त	श्लोक	९.	कीर्ति भगवान के
देहिनाम् ।	५.	प्राणियों के	वर्त्मनाम् ॥	११.	मार्ग पर चलने वाले

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपकी यात्रा समस्त प्राणियों के कल्याण के लिये होती है। (दीन दुखियों की यात्रा होती है।) जैसे पवित्र कीर्ति भगवान् के मार्ग पर चलने वाले दीन दुखियां की यात्रा होती है ॥

पञ्चमः श्लोकः

भूतानां देवचरितं दुःखाय च सुखाय च।
सुखायैव हि साधूनां त्वादृशामच्युतात्मनाम् ॥५॥

पदच्छेद— भूतानाम् देव चरितम् दुःखाय च सुखाय च।
सुखाय एव हि साधूनाम् त्वादृशाम् अच्युत आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

भूतानाम्	३.	कभी प्राणियों के	सुखाय	११.	सुख के लिये ही
देव	१.	देवताओं के	एव हि	१२.	होता है
चरितम्	२.	चरित्र भी	साधूनाम्	१०.	सन्तजनों का आना तो
दुःखाय च	४.	दुःख के लिये और	त्वादृशाम्	७.	आप जैसे
सुखाय	५.	सभी सुख के हेतु होता है	अच्युत	८.	भगवत्
च।	६.	परन्तु	आत्मनाम् ॥	९.	स्वरूप

श्लोकार्थ—देवताओं के चरित्र भी कभी प्राणियों के दुःख के लिये और सभी सुख के हेतु होता है। परन्तु आप जैसे भगवत् स्वरूप सन्तजनों का आना तो सुख के लिये ही होता है ॥

षष्ठः श्लोकः

भजन्ति ये यथा देवान् देवा अपि तथैव तान्।
छायेव कर्मसचिवाः साधवो दीनवत्सलाः ॥६॥

पदच्छेद— भजन्ति ये यथा देवान् देवा अपि तथैव तान्।
छायेव कर्म सचिवाः साधवः दीन वत्सलाः ॥

शब्दार्थ—

भजन्ति	३.	भजन करते हैं	छायेव	५.	छाया के समान
ये	१.	जो लोग	कर्म	८.	कर्म के
यथा देवान्	२.	जिस प्रकार देवताओं का	सचिवाः	९.	मन्त्री हैं
देवा अपि	४.	देवता भी	साधवः	१०.	सत्पुरुष तो
तथैव	७.	ठीक वैसे ही फल देते हैं क्योंकि वे	दीन	११.	दीन
तान्।	६.	उन लोगों को	वत्सलाः ॥	१२.	वत्सल होते हैं

श्लोकार्थ— जो लोग देवताओं का जिस प्रकार भजन करते हैं, देवता भी छाया के समान उन लोगों को ठीक वैसे ही फल देते हैं। क्योंकि वे छाया के समान कर्म के मन्त्री हैं, पर सत्पुरुष तो दीन वत्सल होते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

ब्रह्मंस्तथापि पृच्छामो धर्मान् भागवतांस्तव ।
याञ्छ्रुत्वा श्रद्धया मर्त्यो मुच्यते सर्वतोभयात् ॥७॥

पदच्छेद— ब्रह्मन् तथापि पृच्छामः धर्मान् भागवतान् तव ।
यान् श्रुत्वा श्रद्धया मर्त्यो मुच्यते सर्वतोभयात् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन्	यान्	७.	जिन्हें
तथापि	२.	फिर भी	श्रुत्वा	६.	सुन लेने पर
पृच्छामः	६.	प्रश्न कर रहे हैं	श्रद्धया	८.	श्रद्धया से
धर्मान्	५.	धर्मों और साधनों के बारे में	मर्त्यो	१०.	मनुष्य
भागवतान्	४.	उन भागवत	मुच्यते	१२.	मुक्त हो जाता है
तव ।	३.	आप से	सर्वतोभयात्॥	११.	सब ओर भयदायक संसार से

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! फिर भी आप से उन भागवत धर्मों और साधनों के बारे में प्रश्न कर रहे हैं। जिन्हें श्रद्धा से सुन लेने पर मनुष्य सब ओर से भयदायक संसार से मुक्त हो जाता है ॥

अष्टमः श्लोकः

अहं किल पुरानन्तं प्रजार्थो भुवि मुक्तिदम् ।
अपूजयं न मोक्षाय मोहितो देवमायया ॥८॥

पदच्छेद— अहम् किल पुरानन्तम् प्रजा अर्थे भुवि मुक्तिदम् ।
अपूजयं न मोक्षाय मोहितो देव मायया ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१.	मैंने	अपूजयं	७.	आराधना की थी पर
किल	२.	निश्चय ही	न	६.	नहीं, तब
पुरानन्तम्	३.	पहले जन्म में	मोक्षाय	८.	मोक्ष के लिये
प्रजा अर्थे	६.	पुत्र रूप में पाने के लिये	मोहितो	१२.	मुग्ध हो रहा था
भुवि	४.	पृथ्वी पर	देव	१०.	मैं भगवान् की
मुक्तिदम् ।	५.	मुक्ति देने वाले भगवान् अनन्त की	मायया ॥	११.	माया से

श्लोकार्थ—मैंने निश्चय ही पहले जन्म में पृथ्वी पर मुक्ति देने वाले भगवान् की पुत्र रूप में पाने के लिये आराधना की थी मोक्ष के लिये नहीं; तब मैं भगवान् की माया से मुग्ध हो रहा था ॥

नवमः श्लोकः

यथा विचित्रव्यसनाद् भवद्भिर्विश्वतोभयात् ।
मुच्येम ह्यञ्जसैवाद्धा तथा नः शाधि सुव्रत ॥९॥

पदच्छेद— यथा विचित्र व्यसनात् भवद्भिः विश्वतो भयात् ।
मुच्येम हि अञ्जसा एव अद्धा तथा नः शाधि सुव्रत ॥

शब्दार्थ—

यथा	४.	जिससे मैं	मुच्येम	१२.	मुक्त हो जाऊँ
विचित्र	५.	अद्भुत	हि अञ्जसा	१०.	अनायास
व्यसनात्	६.	कष्टरूप	एव	११.	ही
भवद्भिः	७.	एव आपके द्वारा	अद्धा तथा नः	२.	आप मुझे ऐसा
विश्वतो	८.	सब प्रकार से	शाधि	३.	उपदेश कीजिये
भयात् ।	९.	भयदायक संसार से	सुव्रत ॥	१.	हे सुव्रत !

श्लोकार्थ—हे सुव्रत ! आप मुझे ऐसा उपदेश कीजिये । जिससे मैं अद्भुत कष्टरूप एवम् सब प्रकार से भयदायक संसार से आपके द्वारा अनायास ही मुक्त हो जाऊँ ॥

दशमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच— राजन्नेवं कृतप्रश्नो वसुदेवेन धीमता ।
प्रीतस्तमाह देवर्षिर्हरेः संस्मारितो गुणैः ॥१०॥

पदच्छेद— राजन् एवम् कृत प्रश्नो वसुदेवेन धीमता ।
प्रीतः तम्-आह देवर्षिः हरेः संस्मारितः गुणैः ॥

शब्दार्थ—

राजन्	१.	हे राजन् !	प्रीतः	१०.	प्रेम और आनन्द में भर कर
एवम्	४.	इस प्रकार	तम्-आह	१२.	उनसे कहा
कृत	६.	करने पर	देवर्षिः	११.	देवर्षि नारद जी ने
प्रश्नो	५.	प्रश्न	हरेः	७.	भगवान् के अचिन्त्य
वसुदेवेन	३.	वसुदेव जी द्वारा	संस्मारितः	९.	स्मरण करके
धीमता ।	२.	बुद्धिमान	गुणैः ॥	८.	गुणों का

श्लोकार्थ—हे राजन् ! बुद्धिमान वसुदेव जी द्वारा इस प्रकार प्रश्न करने पर देवर्षि नारद जी ने भगवान् के अचिन्त्य गुणों का स्मरण करके प्रेम और आनन्द में भर कर देवर्षि नारद जी ने उनसे कहा ॥

एकादशः श्लोकः

नारद उवाच— **सम्यगेतद् व्यवसितं भवता सात्वतर्षभ ।**
यत् पृच्छसे भागवतान् धर्मांस्त्वं विश्वभावनान् ॥११॥

पदच्छेद— सम्यक् एतद् व्यवसितम् भवता सात्वतर्षभ ।
यत् प्रच्छसे भागवतान् धर्मान् त्वम् विश्वभावनान् ॥

शब्दार्थ—

सम्यक्	५.	बहुत सुन्दर है	यत्	६.	जो कि
एतद्	३.	यह	प्रच्छसे	११.	पूछ रहे हो
व्यवसितम्	४.	निश्चय	भागवतान्	९.	भागवत
भवता	२.	तुम्हारा	धर्मान्	१०.	धर्म के बारे में
सात्वतर्षभ ।	१.	यदुवंश शिरोमणे !	त्वम्	७.	तुम
			विश्वभावनान् ॥	८.	संसार को पवित्र करने वाले

श्लोकार्थ—यदुवंश शिरोमणे ! तुम्हारा यह निश्चय बहुत सुन्दर है जो कि तुम संसार को पवित्र करने वाले भागवत धर्म के बारे में पूछ रहे हो ॥

द्वादशः श्लोकः

श्रुतोऽनुपठितो ध्यात आदृतो वानुमोदितः ।
सद्यः पुनाति सद्धर्मो देव विश्वद्रुहोऽपि हि ॥१२॥

पदच्छेद— श्रुतो अनुपठितो ध्यात आदृतो वा अनुमोदितः ।
सद्यः पुनाति सद्धर्मो देव विश्वद्रुहो अपिहि ॥

शब्दार्थ—

श्रुतो	३.	सुनने	सद्यः	११.	तत्काल
अनुपठितो	४.	उच्चारण करने	पुनाति	१२.	पवित्र हो जाता है
ध्यात	५.	स्मरण करने	सद्धर्मो	२.	भागवत धर्म को
आदृतो	६.	स्वीकार करने	देव	१.	हे वसुदेव जी !
वा	७.	या	विश्वद्रुहो	९.	सारे संसार का द्रोही होने
अनुमोदित ।	८.	अनुमोदन करने से ही	अपि हि ॥	१०.	पर भी मनुष्य

श्लोकार्थ—हे वसुदेव जी ! भागवत धर्म को सुनने, उच्चारण करने, स्मरण करने, स्वीकार करने या अनुमोदन करने से ही सारे संसार का द्रोही होने पर भी मनुष्य तत्काल पवित्र हो जाता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

त्वया परमकल्याणः पुण्यश्रवणकीर्तनः ।
स्मारितो भगवानद्य देवो नारायणो मम ॥१३॥

पदच्छेद— त्वया परम कल्याणः पुण्य श्रवण कीर्तनः ।
स्मारितः भगवान् अद्य देवः नारायणः मम ॥

शब्दार्थ—

त्वया	११.	तुमने	स्मारितः	१२.	स्मरण कराया है
परम	४.	परम	भगवान्	८.	भगवान्
कल्याणः	५.	कल्याण स्वरूप	अद्य	१०.	आज
पुण्य	३.	पुण्यदायक है, उन्हीं	देवः	७.	देव
श्रवण	१.	जिनके नाम का श्रवण	नारायणः	९.	श्री नारायण का
कीर्तनः ।	२.	कीर्तन	मम ॥	६.	मेरे आराध्य

श्लोकार्थ—जिनके नाम का श्रवण कीर्तन पुण्यदायक है, उन्हीं परम कल्याण स्वरूप मेरे आराध्य देव भगवान् नारायण का आज तुमने स्मरण कराया है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
आर्षभाणां च संवादं विदेहस्य महात्मनः ॥१४॥

पदच्छेद— अत्र अपि उदाहरन्ति इमम् इतिहासम् पुरातनम् ।
आर्षभाणाम् च संवादम् विदेहस्य महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	इसके सम्बन्ध में	आर्षभाणाम्	८.	ऋषभ के नौ योगीश्वरों तथा
अपि	२.	भी सन्तजन	च	७.	और
उदाहरन्ति	६.	सुनाते हैं	संवादम्	११.	संवाद को बताते हैं
इमम्	३.	इस	विदेहस्य	१०.	विदेह के
इतिहासम्	५.	इतिहास को	महात्मनः ॥	९.	महात्मा
पुरातनम् ।	४.	प्राचीन			

श्लोकार्थ—इसके सम्बन्ध में भी सन्तजन इस प्राचीन इतिहास को सुनाते हैं। और ऋषभ के नौ योगीश्वरों तथा महात्मा विदेह के संवाद को बताते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

प्रियव्रतो नाम सुतो मनोः स्वायम्भुवस्य यः ।
तस्याग्नीध्रस्ततो नाभिॠषभस्तत्सुतः स्मृतः ।।१५।।

पदच्छेद— प्रियव्रतो नाम सुतो मनोः स्वायम्भुवस्य यः ।
तस्य आग्नीध्रः ततो नाभिः ऋषभः तत् सुतः स्मृतः ।।

शब्दार्थ—

प्रियव्रतो	३.	प्रियव्रत	तस्य	७.	उन प्रियव्रत के
नाम	४.	नाम के	आग्नीध्रः	८.	आग्नीध्र और
सुतो	६.	पुत्र थे	ततो	९.	आग्नीध्र के
मनोः	२.	मनु के	नाभिः	१०.	नाभि थे
स्वायम्भुवस्य	१.	स्वायम्भुव	ऋषभः तत्	११.	ऋषभ उनके
यः ।	५.	एक प्रसिद्ध	सुतः स्मृतः ।।	१२.	पुत्र कहलाये

श्लोकार्थ—स्वायम्भुव मनु के प्रियव्रत नाम के एक प्रसिद्ध पुत्र थे । उन प्रियव्रत के आग्नीध्र और आग्नीध्र के नाभि थे । उनके पुत्र ऋषभ कहलाये ।।

षोडशः श्लोकः

तमाहुर्वासुदेवांशं मोक्षधर्मविवक्षया ।
अवतीर्णं सुतशतं तस्यासीद् ब्रह्मपारगम् ।।१६।।

पदच्छेद— तम् आहुः वासुदेव अंशम् मोक्षधर्म विवक्षया ।
अवतीर्णम् सुत शतम् तस्य आसीत् ब्रह्म पारगम् ।।

शब्दार्थ—

तम्	१.	शास्त्रों में ऋषभ को	अवतीर्णम्	७.	उन्होंने अवतार लिया था
आहुः	४.	कहा है	सुत	१२.	पुत्र थे
वासुदेव	२.	वासुदेव का	शतम्	१०.	सौ
अंशम्	३.	अंश	तस्य आसीत्	११.	उनके
मोक्षधर्म	५.	मोक्षधर्म का	ब्रह्म	८.	वेदों के
विवक्षया ।	६.	उपदेश करने के लिये	पारगम् ।।	९.	जानकार

श्लोकार्थ—शास्त्रों में ऋषभ को वासुदेव का अंश कहा है । मोक्षधर्म का उपदेश करने के लिये उन्होंने अवतार लिया था । वेदों के जानकार उनके सौ पुत्र थे ।।

सप्तदशः श्लोकः

तेषां वै भरतो ज्येष्ठो नारायणपरायणः ।
विख्यातं वर्षमेतद् यन्नाम्ना भारतमद्भुतम् ।।१७।।

पदच्छेद— तेषाम् वै भरतः ज्येष्ठो नारायण परायणः ।
विख्यातम् वर्षम् एतद् यत्नाम्ना भारतम् अद्भुतम् ।।

शब्दार्थ—

तेषाम्	२.	उनमें	विख्यातम्	१२.	कहलाया
वै	१.	निश्चय ही	वर्षम्	११.	वर्ष
भरतः	४.	राजर्षि भरत थे	एतद्	८.	यह
ज्येष्ठो	३.	सबसे बड़े	यत्नाम्ना	७.	उन्हीं के नाम से
नारायण	५.	वे भगवान् नारायण के	भारतम्	१०.	भारत
परायणः ।	६.	परम प्रेमी भक्त थे	अद्भुतम् ।।	९.	अलौकिक स्थान

श्लोकार्थ—निश्चय ही उनमें सबसे बड़े राजर्षि भरत थे, वे भगवान् नारायण के परम प्रेमी भक्त थे । उन्हीं के नाम से यह अलौकिक स्थान भारतवर्ष कहलाया ।।

अष्टदशः श्लोकः

स भुक्तभोगां त्यक्त्वेमां निर्गतस्तपसा हरिम् ।
उपासीनस्तत्पदवीं लेभे वै जन्मभिस्त्रिभिः ।।१८।।

पदच्छेद— सः भुक्तभोगाम् त्यक्त्वा इमाम् निर्गतः तपसा हरिम् ।
उपासीनः तत् पदवीम् लेभे वै जन्मभिः त्रिभिः ।।

शब्दार्थ—

सः	१.	वे पृथ्वी का	उपासीनः	९.	तपस्या करके
भुक्तभोगाम्	२.	भोग करके और	तत्	१०.	भगवत्
त्यक्त्वा इमाम्	३.	इसे छोड़कर	पदवीम्	११.	धाम को
निर्गतः	६.	वन में चले गये	लेभे	१२.	प्राप्त कर लिया
तपसा	५.	तपस्या करने के लिये	वै जन्मभिः	८.	जन्मों तक
हरिम् ।	४.	भगवान् की	त्रिभिः ।।	७.	उन्होंने तीन

श्लोकार्थ—वे पृथ्वी का भोग करके और इसे छोड़कर भगवान् की तपस्या करने वन में चले गये । उन्होंने तीन जन्मों तक तपस्या करके भगवत् धाम को प्राप्त कर लिया ।।

एकोनविंशः श्लोकः

तेषां नव नवद्वीपपतयोऽस्य समन्ततः ।
कर्मतन्त्रप्रणेतार एकाशीतिर्द्विजातयः ॥१९॥

पदच्छेद— तेषाम् नव नवद्वीप पतयः अस्य समन्ततः ।
कर्मतन्त्र प्रणेतार एक अशीतिः द्विजातयः ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	१. उन ऋषभ देवजी के		समन्ततः ।	४. सब ओर स्थित
नव	२. नौ पुत्र		कर्मतन्त्र	८. कर्मकाण्ड के
नवद्वीप	५. नौ द्वीपो के		प्रणेतार	९. रचयिता
पतयः	६. अधिपति हुये । और		एक अशीतिः	७. इक्यासी पुत्र
अस्य	३. भारतवर्ष के		द्विजातयः ॥	१०. ब्राह्मण हुये

श्लोकार्थ—उन ऋषभदेवजी के नौ पुत्र भारतवर्ष के सब ओर स्थित नौ द्वीपों के अधिपति हुये । और इक्यासी पुत्र कर्मकाण्ड के रचयिता ब्राह्मण हुये ॥

विंशः श्लोक;

नवाभवन् महाभागा मुनयो ह्यर्थशंसिनः ।
श्रमणा वातरशना आत्मविद्याविशारदाः ॥२०॥

पदच्छेद— नव अभवन् महाभागा मुनयो हि अर्थ शंसिनः ।
श्रमणा वातरशना आत्म विद्या विशारदाः ॥

शब्दार्थ—

नव	१. शेष नौ		श्रमणा	७ बड़ी खोज की थी
अभवन्	३. हो गये		वातरशना	८. वे दिगम्बर रहते थे ।
महाभागा	४. वे बड़े ही भाग्यवान थे		आत्म	९. अध्यात्म
मुनयो हि	२. सन्यासी		विद्या	१०. विद्या में
अर्थ	५. उन्होंने परमार्थ के		विशारदाः ॥	११. निपुण थे
शंसिनः ।	६. विषय में			

श्लोकार्थ—शेष नौ सन्यासी हो गये । वे बड़े ही भाग्यवान थे । उन्होंने परमार्थ के विषय में बड़ी खोज की थी । वे दिगम्बर रहते थे । तथा अध्यात्म विद्या में निपुण थे ॥

एकविंशः श्लोकः

कविर्हरिरन्तरिक्षः प्रबुद्धः पिप्पलायनः ।
आविर्होत्रोऽथ द्रुमिलश्चमसः करभाजनः ॥२१॥

पदच्छेद— कविः हरिः अन्तरिक्षः प्रबुद्धः पिप्पलायनः ।
आविर्होत्रः अथ द्रुमिलः चमसः करभाजनः ॥

शब्दार्थ—

कविः	१.	(उनके) कवि	आविर्होत्रः	६.	आविहोत्र
हरिः	२.	हरि	अथ	७.	तथा
अन्तरिक्षः	३.	अन्तरिक्ष	द्रुमिलः	८.	द्रुमिल
प्रबुद्धः	४.	प्रबुद्ध	चमसः	९.	चमस
पिप्पलायनः ।	५.	पिप्पलाइन	करभाजनः ॥	१०.	करभाजन ये नाम थे

श्लोकार्थ—उनके कवि, हरि, अन्तरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलाइन, आविर्होत्र तथा द्रुमिल, चमस, करभाजन ये नाम थे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

त एते भगवद्रूपं विश्वं सदसदात्मकम् ।
आत्मनोऽव्यतिरेकेण पश्यन्तो व्यचरन् महीम् ॥२२॥

पदच्छेद— त एते भगवत् रूपम् विश्वम् सत्-असत् आत्मकम् ।
आत्मनः अव्यतिरेकेण पश्यन्तः व्यचरन् महीम् ॥

शब्दार्थ—

त	१.	वे	आत्मकम् ।	३.	स्वरूप और
एते	६.	इस	आत्मनः	८.	अपने से
भगवत्	४.	भगवद्	अव्यतिरेकेण	९.	अभिन्न
रूपम्	५.	रूप	पश्यन्तः	१०.	अनुभव करते हुये
विश्वम्	७.	जगत को	व्यचरन्	१२.	विचरण करते थे
सत्-असत्	२.	कार्य-कारण	महीम् ॥	११.	पृथ्वी पर

श्लोकार्थ—वे कार्य-कारण स्वरूप और भगवद् रूप इस जगत को अपने से अभिन्न अनुभव करते हुये पृथ्वी पर विचरण करते थे ॥

त्रयविंशः श्लोकः

अव्याहतेष्टगतयः सुरसिद्धसाध्यगन्धर्वयक्षनरकिन्नरनागलोकान् ।
मुक्ताश्चरन्ति मुनिचारणभूतनाथविद्याधरद्विजगवां भुवनानि कामम् ॥२३॥

पदच्छेद— अव्याहतः इष्टगतयः सुरसिद्धसाध्य गन्धर्व यक्ष किन्नर नाग लोकान् ।
मुक्ताः चरन्ति मुनि-चारण भूतनाथ विद्याधर द्विजगवाम् भुवनानि कामम् ॥

शब्दार्थ—

अव्याहतः	१.	वे बिना रोक टोक	मुक्ताः	१३.	वे सब जीवन्मुक्त अवस्था में
इष्टगतयः	२.	इच्छानुसार गति वाले थे	चरन्ति	१४.	स्थित थे
सुरसिद्धसाध्य	३.	देवता, सिद्ध, साध्य	मुनि-चारण	८.	मुनि, चारण
गन्धर्व यक्ष	४.	गन्धर्व, यक्ष	भूतनाथ विद्याधर	९.	भूतनाथ, विद्याधर
किन्नर	५.	मनुष्य, किन्नर और	द्विजगवाम्	१०.	ब्राह्मण और गौओं के
नाग	६.	नागों के	भुवनानि	११.	लोकों में
लोकान् ।	७.	लोकों में (तथा)	कामम् ॥	१२.	इच्छानुसार विचरते थे

श्लोकार्थ—वे बिना रोक टोक इच्छानुसार गति वाले थे, देवता, सिद्ध, साध्य, गन्धर्व, यक्ष, मनुष्य किन्नर और नागों के लोकों में तथा मुनि-चारण, भूतनाथ, विद्याधर, ब्राह्मण और गौओं के लोकों में इच्छानुसार विचरण करते थे । वे सब जीवन्मुक्त अवस्था में स्थित थे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

त एकदा निमेः सत्रमुपजग्मुर्यदृच्छया ।
वितायमानमृषिभिरजनाभे महात्मनः ॥२४॥

पदच्छेद— त एकदा निमेः सत्रम् उपजग्मुः यदृच्छया ।
वितायमानम् ऋषिभिः अजनाभे महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

त एकदा	१.	एक बार वे	वितायमानम्	६.	यज्ञ करा रहे थे तब
निमेः	४.	निमि जब	ऋषिभिः	५.	बड़े-बड़े ऋषियों द्वारा
सत्रम्	८.	उनके यज्ञ में	अजनाभे	२.	इस अजनाभ (भारतवर्ष) में
उपजग्मुः	९.	आ पहुँचे	महात्मनः ॥	३.	विदेह राज महात्मा
यदृच्छया ।	७.	इच्छानुसार			

श्लोकार्थ—एक बार वे इस अजनाभ (भारतवर्ष) में विदेह राज महात्मा निमि जब बड़े-बड़े ऋषियों द्वारा यज्ञ करा रहे थे । तब इच्छानुसार उनके यज्ञ में आ पहुँचे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तान् दृष्ट्वा सूर्यसंकाशान् महाभागवतान् नृपः ।
यजमानोऽग्नयो विप्राः सर्व एवोपतस्थिरे ॥२५॥

पदच्छेद— तान् दृष्ट्वा सूर्य संकाशान् महाभागवतान् नृपः ।
यजमानः अग्नयः विप्राः सर्व एव उपतस्थिरे ॥

शब्दार्थ —

तान्	५.	उन योगीश्वरों को	यजमानः	७.	राजा निमि
दृष्ट्वा	६.	देखकर	अग्नयः	८.	आहवनीय आदि मूर्तिमान अग्नि
सूर्य	२.	सूर्य के	विप्राः	९.	ऋत्विज आदि ब्राह्मण
संकाशान्	३.	समान तेजस्वी	सर्व	१०.	सब के सब
महाभागवतान्	४.	भगवान् के परम प्रेमी भक्त	एव	११.	ही
नृपः ।	१.	वसुदेव जी !	उपतस्थिरे॥	१२.	उनके स्वागत में खड़े हो गये

श्लोकार्थ—हे वसुदेव जी ! सूर्य के समान तेजस्वी भगवान् के परम प्रेमी उन योगीश्वरों को देखकर राजा निमि आहवनीय आदि मूर्तिमान अग्नि और ऋत्विज आदि ब्राह्मण सब के सब ही उनके स्वागत में खड़े हो गये ॥

षड्विंशः श्लोकः

विदेहस्तानभिप्रेत्य नारायणपरायणान् ।
प्रीतः सम्पूजयाञ्चक्रे आसनस्थान् यथार्हतः ॥२६॥

पदच्छेद— विदेहः तान् अभिप्रेत्य नारायण परायणान् ।
प्रीतः सम्पूजयान् चक्रे आसन स्थान् यथा अर्हतः ॥

शब्दार्थ—

विदेहः	१.	विदेह राज निमि ने	सम्पूजयान्-	११.	उनकी विधिवत् पूजा
तान्	२.	उन्हें	चक्रे	१२.	की
अभिप्रेत्य	५.	जानकर	आसन	८.	आसन पर
नारायण	३.	भगवान् के	स्थान्	९.	बैठाया (और)
परायणान् ।	४.	परम प्रेमी भक्त	यथा	६.	यथा
प्रीतः	१०.	प्रेम तथा आदर के साथ	अर्हतः ॥	७.	योग्य

श्लोकार्थ—विदेह राज निमि ने उन्हें भगवान् के परम प्रेमी भक्त जानकर यथा-योग्य आसन पर बैठाया और उनकी विधिवत् पूजा की ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तान् रोचमानान् स्वरुचा ब्रह्मपुत्रोपमान् नव ।
पप्रच्छ परमप्रीतः प्रश्रयावनतो नृपः ॥२७॥

पदच्छेद— तान् रोचमानान् स्वरुचा ब्रह्मपुत्र उपमान् नव ।
पप्रच्छ परमप्रीतः प्रश्रय अवनतः नृपः ॥

शब्दार्थ—

तान्	१०.	उनसे	पप्रच्छ	११.	प्रश्न किया
रोचमानान्	५.	चमक रहे थे	परमप्रीतः	९.	परम प्रेम के साथ
स्वरुचा	२.	अपने अङ्गों की कान्ति से	प्रश्रय	७.	विनय से
ब्रह्मपुत्र	३.	ब्रह्मा जी के पुत्र सनकादि के	अवनतः	८.	झुककर
उपमान्	४.	समान	नृपः ॥	६.	राजा निमि ने
नव ।	१.	वे नवों योगीश्वर			

श्लोकार्थ—वे नवों योगीश्वर अपने अङ्गों की कान्ति से ब्रह्मा जी के पुत्र सनकादि के समान चमक रहे थे । राजा निमि ने विनय से झुककर परम प्रेम के साथ उनसे प्रश्न किया ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

विदेह उवाच—**मन्ये भगवतः साक्षात् पार्षदान् वो मधुद्विषः ।**
विष्णोर्भूतानि लोकानां पावनाय चरन्ति हि ॥२८॥

पदच्छेद— मन्ये भगवतः साक्षात् पार्षदान् वः मधुद्विषः ।
विष्णोः भूतानि लोकानाम् पावनाय चरन्ति हि ॥

शब्दार्थ—

मन्ये	१.	मैं ऐसा समझता हूँ कि	विष्णोः	७.	क्योंकि भगवान् के
भगवतः	४.	भगवान् के	भूतानि	८.	पार्षद
साक्षात्	५.	साक्षात्	लोकानाम्	९.	संसारी प्राणियों को
पार्षदान्	६.	पार्षद ही हैं	पावनाय	१०.	पवित्र करने के लिये
वः	२.	आप लोग	चरन्ति	११.	विचरण किया
मधुद्विषः ।	३.	मधुसूदन	हि ॥	१२.	करते हैं

श्लोकार्थ—मैं ऐसा मानता हूँ कि आप लोग मधुसूदन भगवान् के साक्षात् पार्षद ही हैं । क्योंकि भगवान् के पार्षद संसारी प्राणियों को पवित्र करने के लिये विचरण किया करते हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

दुर्लभो मानुषो देहो देहिनां क्षणभङ्गुरः।
तत्रापि दुर्लभं मन्ये वैकुण्ठप्रियदर्शनम् ॥२९॥

पदच्छेद— दुर्लभः मानुषः देहः देहिनाम् क्षणभङ्गुरः।
तत्र अपि दुर्लभम् मन्ये वैकुण्ठ प्रिय दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

दुर्लभः	५.	दुर्लभ है	तत्रअपि	६.	इस क्षण शरीर में
मानुषः	३.	मनुष्य	दुर्लभम्	९.	दुर्लभ
देहः	४.	शरीर प्राप्त होना	मन्ये	१०.	मानता हूँ
देहिनाम्	१.	जीवों के लिये	वैकुण्ठप्रिय	७.	भगवान् के
क्षणभङ्गुरः।	२	यह क्षक्षभङ्गुर	दर्शनम् ॥	८.	प्यारे भक्त जनों का दर्शन भी

श्लोकार्थ—हे राजन्! जीवों के लिये यह क्षणभङ्गुर मनुष्य शरीर प्राप्त होना दुर्लभ है। इस क्षण शरीर में भगवान् के प्यारे भक्त जनों का दर्शन भी दुर्लभ मानता हूँ ॥

त्रिंशः श्लोकः

अत आत्यन्तिकं क्षेमं पृच्छामो भवतोऽनघाः।
संसारेऽस्मिन् क्षणार्धोऽपि सत्सङ्गः शेवधिर्नृणाम् ॥३०॥

पदच्छेद— अत आत्यन्तिकम् क्षेमम् पृच्छामः भवतः अनघाः।
संसारे अस्मिन् क्षणार्धः अपि सत्सङ्गः शेवधिः नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

अत	१.	इसलिये	संसारे अस्मिन्	७.	इस संसार में
आत्यन्तिकम्	४.	परम	क्षणार्धः	८.	आधे क्षण का
क्षेमम्	५.	कल्याण के बारे में	अपि	१०.	भी
पृच्छामः	६.	प्रश्न करते हैं। क्योंकि	सत्सङ्गः	९.	सत्सङ्ग
भवतः	३	हम आपसे	शेवधिः	१२.	परम कल्याणकारी है
अनघाः।	२.	हे त्रिलोक पावन महात्माओ!	नृणाम् ॥	११.	मनुष्यों के लिये

श्लोकार्थ—इसलिये हे त्रिलोक पावन महात्माओ! हम आपसे परम कल्याण के बारे में प्रश्न करते हैं। क्योंकि इस संसार में आधे क्षण का सत्सङ्ग भी मनुष्यों के लिये परम कल्याणकारी है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

धर्मान् भागवतान् ब्रूत यदि नः श्रुतये क्षमम् ।
यैः प्रसन्नः प्रपन्नाय दास्यत्यात्मानमप्यजः ॥३१॥

पदच्छेद— धर्मान् भागवतान् ब्रूत यदि नः श्रुतये क्षमम् ।
यैः प्रसन्नः प्रपन्नाय दास्यति आत्मानम् अपि अजः ॥

शब्दार्थ—

धर्मान्	५.	धर्मों का	यैः	७.	क्योंकि उनसे
भागवतान्	४.	भागवत	प्रसन्नः	९.	प्रसन्न होकर
ब्रूत	६.	उपदेश कीजिये	प्रपन्नाय	१०.	शरणागत भक्तों को
यदि नः	१.	यदि हम	दास्यति	१२.	दानकर डालते हैं
श्रुतये	२	सुनने के	आत्मानम् अपि	११.	अपने आप का भी
क्षमम् ।	३.	अधिकारी हों तो कृपा करके	अजः ॥	८.	जन्मादि विकार से रहित भगवान्

श्लोकार्थ—यदि हम सुनने के अधिकारी हों तो कृपा करके भागवत धर्मों का उपदेश कीजिये। क्योंकि उनसे जन्मादि विकार से रहित भगवान् प्रसन्न होकर शरणागत भक्तों को अपने आपका भी दानकर डालते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रीनारद उवाच—**एवं ते निमिना पृष्टा वसुदेव महत्तमाः ।**
प्रतिपूज्याब्रुवन् प्रीत्या ससदस्यर्त्विजं नृपम् ॥३२॥

पदच्छेद— एवम् ते निमिना पृष्टा वसुदेव महत्तमाः ।
प्रतिपूज्य अब्रुवन् प्रीत्या ससदस्य ऋत्विजम् नृपम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५.	यह	प्रतिपूज्य	८.	उनका और उनके प्रश्न का सम्मान किया
ते	३.	उन	अब्रुवन्	१२.	बोले
निमिना	२.	जब राजा निमि ने	प्रीत्या	७.	बड़े प्रेम से
पृष्टा	६.	प्रश्न किया तब उन लोगों ने	ससदस्य	९.	और सदस्य तथा
वसुदेव	१.	हे वसुदेव जी !	ऋत्विजम्	१०.	ऋत्विजों के साथ
महात्तमाः ।	४.	भगवत्प्रेमी सन्तों से	नृपम् ॥	११.	बैठे हुये राजा निमि से

श्लोकार्थ—हे वसुदेव जी ! जब राजा निमि ने उन भगवत्प्रेमी सन्तों से यह प्रश्न किया, तब उन लोगों ने बड़े प्रेम से उनका और उनके प्रश्न का सम्मान किया। और सदस्य तथा ऋत्विजों के साथ बैठे हुये राजा निमि से बोले ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

कविरुवाच—मन्येऽकुतश्चिद्भयमच्युतस्य पादाम्बुजोपासनमत्र नित्यम् ।
उद्विग्नबुद्धेरसदात्मभावाद् विश्वात्मना यत्र निवर्तते भीः ॥३३॥

पदच्छेद मन्ये अकुतः चिद्भयम् अच्युतस्य पाद् अम्बुज उपासनम् अत्र नित्यम् ।
उद्विग्न बुद्धेः असदात्म भावात् विश्वआत्मना यत्र निवर्तते भीः ॥

शब्दार्थ—

मन्ये	१	हम ऐसा मानते हैं कि	उद्विग्न	१२	उद्विग्न
अकुतः	८.	शून्य है (क्योंकि)	बुद्धेः	१३.	चित्त प्राणियों का
चिद्भयम्	७.	सर्वथा भय	असदात्म	१०.	असत् पदार्थों में
अच्युतस्य	४.	भगवान् श्रीकृष्ण के	भावात	११.	अहंता और ममता वाले एवं
पाद् अम्बुज	५.	चरण कमलों की	विश्वआत्मना	१५.	इस उपासना का अनुष्ठान करने पर
उपासनम्	६.	उपासना ही	यत्र	९.	उनके शरणागत होने पर
अत्र	२	इस संसार में	निवर्तते	१६.	निवृत्त हो जाता है
नित्यम् ।	३.	नित्य-निरन्तर	भीः ॥	१४.	भय भी

श्लोकार्थ—हम ऐसा मानते हैं कि इस संसार में नित्य-निरन्तर भगवान् श्रीकृष्ण के चरण-कमलों की उपासना ही सर्वथा भय शून्य है। क्योंकि उनके शरणागत होने पर असत् पदार्थों में अहंता और ममता वाले एवं उद्विग्न चित्त प्राणियों का भय भी इस उपासना का अनुष्ठान करने पर निवृत्त हो जाता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ये वै भगवता प्रोक्ता उपाया ह्यात्मलब्धये ।
अञ्जः पुंसामविदुषां विद्धि भागवतान् हि तान् ॥३४॥

पदच्छेद— ये वै भगवता प्रोक्ता उपाया हि आत्म लब्धये ।
अञ्जः पुंसाम् अविदुषाम् विद्धि भागवतान् हि तान् ॥

शब्दार्थ—

ये	८.	जो	अञ्जः	५.	सुगमता से
वै	१.	निश्चय ही	पुंसाम	४.	पुरुषों को भी
भगवता	२.	भगवान् ने	अविदुषाम्	३.	अज्ञानी
प्रोक्ता	१०.	बतलाये हैं	विद्धि	१४.	समझो
उपाया हि	९.	उपाय स्वयं अपने श्री मुख से	भागवतान्	१३.	अज्ञानी
आत्म	६.	अपनी	हि	१२.	ही
लब्धये ।	७.	प्राप्त के लिये	तान् ॥	११.	उन्हें

श्लोकार्थ—निश्चय ही भगवान् ने अज्ञानी पुरुषों को भी सुगमता से अपनी प्राप्ति के जो उपाय स्वयं अपने श्री मुख से बतलाये हैं। उन्हें ही भागवत धर्म समझो ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यानास्थाय नरो राजन् न प्रमाद्येत कर्हिचित् ।
धावन् निमील्य वा नेत्रे न स्खलेन्न पतेदिह ॥३५॥

पदच्छेद— यान् आस्थाय नरो राजन् न प्रमाद्येत कर्हिचित् ।
धावन् निमील्य वा नेत्रे न स्खलेत् न पतेत् इह ॥

शब्दार्थ—

यान्	२.	इन भागवत धर्मों का	धावन्	९.	दौड़ने पर
आस्थाय	३.	आश्रय लेकर	निमील्य	८.	बन्द करके
नरो	४.	मनुष्य	वा नेत्रे	७.	और आँखें
राजन्	१.	हे राजन् ।	न स्खलेत्	११.	नहीं गिरता ही है और
न प्रमाद्येत	६.	विघ्नों से पीड़ित नहीं होता है	न पतेत्	१२.	न पतित ही होता है
कर्हिचित् ।	५.	कभी भी	इह ॥	१०.	इस मार्ग से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इन भागवत धर्मों का आश्रय लेकर मनुष्य कभी भी विघ्नों से पीड़ित नहीं होता है। और आँखें बन्द करके दौड़ने पर इस मार्ग से नहीं गिरता ही है। और न पतित ही होता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्याऽऽत्मना वानुसृतस्वभावात् ।
करोति यद् यत् सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयेत्तत् ॥३६॥

पदच्छेद— कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्या आत्मना वा अनुसृत स्वभावात् ।
करोति यद् यत् सकलम् परस्मै नारायणाय इति समर्पयेत् तत् ॥

शब्दार्थ—

कायेन	१.	वह शरीर से	करोति	१०.	करे
वाचा	२.	वाणी से	यद्-यत्	९.	जो-जो
मनसेन्द्रियैर्वा	३.	मन से, इन्द्रियों से	सकलम्	११.	वह सब
बुद्ध्या	४.	बुद्धि से	परस्मै	१२.	परम-पुरुष
आत्मना	५.	अहंकार से	नारायणाय	१३.	भगवान् नारायण के लिये है
वा	६.	अथवा	इति	१४.	इस भाव से
अनुसृत	७.	एक जन्म की आदतों से	समर्पयेत्	१६.	समर्पण कर दे
स्वभावात् ।	८.	स्वभाव वश	तत् ॥	१५.	उन्हें

श्लोकार्थ—वह शरीर से, वाणी से, मन से, इन्द्रियों से, बुद्धि से, अहंकार से अथवा एक जन्म की आदतों से स्वभाववश जो-जो करे, वह सब परम पुरुष भगवान् नारायण के लिये है। इस भाव से उन्हें समर्पण कर दे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

भयं द्वितीयाभिनिवेशतः स्यादीशादपेतस्य विपर्ययोऽस्मृतिः ।
तन्माययातो बुध आभजेत्तं भक्त्यैकयेशं गुरुदेवतात्मा ॥३७॥

पदच्छेद— भयम् द्वितीय अभिनिवेशतः स्यात् ईशात् अपेतस्य विपर्ययः अस्मृतिः ।
तत् मायया अतः बुध आभजेत् तम् भक्त्या एकया ईशम् गुरुदेवता आत्मा ॥

शब्दार्थ—					
भयम्	८.	भय	तत् मायया	३.	उनकी माया से
द्वितीय	६.	देह-आदि अन्य वस्तु में	अतो बुध	१०.	इसलिये समझदार व्यक्ति को
अभिनिवेशतः	७.	अनुरक्ति के कारण ही	आभजेत्	१६.	भजन करना चाहिये
स्यात्	९.	हो जाता है	तम् भक्त्या	१४.	भक्ति के द्वारा उस
ईशात्	१.	ईश्वर से	एकया	१३.	अनन्य
अपेतस्य	२.	विमुख पुरुष को	ईशम्	१५.	ईश्वर का ही
विपर्ययः	५.	भ्रम हो जाता है अतः	गुरुदेवता	१२.	गुरु को ही आराध्यदेव मानकर
अस्मृतिः ।	४.	अपने स्वरूप की विस्मृति और	आत्मा ॥	११.	अपने

श्लोकार्थ—ईश्वर से विमुख पुरुष को उनकी माया से अपने स्वरूप की विस्मृति और भ्रम हो जाता है। अतः देह आदि अन्य वस्तु में अनुरक्ति के कारण ही भय हो जाता है। इसलिये समझदार व्यक्ति को अपने गुरु को ही आराध्यदेव मान कर अनन्य भक्ति के द्वारा उस ईश्वर का ही भजन करना चाहिये ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

अविद्यमानोऽप्यवभाति हि द्वयो ध्यातुर्धिया स्वप्नमनोरथौ यथा ।
तत् कर्मसङ्कल्पविकल्पकं मनो बुधो निरुन्ध्यादभयं ततः स्यात् ॥३८॥

पदच्छेद— अविद्यमानः अपि अवभाति हि द्वयो ध्यातुः धिया स्वप्नमनोरथौ यथा ।
तत् कर्म सङ्कल्पविकल्पकम् मनो बुधो निरुन्ध्यात् अभयम् ततः स्यात् ॥

शब्दार्थ—					
अविद्यमानः	५.	वस्तुतः न होने पर	तत् कर्म	९	इसलिये सांसारिक कर्मों के सम्बन्ध में
अपि	६.	भी	सङ्कल्पविकल्पकम्	११.	सङ्कल्प-विकल्प करने वाले
अवभाति	८.	भान होता है	मनो	१२	मन को
हि द्वयो	७.	भेद-भावना का	बुधो	१०.	ज्ञानवान पुरुष को
ध्यातुः धिया	२.	दृष्टा की बुद्धि में	निरुन्ध्यात्	१३.	रोक देना चाहिये
स्वप्न	३.	स्वप्न के समय कल्पना से और	अभयम्	१५.	अभय पद की
मनोरथौ	४.	जाग्रत में मनोरथों से	ततः	१४.	ऐसा करते ही उसे
यथा ।	१.	जिस प्रकार	स्यात् ॥	१६.	प्राप्ति हो जायेगी ।

श्लोकार्थ—जिस प्रकार दृष्टा की बुद्धि में स्वप्न के समय कल्पना से और जाग्रत में मनोरथों से वस्तुतः न होने पर भी भेद भावना का भान होता है। इसलिये सांसारिक कर्मों के सम्बन्ध में ज्ञानवान पुरुष को सङ्कल्प विकल्प करने वाले मन को रोक देना चाहिये। ऐसा करते ही उसे अभय पद की प्राप्ति हो जायेगी ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

शृण्वन् सुभद्राणि रथाङ्गपाणेर्जन्मानि कर्माणि च यानि लोके।
गीतानि नामानि तदर्थकानि गायन् विलज्जो विचरेदसङ्गः ॥३९॥

पदच्छेद— शृण्वन् सुभद्राणि रथाङ्गपाणेः जन्मानि कर्माणि च यानि लोके।
गीतानि नामानि तत् अर्थकानि गायन् विलज्जो विचरेत् असङ्गः ॥

शब्दार्थ—					
शृण्वन्	८.	सुनते रहना चाहिये	गीतानि	१२.	गीतों का
सुभद्राणि	७.	मङ्गलमयी कथायें हैं (उन्हें)	नामानि	११.	नामों तथा
रथाङ्गपाणेः	२.	भगवान् के	तत्	९.	और उनके कर्म तथा लीला के
जन्मानि	३.	जन्म की	अर्थकायि	१०.	अर्थ वाले
कर्माणि	५.	लीला की	गायन्	१३.	गान करते हुये
च	४.	और	विलज्जो	१४.	लाज-सङ्कोच छोड़कर
यानि	६.	जो	विचरेत्	१६.	विचरण करना चाहिये
लोके।	१.	संसार में	असङ्गः ॥	१५.	असङ्ग भाव से

श्लोकार्थ—संसार में भगवान् के जन्म की और लीला की जो मङ्गलमयी कथायें हैं, उन्हें सुनते रहना चाहिये। और उनके कर्म तथा लीला के अर्थ वाले नामों तथा गीतों का गान करते हुये लाज-सङ्कोच छोड़कर असङ्गभाव से विचरण करना चाहिये॥

चत्वारिंशः श्लोकः

एवंव्रतः स्वप्रियनामकीर्त्या जातानुरागो द्रुतचित्त उच्चैः।
हसत्यथो रोदिति रौति गायत्युन्मादवन्नृत्यति लोकबाह्यः ॥४०॥

पदच्छेद— एवम् व्रतः स्वप्रिय नामकीर्त्या जात अनुरागः द्रुतचित्त उच्चैः।
हसति अथो रोदिति रौति गायति उन्माद वत नृत्यति लोकबाह्यः ॥

शब्दार्थ—					
एवम्	१.	इस प्रकार का	हसति अथो	११.	कभी हंसता है
व्रतः	२.	व्रत धारण करने वाला	रोदिति	१२.	कभी रोने लगता है कभी
स्व प्रिय	३.	अपने परम प्रियतम के	रौति	१३.	ऊँचे स्वर से प्रभु को पुकारता
नामकीर्त्या	४.	नाम कीर्तन से	गायति	१४.	कभी उनके गुणों का गान करता है
जात	६.	उत्पन्न होने के कारण	उन्मादवत्	१५.	कभी उन्मत्त होकर
अनुरागः	५.	प्रेम	नृत्यति	१६.	नाचने लगता है
द्रुतचित्त	७.	द्रवित चित्त होकर	लोक	९.	विवश होकर तथा
उच्चैः।	८.	साधारण जनों से ऊपर उठ जाता है। और	बाह्यः ॥	१०.	प्रेम पर वश होकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार का व्रत धारण करने वाला अपने परम प्रियतम के नाम कीर्तन से प्रेम उत्पन्न होने के कारण द्रवित चित्त होकर साधारण जनों से ऊपर उठ जाता है। और विवश होकर तथा प्रेम परवश होकर कभी हंसता है, कभी रोने लगता है, कभी ऊँचे स्वर से प्रभु को पुकारता है, कभी उनके गुणों का गान करता है। कभी उन्मत्त होकर नाचने लगता है।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो द्रुमादीन् ।
सरित्समुद्रांश्च हरेः शरीरं यत् किञ्च भूतं प्रणमेदनन्यः ।४१॥

पदच्छेद—खम् वायुम् अग्निम् सलिलम् महीम् च ज्योतींषि सत्त्वानि दिशोद्रुम आदीन् ।
सरित् समुद्रान् च हरेः शरीरम् यत् किञ्च भूतम् प्रणमेद् अनन्यः ॥

शब्दार्थ—

खम् वायुम्	१.	यह आकाश, वायु	सरित	८.	नदी
अग्निम्	२.	अग्नि	समुद्रान् च	९.	समुद्र और
सलिलम्	३.	जल	हरेः	१३.	भगवान के
महीम् च	४.	पृथ्वी और	शरीरम्	१४.	शरीर हैं (अतः) ऐसा जानकर
ज्योतींषि	५.	ग्रह-नक्षत्र	यत् किञ्च	११.	जो कुछ भी
सत्त्वानि	६.	प्राणी	भूतम्	१२.	प्राणी मात्र है सब
दिशोद्रुम	७.	दिशायें वृक्ष-वनस्पति	प्रणमेद्	१६.	प्रणाम करना चाहिये
आदीन् ।	१०.	आदि	अनन्यः ॥	१५.	सबको अनन्य भाव से

श्लोकार्थ—यह आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी और ग्रह-नक्षत्र, प्राणी, दिशायें, वृक्ष-वनस्पति नदी और समुद्र आदि जो कुछ भी प्राणी मात्र हैं। सब भगवान् के शरीर हैं। अतः ऐसा जानकर सबको अनन्य भाव से प्रणाम करना चाहिये ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

भक्तिः परेशानुभवो विरक्तिरन्यत्र चैष त्रिक एककालः ।
प्रपद्यमानस्य यथाश्नतः स्युस्तुष्टिः पुष्टिः क्षुदपायोऽनुघासम् ॥४२॥

पदच्छेद— भक्तिः परेश अनुभवः विरक्तिः अन्यत्र च एष त्रिक एक कालः ।
प्रपद्यमानस्य यथा अश्नतः स्युः तुष्टिः पुष्टिः क्षुत् अपायो अनुघासम् ॥

शब्दार्थ—

भक्ति	९	भजन के समय भगवत्प्रेम	प्रपद्यमानस्य	८.	वैसे ही भगवत् शरणागत को
परेश	१०.	प्रभु के स्वरूप का	यथा अश्नतः	१.	जैसे भोजन करने वाले को
अनुभवः	११.	ज्ञान	स्युः	७.	ये सब एक साथ होते हैं
विरक्ति	१३.	वैराग्य	तुष्टिः	३.	तृप्ति
अन्यत्र	१२.	उनके अतिरिक्त वस्तुओं में	पुष्टिः	४.	जीवन शक्ति का सञ्चार
च एष	१४.	ये	क्षुत्	५.	और क्षुधा की
त्रिक	१५.	तीनों	अपायो	६.	निवृत्ति
एककालः ।	१६.	एक साथ ही प्राप्त होते हैं	अनुघासम् ॥	२.	प्रत्येक ग्रास के साथ

श्लोकार्थ—जैसे भोजन करने वाले को प्रत्येक ग्रास के साथ तृप्ति जीवन शक्ति का सञ्चार और क्षुधा की निवृति ये सब एक साथ होते हैं। वैसे ही भगवत् शरणागत को भजन के समय भगवत्प्रेम प्रभु के स्वरूप का ज्ञान उनके अतिरिक्त वस्तुओं में वैराग्य ये तीनों एक साथ ही प्राप्त होते हैं।

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

इत्यच्युताङ्घ्रिं भजतोऽनुवृत्त्या भक्तिर्विरक्तिर्भगवत्प्रबोधः ।
भवन्ति वै भागवतस्य राजंस्ततः परां शान्तिमुपैति साक्षात् ॥४३॥

पदच्छेद— इति अच्युत अङ्घ्रिम् भजतः अनुवृत्त्या भक्तिः विरक्तिः भगवत् प्रबोधः ।
भवन्ति वै भागवतस्य राजन् ततः पराम् शान्तिम् उपैति साक्षात् ॥

शब्दार्थ—

इति अच्युत	३.	इस प्रकार भगवान् के	भवन्ति	१२.	प्राप्त होता है
अङ्घ्रिम्	४.	चरण कमलों का ही	वै	६.	उसे
भजतः	५.	भजन करता है	भागवतस्य	७.	भगवत् सम्बन्धी
अनुवृत्त्या	२.	जो प्रतिक्षण एक-एक वृत्ति के द्वारा	राजन्	१.	हे राजन् !
भक्तिः	८.	प्रेम मयी भक्ति	ततः	१३.	इसके बाद वह
विरक्तिः	९.	संसार के प्रति वैराग्य और	परामशान्तिम्	१५.	परम शान्ति को
भगवत्	१०.	भगवान् के	उपैति	१६.	प्राप्त करता है
प्रबोधः ।	११.	स्वरूप का ज्ञान	साक्षात् ॥	१४.	साक्षात् भगवत् स्वरूप होकर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जो प्रतिक्षण एक-एक वृत्ति के द्वारा इस प्रकार भगवान् के चरण कमलों का ही भजन करता है। उसे भगवत् सम्बन्धी प्रेम मयी भक्ति, संसार के प्रति वैराग्य और भगवान् के स्वरूप का ज्ञान प्राप्त होता है। इसके बाद वह साक्षात् भगवत् स्वरूप होकर परम शान्ति को प्राप्त करता है ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

राजोवाच—**अथ भागवतं ब्रूत यद्धर्मो यादृशो नृणाम् ।**
यथा चरति यद् ब्रूते यैर्लिङ्गैर्भगवत्प्रियः ॥४४॥

पदच्छेद— अथ भागवतम् ब्रूत यत् धर्मो यादृशो नृणाम् ।
यथा चरति यद् ब्रूते यैः लिङ्गैःभगवत् प्रियः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	अब आप	यथा	७.	जैसा
भागवतम्	२.	भगवद्भक्त का लक्षण	चरति	८.	व्यवहार करता है
ब्रूत	३.	बताइये	यद् ब्रूते	९.	और जैसा बोलता है तथा
यत् धर्मो	४.	उसके जो धर्म हैं	यैः	१०.	जिन
यादृशो	५.	जैसा स्वभाव होता है	लिङ्ग	११.	लक्षणों के कारण वह
नृणाम् ।	६.	लोगों के साथ	भगवत्प्रियः।	१२.	भगवान् को प्रिय है उसे कहिये

श्लोकार्थ—अब आप भगवद्भक्त के लक्षण बतलाइये, उसके जो धर्म हैं, जैसा स्वभाव होता है लोगों के साथ जैसा व्यवहार करता है, और जैसा बोलता है तथा जिन लक्षणों के कारण वह भगवान् को प्रिय है उसे कहिये ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

हरिरुवाच— सर्वभूतेषु यः पश्येद् भगवद्भावमात्मनः।
भूतानि भगवत्यात्मन्येष भागवतोत्तमः ॥४५॥

पदच्छेद— सर्वभूतेषु यः पश्येद् भगवत् भावम् आत्मनः।
भूतानि भगवति आत्मनि एष भागवत उत्तमः ॥

शब्दार्थ—

सर्वभूतेषु	२.	समस्त प्राणियों को	भूतानि	८.	समस्त प्राणियों और
यः	१.	जो	भगवति	९.	परमात्मा को देखता है
पश्येद्	६.	देखता है (और)	आत्मनि	७.	जो अपने में
भगवत	४.	परमात्म	एष	१०.	वही
भावम्	५.	भाव से	भागव	१२.	भागवत है
आत्मनः।	३.	आत्म स्वरूप	उत्तमः।	११.	सबसे उतम

श्लोकार्थ— जो समस्त प्राणियों को आत्म स्वरूप परमात्म-भाव से देखता है। और जो अपने में समस्त प्राणियों और परमात्मा को देखता है। वही सबसे उत्तम भागवत है॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

ईश्वरे तदधीनेषु बालिशेषु द्विषत्सु च।
प्रेममैत्रीकृपोपेक्षा यः करोति स मध्यमः ॥४६॥

पदच्छेद— ईश्वरे तत् अधीनेषु बालिशेषु द्विषत्सु च।
प्रेम मैत्री कृपा उपेक्षा यः करोति स मध्यमाः॥

शब्दार्थ—

ईश्वरे	२.	भगवान् से	मैत्री	६.	मित्रता
तत्	४.	उनके	कृपा	८.	कृपा
अधीनेषु	५.	शरणागत भक्तों से	उपेक्षा	१०.	तिरस्कार
बालिशेषु	७.	दुःखो और अज्ञानियों पर	यः	१.	जो
द्विषत्सु च।	९.	और भगवान् से द्वेष करने वालों का	करोति	११.	करता है
प्रेम	३.	प्रेम	स मध्यमाः॥	१२.	वह मध्यम श्रेणी का भागवत है

श्लोकार्थ—जो भगवान् से प्रेम उनके शरणागत भक्तों से मित्रता, दु.खो और अज्ञानियों पर कृपा और भगवान् से द्वेष करने वालों का तिरस्कार करता है। वह मध्यम श्रेणी का भागवत है॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

अर्चायामेव हरये पूजां यः श्रद्धयेहते ।
न तद्भक्तेषु चान्येषु स भक्तः प्राकृतः स्मृतः ॥४७॥

पदच्छेद — अर्चायाम् एव हरये पूजाम् यः श्रद्धया ईहते ।
न तत् भक्तेषु च अन्येषु स भक्तः प्राकृतः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

अर्चायाम्	३.	मूर्ति की	न	११.	नहीं करता
एव	४.	ही	तत्	८.	उन भगवान् के
हरये	२.	भगवान् की	भक्तेषु च	९.	भक्तों और
पूजाम्	५.	पूजा	अन्येषु	१०.	अन्य लोगों की सेवा
यः	१.	जो	स भक्तः	१२.	वह भक्त
श्रद्धया	६.	श्रद्धा से	प्राकृतः	१३.	साधारण श्रेणी का
ईहते ।	७.	करता है (परन्तु)	स्मृतः ॥	१४.	कहा गया है

श्लोकार्थ—जो भगवान् की मूर्ति की ही पूजा श्रद्धा से करता है। और उन भगवान् के भक्तों और अन्य लोगों की सेवा नहीं करता, वह भक्त साधारण श्रेणी का कहा गया है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

गृहीत्वापीन्द्रियैरर्थान् यो न द्वेष्टि न हृष्यति ।
विष्णोर्मायामिदं पश्यन् स वै भागवतोत्तमः ॥४८॥

पदच्छेद— गृहीत्वा अपि इन्द्रियैः अर्थान् यो न द्वेष्टि न हृष्यति ।
विष्णोः मायाम् इदम् पश्यन् सः वै भागवत उत्तमः ॥

शब्दार्थ—

गृहीत्वा	४.	ग्रहण करके	विष्णोः	९.	भगवान् की
अपि	५.	भी	मायाम्	१०.	माया है (जो ऐसा)
इन्द्रियैः	२.	श्रोत्र-नेत्रादि इन्द्रियों के द्वारा	इदम्	८.	ये सब
अर्थान्	३.	शब्द रूपादि विषयों का	पश्यन्	११.	जानता है
यो	१.	जो	सः वै	१२.	वही
न द्वेष्टि	७.	न द्वेष करता है	भागवत	१४.	भागवत है
न हृष्यति ।	६.	न हर्षित होता है (और)	उत्तमः ॥	१३.	उत्तम

श्लोकार्थ—जो श्रोत्र-नेत्रादि इन्द्रियों के द्वारा शब्द रूपादि विषयों का ग्रहण करके भी न हर्षित होता है। और न द्वेष करता है। ये सब भगवान् की माया है। जो ऐसा जानता है; वही उत्तम भागवत है ॥

एकोनपञ्चाशत्तमः श्लोकः

देहेन्द्रियप्राणमनोधियां यो जन्माप्ययक्षुद्भयतर्षकृच्छ्रैः ।
संसारधर्मैरविमुह्यमानः स्मृत्या हरेर्भागवतप्रधानः ॥४९॥

पदच्छेद— देह इन्द्रिय प्राण मनः धियाम् यः जन्म अप्यय क्षुत् भय-तर्ष कृच्छ्रैः ।
संसार धर्मैः अविमुह्यमानः स्मृत्या हरेः भागवत प्रधानः ॥

शब्दार्थ—

देह-इन्द्रिय	७.	शरीर इन्द्रिय	संसार	१.	संसार के
प्राण मनः	८.	प्राण मन और	धर्मैः	२.	धर्म हैं
धियाम्	९.	बुद्धि को प्राप्त होते हैं	अविमुह्य	१३.	इनसे मोहित
यो	१०.	जो पुरुष	मानः	१४.	नहीं होता (वही)
जन्म अप्यय	३.	जन्म-मृत्यु	स्मृत्या	१२.	स्मृति में तन्मय होने के कारण
क्षुत्	४.	भूख-प्यास	हरेः	११.	भगवान् की
भय-तर्ष	६.	भय और तृष्णा ये	भागवत	१६.	भागवत है
कृच्छ्रैः ।	५.	श्रम-कष्ट	प्रधानः ॥	१५.	उत्तम

श्लोकार्थ—संसार के धर्म हैं जन्म-मृत्यु, भूख-प्यास, श्रम-कष्ट, भय और तृष्णा । ये शरीर-इन्द्रिय प्राण-मन और बुद्धि को प्राप्त होते हैं । जो पुरुष भगवान् की स्मृति में तन्मय होने के कारण इनसे मोहित नहीं होता वही उत्तम भागवत है ॥

पञ्चाशत्तमः श्लोकः

न कामकर्मबीजानां यस्य चेतसि सम्भवः ।
वासुदेवैकनिलयः स वै भागवतोत्तमः ॥५०॥

पदच्छेद— न काम कर्म बीजानाम् यस्य चेतसि सम्भवः ।
वासुदेव एक निलयः सः वै भागवत उत्तमः ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं होता है	वासुदेव	८.	वासुदेव में हो
काम	२.	विषय भोग की इच्छा	एक	७.	जो एक मात्र
कर्म	३.	कर्म और उनके	निलयः	९.	निवास करता है
बीजानाम्	४.	बीज वासनाओं का	सः वै	१०.	व ही
यस्य चेतसि	१.	जिसके मन में	भागवत	१२.	भागवत है
सम्भवः ।	५.	उदय	उत्तमः ॥	११.	उत्तम

श्लोकार्थ—जिसके मन में विषय भोग की इच्छा कर्म और उनके बीज-वासनाओं का उदय नहीं होता है । जो एक मात्र वासुदेव में ही निवास करता है वही उत्तम भागवत है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

न यस्य जन्मकर्मभ्यां न वर्णाश्रमजातिभिः ।
सज्जतेऽस्मिन्नहंभावो देहे वै स हरेः प्रियः ॥५१॥

पदच्छेद— न यस्य जन्म कर्मभ्याम् न वर्णआश्रम जातिभिः ।
सज्जते अस्मिन् अहम् भावः देहे वैसः हरेः प्रियः ॥

शब्दार्थ—

न	४. न तो	सज्जते	१०. होता है
यस्य	१. जिनका	अस्मिन्	२. इस
जन्म	५. सत्कुल में जन्म	अहम् भावः	९. अहम् भाव
कर्मभ्याम्	६. तपस्यादि कर्म से	देहे	३. शरीर में
न वर्णआश्रम	७. न वर्ण आश्रम और	वैसः	११. वह निश्चय ही
जातिभिः ।	८. जाति से ही	हरेः प्रियः ॥	१२. भगवान् का प्यारा है

श्लोकार्थ—जिनका इस शरीर में न तो सत्कुल में जन्म, तपस्यादि कर्म से न वर्ण आश्रम और जाति से ही अहम् भाव होता है, वह निश्चय ही भगवान् का प्यारा है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

न यस्य स्वः पर इति वित्तेष्वात्मनि वा भिदा ।
सर्वभूतसमः शान्तः स वै भागवतोत्तमः ॥५२॥

पदच्छेद— न यस्य स्वः पर इति वित्तेषु आत्मनि वा भिदा ।
सर्व भूतसमः शान्तः सः वै भागवत उत्तमः ॥

शब्दार्थ—

न	६. नहीं है । तथा जो	सर्व	७. समस्त
यस्य स्वः	३. जिसका अपने और	भूतसमः	८. पदार्थों में समान और
पर इति	४. पराये का	शान्तः	९. शान्त रहता है
वित्तेषु	१. धन सम्पत्ति	सः वै	१०. वही
आत्मनि वा	२. अथवा शरीरादि में	भागवत	१२. भागवत है
भिदा ।	५. भेद	उत्तमः ।	११. उत्तम

श्लोकार्थ—तथा धन-सम्पत्ति अथवा शरीरादि में जिसका अपने और पराये का भेद नहीं है, तथा जो समस्त पदार्थों में समान और शान्त रहता है । वही उत्तम भागवत है ॥

त्रिपञ्चाशत्तमः श्लोकः

त्रिभुवनविभवहेतवेऽप्यकुण्ठस्मृतिरजितात्मसुरादिभिर्विमृग्यात् ।
न चलति भगवत्पदारविन्दाल्लवनिमिषार्धमपि यः स वैष्णवाग्र्यः ॥५३॥

पदच्छेद—त्रिभुवन विभवहेतवे अपि अकुण्ठ स्मृतिः अजित आत्मसुर आदिभिः विमृग्यात् ।
न चलति भगवत् पदारविन्दात् लवनिमिष अर्धम् अपि यः सवैष्णव अग्र्यः ॥

शब्दार्थ—					
त्रिभुवन	१.	तीनों लोकों के	न चलति	१४.	नहीं पृथक् होता है
विभवहेतवे	२.	वैभव के लिये	भगवत्	९.	भगवान् के
अपि अकुण्ठ	३.	भी जो भगवत्	पदारविन्दात्	१०.	चरणा रविन्दों में
स्मृतिः	४.	स्मृति का तार नहींछोड़ता है	लवनिमिष	१२.	क्षण आधे पल के लिये
अजित	५.	भगवान् में हा	अर्धम्	११.	आधे
आत्मसुर	६.	जिनका चित्त लगा रहता है ऐसे देवता	अपि	१२.	भी
आदिभिः	७.	आदि को भी	यः	१३.	जो
विमृग्यात् ।	८.	दुर्लभ	सवैष्णवअग्र्यः	१५:	वही वैष्णवों में अग्रगण्य है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तीनों लोकों के वैभव के लिये भी जो भगवत् स्मृति का तार नहीं छोड़ता है। और भगवान् में ही जिनका चित्त लगा रहता है। ऐसे देवता आदि को भी दुर्लभ भगवान् के चरणारविन्दों में आधे क्षण, आधे पल के लिये भी जो नहीं पृथक् होता है। वही वैष्णवों में अग्रगण्य है ॥

चतुःपञ्चाशत्तमः श्लोकः

भगवत उरुविक्रमाङ्घ्रिशाखानखमणिचन्द्रिकया निरस्ततापे ।
हृदि कथमुपसीदतां पुनः स प्रभवति चन्द्र इवोदितेऽर्कतापः ॥५४॥

पदच्छेद— भगवत उरु विक्रम अङ्घ्रिशाखा नखमणि चन्द्रिकया निरस्त तापे ।
हृदि कथम् उपसीदताम् पुनः सः प्रभवति चन्द्र इव उदिते अर्कतापः ॥

शब्दार्थ—					
भगवत	३.	भगवान् के	हृदि	९.	उनके हृदय में
उरु	१.	भांति-भांति के	कथम्	११.	कैसे
विक्रम	२.	पाद विन्यास करने वाले	उपसीदताम्	१२.	आ सकता है
अङ्घ्रिशाखा	४.	चरणों के अँगुलियों के	पुनः सः	१०.	वह फिर
नखमणि	५.	नख की मणि	प्रभवति	१६.	नहीं लग सकता
चन्द्रिकया	६.	चन्द्रिका से	चन्द्र इव	१३.	जैसे चन्द्रमा का
निरस्त	८.	दूर हो चुका है	उदिते	१४.	उदय होने पर
तापे ।	७.	जिन भक्तों का ताप	अर्कतापः ॥	१५.	सूर्य का ताप

श्लोकार्थ—हे राजन् ! भांति-भांति के पाद विन्यास करने वाले भगवान् के चरणों की अँगुलियों के नख की मणि चन्द्रिका से जिन भक्तों का ताप दूर हो चुका है। उनके हृदय में वह फिर कैसे आ सकता है। जैसे चन्द्रमा का उदय होने पर सूर्य का ताप नहीं लग सकता ॥

पञ्चपञ्चाशत्तमः श्लोकः

विसृजति हृदयं न यस्य साक्षाद्धरिरवशाभिहितोऽप्यघौघनाशः ।
प्रणयरशनया धृताङ्घ्रिपद्मः स भवति भागवतप्रधान उक्तः ।।५५।।

पदच्छेद—

विसृजति हृदयम् न यस्य साक्षात् हरिः अवशाभिहितः अपि अघओघ नाशः ।
प्रणय रशनया धृत अङ्घ्रि पद्मः सः भवति भागवत प्रधान उक्तः ।।

शब्दार्थ—

विसृजति	८. छोड़ते हैं (क्योंकि)	प्रणयः	९.	उसने प्रेम की
हृदयम् न	७. हृदय को क्षणभर भी नहीं	रशनया	१०.	रस्सी से
यस्य	६. जिसके	धृत	१२.	बाँध रखा है
साक्षात् हरिः	५. स्वयं भगवान् श्रीहरि	अङ्घ्रि पद्मः	११.	उनके चरण कमलों को
अवशाभिहितः	१. विवशता से नामोच्चारण	सः भवति	१३.	वही
अपि	२. करने पर भी	भागवत	१४.	भगवत् भक्तों में
अघओघ	३. सम्पूर्ण अघराशि को	प्रधान	१५.	प्रधान
नाशः ।	४. नष्ट कर देने वाले	उक्तः ।।	१६.	कहलाता है

श्लोकार्थ—

हे राजन् ! विवशता से नामोच्चारण करने पर भी सम्पूर्ण अघराशि को नष्ट कर देने वाले स्वयं भगवान् श्री हरि जिसके हृदय को क्षणभर भी नहीं छोड़ते हैं । क्योंकि उसने प्रेम की रस्सी से उनके चरण कमलों को बाँध रखा है । वही भागवत भक्तों में प्रधान कहलाता है ।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे द्वितीयः अध्यायः ।। २ ।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

तृतीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच—परस्य विष्णोरीशस्य मायिनामपि मोहिनीम् ।
मायां वेदितुमिच्छामो भगवन्तो ब्रुवन्तु नः ॥१॥

पदच्छेद— परस्य विष्णोः ईशस्य मायिनाम् अपि मोहिनीम् ।
मायाम् वेदितुम् इच्छामः भगवन्तः ब्रुवन्तु नः ॥

शब्दार्थ—

परस्य	१.	सर्व शक्ति मान	मायाम्	७.	मैं उस माया का
विष्णोः	२.	विष्णु	वेदितुम्	८.	स्वरूप जानना
ईशस्य	३.	भगवान् की माया	इच्छामः	९.	चाहता हूँ
मायिनाम्	४.	बड़े-बड़े मायावियों को	भगवन्तः	१०.	आप लोग
अपि	५.	भी	ब्रुवन्तु	१२.	बतलाइये
मोहिनीम् ।	६.	मोहित कर देती है	नः ॥	११.	कृपा करके मुझे

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! सर्व शक्ति मान विष्णु भगवान् की माया बड़े-बड़े मायावियों को भी मोहित कर देती है। मैं उस माया का स्वरूप जानना चाहता हूँ। आप लोग कृपा करके मुझे बतलाइये ॥

द्वितीयः श्लोकः

नानुतृप्ये जुषन् युष्मद्वचो हरिकथामृतम् ।
संसारतापनिस्तप्तो मर्त्यस्तत्तापभेषजम् ॥२॥

पदच्छेद— न अनुतृप्ये जुषन् युष्मत् वचः हरि कथा अमृतम् ।
संसार ताप निस्तप्तः मर्त्यः तत् ताप भेषजम् ॥

शब्दार्थ—

न	१२.	नहीं हो रहा हूँ	संसार	१.	संसार के
अनुतृप्ये	११.	मैं तृप्त	ताप	२.	तापों से
जुषन्	१०.	रसास्वादन करते हुये	निस्तप्तः	३.	सन्तप्त हुआ
युष्मत् वचः	९.	आपकी वाणी का	मर्त्यः	४.	अतः मरने वाला मनुष्य
हरि कथा	७.	भगवत् कथा के	तत् ताप	५.	उस ताप की
अमृतम् ।	८.	अमृत में डूबी हुई	भेषजम् ॥	६.	औषधिरूप

श्लोकार्थ—हे भगवान् ! संसार के तापों से सन्तप्त हुआ मैं अतः मरने वाला मनुष्य उस ताप की औषधि रूप भगवत कथा के अमृत में डूबी हुई आपकी वाणी का रसास्वादन करते हुये मैं तृप्त नहीं हो पा रहा हूँ ॥

तृतीयः श्लोकः

अन्तरिक्ष उवाच—एभिर्भूतानि भूतात्मा महाभूतैर्महाभुज।
ससर्जोच्चावचान्याद्यः स्वमात्रात्मप्रसिद्धये ॥३॥

पदच्छेद— एभिः भूतानि भूत आत्मा महाभूतैः महाभुज।
ससर्ज उच्चावचानि आद्यः स्वमात्र आत्म प्रसिद्धये ॥

शब्दार्थ—

एभिः	६. इन	ससर्ज	१०.	रचना की है
भूतानि	९. प्राणियों की	उच्चावचानि	८.	नाना प्रकार के
भूतआत्मा	३. परमात्मा ने	आद्यः	२.	आदि पुरुष
महाभूतैः	७. पञ्च महाभूतों के द्वारा	स्वमात्र	४.	अपने अंश भूत
महाभुज।	१. हे महापराक्रमी !	आत्म प्रसिद्धये ॥	५.	जीवों के मोक्ष के लिये

श्लोकार्थ—हे महापराक्रमी ! आदि पुरुष परमात्मा ने अपने अंशभूत जीवों के मोक्ष के लिये इन पञ्च महाभूतों के द्वारा नाना प्रकार के प्राणियों की रचना की ॥

चतुर्थः श्लोकः

एवं सृष्टानि भूतानि प्रविष्टः पञ्चधातुभिः।
एकधा दशधाऽऽत्मानं विभजञ्जुषते गुणान् ॥४॥

पदच्छेद— एवम् सृष्टानि भूतानि प्रविष्टः पञ्चधातुभिः।
एकधा दशधा आत्मानम् विभजन् जुषते गुणान् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	एकधा	८.	एक मन के रूप में तथा
सृष्टानि	४. बने हुये	दशधा	९.	पाँच कर्मेन्द्रिय पाँच ज्ञानेन्द्रिय के रूप में
भूतानि	५. शरीरों में उन्होंने	आत्मानम्	७.	अपने को ही पहले
प्रविष्टः	६. प्रवेश किया	विभजन्	१०.	विभक्त करके उन्हीं के द्वारा
पञ्च	२. पञ्च	जुषते	१२.	भोग करने लगे
धातुभिः।	३. भूतों के द्वारा	गुणान् ॥	११.	विषयों का

श्लोकार्थ—इस प्रकार पञ्च भूतों के द्वारा बने हुये शरीरों में उन्होंने प्रवेश किया। अपने को पहले एक मन के रूप में तथा पाँच कर्मेन्द्रिय, पाँच ज्ञानेन्द्रिय के रूप में विभक्त करके उन्हीं के द्वारा विषयों का भोग करने लगे ॥

पञ्चमः श्लोकः

गुणैर्गुणान् स भुञ्जान आत्मप्रद्योतितैः प्रभुः ।
मन्यमान इदं सृष्टमात्मानमिह सज्जते ॥५॥

पदच्छेद— गुणैः गुणान् स भुञ्जान आत्म प्रद्योतितैः प्रभुः ।
सन्यमान इदम् सृष्टम् आत्मानम् इह सज्जते ॥

शब्दार्थ—

गुणैः गुणान्	५.	इन्द्रियों के द्वारा विषयों का	मन्यमानः	१०.	मानकर
सः	१.	वह देहाभिमानी	इदम्	७.	इस
भुञ्जान	६.	भोग करता है	सृष्टम्	८.	शरीर को
आत्म	३.	अन्तर्यामी के द्वारा	आत्मानम्	९.	अपना
प्रद्योतितैः	४.	प्रकाशित	इह	११.	इसी शरीरादि में
प्रभुः ।	२.	जीव	सजज्ते ॥	१२.	आसक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—वह देहाभिमानी जीव अन्तर्यामी के द्वारा प्रकाशित इन्द्रियों के द्वारा विषयों का भोग करता है । और इस शरीर को अपना मानकर इसी शरीरादि में आसक्त हो जाता है ॥

षष्ठः श्लोकः

कर्माणि कर्मभिः कुर्वन् सनिमित्तानि देहभृत् ।
तत्तत् कर्मफलं गृह्णन् भ्रमतीह सुखेतरम् ॥६॥

पदच्छेद— कर्माणि कर्मभिः कुर्वन् सनिमित्तानि देहभृत् ।
तत्-तत् कर्मफलम् गृह्णन् भ्रमत इह सुखेतरम् ॥

शब्दार्थ—

कर्माणि	२.	सकाम कर्म	तत्-तत्	५	वह कर्मेन्द्रियों से
कर्मभिः	१.	वह कर्मेन्द्रियों से	कर्म	६.	कर्म
कुर्वन्	३.	करता हुआ	फलम्	७.	फलों को
सनिमित्तानि	४.	उनके अनुसार	गृह्णन्	८.	प्राप्त करता हुआ
देह	९.	शरीर	भ्रमति इह	१२.	इस संसार में भटकने लगता है
भृत् ।	१०.	धारण करके	सुखेतरम् ॥	११.	दुःख रूप

श्लोकार्थ—वह कर्मेन्द्रियों से सकाम कर्म करता हुआ उनके अनुसार उन-उन कर्म फलों को प्राप्त करता हुआ शरीर धारण करके दुःख रूप इस संसार में भटकने लगता है ॥

सप्तमः श्लोकः

इत्थं कर्मगतीर्गच्छन् बह्वभद्रवहाः पुमान् ।
आभूतसम्प्लवात् सर्गप्रलयावश्नुतेऽवशः ॥७॥

पदच्छेद—
इत्थम् कर्मगतीः गच्छन् बहु अभद्रवहाः पुमान् ।
आभूत सम्प्लवात् सर्ग प्रलयौ अश्नुते अवशः ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	इस प्रकार	आभूत	७.	महाभूतों के
कर्मगतीः	५.	कर्म गतियों को	सम्प्लवात्	८.	प्रलय पर्यन्त
गच्छन्	६.	प्राप्त करता हुआ	सर्ग	१०.	जन्म और
बहु	३.	ऐसी अनेक	प्रलयौ	११.	मृत्यु को
अभद्रवहाः	४.	अमङ्गलमय	अश्नुते	१२.	प्राप्त होता रहता है
पुमान् ।	२.	यह जीव	अवशः ॥	९.	विवश होकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार यह जीव ऐसी अनेक अमङ्गलमय कर्मगतियों को (और कर्म फलों को) प्राप्त करता हुआ महाभूतों के प्रलय पर्यन्त विवश होकर जन्म और मृत्यु को प्राप्त होता रहता है ॥

अष्टमः श्लोक

धातूपप्लव आसन्ने व्यक्तं द्रव्यगुणात्मकम् ।
अनादिनिधनः कालो ह्यव्यक्तायापकर्षति ॥८॥

पदच्छेद—
धातु उपप्लवे आसन्ने व्यक्तम् द्रव्य गुण आत्मकम् ।
अनादि निधनः कालः हि अव्यक्ताय अपकर्षति ॥

शब्दार्थ—

धातु	१.	पञ्चभूतों के	अनादि	४.	अनादि और
उपप्लवे	२.	प्रलय का समय	निधनः	५.	अनन्त
आसन्ने	३.	निकट आने पर	कालः हि	६.	काल
व्यक्तम्	९.	इस समस्त सृष्टि को	अव्यक्ताय	१०.	अव्यक्त की ओर
द्रव्य गुण	७.	द्रव्य एवम् गुण	अपकर्षति ॥	११.	खींचता है
आत्मकम् ।	८.	रूप			

श्लोकार्थ—पञ्चभूतों के प्रलय का समय निकट आने पर अनादि और अनन्त काल द्रव्य एवम् गुण रूप इस समस्त सृष्टि को अव्यक्त की ओर खींचता है ॥

नवमः श्लोकः

शतवर्षा ह्यनावृष्टिर्भविष्यत्युल्बणा भुवि ।
तत्कालोपचितोष्णार्को लोकांस्त्रीन् प्रतपिष्यति ॥९॥

पदच्छेद— शतवर्षा हि अनावृष्टिः भविष्यति उल्बणा भुवि ।
तत् काल उपचित उष्ण अर्कः लोकान् त्रीन् प्रतपिष्यति ॥

शब्दार्थ—

शतवर्षा हि	१. तब सौ वर्षों तक	तत्काल	६. तब प्रलय की शक्ति
अनावृष्टिः	४. सूखा	उपचित	७. प्राप्त करके
भविष्यति	५. पड़ता है	उष्णअर्कः	८. सूर्य अपनी गर्मी से
उल्बणा	३. भयङ्कर	लोकान् त्रीन्	९. तीनों लोकों को
भुवि ।	२. पृथ्वी पर	प्रतपिष्यति ॥	१०. तपाने लगते हैं

श्लोकार्थ— तब सौ वर्षों तक पृथ्वी पर भयङ्कर सूखा पड़ता है। तब प्रलय की शक्ति प्राप्त करके सूर्य अपनी गर्मी से तीनों लोकों को तपाने लगते हैं ॥

दशमः श्लोकः

पातालतलमारभ्य सङ्कर्षणमुखानलः ।
दहन्नूर्ध्वशिखो विष्वग वर्धते वायुनेरितः ॥१०॥

पदच्छेद— पाताल तलम् आरभ्य सङ्कर्षण मुख अनलः ।
दहन् ऊर्ध्व शिखः विष्वक् वर्धते वायुना ईरितः ॥

शब्दार्थ—

पाताल	६. पाताल	दहन्	८. जलाना
तलम्	७. लोक से	ऊर्ध्व	१०. ऊँची-ऊँची
आरभ्य	९. आरम्भ करके	शिखः विष्वक्	११. ज्वाला के रूप में
सङ्कर्षण	१. उस समय शेषनाग के	वर्धते	१२. फैल जाती है
मुख	२. मुँह से निकली	वायुना	४. वायु की
अनलः ।	३. अग्नि	ईरितः ॥	५. प्रेरणा से

श्लोकार्थ— उस समय शेषनाग के मुँह से निकली अग्नि वायु की प्रेरणा से पाताल लोक से जलाना आरम्भ करके ऊँची-ऊँची ज्वाला के रूप में चारों ओर फैल जाती है ॥

एकादशः श्लोकः

सांवर्तको मेघगणो वर्षति स्म शतं समाः ।
धाराभिर्हस्तिहस्ताभिर्लीयते सलिले विराट् ॥११॥

पदच्छेद— सांवर्तकः मेघगणः वर्षतिस्म शतम् समाः ।
धाराभिः हस्ति हस्ताभिः लीयते सलिले विराट् ॥

शब्दार्थ—

सांवर्तकः	१.	प्रलय कालीन सांवर्तक	धाराभिः	५.	मोटी-मोटी धाराओं से
मेघगणः	२.	मेघगण	हस्ति	३.	हाथी की
वर्षतिस्म	८.	बरसता रहता है	हस्ताभिः	४.	सूंड के समान
शतम्	६.	सौ	लीयते	११.	डूब जाता है
समाः ।	७.	वर्षों तक	सलिले	१०	जल में
			विराट् ॥	९.	उससे यह विराट् ब्रह्माण्ड

श्लोकार्थ—प्रलय कालीन सांवर्तक मेघगण हाथी की सूंड के समान मोटी-मोटी धाराओं से सौ वर्षों तक बरसता रहता है । उससे यह विराट् ब्रह्माण्ड जल में डूब जाता है ॥

द्वादशः श्लोकः

ततो विराजमुत्सृज्य वैराजः पुरुषो नृप ।
अव्यक्तं विशते सूक्ष्मं निरिन्धन इवानलः ॥१२॥

पदच्छेद— ततः विराजम् उत्सृज्य वैराजः पुरुषः नृप ।
अव्यक्तम् विशते सूक्ष्मम् निःइन्धनः इव अनलः ॥

शब्दार्थ—

ततः	२.	उस समय	अव्यक्तम्	११.	अव्यक्त में
विराजम्	८.	ब्रह्माण्ड शरीर को	विशते	१२.	लीन हो जाते हैं
उत्सृज्य	९.	छोड़कर	सूक्ष्मम्	१०.	सूक्ष्म स्वरूप
वैराजः	६.	वैसे ही विराट्	निःइन्धनः	४.	बिना ईंधन के
पुरुषः	७.	पुरुष ब्रह्मा अपने	इव	३.	जैसे
नृप ।	१.	हे राजन् !	अनलः ॥	५.	आग बुझ जाती है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस समय जैसे बिना ईंधन के आग बुझ जाती है, वैसे ही विराट् पुरुष ब्रह्मा अपने ब्रह्माण्ड शरीर को छोड़कर सूक्ष्म स्वरूप अव्यक्त में लीन हो जाते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

वायुना हृतगन्धा भूः सलिलत्वाय कल्पते ।
सलिलं तद्धृतरसं ज्योतिष्ट्वायोपकल्पते ॥१३॥

पदच्छेद— वायुना हृतगन्धा भूः सलिलत्वाय उपकल्पते ।
सलिलम् तत् धृत रसम् ज्योतिष्ट्वाय उपकल्पते ॥

शब्दार्थ—

वायुना	१. वायु	सलिलम्	८. जल के
हृतगन्धा	३. गन्ध खींच लेती है	तत्	७. जब वही वायु
भूः	२. पृथ्वी की	धृत	१०. खींच लेती है
सलिल	४. जिससे वह जल के	रसम्	९. रस को
त्वाय	५. रूप में	ज्योतिष्ट्वाय	११. तब वह जल अपना कारण
उपकल्पते ।	६. हो जाती है और	उपकल्पते ॥	१२. बन जाता है

श्लोकार्थ—वायु पृथ्वी की गन्ध खींच लेती है, जिससे वह जल के रूप में हो जाती है। और जब वही वायु जल के रस को खींच लेती है तब वह जल अपना कारण अग्नि बन जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

हृतरूपं तु तमसा वायौ ज्योतिः प्रलीयते ।
हृतस्पर्शोऽवकाशेन वायुर्नभसि लीयते ॥१४॥

पदच्छेद— हृतरूपम् तु तमसा वायौ ज्योतिः प्रलीयते ।
हृतस्पर्शः अवकाशेन वायुः नभसि लीयते ॥

शब्दार्थ—

हृतरूपम्	३. अग्नि का रूप ले लेता है तब	हृत	९. छीन लेता है तब
तु	१. जब	स्पर्श	८. वायु की स्पर्श शक्ति
तमसा	२. अन्धकार	अवकाशेन	७. अवकाश रूप आकाश
वायौ	५. वायु में	वायुः	१०. वह वायु
ज्योतिः	४. वह अग्नि	नभसि	११. आकाश में
प्रलीयते ।	६. लीन हो जाती है	लीयते ॥	१२. लीन हो जाता है

श्लोकार्थ—जब अन्धकार अग्नि का रूप ले लेता है। तब वह अग्नि वायु में लीन हो जाती है। अवकाश रूप आकाश वायु की स्पर्श शक्ति छीन लेता है तब वह वायु आकाश में लीन हो जाता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

कालात्मना हृतगुणं नभ आत्मनि लीयते।
इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सह वैकारिकैर्नृप।
प्रविशन्ति ह्यहङ्कारं स्वगुणैरहमात्मनि ॥१५॥

पदच्छेद— काल आत्मना हृत गुणम् नभः आत्मनि लीयते।
इन्द्रियाणि मनो बुद्धिः सह वैकारिकैः नृप।
प्रविशन्ति हि अहङ्कारम् स्व गुणैः अहम् आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

कालआत्मना	२.	कालरूप ईश्वर के द्वारा	वैकारिकैः	९	अपने तीन प्रकार के कार्यों के साथ
हृत	४.	हरण कर लिये जाने पर वह	नृप	१.	हे राजन् !
गुणम् नभः	३.	आकाश के शब्द गुण का	प्रविशन्ति	१४.	लीन हो जाते हैं
आत्मनि	५.	अहंकार में	हि अहङ्कारम्	११.	अहंकार में
लीयते।	६.	लीन हो जाता है	स्वगुणैः	१०.	अपने गुणों के साथ
इन्द्रियाणि	७.	इन्द्रियाँ	अहम्	१२.	अहम्
मनः बुद्धिः सह	८.	मन और बुद्धि	आत्मनि ॥	१३.	स्वरूप में

श्लोकार्थ—हे राजन् ! कालरूप ईश्वर के द्वारा आकाश के शब्द गुण का हरण कर लिये जाने पर वह अहंकार में लीन हो जाता है। इन्द्रियाँ मन और बुद्धि अपने तीन प्रकार के कार्यों के साथ अपने गुणों के साथ अहंकार में अहम् स्वरूप में लीन हो जाता है ॥

षोडशः श्लोकः

एषा माया भगवतः सर्गस्थित्यन्तकारिणी।
त्रिवर्णा वर्णितास्माभिः किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥१६॥

पदच्छेद— एषा माया भगवतः सर्ग स्थिति अन्तकारिणी।
त्रिवर्णा वर्णिता अस्माभिः किम् भूयः श्रोतुम् इच्छसि ॥

शब्दार्थ—

एषा	१.	यह	त्रिवर्णा	५.	त्रिगुणमयी
माया	७.	माया है	वर्णिता	९.	वर्णन किया है
भगवतः	६.	भगवान् की	अस्माभिः	८.	इसका हमने आपसे
सर्ग	२.	सृष्टि	किम्भूयः	१०.	अब आप और क्या
स्थिति	३.	स्थिति और	श्रोतुम्	११.	सुनना
अन्तकारिणी॥	४.	संहार करने वाली	इच्छसि।	१२.	चाहते हैं

श्लोकार्थ—यह सृष्टि स्थिति और संहार करने वाली त्रिगुणमयी भगवान् की माया है। इसका हमने आपसे वर्णन किया है। अब आप और क्या सुनना चाहते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

राजोवाच— यथैतामैश्वरीं मायां दुस्तरामकृतात्मभिः ।
तरन्त्यञ्जः स्थूलधियो महर्ष इदमुच्यताम् ॥१७॥

पदच्छेद— यथा एताम् ऐश्वरीम् मायाम् दुस्तराम् अकृत आत्मभिः ।
तरन्ति अञ्जः स्थूल धियः महर्षे इदम् उच्यताम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	२.	जिसलिये	तरन्ति	१२.	पार कर सकते हैं
एताम्	६.	इस	अञ्जः	११.	अनायास ही इसे कैसे
ऐश्वरीम्	५.	परमात्मा की	स्थूल	९.	फिर मोटी
मायाम्	७.	माया से	धियः	१०.	बुद्धि वाले लोग
दुस्तराम्	८.	पार होना कठिन है	महर्षे	१.	हे महर्षि जी !
अकृत	४.	वश में न करने वालों के लिये	इदम्	१३.	यह
आत्मभिः ।	३.	मन को	उच्यताम् ॥	१४.	बताइये

श्लोकार्थ—हे महर्षि जी ! जिसलिये मन को वश में न करने वालों के लिये परमात्मा की माया से पार होना कठिन है । फिर मोटी बुद्धि वाले लोग अनायास ही इसे कैसे पार कर सकते हैं । यह बताइये ॥

अष्टादशः श्लोकः

प्रबुद्ध उवाच— कर्माण्यारभमाणानां दुःखहत्यै सुखाय च ।
पश्येत् पाकविपर्यासं मिथुनीचारिणां नृणाम् ॥१८॥

पदच्छेद— कर्माणि आरभमाणानाम् दुःख हत्यै सुखाय च ।
पश्येत् पाक विपर्यासम् मिथुनी चारिणाम् नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

कर्माणि	५.	कर्म	पश्येत्	१२.	विचार करना चाहिये
आरभमाणानाम्	६.	करने वाले	पाक	१०.	फल की
दुःख	१.	दुःख की	विपर्यासम्	११.	विपरीत स्थिति पर
हत्यै	२.	निवृत्ति	मिथुनी	७.	स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में
सुखाय	४.	सुख की प्राप्ति के लिये	चारिणाम्	८.	बँधे
च ।	३.	और	नृणाम् ॥	९.	लोगों को

श्लोकार्थ—दुःख की निवृत्ति और सुख की प्राप्ति के लिये कर्म करने वाले स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में बँधे लोगों को फल की विपरीत स्थिति पर विचार करना चाहिये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नेत्यार्तिदेन वित्तेन दुर्लभेनात्ममृत्युना ।
गृहापत्याप्तपशुभिः का प्रीतिः साधितैश्चलैः ॥१९॥

पदच्छेद— नित्य आर्तिदेन वित्तेन दुर्लभेन आत्म मृत्युना ।
गृह अपत्य आप्त पशुभिः का प्रीतिः साधितैः चलैः ॥

शब्दार्थ—

नित्य	३.	सदा	अपत्य	८.	पुत्र
आर्तिदेन	४.	दुःख देने वाले	आप्त	९.	स्वजन सम्बन्धी
वित्तेन	६.	धन से क्या लाभ है ?	पशुभिः	१०.	पशु-धन आदि
दुर्लभेन	५.	कठिनाई से मिलने वाले	का	१३.	क्या
आत्म	१.	आत्मा के लिये	प्रीतिः	१४	सुख-शान्ति मिल सकती है
मृत्युना ।	२.	मृत्यु स्वरूप	साधितैः	१२.	इन्हें जुटा लेने से
गृह	७.	घर	चलैः ॥	११.	अनित्य और नाशवान हैं

श्लोकार्थ—आत्मा के लिये मृत्यु स्वरूप सदा दुःख देने वाले कठिनाई से मिलने वाले धन से क्या लाभ है ? घर-पुत्र-स्वजन-सम्बन्धी पशु-धन आदि अनित्य और नाशवान् हैं, इन्हें जुटा लेने से क्या सुख-शान्ति मिल सकती है ॥

विंशः श्लोकः

एवं लोकं परं विद्यान्नश्वरं कर्मनिर्मितम् ।
सतुल्यातिशयध्वंसं यथा मण्डलवर्तिनाम् ॥२०॥

पदच्छेद— एवम् लोकम् परम् विद्यात् नश्वरम् कर्म निर्मितम् ।
सतुल्य अतिशय ध्वंसम् यथा मण्डल वर्तिनाम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इसी प्रकार	सतुल्य	११.	वहाँ भी बराबर वालों के
लोकम्	४.	इस लोक और	अतिशय	१२.	होड़ लगी रहती है
परम्	५.	परलोक को भी	ध्वंसम्	१३.	और नाश निश्चित है
विद्यात्	७.	समझना चाहिये	यथा	१०.	समान
नश्वरम्	६.	नाशवान्	मण्डल	८.	इस मृत्यु लोक में
कर्म	२.	कर्मों के	वर्तिनाम् ॥	९.	रहने वालों के
निर्मितम् ।	३.	फल स्वरूप होने के कारण			

श्लोकार्थ—इसी प्रकार कर्मों के फलस्वरूप होने के कारण इस लोक और पर लोक को भी नाशवान् समझना चाहिये । इस मृत्यु लोक में रहने वालों के समान वहाँ भी बराबर वालों के साथ होड़ लगी रहती है और नाश निश्चित है ॥

एकविंशः श्लोकः

तस्माद् गुरुं प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय उत्तमम् ।
शाब्दे परे च निष्णातं ब्रह्मण्युपशमाश्रयम् ॥२१॥

पदच्छेद— तस्मात् गुरुम् प्रपद्येत जिज्ञासुः श्रेय उत्तमम् ।
शाब्दे परे च निष्णातम् ब्रह्मणि उपशम आश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	शाब्दे	५.	वेदों के
गुरुम्	११.	गुरु की	परे च	६.	पारदर्शी
प्रपद्येत	१२.	शरण लेनी चाहिये	निष्णातम्	७.	विद्वान
जिज्ञासुः	४.	जानने वाले को	ब्रह्मणि	९.	परब्रह्म में
श्रेय	३.	कल्याण के	उपशम	८.	शान्त चित्त
उत्तमम् ।	२.	परम	आश्रयम् ॥	१०.	परिनिष्ठित

श्लोकार्थ—इसलिये परम कल्याण के जानने वाले को वेदों के पारदर्शी, विद्वान, शान्त चित्त परब्रह्म में परिनिष्ठित गुरू की शरण लेनी चाहिये ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तत्र भागवतान् धर्मान् शिक्षेद् गुर्वात्मदैवतः ।
अमाययानुवृत्त्या यैस्तुष्येदात्माऽऽत्मदो हरिः ॥२२॥

पदच्छेद— तत्र भागवतान् धर्मान् शिक्षेत् गुरुः आत्म दैवतः ।
अमायया अनुवृत्या यैः तुष्येत् आत्मा आत्मदः हरिः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	जिज्ञासु को	अमायया	२.	निष्कपट भाव से
भागवतान्	७.	भगवान् को प्राप्त कराने वाले	अनुवृत्या	३.	सेवा आदि के द्वारा
धर्मान्	८.	साधनों की	यैः	१०.	जिन साधनों से भक्त को
शिक्षेत्	९.	शिक्षा लेनी चाहिये	तुष्येत्	१४.	प्रसन्न होते है
गुरुः	६.	गुरु से	आत्मा	१२.	सर्वात्मा
आत्म	४.	अपने परम प्रियतम आत्मा	आत्मदः	११.	अपने आत्मा का दान करने वाले
दैवतः ।	५.	और इष्टदेव स्वरूप	हरिः ॥	१३.	भगवान्

श्लोकार्थ—जिज्ञासु को निष्कपट भाव से सेवा आदि के द्वारा अपने परम प्रियतम आत्मा और इष्ट देव स्वरूप गुरु से भगवान् को प्राप्त कराने वाले साधनों की शिक्षा लेना चाहिये । जिन साधनों से भक्त को अपने आत्मा का दान करने वाले सर्वात्मा भगवान् प्रसन्न होते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

सर्वतो मनसोऽसङ्गमादौ सङ्गं च साधुषु।
दयां मैत्रीं प्रश्रयं च भूतेष्वद्धा यथोचितम् ॥२३॥

पदच्छेद— सर्वतः मनसः असङ्गम् आदौ सङ्गम् च साधुषु।
दयाम् मैत्रीम् प्रश्रयम् च भूतेषु अद्धा यथा उचितम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वतः	३.	शरीर-सन्तान आदि में	दयाम्	१२.	दया
मनसः	४.	मन की	मैत्रीम्	१३.	मैत्री और
असङ्गम्	५.	अनासक्ति	प्रश्रयम्	१४.	विनय की शिक्षा ग्रहण करे
आदौ	२.	पहले	च भूतेषु	९.	और फिर प्राणियों के प्रति
सङ्गम्	८.	प्रेम करना सीखे	अद्धा	१.	अतः
च	६.	और	यथा	१०.	यथा
साधुषु।	७.	सन्त जनों से	उचितम् ॥	११.	योग्य

श्लोकार्थ—अतः पहले शरीर-सन्तान आदि में मन की अनासक्ति और सन्त जनों से प्रेम करना सीखे। और फिर प्राणियों के प्रति यथा-योग्य दया-मैत्री और विनय की शिक्षा ग्रहण करे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

शौचं तपस्तितिक्षां च मौनं स्वाध्यायमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसां च समत्वं द्वन्द्वसंज्ञयोः ॥२४॥

पदच्छेद— शौचम् तपः तितिक्षाम् च मौनम् स्वाध्यायम् आर्जवम्।
ब्रह्मचर्यम् अहिंसाम् च समत्वम् द्वन्द्व संज्ञयोः ॥

शब्दार्थ—

शौचम्	१.	बाहर-भीतर की पवित्रता	ब्रह्मचर्यम्	७.	ब्रह्मचर्य
तपः	२.	अपने धर्म का अनुष्ठान	अहिंसाम्	८.	अहिंसा तथा
तितिक्षाम्	३.	सहन शक्ति	च समत्वम्	११.	हर्ष-विषाद से रहित होना सीखें।
च मौनम्	४.	और मौन	द्वन्द्व	९.	शीत-उष्ण और द्वन्द्वों
स्वाध्यायम्	५.	स्वाध्याय	संज्ञयोः ॥	१०.	की स्थिति में
आर्जवम्।	६.	सरलता			

श्लोकार्थ—बाहर-भीतर की पवित्रता, अपने धर्म का अनुष्ठान सहन शक्ति और मौन स्वाध्याय, सरलता, ब्रह्मचर्य, अहिंसा तथा शीत-उष्ण आदि द्वन्द्वों की स्थिति में हर्ष-विषाद से रहित होना सीखें ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

सर्वत्रात्मेश्वरान्वीक्षां कैवल्यमनिकेतताम् ।
विविक्तचीरवसनं सन्तोषं येन केनचित् ॥२५॥

पदच्छेद— सर्वत्र आत्म ईश्वर अन्वीक्षाम् कैवल्यम् अनिकेतनम् ।
विवक्त चीर वसनम् सन्तोषम् येन केनचित् ॥

शब्दार्थ—

सर्वत्र	१.	सब जगह	विविक्त	७.	शुद्ध
आत्म	२.	चेतन रूप से आत्मा और	चीर	६.	पहनना तथा
ईश्वर	३.	नियन्ता रूप से ईश्वर को	वसनम्	८	वस्त्र
अन्वीक्षाम्	४.	देखना	सन्तोषम्	१२.	सन्तोष करना सीखे
कैवल्यम्	६.	एकान्त सेवन और	येन	१०.	जो
अनिकेतनम् ।	५.	घर की आसक्ति से रहित	केनचित् ॥	११.	कुछ मिल जाय, उसी में

श्लोकार्थ— सब जगह चेतन रूप से आत्मा और नियन्ता रूप से ईश्वर को देखना घर की आसक्ति से रहित होना, एकान्त सेवन और शुद्ध वस्त्र पहनना तथा जो कुछ मिल जाय, उसी में सन्तोष करना सीखे ॥

षड्विंशः श्लोकः

श्रद्धां भागवते शास्त्रेऽनिन्दामन्यत्र चापि हि ।
मनोवाक्कर्मदण्डं च सत्यं शमदमावपि ॥२६॥

पदच्छेद— श्रद्धाम् भागवते शास्त्रे अनिन्दाम् अन्यत्र च अपि हि ।
मनः वाक् कर्म दण्डम् च सत्यम् शमदमौ अपि ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धाम्	३.	श्रद्धा	मनः	७.	प्राणायाम के द्वारा मन का
भागवते	१.	भगवान् की प्राप्ति का मार्ग बताने वाले	वाक्	८.	मौन के द्वारा वाणी का
शास्त्रे	२.	शास्त्रों में	कर्म	६.	वासनाहीनता के अभ्यास से कर्मों का
अनिन्दाम्	६.	निन्दा न करना	दण्डम् च सत्यम्	१०.	संयम करना, सत्य बोलना
अन्यत्र च	४.	दूसरे किसी भी	शम	११.	इन्द्रियों को अपने गोलक में स्थिर रखना
अपि हि ।	५.	शास्त्र की	दमौ अपि ॥	१२.	मन को बाहर न जाने देना सीखे

श्लोकार्थ—भगवान् की प्राप्ति का मार्ग बताने वाले शास्त्रों में श्रद्धा, दूसरे किसी भी शास्त्र की निन्दा न करना, प्राणायाम के द्वारा मन का, मौन के द्वारा वाणी का; वासना हीनता के अभ्यास से कर्मों का संयम करना, सत्य बोलना, इन्द्रियों को अपने गोलक में स्थिर रखना, मन को बाहर न जाने देना सीखे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

श्रवणं कीर्तनं ध्यानं हरेरद्भुतकर्मणः ।
जन्मकर्मगुणानां च तदर्थेऽखिलचेष्टितम् ॥२७॥

पदच्छेद— श्रवणम् कीर्तनम् ध्यानम् हरेः अद्भुत कर्मणः ।
जन्म कर्म गुणानाम् च तदर्थे अखिल चेष्टितम् ॥

शब्दार्थ—

श्रवणम्	७.	श्रवण	जन्म	४.	जन्म
कीर्तनम्	८.	कीर्तन और	कर्म	५.	कर्म और
ध्यानम्	९.	ध्यान करना	गुणानाम्	६.	गुणों का
हरेः	३.	भगवान्	च तदर्थे	१०.	और उन्हीं के लिये
अद्भुत	१.	अद्भुत	अखिल	११.	समस्त
कर्मणः ।	२.	लीला करने वाले	चेष्टितम् ॥	१२.	क्रियायें करना सीखें

श्लोकार्थ—अद्भुत लीला करने वाले भगवान् के जन्म, कर्म और गुणों का श्रवण, कीर्तन और ध्यान करना और उन्हीं के लिये समस्त क्रियायें करना सीखे ॥

अष्टविंशः श्लोकः

इष्टं दत्तं तपो जप्तं वृत्तं यच्चात्मनः प्रियम् ।
दारान् सुतान् गृहान् प्राणान् यत् परस्मै विवेदनम् ॥२८॥

पदच्छेद— इष्टम् दत्तम् तपः जप्तम् वृत्तं यत् च आत्मनः प्रियम् ।
दारान् सुतान् गृहान् प्राणान् यत् परस्मै निवेदनम् ॥

शब्दार्थ—

इष्टम्	१.	यज्ञ	दारान्	५.	स्त्री
दत्तम तपः	२.	दान-तप अथवा	सुतान्	६.	पुत्र
जप्तम्	३.	जप	गृहान्	७.	घर
वृत्तम्	४.	सदाचार का पालन	प्राणान्	८.	अपना जीवन
यत् च	९.	और जो भी	यत्	१२.	वह सब
आत्मनः	१०.	अपने को	परस्मै	१३.	परमेश्वर के प्रति
प्रियम् ।	११.	प्रिय लगता हो	निवेदनम् ॥	१४.	अर्पित करना सीखे

श्लोकार्थ—यज्ञ, दान, तप अथवा जप, सदाचार का पालन, स्त्री, पुत्र, घर अपना जीवन और जो भी अपने को प्रिय हो, वह सब परमेश्वर के प्रति अर्पित करना सीखे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

एवं कृष्णात्मनाथेषु मनुष्येषु च सौहृदम् ।
परिचर्यां चोभयत्र महत्सु नृषु साधुषु ॥२६॥

पदच्छेद— एवम् कृष्ण आत्मनाथेषु मनुष्येषु च सौहृदम् ।
परिचर्याम् च उभयत्र महत्सु नृषु साधुषु ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	परिचर्याम्	६.	प्राणियों की सेवा तथा
कृष्ण आत्म-	२.	श्रीकृष्ण को ही अपने आत्मा	च	७	और
नाथेषु	४.	अपने स्वामी के रूप में साक्षात्कार करने वाले	उभयत्र	८	स्थावर जङ्गम दोनों प्रकार के
मनुष्येषु	५.	मनुष्यों के प्रति	महत्सु	१०.	परोपकारी सज्जनों की
च	३.	और	नृषु	११.	मनुष्यों की और
सौहृदम् ।	६.	प्रेम करना सीखें	साधुषु ॥	१२.	भगवत्प्रेमी संतों की सेवा करना सीखे

श्लोकार्थ—इस प्रकार श्रीकृष्ण को ही अपने आत्मा और अपने स्वामी के रूप में साक्षात्कार करने वाले मनुष्यों के प्रति प्रेम करना सीखें, और स्थावर-जङ्गम दोनों प्रकार के प्राणियों की सेवा तथा परोपकारी सज्जनों की, मनुष्यों की, भगवत्प्रेमी सन्तों की सेवा करना सीखें ॥

त्रिंशः श्लोकः

परस्परानुकथनं पावनं भगवद्यशः ।
मिथो रतिर्मिथस्तुष्टिर्निवृत्तिर्मिथ आत्मनः ॥३०॥

पदच्छेद— परस्पर अनुकथनम् पावनम् भगवत् यशः ।
मिथः रतिः मिथः तुष्टिः निवृत्तिः मिथः आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

परस्पर	४.	एक दूसरे से	रतिः	७.	प्रेम करना
अनुकथनम्	५.	बात चीत करना	मिथः	८.	आपस में
पावनम्	२.	परम पावन	तुष्टिः	९.	सन्तुष्ट रहना
भगवत्	१.	भगवान् के	निवृत्तिः	१०.	प्रपञ्च से निवृत्त होकर
यशः	३.	यश के बारे में	मिथः	११.	आपस में ही
मिथः	६.	आपस में	आत्मनः ॥	१२.	आध्यात्मिक शान्ति का अनुभव करना सीखें ॥

श्लोकार्थ—भगवान् के परमपावन यश के बारे में एक दूसरे से बात चीत करना, आपस में प्रेम करना, आपस में सन्तुष्ट रहना, प्रपञ्च से निवृत्त होकर आपस में ही आध्यात्मिक शान्ति का अनुभव करना सीखें ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

स्मरन्तः स्मारयन्तश्च मिथोऽघौघहरं हरिम् ।
भक्त्या सञ्जातया भक्त्या बिभ्रत्युत्पुलकां तनुम् ॥३१॥

पदच्छेद— स्मरन्तः स्मारयन्तः च मिथो अघ-औघ हरम् हरिम् ।
भक्त्या सञ्जातया भक्त्या विभ्रति उत्पुलकाम् तनुम् ॥

शब्दार्थ—					
स्मरन्तः	४.	स्वयं स्मरण करें	भक्त्या	७.	इस प्रकार साधन भक्ति का
स्मारयन्तः	६.	स्मरण करावें ।	सञ्जातया	८.	अनुष्ठान करते-करते
च मिथो	५.	और एक दूसरे को	भक्त्या	९.	प्रेम-भक्ति का उदय हो जाता है
अघ-औघ	१.	पापों की राशि को	बिभ्रति	१२.	धारण करते हैं
हरम्	२.	एक क्षण में भस्म करने वाले	उत्पुलकाम्	१०.	और वे प्रेमोद्रेक से पुलकित
हरिम् ।	३.	श्रीकृष्ण के गुणों का	तनुम् ॥	११.	शरीर

श्लोकार्थ—पापों की राशि को भस्म करने वाले श्रीकृष्ण के गुणों का स्वयं स्मरण करें और एक दूसरे को स्मरण करावें, इस प्रकार साधन भक्ति का अनुष्ठान करते-करते प्रेम-भक्ति का उदय हो जाता है। और वे प्रेमोद्रेक से पुलकित शरीर धारण करते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

क्वचिद् रुदन्त्यच्युतचिन्तया क्वचिद्धसन्ति नन्दन्ति वदन्त्यलौकिकाः ।
नृत्यन्ति गायन्त्यनुशीलयन्त्यजं भवन्ति तूष्णीं परमेत्य निर्वृताः ॥३२॥

पदच्छेद—क्वचित् रुदन्ति अच्युत चिन्तया क्वचित् हसन्ति नन्दन्ति वदन्ति अलौकिकाः ।
नृत्यन्ति गायन्ति अनुशीलयन्ति अजम् भवन्ति तूष्णीम् परमेत्य निर्वृताः ॥

शब्दार्थ—					
क्वचित्	१.	कभी वे	नृत्यन्ति	९.	कभी नाचते और
रुदन्ति	३.	रोने लगते हैं	गायन्ति	१०.	गाते हैं कभी
अच्युत चिन्तया	२.	भगवान् के न मिलने की चिन्ता से	अनुशीलयन्ति	१२.	अभिनय करते हैं तथा
क्वचित्	४.	कभी उनकी लीला की स्फूर्ति से	अजम्	११.	भगवान् की लीलाओं का
हसन्ति	५.	हँसने लगते हैं	भवन्ति	१६.	हो जाते हैं
नन्दन्ति	६.	कभी आनन्दित होते हैं	तूष्णीम्	१५.	शान्त
वदन्ति	८.	भगवान् से बातें करते हैं	परमेत्य	१३.	परम शान्ति का अनुभव करके
अलौकिकाः ।	७.	और कभी लोका से परे होकर	निर्वृताः ॥	१४.	कृत-कृत्य होकर

श्लोकार्थ—कभी वे भगवान् के न मिलने की चिन्ता से रोने लगते हैं, कभी उनकी लीला की स्फूर्ति से हँसते लगते हैं। कभी आनन्दित होते हैं। और कभी लोका से परे होकर भगवान् से बातें करते हैं। कभी नाचते और गाते हैं। कभी भगवान् की लीलाओं का अभिनय करते हैं तथा परम शान्ति का अनुभव करके कृत-कृत्य होकर शान्त हो जाते हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

इति भागवतान् धर्मान् शिक्षन् भक्त्या तदुत्थया ।
नारायणपरो मायामञ्जस्तरति दुस्तराम् ॥३३॥

पदच्छेद— इति भागवतान् धर्माम् शिक्षन् भक्त्या तत् उत्थया ।
नारायण परः मायाम् अञ्जः तरति दुस्तराम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	उत्थया ।	७.	उत्पन्न
भागवतान्	३.	भागवत	नारायणपरः	२.	भगवत्परायण व्यक्ति
धर्मान्	४.	धर्मों की	मायाम्	१०.	माया को
शिक्षन्	५.	शिक्षा ग्रहण करता हुआ	अञ्जः	११.	अनायास
भक्त्या	८.	भक्ति के द्वारा	तरति	१२.	पार कर जाते हैं
तत्	६.	उससे	दुस्तराम् ॥	९.	कठिन

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार भगवत्परायण व्यक्ति भागवत धर्मों की शिक्षा ग्रहण करता हुआ उससे उत्पन्न भक्ति के द्वारा कठिन माया को अनायास पार कर जाते हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

राजोवाच— नारायणाभिधानस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ।
निष्ठामर्हथ नो वक्तुं यूयं हि ब्रह्मवित्तमाः ॥३४॥

पदच्छेद— नारायण अभिधानस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ।
निष्ठाम् अर्हथ नः वक्तुम् यूयम् हि ब्रह्मवित्तमाः ॥

शब्दार्थ—

नारायण	३.	नारायण	अर्हथ	८.	आप उसे बताने में योग्य हैं
अभिधानस्य	४.	नाम से वर्णन किया गया है	नः	६.	हमें
ब्रह्मणः	२.	ब्रह्म का	वक्तुम्	७.	बताइये
परमात्मनः ।	१.	जिस परम आत्मा	यूयम् हि	९.	क्योंकि आप लोग
निष्ठाम्	५.	उसका स्वरूप	ब्रह्म वित्तमाः ॥	१०.	परमात्मा का वास्तविक स्वरूप जानने वाले हैं

श्लोकार्थ—जिस परम आत्मा ब्रह्म का नारायण नाम से वर्णन किया गया है । उसका स्वरूप हमें बताइये । आप उसे बताने में योग्य हैं । क्योंकि आप लोग परमात्मा का वास्तविक स्वरूप जानने वाले हैं ॥

पिप्पलायन उवाच—

एकादशः श्लोकः

स्थित्युद्भवप्रलयहेतुरहेतुरस्य यत् स्वप्नजागरसुषुप्तिषु सद् बहिश्च ।
देहेन्द्रियासुहृदयानि चरन्ति येन सञ्जीवितानि तदवेहि परं नरेन्द्र ॥३५॥

पदच्छेद— स्थिति उद्भव प्रलय हेतुः अहेतुः अस्य यत् स्वप्न जागर सुषुप्तिषु सद् बहिः च ।
देहेन्द्रिया सुहृदयानि चरन्ति येनसञ्जीवितानि तत् अवेहि परम् नरेन्द्र ॥

शब्दार्थ—

स्थिति उद्भव	३.	स्थिति और उत्पत्ति तथा	देहेन्द्रिया-	११.	शरीर इन्द्रियाँ
प्रलय हेतुः	४.	प्रलय का कारण होते हुये भी	सुहृदयानि	१२.	प्राण और अन्तःकरण
अहेतुः	५.	स्वयं कारण रहित है	चरन्ति	१३.	अपना-अपना काम करते हैं
अस्य	२.	जो इस संसार की	येनसञ्जीवितानि	१०	जिसकी सत्ता से सत्तावान होकर
यत् स्वप्न	६.	जो स्वप्न	तत्	१४.	उसी
जागर सुषुप्तिषु	७.	जाग्रत सुषुप्ति में	अवेहि	१६.	समझिये
सद् बहिः	८.	रहता हुआ बाहर	परम्	१५.	परम सत्य वस्तु को नारायण
च ।	९.	भी रहता है	नरेन्द्र ॥	१.	हे नरेन्द्र !

श्लोकार्थ—हे नरेन्द्र ! जो इस संसार की स्थिति और उत्पत्ति तथा प्रलय का कारण होते हुये भी स्वयं कारण रहित है । जो स्वप्न, जाग्रत और सुषुप्ति में रहता हुआ बाहर भी रहता है । जिसकी सत्ता से सत्तावान होकर शरीर-इन्द्रिय-प्राण और अन्तःकरण अपना-अपना काम करते हैं, उसी परम सत्य वस्तु को नारायण समझिये ॥

द्वादशः श्लोकः

नैतन्मनो विशति वागुत चक्षुरात्मा प्राणेन्द्रियाणि च यथानलमर्चिषः स्वाः ।
शब्दोऽपि बोधकनिषेधतयाऽऽत्ममूलमर्थोक्तमाह यदृते न निषेधसिद्धिः ॥३६॥

पदच्छेद—नएतत् मनः विशति वाक् उत चक्षुःआत्मा प्राणेन्द्रियाणि च यथा अनलम् अर्चिषः स्वाः ।
शब्द अपि बोधन तया आत्ममूलम् अर्थ उक्तम् आह यदृते न निषेध सिद्धिः ॥

शब्दार्थ—नएतत्	४.	इस आत्म तत्त्व में न तो	शब्दःअपि	९.	शब्दों ने भी नेति-नेति के द्वारा
मनः विशति	५.	मन की गति है	बोधक	१०.	बोध कराते हुये
वाक् उत	६.	न वाणी अथवा	निषेध तया	११.	निषेध रूप से
चक्षुःआत्मा	७.	नेत्र, बुद्धि	आत्म मूलम्	१२.	अपने मूल-निषेध के
प्राणेन्द्रियाणि	८.	प्राण और इन्द्रियों की हीगति है	अर्थ उक्तम् आह	१३.	अर्थ का कथन किया है
च यथा	१.	जैसे	यदृते	१४.	जिसके बिना
अनलम्	३.	अग्नि प्रकाशित नहीं होती है वैसे ही	न निषेध	१५.	निषेध की भी
अर्चिषः स्वाः ।	२.	अपनी अंशभूत चिनगारियों से	सिद्धिः ॥	१६.	सिद्धि नहीं होती है (वही आत्म तत्त्व है)

श्लोकार्थ—जैसे अपनी अंशभूत चिनगारियों से अग्नि प्रकाशित नहीं होती है । वैसे ही इस आत्मतत्त्व में न तो मन की गति है, न वाणी अथवा नेत्र, बुद्धि, प्राण और इन्द्रियों की ही गति है । शब्दों ने भी नेति-नेति के द्वारा बोध कराते हुये निषेध रूप से अपने मूल निषेध के अर्थ का कथन किया है । जिसके बिना निषेध की भी सिद्धि नहीं होती है । वही आत्म तत्त्व है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

सत्त्वं रजस्तम इति त्रिवृदेकमादौ सूत्रं महानहमिति प्रवदन्ति जीवम् ।
ज्ञानक्रियार्थफलरूपतयोरुशक्ति ब्रह्मैव भाति सदसच्च तयोः परं यत् ॥३७॥

पदच्छेद— सत्त्वम् रजः तम इति त्रिवृद् एकम् आदौ सूत्रम् महान् अहम् इति प्रवदन्ति जीवम् ।
ज्ञान क्रिया अर्थ फल रूप तया उरुशक्ति ब्रह्म एव भाति सद्-असत् च तयोः परम् यत् ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम् रजः तम	२.	सत्त्व, रज और तम	ज्ञान क्रिया	९.	ज्ञान-क्रिया और
इति त्रिवृद्	३.	इस प्रकार त्रिगुण मयी प्रकृति बना	अर्थ फल	१०.	अर्थ के फल
एकम् आदौ	१.	सृष्टि के आदि में वही एक तत्त्व	रूपतया	११.	रूप
सूत्रम्	५.	क्रिया प्रधान होने से सूत्रात्मा	उरु शक्ति	१२.	उस ब्रह्म की शक्ति अनन्त है
महान्	४.	उसी का ज्ञान प्रधान होने से महतत्त्व	ब्रह्म एव भाति	१६.	वह सब ब्रह्म ही है
अहम् इति	७.	अहंकार के रूप में	सद्-असत्	१३.	तथा सत्-असत्
प्रवदन्ति	८.	वर्णन किया गया और	च तयोः	१४.	इन दोनों रूपों और
जीवम् ।	६.	जीव की उपाधि होने से	परम् यत् ॥	१५.	इनके परे भी जो कुछ है

श्लोकार्थ--सृष्टि के आदि में वही एक तत्त्व, सत्त्व, रज और तम रूप इस प्रकार त्रिगुण मयी प्रकृति बना, उसी का ज्ञान प्रधान होने से महतत्त्व, क्रिया प्रधान होने से सूत्रात्मा, जीव की उपाधि होने से अहंकार के रूप में वर्णन किया गया है। और ज्ञान, क्रिया और अर्थ के फल रूप उस ब्रह्म की शक्ति अनन्त है। तथा सत्-असत् इन दोनों रूपों और इनके परे भी जो कुछ है वह सब ब्रह्म ही है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

नात्मा जजान न मरिष्यति नैधतेऽसौ न क्षीयते सवनविद् व्यभिचारिणां हि ।
सर्वत्र शश्वदनपाय्युपलब्धिमात्रं प्राणो यथेन्द्रियबलेन विकल्पितं सत् ॥३८॥

पदच्छेद—न आत्मा जजान न मरिष्यति न एधते असौ न क्षीयते सवनविद् व्यभिचारिणाम् हि ।
सर्वत्र शश्वद् अनपायि उपलब्धि मात्रम् प्राणः यथा इन्द्रिय बलेन विकल्पितम् सत् ॥

शब्दार्थ—न	२.	न तो कभी	सर्वत्र	९.	वह सब में है
आत्मा	१.	वह ब्रह्म स्वरूप आत्मा	शश्वद्	११.	अविनाशी है
जजान न	३.	जन्म लेता है और न	अनपायि	१०.	वह सदा रहने वाला और
मरिष्यति	४.	मरता है	उपलब्धि मात्रम्	१२.	ज्ञान स्वरूप है
न एधते असौ	५.	वह आत्मा न बढ़ता है	प्राणः यथा	१३.	प्राण के समान ज्ञान के एक
न क्षीयते	६.	न घटता ही है	इन्द्रिय बलेन	१४.	होने पर भी इन्द्रियों के सहयोग से
सवनविद्	८.	साक्षी है	विकल्पितम्	१५.	अनेकता की कल्पना
व्यभिचारिणाम् हि	७	वह परिवर्तनशील पदार्थों का	सत् ॥	१६.	हो जाती है

श्लोकार्थ—वह ब्रह्म स्वरूप आत्मा न तो कभी जन्म लेता है, और न मरता है, वह आत्मा न बढ़ता है, न घटता है। वह परिवर्तनशील पदार्थों का साक्षी है। वह सब में है, वह सदा रहने वाला और अविनाशी है, और ज्ञान स्वरूप है। प्राण के समान ज्ञान के एक होने पर भी इन्द्रियों के सहयोग से अनेकता की कल्पना हो जाती है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अण्डेषु पेशिषु तरुष्वविनिश्चितेषु प्राणो हि जीवमुपधावति तत्र तत्र ।
सन्ने यदिन्द्रियगणेऽहमि च प्रसुप्ते कूटस्थ आशयमृते तदनुस्मृतिर्नः ॥३९॥

पदच्छेद— अण्डेषु पेशिषु तरुषु अविनिश्चितेषु प्राणः हि जीवम् उपधावति तत्र तत्र ।
सन्ने यत् इन्द्रिय गणे अहमि च प्रसुप्ते कूटस्थे आशयम् ऋते तत् अनुस्मृतिः नः ।।

शब्दार्थ—					
अण्डेषु	१.	अण्डे से उत्पन्न होनेवाले तथा	सन्ने	१०.	सुषुप्ति अवस्था में
पेशिषु	२.	नाल में बँधे पैदा होने वाले	यत् इन्द्रिय गणे	९.	जब इन्द्रिय, समुदाय
तरुषु	३.	वृक्षों और	अहमि	११.	और अहंकार भी
अविनिश्चितेषु	४.	पसीने से उत्पन्न जीवों के शरीरों में	च प्रसुप्ते	१२.	सो जाते हैं तब
प्राणः हि	६.	प्राण शक्ति	कूटस्थे	१३.	बाद में
जीवम्	७.	जीव के	आशयम् ऋते	१५.	आत्मा रूप आधार के बिना
उपधावति	८.	पीछे लगी रहती है	तत् अनुस्मृतिः	१६.	उसकी स्मृति कैसे हो सकती है
तत्र-तत्र ।	५.	सब जगह	नः ।।	१४.	हमें

श्लोकार्थ—अण्डे से उत्पन्न होने वाले तथा नाल में बँधे पैदा होने वाले और वृक्षों तथा पसीने से उत्पन्न जीवों के शरीरों में सब जगह प्राण शक्ति जीव के पीछे लगी रहती है। जब इन्द्रिय-समुदाय सुषुप्ति अवस्था में और अहंकार भी सो जाते हैं तब बाद में हमें आत्मा रूप आधार के बिना उसकी स्मृति कैसे हो सकती है। (कि हम सुख से सोये थे) ।।

चत्वारिंशः श्लोकः

यर्ह्यब्जनाभचरणैषणयोरुभक्त्या चेतोमलानि विधमेद् गुणकर्मजानि ।
तस्मिन् विशुद्ध उपलभ्यत आत्मतत्त्वं साक्षाद् यथामलदृशोः सवितृप्रकाशः॥४०॥

पदच्छेद—यर्हि अब्जनाभ चरण एषणया उरुभक्त्या चेतः मलानि विधमेत् गुण कर्मजानि ।
तस्मिन् विशुद्ध उपलभ्यते आत्मतत्त्वम् साक्षात् यथा अमल दृशोः सवितृ प्रकाशः ।।

शब्दार्थ—					
यर्हि अब्जनाभ	१.	जब भगवान् कमलनाभ के	तस्मिन्	९.	उस चित्त के
चरण	२.	चरण कमलों को	विशुद्ध	१०.	शुद्ध हो जाने पर
एषणया	३.	प्राप्त करने की इच्छा से	उपलभ्यते	१३.	हो जाता है जैसे
उरुभक्त्या	४.	तीव्र भक्ति की जाती है	आत्मतत्त्वम्	११.	आत्म तत्त्व का
चेतः मलानि	७.	चित्त के सारे मलों को	साक्षात् यथा	१२.	साक्षात्कार वैसे ही
विधमेत्	८.	जला डालती है	अमल दृशोः	१४.	नेत्रों के खुलने पर
गुण	५.	तब वह भक्ति गुणों और	सवितृ	१५.	सूर्य के
कर्मजानि ।	६.	कर्मों से उत्पन्न हुये	प्रकाशः ।।	१६.	प्रकाश का अनुभव होता है

श्लोकार्थ—जब भगवान् कमल नाभ के चरण कमलों को प्राप्त करने की इच्छा से तीव्र भक्ति की जाती है। तब वह भक्ति गुणों और कर्मों से उत्पन्न हुये, चित्त के सारे मलों को जला डालती है। उस चित्त के शुद्ध हो जाने पर आत्म तत्त्व का साक्षात्कार वैसे ही हो जाता है, जैसे नेत्रों के खुलने पर सूर्य के प्रकाश का अनुभव होता है ।।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

राजोवाच— कर्मयोगं वदत नः पुरुषो येन संस्कृतः ।
विधूयेहाशु कर्माणि नैष्कर्म्यं विन्दते परम् ॥४१॥

पदच्छेद— कर्म योगम् वदत नः पुरुषः येन संस्कृतः ।
विधूय इह आशु कर्माणि नैष्कर्म्यम् विन्दते परम् ॥

शब्दार्थ—

कर्म	२.	कर्म	विधूय	११.	नष्ट करके
योगम्	३.	योग का	इह	८.	यहाँ
वदत	४.	उपदेश कीजिये	आशु	९.	शीघ्र ही
नः	१.	आप हमें	कर्माणि	१०.	कर्मों को
पुरुषः	७.	मनुष्य	नैष्कर्म्यम्	१३.	निष्काम कर्म को
येन	५.	जिसके द्वारा	विन्दते	१४.	प्राप्त करता है
संस्कृतः ।	६.	शुद्ध होकर	परम् ॥	१२.	परम

श्लोकार्थ—आप हमें कर्म योग का उपदेश कीजिये । जिसके द्वारा शुद्ध होकर मनुष्य यहाँ शीघ्र ही कर्मों को नष्ट करके परम निष्काम कर्म को प्राप्त करता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

एवं प्रश्नमृषीन् पूर्वमपृच्छं पितुरन्तिके ।
नाब्रुवन् ब्रह्मणः पुत्रास्तत्र कारणमुच्यताम् ॥४२॥

पदच्छेद— एवम् प्रश्नम् ऋषीन् पूर्वम् अपृच्छम् पितुः अन्तिके ।
न अब्रुवन् ब्रह्मणः पुत्राः तत्र कारणम् उच्यताम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इसी प्रकार	न	१०.	नहीं
प्रश्नम्	३.	इस प्रश्न को मैंने	अब्रुवन्	११.	बताया
ऋषीन्	६.	सनकादि ऋषियों से	ब्रह्मणः	८.	ब्रह्मा के
पूर्वम्	१.	पहले	पुत्राः	९.	पुत्रों ने
अपृच्छम्	७.	पूछा था । परन्तु	तत्र	१२.	इसका
पितुः	४.	अपने पिता इक्ष्वाकु के	कारणम्	१३.	कारण
अन्तिके ।	५.	समीप	उच्यताम् ॥	१४.	बताइये ।

श्लोकार्थ—पहले इसी प्रकार इस प्रश्न को मैंने अपने पिता इक्ष्वाकु के समीप सनकादि ऋषियों से पूछा था । परन्तु ब्रह्मा के पुत्रों ने नहीं बताया । इसका कारण बताइये ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

आविर्होत्र उवाच—कर्माकर्मविकर्मेति वेदवादो न लौकिकः ।
वेदस्य चेश्वरात्मत्वात् तत्र मुह्यन्ति सूरयः ॥४३॥

पदच्छेद— कर्म अकर्म विकर्म इति वेदवादः न लौकिकः ।
वेदस्य च ईश्वर आत्मत्वात् तत्र मुह्यन्ति सूरयः ॥

शब्दार्थ—

कर्म	१.	शास्त्र विहित कर्म	वेदस्य च	७.	और वेद के
अकर्म	२.	निषिद्ध कर्म और	ईश्वर	८.	ईश्वर
विकर्म इति	३.	विहित कर्म का उल्लंघन	आत्मत्वात्	९.	रूप होने के कारण
वेदवादः	४.	ये वेदों से जाने जाते हैं	तत्र	११.	उसके अर्थ निर्णय में
न	६.	नहीं जाने जाते ।	मुह्यन्ति	१२.	भूल कर जाते हैं
लौकिकः ।	५.	लौकिक रीति से	सूरयः ॥	१०.	बड़े-बड़े विद्वान भी

श्लोकार्थ—शास्त्र विहित कर्म, निषिद्ध कर्म और विहित कर्म का उल्लंघन ये वेदों से जाने जाते हैं। लौकिक रीति से नहीं जाने जाते । और वेद के ईश्वर रूप होने के कारण बड़े-बड़े विद्वान् भी इसके अर्थ निर्णय में भूल कर जाते हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

परोक्षवादो वेदोऽयं बालानामनुशासनम् ।
कर्ममोक्षाय कर्माणि विधत्ते ह्यगदं यथा ॥४४॥

पदच्छेद— परोक्षवादः वेदः अयम् बालानाम् अनुशासनम् ।
कर्म मोक्षाय कर्माणि विधत्ते हि अगदम् यथा ॥

शब्दार्थ—

परोक्षवादः	३.	परोक्षवाद है	मोक्षाय	५.	निवृत्ति के लिये उसी प्रकार
वेदः	२.	वेद	कर्माणि	६.	कर्म का
अयम्	१.	यह	विधत्ते हि	७.	विधान करता है
बालानाम्	९.	बालकों का	अगदम्	११.	ओषधि खिलाते हैं
अनुशासनम् ।	१०.	प्रलोभन देकर	यथा ॥	८.	जैसे
कर्म	४.	यह कर्मों की			

श्लोकार्थ—यह वेद परोक्षवाद है, यह कर्मों की निवृत्ति के लिये उसी प्रकार कर्म का विधान करता है। जैसे बालकों को प्रलोभन देकर ओषधि खिलाते हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

नाचरेद् यस्तु वेदोक्तं स्वयमज्ञोऽजितेन्द्रियः ।
विकर्मणा ह्यधर्मेण मृत्योर्मृत्युमुपैति सः ॥४५॥

पदच्छेद— न आचरेत् यः तु वेद उक्तम् स्वयम् अज्ञः अजितेन्द्रियः ।
विकर्मणा हि अधर्मेण मृत्योः मृत्युम् उपैति सः ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं करता है	अजितेन्द्रियः ।	२.	जिसकी इन्द्रियाँ वश में नहीं है
आचरेत्	६.	आचरण	विकर्मणा	८.	और विहित कर्म करके
यः तु	३.	और जो	हि अधर्मेण	९.	अधर्म करता है
वेद	४.	वेदों में	मृत्योः	११.	मृत्यु के बाद
उक्तम्	५.	बताये गये कर्मों का	मृत्युम्	१२.	फिर मृत्यु को
स्वयम् अज्ञः	१.	जो स्वयम् अज्ञानी है	उपैति	१३.	प्राप्त होता है
			सः ॥	१०.	वह

श्लोकार्थ—जो स्वयम् अज्ञानी है, और जिसकी इन्द्रियाँ वश में नहीं हैं, और जो वेदों में बताये गये कर्मों का आचरण नहीं करता है और विहित कर्म न करके अधर्म करता है वह मृत्यु के बाद फिर मृत्यु को प्राप्त होता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

वेदोक्तमेव कुर्वाणो निःसङ्गोऽर्पितमीश्वरे ।
नैष्कर्म्यां लभते सिद्धिं रोचनार्था फलश्रुतिः ॥४६॥

पदच्छेद— वेदोक्तम् एव कुर्वाणः निःसङ्गः अर्पितम् ईश्वरे ।
नैष्कर्म्याम् लभते सिद्धिम् रोचना अर्था फल श्रुतिः ॥

शब्दार्थ—

वेदोक्तम्	४.	वेदोक्त कर्मों का	नैष्कर्म्याम्	७.	उसे कर्मों की निवृत्ति से
एव	५.	ही	लभते	९.	मिल जाती है
कुर्वाणः	६.	अनुष्ठान करता है	सिद्धिम्	८.	सिद्धि
निःसङ्गः	१.	जो फल की अभिलाषा	रोचना	११.	केवल रुचि
अर्पितम्	३.	अर्पित करके	अर्था	१२.	उत्पन्न कराने के लिये है
ईश्वरे ।	२.	विश्वात्मा भगवान् को	फलश्रुतिः ॥	१०.	क्योंकि वेदों में फल का कथन

श्लोकार्थ— जो फल की अभिलाषा (छोड़कर) विश्वात्मा भगवान् को अर्पित करके वेदोक्त कर्मों का ही अनुष्ठान करता है। उसे कर्मों की निवृत्ति से सिद्धि मिल जाती है। क्योंकि वेदों में फल का कथन केवल रुचि उत्पन्न कराने के लिये है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

य आशु हृदयग्रन्थिं निर्जिहीर्षुः परात्मनः ।
विधिनोपचरेद् देवं तन्त्रोक्तेन च केशवम् ॥४७॥

पदच्छेद— य: आशु हृदय ग्रन्थिम् निर्जिहीर्षुः पर आत्मनः ।
विधिना उपचरेत् देवम् तन्त्र उक्तेन च केशवम् ॥

शब्दार्थ—

यः	१. जो	विधिना	८. दोनों पद्धतियों के द्वारा
आशु	५. शीघ्र	उपचरेत्	१२. आराधना करनी चाहिये
हृदय ग्रन्थिम्	४. हृदय ग्रन्थि को	देवम्	१०. भगवान्
निर्जिहीर्षुः	६. खोलने की इच्छा वाला है	तन्त्र	७. उसे वैदिक और तान्त्रिक
पर	२. पर ब्रह्म स्वरूप	उक्तेन च	९. बताये गये उपायों से
आत्मनः ।	३. आत्मा की	केशवम् ॥	११. श्रीकृष्ण की

श्लोकार्थ—जो पर ब्रह्म स्वरूप आत्मा की हृदय ग्रन्थि को शीघ्र से शीघ्र खोंलने की इच्छा वाला है । उसे वैदिक और तान्त्रिक दोनों पद्धतियों के द्वारा बताये गये उपायों से भगवान् श्रीकृष्ण की आराधना करनी चाहिये ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

लब्धानुग्रह आचार्यात् तेन सन्दर्शितागमः ।
महापुरुषमभ्यर्चेन्मूर्त्याभिमतयाऽऽत्मनः ॥४८॥

पदच्छेद— लब्ध अनुग्रहः आचार्यात् तेन् सन्दर्शित आगमः ।
महा पुरुषम् अभ्यर्चेत् मूर्त्या अभिमतया आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

लब्ध	३. प्राप्त करें	महा पुरुषम्	९. भगवान् की
अनुग्रहः	२. कृपा	अभ्यर्चेत्	१०. पूजा करे
आचार्यात्	१. पहले गुरुदेव की	मूर्त्या	८. मूर्ति के द्वारा
तेन सन्दर्शित	४. फिर उनके द्वारा बताई गई	अभिमतया	७. अभीष्ट
आगमः ।	५. विधि से	आत्मनः ॥	६. अपने को

श्लोकार्थ—पहले गुरुदेव की कृपा प्राप्त करें । फिर उनके द्वारा बताई गई विधि से अपने को अभीष्ट मूर्ति के द्वारा भगवान् की पूजा करे ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

शुचिः सम्मुखमासीनः प्राणसंयमनादिभिः ।
पिण्डं विशोध्य संन्यासकृतरक्षोऽर्चयेद्धरिम् ॥४९॥

पदच्छेद— शुचिः सम्मुखम् आसीनः प्राण संयमन आदिभिः ।
पिण्डम् विशोध्य संन्यास कृत रक्षः अर्चयेत् हरिम् ॥

शब्दार्थ—

शुचिः	१. पवित्र होकर	पिण्डम्	७. नाड़ी
सम्मुखम्	२. भगवान् के सामने	विशोध्य	८. शोधन करे, तब
आसीनः	३. बैठकर	सन्यास	९. न्यास से
प्राण	४. प्राणायाम	कृत रक्षः	१०. अङ्ग रक्षा करके
संयमन	५. संयम	अर्चयेत्	१२. पूजा करे
आदिभिः ।	६. आदि के द्वारा	हरिम् ॥	११. भगवान् की

श्लोकार्थ—पवित्र होकर भगवान् के सामने बैठकर प्राणायाम, संयम आदि के द्वारा नाड़ी शोधन करे, तब, अङ्ग रक्षा करके भगवान् की पूजा करे ॥

पञ्चाशः श्लोकः

अर्चादौ हृदये चापि यथालब्धोपचारकैः ।
द्रव्यक्षित्यात्मलिङ्गानि निष्पाद्य प्रोक्ष्य चासनम् ॥५०॥

पदच्छेद— अर्चादौ हृदये च अपि यथा लब्ध उपचारकैः ।
द्रव्य क्षिति आत्म लिङ्गानि निष्पाद्य प्रोक्ष्य च आसनम् ॥

शब्दार्थ—

अर्चादौ	४. पहले पूजन के लिये	द्रव्य	५. पुष्प आदि पदार्थों
हृदये	६. मन	क्षिति आत्म	७. पृथ्वी, चित्त
च अपि	८. और	लिङ्गानि	१०. मूर्ति का
यथा	१. जो	निष्पाद्य	१२. पूजा के योग्य बनावे
लब्ध	३. प्राप्त हों उनसे	प्रोक्ष्य च	११. प्रक्षालन करके
उपचारकैः ।	२. साधन	आसनम् ॥	९. आसन तथा

श्लोकार्थ—जो साधन प्राप्त हों उनसे पहले पूजन के लिये पुष्प आदि पदार्थों मन, पृथ्वी, चित्त और आसन तथा मूर्ति का प्रक्षालन करके पूजा के योग्य बनावे ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

पाद्यादीनुपकल्प्याथ सन्निधाप्य समाहितः ।
हृदादिभिः कृतन्यासो मूलमन्त्रेण चार्चयेत् ॥५१॥

पदच्छेद— पाद्य आदीन् उपकल्प्य अथ सन्निधाप्य समाहितः ।
हृद् आदिभिः कृत न्यासः मूल मन्त्रेण च अर्चयेत् ॥

शब्दार्थ—

पाद्य	१. पाद्य	हृद	७. तदनन्तर हृदय
आदीन्	२. अर्घ्य आदि पात्रों को	आदिभिः	८. सिर-शिखा इत्यादि का
उपकल्प्य	३. स्थापित करके	कृत	१०. करे, फिर
अथ	४. फिर	न्यासः	९. न्यास
सन्निधाप्य	६. मूर्ति का ध्यान करे	मूलमन्त्रेण च	११. मूल मन्त्र के द्वारा
समाहितः ।	५. एकाग्रचित होकर	अर्चयेत् ॥	१२. इष्टदेव की पूजा करे

श्लोकार्थ—पाद्य, अर्घ्य आदि पात्रों को स्थापित करके फिर एकाग्रचित्त होकर मूर्ति का ध्यान करे। तदनन्तर हृदय, सिर, शिखा इत्यादि का न्यास करे, फिर मूल मन्त्र के द्वारा इष्टदेव की पूजा करे ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

साङ्गोपाङ्गां सपार्षदां तां तां मूर्तिं स्वमन्त्रतः ।
पाद्यार्घ्याचमनीयाद्यैः स्नानवासोविभूषणैः ॥५२॥

पदच्छेद— साङ्गोपाङ्गाम् सपार्षदाम् ताम्-ताम् मूर्तिम् स्वमन्त्रतः ।
पाद्य अर्घ्य आचमनीय आद्यैः स्नानवासः विभूषणैः ॥

शब्दार्थ—

साङ्गोपाङ्गाम्	१. अङ्ग-उपाङ्ग	पाद्यअर्घ्य	५. पाद्य-अर्घ्य
सपार्षदाम्	२. और पार्षदों सहित	आचमनीय	६. आचमनीय
ताम्-ताम्	११. उन-उन	आद्यैः	१०. आदि के द्वारा
मूर्तिम्	१२. मूर्तियों की पूजा करे	स्नान	७. स्नान
स्व	३. उनके	वासः	८. वस्त्र
मन्त्रतः ।	४. मूल मन्त्र से	विभूषणैः ॥	९. आभूषण

श्लोकार्थ—अङ्ग-उपाङ्ग और पार्षदों सहित उनके मूलमन्त्र से पाद्य-अर्घ्य, आचमनीय, स्नान, वस्त्र, आभूषण आदि के द्वारा उन-उन मूर्तियों की पूजा करे ॥

त्रयःपञ्चाशः श्लोकः

गन्धमाल्याक्षतस्रग्भिर्धूपदीपोपहारकैः ।
साङ्गं सम्पूज्य विधिवत् स्तवैः स्तुत्वा नमेद्धरिम् ॥५३॥

पदच्छेद— गन्ध माल्य अक्षत स्रग्भिः धूप दीप उपहारकैः ।
साङ्गम् सम्पूज्य विधिवत् स्तवैः स्तुत्वा नमेत् हरिम् ॥

शब्दार्थ —

गन्धमाल्य	१. गन्ध-दधि	साङ्गम्	७. पूर्ण रूप से
अक्षत	२. अक्षत	सम्पूज्य	६. पूजा करे (और)
स्रग्भिः	३. माला	विधिवत्	८. विधिपूर्वक
धूप	४. धूप	स्तवैः	१०. स्तोत्रों के द्वारा
दीप	५. दीप और	स्तुत्वा	११. स्तुति करके
उपहारकैः ।	६. नैवेद्य आदि से	नमेत् हरिम् ॥	१२. श्री हरि को नमस्कार करे

श्लोकार्थ—गन्ध, दधि, अक्षत, माला, धूप, दीप और नैवेद्य आदि से पूर्ण रूप से विधिवत पूजा करे । और स्तोत्रों के द्वारा स्तुति करके श्री हरि को नमस्कार करे ॥

चतुष्पञ्चाशः श्लोकः

आत्मानं तन्मयं ध्यायन् मूर्तिं सम्पूजयेद्धरेः ।
शेषामाधाय शिरसि स्वधाम्न्युद्वास्य सत्कृतम् ॥५४॥

पदच्छेद— आत्मानम् तन्मयम् ध्यायन् मूर्तिम् सम्पूजयेत् हरेः ।
शेषाम् आधाय शिरसि स्वधाम्नि उद्वास्य सत्कृतम् ॥

शब्दार्थ —

आत्मानम्	१. अपने आपको	शेषाम्	७. निर्माल्य को
तन्मयम्	२. भगवन्मय	आधाय	६. रखकर
ध्यायन्	३. ध्यान करते हुये	शिरसि	८. सिर पर
मूर्तिम्	५. मूर्ति का	स्वधाम्नि	१०. यथा स्थान
सम्पूजयेत्	६. पूजन करना चाहिये	उद्वास्य	११. स्थापित करके
हरेः ।	४. भगवान् श्री हरि	सत्कृतम् ॥	१२. पूजा समाप्त करनी चाहिये

श्लोकार्थ—अपने आपको भगवन्मय ध्यान करते हुये भगवान् श्री हरि की मूर्ति का पूजन करना चाहिये । निर्माल्य को सिर पर रखकर यथा-स्थान स्थापित करके पूजा समाप्त करनी चाहिये ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

एवमग्न्यर्कतोयादावतिथौ हृदये च यः।
यजतीश्वरमात्मानमचिरान्मुच्यते हि सः ॥५५॥

पदच्छेद—

एवम् अग्नि अर्क तोय आदौ अतिथौ हृदये च यः।
यजति ईश्वरम् आत्मानम् अचिरात् मुच्यते हि सः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	यजति	९.	पूजा करता है
अग्नि अर्क	३.	अग्नि सूर्य	ईश्वरम्	८.	ईश्वर की
तोय आदौ	४.	जल आदि	आत्मानम्	७.	आत्म रूप
अतिथौ	५.	अतिथि	अचिरात्	११.	शीघ्र ही (इस संसार से)
हृदये च	६.	अपने हृदय में और	मुच्यते	१२.	मुक्त हो जाता है
यः।	२.	जो पुरुष	हि सः ॥	१०.	वह

श्लोकार्थ—

इस प्रकार जो पुरुष अग्नि, सूर्य, जल आदि अतिथि और अपने हृदय में आत्म रूप ईश्वर की पूजा करता है, वह शीघ्र ही इस संसार से मुक्त हो जाता है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे तृतीयः अध्यायः ॥ ३ ॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

चतुर्थः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच— यानि यानीह कर्माणि यैर्यैः स्वच्छन्दजन्मभिः ।
चक्रे करोति कर्ता वा हरिस्तानि ब्रुवन्तु नः ॥१॥

पदच्छेद— यानि यानि इह कर्माणि यैः यैः स्वच्छन्द जन्मभिः ।
चक्रे करोति कर्ता वा हरिः तानि ब्रुवन्तु नः ॥

शब्दार्थ—

यानि-यानि	५.	जो-जो	चक्रे	८.	कर चुके हैं
इह	४.	यहाँ	करोति	९.	कर रहे हैं
कर्माणि	६.	लीलायें	कर्ता वा	१०.	अथवा करेंगे
यैः यैः	१.	जिन-जिन	हरिः	७.	श्रीहरिः
स्वच्छन्द	२.	स्वतन्त्र	तानि	११.	वे सब
जन्मभिः ।	३.	अवतारों द्वारा	ब्रुवन्तु नः ।	१२.	हमें आप बताइये

श्लोकार्थ—जिन-जिन स्वतन्त्र अवतारों द्वारा यहाँ जो-जो लीलायें श्रीहरि कर चुके हैं, कर रहे हैं। अथवा करेंगे, वे सब हमें आप बताइये ॥

द्वितीयः श्लोकः

द्रुमिल उवाच—यो वा अनन्तस्य गुणाननन्ताननुक्रमिष्यन् स तु बालबुद्धिः ।
रजांसि भूमेर्गणयेत् कथञ्चित् कालेन नैवाखिलशक्तिधाम्नः ॥२॥

पदच्छेद—यः वा अनन्तस्य गुणान् अनन्तान् अनुक्रमिष्यन् सः तु बाल बुद्धिः ।
रजांसि भूमेः गणयेत् कथञ्चित् कालेन न एव अखिल शक्ति धाम्नः ॥

शब्दार्थ—

यः वा	१.	अथवा जो	रजांसि भूमेः	९.	क्योंकि पृथ्वी के धूल-कण
अनन्तस्य	२.	अनन्त श्रीहरि के	गणयेत्	११.	गिने जा सकते हैं
गुणान्	४.	गुणों को	कथञ्चित्	१०.	किसी प्रकार
अनन्तान्	३.	अनन्त	कालेन	१२.	परन्तु अनन्त होने के कारण
अनुक्रमिष्यन्	५.	गिनने की इच्छा करता है	न एव	१६.	नहीं गिने जा सकते हैं
सः तु	६.	उसकी निश्चय ही	अखिल	१३.	समस्त
बाल	७.	बाल	शक्ति	१४.	शक्तियों के
बुद्धिः ।	८.	बुद्धि है	धाम्नः ॥	१५.	आश्रय परमात्मा के गुणगण

श्लोकार्थ—अथवा जो अनन्त श्रीहरि के अनन्त गुणों को गिनने की इच्छा करता है। उसकी निश्चय ही बाल बुद्धि है। क्योंकि पृथ्वी के धूलिकण किसी प्रकार गिने जा सकते हैं। परन्तु अनन्त होने के कारण समस्त शक्तियों के आश्रय परमात्मा के गुणगण नहीं गिने जा सकते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

भूतैर्यदा पञ्चभिरात्मसृष्टैः पुरं विराजं विरचय्य तस्मिन् ।
स्वांशेन विष्टः पुरुषाभिधानमवाप नारायण आदिदेवः ॥३॥

पदच्छेद— भूतैः यदा पञ्चभिः आत्मसृष्टैः पुरम् विराजम् विरचय्य तस्मिन् ।
स्वअंशेन विष्टः पुरुष अभिधानम् अवाप नारायणः आदि देवः ॥

शब्दार्थ—				
भूतैः	३. भूतों की		स्वअंशेन	९. अपने अंश से
यदा	१. जब वे		विष्टः	१०. प्रवेश करते हैं तब
पञ्चभिः	२. पञ्च		पुरुष	१४. पुरुष
आत्म सृष्टैः	४. अपने द्वारा सृष्टि करके		अभिधानम्	१५. इस नाम को
पुरम्	६. शरीर की		अवाप	१६. प्राप्त करते हैं
विराजम्	५. विराट्		नारायणः	१३. नारायण
विरचय्य	७. रचना करते हैं और		आदि	११. आदि
तस्मिन् ।	८. उसमें		देवः ॥	१२. देव

श्लोकार्थ—जब वे पञ्चभूतों की अपने द्वारा सृष्टि करके विराट् शरीर की रचना करते हैं और उसमें अपने अंश से प्रवेश करते हैं। तब आदिदेव नारायण पुरुष इस नाम को प्राप्त कर लेते हैं।

चतुर्थः श्लोकः

यत्काय एष भुवनत्रयसन्निवेशो यस्येन्द्रियैस्तनुभृतामुभयेन्द्रियाणि ।
ज्ञानं स्वतः श्वसनतो बलमोज ईहा सत्त्वादिभिः स्थितिलयोद्भव आदिकर्ता॥४॥

पदच्छेद—यत् काये एषः भुवन त्रय सन्निवेशः यस्य इन्द्रियैः तनुभृताम् उभय इन्द्रियाणि ।
ज्ञानम् स्वतः श्वसनतः बलम् ओजः ईहा सत्त्व आदिभिः स्थितिलय उद्भव आदि कर्ता ॥

शब्दार्थ—			
यत् काये	१. उन्हीं के शरीर में	ज्ञानम्	१०. ज्ञान का उदय होता है
एषः	२. ये	स्वतः	९. उनके स्वरूप से अपने आप
भुवन त्रय·	३. तीनों लोक	श्वसनतः	११. श्वास-प्रश्वास से
सन्निवेशः	४. स्थित हैं	बलम् ओजः	१२. शरीरों में बल और इन्द्रियाँ बलवान होती हैं
यस्य इन्द्रियैः	५. उन्हीं की इन्द्रियों से	ईहा	१३. कम करने की शक्ति आती है
तनुभृताम्	६. शरीर धारियों की	सत्त्व आदिभिः	१४. उन्हीं के सत्त्वादि गुणों से
उभय	७. ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रियाँ दोनों	स्थितिलय	१५. संसार की स्थिति, प्रलय और
इन्द्रियाणि ।	८. इन्द्रियाँ बनी हैं	उद्भव आदि	१६. उत्पत्ति आदि होते हैं
		कर्ता ॥	१७. वे ही आदि कर्ता नारायण हैं

श्लोकार्थ—उन्हीं के शरीर में ये तीनों लोक स्थित हैं। उन्हीं की इन्द्रियों से शरीर धारियों की ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रियाँ दोनों इन्द्रियाँ बनी हैं। उनके स्वरूप से अपने आप ज्ञान का उदय होता है। श्वास-प्रश्वास से शरीरों में बल और इन्द्रियाँ बलवान होती हैं। काम करने की शक्ति आती है उन्हीं के सत्त्वादि गुणों से संसार की स्थिति-प्रलय और उत्पत्ति आदि होते हैं। वे ही आदि कर्ता नारायण हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

आदावभूच्छतधृती रजसास्य सर्गे विष्णुः स्थितौ क्रतुपतिर्द्विजधर्मसेतुः ।
रुद्रोऽप्ययाय तमसा पुरुषः स आद्य इत्युद्भवस्थितिलयाः सततं प्रजासु ॥५॥

पदच्छेद—आदौ अभूत् शतधृतिः रजसा अस्य सर्गे विष्णुःस्थितौ क्रतुपतिः द्विज धर्म सेतुः ।
रुद्रः अपि अयाय तमसा पुरुषः सः आद्यः इति उद्भव स्थितिलयाः सततम् प्रजासु ॥

शब्दार्थ—					
आदौ	१.	पहले-पहल	रुद्रः अपि	११.	रुद्र बने
अभूत्	४.	उत्पन्न हुये	अयाय	१०.	जगत के संहार के लिये
शतधृतिः रजसा	३.	रजो गुण के अंश से ब्रह्मा	तमसा	९.	तमो गुण के अंश से
अस्य सर्गे	२.	इस जगत की उत्पत्ति के लिये	पुरुषः सः आद्यः	१३.	आदि पुरुष नारायण से
विष्णुःस्थितौ	७.	विष्णु संसार की स्थिति के लिये	इति	१२.	इस प्रकार
क्रतुपतिः	८.	यज्ञ पति बन गये फिर	उद्भव स्थिति	१५.	उत्पत्ति-स्थिति और
द्विज	६.	ब्राह्मणों के रक्षक	लयाः	१६.	संहार होते रहते हैं
धर्म सेतुः ।	५.	धर्म तथा	सततम् प्रजासु ।	१४.	निरन्तर प्रजा की

श्लोकार्थ—पसले-पहल इस जगत की उत्पत्ति के लिये रजो गुण के अंश से ब्रह्मा उत्पन्न हुये। धर्म तथा ब्राह्मणों के रक्षक विष्णु संसार की स्थिति के लिये यज्ञपति बन गये। फिर तमोगुण के अंश से जगत के संहार के लिये रुद्र बने, इस प्रकार आदि पुरुष नारायण से निरन्तर प्रजा की उत्पत्ति-स्थिति और संहार होते रहते हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिष्ट मूर्त्यां नारायणो नर ऋषिप्रवरः प्रशान्तः ।
नैष्कर्म्यलक्षणमुवाच चचार कर्म योऽद्यापि चास्त ऋषिवर्यनिषेविताङ्घ्रिः ॥६॥

पदच्छेद—धर्मस्य दक्ष दुहितरि अजनिष्ट मूर्त्याम् नारायणः नर ऋषि प्रवरः प्रशान्तः ।
नैष्कर्म्य लक्षणम् उवाच चचार कर्म यो अद्य अपि च आस्ते ऋषिवर्य निषेवित अङ्घ्रिः ॥

शब्दार्थ—					
धर्मस्य	१.	धर्म की पत्नी	नैष्कर्म्य	९.	उन्होंने आत्म रूप को
दक्ष	२.	दक्ष प्रजापति की	लक्षणम् उवाच	१०.	प्राप्त कराने वाले कर्म का
दुहितरि	३.	कन्या	चचार कर्म	११.	उपदेश किया
अजनिष्ट	८.	उत्पन्न किया	यो अद्य अपि च	१२.	वे आज भी बदरिकाश्रम में
मूर्त्याम्	४.	मूर्ति ने	आस्ते	१३.	विराजमान
नारायणः नरः	७.	नर और नारायण को	ऋषिवर्य	१४.	बड़े-बड़े ऋषि-मुनि
ऋषिप्रवरः	५.	ऋषि श्रेष्ठ	निषेवित	१६.	सेवा करते रहते हैं
प्रशान्तः ।	६.	शान्तात्मा	अङ्घ्रिः ॥	१५.	उनके चरण कमलों को

श्लोकार्थ—धर्म की पत्नी दक्ष प्रजापति की कन्या मूर्ति ने ऋषि श्रेष्ठ शान्तात्मा नर और नारायण को उत्पन्न किया। उन्होंने आत्मरूप को प्राप्त कराने वाले कर्म का उपदेश किया। वे आज भी बदरिकाश्रम में विराजमान हैं। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि उनके चरण कमलों की सेवा करते रहते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

इन्द्रो विशङ्क्य मम धाम जिघृक्षतीति कामं न्ययुङ्क्त सगणं स बदर्युपाख्यम् ।
गत्वाप्सरोगणवसन्तसुमन्दवातैः स्त्रीप्रेक्षणेषुभिरविध्यदतन्महिज्ञः ॥७॥

पदच्छेद—इन्द्रः विशङ्क्य ममधाम जिघृक्षति इति कामम् न्ययुङ्क्त सगणम् सः बदरी उपाख्यम् ।
गत्वा अप्सरोगण वसन्त सुमन्द वातैः स्त्री प्रेक्षणेषुभिः अविध्यत् अतन् महिज्ञः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रः विशङ्क्य	१.	इन्द्र ने आशङ्का की	गत्वा	१४.	बदरिकाश्रम में जाकर
ममधाम	२.	ये मेराधाम	अप्सरोगण	११.	वे अप्सरागण
जिघृक्षति इति	३.	छीनना चाहते हैं इसलिये	वसन्त	१२.	वसन्त तथा
कामम्	७.	कामदेव को	सुमन्द वातैः	१३.	मन्द सुगन्ध वायु के साथ
न्ययुङ्क्त	८.	नियुक्त कर दिया	स्त्री प्रेक्षणेषुभिः	१५.	स्त्रियों के कटाक्षगणों से
सगणम्	६.	गणों के सहित	अविध्यत्	१६.	उन्हें घायल करने लगे
सः बदरी	४.	उन्होंने बदरिकाश्रम	अतन्	९.	कामदेव को भगवान् की
उपाख्यम् ।	५.	नामक स्थान में	महिज्ञः ॥	१०.	महिमा का ज्ञान नहीं था

श्लोकार्थ—इन्द्र ने आशङ्का की, ये मेरा धाम छीनना चाहते है, इसलिये उन्होंने बदरिकाश्रम नामक स्थान में गणों के सहित कामदेव को नियुक्त कर दिया। कामदेव को भगवान् की महिमा का ज्ञान नहीं था। वे अप्सरागण, वसन्त तथा मन्द सुगन्ध वायु के साथ स्त्रियों के कटाक्ष वाणों से उन्हें घायल करने लगे ॥

अष्टमः श्लोकः

विज्ञाय शक्रकृतमक्रममादिदेवः प्राह प्रहस्य गतविस्मय एजमानान् ।
मा भैष्ट भो मदन मारुत देववध्वो गृह्णीत नो बलिमशून्यमिमं कुरुध्वम्॥८॥

पदच्छेद—विज्ञाय शक्रकृतम् अक्रमम् आदिदेवः प्राह प्रहस्य गतविस्मय एजमानान् ।
मा भैष्ट भो मदन मारुत देववध्वः गृहीत नः बलिम् अशून्यम् इमम् कुरुध्वम् ॥

शब्दार्थ-विज्ञाय	४.	जानकर	मा भैष्ट	१२.	डरो मत
शक्रकृतम्	२.	इन्द्र के	भो मदन	९.	हे कामदेव !
अक्रमम्	३.	इस अपराध को	मारुत	१०.	हे मलय मारुत !
आदिदेवः	१.	आदि देव नर-नारायण ने	देववध्वः	११.	हे देवाङ्गनाओ !
प्राह	७.	कहा, उस समय	गृहीत	१४.	स्वीकार करो
प्रहस्य	६	हंसकर	नः बलिम्	१३.	हमारा आतिथ्य
गतविस्मय	८.	उनके मन में आश्चर्य नहीं था	अशून्यम् इमम्	१५.	इस आश्रम को शून्य मत
एजमानान् ।	५.	कांपते हुये काम आदि से	कुरुध्वम् ॥	१६.	करो

श्लोकार्थ—आदि देव नर-नारायण ने इन्द्र के इस अपराध को जानकर कांपते हुये काम आदि से हँस कर कहा, उस समय उनके मन में आश्चर्य नहीं था। हे कामदेव ! हे मलय मारुत ! हे देवाङ्गनाओ ! डरो मत हमारा आतिथ्य स्वीकार करो, इस आश्रम को शून्य मत करो ॥

नवमः श्लोकः

इत्थं ब्रुवत्यभयदे नरदेव देवाः
सव्रीडनम्रशिरसः सघृणं तमूचुः ।
नैतद् विभो त्वयि परेऽविकृते विचित्रं
स्वाराममधीरनिकरानतपादपद्मे ॥९॥

पदच्छेद—

इत्थम् ब्रुवति अभयदे नरदेव देवाः
सव्रीड नम्रशिरसः सघृणम् तमूचुः ।
न एतद् विभो त्वयिपरेअविकृते विचित्रम्
स्वाराम धीरनिकर आनतपादपद्मे ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	३. इस प्रकार	न	१३. नहीं है, क्योंकि
ब्रुवति	४. कहा तो	एतद्	११. यह कोई
अभयदे	२. अभयदान देते हुये	विभो	९. हे प्रभो !
नरदेव	१. नर-नारायण ने जब	त्वयिपरेअविकृते	१०. निर्विकार आपके लिये यह
देवाः सव्रीड	५. लज्जा से काम आदि देवों के	विचित्रम्	१२. आश्चर्य
नम्रशिरसः	६. सिर झुक गये	स्वाराम	१४. बड़े-बड़े आत्माराम
सघृणम्	७. उन्होंने दयालु	धीरनिकर	१५. धीर पुरुषों का समूह
तमूचुः ।	८. नर-नारायण से कहा	आनतपादपद्मे ॥	१६. आपके चरणों में प्रणाम करता रहता है

श्लोकार्थ—नर-नारायण ने जब अभयदान देते हुये इस प्रकार कहा, तो लज्जा से काम आदि देवों के सिर झुक गये। उन्होंने दयालु नर-नारायण से कहा। हे प्रभो ! निर्विकार आपके लिये यह कोई आश्चर्य नहीं है, क्योंकि बड़े-बड़े आत्माराम धीर पुरुषों का समूह आपके चरणों में प्रणाम करता है ॥

दशमः श्लोकः

त्वां सेवतां सुरकृता बहवोऽन्तरायाः
स्वौको विलङ्घ्य परमं व्रजतां पदं ते ।
नान्यस्य बर्हिषि बलीन् ददतः स्वभागान्
धत्ते पदं त्वमविता यदि विघ्नमूर्ध्नि ॥१०॥

पदच्छेद—

त्वाम् सेवताम् सुरकृताः बहवः अन्तरायाः
स्वौकः विलङ्घ्य परमम् व्रजताम् पदंते ।
न अन्यस्य बर्हिषि बलीन् ददतः स्वभागान् छन
धत्तेपदम् त्वमवितायदि विघ्नमूर्त्ति ॥

शब्दार्थ—

त्वाम्	१. आपकी	न	१३. विघ्न नहीं डालते हैं
सेवताम्	२. सेवा, भक्ति करने वालों के मार्ग में	अन्यस्य	१२. उन लोगों के मार्ग में वे
सुरकृताः बहवः	३. देवता लोग बहुत से	बर्हिषि बलीन्	९. जो यज्ञ करते हुये बलि के रूप में
अन्तरायाः	४. विघ्न डालते हैं	ददतः	११. देते रहते हैं
स्वौकः विलङ्घ्य	६. स्वर्गधाम को लांघ कर	स्वभागान्	१०. देवताओं को उनका भाग
परमम्	७. आपके परम	धत्तेपदम्	१६. पैर रख कर आगे बढ़ जाते हैं
व्रजताम् पदम्	८. पद को प्राप्त करते हैं	त्वमवितायदि	१४. पर जब आप रक्षक हैं तब आपके भक्त
ते ।	५. क्योंकि आपके भक्त	विघ्नमूर्त्ति ॥	१५. विघ्नों के सिर पर

श्लोकार्थ—आपकी सेवा भक्ति करने वालों के मार्ग में देवता लोग बहुत से विघ्न डालते हैं। क्योंकि आपके भक्त स्वर्ग धाम को लांघ कर आपके परम पद को प्राप्त करते हैं। जो यज्ञ करते हुये बलि के रूप में देवताओं को उनका भाग देते रहते हैं; उन लोगों के मार्ग में विघ्न नहीं डालते हैं। परन्तु जब आप रक्षक हैं तब आपके भक्त विघ्नों के सिर पर पैर रख कर आगे बढ़ जाते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

क्षुत्तृट्त्रिकालगुणमारुतजैह्व्यशैश्न्यानस्मानपारजलधीनतितीर्य केचित् ।
क्रोधस्य यान्ति विफलस्य वशं पदे गोर्मज्जन्ति दुश्चरतपश्च वृथोत्सृजन्ति ॥११

पदच्छेद— क्षुत् तृट् त्रिकालगुण मारुत जैह्व्य शैश्न्यान् अस्मान् अपारजलधीन् अतितीर्य केचित् ।
क्रोधस्य यान्ति विफलस्य वशम् पदे गोः मज्जन्ति दुश्चरतपः च वृथा उत्सृजन्ति ॥

शब्दार्थ—

क्षुत् तृट्	३. भूख-प्यास	क्रोधस्य	११. क्रोध के
त्रिकालगुण	४. सर्दी-गर्मी-वर्षा	यान्ति	१३. हो जाते हैं मानों वे
मारुत	५. आंधी	विफलस्य	१०. निष्फल
जैह्व्य	६ रसनेन्द्रिय और	वशम्	१२. वश में
शैश्न्यान्	७. जननेन्द्रिय वाले	पदे गोः	१४. गाय के खुर के बने गड्ढे में
अस्मान्	८. हमारे वेगों को	मज्जन्ति	१५. डूब जाते हैं
अपारजलधीन्	२. अपार समुद्र के समान	दुश्चरतपः च	१६. इस प्रकार अपनी कठिन तपस्या को
अतितीर्य	९. पार करके	वृथा	१७. व्यर्थ ही
केचित् ।	१ कुछ लोग	उत्सृजन्ति ॥	१८. खो बैठते हैं

श्लोकार्थ—कुछ लोग अपार समुद्र के समान भूख, प्यास, सर्दी, गर्मी, वर्षा, आंधी, जननेन्द्रिय वाले हमारे वेगों को पार करके निष्फल क्रोध के वश में हो जाते हैं। मानों वे गाय के खुर के बने गढ़े में डूब जाते हैं। इस प्रकार व्यर्थ ही अपनी कठिन तपस्या को खो बैठते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

इति प्रगृणतां तेषां स्त्रियोऽत्यद्भुतदर्शनाः ।
दर्शयामास शुश्रूषां स्वर्चिताः कुर्वतीर्विभुः ॥१२॥

पदच्छेद— इति प्रगृणताम् तेषाम् स्त्रियः अतिअद्भुत दर्शनाः ।
दर्शयामास शुश्रुषाम् स्वर्चिताः कुर्वतीः विभुः ॥

शब्दार्थ—

इति	२. इस प्रकार	दर्शयामास	९. दिखाईं जो उनकी
प्रगृणताम्	३. स्तुति की, तब	शुश्रुषाम्	१०. सेवा
तेषाम्	१. जब उन देवताओं ने	स्वर्चिताः	७. वस्त्रालङ्कारों से सुसज्जित
स्त्रियः	८. बहुत सी स्त्रियाँ	कुर्वतीः	११. कर रही थीं
अतिअद्भुत	५. अद्भुत	विभुः ॥	४. भगवान् ने
दर्शनाः ।	६. रूप लावण्य वाली		

श्लोकार्थ—जब उन देवताओं ने इस प्रकार स्तुति की, तब भगवान् ने अद्भुत रूप लावण्य वाली वस्त्रालङ्कारों से सुसज्जित बहुत सी स्त्रियाँ दिखाईं जो उनकी सेवा कर रही थीं।

त्रयोदशः श्लोकः

ते देवानुचरा दृष्ट्वा स्त्रियः श्रीरिव रूपिणीः ।
गन्धेन मुमुहुस्तासां रूपौदार्यहतश्रियः ॥१३॥

पदच्छेद— ते देव अनुचराः दृष्ट्वा स्त्रियः श्रीः इव रूपिणीः ।
गन्धेन मुमुहुः तासाम् रूप औदार्य हत श्रियः ॥

शब्दार्थ—

ते देव	१.	उन देवराज इन्द्र के	गन्धेन	१३.	सुगन्ध से वे
अनुचराः	२.	अनुचरों ने	मुमुहुः	१४.	मोहित हो गये
दृष्ट्वा	७.	देखा, तो	तासाम्	१२.	उन स्त्रियों को
स्त्रियः	६.	स्त्रियों को	रूप	८.	उनके रूप के
श्रीः	३.	लक्ष्मी जी के	औदार्य	९.	सामने
इव	४.	समान	हत	११.	फीकी हो गई
रूपिणीः ।	५.	रूपवती	श्रियः ॥	१०.	उनकी शोभा

श्लोकार्थ—उन देवराज इन्द्र के अनुचरों ने लक्ष्मी जी के समान रूपवती स्त्रियों को देखा, तो उनके रूप के सामने उनकी शोभा फीकी हो गई। और उन स्त्रियों को सुगन्ध से वे मोहित हो गये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तानाह देवदेवेशः प्रणतान् प्रहसन्निव ।
आसामेकतमां वृङ्ध्वं सवर्णां स्वर्गभूषणाम् ॥१४॥

पदच्छेद— तान् आह देवदेवेशः प्रणतान् प्रहसन् इव ।
आसाम् एकतमाम् वृङ्ध्वम् सवर्णाम् स्वर्गभूषणाम् ॥

शब्दार्थ—

तान	३.	उन देवताओं से	आसाम्	७.	इनमें से
आह	६.	कहा	एकतमाम्	९.	किसी एक स्त्री को
देवदेवेशः	१.	भगवान् नारायण ने	वृङ्ध्वम्	१०.	ग्रहण कर लो
प्रणतान्	२.	प्रणाम करते हुये	सवर्णाम्	८.	अपने अनुरूप
प्रहसन्	४.	हँसते हुये	स्वर्ग	११.	वह स्वर्गलोक की
इव ।	५.	से	भूषणाम् ॥	१२.	शोभा बढ़ाने वाली होगी

श्लोकार्थ—भगवान् नारायण ने प्रणाम करते हुये उन देवताओं से हँसते हुये से कहा, इनमें से अपने अनुरूप किसी एक स्त्री को ग्रहण कर लो। वह स्वर्ग की शोभा बढ़ाने वाली होगी ॥

पञ्चदशः श्लोकः

ओमित्यादेशमादाय नत्वा तं सुरवन्दिनः ।
उर्वशीमप्सरःश्रेष्ठां पुरस्कृत्य दिवं ययुः ॥१५॥

पदच्छेद— ओम्इति आदेशम् आदाय नत्वा तम् सुरवन्दिनः ।
उर्वशीम् अप्सरः श्रेष्ठाम् पुरस्कृत्य दिवम् ययुः ॥

शब्दार्थ—

ओम्इति	२.	जो आज्ञा ऐसा कह कर	उर्वशीम्	६.	उर्वशी को
आदेशम्	३.	आदेश	अप्सरः	८.	अप्सरा
आदाय	४.	मानकर और	श्रेष्ठाम्	७.	स्त्रियों में श्रेष्ठ
नत्वा	६.	प्रणाम करके	पुरस्कृत्य	१०.	आगे करके
तम्	५	उन्हें	दिवम्	११.	स्वर्गलोक को
सुरवन्दिनः ।	१.	इन्द्र के अनुचरों ने	ययुः ॥	१२.	चले गये

श्लोकार्थ—इन्द्र के अनुचरों जो आज्ञा ऐसा कह कर आदेश मानकर और उन्हें प्रणाम करके स्त्रियों में श्रेष्ठ अप्सरा उर्वशी को आगे करके स्वर्गलोक को चले गये ॥

षोडशः श्लोकः

इन्द्रायानम्य सदसि शृण्वतां त्रिदिवौकसाम् ।
ऊचुर्नारायणबलं शक्रस्तत्रास विस्मितः ॥१६॥

पदच्छेद— इन्द्राय आनम्य सदसि शृण्वताम् त्रिदिव ओकसाम् ।
ऊचुः नारायण बलम् शक्रः तत्रास विस्मितः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्राय	२	इन्द्र को	ऊचुः	६.	वर्णन किया
आनम्य	३.	प्रणाम करके	नारायण	७.	भगवान् नर-नारायण के
सदसि	१.	फिर सभा में	बलम्	८.	बल और प्रभाव का
शृण्वताम्	६.	सुनाते हुये	शक्रः	१०.	उसे सुनकर इन्द्र
त्रिदिव	४.	देवलोक	तत्रास	११.	भयभीत और
ओकसाम् ।	५.	वासियों को	विस्मितः ॥	१२.	चकित हो गये

श्लोकार्थ—फिर सभा में इन्द्र को प्रणाम करके देवलोक वासियों को सुनाते हुये, भगवान् नर-नारायण के बल और प्रभाव का वर्णन किया। उसे सुनकर भयभीत और चकित हो गये ॥

सप्तदशः श्लोकः

हंसस्वरूप्यवददच्युत आत्मयोगं
दत्तः कुमार ऋषभो भगवान् पिता नः ।
विष्णुः शिवाय जगतां कलयावतीर्ण-
स्तेनाहृता मधुभिदा श्रुतयो हयास्ये ॥१७॥

पदच्छेद--

हंस स्वरूपी अवदत् अच्युतः आत्मयोगम्
दत्तः कुमार ऋषभः भगवान् पिता नः ।
विष्णुः शिवाय जगताम् कलया अवतीर्णः
तेन आहृताः मधुभिदा श्रुतयः हयआस्ये ॥

शब्दार्थ—

हंस स्वरूपी	१. हंस का स्वरूप धारण करके	विष्णुः	८. भगवान् विष्णु ने
अवदत्	७. बताया है	शिवाय जगताम्	९. सम्पूर्ण जगत के कल्याण के लिये
अच्युतः	२. भगवान् अच्युत और	कलया अवतीर्णः	१०. बहुत से कला अवतार ग्रहण किये हैं
आत्मयोगम्	६. आत्मा को जानने का साधन	तेन आहृताः	१२. उनके द्वारा चुराये गये
दत्तः कुमार	३. दत्तात्रेय-सनकादि कुमार तथा	मधुभिदा	११. उन्होंने मधु कैटभ का संहार करके
ऋषभः भगवान्	५. भगवान् ऋषभ ने	श्रुतयः	१३. वेदों का
पिता नः ।	४. हमारे पिता	हयआस्ये ॥	१४. हयग्रीव अवतार में उद्धार किया

श्लोकार्थ—हंस का स्वरूप धारण करके भगवान् अच्युत और दत्तात्रेय, सनकादि कुमार तथा हमारे पिता भगवान् ऋषभ ने आत्मा को जानने का साधन बताया है। भगवान् विष्णु ने सम्पूर्ण जगत के कल्याण के लिये बहुत से कलावतार ग्रहण किये हैं, उन्होंने मधु-कंटभ का संहार करके उनके द्वारा चुराये गये वेदों का हयग्रीव अवतार में उद्धार किया ॥

अष्टादशः श्लोकः

गुप्तोऽप्यये मनुरिलौषधयश्च मात्स्ये
क्रौडे हतो दितिज उद्धरताम्भसः क्ष्माम् ।
कौर्मे धृतोऽद्रिरमृतोन्मथने स्वपृष्ठे
ग्राहात् प्रपन्नमिभराजममुञ्चदार्तम् ॥१८॥

पदच्छेद—

गुप्तः अप्यये मनुः इला औषधयः च मात्स्ये
क्रौडे हतः दितिज उद्धरत अम्भसः क्ष्माम् ।
कौर्मे धृतः अद्रिः अमृत उन्मथने स्वपृष्ठे
ग्राहात् प्रपन्नम् इभराजम् अमुञ्चत् आर्तम् ॥

शब्दार्थ—

गुप्तः	५. रक्षा की । और	कौर्मे	१०. कूर्मावतार ग्रहण करके
अप्यये	१. प्रलय के समय	धृतः अद्रिः	१३. मदरा चल धारण किया और
मनुः इला	३. उन्होंने भावी मनु सत्यव्रत, पृथ्वी	अमृत उन्मथने	११. अमृत मन्थन के समय
औषधयः च	४. और औषधियों की	स्वपृष्ठे	१२. उन्होंने अपनी पीठ पर
मात्सये	२. मत्स्यावतार लेकर	ग्राहात्	१७. ग्राह से
क्रौडे	६. वाराह वतार लेकर	प्रपन्नम्	१४. शरणागत
हतः दितिज	९. हिरण्याक्ष का संहार किया	इभराजम्	१६. भक्त गजेन्द्र को
उद्धरत	८. उद्धार करते समय	अमुञ्चत्	१८ छुड़ाया
अम्भसः क्ष्माम् ।	७. पृथ्वी का रसातल से	आर्तम् ॥	१५. एवम् आर्त

श्लोकार्थ—प्रलय के समय मत्स्यावतार लेकर उन्होंने भावी मनु सत्यव्रत, पृथ्वी और औषधियों की रक्षा की। और वाराहवतार लेकर पृथ्वो का रसातल से उद्धार करते समय हिरण्याक्ष का संहार किया। कूर्मावतार ग्रहण करके अमृत मन्थन के समय उन्होंने अपनो पीठ पर मंदराचल धारण किया, और शरणागत एवम् आर्त भक्त गजेन्द्र को ग्राह से छुड़ाया ॥

एकोनविंशः श्लोकः

संस्तुन्वतोऽब्धिपतिताञ्छ्रमणानृषींश्च
शक्रं च वृत्रवधतस्तमसि प्रविष्टम् ।
देवस्त्रियोऽसुरगृहे पिहिता अनाथा
जघ्नेऽसुरेन्द्रमभयाय सतां नृसिंहे ॥१९॥

पदच्छेद—

संस्तुन्वतः अब्धिपतितान् श्रमणान् ऋषीन् च
शक्रम् च वृत्रवधतः तमसि प्रविष्टम् ।
देवस्त्रियः असुरगृहे पिहिताः अनाथाः
जघ्ने असुरेन्द्रम् अभयाय सताम् नृसिंहे ॥

शब्दार्थ—

संस्तुन्वतः	४.	स्तुति कर रहे थे (और)	**देवस्त्रियः**	११.	देवाङ्गनाओं को
अब्धिपतितान्	३.	(जब गो खुर रूप) समुद्र में गिर कर	**असुरगृहे**	९.	जब असुरों ने अपने घर में
श्रमणान्	१.	कश्यप की समिधा लाने वाले दुर्बल	**पिहिताः**	१२.	बन्दी बना लिया था
ऋषीन् च	२.	बालखिल्य ऋषि	**अनाथाः**	१०.	अनाथ आपने उन सबको सहायता की थी
शक्रम् च	६.	जब इन्द्र	**जघ्ने असुरेन्द्रम्**	१६.	हिरण्यकशिपु को मार डाला था।
वृत्रवधतः	५.	वृत्रासुर को मारने के कारण	**अभयाय**	१४.	निर्भय करने के लिये उन्होंने
तमसि	७.	ब्रह्म हत्या रूप अन्धकार में	**सताम्**	१३.	इसी प्रकार प्रह्लाद को
प्रविष्टम् ।	८.	छिप गया था और	**नृसिंहे ॥**	१५.	नृसिंह रूप बनाकर

श्लोकार्थ—कश्यप ऋषि के लिये समिधा लाने वाले दुर्बल बालखिल्य ऋषि जब गोखुर रूप समुद्र में गिर कर स्तुति कर रहे थे। और वृत्रासुर को मारने के कारण जब इन्द्र ब्रह्म हत्या रूप अन्धकार में छिप गया था। और जब असुरों ने अपने घर में अनाथ देवाङ्गनाओं को बन्दी बना लिया था। आपने उन सबकी सहायता की थी। इसी प्रकार प्रह्लाद को निर्भय करने के लिये उन्होंने नृसिंह रूप बना कर हिरण्यकशिपु को मार डाला था॥

विंशः श्लोकः

देवासुरे युधि च दैत्यपतीन् सुरार्थे
हत्वान्तरेषु भुवनान्यदधात् कलाभिः ।
भूत्वाथ वामन इमामहरद् बलेः क्ष्मां
याच्ञाच्छलेन समदाददितेः सुतेभ्यः ॥२०॥

पदच्छेद—

देवासुरे युधि च दैत्यपतीन् सुर अर्थे
हत्वा अन्तरेषु भुवनानि अदधात् कलाभिः ।
भूत्वाअथ वामनः इमाम् अहरत् बलेः क्ष्माम्
याञ्चाछलेन समदात् अदितेःसुतेभ्यः ॥

शब्दार्थ—

देवासुरे	२.	देवासुर	भूत्वाअथवामनः	९.	फिर वामनअवतार ग्रहण करके
युधि च	३.	संग्राम में	इमाम्	१२.	इस
दैत्यपतीन्	४.	दैत्य पतियों का	अहरत्	१४.	छीन लिया और
सुरार्थे	१.	उन्होंने देवों की रक्षा केलिये	बलेः	११.	दैत्यराज बलि से
हत्वा अन्तरेषु	५.	बध किया और मन्वन्तरों में	क्ष्माम्	१३.	पृथ्वी को
भुवनानि	७.	त्रिभुवन की	याञ्चाछलेन	१०.	उन्होंने याचना के बहाने
अदधात्	८.	रक्षा की ।	समदात्	१६.	दे दिया
कलाभिः ।	६.	अनेकों कलावतार धारण	अदितेःसुतेभ्यः॥	१५.	अदितिनन्दन देवताओं को

श्लोकार्थ—उन्होंने देवों की रक्षा के लिये देवासुर संग्राम में दैत्य पतियों का बध किया। और मन्वन्तरों में अनेकों कलावतार धारण करके त्रिभुवन की रक्षा की। फिर वामनावतार ग्रहण करके उन्होंने याचना के बहाने दैत्यराज बलि से इस पृथ्वी को छीन लिया, और अदिति नन्दन देवताओं को दे दिया ॥

एकविंशः श्लोकः

**निःक्षत्रियामकृत गां च त्रिःसप्तकृत्वो
रामस्तु हैहयकुलाप्ययभार्गवाग्निः ।
सोऽब्धिं बबन्ध दशवक्त्रमहन् सलङ्कं
सीतापतिर्जयति लोकमलघ्नकीर्तिः ॥२१॥**

पदच्छेद— निःक्षत्रियाम् अकृत गाम् च त्रिःसप्तकृत्वः
रामः तु हैहयकुल अप्ययभार्गवाग्निः ।
सः अब्धिम् बबन्ध दशवक्त्रम् अहन्
सलङ्कम् सीतापतिः जयतिलोक मलघ्न कीर्तिः ।

शब्दार्थ—

निःक्षत्रियाम्	७.	क्षत्रियों से रहित	सः अब्धिम्	९.	उन्होंने रामावतार म समुद्र पर
अकृत	८.	किया था	बबन्धदशवक्त्रम्	११.	पुल बाँधा एवम् रावणतथा
गाम् च	५.	उन्होंने पृथ्वी को	अहन्	१२.	मिट्टी में मिला दिया
त्रिःसप्तकृत्वः	६.	इक्कीस बार	सलङ्कम्	११.	उसकी राजधानी लङ्का को
रामः तु हैहयकुल	१.	परशुरामजीतो हैहयवंश का	सीतापतिः	१३.	ऐसे सीता पति राम
अप्यय	२.	प्रलय करने के लिये	जयति	१४.	विजयी हो ओर
भार्गव	३.	मानों भृगुवंश में	लोकमलघ्न	१६.	लोकों के मलों को नष्ट करने वाली हो
अग्निः ।	४.	अग्नि रूप में अवतीर्ण हुये थे	कीर्तिः ॥	१५.	उनकी कीर्ति

श्लोकार्थ—परशुराम जी तो हैहयवंश का प्रलय करने के लिये मानों भृगुवंश में अग्नि रूप में अवतीर्ण हुये थे। उन्होंने पृथ्वी को इक्कीस बार क्षत्रियों से रहित किया था। उन्होंने रामावतार में समुद्र पर पुल बाँधा एवम् रावण तथा उसकी राजधानी लङ्का को मिट्टी में मिला दिया। ऐसे सीता पतिराम विजयी हों, और उनकी कीर्ति लोकों के मलों को नष्ट करने वाली हो ॥

द्वाविंशः श्लोकः

भूमेर्भरावतरणाय यदुष्वजन्मा जातः
करिष्यति सुरैरपि दुष्कराणि।
वादैर्विमोहयति यज्ञकृतोऽतदर्हान् शूद्रान्
कलौ क्षितिभुजो न्यहनिष्यदन्ते ॥२२॥

पदच्छेद— भूमेः भर अवतरणाय यदुषु अजन्मा
जातः करिष्यति सुरैः अपि दुष्कराणि।
वादैः विमोहयति यज्ञकृतः अतदर्हान्
शूद्रान् कलौ क्षितिभुज न्यहनिष्यत् अन्तेः ।।

शब्दार्थ—

भूमेः	१. वे प्रभु पृथ्वी का	वादैः	१२. उन्हें तर्क-वितर्कों से
भर	२. भार	विमोहयति	१३. मोहित कर लेंगे और
अवतरणाय	३. उतारने के लिये	यज्ञकृतः	११. यज्ञ करते देखकर (बुद्ध रूप में)
यदुषु	४. यदुवंश में	अतदर्हान्	१०. वे यज्ञ के अनधिकारियों को
अजन्मा	६. अजन्मा होने पर भी	शूद्रान्	१६. शूद्र
जातः	५. जन्म लेकर	कलौ	१४. कलियुग के
करिष्यति	९. करेंगे	क्षितिभुजः	१७. राजाओं का
सुरैः अपि	७. देवताओं के लिये	न्यहनिष्यत्	१८. बध करेंगे
दुष्कराणि ।।	८. दुष्कर कार्यों को भी	अन्ते ।।	१५. अन्त में कल्कि अवतार लेकर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वे प्रभु पृथ्वी का भार उतारने के लिये यदुवंश में जन्म लेकर अजन्मा होने पर भी देवताओं के लिये दुष्कर कार्यों को भी करेंगे। वे यज्ञ के अनधिकारियों को यज्ञ करते देखकर बुद्ध रूप में उन्हें तर्क-वितर्कों से मोहित कर लेंगे, और कलियुग के अन्त में कल्कि अवतार लेकर शूद्र राजाओं का बध करेंगे ।।

त्रयविंशः श्लोकः

एवंविधानि कर्माणि जन्मानि च जगत्पतेः ।
भूरीणि भूरियशसो वर्णितानि महाभुज ॥२३॥

पदच्छेद—

एवम् विधानि कर्माणि जन्मानि च जगत्पतेः ।
भूरीणि भूरियशसः वर्णितानि महाभुज ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५.	इस	भूरीणि	३.	बहुत से महात्माओं ने
विधानि	६.	प्रकार के	भूरियशसः	२.	भगवान् की कीर्ति अनन्त है
कर्माणि	९.	कर्मों का	वर्णितानि	१०.	गान भी किया है
जन्मानि	७.	जन्मों	महाभुज ॥	१.	हे राजन् महाबाहु विदेहराज !
च	८.	और			
जगत्पतेः ।	४.	जगत्पति भगवान् के			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! हे महाबाहु विदेह राज ! भगवान् की कीर्ति अनन्त है । बहुत से महात्माओं ने जगत्पति भगवान् के इस प्रकार के जन्मों और कर्मों का गान भी किया है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशः स्कन्धः चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

पञ्चमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच— भगवन्तं हरिं प्रायो न भजन्त्यात्मवित्तमाः ।
तेषामशान्तकामानां का निष्ठाऽविजितात्मनाम् ॥१॥

पदच्छेद— भगवन्तम् हरिम् प्रायः न भजन्ति आत्म वित्तमाः ।
तेषाम् अशान्त कामानाम् का निष्ठा अविजित आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

भगवन्तम्	४.	भगवान्	तेषाम्	७.	उन
हरिम्	५.	श्रीहरि का	अशान्त	८.	अशान्त
प्रायः	३.	प्रायः लोग	कामानाम्	९.	कामनाओं तथा
न भजन्ति	६.	भजन नहीं करते हैं	का निष्ठा	१२.	क्या गति होती है
आत्म	१.	हे आत्मज्ञानियों में	अविजित	१०.	अजित
वित्तमाः ।	२.	श्रेष्ठो ।	आत्मनाम् ॥	११.	इन्द्रियों वाले लोगों की

श्लोकार्थ—हे आत्मज्ञानियों में श्रेष्ठो ! प्रायः लोग भगवान् श्रीहरि का भजन नहीं करते हैं। उन अशान्त कामनाओं तथा अजित इन्द्रियों वाले लोगों की क्या गति होती है ।

द्वितीयः श्लोकः

चमस उवाच—मुखबाहूरुपादेभ्यः पुरुषस्याश्रमैः सह ।
चत्वारो जज्ञिरे वर्णा गुणैर्विप्रादयः पृथक् ॥२॥

पदच्छेद— मुख बाहु उरुपादेभ्यः पुरुषस्य आश्रमैः सह ।
चत्वारः जज्ञिरे वर्णाः गुणैः विप्रआदयः पृथक् ॥

शब्दार्थ—

मुख	९.	मुख से ब्राह्मण	चत्वारः	३.	चार
बाहु	१०.	भुजाओं से क्षत्रिय	जज्ञिरे	१२.	उत्पन्न हुये
उरुपादेभ्यः	११.	जांघों से वैश्य और पैरों से शूद्र	वर्णाः	४.	वर्ण
पुरुषस्य	८.	विराट् पुरुष के	गुणैः	५.	गुणों और
आश्रमैः	६.	आश्रमों के	विप्रआदयः	२.	ब्राह्मण आदि
सह ।	७.	सहित	पृथक् ॥	१.	पृथक्-पृथक्

श्लोकार्थ—पृथक्-पृथक् ब्राह्मण आदि चार वर्ण, गुणों और आश्रमों के सहित विराट् पुरुष के मुख से (ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जांघों से वैश्य और पैरों से शूद्र) उत्पन्न हुये ॥

तृतीयः श्लोकः

य एषां पुरुषं साक्षादात्मप्रभवमीश्वरम् ।
न भजन्त्यवजानन्ति स्थानाद् भ्रष्टाः पतन्त्यधः ॥३॥

पदच्छेद— ये एषाम् पुरुषम् साक्षाद् आत्म प्रभवम् ईश्वरम् ।
न भजन्ति अवजानन्ति स्थानात् भ्रष्टाः पतन्ति अधः ।।

शब्दार्थ—

ये	१.	जो व्यक्ति	न	९.	नहीं उनका
एषाम्	५.	इस प्रकार के	भजन्ति	१०.	भजन करता है
पुरुषम्	६.	परम पुरुष	अवजानन्ति	८.	नहीं जानता और
साक्षात्	२.	साक्षात्	स्थानात्	११.	वह अपने स्थान से
आत्म	३.	अपनी	भ्रष्टाः	१२.	भ्रष्टाः
प्रभवम्	४.	उत्पत्ति करने वाले	पतन्ति	१४.	गिर जाते हैं
ईश्वरम् ।	७.	परमात्मा को	अधः ।।	१३.	नीचे

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति साक्षात् अपनी उत्पत्ति करने वाले इस प्रकार के परम पुरुष परमात्मा को नहीं जानता, और न ही उनका भजन करता है। वह अपने स्थान से भ्रष्ट होकर नीचे गिर जाते हैं ।।

चतुर्थः श्लोकः

दूरेहरिकथाः केचिद् दूरेचाच्युतकीर्तनाः ।
स्त्रियः शूद्रादयश्चैव तेऽनुकम्प्या भवादृशाम् ॥४॥

पदच्छेद— दूरे हरि कथाः केचित् दूरे च अच्युत कीर्तनाः ।
स्त्रियः शूद्र आदयः च एव ते अनुकम्प्याः भवादृशाम् ।।

शब्दार्थ—

दूरे	५.	दूर	स्त्रियः	२.	स्त्रियाँ और
हरि कथाः	४.	भगवान् की कथा से	शूद्र	३.	शूद्र
केचित्	१.	बहुत सी	आदयः	९.	आदि से भी
दूरे	१०.	दूर	च एव	११.	ही हैं
च	६.	और	ते	१२.	वे
अच्युत	७.	उन प्रभु के	अनुकम्प्याः	१४.	दया के पात्र हैं
कीर्तनाः ।	८.	नाम कीर्तन	भवादृशाम् ।।	१३	आप जैसे भगवद्भक्तों की

श्लोकार्थ—बहुत सी स्त्रियाँ और शूद्र भगवान् की कथा से दूर हैं। और उन प्रभु के नाम कीर्तन आदि से भी दूर ही हैं। वे आप जैसे भगवद्भक्तों की दया के पात्र हैं ।।

पञ्चमः श्लोकः

विप्रोराजन्यवैश्यौ च हरेः प्राप्ताः पदान्तिकम् ।
श्रौतेन जन्मनाथापि मुह्यन्त्याम्नायवादिनः ॥५॥

पदच्छेद— विप्रः राजन्य वैश्यौ च हरेः प्राप्ताः पद अन्तिकम् ।
श्रौतेन जन्मना अथापि मुह्यन्ति आम्नाय वादिनः ॥

शब्दार्थ—

विप्रः	१.	ब्राह्मण	श्रौतेन	५.	वेदाध्ययन तथा यज्ञोपवीत से
राजन्य	२.	क्षत्रिय और	जन्मना	४.	जन्म से
वैश्यौ	३.	वैश्य	अथापि	१०.	भी
च हरेः	६.	भगवान् श्री हरि के	मुह्यन्ति	१३.	मोहित हो जाते हैं
प्राप्ताः	९.	पहुँच कर	आम्नाय	११.	वेद-
पद	७.	चरणों के	वादिनः ॥	१२.	वाद अर्थात् अर्थवाद में पड़कर
अन्तिकम् ।	८.	निकट तक			

श्लोकार्थ—ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य जन्म से वेदाध्ययन तथा यज्ञोपवीत से भगवान् श्री हरि के चरणों के निकट तक पहुँच कर भी वेद-वाद अर्थात् अर्थवाद में पड़ कर मोहित हो जाते हैं ।

षष्ठः श्लोकः

कर्मण्यकोविदाः स्तब्धा मूर्खाः पण्डितमानिनः ।
वदन्ति चाटुकान् मूढा यया माध्व्या गिरोत्सुकाः ॥६॥

पदच्छेद— कर्मणि अकोविदाः स्तब्धाः मूर्खाः पण्डित मानिनः ।
वदन्ति चाटुकान् मूढाः यया माध्व्या गिरोत्सुकाः ॥

शब्दार्थ—

कर्मणि	१.	उन्हें कर्म करने का	वदन्ति	१२.	कहा करते हैं
अकोविदाः	२.	रहस्य मालूम नहीं है	चाटुकान्	११.	चटकीली-भड़कीली बातें
स्तब्धाः	३.	किंकर्तव्य विमूढ हैं और	मूढाः	८.	वे मूर्ख
मूर्खाः	४.	मूर्ख होने पर भी	यया	७	इसी कारण
पण्डित	५.	अपने को पण्डित	माध्व्या	९.	मीठी-मीठी
मानिनः ।	६.	मानते हैं	गिरोत्सुकाः ॥	१०.	बातों के मोह में

श्लोकार्थ—उन्हें कर्म करने का रहस्य मालूम नहीं है। वे किंकर्तव्य विमूढ हैं और मूर्ख होने पर भी अपने को पण्डित मानते हैं। इसी कारण वे मूर्ख मीठी-मीठी बातों के मोह में चटकीली भड़कीली बातें कहा करते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

रजसा घोरसङ्कल्पाः कामुका अहिमन्यवः ।
दाम्भिका मानिनः पापा विहसन्त्यच्युतप्रियान् ॥७॥

पदच्छेद— रजसा घोर सङ्कल्पाः कामुकाः अहिमन्यवः ।
दाम्भिकाः मानिनः पापाः विहसन्ति अच्युत प्रियान् ॥

शब्दार्थ—

रजसा	१.	रजो गुण के कारण	दाम्भिकाः	७.	बनावट और
घोर	२.	बड़े घोर	मानिनः	८.	घमण्ड से प्रेम करने वाले
सङ्कल्पाः	३.	सङ्कल्पों वाले	पापाः	९.	पापी लोग
कामुकाः	४.	कामनाओं के दास और	विहसन्ति	१२.	हँसी उड़ाया करते हैं
अहि	५.	सांप के	अच्युत	१०.	भगवान् के
मन्यवः।	६.	समान क्रोध करने वाले	प्रियान् ॥	११.	भक्तों की

श्लोकार्थ—रजोगुण के कारण बड़े घोर सङ्कल्पों वाले कामनाओं के दास और सांप के समान क्रोध करने वाले बनावट और घमण्ड से प्रेम करने वाले पापी लोग भगवान् के भक्तों की हँसी उड़ाया करते हैं ॥

अष्टमः श्लोक

वदन्ति तेऽन्योन्यमुपासितस्त्रियो गृहेषु मैथुन्यपरेषु चाशिषः ।
यजन्त्यसृष्टान्नविधानदक्षिणं वृत्त्यै परं घ्नन्ति पशूनतद्विदः ॥८॥

पदच्छेद— वदन्ति ते अन्योन्यम् उपासित स्त्रियः गृहेषु मैथुन्य परेषु च आशिषः ।
यजन्ति असृष्टान्न विधान दक्षिणम् वृत्त्यै परम् घ्नन्ति पशून् अतद्-विदः ॥

शब्दार्थ—

वदन्ति	८.	बातें करते हैं	यजन्ति	९.	यज्ञ करते हैं तो
ते अन्योन्यम्	१.	वे मूर्ख परस्पर	असृष्टान्न	१२.	अन्नदान नहीं करते हैं तो
उपासित	३.	उपासना करते हैं	विधान	१०.	विधि पूर्वक
स्त्रियः	२.	स्त्रियों की	दक्षिणम्	११.	दक्षिणा और
गृहेषु	६.	घर गृहस्थी की ही	वृत्त्यै	१५,	जीभ को सन्तुष्ट करने के लिये
मैथुन्य	४.	स्त्री सुख के	परम्	१४.	केवल
परेषु	५.	परायण होकर	घ्नन्ति पशून्	१६.	पशुओं की हत्या करते हैं
च आशिषः।	७.	इच्छाओं के बारे में	अतद्-विदः ॥	१३.	कर्म का रहस्य न जानने वाले वे लोग

श्लोकार्थ—वे मूर्ख परस्पर स्त्रियों की ही उपासना करते हैं। स्त्री सुख के परायण होकर घर गृहस्थी की ही इच्छाओं के बारे में बातें करते हैं। यज्ञ करते हैं तो विधि पूर्वक दक्षिणा और अन्नदान नहीं करते हैं। कर्म का रहस्य न जानने वाले वे लोग केवल जीभ को सन्तुष्ट करने के लिये पशुओं की हत्या करते हैं ॥

नवमः श्लोकः

श्रिया विभूत्याभिजनेन विद्यया त्यागेन रूपेण बलेन कर्मणा।
जातस्मयेनान्धधियः सहेश्वरान् सतोऽवमन्यन्ति हरिप्रियान् खलाः ॥९॥

पदच्छेद—श्रिया विभूत्या अभिजनेन विद्यया त्यागेन रूपेण बलेन कर्मणा।
जात स्मयेन अन्धधियः सह ईश्वरान् सतो अवमन्यन्ति हरिप्रियान् खलाः ॥

शब्दार्थ—

श्रिया	१.	धन	जात	९.	होने वाले
विभूत्या	२.	वैभव	स्मयेन	१०.	घमण्ड से
अभिजनेन	३.	कुलीनता	अन्धधियः	११.	अन्धे होकर
विद्यया	४.	विद्या	सह ईश्वरान्	१३.	परमात्मा के साथ-साथ
त्यागेन	५.	दान	सतो	१५.	भक्त जनों का भी
रूपेण	६.	सौन्दर्य	अवमन्यन्ति	१६.	अनादर करते हैं
बलेन	७.	बल और	हरि प्रियान्	१४.	श्री हरि के प्रिय
कर्मणा।	८.	कर्म आदि के कारण	खलाः ॥	१२.	वे दुष्ट

श्लोकार्थ—धन, वैभव, कुलीनता, विद्या, दान, सौन्दर्य, बल और कर्म आदि के कारण होने वाले घमण्ड से अन्धे होकर वे दुष्ट परमात्मा के साथ-साथ श्री हरि के प्रिय भक्त जनों का भी अनादर करते हैं ॥

दशमः श्लोकः

सर्वेषु शश्वत्तनुभृत्स्ववस्थितं यथा खमात्मानमभीष्टमीश्वरम्।
वेदोपगीतं च न शृण्वतेऽबुधा मनोरथानां प्रवदन्ति वार्तया ॥१०॥

पदच्छेद—सर्वेषु शश्वत् तनुभृत्सु अवस्थितम् यथा खम् आत्मानम् अभीष्टम् ईश्वरम्।
वेद उपगीतम् च न शृण्वते अबुधाः मनोरथानाम् प्रवदन्ति वार्तया ॥

शब्दार्थ—

सर्वेषु	५.	समस्त	वेद	१.	वेदों ने
शश्वत्	४.	नित्य निरन्तर	उपगीतम्	२.	इसे बार-बार दुहराया है
तनुभृत्सु	६.	प्राणधारियों में	च न	१२.	उसे नहीं
अवस्थितम्	८.	स्थित हैं	शृण्वते	१३.	सुनते
यथा खम्	७.	आकाश के समान	अबुधाः	११.	पर वे मूर्ख
आत्मानम्	९.	वे अपने आत्मा	मनोरथानाम्	१४.	केवल अपने मनोरथों
अभीष्टम्	१०.	और प्रिय है	प्रवदन्ति	१६.	कहते-सुनते रहते हैं
ईश्वरम्।	३.	कि भगवान्	वार्तया ॥	१५.	की बातें

श्लोकार्थ—वेदों ने इसे बार-बार दुहराया है। कि भगवान् नित्य-निरन्तर समस्तप्राणधारियों में आकाश के समान स्थित है। वे अपने आत्मा और प्रिय है। पर वे मूर्ख उसे नहीं सुनते केवल अपने मनोरथों की बातें कहते सुनते रहते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

लोके व्यवायामिषमद्यसेवा नित्यास्तु जन्तोर्न हि तत्र चोदना ।
व्यवस्थितिस्तेषु विवाहयज्ञसुराग्रहैरासु निवृत्तिरिष्टा ॥११॥

पदच्छेद— लोके व्यवाय आमिष मद्य सेवाः नित्यास्तु जन्तोः न हि तत्र चोदना ।
व्यवस्थितिः तेषु बिवाह यज्ञ सुराग्रहैः आसु निवृत्तिः इष्टा ॥

शब्दार्थ—

लोके	१.	संसार में	व्यवस्थितिः	१३.	उनके सेवन की व्यवस्था हो गई है
व्यवाय	२.	देखा जाता है कि मैथुन,	तेषु	६.	ऐसी स्थिति में
आमिष	३.	मांस और	विवाह	१०	विवाह
मद्य	४.	मद्य का	यज्ञ	११.	यज्ञ और
सेवाः	६.	सेवन हो रहा है	सुराग्रहैः	१२.	सौत्रामणी यज्ञ के द्वारा
नित्यास्तु	५.	नित्य ही	आसु	१४.	इसका अर्थ शीघ्र ही
जन्तोः न हि तत्र	७.	प्राणी को इसमें नहीं है	निवृत्तिः	१५.	उधर से मन को हटाना
चोदना ।	८.	प्रवृत्त करने की जरूरत	इष्टा ॥	१६.	माना गया है

श्लोकार्थ—संसार में देखा जाता है कि मैथुन, मांस और मद्य का नित्य ही सेवन हो रहा है। प्राणी को इसमें प्रवृत्त करने की जरूरत नहीं है। ऐसी स्थिति में विवाह यज्ञ और सौत्रामणी यज्ञ के द्वारा उनके सेवन की व्यवस्था हो गई है। इसका अर्थ शीघ्र ही उधर से मन को हटाना माना गया है ॥

द्वादशः श्लोकः

धनं च धर्मैकफलं यतो वै ज्ञानं सविज्ञानमनुप्रशान्ति ।
गृहेषु युञ्जन्ति कलेवरस्य मृत्युं न पश्यन्ति दुरन्तवीर्यम् ॥१२॥

पदच्छेद— धनम् च धर्म एक फलम् यतो वै ज्ञानम् सविज्ञानम् अनु प्रशान्ति ।
गृहेषु युञ्जन्ति कलेवरस्य मृत्युम् न पश्यन्ति दुरन्त वीर्यम् ॥

शब्दार्थ—

धनम् च	१.	धन का	गृहेषु	६.	उसी धन को लोग घर में और
धर्म	४.	धर्म है	युञ्जन्ति	११.	लगा देते हैं
एक	२.	एक मात्र	कलेवरस्य	१०.	शरीर आदि में
फलम्	३.	फल	मृत्युम्	१४.	मृत्यु को वे
यतो वै	५.	क्योंकि धर्म से	न	१५.	नहीं
ज्ञानम्	६.	ज्ञान और	पश्यन्ति	१६.	देखते हैं
सविज्ञानम्	७.	निष्ठा की अनुभूति तथा	दुरन्त	१२.	जब कि अत्यन्त
अनु प्रशान्ति ।	८.	परम शान्ति प्राप्त होती है	वीर्यम् ॥	१३.	शक्ति शाली

श्लोकार्थ—धन का एक मात्र फल धर्म है, क्योंकि धर्म से ज्ञान और निष्ठा की अनुभूति तथा परम शान्ति प्राप्त होती है। उसी धन को लोग घर में और शरीर आदि में लगा देते हैं। जब कि अत्यन्त शक्ति शाली मृत्यु को वे नहीं देखते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

यद् घ्राणभक्षो विहितः सुरायास्तथा पशोरालभनं न हिंसा।
एवं व्यवायः प्रजया न रत्या इमं विशुद्धं न विदुः स्वधर्मम् ॥१३॥

पदच्छेद— यद् घ्राण भक्षः विहितः सुरायाः तथा पशोः आलभनम् न हिंसा।
एवम् व्यवायः प्रजया न रत्या इमम् विशुद्धम् न विदुः स्व धर्मम् ॥

शब्दार्थ—

यद्	१.	सौत्रामणी यज्ञ में	एवम्	९.	इसी प्रकार
घ्राण	३.	सूँघने का ही	व्यवायः	१०.	धर्मपत्नी का साथ
भक्षः	५.	भक्षण या पीने का नहीं है	प्रजया	१२.	अपितु सन्तानोत्पत्ति के लिये है
विहितः	४.	विधान है	न रत्या	११.	विषय भोग के लिये नहीं है
सुरायाः	२.	सुरा को	इमम् विशुद्धम्	१४.	इस विशुद्ध
तथा पशोः	६.	इसी प्रकार यज्ञ में पशु के	न विदुः	१६.	नहीं जानते हैं
आलभनम्	७.	स्पर्श का विधान है	स्व	१३.	परन्तु विषयी लोग अपने
न हिंसा।	८.	हिंसा का नहीं है	धर्मम् ॥	१५.	धर्म को

श्लोकार्थ—सौत्रामणी यज्ञ में सुरा को सूँघने का ही विधान है, भक्षण या पीने का नहीं है। इसी प्रकार यज्ञ में पशु के स्पर्श का विधान है, हिंसा का नहीं है। इसी प्रकार धर्मपत्नी का साथ विषय भोग के लिये नहीं है, अपितु सन्तानोत्पत्ति के लिये है। परन्तु विषयी लोग अपने इस विशुद्ध धर्म को नहीं जानते हैं॥

चतुर्दशः श्लोकः

ये त्वनेवंविदोऽसन्तः स्तब्धाः सदभिमानिनः।
पशून् द्रुह्यन्ति विस्रब्धाः प्रेत्य खादन्ति ते च तान् ॥१४॥

पदच्छेद— ये तु अनेवम् विदो असन्तः सद् अभिमानिनः।
पशून् द्रुह्यन्ति विस्रब्धाः प्रेत्य खादन्ति ते च तान् ॥

शब्दार्थ—

ये तु	१.	जो	पशून्	९.	पशुओं की
अनेवम्	२.	इस विशुद्ध धर्म को	द्रुह्यन्ति	१०.	हिंसा करते हैं
विदो	३.	नहीं जानते	विस्रब्धाः	८.	धोखे में पड़े हुये वे
असन्तः	५.	वास्तव में दुष्ट है	प्रेत्य	११.	मरने के बाद
स्तब्धाः	४.	वे घमंडी	खादन्ति	१४.	खाते हैं
सद्	६.	परन्तु अपने को श्रेष्ठ	ते च	१२.	वे पशु ही
अभिमानिनः।	७.	मानते हैं	तान् ॥	१३.	उन मारने वालों को

श्लोकार्थ—जो इस विशुद्ध धर्म को नहीं जानते वे घमंडी वास्तव में दुष्ट हैं। परन्तु अपने को श्रेष्ठ मानते हैं। धोखे में पड़े हुये वे पशुओं की हिंसा करते हैं। मरने के बाद वे पशु ही उन मारने वालों को खाते हैं॥

पञ्चदशः श्लोकः

द्विषन्तः परकायेषु स्वात्मानं हरिमीश्वरम् ।
मृतके सानुबन्धेऽस्मिन् बद्धस्नेहाः पतन्त्यधः ॥१५॥

पदच्छेद— द्विषन्तः परकायेषु स्व आत्मानम् हरिम् ईश्वरम् ।
मृतके सानुबन्धे अस्मिन् बद्ध स्नेहाः पतन्ति अधः ॥

शब्दार्थ—

द्विषन्तः	१०.	द्वेष करते हैं	मृतके	३.	मृतक शरीर से
परकायेषु	५.	दूसरे शरीरों में रहने वाले	सानुबन्धे	१.	सम्बन्धियों सहित
स्व	६.	अपने ही	अस्मिन्	२.	इस
आत्मानम्	७.	आत्म तत्त्व रूपी	बद्ध स्नेहाः	४.	प्रेम की गाँठ बाँध लेने वाले लोग
हरिम्	९.	श्री हरि से	पतन्ति	१२.	पतन होता है
ईश्वरम् ।	८.	भगवान्	अधः ॥	११.	उनका अधः

श्लोकार्थ—सम्बन्धियों सहित इस मृतक शरीर से प्रेम की गाँठ बाँध लेने वाले लोग दूसरे शरीरों में रहने वाले अपने ही आत्म तत्त्व रूपी भगवान् श्री हरि से द्वेष करते हैं। उनका अधः पतन होता है ॥

षोडशः श्लोकः

ये कैवल्यमसम्प्राप्ता ये चातीताश्च मूढताम् ।
त्रैवर्गिका ह्यक्षणिका आत्मानं घातयन्ति ते ॥१६॥

पदच्छेद— ये कैवल्यम् असम्प्राप्ता ये च अतीताः च मूढताम् ।
त्रैवर्गिका हि अक्षणिकाः आत्मानम् घातयन्ति ते ॥

शब्दार्थ—

ये कैवल्यम्	१.	जिन लोगों ने कैवल्य मोक्ष	त्रैवर्गिका हि	६.	और धर्म, अर्थ, काम में फँसे हैं
असम्प्राप्ता	२.	नहीं पाया है	अक्षणिकाः	७.	क्षण भर भी शान्त नहीं हैं
ये च	३.	और जो	आत्मानम्	९.	अपने आत्मा का
अतीताः च	५.	पार कर चुके हैं	घातयन्ति	१०.	हनन करते हैं
मूढताम् ।	४.	मूर्खता को	ते ॥	८.	ऐसे लोग

श्लोकार्थ—जिन लोगों ने कैवल्य मोक्ष नहीं पाया है। और जो मूर्खता को पार कर चुके हैं। और धर्म, अर्थ, काम में फँसे हैं। क्षण भर भी शान्त नहीं हैं। ऐसे लोग अपने आत्मा का हनन करने वाले हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

एत आत्महनोऽशान्ता अज्ञाने ज्ञानमानिनः ।
सीदन्त्यकृतकृत्या वै कालध्वस्तमनोरथाः ॥१७॥

पदच्छेद— एते आत्महनो अशान्ता अज्ञाने ज्ञान मानिनः ।
सीदन्ति अकृत कृत्या वै काल ध्वस्त मनोरथाः ॥

शब्दार्थ—

एते	४.	इन	सीदन्ति	९.	ये दुःखी रहते हैं
आत्महनो	५.	आत्म घातियों को	अकृत	८.	कभी शान्त नहीं होती
अशान्ताः	६.	कभी शान्ति नहीं मिलती है	कृत्याः	७.	इनकी कर्म परम्परा
अज्ञाने	१.	अज्ञान को ही	वै काल	१०.	निश्चय ही काल भगवान्
ज्ञान	२.	ज्ञान	ध्वस्त	१२.	विफल करते रहते हैं
मानिनः ।	३.	मानने वाले	मनोरथाः ॥	११.	इनके मनोरथों को

श्लोकार्थ—अज्ञान को ही ज्ञान मानने वाले इन आत्म घातियों को कभी शान्ति नहीं मिलती है इनकी कर्म परम्परा कभी शान्त नहीं होती, ये दुःखी रहते हैं । निश्चय ही काल भगवान् इनके मनोरथों को विफल करते रहते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

हित्वात्यायासरचिता गृहापत्यसुहृच्छ्रियः ।
तमो विशन्त्यनिच्छन्तो वासुदेवपराङ्मुखाः ॥१८॥

पदच्छेद— हित्वा अति आयास रचिताः गृह-अपत्य सुहृद् श्रियः ।
तमः विशन्ति अनिच्छन्तो वासुदेव पराङ्मुखाः ॥

शब्दार्थ—

हित्वा	८.	छोड़कर	तमः	१०.	घोर नरक में
अति आयास	३.	अत्यन्त परिश्रम पूर्वक	विशन्ति	११.	जा पड़ते हैं
रचिताः	४.	बनाये गये	अनिच्छन्तो	९.	न चाहते हुये भी
गृह-अपत्य	५.	घर-पुत्र	वासुदेव	१.	जो भगवान् श्रीकृष्ण से
सुहृद्	६.	मित्र और	पराङ्मुखाः ॥	२.	विमुख हैं वे
श्रियः ।	७.	धन आदि को			

श्लोकार्थ—जो भगवान् श्रीकृष्ण से विमुख हैं । वे अत्यन्त परिश्रम पूर्वक बनाये गये घर-पुत्र-मित्र और धन आदि को छोड़ कर न चाहते हुये भी घोर नरक में जा पड़ते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

राजोवाच—कस्मिन् काले स भगवान् किं वर्णः कीदृशो नृभिः ।
नाम्ना वा केन विधिना पूज्यते तदिहोच्यताम् ॥१६॥

पदच्छेद— कस्मिन् काले स भगवान् किम् वर्णः कीदृशः नृभिः ।
नाम्ना वा केन विधिना पूज्यते तत् इह उच्यताम् ॥

शब्दार्थ—

कस्मिन्	२. किस	नाम्ना	८.	किस नाम
काले	३. समय	वा	६.	अथवा
सः भगवान्	१. वे भगवान्	केन	६.	और किस
किम् वर्णः	४. किस रंग का	विधिना	१०.	विधि से
कीदृशः	५. कैसा आकार धारण करते हैं	पूज्यते	११.	पूजे जाते हैं
नृभिः ।	७. मनुष्यों के द्वारा वे	तत्इहउच्यताम्	१२.	यह-सब-यहाँ हमें बताइये

श्लोकार्थ—वे भगवान् किस समय किस रंग का कैसा आकार धारण करते हैं । अथवा मनुष्यों के द्वारा किस नाम और किस विधि से पूजे जाते हैं । यह सब यहाँ हमें बताइये ॥

विंशः श्लोकः

करभाजन उवाच—कृतं त्रेता द्वापरं च कलिरित्येषु केशवः ।
नानावर्णाभिधाकारो नानैव विधिनेज्यते ॥२०॥

पदच्छेद— कृतम् त्रेता द्वापरम् च कलिः इति एषु केशवः ।
नाना वर्ण अभिधा आकारो नाना एव विधिना इज्यते ॥

शब्दार्थ—

कृतम्	१. सत्य	नाना वर्ण	७.	अनेकों रंग
त्रेता	२. त्रेता	अभिधा	८.	नाम और
द्वापरम् च	३. द्वापर और	आकारो	६.	आकृतियाँ धारण की है
कलिःइति	४. कलि इस प्रकार	नाना एव	१०.	और अनेक
एषु	५. इन चार युगों में	विधिना	११.	प्रकार से
केशवः ।	६. भगवान् ने	इज्यते ॥	१२.	उनकी पूजा की जाती है

श्लोकार्थ—सत्य, त्रेता, द्वापर और कलि इस प्रकार इन चार युगों में भगवान् ने अनेकों रंग नाम और आकृतियाँ धारण की हैं । और अनेक प्रकार से उनकी पूजा की जाती है ॥

एकविंशः श्लोकः

कृते शुक्लश्चतुर्बाहुर्जटिलो वल्कलाम्बरः ।
कृष्णाजिनोपवीताक्षान् बिभ्रद् दण्डकमण्डलू ॥२१॥

पदच्छेद— कृते शुक्लः चतुर्बाहुः जटिलः वल्कल अम्बरः ।
कृष्ण अजिन उपवीत अक्षान् बिभ्रद् दण्ड कमण्डलू ॥

शब्दार्थ—

कृते	१.	सत्ययुग में भगवान् का	कृष्ण	७.	काले
शुक्लः	२.	श्वेत वर्ण	अजिन	८.	मृग का चर्म
चतुर्बाहुः	३.	चार भुजायें	उपवीत	९.	यज्ञोपवीत
जटिलः	४.	सिर पर जटा	अक्षान्	१०.	रुद्राक्ष की माला
वल्कल	५.	वल्कल	बिभ्रद्	१२.	धारण करते हैं
अम्बरः ।	६.	वस्त्र	दण्डकमण्डलू ॥	११.	दण्ड और कमण्डल

श्लोकार्थ—सत्ययुग में भगवान् का श्वेत वर्ण, चार भुजायें, सिर पर जटा, वल्कल वस्त्र काले मृग का चर्म, यज्ञोपवीत, रुद्राक्ष की माला दण्ड और कमण्डल धारण करते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

मनुष्यास्तु तदा शान्ता निर्वैराः सुहृदः समाः ।
यजन्ति तपसा देवं शमेन च दमेन च ॥२२॥

पदच्छेद— मनुष्याः तु तदा शान्ताः निर्वैराः सुहृदः समाः ।
यजन्ति तपसा देवम् शमेन च दमेन च ॥

शब्दार्थ—

मनुष्याः तु	२.	मनुष्य	यजन्ति	११.	आराधना करते हैं
तदा	१.	सतयुग के	तपसा	९.	ध्यान रूप तपस्या के द्वारा
शान्ताः	३.	शान्त	देवम्	१०.	सबके प्रकाशक परमात्मा की
निर्वैराः	४.	परस्पर वैर रहित	शमेन च	८.	और मन को वश में रखकर
सुहृदः	५.	सबके हितैषी और	दमेन च ॥	७.	वे इन्द्रियों
समाः ।	६.	समदर्शी होते हैं			

श्लोकार्थ—सतयुग के मनुष्य शान्त परस्पर वैर रहित सबके हितैषी और समदर्शी होते हैं । वे इन्द्रियों और मन को वश में रखकर ध्यान रूप तपस्या के द्वारा सबके प्रकाशक परमात्मा की आराधना करते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

हंसः सुपर्णो वैकुण्ठो धर्मो योगेश्वरोऽमलः ।
ईश्वरः पुरुषोऽव्यक्तः परमात्मेति गीयते ॥२३॥

पदच्छेद— हंसः सुपर्णः वैकुण्ठः धर्मः योगेश्वरः अमलः ।
ईश्वरः पुरुषः अव्यक्तः परमात्मा इति गीयते ॥

शब्दार्थ—

हंसः	१. वे लोग हंस	ईश्वरः	७. ईश्वर
सुपर्णः	२. गरुड़	पुरुषः	८. पुरुष
वैकुण्ठः	३. वैकुण्ठ	अव्यक्तः	९. अव्यक्त और
धर्मः	४. धर्म	परमात्मा	१०. परमात्मा आदि नामों से
योगेश्वरः	५. योगेश्वर	इति	११. उन भगवान् का
अमलः ।	६. अमल	गीयते ॥	१२. गान करते हैं

श्लोकार्थ—वे लोग हंस, गरुड़, वैकुण्ठ, धर्म, योगेश्वर, अमल, ईश्वर, पुरुष, अव्यक्त और परमात्मा आदि नामों से उन भगवान् का गान करते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

त्रेतायां रक्तवर्णोऽसौ चतुर्बाहुस्त्रिमेखलः ।
हिरण्यकेशस्त्रय्यात्मा स्रुक्स्रुवाद्युपलक्षणः ॥२४॥

पदच्छेद— त्रेतायाम् रक्त वर्णः असौ चतुर्बाहुः त्रिमेखलः ।
हिरण्य केशः त्रयी आत्मा स्रुक् स्रुवादि उपलक्षणः ॥

शब्दार्थ—

त्रेतायाम्	१. त्रेता युग में	हिरण्य केशः	६. केश सुनहले होते हैं और
रक्त वर्णः	३. रंग लाल होता है	त्रयी आत्मा	७. वेद प्रतिपादित यज्ञ के रूप में रह कर
असौ	२. उन भगवान् का	स्रुक	८. स्रुक्
चतुर्बाहुः	४. चार भुजायें होती हैं	स्रुवादि	९. स्रुवा आदि यज्ञ पात्रों को
त्रिमेखलः ।	५. तीन मेखला धारण करते हैं	उपलक्षणः ॥	१०. धारण करते हैं

श्लोकार्थ—त्रेता युग में उन भगवान् का रंग लाल होता है, वे चार भुजायें धारण करते हैं। उनके केश सुनहले होते हैं। और वे वेद प्रतिपादित यज्ञ के रूप में रह कर स्रुक, स्रुवा आदि यज्ञ पात्रों को धारण करते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

तं तदा मनुजा देवं सर्वदेवमयं हरिम्।
यजन्ति विद्यया त्रय्या धर्मिष्ठा ब्रह्मवादिनः ॥२५॥

पदच्छेद— तम् तदा मनुजा देवम् सर्व देव मयम् हरिम्।
यजन्ति विद्यया त्रय्या धर्मिष्ठाः ब्रह्मवादिनः ॥

शब्दार्थ—

तम्	११.	उन	यजन्ति	१३.	आराधना करते हैं
तदा	१.	उस युग के	विद्यया	७.	विद्या के द्वारा
मनुजाः	२.	मनुष्य	त्रय्या	६.	वेद-त्रयी रूप
देवम्	१०.	देवाधिदेव	धर्मिष्ठाः	३.	अपने धर्म में निष्ठा रखने वाले
सर्व देव	८.	सर्व देव	ब्रह्म	४.	वेदों के
मयम्	९.	स्वरूप	वादिनः ॥	५.	अध्ययन, अध्यापन के जानकार
हरिम्।	१२.	भगवान् श्री हरि की			

श्लोकार्थ—उस युग के मनुष्य अपने धर्म में निष्ठा रखने वाले वेदों के अध्ययन, अध्यापन के जानकार वेद-त्रयी रूप विद्या के द्वारा सर्व देव स्वरूप देवाधि देव उन भगवान् श्री हरि को आराधना करते हैं ॥

षड्विंशः श्लोकः

विष्णुर्यज्ञः पृश्निगर्भः सर्वदेव उरुक्रमः।
वृषाकपिर्जयन्तश्च उरुगाय इतीर्यते ॥२६॥

पदच्छेद— विष्णुः यज्ञः पृश्निगर्भः सर्व देव उरुक्रमः।
वृषाकपिः जयन्तः च उरुगाय इति ईर्यते ॥

शब्दार्थ—

विष्णुः	१.	त्रेता युग में लोग विष्णु	वृषाकपिः	६.	वृषाकपि
यज्ञः	२.	यज्ञ	जयन्तः	७.	जयन्त
पृश्निगर्भः	३.	प्रश्निगर्भ	च	८.	और
सर्व देव	४.	सर्व देव	उरुगाय	९.	उरुगाय
उरुक्रमः।	५.	उरुक्रम	इति ईर्यते ॥	१०.	आदि नामों से कीर्तन करते हैं

श्लोकार्थ—त्रेता युग में लोग विष्णु, यज्ञ, पृश्नि गर्भ, सर्व देव, उरुक्रम, वृषाकपि, जयन्त और उरुगाय आदि नामों से कीर्तन करते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

द्वापरे भगवाञ्छ्यामः पीतवासा निजायुधः ।
श्रीवत्सादिभिरङ्कैश्च लक्षणैरुपलक्षितः ॥२७॥

पदच्छेद— द्वापरे भगवान् श्यामः पीतवासाः निज आयुधः ।
श्रीवत्स आदिभिः अङ्कैः च लक्षणैः उपलक्षितः ॥

शब्दार्थ—

द्वापरे	१.	हे राजन् ! द्वापर युग में	श्रीवत्स	७.	वक्षः स्थल पर श्रीवत्स
भगवान्	२.	भगवान् का रंग	आदिभिः	८.	आदि
श्यामः	३.	साँवला होता है वे	अङ्कैः	९.	चिह्नों
पीतवासाः	४.	पीताम्बर और	च	१०.	और
निज	५.	शङ्ख: चक्र आदि	लक्षणैः	११.	अनेक लक्षणों से वे
आयुधः ।	६.	आयुध धारण करते हैं	उपलक्षितः ॥	१२.	पहचाने जाते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! द्वापर युग में भगवान् का रंग साँवला होता है । वे पीताम्बर और शङ्ख, चक्र आदि आयुध धारण करते हैं । वक्षः स्थल पर श्रीवत्स आदि चिह्नों और अनेक लक्षणों से वे पहचाने जाते हैं ॥

अष्टविंशः श्लोकः

तं तदा पुरुषं मर्त्या महाराजोपलक्षणम् ।
यजन्ति वेदतन्त्राभ्यां परं जिज्ञासवो नृप ॥२८॥

पदच्छेद— तम् तदा पुरुषम् मर्त्या महाराज उपलक्षणम् ।
यजन्ति वेद तन्त्राभ्याम् परम् जिज्ञासवः नृप ॥

शब्दार्थ—

तम्	७.	उन	यजन्ति	१२.	आराधना करते हैं
तदा	२.	उस समय	वेद	१०.	वैदिक और
पुरुषम्	९.	पुरुष भगवान् की	तन्त्राभ्याम्	११.	तान्त्रिक विधि से
मर्त्या	४.	मनुष्य	परम्	८.	परम
महाराज	५.	महाराजों के	जिज्ञासवः	३.	जिज्ञासु
उपलक्षणम् ।	६.	चिह्नों से युक्त	नृप ॥	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस समय जिज्ञासु मनुष्य महाराजों के चिह्नों से युक्त उन परम पुरुष भगवान् की वैदिक और तान्त्रिक विधि से आराधना करते हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

नमस्ते वासुदेवाय नमः सङ्कर्षणाय च ।
प्रद्युम्नायानिरुद्धाय तुभ्यं भगवते नमः ॥२९॥

पदच्छेद— नमस्ते वासुदेवाय नमः सङ्कर्षणाय च ।
प्रद्युम्नाय अनिरुद्धाय तुभ्यम् भगवते नमः ॥

शब्दार्थ—

नमस्ते	२. आपको नमस्कार है	प्रद्युम्नाय	७. प्रद्युम्न और
वासुदेवाय	१. हे ज्ञान स्वरूप वासुदेव	अनिरुद्धाय	८. अनिरुद्ध
नमः	५. नमस्कार है	तुभ्यम्	९. आपको
सङ्कर्षणाय	४. क्रिया स्वरूप सङ्कर्षण आपको	भगवते	६. हे भगवान् !
च ।	३. और	नमः ॥	१०. नमस्कार है

श्लोकार्थ—हे ज्ञान स्वरूप वासुदेव आपको नमस्कार है । और क्रिया स्वरूप सङ्कर्षण आपको नमस्कार है । हे भगवान् ! प्रद्युम्न और अनिरुद्ध आपको नमस्कार है ॥

त्रिंशः श्लोकः

नारायणाय ऋषये पुरुषाय महात्मने ।
विश्वेश्वराय विश्वाय सर्वभूतात्मने नमः ॥३०॥

पदच्छेद— नारायणाय ऋषये पुरुषाय महात्मने ।
विश्वेश्वराय विश्वाय सर्वभूत आत्मने नमः ॥

शब्दार्थ—

नारायणाय	२. नारायण	विश्वेश्वराय	५. विश्वेश्वर
ऋषये	१. ऋषि	विश्वाय	६. विश्वरूप और
पुरुषाय	४. नर	सर्वभूत	७. सर्वभूत
महात्मने ।	३. महात्मा	आत्मने	८. स्वरूप भगवान् को
		नमः ॥	९. नमस्कार है

श्लोकार्थ—ऋषि, नारायण, महात्मा, नर, विश्वेश्वर, विश्वरूप और सर्वभूत स्वरूप भगवान् को नमस्कार है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

इति द्वापर उर्वीश स्तुवन्ति जगदीश्वरम्।
नानातन्त्रविधानेन कलावपि यथा शृणु ॥३१॥

पदच्छेद— इति द्वापर उर्वीश स्तुवन्ति जगद् ईश्वरम्।
नानातन्त्र विधानेन कलौ अपि यथा शृणु ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार लोग	नाना	९.	अनेक
द्वापर	३.	द्वापर युग में	तन्त्र	१०.	तन्त्रों के
उर्वीश	१.	हे राजन्!	विधानेन	११.	विधि-विधानों से पूजा करते हैं
स्तुवन्ति	६.	स्तुति करते हैं	कलौ अपि	७.	और कलियुग में भी
जगद्	४.	जगत् के	यथा	८.	जिस प्रकार लोग
ईश्वरम्।	५.	ईश्वर भगवान् की	शृणु॥	१२.	उसे सुनो

श्लोकार्थ—हे राजन्! इस प्रकार लोग द्वापर युग में जगत् के ईश्वर भगवान् की स्तुति करते हैं। और कलियुग में भी जिस प्रकार लोग अनेक तन्त्रों के विधि-विधान से पूजा करते हैं। उसे सुनो ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदम्।
यज्ञैः सङ्कीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥३२॥

पदच्छेद— कृष्ण वर्णम् त्विषा कृष्णम् साङ्गोपाङ्ग अस्त्र पार्षदम्।
यज्ञैः सङ्कीर्तन प्रायैः यजन्ति हि सुमेधसः ॥

शब्दार्थ—

कृष्ण वर्णम्	१.	कलियुग में काले रंग की	यज्ञैः	८.	यज्ञों के द्वारा और
त्विषा	२.	कान्ति से	सङ्कीर्तन	१०.	नाम कीर्तन आदि के द्वारा
कृष्णम्	६.	श्री कृष्ण की	प्रायैः	९.	प्रधान रूप से
साङ्गोपाङ्ग	३.	अङ्गों और उपाङ्गों	यजन्ति	१०.	आराधना करते हैं
अस्त्र	४.	अस्त्रों एवम्	हि सुमेधसः॥	७.	श्रेष्ठ बुद्धि सम्पन्न पुरुष
पार्षदम्।	५.	पार्षदों से युक्त			

श्लोकार्थ—कलियुग में काले रंग की कान्ति से, अङ्गों और उपाङ्गों; अस्त्रों एवम् पार्षदों से युक्त श्रीकृष्ण की श्रेष्ठ बुद्धि सम्पन्न पुरुष यज्ञों के द्वारा और प्रधान रूप से नाम कीर्तन आदि के द्वारा आराधना करते हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ध्येयं सदा परिभवघ्नमभीष्टदोहं तीर्थास्पदं शिवविरिञ्चिनुतं शरण्यम् ।
भृत्यार्तिहं प्रणतपाल भवाब्धिपोतं वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥३३॥

पदच्छेद— ध्येयम् सदा परिभव घ्नम् अभीष्ट दोहम् तीर्थ आस्पदम् शिव विरिञ्चि नुतम् शरण्यम् ।
भृत्यार्तिहम् प्रणत पाल भवाब्धि पोतम् वन्दे महापुरुष ते चरणा अरविन्दम् ॥

शब्दार्थ—					
ध्येयम्	८.	ध्यान करते हैं	भृत्यार्तिहम्	१०.	भक्तों का दुःख दूर करने वाले हैं
सदा	७.	आपका सदा	प्रणत पाल	९.	हे शरणागत पालक प्रभो । आप
परिभव	१.	आप सांसारिक पराजयों का	भवाब्धि	११.	आप संसार-सागर से
घ्नम्	२.	अन्त करने वाले हैं	पोतम्	१२.	पार जाने के लिये जहाज हैं
अभीष्टदोहम्	४.	अभीष्ट वस्तुओं का दान करने वाले	वन्दे	१६.	वन्दना करता हूँ
तीर्थ आस्पदम्	५.	तीर्थ स्वरूप हैं ।	महापुरुष	१३.	हे महा पुरुष ! परमात्मा
शिव विरञ्चि	६.	शिव, ब्रह्मा आदि देव	ते चरणा	१४.	मैं आपके
नुतम् शरण्यम् ।	३.	शरणागत भक्तों को	अरविन्दम् ॥	१५.	चरण कमलों की

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप सांसारिक पराजयों का अन्त करने वाले हैं । शरणागत भक्तों को अभीष्ट वस्तुओं का दान करने वाले तीर्थ स्वरूप हैं । शिव, ब्रह्मा आदि देव आपका सदा ध्यान करते हैं । हे शरणागत पालक प्रभो ! आप भक्तों का दुःख दूर करने वाले हैं । आप संसार-सागर से पार जाने के लिये जहाज हैं । हे महापुरुष परमात्मा ! मैं आपके चरण कमलों की वन्दना करता हूँ ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

त्यक्त्वा सुदुस्त्यजसुरेप्सितराज्यलक्ष्मीं धर्मिष्ठ आर्यवचसा यदगादरण्यम् ।
मायामृगं दयितयेप्सितमन्वधावद् वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥३४॥

पदच्छेद—त्यक्त्वा सुदुस्त्यज सुरेप्सित राज्यलक्ष्मीम् धर्मिष्ठ आर्य वचसा यदगाद् अरण्यम् ।
माया मृगम् दयितया ईप्सितम् अन्वधावत् वन्दे महापुरुष ते चरण अरविन्दम् ॥

शब्दार्थ—					
त्यक्त्वा	६.	छोड़कर	माया	११.	आपके चरण माया
सुदुस्त्यज	३.	न छोड़ने योग्य	मृगम्	१२.	मृग के
सुरेप्सित	२.	आप देवों को भी वाञ्छनीय	दयितया	९.	प्रेयसी सीता जी के
राज्यलक्ष्मी	४.	राज्य लक्ष्मी को	ईप्सितम्	१०.	चाहने पर
धर्मिष्ठ	१.	हे धर्मनिष्ठ प्रभो !	अन्वधावत्	१३.	पीछे दौड़ते रहे
आर्य वचसा	५.	पिता के वचनों से	वन्दे	१६.	वन्दना करता हूँ
यदगाद्	८.	घूमते फिरे ।	महापुरुष ते	१४.	हे महापुरुष ! मैं आपके उन्हीं
अरण्यम् ।	७.	वन-वन	चरण अरविन्दम्	१५.	चरण कमलों की

श्लोकार्थ—हे धर्म-निष्ठ प्रभो ! आप देवों के लिये भी वाञ्छनीय न छोड़ने योग्य राज्य लक्ष्मी को पिता के वचनों से छोड़कर वन-वन घूमते फिरे ! प्रेमसी सीता जी के चाहने पर आपके चरण-कमल माया मृग के पीछे दौड़ते रहे । हे महा पुरुष ! मैं आपके उन्हीं चरण कमलों की वन्दना करता हूँ ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एवं युगानुरूपाभ्यां भगवान् युगवर्तिभिः ।
मनुजैरिज्यते राजन् श्रेयसामीश्वरो हरिः ॥३५॥

पदच्छेद— एवम् युग अनुरूपाभ्याम् भगवान् युग वर्तिभिः ।
मनुजैः इज्यते राजन् श्रेयसाम् ईश्वरः हरिः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	मनुजैः	५.	लोग
युग	६.	युग के	इज्यते	१२.	पूजा करते हैं
अनुरूपाभ्याम्	७.	अनुरूप नाम और रूपों द्वारा	राजन्	१.	हे राजन् !
भगवान्	१०.	भगवान्	श्रेयसाम्	८.	समस्त कल्याणों के
युग	३.	अनेक युगों में	ईश्वरः	९.	स्वामी
वर्तिभिः ।	४.	होने वाले लोग	हरिः ॥	११.	श्री हरि की

श्लोकार्थ— हे राजन् ! इस प्रकार अनेक युगों में होने वाले लोग युग के अनुरूप नाम और रूपों द्वारा समस्त कल्याणों के स्वामी भगवान् श्री हरि की पूजा करते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः ।
यत्र सङ्कीर्तनेनैव सर्वः स्वार्थोऽभिलभ्यते ॥३६॥

पदच्छेद— कलिम् सभाजयन्ति आर्या गुणज्ञाः सारभागिनः ।
यत्र सङ्कीर्तनेन एव सर्वः स्वार्थः अभिलभ्यते ॥

शब्दार्थ—

कलिम्	११.	कलियुग की	यत्र	१.	कलियुग में
सभाजयन्ति	१२.	बड़ी प्रशंसा करते हैं	सङ्कीर्तनेन	२.	केवल सङ्कीर्तन से
आर्या	१०.	श्रेष्ठ पुरुष को	एव	३.	ही
गुणज्ञाः	७.	इस युग के गुण को जानने वाले	सर्वः	४.	सारे
सार	८.	सार-	स्वार्थः	५.	स्वार्थ और परमार्थ
भागिनः ।	९.	ग्राही	अभिलभ्यते ॥	६.	प्राप्त हो जाता हैं । अतः

श्लोकार्थ—कलियुग में केवल सङ्कीर्तन से ही सारे स्वार्थ और परमार्थ प्राप्त हो जाते हैं। अतः इस युग के गुण को जानने वाले सार ग्राही श्रेष्ठ पुरुष कलियुग की प्रशंसा करते हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

न ह्यतः परमो लाभो देहिनां भ्राम्यतामिह ।
यतो विन्देत परमां शान्तिं नश्यति संसृतिः ॥३७॥

पदच्छेद— न हि अतः परमः लाभः देहिनाम् भ्राम्यताम् इह ।
यतः विन्देत परमाम् शान्तिम् नश्यति संसृतिः ॥

शब्दार्थ—

न हि	७.	नहीं है	यतः	८.	क्योंकि इससे
अतः	४.	भगवान् के कीर्तन से	विन्देत	१३.	अनुभव होता है
परमः	५.	बड़ा	परमाम्	११.	और परम
लाभः	६.	कोई भी लाभ	शान्तिम्	१२.	शान्ति का
देहि नाम्	३.	देहाभिमानी जीवों के लिये	नश्यति	१०.	मिट जाता है
भ्राम्यताम्	२.	भटकने वाले	संसृतिः ॥	९.	संसार में भटकना
इह ।	१.	संसार चक्र में			

श्लोकार्थ—संसार चक्र में भटकने वाले देहाभिमानो जीवों के लिये भगवान् के कीर्तन से बड़ा कोई भी लाभ नहीं है। क्योंकि इससे संसार में भटकना मिट जाता है। और परम शान्ति का अनुभव होता है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

कृतादिषु प्रजा राजन् कलाविच्छन्ति सम्भवम् ।
कलौ खलु भविष्यन्ति नारायणपरायणाः ॥३८॥

पदच्छेद— कृत आदिषु प्रजाः राजन् कलौ इच्छन्ति सम्भवम् ।
कलौ खलु भविष्यन्ति नारायण परायणाः ॥

शब्दार्थ—

कृत आदिषु	२.	सतयुग, त्रेता, द्वापर की	कलौ	७.	क्योंकि कलियुग में
प्रजाः	३.	प्रजायें	खलु	८.	निश्चित ही
राजन्	१.	हे राजन् !	भविष्यन्ति	११.	उत्पन्न होंगे
कलौ	४.	कलियुग में	नारायण	९.	नारायण के
इच्छन्ति	६.	चाहती हैं	परायणाः ॥	१०.	शरणागत भक्त
सम्भवम् ।	५.	जन्म लेना			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! सतयुग, त्रेता, द्वापर की प्रजायें कलियुग में जन्म लेना चाहती है। क्योंकि कलियुग में निश्चित ही नारायण के शरणागत भक्त उत्पन्न होंगे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

क्वचित् क्वचिन्महाराज द्रविडेषु च भूरिशः ।
ताम्रपर्णी नदी यत्र कृतमाला पयस्विनी ॥३९॥

पदच्छेद— क्वचित् क्वचित् महाराज द्रविडेषु च भूरिशः ।
ताम्रपर्णी नदी यत्र कृतमाला पयस्विनी ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	३. कहीं	ताम्रपर्णी	७. ताम्रपणी
क्वचित्	४. कहीं	नदी	१०. नदियाँ बहती है
महाराज	१. हे महाराज जनक !	यत्र	६. जहाँ
द्रविडेषु च	२. द्रविड़ देश में	कृतमाला	८. कृतमाला और
भूरिशः ।	५. अधिक भक्त पाये जाते हैं	पयस्विनी ॥	९. पयस्विनी

श्लोकार्थ—हे महाराज जनक ! कलियुग में द्रविड़ देश में कहीं-कहीं अधिक भक्त पाये जाते हैं । जहाँ ताम्रपर्णी, कृतमाला और पयस्विनी नदियाँ बहती हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

कावेरी च महापुण्या प्रतीची च महानदी ।
ये पिबन्ति जलं तासां मनुजा मनुजेश्वर ।
प्रायो भक्ता भगवति वासुदेवेऽमलाशयाः ॥४०॥

पदच्छेद— कावेरी च महापुण्या प्रतीची च महानदी ।
ये पिबन्ति जलम् तासाम् मनुजा मनुजेश्वर ।
प्रायः भक्ताः भगवति वासुदेवे अमल आशयाः ॥

शब्दार्थ—

कावेरी च	३. कावेरी	मनुजा	७. मनुष्य
महापुण्या	२. परम पवित्र	मनुजेश्वर ।	१. हे राजन् !
प्रतीचो च	५. प्रतीचो नामक नदियाँ हैं	प्रायः	१३. प्रायः
महानदो ।	४. महानदी और	भक्ताः	१६. भक्त हो जाते हैं
ये	६. जो	भगवति	१४. भगवान्
पिबन्ति	१०. पीते हैं वे	वासुदेवे	१५. श्रीकृष्ण के
जलम्	९. जल	अमल	११. निर्मल
तासाम्	८. इन नदियों का	आशयाः ॥	१२. अन्तःकरण वाले होकर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! परम पवित्र कावेरी, महानदी और प्रतीची नामक नदियाँ हैं । जो मनुष्य इन नदियों का जल पीते हैं । वे निर्मल अन्तःकरण वाले होकर प्रायः भगवान् श्रीकृष्ण के भक्त हो जाते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

देवर्षिभूताप्तनृणां पितृणां न किङ्करो नायमृणी च राजन् ।
सर्वात्मना यः शरणं शरण्यं गतो मुकुन्दं परिहृत्य कर्तम् ॥४१॥

पदच्छेद— देवर्षिभूत आप्तनृणाम् पितृणाम् न किङ्करो न अयम् ऋणी च राजन् ।
सर्व आत्मना यः शरणम् शरण्यम् गतः मुकुन्दम् परिहृत्य कर्तम् ॥

शब्दार्थ—

देवर्षि	११.	देवताओं, ऋषियों	सर्व आत्मना	५.	सर्व आत्म भाव से
भूत	१२.	प्राणियों	यः	२.	जो मनुष्य
आप्तनृणाम्	१३.	अभीष्ट मनुष्यों और	शरणम्	८.	शरण में
पितृणाम्	१४.	पितरों का	शरण्यम्	६.	शरणागत वत्सल
न किङ्करो	१६.	न किसी का सेवक है	गतः	९.	आ गया है
न अयम्	१०.	न तो वह	मुकुन्दम्	७.	भगवान् मुकुन्द को
ऋणी च	१५.	ऋणी है और	परिहृत्य	४.	छोड़कर
राजन् ।	१.	हे राजन् !	कर्तम् ॥	३.	समस्त कार्यों को

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जो मनुष्य समस्त कार्यों को छोड़कर सर्व आत्म भाव से शरणागत वत्सल भगवान् मुकुन्द की शरण में आ गया है । वह न तो देवताओं, ऋषियों प्राणियों, अभीष्ट मनुष्यों और पितरों का ऋणी है और न सेवक है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

स्वपादमूलं भजतः प्रियस्य त्यक्तान्यभावस्य हरिः परेशः ।
विकर्म यच्चोत्पतितं कथञ्चिद् धुनोति सर्वं हृदि सन्निविष्टः ॥४२॥

पदच्छेद— स्वपाद मूलम् भजतः प्रियस्य त्यक्त अन्य भावस्य हरिः परेशः ।
विकर्म यत् च उत्पतितम् कथञ्चित् धुनोति सर्वं हृदि सन्निविष्टः ॥

शब्दार्थ—

स्व	३.	अपने	विकर्म	९.	पाप कर्म
पाद मूलम्	५.	चरण कमलों का	यत् च	७.	यदि कभी
भजतः	६.	भजन करता है तो	उत् पतितम्	१०.	हो भी जाये तो
प्रियस्य	१४.	अपने प्रेमी भक्त के	कथञ्चित्	८.	किसी प्रकार उससे
त्यक्त	२.	छोड़कर	धुनोति	१६.	पापों को धो डालते हैं
अन्य भावस्य	१.	जो मनुष्य अन्य भाव को	सर्वं	१५.	समस्त
हरिः	१३.	श्री हरि	हृदि	११.	उसके हृदय में
परेशः ।	४.	परमेश्वर के	सन्निविष्टः ॥	१२.	बैठे हुये

श्लोकार्थ—जो मनुष्य अन्य भाव को छोड़कर अपने परमेश्वर के चरण कमलों का भजन करता है । तो यदि कभी किसी प्रकार उससे पाप कर्म हो भी जाये तो उसके हृदय में बैठे हुये श्री हरि अपने प्रेमी भक्त के समस्त पापों को धो डालते हैं ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

नारद उवाच—धर्मान् भागवतानित्थं श्रुत्वाथ मिथिलेश्वरः।
जायन्तेयान् मुनीन् प्रीतः सोपाध्यायो ह्यपूजयत् ॥४३॥

पदच्छेद— धर्मान् भागवतान् इत्थम् श्रुत्वा अथ मिथिलेश्वरः।
जायन्तेयान् मुनीन् प्रीतः सः उपाध्यायः हि अपूजयत् ॥

शब्दार्थ—

धर्मान्	३.	धर्मों का	जायन्ते-	१०.	हुये
भागवतान्	२.	भागवत	यान्	७.	जिन नौ
इत्थम्	१.	इस प्रकार	मुनीन्	८.	योगीश्वरों पर
श्रुत्वा	४.	श्रवण करने के	प्रीतः	९.	प्रसन्न
अथ	५.	पश्चात्	सः उपाध्यायः	११.	उनकी आचार्यों सहित
मिथिलेश्वरः।	६.	मिथिला नरेश ने	हि पूजयत् ॥	१२.	पूजा की

श्लोकार्थ—इस प्रकार भागवत धर्मों का श्रवण करने के पश्चात् मिथिला नरेश ने जिन नौ योगीश्वरों पर प्रसन्न हुये उनकी आचार्यों सहित पूजा की ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

ततोऽन्तर्दधिरे सिद्धाः सर्वलोकस्य पश्यतः।
राजा धर्मानुपातिष्ठन्नवाप परमां गतिम् ॥४४॥

पदच्छेद— ततः अन्तः दधिरे सिद्धाः सर्व लोकस्य पश्यतः।
राजा धर्मान् उपातिष्ठन् अवाप परमाम् गतिम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इसके बाद	राजा	६.	विदेह राज ने
अन्तः दधिरे	५.	अन्तर्धान हो गये।	धर्मान्	७.	भागवत धर्मों का
सिद्धाः	२.	वे सिद्ध	उपातिष्ठन्	८.	आचरण किया
सर्व लोकस्य	३.	सब लोगों के	अवाप	१०.	प्राप्त हुये
पश्यतः।	४.	देखते-देखते	परमाम् गतिम् ॥	९.	और वे परम गति को

श्लोकार्थ—इसके बाद वे सिद्ध सब लोगों के देखते-देखते अन्तर्धान हो गये। विदेहराज ने भागवत धर्मों का आचरण किया। और वे परम गति को प्राप्त हुये ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

त्वमप्येतान् महाभाग धर्मान् भागवताञ्छ्रुतान् ।
आस्थितः श्रद्धया युक्तो निःसङ्गो यास्यसे परम् ॥४५॥

पदच्छेद— त्वम् अपि एतान् महाभाग धर्मान् भागवतान् श्रुतान् ।
आस्थितः श्रद्धया युक्तः निसङ्गः यास्यसे परम् ॥

शब्दार्थ—

त्वम् अपि	२. आप भी	आस्थितः	९. आचरण करके
एतान्	४. इन	श्रद्धया	७. श्रद्धा के
महाभाग	१. हे महाभाग्यवान् वसुदेवजी !	युक्तः	८. साथ
धर्मान्	६. धर्मों का	निःसङ्गः	१०. आसक्ति रहित होकर
भागवतान्	५. भागवत	यास्यसे	१२. प्राप्त कर लोगे
श्रुतान् ।	३. सुये हुये	परम् ॥	११. भगवान् के परम पद को

श्लोकार्थ—हे महाभाग्यवान् वसुदेव जी ! आप भी सुने हुये इन भागवत धर्मों का श्रद्धा के साथ आचरण करके आसक्ति रहित होकर भगवान् के परम पद को प्राप्त को कर लोगे ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

युवयोः खलु दम्पत्योर्यशसा पूरितं जगत् ।
पुत्रतामगमद् यद् वां भगवानीश्वरो हरिः ॥४६॥

पदच्छेद— युवयोः खलुः दम्पत्योः यशसा पूरितम् जगत् ।
पुत्रताम् अगमद् यत् वाम् भगवान् ईश्वरो हरिः ॥

शब्दार्थ—

युवयोः	२. तुम दोनों	पुत्रताम्	१२. पुत्र के रूप में
खलु	१. निश्चय ही	अगमद्	१३. अवतीर्ण हुये हैं
दम्पत्योः	३. पति-पत्नी के	यत्	७. क्योंकि
यशसा	४. यश से	वाम्	११. तुम्हारे
पूरितम्	६. भरपूर हो रहा है	भगवान्	८. भगवान्
जगत् ।	५. सारा जगत्	ईश्वरः	९. सर्व शक्तिमान्
		हरिः ॥	१०. श्रीकृष्ण

श्लोकार्थ— निश्चय ही तुम दोनों पति-पत्नी के यश से सारा जगत भरपूर हो रहा है। क्योंकि भगवान् सर्व शक्तिमान् श्रीकृष्ण तुम्हारे पुत्र के रूप में अवतीर्ण हुये है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

दर्शनालिङ्गनालापैः शयनासनभोजनैः ।
आत्मा वां पावितः कृष्णे पुत्रस्नेहं प्रकुर्वतोः ॥४७॥

पदच्छेद— दर्शन आलिङ्गन आलापैः शयन आसन भोजनैः ।
आत्मा वाम् पावितः कृष्णे पुत्र स्नेहम् प्रकुर्वतोः ॥

शब्दार्थ—

दर्शन	२.	भगवान् के दर्शन	आत्मा	११.	अपना हृदय
आलिङ्गन	३.	आलिङ्गन	वाम्	८.	तुम लोगों ने
आलापैः	४.	बात-चीत करने एवं	पावितः	१२.	शुद्ध कर लिया है
शयन	५.	उन्हें सुलाने	कृष्णे	१.	श्रीकृष्ण में
आसन	६.	बैठाने	पुत्र-स्नेहम्	९.	वात्सल्य स्नेह
भोजनैः ।	७.	खिलाने आदि के द्वारा	प्रकुर्वतोः ॥	१०.	करके

श्लोकार्थ—श्रीकृष्ण में भगवान् के दर्शन आलिङ्गन, बात-चीत करने एवम् उन्हें सुलाने बैठाने आदि के द्वारा तुम लोगों ने वात्सल्य स्नेह करके अपना हृदय शुद्ध कर लिया है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

वैरेण यं नृपतयः शिशुपालपौण्ड्रशाल्वादयो गतिविलासविलोकनाद्यैः ।
ध्यायन्त आकृतधियः शयनासनादौ तत्साम्यमापुरनुरक्तधियां पुनः किम् ॥४८॥

पदच्छेद—वैरेण यम् नृपतयः शिशुपाल पौण्ड्रशाल्व अदयः गति विलास विलोकने आद्यैः ।
ध्यायन्तः आकृतधियः शयन शासन आदौ तत् साम्यम् आपुः अनुरक्तधियाम् पुनः किम् ॥

शब्दार्थ—

वैरेण	५.	वैर भाव से	ध्यायन्तः	१२.	स्मरण करके
यम्	६.	जिन श्रीकृष्ण की	आकृतधियः	९.	तथा रूप और बुद्धि वृत्ति का
नृपतयः	४.	राजा	शयन, आसन	१०.	सोते-बैठते
शिशुपाल	१.	शिशुपाल	आदौ	११.	चलते-फिरते
पौण्ड्रशाल्व	२.	पौण्ड्रक और शाल्व	तत् साम्यम्	१३.	उनसे सारूप्य मुक्ति
आदयः	३.	आदि	आपुः	१४.	प्राप्त कर गये फिर
गति विलास	७.	चाल-ढाल-लीला-विलास	अनुरक्तधियाम्	१५.	अनुराग से चिन्तन करने वालों की
विलोकन आद्यैः ।	८.	चितवन आदि	पुनः किम् ॥	१६.	तो बात ही क्या है

श्लोकार्थ—हे वसुदेव जी ! शिशुपाल, पौण्ड्रक, और शाल्व आदि राजा वैर-भाव से जिन श्रीकृष्ण की चाल, ढाल, लीला, विलास, चितवन आदि तथा रूप और बुद्धि-वृत्ति का सोते, बैठते, चलते-फिरते स्मरण करके उनसे सारूप्य मुक्ति को प्राप्त कर गये । फिर अनुराग से चिन्तन करने वालों की तो बात ही क्या है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

मापत्यबुद्धिमकृथाः कृष्णे सर्वात्मनीश्वरे ।
मायामनुष्यभावेन गूढैश्वर्ये परेऽव्यये ॥४९॥

पदच्छेद— मा अपत्य बुद्धिम् अकृथाः कृष्णे सर्व आत्मनि ईश्वरे ।
माया मनुष्य भावेन गूढ ऐश्वर्य परे अव्यये ॥

शब्दार्थ—

मा	४. कभी मत	माया	१०.	उन्होंने लीला के लिये
अपत्य	२. पुत्र	मनुष्य	११.	मनुष्य रूप
बुद्धिम्	३. बुद्धि	भावेन	१२.	प्रकट करके
अकृथाः	५. कीजिये	गूढ	१४.	छिपा रक्खा है
कृष्णे	१. हे वसुदेव जी ! आप श्रीकृष्ण में	ऐश्वर्य	१३.	अपना ऐश्वर्य
सर्व आत्मनि	६. वे सर्वात्मा	परे	८.	कारण अतीत और
ईश्वरे ।	७. सर्वेश्वर	अव्यये ॥	९.	अविनाशी हैं

श्लोकार्थ— हे वसुदेव जी ! आप श्रीकृष्ण में पुत्र बुद्धि कभी मत कीजिये । वे सर्वात्मा सर्वेश्वर, कारण अतीत और अविनाशी हैं । उन्होंने लीला के लिये मनुष्य रूप प्रकट करके अपना ऐश्वर्य छिपा रक्खा है ।

पञ्चाशः श्लोकः

भूभारासुरराजन्यहन्तवे गुप्तये सताम् ।
अवतीर्णस्य निर्वृत्यै यशो लोके वितन्यते ॥५०॥

पदच्छेद— भूभार असुर राजन्य हन्तवे गुप्तये सताम् ।
अवतीर्णस्य निवृत्यै यशः लोके वितन्यते ॥

शब्दार्थ—

भूभार	१. वे पृथ्वी के भार रूप	अवतीर्णस्य	८.	अवतरित हुये हैं
असुर	३. असुरों का	निवृत्यै	७.	जीवों को मुक्ति देने के लिये
राजन्य	२. राज वेशधारी	यशः	१०.	उनकी कीर्ति
हन्तवे	४. नाश और	लोके	९.	इसी से जगत में
गुप्तये	६. रक्षा करने के लिये तथा	वितन्यते ॥	११.	गायी जाती है
सताम् ।	५. संतों की			

श्लोकार्थ—वे पृथ्वी के भार रूप राज वेशधारी असुरों का नाश और सन्तों की रक्षा करने के लिये तथा जीवों को मुक्ति देने के लिये अवतरित हुये हैं । इसीसे जगत् में उनकी कीर्ति गायी जाती है ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एतच्छ्रुत्वा महाभागो वसुदेवोऽतिविस्मितः ।
देवकी च महाभागा जहतुर्मोहमात्मनः ॥५१॥

पदच्छेद— एतत् श्रुत्वा महाभागाः वसुदेवः अति विस्मितः ।
देवकी च महाभागा जहतुः मोहम् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१.	इस बात को	देवकी	७.	देवकी जी को
श्रुत्वा	२.	सुनकर	च	५.	और
महाभागाः	३.	परमभाग्यवान	महाभागा	६.	परमभाग्यवती
वसुदेवः	४.	वसुदेव जी को	जहतुः	१०.	छोड़ दिया
अतिविस्मितः ।	८.	बड़ा ही विस्मय हुआ	मोहम् आत्मनः ॥	९.	उन्होंने अपना माया-मोह-तत्काल

श्लोकार्थ—इस बात को सुनकर परमभाग्यवान वसुदेव जी को और परमभाग्यवती देवकी जी को बड़ा ही विस्मय हुआ, उन्होंने अपना माया-मोह तत्काल छोड़ दिया ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

इतिहासमिमं पुण्यं धारयेद् यः समाहितः ।
स विधूयेह शमलं ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥५२॥

पदच्छेद— इतिहासम् इमम् पुण्यम् धारयेत् यः समाहितः ।
सः विधूय इह शमलम् ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

इतिहासम्	२.	इतिहास	सः	७.	वह
इमम्	१.	यह	विधूय	१०.	दूर करके
पुण्यम्	३.	परम् पवित्र है	इह	८.	इसी संसार में
धारयेत्	६.	धारण करता है	शमलम्	९.	सारा शोक-म ह
यः	४.	जो	ब्रह्मभूयाय	११.	ब्रह्म-पद को
समाहितः ।	५.	एकाग्रचित्त से इसे	कल्पते ॥	१२.	प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—यह इतिहास परमपवित्र है। जो एकाग्रचित्त से इसे धारण करता है। वह इसी संसार में सारा शोक-मोह दूर करके ब्रह्म-पद को प्राप्त करता है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे पञ्चमः अध्यायः ॥ ५ ॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच–अथ ब्रह्माऽऽत्मजैर्देवैः प्रजेशैरावृतोऽभ्यगात् ।
भवश्च भूतभव्येशो ययौ भूतगणैर्वृतः ॥१॥

पदच्छेद– अथ ब्रह्मा आत्मजैः देवैः प्रजेशैः आवृतः अभ्यगात् ।
भवः च भूत भव्य ईशः ययौ भूत गणैः वृतः ॥

शब्दार्थ–

अथ	१.	तदनन्तर	भवः	१३.	भगवान् शङ्कर
ब्रह्मा	६.	ब्रह्मा जी	च	८.	और
आत्मजैः	२.	अपने पुत्र सनकादिकों	भूतभव्य	११.	भूत और भविष्य के
देवैः	३.	देवताओं और	ईशः	१२.	ईश्वर
प्रजेशैः	४.	प्रजापतियों से	ययौ	१४.	आये
आवृतः	५.	घिरे हुए	भूत गणैः	९.	भूत गणों से
अभ्यगात् ।	७.	आये	वृत्तः ॥	१०.	घिरे हुए

श्लोकार्थ–तदनन्तर अपने पुत्र सनकादिकों, देवताओं और प्रजापतियों से घिरे हुए ब्रह्मा जी आये । और भूत गणों से घिरे हुए भूत और भविष्य के ईश्वर भगवान् शङ्कर आये ॥

द्वितीयः श्लोकः

इन्द्रो मरुद्भिर्भगवानादित्या वसवोऽश्विनौ ।
ऋभवोऽङ्गिरसो रुद्रा विश्वे साध्याश्च देवताः ॥२॥

पदच्छेद– इन्द्रः मरुद्भिः भगवान् आदित्याः वसवः आश्विनौ ।
ऋभवः अङ्गिरसः रुद्राः विश्वे साध्याः च देवताः ॥

शब्दार्थ–

इन्द्र	३.	देवराज इन्द्र	ऋभवः	७.	ऋभु
मरुद्भिः	१.	मरुदगणों के साथ	अङ्गिरसः	८.	अङ्गिरा के वंशज ऋषि
भगवान्	२.	भगवान्	रुद्राः	९.	ग्यारहों रुद्र
आदित्याः	४.	सभी आदित्य गण	विश्वे	१०.	विश्वेदेव
वसवः	५.	आठों वसु	साध्याः	११.	साध्य गण
आश्विनौ ।	६.	अश्विनीकुमार	च देवताः ॥	१२.	और देवता आये

श्लोकार्थ–मरुद्गणों के साथ भगवान् देवराज इन्द्र, सभी आदित्य गण, आठों वसु, अश्विनीकुमार ऋभु, अङ्गिरा का वंशज, ऋषि, ग्यारहों रुद्र, विश्वेदेव, साध्यगण और देवता आये ॥

तृतीय श्लोकः

गन्धर्वाप्सरसो नागाः सिद्धचारणगुह्यकाः।
ऋषयः पितरश्चैव सविद्याधरकिन्नराः ॥३॥

पदच्छेद— गन्धर्व अप्सरसः नागाः सिद्ध चारण गुह्यकाः।
ऋषयः पितरः च एव स विद्याधर किन्नराः ॥

शब्दार्थ—

गन्धर्व	१. गन्धर्व	ऋषयः	७. ऋषि
अप्सरसः	२. अप्सरसः	पितरः	९. पितर
नागाः	३. नाग	च एव	८. और
सिद्ध	४. सिद्ध	स	१२. सहित पहुँचे
चारण	५. चारण	विद्याधर	१०. विद्याधर तथा
गुह्यकाः।	६. गुह्यक	किन्नराः ॥	११. किन्नरों के

श्लोकार्थ—गन्धर्व, अप्सरायें, नाग, सिद्ध, चारण, गुह्यक, ऋषि और पितर, विद्याधर तथा किन्नरों के सहित पहुँचे ॥

चतुर्थः श्लोकः

द्वारकामुपसंजग्मुः सर्वे कृष्णदिदृक्षवः।
वपुषा येन भगवान् नरलोकमनोरमः।
यशो वितेने लोकेषु सर्वलोकमलापहम् ॥४॥

पदच्छेद— द्वारकाम् उपसंजग्मुः सर्वे कृष्ण दिदृक्षवः।
वपुषा येन भगवान् नरलोक मनोरमः।
यशः वितेने लोकेषु सर्वलोक मल अपहम् ॥

शब्दार्थ—

द्वारकाम्	४. द्वारका में	नरलोक	७. पृथ्वी लोक में
उपसंजग्मुः	५. जा पहुँचे (अर्थात्)	मनोरमः।	८. मनोहर वेष वाले
सर्वे	१. ये सब लोग	यशः	१४. निर्मल यश को
कृष्ण	२. श्रीकृष्ण का	वितेने	१६. फैलाया है
दिदृक्षवः।	३. दर्शन करने की इच्छा से	लोकेषु	१५. सभी लोकों में
वपुषा	१०. शरीर से लीला की है और	सर्वलोक	११. समस्त लोकों के
येन	९. जिस	मल	१२. मल को
भगवान्	६. भगवान् ने	अपहम् ॥	१३. दूर करने वाले

श्लोकार्थ—ये सब लोग श्रीकृष्ण का दर्शन करने की इच्छा से द्वारका में जा पहुँचे। अर्थात् भगवान् ने पृथ्वी लोक में मनोहर वेष वाले शरीर से लीला की है। और समस्त लोकों के मल के दूर करने वाले निर्मल यश को सभी लोकों में फैलाया है ॥ (यह देखने के लिये सभी आ पहुँचे)

पञ्चमः श्लोकः

तस्यां विभ्राजमानायां समृद्धायां महर्द्धिभिः ।
व्यचक्षतावितृप्ताक्षाः कृष्णमद्भुतदर्शनम् ॥५॥

पदच्छेद— तस्याम् विभ्राजमानायाम् समृद्धायाम् महर्द्धिभिः ।
व्यचक्षत अवितृप्त अक्षाः कृष्णम् अद्भुत दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

तस्याम्	४.	द्वारका में	व्यचक्षत	५.	श्रीकृष्ण के दर्शन किये पर
विभ्राजमानायाम्	३.	देदीप्यमान	अवितृप्त	७.	तृप्त नहीं हो रहे थे
समृद्धायाम्	२.	ऐश्वर्यों से समृद्ध एवं	अक्षाः	६.	उनके नेत्र
महर्द्धिभिः ।	१.	सब प्रकार की सम्पत्तियों	कृष्णम्	८.	क्योंकि श्रीकृष्ण का
			अद्भुतदर्शनम् ॥	९.	दर्शन तो बड़ा ही अलौलिक है

श्लोकार्थ—सब प्रकार की सम्पत्तियों, ऐश्वर्यों से समृद्ध एवं देदीप्यमान द्वारका में श्रीकृष्ण के दर्शन किये परन्तु उनके नेत्र तृप्त नहीं हो रहे थे। क्योंकि श्रीकृष्ण का दर्शन तो बड़ा ही अलौलिक है ॥

षष्ठः श्लोकः

स्वर्गोद्यानोपगैर्माल्यैश्छादयन्तो यदूत्तमम् ।
गीर्भिश्चित्रपदार्थाभिस्तुष्टुवुर्जगदीश्वरम् ॥६॥

पदच्छेद— स्वर्गः उद्यान उपगै माल्यैः छादयन्तः यदुउत्तमम् ।
गीर्भिः चित्रपद् अर्थाभिः तुष्टुवुः जगद् ईश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

स्वर्गः	१.	स्वर्ग के	गीर्भिः	९.	वाणी के द्वारा वे
उद्यान	२.	उद्यान नन्दनवन	चित्रपद्	७.	चित्र-विचित्र पदों तथा
उपगै	३.	से प्राप्त	अर्थाभिः	८.	अर्थों से युक्त
माल्यैः	४.	दिव्य पुष्पों से	तुष्टुवुः	१२.	स्तुति करने लगे
छादयन्तः	६.	ढक दिया	जगद्	१०.	उन जगत् के
यदुउत्तमम् ।	५.	जगदीश्वर भगवान् को	ईश्वरम् ॥	११.	ईश्वर श्रीकृष्ण की

श्लोकार्थ—स्वर्ग के उद्यान नन्दनवन से प्राप्त दिव्य-पुष्पों से जगदीश्वर भगवान् को ढक दिया। चित्र-विचित्र पदों तथा अर्थों से युक्त वाणी के द्वारा वे उन जगत् के ईश्वर श्रीकृष्ण की स्तुति करने लगे ॥

सप्तमः श्लोकः

देवाऊचुः—नताः स्म ते नाथ पदारविन्दं बुद्धीन्द्रियप्राणमनोवचोभिः ।
यच्चिन्त्यतेऽन्तर्हृदि भावयुक्तैर्मुमुक्षुभिः कर्ममयोरुपाशात् ॥७॥

पदच्छेद— नताः स्म ते नाथ पादारविन्दम् बुद्धि इन्द्रिय प्राण मनः वचोभिः ।
यत् चिन्त्यते अन्तः हृदि भाव युक्तैः मुमुक्षुभिः कर्ममय उरुपाशात् ॥

शब्दार्थ—

नताः स्म	१४.	नमस्कार किया है	यत् चिन्त्यते	८.	जिसका चिन्तन करते रहते हैं
ते	६.	आपके	अन्तः हृदि	७.	अपने हृदय के अन्दर
नाथ	१.	हे स्वामी !	भाव	५.	भक्ति-भाव से
पादारविन्दम्	१०.	उन्हीं चरण कमलों को	युक्तैः	६.	युक्त होकर
बुद्धि	११.	हम लोगों ने अपनी बुद्धि	मुमुक्षुभिः	४.	छूटने की इच्छा वाले मुमुक्षुजन
इन्द्रिय प्राण	१२.	इन्द्रिय-प्राण	कर्ममय	२.	कर्मों के
मनः वचोभिः ।	१३.	मन और वाणी से	उरुपाशात् ॥	३.	कठिन फन्दों से

श्लोकार्थ—हे स्वामी ! कर्मों के कठिन फन्दों से छूटने की इच्छा वाले मुमुक्षुजन भक्ति-भाव से युक्त होकर अपने हृदय के अन्दर जिसका चिन्तन करते रहते हैं । आपके उन्हीं चरण कमलों को हम लोगों ने अपनी बुद्धि, इन्द्रिय, प्राण, मन और वाणी से नमस्कार किया है ॥

अष्टमः श्लोकः

त्वं मायया त्रिगुणयाऽऽत्मनि दुर्विभाव्यं व्यक्तं सृजस्यवसि लुम्पसि तद्गुणस्थः।
न एतैर्भवानजित कर्मभिरज्यते वै यत् स्वे सुखेऽव्यवहितेऽभिरतोऽनवद्यः ॥८॥

पदच्छेद—त्वम् मायया त्रिगुणया आत्मनि दुर्विभाव्यम् व्यक्तम् सृजसिअवसि लुम्पसि तत् गुणस्थः ।
न एतैः भवान् अजित् कर्मभिः अज्यते वैयत् स्वे सुखे अव्यवहिते अभिरतः अनवद्यः ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	२.	आप	न एतैः भवान्	१०.	यह सब करते हुये भी आप
माययात्रिगुणया	६.	त्रिगुणमयी माया से	अजित्	१.	हे अजित !
आत्मनि	७.	अपने आप में	कर्मभिः	११.	कर्मों से
दुर्विभाव्यम्व्यक्तम्	५.	अचिनय नाम रूप प्रपञ्च की	अज्यतेवैयत्	१२.	लिप्त नहीं होते हैं । क्योंकि
सृजसिअवसि	८.	रचना करते पालन करते और	स्वे सुखे	१४.	स्वरूप भूत परमानन्द में
लुम्पसि	९.	संहार करते हैं	अव्यवहिते	१३.	अपने अखण्ड
तत्	३.	मायिक रज आदि	अभिरतः	१६.	मग्न रहते हैं
गुणस्थः।	४.	गुणों में स्थित होकर	अनवद्यः ॥	१५.	आप निरन्तर

श्लोकार्थ—हे अजित ! आप मायिकरज आदि गुणों में स्थित होकर अचिन्त्य नाम रूप प्रपञ्च की त्रिगुणमयी माया से अपने आप में रचना करते पालन करते और संहार करते हैं । यह सब करते हुये भी आप कर्मों से लिप्त नहीं होते हैं । क्योंकि अपने अखण्ड स्वरूप भूत परमानन्द में आप निरन्तर मग्न रहते हैं ॥

नवमः श्लोकः

शुद्धिर्नृणां न तु तथेड्य दुराशयानां
विद्याश्रुताध्ययनदानतपः क्रियाभिः ।
सत्त्वात्मनामृषभ ते यशसि प्रवृद्ध-
सच्छ्रद्धया श्रवणसम्भृतया यथा स्यात् ॥६॥

पदच्छेद—

शुद्धिः नृणाम् न तु तथा ईड्य दुराशयानाम् विद्या श्रुत अध्ययन दान तपः क्रियाभिः ।
सत्त्व आत्मनाम् ऋषभ ते यशसि प्रवृद्ध सत् श्रद्धया श्रवण सम्भृतया यथा स्यात् ॥

शब्दार्थ —

शुद्धिः नृणाम्	६.	मनुष्यों की चित्त शुद्धि	ऋषभ	१०.	हे श्रेष्ठ ! परमात्मन् !
न तु तथा	७	वैसी नहीं होती है	ते यशसि	१४.	आपकी कीर्ति के विषय में
ईड्य	१.	स्तुति करने योग्य हे परमात्मन् !	प्रवृद्ध	१५.	दिनों-दिन बढ़ने वाली
दुराशयानाम्	२.	कलुचित्तवत्	सत् श्रद्धया	१६.	सत् श्रद्धा से होती है
विद्या श्रुत	२.	उपासना-वेदों का	श्रवण	११.	श्रावण के द्वारा
अध्ययन	३.	अध्ययन	सम्भृतया	१२.	सम्पुष्ट
दान-तपः	४.	दान-तपस्या और	यथा	८.	जैसी
क्रियाभिः ।	५.	यज्ञादि कर्म करने वाले	स्यात् ॥	६.	कि
सत्त्व आत्मनाम्	१३.	शुद्ध अन्तःकरण पुरुषों की			

श्लोकार्थ—स्तुति करने योग्य हे परमात्मन् ! उपासना वेदों का अध्ययन, दान, तपस्या और यज्ञादि कर्म करने वाले मनुष्यों की चित्त शुद्धि वैसी नहीं होती है । जैसी कि हे श्रेष्ठ परमात्मन् ! श्रावण के द्वारा सम्पुष्ट शुद्ध अन्तःकरण पुरुषों की आपकी कीर्ति के विषय में दिनों-दिन बढ़ने वाली सत् श्रद्धा से होती है ॥

दशमः श्लोकः

स्यान्नस्तवाङ्घ्रिरशुभाशयधूमकेतुः
क्षेमाय यो मुनिभिरार्द्रहृदोह्यमानः ।
यः सात्वतैः समविभूतय आत्मवद्भि-
र्व्यूहेऽर्चितः सवनशः स्वरतिक्रमाय ॥१०॥

पदच्छेद—स्यात् नः तव अङ्घ्रि अशुभ आशय धूमकेतुः क्षेमाय यः मुनिभिः आर्द्रहृदा उह्यमानः । यः सात्वतैः समविभूतयः आत्मवद्भिः व्यूहे अर्चितः सवनशः स्वः अतिक्रमाय ॥

शब्दार्थ—

स्यात् नः	१४.	हमारी समस्त	यः	६.	जिनका
तव अङ्घ्रि	१३.	आपके वे ही चरण कमल	सात्वतैः	७.	भक्तजन
अशुभआशय	१५.	अशुभवासनाओं को भस्म करने के लिये	समविभूतयः	५.	समान ऐश्वर्य की प्राप्ति लिये
धूमकेतुः	१६.	अग्नि के समान हों	आत्मवद्भिः	९.	जितेन्द्रिय धीर पुरुष
क्षेमाय	२.	मोक्ष की प्राप्ति के लिये	व्यूहे अर्चितः	८.	चतुर्व्यूह के रूप में पूजा करते हैं
यः मुनिभिः	१.	मननशील ऋषि जिन्हें	सवनशः	१२.	तीनों समय जिसका पूजन करते हैं
आर्द्रहृदा	३.	पिघले हुये हृदय से	स्वः	१०.	स्वर्गलोक का
उह्यमानः ।	४	लिये-लिये फिरते हैं	अतिक्रमाय ॥	११.	अतिक्रमण करके भगद्धाम की प्राप्ति के लिये

श्लोकार्थ—मननशील ऋषि जिन्हें मोक्ष की प्राप्ति के लिये पिघले हुये हृदय से लिये-लिये फिरते हैं। समान ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये जिनका भक्तजन चतुर्व्यूह के रूप में पूजा करते हैं। तथा जितेन्द्रिय धीर पुरुष स्वर्गलोक का अतिक्रमण करके भगद्धाम की प्राप्ति के लिये तीनों समय जिनका पूजन करते हैं। आपके वे ही चरण कमल हमारी समस्त अशुभ-वासनाओं को भस्म करने के लिये अग्नि के समान हों ॥

एकादशः श्लोकः

यश्चिन्त्यते प्रयतपाणिभिरध्वराग्नौ त्रय्यानिरुक्तविधिनेश हविर्गृहीत्वा ।
अध्यात्मयोग उत योगिभिरात्ममायां जिज्ञासुभिः परमभागवतैः परीष्टः ॥११॥

पदच्छेद— यः चिन्त्यते प्रयत पाणिभिः अध्वर अग्नौ त्रय्या निरुक्तविधिना ईश हवि गृहीत्वा ।
अध्यात्म योग उतयोगिभिः आत्ममायाम् जिज्ञासुभिः परम भागवतैः परीष्टः ॥

शब्दार्थ—					
यः चिन्त्यते	८.	जिनका चिन्तन करते हैं	अध्यात्म योग	१०.	अध्यात्म योग में
प्रयत पाणिभिः	४.	संयत हाथों में	उत	९.	अथवा
अध्वर	६.	यज्ञ कुण्ड की	योगिभिः	१३.	योगीजन और
अग्नौ	७.	अग्नि में आहुति देते समय	आत्ममायाम्	११.	आत्म स्वरूपिणी माया के
त्रय्या	२.	तीनों वेदों के द्वारा	जिज्ञासुभिः	१२.	जिज्ञासु
निरुक्तविधिना	३.	बताई गई विधि से	परम	१४.	बड़े-बड़े
ईश	१.	हे प्रभो ! याज्ञिक लोग	भागवतैः	१५.	प्रेमी भक्तजन जिनको
हवि गृहीत्वा ।	५.	हव्य लेकर	परीष्टः ॥	१६.	अपना परम इष्ट मानते हैं

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! याज्ञिक लोग तीनों वेदों के द्वारा बताई गई विधि से संयत हाथों में हव्य लेकर यज्ञ-कुण्ड की अग्नि में आहुति देते समय जिनका चिन्तन करते हैं । अथवा अध्यात्मक योग में आत्म स्वरूपिणि माया के जिज्ञासु योगीजन और बड़े-बड़े प्रेमी भक्तजन जिनको अपना परम इष्ट मानते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

पर्युष्टया तव विभो वनमालयेयं संस्पर्धिनी भगवती प्रतिपत्निवच्छ्रीः ।
यः सुप्रणीतममुयार्हणमाददन्नो भूयात् सदाङ्घ्रिरशुभाशयधूमकेतुः ॥१२॥

पदच्छेद— पर्युष्टयातव विभो वनमालया इयम् संस्पर्धिनी भगवतीम् प्रतिपत्निवत् श्रीः ।
यः सुप्रणीतम् अमुयाअर्हणम् आददत् नः भूयात् सदाङ्घ्रि अशुभअशय धूमकेतुः ॥

शब्दार्थ—					
पर्युष्टयातव	२.	मुरझाई हुई वासी	यः	९.	फिर भी आप
विभो	१.	हे प्रभो ! आपके वक्षः स्थल पर	सुप्रणीतम्	११.	प्रेम से
वनमालया	३.	वन माला से	अमुया अर्हणम्	१०.	इस वासी माला से की हुई पूजा को
इयम्	४.	यह	आददत्	१२.	स्वीकार करते हैं
संस्पर्धिनी	८.	द्वेष रखती है	नः	१४.	हम लोगों की
भगवतीम्	५.	भगवती	भूयात्	१७.	हो वें
प्रतिपत्निवत्	७.	सौत के समान	सदाङ्घ्रि	१३.	ऐसे आपके चरण कमल सदा
श्रीः ।	६.	लक्ष्मी	अशुभ आशय	१५.	विषय-वासना को जलाने वाले
			धूमकेतुः ॥	१६.	अग्नि के समान

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आपके वक्षः स्थल पर मुरझाई हुई वासी वनमाला से यह भगवती लक्ष्मी है, सौत के समान द्वेष रखती हैं । फिर भी आप इस वासी माला से की हुई पूजा को प्रेम से स्वीकार करते हैं । ऐसे आपके चरण कमल सदा हम लोगों की विषय-वासना को जलाने के लिये अग्नि के समान होवें ॥

त्रयोदशः श्लोकः

केतुस्त्रिविक्रमयुतस्त्रिपतत्पताको यस्ते भयाभयकरोऽसुरदेवचम्वोः ।
स्वर्गाय साधुषु खलेष्वितराय भूमन् पादः पुनातु भगवन् भजतामघं नः ॥१३॥

पदच्छेद—केतुः त्रिविक्रम् युतः त्रिपतत् पताकः यः ते भयअभयकरः असुर देवचम्वोः ।
स्वर्गाय साधुषु खलेषु इतराय भूमन् पादः पुनातु भगवन् भजताम् अघम् नः ॥

शब्दार्थ—					
केतु	४.	केतु के समान है उसमें से	स्वर्गाय साधुषु	१०.	वे सन्तों के वैकुण्डलोक और
त्रिविक्रम युतः	३.	तीन पगों से युक्त चरण	खलेषु इतराय	११.	दुष्टों की अधोगति का कारण हैं
त्रिपतत	५.	गिरती हुई तीन धारायें	भूमन्	१.	हे अनन्त !
पताकः	६.	तीन पताकाओं के समान हैं	पादः	१३.	आपका ऐसा चरण कमल
यः ते	२.	आपके	पुनातु	१६.	धो-बहाकर पवित्र कर दे
भयअभयकरः	९.	क्रमशः भय और अभय देने वाले हैं	भगवन्	१२.	हे प्रभो !
असुर	७.	जो दैत्य और	भजताम्	१४.	भजन करने वाले
देवचम्वोः ।	८.	देवताओं की सेना के लिये	अघम् नः ॥	१५.	हम भक्तजनों के पापों को

श्लोकार्थ—हे अनन्त ! आपके तीन पगों से युक्त चरण केतु के समान है । उसमें से गिरने वाली तीन धारायें तीन पताकाओं के समान हैं । जो दैत्य और देवताओं की सेना के लिये क्रमशः भय और अभय देने वाले हैं । वे सन्तों को वैकुण्ठ लोक और दुष्टों को अधोगति का कारण है । हे प्रभो ! आपका ऐसा चरण कमल भजन करने वाले हम भक्तजनों के पापों को धो-बहाकर पवित्र कर दे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नस्योतगाव इव यस्य वशे भवन्ति ब्रह्मादयस्तनुभृतो मिथुरर्द्यमानाः ।
कालस्य ते प्रकृतिपूरुषयोः परस्य शं नस्तनोतु चरणः पुरुषोत्तमस्य ॥१४॥

पदच्छेद—नः सिओतगावः इवयस्य वशेभवन्ति ब्रह्मआदय तनुभृतः मिथुः अर्द्यमानाः ।
कालस्य ते प्रकृति पूरुषयोः परस्य शम् नः तनो तु चरणः पुरुषोलमस्य ॥

शब्दार्थ—					
नः सिओत	५.	नथे	कालस्य	९.	काल स्वरूप
गावः	६.	बैल के	ते	१३.	आपका
इवयस्य	७.	समान जिस परमात्मा के	प्रकृति पूरुषयोः	१०.	प्रकृति-पुरुष से
वशेभवन्ति	८.	वश में हो जाते हैं	परस्ये	११.	परे
ब्रह्मआदय	१.	ब्रह्मा आदि	शम् नः	१५.	हमारा कल्माण
तनुभृतः	२.	शरीरधारी	तनो तु	१६.	करे
मिथु	३.	तीनों गणों के भावों से	चरणः	१४.	चरण कमल
अर्द्यमानाः ।	४.	टक्कर लेते हुये	पुरुषोत्तमस्य ॥	१२.	पुरुषोत्तम

श्लोकार्थ—ब्रह्मा आदि शरीरधारी तीनों गुणों के भावों से टक्कर लेते हुये नथे बैल के समान जिस परमात्मा के वश में हो जाते हैं । काल स्वरूप प्रकृति-पुरुष से परे पुरुषोत्तम आपका चरण-कमल हमारा कल्याण करे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

अस्यासि हेतुरुदयस्थितिसंयमानामव्यक्तजीवमहतामपि कालमाहुः ।
सोऽयं त्रिणाभिरखिलापचये प्रवृत्तः कालो गभीररय उत्तमपूरुषस्त्वम् ॥१५॥

पदच्छेद—अस्य असि हेतुः उदय स्थिति संयमानाम् अव्यक्त जीव महताम् अपि कालम् आहुः ।
सः अयम् त्रिणाभिः अखिल अपचये प्रवृत्तः कालः गभीररय उत्तम पूरुषः त्वम् ॥

शब्दार्थ—					
अस्य	१.	आप इस जगत् की	सः अयम्	१०.	ऐसे आप
असिहेतुः	४.	परम कारण हैं	त्रिणाभिः	९.	तीन नाभियों वाले
उदय स्थिति	२.	उत्पत्ति-स्थिति और	अखिल अपचये	११.	सबको क्षय की ओर
संयमानाम्	३.	प्रलय के	प्रवृत्तः	१२.	ले जाने वाले
अव्यक्त जीव	५.	आप प्रकृति, पुरुष और	कालः	१४.	काल स्वरूप
महताम् अपि	६.	महत्तत्व के भी	गभीररय	१३.	गम्भीर गति वाले
कालम्	७.	नियन्त्रण करने वाले काल	उत्तम पूरुषः	१६.	उत्तम पुरुष हैं
आहुः ।	८.	कहे गये हैं	त्वम् ॥	१५.	आप

श्लोकार्थ—आप इस जगत की उत्पत्ति-स्थिति और प्रलय के परम कारण हैं। आप प्रकृति-पुरुष और महत्तत्व के भी नियन्त्रण करने वाले काल कहे गये हैं। (गर्मी, जाड़ा, बरसा काल रूप) तीननाभियोंवाले ऐसे आप सबको क्षय की ओर ले जानेवाले गम्भीर गति वाले काल स्वरूप आप उत्तम पुरुष हैं ॥

षोडशः श्लोकः

त्वत्तः पुमान् समधिगम्य यया स्ववीर्यं धत्ते महान्तमिव गर्भममोघवीर्यः ।
सोऽयं तयानुगत आत्मन आण्डकोशं हैमं ससर्ज बहिरावरणैरुपेतम् ॥१६॥

पदच्छेद—त्वत्तः पुमान् समधिगम्य यया स्ववीर्यम् धत्ते महान्तम् इवगर्भम् अमोघवीर्यः ।
सः अयम् तया अनुगतः आत्मनः आण्डकोशम् हैमम् ससर्ज बहिः आवरणैः उपेतम् ॥

शब्दार्थ—					
त्वत्तः पुमान्	१.	यह पुरुष आपसे	सः अयम्	९.	वही यह महत्तत्व
समधिगम्य	३.	भलीभांति प्राप्त करके अनुसरण करके	तया अनुगतः	१०.	त्रिगुण मयी माया का
यया	५.	जिस माया के साथ संयुक्त होकर	आत्मनः	११.	अपने से युक्त होकर
स्ववीर्यम्	२.	अपनी शक्ति को	आण्डकोशम्	१५.	ब्रह्माण्डकोश की
धत्ते	८.	धारण करता है	हैमम्	१४.	सुवर्णमय
महान्तम्	६.	विश्व के महत्तत्व को	ससर्ज	१६.	रचना करता है
इवगर्भम्	७.	इस विश्व के गर्भ के समान	बहिः आवरणैः	१२.	बाहरी आवरणों
अमोघवीर्यः ।	४.	अमोघवीर्य हो जाता है	उपेतम् ॥	१३.	वाले

श्लोकार्थ—यह पुरुष आपसे अपनी शक्ति को भलीभांति प्राप्त करके अमोघ वीर्य हो जाता है। और जिस माया के साथ संयुक्त होकर विश्व के महत्तत्व को इस विश्व के गर्भ के समान धारण करता है। वही यह महत्तत्व त्रिगुण मयी माया का अनुसरण करके अपने से युक्त होकर बाहरी आवरणों वाले सुवर्ण मय ब्रह्माण्ड की रचना करता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

तत्तस्थुषश्च जगतश्च भवानधीशो यन्माययोत्थगुणविक्रिययोपनीतान् ।
अर्थाञ्जुषन्नपि हृषीकपते न लिप्तो येऽन्ये स्वतः परिहृतादपि बिभ्यति स्म ॥१७॥

पदच्छेद—तत् तस्थुषः च जगतः च भवान् अधीशः यत् मायया उत्थगुण विक्रियया उपनीतान् ।
अर्थान् जुषन् अपि हृषीकपते न लिप्तः ये अन्ये स्वतः परिहृतात् अपि बिभ्यतिस्म ॥

शब्दार्थ—तत्	१.	इसलिये	अर्थान्	१०.	विभिन्न पदार्थों का
तस्थुषः च	४.	समस्त चराचर	जुषन् अपि	११.	उपभोग करते हुये भी
जगतः च	५.	जगत के	हृषीकपते	२.	हे हृषीकेश !
भवान्	३.	आप	न लिप्तः	१२.	आप उनमें लिप्त नहीं होते हैं
अधीशः	६.	स्वामी हैं	ये अन्ये	१३.	जब कि अन्य जो लोग हैं वे
यत् मायया उत्थ	७.	यही कारण है माया के द्वारा स्थापित	स्वतः	१४.	स्वयं
गुण विक्रियया	८.	गुण विषमता के कारण	परिहृतात् अपि	१५.	विषयों को छोड़कर भी
उपनीतान् ।	९.	प्राप्त	बिभ्यतिस्म ॥	१६.	उनसे डरते रहते हैं

श्लोकार्थ—इसलिये हे हृषीकेश ! आप समस्त चराचर जगत के स्वामी हैं । यही कारण है कि माया के द्वारा स्थापित गुण विषमता के कारण प्राप्त विभिन्न पदार्थों का उपभोग करते हुये भी आप उनमें लिप्त नहीं होते हैं जबकि अन्य जो लोग हैं वे स्वयं विषयों को छोड़कर भी उनसे डरते रहते हैं ॥

अष्टदशः श्लोकः

स्मायावलोकलवदर्शितभावहारिभ्रूमण्डलप्रहितसौरतमन्त्रशौण्डैः ।
पत्न्यस्तु षोडशसहस्रमनङ्गबाणैर्यस्येन्द्रियं विमथितुं करणैर्न विभ्व्यः ॥१८॥

पदच्छेद– स्माय अवलोक लव दर्शित भावहारि भ्रूमण्डल प्रेहित सौरत मन्त्र शौण्डैः ।
पत्न्यः तु षोडश सहस्रम् अनङ्गबाणैः यस्य इन्द्रियम् विमथितुम् करणैः न विभव्य ॥

शब्दार्थ—स्माय	१.	मन्द मुसकान और	पत्न्यः तु	८.	पत्नियाँ
अवलोक	२.	तिरछी चितवन से युक्त	षोडश	६.	सोलह
लव	३.	कटाक्ष से	सहस्रम्	७.	हजार
दर्शित	५.	प्रदर्शित करने वाली	अनङ्ग बाणैः	१३.	काम बाणों से
भावहारि	४.	अपना मोहक काम बाण	यस्य इन्द्रियम्	१४.	आपके मन को
भ्रूमण्डल प्रेहित	९.	भौहों के इशारे से तथा	विमथितुम्	१५.	क्षुब्ध करने में
सौरत	१०.	सूरत सम्बन्धी	करणैः	१२.	इन्द्रियों के हाव-भावों से
मन्त्र शौण्डैः ।	११.	प्रौढ आलापों से भी	न विभव्यः ॥	१६.	समर्थ न हो सकीं ।

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! मन्द मुसकान और तिरछी चितवन से युक्त कटाक्ष से अपना मोहक काम बाण प्रदर्शित करने वाली सोलह हजार पत्नियाँ भौहों के इशारे से तथा सुरत सम्बन्धी प्रौढ आलापों से भी, इन्द्रियों के हाव-भावों से, काम बाणों से आपके मन को क्षुब्ध करने में समर्थ न हो सकीं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

विभ्व्यस्तवामृतकथोदवहास्त्रिलोक्याः पादावनेजसरितः शमलानि हन्तुम् ।
आनुश्रवं श्रुतिभिरङ्घ्रिजमङ्गसङ्गैस्तीर्थद्वयं शुचिषदस्त उपस्पृशन्ति ॥१९॥

पदच्छेद—विभ्व्यः तव अमृत कथा उदवहाः स्त्रिलोक्याः प्रादावनेजसरितः शमलानि हन्तुम् ।
आनु श्रवम् श्रुतिभिः अङ्घ्रिजम् अङ्गे सङ्गैः तीर्थं द्वयम् शुचिषदः ते उपस्पृशन्ति ॥

शब्दार्थ—

विभ्व्यः	८.	समर्थ हैं	अनुश्रवम्	११.	सुनने योग्य कथा और
तव अमृत कथा	४.	आपकी अमृतमयी कथारूपी	श्रुतिभिः	१०.	कानों के द्वारा
उदवहा	५.	नदी और	अङ्घ्रिजम्	१४.	गंगा
त्रिलोक्याः	१.	त्रिलोकी की	अङ्गे	१२.	अङ्गों के
पादवनेज	६.	चरणों के जल रूपी	सङ्गैः	१३.	सङ्ग (स्नान योग्य)
सरिताः	७.	गंगा	तीर्थं द्वयम्	१५.	दोनों ही तीर्थ का
शमलानि	२.	पाप राशि को	शुचिषदः ते	९.	सत्संग सेवी विवेकीजन आपकी
हन्तुम् ।	३.	नष्ट करने के लिये	उपस्पृशन्ति ॥	१६.	सेवन करते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! त्रिलोकी की पाप राशि को नष्ट करने के लिये आपकी अमृत मयी कथा रूपी नदी और चरणों के जल रूपी गंगा समर्थ हैं। सत्संग सेवी विवेकी जन आपकी कानों के द्वारा सुनने योग्य कथा और अङ्गों के सङ्ग स्नान योग्य गंगा दोनों ही तीर्थ का सेवन करते हैं॥

विंशः श्लोकः

बादरायणिरुवाच—इत्यभिष्टूय विबुधैः सेशः शतधृतिर्हरिम् ।
अभ्यभाषत गोविन्दं प्रणम्याम्बरमाश्रितः ॥२०॥

पदच्छेद— इति अभिष्टूय विबुधैः स ईशः शतधृतिः हरिम् ।
अभ्यभाषत गोविन्दम् प्रणम्य अम्बरम् आश्रितः ॥

शब्दार्थ—

इति	५.	इस प्रकार	अभ्यभाषत	११.	कहने लगे
अभिष्टूय	६.	स्तुति की और	गोविन्दम्	१०.	भगवान से
विबुधैः	१.	समस्त देवताओं और	प्रणम्य	७.	प्रणाम करके तथा
स ईशः	२.	भगवान् शङ्कर के साथ	अम्बरम्	८.	आकाश में
शतधृतिः	३.	ब्रह्मा जी ने	आश्रितः ॥	९.	स्थित होकर
हरिम् ।	४.	भगवान् की			

श्लोकार्थ—समस्त देवताओं और भगवान् शङ्कर के साथ ब्रह्मा जी ने भगवान् की इस प्रकार स्तुति की। और प्रणाम करके तथा आकाश में स्थित होकर भगवान् से कहने लगे॥

एकविंशः श्लोकः

ब्रह्मोवाच— भूमेर्भारावताराय पुरा विज्ञापितः प्रभो।
त्वमस्माभिरशेषात्मंस्तत्तथैवोपपादितम् ॥२१॥

पदच्छेद— भूमेः भार अवताराय पुरा विज्ञापितः प्रभो।
त्वम् अस्माभिः अशेष आत्मन् तत् तथैव उपपादितम् ॥

शब्दार्थ—

भूमेः	७. पृथ्वी का	त्वम्	६. आपसे
भार	८. भार	अस्माभिः	५. हम लोगों ने
अवताराय	९. उतारने के लिये	अशेष	१. सर्व समर्थ
पुरा	४. पहले	आत्मन्	२. आत्मस्वरूप
विज्ञापितः	१०. प्रार्थना की थी	तत् तथैव	११. वह काम आपने उसी प्रकार
प्रभो।	३. हे प्रभो!	उपपादितम् ॥	१२. पूरा कर दिया

श्लोकार्थ—सर्व समर्थ आत्मस्वरूप हे प्रभो! पहले हम लोगों ने आप से पृथ्वी का भार उतारने के के लिये प्रार्थना की थी। वह काम आपने उसी प्रकार पूरा कर दिया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

धर्मश्च स्थापितः सत्सु सत्यसन्धेषु वै त्वया।
कीर्तिश्च दिक्षु विक्षिप्ता सर्वलोकमलापहा ॥२२॥

पदच्छेद— धर्मः च स्थापितः सत्सु सत्यसन्धेषु वै त्वया।
कीर्तिः च दिक्षुः विक्षिप्ता सर्वलोक मल अपहा ॥

शब्दार्थ—

धर्मः च	५. धर्म की	कीर्तिः च	८. ऐसी कीर्ति
स्थापितः	६. स्थापना कर दी और	दिक्षु	७. दसों दिशाओं में
सत्सु	४. सन्तों से कल्याण के लिये	विक्षिप्ता	९. फैला दी जो
सत्यसन्धेषु	३. सत्य परायण	सर्वलोक	१०. समस्त लोकों के
वै	१. निश्चय ही	मल	११. पाप को
त्वया।	२. आपने	अपहा ॥	१२. नष्ट कर देने वाली है

श्लोकार्थ—निश्चय ही अपने सत्य परायण सन्तों के कल्याण के लिये धर्म की स्थापना कर दी। और दसों दिशाओं में ऐसी कीर्ति फैला दी जो समस्त लोकों के पाप को नष्टकर देने वाली है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अवतीर्य यदोर्वंशे बिभ्रद् रूपमनुत्तमम् ।
कर्माण्युद्दामवृत्तानि हिताय जगतोऽकृथाः ॥२३॥

पदच्छेद-- अवतीर्य यदोः वंशे बिभ्रत् रूपम् अनुत्तमम् ।
कर्माणि उद्दाम वृत्तानि हिताय जगतः अकृथाः ॥

शब्दार्थ--

अवतीर्य	६. अवतार लिया	कर्माणि	११. अनेकों लीलायें
यदोः	४. यदु	उद्दाम	९. उदारता और
वंशे	५. वंश में	वृत्तानि	१०. पराक्रम से भरी
बिभ्रत्	३. धारण करके	हिताय	८. हित के लिये
रूपम्	२. रूप	जगतः	७. जगत के
अनुत्तमम् ।	१. आपने सर्वोत्तम	अकृथाः ॥	१२. की

श्लोकार्थ--आपने सर्वोत्तम रूप धारण करके यदुवंश में अवतार लिया। जगत के हित के लिये उदारता और पराक्रम से भरी अनेकों लीलायें कीं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

यानि ते चरितानीश मनुष्याः साधवः कलौ ।
श्रृण्वन्तः कीर्तयन्तश्च तरिष्यन्त्यञ्जसा तमः ॥२४॥

पदच्छेद-- यानि ते चरितानि ईश मनुष्याः साधवः कलौ ।
श्रृण्वन्तः कीर्तयन्तः च तरिष्यन्ति अञ्जसा तमः ॥

शब्दार्थ--

यानि ते	५. आपकी इन	श्रृण्वन्तः	७. श्रवण
चरितानि	६. लीलाओं का	कीर्तयन्तः	९. कीर्तन करेंगे
ईश	१. हे प्रभो !	च	८. और
मनुष्याः	४. मनुष्य	तरिष्यन्ति	१२. पार हो जायेंगे
साधवः	३. जो साधु स्वभाव	अञ्जसा	१०. वे सुगमता से ही
कलौ ।	२. कलियुग में	तमः ॥	११. अज्ञान रूप अन्धकार से

श्लोकार्थ--हे प्रभो ! कलियुग में जो साधु स्वभाव मनुष्य आपकी इन लीलाओं का श्रवण और कीर्तन करेंगे। वे सुगमता से ही अज्ञान रूप अन्धकार से पार हो जायेंगे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यदुवंशेऽवतीर्णस्य भवतः पुरुषोत्तम ।
शरच्छतं व्यतीयाय पञ्चविंशाधिकं प्रभो ॥२५॥

पदच्छेद— यदु वंशे अवतीर्णस्य भवतः पुरुषोत्तमः ।
शरत् शतम् व्यतीयाय पञ्चविंशः अधिकम् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

यदु	४. यदु-	शरद्	१०. वर्ष
वंशे	५. वंश में	शतम्	७. एक सौ
अवतीर्णस्य	६. अवतार गृहण किये हुये	व्यतीयाय	११. बीत गये हैं
भवतः	३. आपको	पञ्चविंशः	८. पच्चीस से
पुरुषोत्तम ।	१. हे पुरुषोत्तम !	अधिकम्	९. अधिक
		प्रभो ।	२. हे प्रभो !

श्लोकार्थ— हे पुरुषोत्तम ! हे प्रभो ! आपको यदुवंश में अवतार गृहण किये हुये । एक सौ पच्चीस से अधिक वर्ष बीत गये हैं ॥

षट्विंशः श्लोकः

नाधुना तेऽखिलाधार देवकार्यावशेषितम् ।
कुलं च विप्रशापेन नष्टप्रायमभूदिदम् ॥२६॥

पदच्छेद— न अधुना ते अखिल आधार देव कार्य अवशेषि तम् ।
कुलम् च विप्र शापेन नष्ट प्रायम् अभूत् इदम् ॥

शब्दार्थ—

न	७. नहीं है	कुलम्	११. कुल भी
अधुना	३. अब	च विप्र	८. और ब्राह्मणों के
ते	४. आपके लिये	शापेन	९. शाप के द्वारा
अखिल-	१. हे सर्व रूप !	नष्ट	१३. नष्ट
आधार	२. आधार	प्रायम्	१२. एक प्रकार से
देवकार्य	५. हम देवों का कोई कार्य	अभूत्	१४. हो चुका है
अवशेषितम् ।	६. बाकी	इदम् ॥	१०. आपका यह

श्लोकार्थ—हे सर्वरूप आधार अब आपके लिये हम देवों का कोई कार्य बाकी नहीं है । और ब्राह्मणों के शाप के द्वारा आपका यह कुल भी एक प्रकार से नष्ट हो चुका है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

ततः स्वधाम परमं विशस्व यदि मन्यसे ।
सल्लोकाँल्लोकपालान् नः पाहि वैकुण्ठकिङ्करान् ॥२७॥

पदच्छेद— ततः स्वधाम परमम् विशस्व यदि मन्यसे ।
सलोकान् लोकपालान् नः पाहि वैकुण्ठ किङ्करान् ॥

शब्दार्थ —

ततः	१. इसलिये	सलोकान्	११.	लोकों के साथ
स्व	४. अपने	लोक पालान्	१२	पालों का
धाम	६. धाम में	नः	१०.	हम
परमम्	५. परम	पाहि	१३.	पालन-पोषण कीजिये
विशस्व	७. पधारिये और	वैकुण्ठ	८.	अपने
यदि	२. यदि	किङ्करान् ॥	९.	सेवक
मन्यसे ।	३. आप उचित समझें तो			

श्लोकार्थ इसलिये यदि आप उचित समझें तो अपने परम धाम में पधारिये । और अपने सेवक हम लोकों के साथ लोक पालों का पालन-पोषण कीजिये ॥

अष्टविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अवधारितमेतन्मे यदात्थ विबुधेश्वर ।
कृतं वः कार्यमखिलं भूमेर्भारोऽवतारितः ॥२८॥

पदच्छेद — अवधारितम् एतत् मे यत् आत्थ विबुध ईश्वरः ।
कृतम् वः कार्यम् अखिलम् भूमेः भारः अवतारितः ॥

शब्दार्थ—

अवधारितम्	६. पहले ही निश्चय कर चुका हूँ	कृतम्	१०.	कर दिया है और
एतत्	४. यह तो	वः	७.	मैंने आप लोगों का
मे	५. मैं	कार्तम्	९.	कार्य
यत्	२. जैसा आपने	अखिलम्	८.	समस्त
आत्थ	३. कहा	भूमेः	११.	पृथ्वी का
विबुध-ईश्वरः ।	१. हे ब्रह्मा जी !	भारः	१२.	भार भी
		अवतारितः ॥	१३.	उतार दिया है

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मा जी ! जैसा आपने कहा है। यह तो मैं पहले ही निश्चय कर चुका हूँ मैंने आप लोगों का समस्त कार्य कर दिया है । और पृथ्वी का भार भी उतार दिया है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तदिदं यादवकुलं वीर्यशौर्यश्रियोद्धतम् ।
लोकं जिघृक्षद् रुद्धं मे वेलयेव महार्णवः ॥२६॥

पदच्छेद— तत् इदम् यादवकुलम् वीर्य शौर्य श्रिया उद्धतम् ।
लोकम् जिघृक्षद् रुद्धम् मे वेलया इव महार्णवः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. इसलिये	लोकम्	५. सारी पृथ्वी को
इदम्	७. इन	जिघृक्षद्	६. ग्रस लेने पर तुले हुये
यादवकुलम्	८. यादव वंशियों को	रुद्धम्	१०. रोक रखा है
वीर्य शौर्य	२. बल-वीरता	मे	९. मैंने वैसे ही
श्रिया	३. धन-सम्पत्ति से	वेलया	१२. तट की भूमि रोके रहती है
उद्धतम् ।	४. उन्मत्त हो रहे और	इव महार्णवः ॥	११. जैसे समुद्र को उसके

श्लोकार्थ—इसलिये बल, वीरता, धन-सम्पत्ति से उन्मत्त हो रहे और सारी पृथ्वी को ग्रस लेने पर तुले हुये इन यादव वंशियों को मैंने वैसे ही रोक रखा है। जैसे समुद्र को उसके तट की भूमि रोके रहती है ॥

त्रिंशः श्लोकः

यद्यसंहृत्य दृप्तानां यदूनां विपुलं कुलम् ।
गन्तास्म्यनेन लोकोऽयमुद्वेलेन विनङ्क्ष्यति ॥३०॥

पदच्छेद— यदि असंहृत्य दृप्तानाम् यदूनाम् विपुलम् कुलम् ।
गन्ता अस्मि अनेन लोकः अयम् उद्वेलेन विनङ्क्ष्यति ॥

शब्दार्थ—

यदि	१. यदि	गन्ता अस्मि	७. चला जाऊँगा तो
असंहृत्य	६. नष्ट किये बिना ही	अनेन	८. इनके द्वारा
दृप्तानाम्	२. मैं घमंडी और उच्छृङ्खल	लोकः	११. सम्पूर्ण लोक
यदूनाम्	३. यदुवंशियों का	अयम्	१०. यह
विपुलम्	४. यह विशाल	उद्वेलेन	९. मर्यादा का उल्लंघन करके
कुलम् ।	५. वंश	विनङ्क्ष्यति ॥	१२. नष्ट कर दिया जायगा

श्लोकार्थ—यदि मैं घमंडी और उच्छृङ्खल यदुवंशियों का यह विशाल वंश नष्ट किये बिना ही चला जाऊँगा तो इनके द्वारा मर्यादा का उल्लंघन करके यह सम्पूर्ण लोक नष्ट कर दिया जायगा ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

इदानीं नाश आरब्धः कुलस्य द्विजशापतः ।
यास्यामि भवनं ब्रह्मन्नेतदन्ते तवानघ ॥३१॥

पदच्छेद—
इदानीम् नाशः आरब्धः कुलस्य द्विज शापतः ।
यस्यामि भवनम् ब्रह्मन् एतत् अन्ते तव अनघ ॥

शब्दार्थ—

इदानीम्	३. अब	यस्यामि	१२. जाऊँगा
नाशः	७. नाश	भवनम्	११. धाम में होकर
आरब्धः	८. प्रारम्भ हो चुका है	ब्रह्मन्	२. ब्रह्मा जी
कुलस्य	६. इस वंश का	एतत् अन्ते	९. इसका अन्त हो जाने पर
द्विज	४. ब्राह्मणों के	तव	१०. मैं आपके
शापतः ।	५. शाप से	अनघ ॥	१. हे निष्पाप !

श्लोकार्थ—हे निष्पाप ब्रह्मा जी ! अब ब्राह्मणों के शाप से इस वंश का नाश प्रारम्भ हो चुका है। इसका अन्त हो जाने पर मैं आपके धाम में होकर जाऊँगा ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इत्युक्तो लोकनाथेन स्वयम्भूः प्रणिपत्य तम् ।
सह देवगणैर्देवः स्वधाम समपद्यत ॥३२॥

पदच्छेद—
इति उक्तः लोक नाथेन स्वयम्भूः प्रणिपत्यतम् ।
सहदेव गणैः देवः स्वधाम सम पद्यतः ॥

शब्दार्थ—

इति	२. इस प्रकार	सह	८. साथ
उक्तः	३. कहे जाने पर	देव गणैः	७. देवताओं के
लोकनाथेन	१. लोकाधिपति भगवान् के द्वारा	देवः	९. ब्रह्मा जी
स्वयम्भूः	४. ब्रह्मा जी ने	स्व	१०. अपने
प्रणिपत्य	६. प्रणाम किया और	धाम	११. धाम को
तम् ।	५. उन्हें	समपद्यत ॥	१२. चले गये

श्लोकार्थ—लोकाधिपति भगवान् के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर ब्रह्मा जी नें उन्हें प्रणाम किया। और देवताओं के साथ ब्रह्मा जी अपने धाम को चले गये ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अथ तस्यां महोत्पातान् द्वारवत्यां समुत्थितान् ।
विलोक्य भगवानाह यदुवृद्धान् समागतान् ॥३३॥

पदच्छेद— अथ तस्याम् महा उत्पातान् द्वारवत्याम् सम् उत्थितान् ।
विलोक्य भगवान् आह यदु वृद्धान् समागतान् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	उनके जाते ही	विलोक्य	७.	उन्हें देख कर
तस्याम्	२.	उस	भगवान्	११.	भगवान् श्रीकृष्ण ने
महा	४.	बड़े-बड़े	आह	१२.	कहा
उत्पातान्	५.	उत्पात	यदु	९.	यदुवंश के
द्वारवत्याम्	३.	द्वारकापुरी में	वृद्धान्	१०.	बड़े-बूढ़े लोगों से
सम उत्थितान् ।	६.	उठ खड़े हुये	समागतान् ॥	८.	आये हुये

श्लोकार्थ—उनके जाते ही उस द्वारकापुरी में बड़े-बड़े उत्पात उठ खड़े हुये । उन्हें देखकर आये हुये यदुवंश के बड़े-बूढ़े लोगों से भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—एते वै सुमहोत्पाता व्युत्तिष्ठन्तीह सर्वतः ।
शापश्च नः कुलस्यासीद् ब्राह्मणेभ्यो दुरत्ययः ॥३४॥

पदच्छेद— एते वै सुमहोत्पाता व्युत्तिष्ठन्ति इह सर्वतः ।
शापः च नः कुलस्य आसीत् ब्राह्मणेभ्यः दुरत्ययः ॥

शब्दार्थ—

एते	३.	ये	शापः च	९.	शाप
वै	४.	जो	नः	१०.	हमारे
सुमहोत्पाता	५.	बड़े-बड़े उत्पात	कुलस्य	११.	कुल को
व्युत्तिष्ठन्ति	६.	हो रहें हैं	आसीत्	१२.	लगा हुआ है
इह	१.	यहाँ द्वारका में	ब्राह्मणेभ्यः	७.	ब्राह्मणों का
सर्वतः ।	२.	सब ओर	दुरत्ययः ॥	८.	न टाला जाने वाला

श्लोकार्थ—यहाँ द्वारका में सब ओर ये जो बड़े-बड़े उत्पात हो रहे हैं । ब्राह्मणों का न टाला जाने वाला शाप हमारे कुल को लगा हुआ है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

न वस्तव्यमिहास्माभिर्जिजीविषुभिरार्यकाः ।
प्रभासं सुमहत्पुण्यं यास्यामोऽद्यैव मा चिरम् ॥३५॥

पदच्छेद— न वस्तव्यम् इह अस्माभिः जिजीविषुभिः आर्यकाः ।
प्रभासम् सुमहत् पुण्यम् यास्यामः अद्यैव मा चिरम् ॥

शब्दार्थ—

न	५.	नहीं	प्रभासम्	११.	प्रभास क्षेत्र को
वस्तव्यम्	६.	रहना चाहिये	सुमहत्	९.	अत्यन्त
इह	४.	अब यहाँ	पुण्यम्	१०.	पवित्र
अस्माभिः	३.	हम लोगों को	यास्यामः	१२.	चला जाना चाहिये
जिजीविषुभिः	२.	जीवन की इच्छा वाले	अद्यैव	७.	हमें आज ही
आर्यकाः ।	१.	हे गुरुजनों !	मा चिरम् ॥	८.	बिना विलम्ब किये

श्लोकार्थ—हे गुरुजनों ! जीवन की इच्छा वाले हम लोगों को अब यहाँ नहीं रहना चाहिये । हमें आज ही बिना बिलम्ब किये अत्यन्त पवित्र प्रभास क्षेत्र को चला जाना चाहिये ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

यत्र स्नात्वा दक्षशापाद् गृहीतो यक्ष्मणोडुराट् ।
विमुक्तः किल्बिषात् सद्यो भेजे भूयः कलोदयम् ॥३६॥

पदच्छेद— यत्र स्नात्वा दक्षशापात् गृहीतः यक्ष्मणः उडुराट् ।
विमुक्तः किल्बिषात् सद्यः भेजे भूयः कला उदयम् ॥

शब्दार्थ—

यत्र	५.	प्रभास क्षेत्र में	विमुक्तः	९.	मुक्त हो गये
स्नात्वा	६.	स्नान करने पर वे	किल्बिषात्	७.	उस पाप जन्य रोग से
दक्ष शापात्	१.	दक्ष प्रजापति के शाप से	सद्यः	८.	तत्काल
गृहीतः	४.	ग्रस लिया, तब	भेजे	१२.	प्राप्त हो गयी
यक्ष्मणः	३.	राजयक्ष्मा रोग ने	भूयः	१०.	और उन्हें पुनः
उडुराट् ।	२.	जब चन्द्रमा को	कला उदयम् ॥	११.	कलाओं की वृद्धि भी

श्लोकार्थ—दक्ष प्रजापति के शाप से जब चन्द्रमा को राजयक्ष्मा रोग ने ग्रस लिया तब प्रभास क्षेत्र में स्नान करने पर वे उस पाप जन्य रोग से तत्काल मुक्त हो गये और उन्हें पुनः कलाओं की वृद्धि भी प्राप्त हो गयी ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

वयं च तस्मिन्नाप्लुत्य तर्पयित्वा पितॄन् सुरान् ।
भोजयित्वोशिजो विप्रान् नानागुणवतान्धसा ॥३७॥

पदच्छेद— वयम् च तस्मिन् न आप्लुत्य तर्पयित्वा पितॄन् सुरान् ।
भोजयित्वा उशिजः विप्रान् नाना गुणवत् अन्धसा ॥

शब्दार्थ—

वयम् च	१. हम लोग भी		भोजयित्वा	१२. खिलायेंगे
तस्मिन्	२. प्रभास क्षेत्र में		उशिजः	१०. सुन्दर-सुन्दर पकवान
न आप्लुत्य	३. स्नान करके		विप्रान्	११. ब्राह्मणों को
तर्पयित्वा	६. तर्पण करेंगे		नाना	७. अनेकों
पितॄन्	५. पितरों का		गुणवत्	८. गुण वाले
सुरान् ।	४. देवता और		अन्धसा ॥	९. अन्न से तैयार

श्लोकार्थ—हम लोग भी प्रभास क्षेत्र में स्नान करके देवता और पितरों का तर्पण करेंगे। और अनेकों गुण वाले अन्न से तैयार सुन्दर-सुन्दर पकवान ब्राह्मणों को खिलायेंगे ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

तेषु दानानि पात्रेषु श्रद्धयोप्त्वा महान्ति वै ।
वृजिनानि तरिष्यामो दानैर्नौभिरिवार्णवम् ॥३८॥

पदच्छेद— तेषु दानानि पात्रेषु श्रद्धया उप्त्वा महान्ति वै ।
वृजनानि तरिष्यामः दानैः नौभिः इव अर्णवम् ॥

शब्दार्थ—

तेषु	१. उन		वृजिनानि	८. बड़े-बड़े पापों को
दानानि	५. दक्षिणा		तरिष्यामः	९. उसी प्रकार पार कर जायेंगे
पात्रेषु	२. सत्पात्र ब्राह्मणों को		दानैः	७. उस दान से
श्रद्धया	३. श्रद्धा पूर्वक		नौभिः	११. जहाज के द्वारा
उप्त्वा	६. देंगे और		इव	१०. जैसे
महान्ति वै ।	४. बड़ी-बड़ी		अर्णवम् ॥	१२. समुद्र पार किया जाता है

श्लोकार्थ—उन सत्पात्र ब्राह्मणों को श्रद्धा पूर्वक बड़ी-बड़ी दक्षिणा देंगे। और उस दान से बड़े-बड़े पापों को उसी प्रकार पार कर जायेंगे। जैसे जहाज के द्वारा समुद्र पार किया जाता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एवं भगवताऽऽदिष्टा यादवाः कुलनन्दन।
गन्तुं कृतधियस्तीर्थं स्यन्दनान् समयूयुजन् ॥३९॥

पदच्छेद— एवम् भगवता आदिष्टाः यादवाः कुल नन्दन।
गन्तुम् कृतधियः तीर्थम् स्यन्दनान् समयू युजन् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५. इस प्रकार	गन्तुम्	८. जाने का
भगवता	३. जब भगवान् श्रीकृष्ण ने	कृतधियः	९. निश्चय किया और
आदिष्टाः	६. आज्ञा दी, तब उन्होंने	तीर्थम्	७. प्रभास क्षेत्र
यादवाः	४. यदुवंशियों को	स्यन्दनान्	१०. वे अपने-अपने रथ
कुल	१. कुल को	समयू	११. सजाने और
नन्दन।	२. आनन्दित करने वाले	युजन् ॥	१२. जोतने लगे

श्लोकार्थ—कुल को आनन्दित करने वाले जब भगवान् श्रीकृष्ण ने यदुवंशियों को इस प्रकार आज्ञा दी, तब उन्होंने प्रभास क्षेत्र जाने का निश्चय किया। और अपने-अपने रथ सजाने और जोतने लगे ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

तन्निरीक्ष्योद्धवो राजन् श्रुत्वा भगवतोदितम्।
दृष्ट्वारिष्टानि घोराणि नित्यं कृष्णमनुव्रतः ॥४०॥

पदच्छेद— तत् निरीक्ष्य उद्धवः राजन् श्रुत्वा भगवतः उदितम्।
दृष्ट्वा अरिष्टानि घोराणि नित्यम् कृष्णम् अनुव्रतः ॥

शब्दार्थ—

तत्	८. यदुवंशियों को तैयारी	दृष्ट्वा	१२. देखा
निरीक्ष्य	९. करते देखा तथा	अरिष्टानि	११. अपशकुनों को भी
उद्धवः	५. उद्धव जी ने	घोराणि	१०. अत्यन्त घोर
राजन्	१. हे परीक्षित !	नित्यम्	३. सदा
श्रुत्वा	७. सुना भगवान् श्रीकृष्ण के	कृष्णम्	२. श्रीकृष्ण की
भगवत् उदितम्।	६. वचनों को	अनुव्रतः ॥	४. सेवा करने वाले

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! श्रीकृष्ण की सदा सेवा करने वाले उद्धव जी ने भगवान् श्रीकृष्ण के वचनों को सुना। और यदुवंशियों को तैयारी करते देखा। तथा अत्यन्त घोर अपशकुनों को भी देखा ॥

एकचत्वारिंश: श्लोकः

विविक्त उपसङ्गम्य जगतामीश्वरेश्वरम् ।
प्रणम्य शिरसा पादौ प्राञ्जलिस्तमभाषत ॥४१॥

पदच्छेद— विविक्ते उपसङ्गम्य जगताम् ईश्वर ईश्वरम् ।
प्रणम्य शिरसा पादौ प्राञ्जलिः तम् अभाषत ॥

शब्दार्थ—

विविक्ते	४. एकान्त में	प्रणम्य	८. प्रणाम किया और
उपसङ्गम्य	५. गये और	शिरसा	७. सिर रख कर
जगताम्	१. वे जगत् के	पादौ	६. उनके चरणों पर
ईश्वर	२. एक मात्र अधिपति	प्राञ्जलिः	९. हाथ जोड़कर
ईश्वरम् ।	३. भगवान् श्रीकृष्ण के पास	तम् अभाषत ॥	१०. उनसे बोले ।

श्लोकार्थ—वे जगत के एक मात्र अधिपति भगवान् श्रीकृष्ण के पास एकान्त में गये । और उनके चरणों पर सिर रखकर प्रणाम किया और हाथ जोड़कर उनसे बोले ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—**देवदेवेश योगेश पुण्यश्रवणकीर्तन ।**
संहृत्यैतत् कुलं नूनं लोकं सन्त्यक्ष्यते भवान् ।
विप्रशापं समर्थोऽपि प्रत्यहन्न यदीश्वरः ॥४२॥

पदच्छेद— देव देवेश योगेश पुण्य श्रवण कीर्तन ।
संहृत्य एतत् कुलम् नूनम् लोकम् सन्त्यक्षते भवान् ।
विप्रशापम् समर्थः अपि प्रत्यहन्न न यत् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

देव-देवेश	२. देवाधि देवों के भी अधीश्वर हैं	लोकम्	१३. इस लोक का
योगेश	१. हे योगेश्वर ! आप	सन्त्यक्ष्यते	१४. परित्याग कर देंगे
पुण्य	४. जीव पवित्र हो जाता है	भवान् ।	१०. आप
श्रवण कीर्तन ।	३. आपकी लीला के श्रवण कीर्तन से	विप्रशापम्	७. ब्राह्मणों के शाप को
संहृत्य	१२. संहार करके	समर्थः अपि	६. और समर्थ होने पर भी
एतत् कुलम्	११. इस यदुवंश का	प्रत्यहन् न	८. नष्ट नहीं किया तब
नूनम् ।	९. निश्चय ही	यत् ईश्वरः ॥	५. यदि आपने ईश्वर

श्लोकार्थ—हे योगेश्वर ! आप देवाधिदेवों के भी अधीश्वर हैं । आपकी लीला के श्रवण कीर्तन से जीव पवित्र हो जाता है । यदि आपने ईश्वर और समर्थ होने पर भी ब्राह्मणों के शाप को नष्ट नहीं किया, तब निश्चय ही आप इस यदुवंश का संहार करके इस लोक का परित्याग कर देंगे ॥

त्रियचत्वारिंशः श्लोकः

नाहं तवाङ्घ्रिकमलं क्षणार्धमपि केशव ।
त्यक्तुं समुत्सहे नाथ स्वधाम नय मामपि ॥४३॥

पदच्छेद— न अहम् तवअङ्घ्रि कमलम् क्षण अर्धम् अपि केशव ।
त्यक्तुम् समुत्सहे नाथ स्वधाम नय माम् अपि ॥

शब्दार्थ—

न	८. नहीं	त्यक्तुम्	७. छोड़ने में
अहम्	२. मैं	समुत्सहे	९. समर्थ हूँ अतः
तवअङ्घ्रि	५. आपके चरण	नाथ	१०. हे नाथ !
कमलम्	६. कमलों को	स्वधाम	१३. अपने साथ अपने धाम
क्षण अर्धम्	३. आधे-क्षण के लिये	नय	१४. ले चलिये
अपि	४. भी	माम्	११. आप मुझे
केशव ।	१. हे श्याम सुन्दर !	अपि ॥	१२. भी

श्लोकार्थ—हे श्याम सुन्दर ! मैं आधे क्षण के लिये भी आपके चरण कमलों को छोड़ने में समर्थ नहीं हैं । अतः हे नाथ ! आप मुझे भी अपने साथ अपने धाम ले चलिये ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

तव विक्रीडितं कृष्ण नृणां परममङ्गलम् ।
कर्णपीयूषमास्वाद्य त्यजत्यन्यस्पृहां जनः ॥४४॥

पदच्छेद— तव विक्रीडितम् कृष्ण नृणाम् परम मङ्गलम् ।
कर्ण पीयूषम् अस्वाद्य त्यजति अन्य स्पृहाम् जनः ॥

शब्दार्थ—

तव	२. आपकी	कर्णपीयूषम्	७. कानों के लिये अमृत स्वरूप है
विक्रीडितम्	३. लीला	अस्वाद्य	९. उसका आस्वादन करके
कृष्ण	१. हे श्रीकृष्ण !	त्यजति	१२. त्याग कर देते हैं
नृणाम्	४. मनुष्यों के लिये	अन्य	१०. अन्य समस्त
परम	५. परम	स्पृहाम्	११. लालसाओं को
मङ्गलम् ।	६. मङ्गलमयी और	जनः ॥	८. भक्त जन

श्लोकार्थ—हे श्रीकृष्ण ! आपकी लीला मनुष्यों के लिये परम मङ्गलमयी और कानों के लिये अमृत स्वरूप है । भक्तजन उसका आस्वादन करके अन्य समस्त लालसाओं का त्याग कर देते हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

शय्यासनाटनस्थानस्नानक्रीडाशनादिषु ।
कथं त्वां प्रियमात्मानं वयं भक्तास्त्यजेमहि ॥४५॥

पदच्छेद— शय्या आसन अटन स्थान स्नान क्रीडा आसन आदिषु ।
कथम् त्वाम् प्रियम् आत्मानम् वयम् भक्ताः त्यजे महि ॥

शब्दार्थ—

शय्या	१. सोते-जागते	कथम्	१३. कैसे
आसन	२. उठने-बैठते	त्वाम्	१०. आपका
अटन	३. घूमते-फिरते	प्रियम्	८. फिर अपने प्रियतम
स्थान	७. आपके साथ रहे हैं	आत्मानम्	९. आत्म स्वरूप
स्नान क्रीडा	४. स्नान-खेल और	वयम्	११. हम
आसन	५. भोजन	भक्ताः	१२. भक्तजन
आदिषु ।	६. आदि में	त्यजेमहि ॥	१४. परित्याग कर सकते हैं

श्लोकार्थ—हे श्रीकृष्ण ! सोते-जागते, उठते-बैठते, घूमते-फिरते, स्नान खेल और भोजन आदि में आपके साथ रहे हैं। फिर अपने प्रियतम आत्म स्वरूप आपका हम भक्तजन कैसे पारित्याग कर सकते हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

त्वयोपभुक्तस्रग्गन्धवासोऽलङ्कारचर्चिताः ।
उच्छिष्टभोजिनो दासास्तव मायां जयेमहि ॥४६॥

पदच्छेद— त्वया उपभुक्त स्रक्गन्ध वासः अलङ्कार चर्चिताः ।
उच्छिष्ट भोजिनः दासाः तव मायाम् जयेमहि ॥

शब्दार्थ—

त्वया	१. हमने आपकी	उच्छिष्ट	७. हम आपका जूठन
उपभुक्त	२. धारण की हुई	भोजिनः	८. खाने वाले
स्रक्गन्ध	३. माला पहनी चन्दन लगाया	दासाः	९. सेवक हैं । अतः
वासः	४. वस्त्र पहने	तव	१०. हम आपकी
अलङ्कार	५. गहनों से	मायाम्	११. माया पर
चर्चिताः ।	६. अपने आपको सजाया	जयेमहि ॥	१२. विजय प्राप्त कर लेंगे

श्लोकार्थ—हमने आपकी धारण की हुई माला पहनी, चन्दन लगाया, वस्त्र पहने गहनों से अपने को सजाया। हम आपका जूठन खाने वाले सेवक हैं। अतः हम आपकी माया पर विजय प्राप्त कर लेंगे ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

वातरशना य ऋषयः श्रमणा ऊर्ध्वमन्थिनः ।
ब्रह्माख्यं धाम ते यान्ति शान्ताः संन्यासिनोऽमलाः ॥४७॥

पदच्छेद— वातरशना ये ऋषयः श्रमणा ऊर्ध्वं मन्थिनः ।
ब्रह्माख्यम् धाम ते यान्ति शान्ताः सन्यासिनः अमलाः ॥

शब्दार्थ—

वातरशना	३. दिगम्बर रह कर और	ब्रह्माख्यम्	११. आपके ब्रह्म-नामक
ये	१. जो	धाम	१२. धाम को
ऋषयः	२. ऋषि	ते	७. वे
श्रमणा	६. परिश्रम करते हैं	यान्ति	१३. प्राप्त होते हैं
ऊर्ध्वं	४. नैष्ठिक-ब्रह्मचारी होकर	शान्ताः	८. शान्त एवम्
मन्थिनः ।	५. अध्यात्म विद्या के लिये	संन्यासिनः	१०. संन्यासी जन
		अमलाः ॥	९. निर्मल चित्त वाले

श्लोकार्थ—जो ऋषि दिगम्बर रह कर और नैष्ठिक ब्रह्मचारी होकर अध्यात्मविद्या के लिये परिश्रम करते हैं। वे शान्त एवम् निर्मल चित्त वाले संन्यासी जन आपके ब्रह्म नामक धाम को प्राप्त होते हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

वयं त्विह महायोगिन् भ्रमन्तः कर्मवर्त्मसु ।
त्वद्वार्तया तरिष्यामस्तावकैर्दुस्तरं तमः ॥४८॥

पदच्छेद— वयम् तु इह महायोगिन भ्रमन्तः कर्म वर्त्मसु ।
त्वत् वर्तया तरिष्यामः तावकैः दुस्तरम् तमः ॥

शब्दार्थ—

वयम् तु	२. हम लोग	त्वत्	७. आपकी
इह	३. इस लोक में	वार्तया	८. चर्चा करते हुये
महायोगिन्	१. हे महा योगेश्वर !	तरिष्यामः	१२. पार कर लेंगे
भ्रमन्तः	६. भटकते हुये	तावकैः	९. आपकी
कर्म	४. कर्म	दुस्तरम्	१०. दुस्तर
वर्त्मसु ।	५. मार्ग में	तमः ॥	११. माया को

श्लोकार्थ—हे महायोगेश्वर ! हम लोग इस लोक में कर्म मार्ग में भटकते हुये। आपकी चर्चा करते हुये आपकी दुस्तर माया को पार लेंगे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

स्मरन्तः कीर्तयन्तस्ते कृतानि गदितानि च ।
गत्युत्स्मितेक्षणक्ष्वेलि यन्नृलोकविडम्बनम् ॥४९॥

पदच्छेद— स्मरन्तः कीर्तयन्तः ते कृतानि गदितानि च ।
गति उत्स्मित ईक्षण क्ष्वेमि यत् नृलोक विडम्बनम् ॥

शब्दार्थ—

स्मरन्तः	११. स्मरण और	गतिउत्	१.	आपकी चाल-ढाल
कीर्तयन्तः	१२. कीर्तन करते हुये हम उसमें लीन हो जायेंगे	स्मित	२.	मुसकान
ते	७. आपकी उन	ईक्षण	३.	चितवन
कृतानि	८. लीलाओं	क्ष्वेमि	४.	हास-परिहास और
गदितानि	१०. वचनों का	यत् नृलोक	५.	जो भी अपने मनुष्य लोक में
च ।	९. और	विडम्बनम् ॥	६.	लीलायें की हैं

श्लोकार्थ—आपकी चाल-ढाल मुसकान और चितवन हास-परिहास और जो भी आपने मनुष्य लोक में लीलायें की हैं। आपकी उन लीलाओं और वचनों का स्मरण और कीर्तन करते हुये हम उसमें लीन हो जायेंगे ॥

पञ्चाशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—एवं विज्ञापितो राजन् भगवान् देवकीसुतः ।
एकान्तिनं प्रियं भृत्यमुद्धवं समभाषत ॥५०॥

पदच्छेद— एवम् विज्ञापितः राजन् भगवान् देवकी सुतः ।
एकान्तिनम् प्रियम् भृत्यम् उद्धवम् समभाषत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५. जब इस प्रकार	एकान्तिनम्	७.	अनन्य
विज्ञापितः	६. प्रार्थना की, तब	प्रियम्	८.	प्रेमी
राजन्	१. हे परीक्षित !	भृत्यम्	९.	सखा एवं सेवक
भगवान्	४. भगवान से उद्धव जी ने	उद्धवम्	१०.	उद्धव जी से उन्होंने
देवकी	२. देवकी	समभाषत ॥	११.	इस प्रकार कहा ।
सुतः ।	३. नन्दन			

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! देवकी नन्दन भगवान् से उद्धव जी ने जब इस प्रकार प्रार्थना की, तब अनन्य प्रेमी सखा एवम् सेवक उद्धव जी से उन्होंने इस प्रकार कहा ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे षष्ठः अध्यायः ॥ ६ ॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

सप्तमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—यदात्थ मां महाभाग तच्चिकीर्षितमेव मे।
ब्रह्मा भवो लोकपालाः स्वर्वासं मेऽभिकाङ्क्षिणः ॥१॥

पदच्छेद— यत् आत्थ माम् महाभागवतत् चिकीर्षितम् एव मे।
ब्रह्मामवः लोक पालाः स्वः वासम् मे अभिकाङ्क्षिणः ॥

शब्दार्थ—

यत् आत्थ	३. जो कुछ कहा है		ब्रह्मामवः	७. ब्रह्मा-शङ्कर
माम्	२. तुमने मुझसे		लोक	८. इन्द्रादि लोक
महाभाग	१. हे महाभाग्यवान उद्धव !		पालाः	९. पाल भी
तत्	४. वह		स्वः वासम्	१२. उनके लोकों में होकर अपने धाम को जाऊँ
चिकीर्षितम्	६. करना चाहता हूँ		मे	११. मैं
एव मे।	५. ही मैं		अभिकाङ्क्षिणः	१०. यही चाहते हैं कि

श्लोकार्थ—हे महाभाग्यवान उद्धव ! तुमने मुझसे जो कुछ कहा है, वह ही मैं करना चाहता हूँ। ब्रह्मा शङ्कर इन्द्रादि लोक पाल भी यही चाहते हैं कि मैं उनके लोकों में होकर अपने धाम को जाऊँ ॥

द्वितीयः श्लोकः

मया निष्पादितं ह्यत्र देवकार्यमशेषतः।
यदर्थमवतीर्णोऽहमंशेन ब्रह्मणार्थितः ॥२॥

पदच्छेद— मयानिष्पादितम् हि अत्र देवकार्यम् अशेषतः।
यत् अर्थम् अवतीर्णः अहम् अंशेन ब्रह्मणाः अर्थितः ॥

शब्दार्थ—

मया	२. मैं		यत् अर्थम्	६. इसी कार्य के लिये
निष्पादितम्	५. पूर्ण कर चुका		अवतीर्णः	१०. अवतीर्ण हुआ था
हि अत्र	१. देव कार्यम्		अहम्	७. मैं
देवकार्यम्	३. देवताओं का		अंशेन	९. बलराम जी के साथ
अशेषतः।	४. समस्त कार्य		ब्रह्मणाअर्थितः ॥	८. ब्रह्मा जी की प्रार्थना से

श्लोकार्थ—पृथ्वी पर मैं देवताओं का समस्त कार्य पूर्ण कर चुका। इसी कार्य के लिये मैं ब्रह्मा जी की प्रार्थना से बलराम जी के साथ अवतीर्ण हुआ था ॥

तृतीयः श्लोकः

कुलं वै शापनिर्दग्धं नङ्क्ष्यत्यन्योन्यविग्रहात् ।
समुद्रः सप्तमेऽह्न्येतां पुरीं च प्लावयिष्यति ॥३॥

पदच्छेद— कुलम् वै शाप निर्दग्धम् नङ्क्षयति अन्योन्य विग्रहात् ।
समुद्रः सप्तमे अह्नि एताम् पुरीम् च प्लानयिष्यति ॥

शब्दार्थ—

कुलम् वै	१. अब यह यदुवंश	समुद्रः	८. समुद्र
शाप	२. जो ब्राह्मणों के शाप से	सप्तमे अह्नि	९. आज से सातवें दिन
निर्दग्धम्	३. भस्म हो चुका है	एताम्	१०. इस
नङ्क्षयति	६. नष्ट हो जायेगा	पुरीम्	११. द्वारकापुरी को
अन्योन्य	४. पारस्परिक	च	७. और
विग्रहात्	५. फूट और युद्ध से	प्लावयिष्यति ॥	१२. डुबा देगा

श्लोकार्थ—अब यह यदुवंश जो ब्राह्मणों के शाप से भस्म हो चुका है। पारस्परिक फूट और युद्ध से नष्ट हो जायेगा। और समुद्र आज से सातवें दिन इस द्वारकापुरी को डुबा देगा ॥

चतुर्थः श्लोकः

यर्ह्येवायं मया त्यक्तो लोकोऽयं नष्टमङ्गलः ।
भविष्यत्यचिरात् साधो कलिनापि निराकृतः ॥४॥

पदच्छेद— यर्हि वायम् मया त्यक्त लोकः क्षयम् नष्ट मङ्गलः ।
भविष्यति अचिरात् साधो कलिना अपि निराकृतः ॥

शब्दार्थ—

यर्हि वायम्	३. जब ही यह	भविष्यति	१३. हो जायेगा
मया	२. मेरे द्वारा	अचिरात्	९. थोड़े ही दिनों में
त्यक्त	५. छोड़ दिया जायेगा	साधो	१. हे उद्धव !
लोकः	४. लोक	कलिना	१०. यहाँ कलियुग का
अयम्	६. तभी इसके	अपि	११. भी
नष्ट	८. नष्ट हो जायेंगे और	निराकृतः ॥	१२. साम्राज्य
मङ्गलः ।	७. सारे मङ्गल		

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! मेरे द्वारा जब ही यह लोक छोड़ दिया जायेगा। तभी इसके सारे मङ्गल नष्ट हो जायेंगे। और थोड़े ही दिनों में यहाँ कलियुग का भी साम्राज्य हो जायेगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

न वस्तव्यं त्वयैवेह मया त्यक्ते महीतले।
जनोऽधर्मरुचिर्भद्र भविष्यति कलौ युगे ॥५॥

पदच्छेद— न वस्तव्यम् त्वयैवेह मया त्यक्ते महीतले।
जनः अधर्म रुचिः भद्र भविष्यति कलौयुगे ॥

शब्दार्थ—

न वस्तव्यम्	५. नहीं रहना चाहिये	जनः	८. अधिकांश लोगों की
त्वयैवेह	४. यहाँ आपको भी	अधर्म रुचिः	९. रुचि अधर्म में
मया	१. मेरे द्वारा	भद्र	६. क्योंकि हे साधु उद्धव !
त्यक्ते	३. छोड़ दिये जाने पर	भविष्यति	१०. होगी
महीतले।	२. इस पृथ्वी लोक को	कलौयुगे ॥	७. कलियुग में

श्लोकार्थ—मेरे द्वारा इस पृथ्वी लोक को छोड़ दिये जाने पर यहाँ आपको भी नहीं रहना चाहिये। क्योंकि हे साधु उद्धव ! कलियुग में अधिकांश लोगों की रुचि अधर्म में होगी ॥

षष्ठः श्लोकः

त्वं तु सर्वं परित्यज्य स्नेहं स्वजनबन्धुषु।
मय्यावेश्य मनः सम्यक् समदृग् विचरस्व गाम् ॥६॥

पदच्छेद— त्वम् तुसर्वम् परित्यज्य स्नेहम् स्वजन बन्धुषु।
मयि आवेश्य मनः सम्यक् समदृक् विचरस्व गाम् ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	१. अब आप	मयि	९. मुझमें
तु सर्वम्	४. सबका	आवेश्य	१०. लगाकर
परित्यज्य	६. छोड़ दीजिये और	मनः	७. अपने मन को
स्नेहम्	५. स्नेह-सम्बन्ध	सम्यक्	८. भली-भाँति
स्वजन	२. आत्मीय स्वजन और	समदृक्	११. समदृष्टि से
बन्धुषु।	३. बन्धु-बान्धवों आदि	विचरस्व	१३. स्वच्छन्द विचरण करो
		गाम् ॥	१२. पृथ्वी में

श्लोकार्थ—अब आप आत्मीय स्वजन और बन्धु बान्धवों आदि सबका स्नेह सम्बन्ध छोड़ दीजिये। और अपने मन को भली-भाँति मुझमें लगाकर समदृष्टि से पृथ्वी पर स्वच्छन्द विचरण करो ॥

सप्तमः श्लोकः

यदिदं मनसा वाचा चक्षुर्भ्यां श्रवणादिभिः ।
नश्वरं गृह्यमाणं च विद्धि मायामनोमयम् ।।७।।

पदच्छेद— यत् इदम् मनसा वाचा चक्षुर्भ्याम् श्रवण आदिभिः ।
नश्वरम् गृह्यमाणम् च विद्धि माया मनो मयम् ।।

शब्दार्थ—

यत्	२. जो कुछ	नश्वरम्	९. वह सब नश्वर
इदम्	१. इस जगत में	गृह्यमाणम्	८. गृहण किया जाता है
मनसा	३. मन	च	१०. और
वाचा	४. वाणी	विद्धि	१२. समझो वह
चक्षुर्भ्याम्	५. नेत्र और	माया	११. माया मय
श्रवण	६. कान	मनो	१३. केवल मन का
आदिभिः ।	७. आदि के द्वारा	मयम् ।।	१४. विलास है

श्लोकार्थ—इस जगत में जो कुछ मन-वाणी, नेत्र और कान आदि के द्वारा गृहण किया जाता है। वह सब नश्वर और माया समझो ! वह केवल मन का विलास है ।।

अष्टमः श्लोकः

पुंसोऽयुक्तस्य नानार्थो भ्रमः स गुणदोषभाक् ।
कर्माकर्मविकर्मेति गुणदोषधियो भिदा ।।८।।

पदच्छेद— पुंसः अयुक्तस्य नाना अर्थाः भ्रमः सगुण दोषभाक् ।
कर्म अकर्म विकर्म इतिगुण दोष धियाः भिदा ।।

शब्दार्थ—

पुंसः	२. पुरुष को ही	कर्म	१२. कर्म
अयुक्तस्य	१. अशान्त	अकर्म	१३. अकर्म और
नाना	३. अनेक	विकर्म	१४. विकर्म का भेद होते हैं
अर्थाः	४. वस्तुयें मालूम होती हैं	इतिगुण	१०. गुण इत्यादि
भ्रमः	५. भ्रम होने पर ही	दोष	९. दोष
सगुण	६. उसे गुण और	धियाः	८. उसकी बुद्धि में
दोषभाक् ।	७. दोष की कल्पना होती है	भिदा ।।	११. भेद तथा

श्लोकार्थ—अशान्त पुरुष को ही अनेक वस्तुयें मालूम होती है। भ्रम होने पर ही उसे गुण और दोष की कल्पना होती है। उसकी बुद्धि में दोष गुण इत्यादि भेद तथा कर्म, अकर्म और विकर्म का भेद होते हैं ।।

नवमः श्लोकः

तस्माद् युक्तेन्द्रियग्रामो युक्तचित्त इदं जगत्।
आत्मनीक्षस्व विततमात्मानं मय्यधीश्वरे ॥९॥

पदच्छेद— तस्मात् युक्त इन्द्रिय ग्रामः युक्त चित्तः इदम् जगत्।
आत्मनि ईक्षस्व विततम् आत्मानम् मयि अधीश्वरे ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. इसलिये	आत्मनि	७. अपने आत्मा में
युक्त	४. वश में करके और	ईक्षस्व	९. अनुभव करो और
इन्द्रिय	२. इन्द्रिय	विततम्	८. फैला हुआ
ग्रामः	३. समुदाय को	आत्मानम्	१०. आत्मा को
युक्त चित्तः	५. मन को वश में करके	मयि	११. मुझ
इदम् जगत्।	६. इस जगत को	अधीश्वरे ॥	१२. सर्वात्मा ब्रह्म समझो

श्लोकार्थ—इसलिये हे उद्धव! इन्द्रिय समुदाय को वश में करके और मन को वश में करके इस जगत को अपने आत्मा में फैला हुआ अनुभव करो और आत्मा को मुझ सर्वात्मा ब्रह्म समझो ॥

दशमः श्लोकः

ज्ञानविज्ञानसंयुक्त आत्मभूतः शरीरिणाम्।
आत्मानुभवतुष्टात्मा नान्तरायैर्विहन्यसे ॥१०॥

पदच्छेद— ज्ञान विज्ञान संयुक्त आत्मभूतः शरीरिणाम्।
आत्म अनुभव तुष्ट आत्मा न अन्तरायैः विहन्यसे ॥

शब्दार्थ—

ज्ञान	१. वेदों के ज्ञान और	आत्म	६. आत्म स्वरूप की
विज्ञान	२. अनुभव रूप विज्ञान से	अनुभव	७. अनुभूति से
संयुक्त	३. सम्पन्न होकर	तुष्ट आत्मा	८. शान्त होकर
आत्मभूतः	५. आत्मा हो जायेंगे (और)	न	११. नहीं हो सकोगे
शरीरिणाम्।	४. तुम शरीर धारियों के	अन्तरायैः	९. फिर विघ्नों से
		विहन्यसे ॥	१०. पीड़ित

श्लोकार्थ—वेदों के ज्ञान और अनुभव रूप विज्ञान से सम्पन्न होकर तुम शरीर धारियों के आत्मा हो जाओगे। और आत्म स्वरूप को अनुभूति से शान्त होकर फिर विघ्नों से पीड़ित नहीं हो सकोगे ॥

एकादशः श्लोकः

दोषबुद्ध्योभयातीतो निषेधान्न निवर्तते ।
गुणबुद्ध्या च विहितं न करोति यथार्भकः ॥११॥

पदच्छेद— दोष बुद्धया उभय अतीतः निषेधात् न निवर्तते ।
गुण बुद्धया च विहितम् न करोति यथा अर्भकः ॥

शब्दार्थ—

दोष बुद्धया	५. दोष बुद्धि के कारण	गुण-बुद्धया	११.	गुण बुद्धि से
उभय	१. गुण और दोष बुद्धि से	च	९.	और
अतीतः	२. अलग हुआ पुरुष	विहितम्	१०.	विहित कर्म
निषेधात्	६. निषिद्ध कर्म से	न करोति	१२.	नहीं करता है
न	७. नहीं	यथा	४.	समान
निवर्तते ।	८. निवृत्त होता है	अर्भकः ॥	३.	बालक के

श्लोकार्थ—गुण और दोष बुद्धि से अलग हुआ पुरुष बालक के समान दोष-बुद्धि के कारण विहित कर्म से निवृत्त नहीं होता है । और विहित कर्म, गुण-बुद्धि से नहीं करता है ।

द्वादशः श्लोकः

सर्वभूतसुहृच्छान्तो ज्ञानविज्ञाननिश्चयः ।
पश्यन् मदात्मकं विश्वं न विपद्येत वै पुनः ॥१२॥

पदच्छेद— सर्वभूत सुहृत् शान्तः ज्ञान विज्ञान निश्चयः ।
पश्यन् मत् आत्मकम् विश्वम् न विपद्येत वै पुनः ॥

शब्दार्थ—

सर्वभूत	१. समस्त भूत प्राणियों के	पश्यन्	१०.	देखता हुआ
सुहृत्	२. हितैषी	मत्	८.	मेरे
शान्तः	३. शान्त चित्त	आत्मकम्	९.	स्वरूप में
ज्ञान	४. ज्ञान और	विश्वम्	७.	समस्त जगत को
विज्ञान	५. विज्ञान का	न विपद्येत	१२.	जन्म मरण के चक्कर में नहीं पड़ता है
निश्चयः ।	६. निश्चय कर लेने वाला पुरुष	वै पुनः ॥	११.	फिर कभी

श्लोकार्थ—समस्त भूत प्राणियों के हितैषी शान्त चित्त ज्ञान और विज्ञान का निश्चय कर लेने वाला पुरुष समस्त जगत को मेरे स्वरूप में देखता हुआ फिर कभी जन्म-मरण के चक्कर में नहीं पड़ता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इत्यादिष्टो भगवता महाभागवतो नृप ।
उद्धवः प्रणिपत्याह तत्त्वजिज्ञासुरच्युतम् ॥१३॥

पदच्छेद— इति आदिष्टः भगवता महा भागवतः नृप ।
उद्धवः प्रणिपत्य आह तत्त्व जिज्ञासुः अच्युतम् ॥

शब्दार्थ—

इति	५. इस प्रकार	उद्धवः	९. उद्धव जी ने
आदिष्टः	६. आदेश दिया, तब	प्रणिपत्य	११. प्रणाम करके
भगवता	४. जब भगवान् श्रीकृष्ण ने	आह	१२. कहा
महा	३. परम प्रेमी उद्धव जी को	तत्त्व	७. तत्त्वों को
भागवतः	२. भगवान् के	जिज्ञासुः	८. जानने के इच्छुक
नृपः ।	१. हे परीक्षित !	अच्युतम् ॥	१०. श्रीकृष्ण को

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! भगवान् के परम प्रेमी उद्धव जी को जब भगवान् श्रीकृष्ण ने इस प्रकार आदेश दिया, तब तत्त्वों को जानने के इच्छुक उद्धव जी ने श्रीकृष्ण को प्रणाम करके कहा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

उद्धव उवाच— योगेश योगविन्यास योगात्मन् योगसम्भव ।
निःश्रेयसाय मे प्रोक्तस्त्यागः संन्यासलक्षणः ॥१४॥

पदच्छेद— योगेश योग विन्यास योग आत्मन् योग सम्भव ।
निःश्रेयसाय मे प्रोक्तः त्यागः संन्यास लक्षणः ॥

शब्दार्थ—

योगेश	६. योगेश्वर हैं	निःश्रेयसाय	८. कल्याण के लिये
योग	१. हे प्रभो ! आप योगियों की	मे	७. आपने मेरे
विन्यास	२. गुप्त पूंजी	प्रोक्तः	१२. उपदेश किया है
योग आत्मन्	३. योग स्वरूप	त्यागः	११. त्याग का
योग	४. योगों के	संन्यास	९. संन्यास
सम्भव ।	५. कारण और	लक्षणः ॥	१०. रूप

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप योगियों की गुप्त पूंजी योग स्वरूप योगों के कारण और योगेश्वर हैं आपने मेरे कल्याण के लिये संन्यास रूप त्याग का उपदेश किया है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

त्यागोऽयं दुष्करो भूमन् कामानां विषयात्मभिः ।
सुतरां त्वयि सर्वात्मन्नभक्तैरिति मे मतिः ॥१५॥

पदच्छेद— त्यागः अयम् दुष्करः भूमन् कामानाम् विषय आत्मभिः ।
सुतराम् त्वयि सर्वात्मना अभक्तैः इति मे मतिः ॥

शब्दार्थ—

त्यागः	६. त्याग	सुतराम्	११. यह त्याग अत्यन्त कठिन है
अयम्	५. यह	त्वयि	९. जो आपसे
दुष्करः	७. अत्यन्त कठिन है	सर्वात्मना	८. हे सर्वस्वरूप !
भूमन्	१. हे अनन्त !	अभक्तैः	१०. विमुख हैं उनके लिये
कामानाम्	२. विषयों का चिंतन करने वाले	इति	१२. ऐसा
विषय	३. विषय स्वरूप	मे	१३. मेरा
आत्मभिः ।	४. सांसारिक लोगों के लिये	मतिः ॥	१४. निश्चय है

श्लोकार्थ—हे अनन्त ! विषयों का चिन्तन करने वाले विषय स्वरूप सांसारिक लोगों के लिये यह त्याग अत्यन्त कठिन है। हे सर्वस्वरूप ! जो आपसे विमुख हैं उनके लिये यह त्याग अत्यन्त कठिन है। ऐसा मेरा निश्चय है ॥

षोडशः श्लोकः

सोऽहं ममाहमिति मूढमतिर्विगाढस्त्वन्मायया विरचितात्मनि सानुबन्धे ।
तत्त्वञ्जसा निगदितं भवता यथाहं संसाधयामि भगवन्ननुशाधि भृत्यम् ॥१६॥

पदच्छेद—सः अयम् मम् अहम् इतिमूढमतिः विगाढः त्वत् मायया विरचित् आत्मनि सः अनुबन्धे ।
तत् तु अञ्जसा निगदितम् भवता यथा अहम् संसाधयामि भगवन् अनुशाधि भृत्यम् ॥

शब्दार्थ—

सः अयम्	१. मैं ऐसा हूँ	तत् तु अञ्जसा	१२. उसे इस प्रकार सरलतापूर्वक
मम् अहम्	२. यह मेरा है "यह मैं हूँ"	निगदितम्	११. उपदेश किया है
इतिमूढमतिः	३. इस प्रकार मूढ़ बुद्धि होकर	भवता	१०. आपने जिस संन्यास का
विगाढः	८. डूब रहा हूँ	यथा अहम्	१५. जिससे मैं
त्वत् मायया	४. आपकी माया के द्वारा	संसाधयामि	१६. सुगमतापूर्वक उसका साधन कर सकूँ
विरचित्	५. रचित	भगवन्	९. अतः हे भगवन् !
आत्मनि	६. देह सम्बन्धी	अनुशाधि	१४. समझाइये
सः अनुबन्धे ।	७. पुत्रादि सम्बन्धों	भृत्यम् ॥	१३. मुझ सेवक को

श्लोकार्थ—मैं ऐसा हूँ। यह मेरा है, "यह मैं हूँ" इस प्रकार मूढ बुद्धि होकर आपकी माया के द्वारा रचित देह सम्बन्धी पुत्रादि सम्बन्धों में डूब रहा हूँ। अतः हे भगवन् ! आपने जिस संन्यास का उपदेश किया है। उसे इस प्रकार सरलता पूर्वक मुझ सेवक को समझाइये। जिससे मैं सुगमता पूर्वक उसका साधन कर सकूँ ॥

सप्तदशः श्लोकः

सत्यस्य ते स्वदृश आत्मन आत्मनोऽन्यं वक्तारमीश विबुधेष्वपि नानुचक्षे।
सर्वे विमोहितधियस्तव माययेमे ब्रह्मादयस्तनुभृतो बहिरर्थभावाः ॥१७॥

पदच्छेद—सत्यस्य ते स्वदृश आत्मन आत्मनः अन्यम् वक्तारम् ईश विबुधेषु अपि न अनुचक्षे ।
सर्वे विमोहितधियः तव मायया इमे ब्रह्मा आदयः तनु भृतः बहिः अर्थ भावाः ॥

शब्दार्थ—

सत्यस्य ते	२.	आप तीनों कालों से अबाधित	सर्वे	१३.	सब
स्वदृश	३.	स्वयं प्रकाश	विमोहितधियः	१६.	बुद्धि मोहित हो गयी है
आत्मन	४.	आत्म स्वरूप हैं	तव मायया	९.	आपकी माया के कारण
आत्मनः अन्यम्	५.	आपके अतिरिक्त आत्मतत्त्वका	इमे	१२.	इन
वक्तारम्	६.	उपदेश करने वाला	ब्रह्मा आदयः	१४.	ब्रह्मा आदि
ईश	१.	हे प्रभो !	तनु भृतः	१५.	शरीरधारी (देवताओं को भी
विबुधेषु अपि	७.	देवताओं में भी	बहिः	१०.	बाहरी
न अनुचक्षे ।	८.	कोई नहीं दिखाई देता है	अर्थ भावाः ॥	११.	विषयों को सत्य मानने वाले

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! आप तीनों कालों से अबाधित स्वयं प्रकाश आत्म स्वरूप हैं । आपके अतिरिक्त आत्म तत्त्व का उपदेश करने वाला देवताओं में भी कोई नहीं दिखाई देता है । आपकी माया के कारण बाहरी विषयों को सत्य मानने वाले इन सब ब्रह्मा आदि शरीरधारी देवताओं की भी बुद्धि मोहित हो गयी है ॥

अष्टादशः श्लोकः

तस्माद् भवन्तमनवद्यमनन्तपारं सर्वज्ञमीश्वरमकुण्ठविकुण्ठधिष्ण्यम् ।
निर्विण्णधीरहमु ह वृजिनाभितप्तो नारायणं नरसखं शरणं प्रपद्ये ॥१८॥

पदच्छेद—तस्मात् भवन्तम् अनवद्यम् अनन्तपारम् सर्वज्ञम् ईश्वरम् अकुण्ठ विकुण्ठ धिष्ण्यम् ।
निर्विण्णधीः अहम् वृजिन अभितप्तः नारायणम् नर सखम् शरणम् प्रपद्ये ॥

शब्दार्थ—

तस्मात् भवन्तम्	१.	इसी से हे भगवन् !	निर्विण्णधीः	५.	विरक्त बुद्धि होकर
अनवद्यम्	८.	निर्दोष	अहम्	२.	मैं
अनन्तपारम्	९.	देश काल से अलग	वृजिन	३.	दुःखों की दावाग्नि से
सर्वज्ञम्	१०.	सर्वज्ञ	अभितप्तः	४.	जलकर
ईश्वरम्	११.	सर्वशक्तिमान एवम्	नारायणम्	१६.	नारायण हैं
अकुण्ठ	१२.	अविनाशी और	नर सखम्	१५.	नर के नित्य सखा
विकुण्ठ	१३.	वैकुण्ठ लोक के	शरणम्	६.	आपकी शरण में
धिष्ण्यम् ।	१४.	रहने वाले तथा	प्रपद्ये ॥	७.	आया हूँ क्योंकि आप

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! इसी से मैं दुःखों की दावाग्नि से जलकर विरक्त बुद्धि होकर आपकी शरण में आया हूँ । क्योंकि आप निर्दोष देश काल से अलग सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् एवम् अविनाशी और वैकुण्ठ लोक के रहने वाले तथा नर के नित्य सखा नारायण हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—प्रायेण मनुजा लोके लोकतत्त्वविचक्षणाः ।
समुद्धरन्ति ह्यात्मानमात्मनैवाशुभाशयात् ॥१९॥

पदच्छेद— प्रायेण मनुजाः लोके लोक तत्त्वः विचक्षणाः ।
समुद्धरन्ति हि आत्मानम् आत्मना एव अशुभ आशयात् ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	६. प्रायः	समुद्धरन्ति	१२. बचा लेतें हैं
मनुजाः	५. मनुष्य	हि आत्मानम्	७. अपने आपको
लोके	१. संसार में	आत्मना	८. स्वयं
लोक	२. जगत का	एव	९. ही
तत्त्वः	३. तात्त्विक	अशुभ	१०. अशुभ
विचक्षणाः ।	४. विवेचन करने वाले	आशयात् ॥	११. वासनाओं से

श्लोकार्थ—संसार में जगत का तात्त्विक विवेचन करने वाले मनुष्य प्रायः अपने आपको स्वयं ही अशुभ वासनाओं से बचा लेते हैं ॥

विंशः श्लोकः

आत्मनो गुरुरात्मैव पुरुषस्य विशेषतः ।
यत् प्रत्यक्षानुमानाभ्यां श्रेयोऽसावनुविन्दते ॥२०॥

पदच्छेद— आत्मनः गुरुः आत्मा एव पुरुषस्य विशेषतः ।
यत् प्रत्यक्ष अनुमानाभ्याम् श्रेयः असौ अनुविन्दते ॥

शब्दार्थ—

आत्मनः	५. अपने हित अहित का	यत्	७. क्योंकि
गुरुः	६. उपदेशक गुरु है ।	प्रत्यक्ष	९. अपने प्रत्यक्ष अनुभव
आत्मा	३. आत्मा	अनुमानाभ्याम्	१०. और अनुमान के द्वारा
एव	४. ही	श्रेयः	११. अपने कल्याण का
पुरुषस्य	२. मनुष्य का	असौ	८. यह मनुष्य
विशेषतः ।	१. विशेषकर	अनुविन्दते ॥	१२. निर्णय कर लेता है

श्लोकार्थ–विशेषकर मनुष्य का आत्मा ही अपने हित अहित का उपदेशक गुरु है। क्योंकि यह मनुष्य अपने प्रत्यक्ष अनुभव और अनुमान के द्वारा अपने कल्याण का निर्णय कर लेता है ॥

एकविंशः श्लोकः

पुरुषत्वे च मां धीराः सांख्ययोगविशारदाः ।
आविस्तरां प्रपश्यन्ति सर्वशक्त्युपबृंहितम् ॥२१॥

पदच्छेद— पुरुषत्वे च माम् धीराः सांख्य योग विशारदाः ।
आविस्तराम् प्रपश्यन्ति सर्वशक्ति उपबृंहितम् ॥

शब्दार्थ—

पुरुषत्वे	९. इस मनुष्य योनि में	आविस्तराम्	१०. पूर्णतः प्रकट रूप से
च	१. और	प्रपश्यन्ति	११. साक्षात्कार कर लेते हैं
माम्	८. मुझ आत्म-तत्त्व को	सर्व	५. समस्त
धीराः	४. धीर पुरुष	शक्ति	६. शक्तियों के
सांख्य योग	२. सांख्य योग	उपबृंहितम् ॥	७. आश्रयभूत
विशारदाः ।	३. विशारद		

श्लोकार्थ—और सांख्य योग विशारद धीर पुरुष समस्त शक्तियों के आश्रयभूत मुझ आत्म-तत्त्व को इस मनुष्य योनि में पूर्णतः प्रकट रूप से साक्षात्कार कर लेते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

एकद्वित्रिचतुष्पादो बहुपादस्तथापदः ।
बह्व्यः सन्ति पुरः सृष्टास्तासां मे पौरुषी प्रिया ॥२२॥

पदच्छेद— एक द्वि त्रि चतुष्पादः बहुपादः तथा अपदः ।
बह्वयः सन्तिपुरः सृष्टाः तासाम् मे पौरुषी प्रिया ॥

शब्दार्थ—

एक	१. मैंने एक पैर वाले	बह्वयः	८. बहुत से
द्वि	२. दो पैर वाले	सन्ति	११. की है
त्रि	३. तीन पैर वाले	पुरः	९. शरीरों की
चतुष्पादः	४. चार पैर वाले	सृष्टाः	१०. रचना
बहुपादः	५. चार से अधिक पैर वाले	तासाम्	१२. उनमें
तथा	६. तथा	मे पौरुषी	१३. मुझे, मनुष्य का शरीर
अपदः ।	७. बिना पैर के	प्रिया ॥	१४. अधिक प्रिय है

श्लोकार्थ—मैंने एक पैर वाले, दो पैर वाले, तीन पैर वाले, चार पैर वाले, चार से अधिक पैर वाले तथा बिना पैर के बहुत से शरीरों की रचना की है। उनमें मुझे मनुष्य का शरीर अधिक प्रिय है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अत्र मां मार्गयन्त्यद्धा युक्ता हेतुभिरीश्वरम् ।
गृह्यमाणैर्गुणैर्लिङ्गैरग्राह्यमनुमानतः ॥२३॥

पदच्छेद— अत्र माम् मार्गयन्ति अद्धा युक्ता हेतुभिः ईश्वरम् ।
गृह्यमाणैः गुणैः लिङ्गैः अग्राह्यम् अनुमानतः ॥

शब्दार्थ—

अत्र	२.	इस मनुष्य शरीर में	ईश्वरम् ।	१०. ईश्वर का
माम्	९.	मुझ	गृह्यमाणैः	३. गृहण किये जाने वाले
मार्गयन्ति	१२.	अनुभव करते हैं	गुणैः	५. गुणों
अद्धा	११.	साक्षात्	लिङ्गैः	६. लिङ्गों तथा
युक्ता	१.	एकाग्र चित्त पुरुष	अग्राह्यम्	८. अग्राह्य
हेतुभिः	४.	हेतुओं	अनुमानतः ॥	७. अनुमान से

श्लोकार्थ—एकाग्र चित्त पुरुष इस मनुष्य शरीर में गृहण किये जाने वाले हेतुओं, गुणों, लिङ्गों, तथा अनुमान से अग्राह्य मुझ ईश्वर का साक्षात् अनुभव करते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ।
अवधूतस्य संवादं यदोरमिततेजसः ॥२४॥

पदच्छेद— अत्र अपि उदाहरन्ति इमम् इतिहासम् पुरातनम् ।
अवधूतस्य संवादम् यदोः अमित तेजसः ॥

शब्दार्थ—

अत्र अपि	१.	इस विषय में भी	अवधूतस्य	८. अवधूत दत्तात्रेय और
उदाहरन्ति	५.	कहते हैं	संवादम्	१०. संवाद के रूप में है
इमम्	२.	लोग इस	यदोः	९. राजा यदु के
इतिहासम्	४.	इतिहास को	अमित	६. वह परम
पुरातनम् ।	३.	प्राचीन	तेजसः ॥	७. तेजस्वी

श्लोकार्थ—इस विषय में लोग इस प्राचीन इतिहास को कहते हैं । वह परम तेजस्वी अवधूत दत्तात्रेय और राजा यदु के संवाद के रूप में है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

अवधूतं द्विजं कञ्चिच्चरन्तमकुतोभयम् ।
कविं निरीक्ष्य तरुणं यदुः पप्रच्छ धर्मवित् ॥२५॥

पदच्छेद— अवधूतम् द्विजम् कञ्चित् चरन्तम् अकुतो भयम् ।
कविम् निरीक्ष्य तरुणम् यदुः पप्रच्छ धर्मवित् ॥

शब्दार्थ—

अवधूतम्	७. अवधूत	कविम्	६. त्रिकालदर्शी
द्विजम्	८. ब्राह्मण	निरीक्ष्य	४. देखा कि एक
कञ्चित्	१. एक बार	तरुणम्	५. तरुण
चरन्तम्	११. विचर रहे हैं (तो उनसे)	यदुः	३. राजा यदु ने
अकुतो	१०. रहित होकर	पप्रच्छ	१२. उन्होंने प्रश्न किया
भयम् ।	९. सर्वथा भय	धर्मवित् ॥	२. धर्म के मर्मज्ञ

श्लोकार्थ—एक बार धर्म के मर्मज्ञ राजा यदु ने देखा कि एक तरुण त्रिकालदर्शी अवधूत ब्राह्मण सर्वथा भय रहित होकर विचर रहे थे। तो उनसे उन्होंने प्रश्न किया ॥

षड्विंशः श्लोकः

यदुरुवाच— कुतो बुद्धिरियं ब्रह्मन्नकर्तुः सुविशारदा ।
यामासाद्य भवाँल्लोकं विद्वांश्चरति बालवत् ॥२६॥

पदच्छेद— कुतः बुद्धिः इयम् ब्रह्मन् अकर्तुः सुविशारदा ।
याम आसाद्य भवान् लोकम् विद्वान् चरति बालवत् ॥

शब्दार्थ—

कुतः	६. कहाँ से प्राप्त हुई	याम्	७. जिसका
बुद्धिः	५. बुद्धि	आसाद्य	८. आश्रय लेकर
इयम्	३. फिर आपको यह	भवान्	९. आप
ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मन् !	लोकम्	११. संसार में
अकर्तुः	२. आप कर्म तो करते नहीं	विद्वान्	१०. परम विद्वान् होने पर भी
सुविशारदा ।	४. अत्यन्त निपुण	चरति बालवत् ॥	१२. बालक के समान विचरते हैं

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! आप कर्म तो करते नहीं फिर आपको यह अत्यन्त निपुण बुद्धि कहाँ से प्राप्त हुई, जिसका आश्रय लेकर आप परम विद्वान होने पर भी संसार में बालक के समान विचरते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

प्रायो धर्मार्थकामेषु विवित्सायां च मानवाः ।
हेतुनैव समीहन्ते आयुषो यशसः श्रियः ॥२७॥

पदच्छेद— प्रायः धर्मार्थ कामेषु विवित्सायाम् च मानवाः ।
हेतुना एव समीहन्ते आयुषः यशसः श्रियः ।।

शब्दार्थ—

प्रायः	१. प्रायः	हेतुना	५. के कारण
धर्मार्थ	८. धर्म-अर्थ	एव	६. ही
कामेषु	९. काम	समीहन्ते	१२. प्रवृत्त होते हैं
विवित्सायाम्	११. तत्त्व जिज्ञासा में	आयुषः	२. आयु
च	१०. और	यशसः	३. यश और
मानवाः ।	७. मनुष्य	श्रियः ।।	४. सम्पत्ति

श्लोकार्थ—प्रायः आयु, यश और सम्पत्ति के कारण ही मनुष्य धर्म-अर्थ-काम और तत्त्व जिज्ञासा में प्रवृत्त होते हैं ।।

अष्टाविंशः श्लोकः

त्वं तु कल्पः कविर्दक्षः सुभगोऽमृतभाषणः ।
न कर्ता नेहसे किञ्चिज्जडोन्मत्तपिशाचवत् ॥२८॥

पदच्छेद— त्वम् तु कल्पः कविः दक्षः सुभगः अमृत भाषणः ।
न कर्ता न ईह से किञ्चित् जड़ उन्मत्त पिशाचवत् ।।

शब्दार्थ—

त्वम्	१. आप	न कर्ता	१०. न कुछ कहते हैं और
तुकल्पः	२. कर्म करने में समर्थ	न ईह से	१२. न चाहते हैं
कविः दक्षः	३. विद्वान और निपुण हैं	किञ्चित्	११. न कुछ
सुभगः	४. आप सुन्दर हैं	जड़	७. आप जड़
अमृत	६. अमृतमयी है फिर भी	उन्मत्त	८. उन्मत्त और
भाषणः ।	५. आपकी वाणी	पिशाचवत् ।।	९. पिशाच के समान

श्लोकार्थ—आप कर्म करने में समर्थ विद्वान और निपुण हैं। आपकी वाणी अमृतमयी है। फिर भी आप जड़, उन्मत्त और पिशाच के समान न कुछ कहते हैं और न कुछ चाहते हैं ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

जनेषु दह्यमानेषु कामलोभदवाग्निना ।
न तप्यसेऽग्निना मुक्तो गङ्गाम्भः स्थ इव द्विपः ॥२९॥

पदच्छेद— जनेषु दह्यमानेषु काम लोभ दवाग्निना ।
न तप्यसे अग्निना मुक्तः गङ्गाम्भः स्थ इव द्विपः ॥

शब्दार्थ—

जनेषु	१.	संसार के लोग	न तप्यसे	१०.	नहीं जल रहे हैं
दह्यमानेषु	५.	जल रहे हैं पर	अग्निना	९.	उस अग्नि से
काम	२.	काम	मुक्तः	६.	आप सर्वथा मुक्त होने से
लोभ	३.	लोभ के	गङ्गाम्भः स्थ	७.	गङ्गा के जल में स्थित
दवाग्निना ।	४.	दावानल से	इव द्विपः ॥	८.	हाथी के समान

श्लोकार्थ—संसार के लोग काम, लोभ के दावानल से जल रहे हैं, पर आप सर्वथा मुक्त होने से गङ्गा के जल में स्थित हाथी के समान उस अग्नि से नहीं जल रहे हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

त्वं हि नः पृच्छतां ब्रह्मन्नात्मन्यानन्दकारणम् ।
ब्रूहि स्पर्शविहीनस्य भवतः केवलात्मनः ॥३०॥

पदच्छेद— त्वम् हि नः पृच्छताम् ब्रह्मन् न आत्मनि आनन्द कारणम् ।
ब्रूहिः स्पर्श विहीनस्य भवतः केवल आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	२.	आप	ब्रूहिः	१३.	आप हमें अवश्य बतलाइये
हि नः	८.	हम	स्पर्श	३.	स्त्री-पुत्रादि संसार के स्पर्श से
पृच्छताम्	९.	आप से यह पूछना चाहते हैं कि	विहीनस्य	४.	भी रहित हैं
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !	भवतः	५.	आप सदा सर्वदा
आत्मनि	१०.	आपको आत्मा में ही	केवल	६.	अपने केवल
आनन्द	११.	अनिर्वचनीय आनन्द का	आत्मनः ॥	७.	स्वरूप में ही स्थित हैं
कारणम् ।	१२.	अनुभव कैसे होता है			

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! आप स्त्री, पुत्रादि संसार के स्पर्श से भी रहित हैं। आप सदा सर्वदा अपने केवल स्वरूप में ही स्थित हैं। हम आपसे यह पूछना चाहते हैं कि आपको आत्मा में ही अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव कैसे होता है। आप हमें अवश्य बतलाइये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—यदुनैवं महाभागो ब्रह्मण्येन सुमेधसा ।
पृष्टः सभाजितः प्राह प्रश्रयावनतं द्विजः ॥३१॥

पदच्छेद— यदुना एवम् महाभागः ब्रह्मण्येन सुमेधसा ।
पृष्टः सभाजितः प्राह प्रश्रय अवनतम् द्विजः ॥

शब्दार्थ—

यदुना	३.	महाराज यदु के द्वारा	पृष्टः	७.	पूछने पर
एवम्	१०.	इस प्रकार	सभाजितः	४.	अत्यन्त सत्कार करके
महाभागः	८.	परम् भाग्यवान्	प्राह	११.	कहा
ब्रह्मण्येन	१.	ब्राह्मण भक्त	प्रश्रय	५.	बड़े विनम्र भाव से
सुमेधसा ।	२.	शुद्ध बुद्धि	अवनतम्	६.	सिर झुकाकर
			द्विजः ॥	९.	दत्तात्रेय जी ने

श्लोकार्थ—ब्राह्मण भक्त शुद्ध बुद्धि महाराज यदु के द्वारा अत्यन्त सत्कार करके बड़े विनम्र भाव से सिर झुकाकर पूछने पर परम् भाग्यवान दत्तात्रेय जी ने इस प्रकार कहा ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच—सन्ति मे गुरवो राजन् बहवो बुद्ध्युपाश्रिताः ।
यतो बुद्धिमुपादाय मुक्तोऽटामीह ताञ्छृणु ॥३२॥

पदच्छेद— सन्ति मे गुरवः राजन् बहवः बुद्धि उपाश्रिताः ।
यतः बुद्धिम् उपादाय मुक्तः अटामि इह तान् छृणु ॥

शब्दार्थ—

सन्ति	७.	लिया है	यतः	८.	उनसे
मे	२.	मैंने	बुद्धिम्	९.	शिक्षा
गुरवः	५.	गुरुओं का	उपादाय	१०.	ग्रहण करके मैं
राजन्	१.	हे राजन् !	मुक्तः	१२.	मुक्त भाव से
बहवः	४.	बहुत से	अटामि	१३.	स्वच्छन्द विचरता हूँ
बुद्धि	३.	अपनी बुद्धि से	इह	११.	इस जगत में
उपाश्रिताः ।	६.	आश्रय	तान् छृणु ॥	१४.	उन गुरुओं के बारे में सुनो

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मैंने अपनी बुद्धि से बहुत से गुरुओं का आश्रय लिया है। उनसे शिक्षा ग्रहण करके मैं इस जगत में मुक्त भाव से स्वच्छन्द विचरता हूँ। उन गुरुओं के बारे में सुनो ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

पृथिवी वायुराकाशमापोऽग्निश्चन्द्रमा रविः ।
कपोतोऽजगरः सिन्धुः पतङ्गो मधुकृद् गजः ॥३३॥

पदच्छेद— पृथिवी वायुः आकाशम् आपः अग्निः चन्द्रमाः रविः ।
कपोतः अजगरः सिन्धुः पतङ्गः मधुकृत् गजः ॥

शब्दार्थ—

पृथिवी	१. पृथ्वी	कपोतः	७. कबूतर
वायुः	२. वायु	अजगरः	८. अजगर
आकाशम्	३. आकाश	सिन्धुः	९. समुद्र
आपः अग्निः	४. जल-अग्नि	पतङ्गः	१०. पतङ्ग
चन्द्रमाः	५. चन्द्रमा	मधुकृत्	११. भौंरा (या मधुमक्खी) और
रविः ।	६. सूर्य	गजः ॥	१२. हाथी (मेरे गुरु हैं)

श्लोकार्थ—मेरे गुरु हैं! पृथ्वी, वायु, आकाश, जल अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य, कबूतर, अजगर, समुद्र, पतङ्ग, भौंरा या (मधुमक्खी और हाथी मेरे गुरु हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मधुहा हरिणो मीनः पिङ्गला कुररोऽर्भकः ।
कुमारी शरकृत् सर्प ऊर्णनाभिः सुपेशकृत् ॥३४॥

पदच्छेद— मधुहा हरिणः मीनः पिङ्गला कुररः अर्भकः ।
कुमारी शरकृत सर्पः ऊर्णनाभिः सुपेशकृत् ॥

शब्दार्थ—

मधुहा	१. शहद निकालने वाला	कुमारी	७. कुवाँरी (लड़की) कन्या
हरिणः	२. हरिन	शरकृत्	८. बाण बनाने वाला
मीनः	३. मछली	सर्पः	९. सर्प
पिङ्गला	४. पिङ्गला वेश्या	ऊर्णनाभिः	१०. मकड़ी और
कुररः	५. कुररी पक्षी	सुपेशकृत् ॥	११. भृङ्गी कीटादि हैं
अर्भकः ।	६. बालक		

श्लोकार्थ—तथा शहद निकालने वाला, हरिन, मछली, पिङ्गला वेश्या, कुररी पक्षी, बालक, कुवाँरी कन्या, बाण बनाने वाला, सर्प मकड़ी और भृङ्गी कीटादि हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एते मे गुरवो राजंश्चतुर्विंशतिराश्रिताः ।
शिक्षा वृत्तिभिरेतेषामन्वशिक्षमिहात्मनः ॥३५॥

पदच्छेद— एते मे गुरवः राजन् चतुर्विंशतिः आश्रिताः ।
शिक्षा वृत्तिभिः एतेषाम् अन्वशिक्षम् इह आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

एते	३. इन	शिक्षा	११. शिक्षा
मे	२. मैंने	वृत्तिभिः	१०. आचरण के द्वारा
गुरवः	५. गुरुओं का	एतेषाम्	९. इनके
राजन्	१. हे राजन् !	अन्वशिक्षम्	१२. ग्रहण की
चतुर्विंशतिः	४. चौबीस	इह	८. इस लोक में
आश्रिताः ।	६. आश्रय लिया है	आत्मनः ॥	७. मैंने

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मैंने इन चौबीस गुरुओं का आश्रय लिया है । मैंने इस लोक में इनके आचरण के द्वारा शिक्षा ग्रहण की है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

यतो यदनुशिक्षामि यथा वा नाहुषात्मज ।
तत्तथा पुरुषव्याघ्र निबोध कथयामि ते ॥३६॥

पदच्छेद— यतः यत् अनुशिक्षामि यथा वा नाहुष आत्मज ।
तत् तथा पुरुष व्याघ्र निबोध कथयामि ते ॥

शब्दार्थ—

यतः	५. मैंने जिससे	तत्	१०. उसे
यत्	६. जो	तथा	११. वैसा ही
अनुशिक्षामि	९. सीखा है	पुरुष	१. पुरुष
यथा	७. जिस प्रकार	व्याघ्र	२. श्रेष्ठ
वा	८. अथवा जैसा	निबोध	१४. आप सुनिये
नाहुष	३. ययाति	कथयामि	१३. कह रहा हूँ
आत्मजः ।	४. नन्दन	ते ॥	१२. आप से

श्लोकार्थ—पुरुष श्रेष्ठ ययाति नन्दन मैंने जिससे जो जिस प्रकार अथवा जैसा सीखा है । उसे वैसा ही आपसे कह रहा हूँ । आप सुनिये ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

भूतैराक्रम्यमाणोऽपि धीरो दैववशानुगैः ।
तद् विद्वान्न चलेन्मार्गादन्वशिक्षं क्षितेर्व्रतम् ॥३७॥

पदच्छेद— भूतैः आक्रम्यमाणः अपि धीरः दैववश अनुगैः ।
तत् विद्वान् न चलेत् मार्गात् अन्वशिक्षम् क्षितेः व्रतम् ॥

शब्दार्थ—

भूतैः	६. भूत प्राणियों के द्वारा	तत्	१०. और इस सत्य को
आक्रम्यमाणः	७. पीड़ित होने पर	विद्वान्	११. जान कर
अपि	८. भी	न चलेत्	१३. इधर-उधर न चलें
धीरः	९. धीर पुरुष विचलित न हों	मार्गात्	१२. वह अपने सत्पथ से
दैववश	४. प्रारब्ध के वश होकर	अन्वशिक्षम्	३. शिक्षा ली है कि
अनुगैः ।	५. कर्म के अनुसार	क्षितेः	१. पृथ्वी से मैंने
		व्रतम् ॥	२. इस व्रत की

श्लोकार्थ—पृथ्वी से मैंने इस व्रत की शिक्षा ली है कि प्रारब्ध के वश होकर कर्म के अनुसार भूत प्राणियों के द्वारा पीड़ित होने पर भी धीर पुरुष विचलित न हों और इस सत्य को जानकर वह अपने सत्पथ से इधर-उधर न चलें ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

शश्वत्परार्थसर्वेहः परार्थैकान्तसम्भवः ।
साधुः शिक्षेत भूभृत्तो नगशिष्यः परात्मताम् ॥३८॥

पदच्छेद— शश्वत् परार्थ सर्व ईह परार्थ एकान्त सम्भवः ।
साधुः शिक्षेत् भूः भृत्तः नग शिष्यः पर आत्मताम् ॥

शब्दार्थ—

शश्वत्	१३. निरन्तर	साधुः	१०. सन्त पुरुष की
परार्थ	१४. परोपकार के लिये ही करनी चाहिये	शिक्षेत	६. शिक्षा ली है कि जैसे
सर्व	११. सारी	भूः भृत्तः	१. पर्वत और
ईह	१२. चेष्टायें	नग	२. वृक्ष की
परार्थ	९. परोपकार के लिये ही है वैसे ही	शिष्यः	३. शिष्यता ग्रहण करके
एकान्त	८. केवल	पर	४. मैंने परोपकार
सम्भवः ।	७. उनकी उत्पत्ति	आत्मताम् ॥	५. की

श्लोकार्थ—पर्वत और वृक्ष की शिष्यता ग्रहण करके मैंने परोपकार की शिक्षा ली है कि जैसे उनकी उत्पत्ति केवल परोपकार के लिये ही है; वैसे ही सन्त पुरुष की सारी चेष्टायें निरन्तर परोपकार के लिये ही करनी चाहिये ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

प्राणवृत्त्यैव सन्तुष्येन्मुनिर्नैवेन्द्रियप्रियैः ।
ज्ञानं यथा न नश्येत नावकीर्येत वाङ्मनः ॥३९॥

पदच्छेद— प्राण वृत्त्या एव सन्तुष्येत् मुनिः नैव इन्द्रिय प्रियैः ।
ज्ञानम् यथा न नश्येत नावकीर्येत वाङ्मनः ॥

शब्दार्थ—

प्राण	१.	प्राण वायु से ये शिक्षा ली है कि	प्रियैः	७.	प्रिय लगने वाला अधिक भोजन
वृत्त्या	३.	आहार मात्र से	ज्ञानम्	१०.	ज्ञान
एव	४.	ही	यथा	९.	इससे
सन्तुष्येत्	५.	सन्तुष्ट रहना चाहिये ।	न	१२.	नहीं होगा और
मुनिः	२.	साधक को	नश्येत	११.	नष्ट
नैव	८.	नहीं कहना चाहिये	नावकीर्येत	१४.	व्यर्थ बातों में नहीं लगेगा
इन्द्रिय	६.	इन्द्रियों को	वाङ्मनः ॥	१३.	वाणी तथा मन भी

श्लोकार्थ—प्राण वायु से ये शिक्षा ली है कि साधक को आहार मात्र से ही सन्तुष्ट रहना चाहिये । इन्द्रियों को प्रिय लगने वाला अधिक भोजन नहीं करना चाहिये । इससे ज्ञान नष्ट नहीं होगा और वाणी तथा मन भी व्यर्थ बातों में नहीं लगेगा ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

विषयेष्वाविशन् योगी नानाधर्मेषु सर्वतः ।
गुणदोषव्यपेतात्मा न विषज्जेत वायुवत् ॥४०॥

पदच्छेद— विषयेषु आविशन् योगी नाना धर्मेषु सर्वतः ।
गुण दोष व्यपेत आत्मा न विषज्जेत वायुवत् ॥

शब्दार्थ—

विषयेषु	५.	विषयों में	गुण	८.	उनके गुणों और
आविशन्	७.	प्रवेश करते हुये	दोष	९.	दोषों से
योगी	२.	साधक	व्यपेत	११.	अलग रखे
नाना	३.	अनेक	आत्मा	१०.	अपने को
धर्मेषु	४.	धर्मों वाले	न विषज्जेत	१२.	उनमें रम न जाय
सर्वतः ।	६.	सब ओर से	वायुवत् ॥	१.	वायु से मैंने यह सीखा है कि

श्लोकार्थ— वायु से मैंने यह सीखा है कि साधक अनेक धर्मों वाले विषयों में सब ओर से प्रवेश करते हुये उनके गुणों और दोषों से अपने को अलग रखे उनमें रम न जाय ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

पार्थिवेष्विह देहेषु प्रविष्टस्तद्गुणाश्रयः ।
गुणैर्न युज्यते योगी गन्धैर्वायुरिवात्मदृक् ॥४१॥

पदच्छेद— पार्थिवेषु इह देहेषु प्रविष्टः तत् गुण आश्रयः ।
गुणैः न युज्यते योगी गन्धैः वायु इव आत्मदृक् ॥

शब्दार्थ—

पार्थिवेषु	४.	पार्थिव	गुणैः न	१०.	इसके गुणों से उसी प्रकार
इह	३.	इस	युज्यते	११.	लिप्त नहीं होता है
देहेषु	५.	शरीर और	योगी	२.	साधक
प्रविष्टः	६.	इससे सम्बद्ध होकर भी	गन्धैः	१४.	गन्ध को ग्रहण करने पर भी (लिप्त नहीं होता)
तत्	७.	इसके	वायुः	१३.	वायु
गुण	८.	गुणों का	इव	१२.	जैसे
आश्रयः ।	९.	आश्रय होने पर	आत्मदृक् ॥	१.	आत्मवेत्ता

श्लोकार्थ—आत्मवेत्ता साधक इस पार्थिव शरीर और इससे सम्बद्ध होकर भी इसके गुणों का आश्रय होने पर इसके गुणों से उसी प्रकार लिप्त नहीं होता है। जैसे वायु गन्ध को ग्रहण करने पर भी उसमें लिप्त नहीं होता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अन्तर्हितश्च स्थिरजङ्गमेषु ब्रह्मात्मभावेन समन्वयेन ।
व्याप्त्याव्यवच्छेदमसङ्गमात्मनो मुनिर्नभस्त्वं विततस्य भावयेत् ॥४२॥

पदच्छेद—अन्तः हितः च स्थिर जङ्गमेषु ब्रह्म आत्म भावेन समन्वयेन ।
व्याप्त्या अव्यवच्छेदम् असङ्गम् आत्मनः मुनिः नभस्त्वम् विततस्य भावयेत् ॥

शब्दार्थ—

अन्तः हितः	६.	व्याप्त	व्याप्त्या	९.	सर्वत्र व्याप्त
चस्थिर	४.	चर-अचर और	अव्यवच्छेदम्	१०.	अपरिछिन्न और
जङ्गमेषु	५.	समस्त प्राणियों में	असङ्गम्	१२.	असङ्ग
ब्रह्म	७.	ब्रह्म सभी में है	आत्मनः	१३.	आत्मतत्त्व को
आत्म	१.	आत्मा	मुनिः	८.	अतः साधक मुनि को
भावेन	२.	रूप से	नभस्त्वम्	११.	आकाश के समान
समन्वयेन ।	३.	सर्वत्र स्थित होने के कारण	विततस्य	१४.	विस्तृत
			भावयेत् ॥	१५.	भावना करनी चाहिये

श्लोकार्थ—आत्मा रूप से सर्वत्र स्थित होने के कारण चर-अचर और समस्त प्राणियों में व्याप्त ब्रह्म सभी में है। अतः साधक मुनि को सर्वत्र व्याप्त अपरिछिन्न और आकाश के समान असङ्ग आत्मतत्त्व की विस्तृत भावना करनी चाहिये ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

तेजोऽबन्नमयैर्भावैर्मेघाद्यैर्वायुनेरितैः ।
न स्पृश्यते नभस्तद्वत् कालसृष्टैर्गुणैः पुमान् ॥४३॥

पदच्छेद — तेजः अप अन्नमयैः भावैः मेघ आद्यैः वायुना ईरितैः ।
न स्पृश्यते नभः तत् वत् काल सृष्टैः गुणैः पुमान् ॥

शब्दार्थ—

तेजः अप	१. आग, जल और	न	८. नहीं होता है
अन्नमयैः	२. अन्न के	स्पृश्यते नभः	७. आकाश, उनसे स्पृष्ट (स्पर्श युक्त)
भावैः	३. पैदा होने तथा	तत् वत्	९. इसी प्रकार
मेघ आद्यैः	६. बादलों के आने-जाने से	काल सृष्टैः	१०. काल के द्वारा
वायुना	४. वायु की	गुणैः	११. नाम रूप की सृष्टि होने पर भी
ईरितैः ।	५. प्रेरणा से	पुमान् ॥	१२. आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं होता है

श्लोकार्थ—आग, जल और अन्न के पैदा होने तथा वायु की प्रेरणा से बादलों के आने जाने से आकाश उनसे स्पृष्ट स्पर्श युक्त नहीं होता है। इसी प्रकार काल के द्वारा नाम रूप की सृष्टि होने पर भी आत्मा से कोई सम्बन्ध नहीं होता है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

स्वच्छः प्रकृतितः स्निग्धो माधुर्यस्तीर्थभूर्नृणाम् ।
मुनिः पुनात्यपां मित्रमीक्षोपस्पर्शकीर्तनैः ॥४४॥

पदच्छेद— स्वच्छः प्रकृतितः स्निग्धः माधुर्यः तीर्थभूः नृणाम् ।
मुनिः पुनाति अपाम् मित्रम् ईक्षा उपस्पर्श कीर्तनैः ॥

शब्दार्थ—

स्वच्छः	३. स्वच्छ	मुनिः	११. साधक मुनिः
प्रकृतितः	२. स्वभाव से	पुनाति	८. पवित्र करने वाला होता है
स्निग्धः	४. चिकना	अपाम्	९. उसी तीर्थ जल के
माधुर्यः	५. मधुर और	मित्रम्	१०. समान
तीर्थभूः	१. तीर्थ जल	ईक्षा उपस्पर्श	६. दर्शन, स्पर्श और
नृणाम् ।	१२. मनुष्यों को पवित्र करता है	कीर्तनैः ॥	७. नामोच्चारण से

श्लोकार्थ—तीर्थ का जल स्वभाव से स्वच्छ चिकना, मधुर और दर्शन, स्पर्श और नामोच्चारण से पवित्र करने वाला होता है। उसी तीर्थ जल के समान साधक मुनि मनुष्यों को पवित्र करता है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

तेजस्वी तपसा दीप्तो दुर्धर्षोदरभाजनः ।
सर्वभक्षोऽपि युक्तात्मा नादत्ते मलमग्निवत् ॥४५॥

पदच्छेद— तेजस्वी तपसा दीप्तः दुर्धर्षः उदर भाजनः ।
सर्वभक्षः अपि युक्त आत्मा न आदत्ते मलम् अग्निवत् ॥

शब्दार्थ—

तेजस्वी	२.	परम तेजस्वी	सर्वभक्षः	८.	सब ही विषयों का उपभोग करता हुआ
तपसा	३.	तपस्या से	अपि	९.	भी
दीप्तः	४.	देदीप्यमान	युक्त आत्मा	१०.	अपने मन को वश में रखे
दुर्धर्षः	५.	दुर्दमनीय	न आदत्ते	१२.	अपने में न आने दे
उदर	६.	पेट के लिये ही	मलम्	११.	किसी भी दोष को
भाजनः ।	७.	संग्रह करने वाला	अग्निवत् ॥	१.	अग्नि के समान साधक

श्लोकार्थ—अग्नि के समान साधक परम तेजस्वी तपस्या से देदीप्यमान दुर्दमनीय पेट के लिये ही संग्रह करने वाला सब ही विषयों का उपभोग करता हुआ भी अपने मन को वश में रखे । किसी भी दोष को अपने में न आने दे ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

क्वचिच्छन्नः क्वचित् स्पष्ट उपास्यः श्रेय इच्छताम् ।
भुङ्क्ते सर्वत्र दातॄणां दहन् प्रागुत्तराशुभम् ॥४६॥

पदच्छेद— क्वचित् छन्नः क्वचित् स्पष्टः उपास्यः श्रेयः इच्छताम् ।
भुङ्क्ते सर्वत्र दातॄणाम दहन् प्राक् उत्तर अशुभम् ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	अग्नि के समान कहीं	भुङ्क्ते	९.	अन्न ग्रहण करता हुआ वह
छन्नः	२.	अप्रकट और	सर्वत्र	८.	सब जगह
क्वचित्	३.	कहीं	दातॄणाम	१०.	दाताओं के
स्पष्टः	४.	प्रकट रह कर	दहन्	१४.	भस्म कर देता है
उपास्यः	७.	उपास्य होता है	प्राक्	११.	पहले
श्रेयः	५.	कल्याण	उत्तर	१२.	भावी
इच्छताम् ।	६.	कामी पुरुषों का	अशुभम् ॥	१३.	अशुभ को

श्लोकार्थ—अग्नि के समान कहीं अप्रकट और कहीं प्रकट रहकर कल्याण कामी पुरुषों को उपास्य होता है । सब जगह अन्न ग्रहण करता हुआ वह दाताओं के पहले भावी अशुभ को भस्म कर देता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

स्वमायया सृष्टमिदं सदसल्लक्षणं विभुः ।
प्रविष्ट ईयते तत्तत्स्वरूपोऽग्निरिवैधसि ॥४७॥

पदच्छेद— स्वमायया सृष्टम् इदम् सद-असत् लक्षणम् विभुः ।
प्रविष्टः ईयते तत्-तत् स्वरूपः अग्निः इव एधसि ॥

शब्दार्थ—

स्वमायया	४.	अपनी माया से	प्रविष्टः	६.	प्रविष्ट होकर
सृष्टम्	५.	रचे हुये	ईयते	१२.	प्राप्त हुआ प्रतीत होता है
इदम्	८.	इस जगत में	तत्-तत्	१०.	उस-उस
सद्-असत्	६.	कार्य-कारण	स्वरूपः	११.	स्वरूप को
लक्षणम्	७.	रूप	अग्निः इव	२.	अग्नि के समान
विभुः ।	३.	सर्व व्यापक आत्म तत्त्व	एधसि ॥	१.	काष्ठ में व्याप्त

श्लोकार्थ—काष्ठ में व्याप्त अग्नि के समान सर्व व्यापक आत्म तत्त्व अपनी माया से रचे हुये कार्य-कारण रूप इस जगत में प्रविष्ट होकर उस-उस स्वरूप को प्राप्त हुआ प्रतीत होता है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

विसर्गाद्याः श्मशानान्ता भावा देहस्य नात्मनः ।
कलानामिव चन्द्रस्य कालेनाव्यक्तवर्त्मना ॥४८॥

पदच्छेद— विसर्ग आद्याः श्मशान अन्ताः भावाः देहस्य न आत्मनः ।
कलानाम् इव चन्द्रस्य कालेन अव्यक्त वर्त्मना ॥

शब्दार्थ—

विसर्ग	७.	जन्म से	कलानाम्	५.	कलाओं के
आद्याः	८.	लेकर	इव	६.	समान
श्मशान	६.	मृत्यु	चन्द्रस्य	४.	चन्द्रमा की
अन्ताः	१०.	पर्यन्त	कालेन	३.	उस काल के प्रभाव से
भावाः	११.	होने वाली अवस्थायें	अव्यक्त	२.	नहीं जानी जा सकती है
देहस्य	१२.	देह की हैं	वर्त्मना ॥	१.	जिसकी गति
न आत्मनः ।	१३.	आत्मा की नहीं है ।			

श्लोकार्थ—जिसकी गति नहीं जानी जा सकती है, उस काल के प्रभाव से चन्द्रमा की कलाओं के समान जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त होने वाली अवस्थायें देह की हैं, आत्मा की नहीं हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः ।
न च सङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान् ॥१५॥

पदच्छेद— न तथा मे प्रियतमः आत्मयोनिः न शङ्करः ।
न च सङ्कर्षणः न श्रीः न एव आत्मा च यथा भवान् ॥

शब्दार्थ—

न	६.	न तो	न च	९.	और न
तथा	३.	उतने	सङ्कर्षणः	१०.	सगे भाई बलराम हैं
मे	५.	मुझे	न श्रीः	११.	न लक्ष्मी जी हैं और
प्रियतमः	४.	प्रिय	न एव	१२.	न ही
आत्मयोनिः	७.	स्वयम् ब्रह्मा हैं और	आत्मा	१३.	अपना आत्मा उतना प्रिय है
न शङ्करः ।	८.	नहीं शङ्कर हैं	च यथा	२.	जितने प्रिय हो
			भवान् ॥	१.	हे उद्धव ! तुम मुझे

श्लोकार्थ—हे उद्धाव ! तुम मुझे जितने प्रिय हो, उतने प्रिय मुझे न तो स्वयम् ब्रह्मा हैं और न शङ्कर ही हैं। और न सगे भाई बलराम ही हैं। न लक्ष्मी हैं, और न ही अपना आत्मा उतना प्रिय है ॥

षोडशः श्लोकः

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनम् ।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः ॥१६॥

पदच्छेद— निरपेक्षम् मुनिम् शान्तम् निर्वैरम् समदर्शनम् ।
अनुव्रजामि अहम् नित्यम् पूयेय इति अङ्घ्रिरेणुभिः ॥

शब्दार्थ—

निरपेक्षम्	१.	जिसे किसी की अपेक्षा नहीं है	अहम्	६.	मैं
मुनिम्	२.	जो मुनि है	नित्यम्	७.	नित्य उसके
शान्तम्	४.	शान्त-भाव से	पूयेय	१२.	मुझे पवित्र कर दे
निर्वैरम्	३.	वैर भाव से रहित होकर	इति	९.	कि
समदर्शनम्	५.	सर्वत्र सम दृष्टि रखता है	अङ्घ्रि	१०.	उसके चरणों की
अनुव्रजामि ।	८.	पीछे-पीछे घूमा करता हूँ	रेणुभिः ॥	११.	धूलि मुझ पर गिरे और

श्लोकार्थ—जिसे किसी की अपेक्षा नहीं है। जो मुनि है। और वैर-भाव से रहित होकर शान्त-भाव से सर्वत्र सम दृष्टि रखता है। मैं नित्य उसके पीछे-पीछे घूमा करता हूँ। कि उसके चरणों की धूलि मुझ पर गिरे। और मुझे पवित्र कर दे ॥

सप्तदशः श्लोकः

निष्किञ्चना मय्यनुरक्तचेतसः शान्ता महान्तोऽखिलजीववत्सलाः ।
कामैरनालब्धधियो जुषन्ति यत् तन्नैरपेक्ष्यं न विदुः सुखं मम ॥१७॥

पदच्छेद— निष्किञ्चनाः मयि अनुरक्त चेतसः शान्ताः महान्तः अखिल जीव वत्सलाः ।
कामैः अनालब्धधियः जुषन्ति यत् तत् नैरपेक्ष्यम् न विदुः सुखम् मम ॥

शब्दार्थ—

निष्किञ्चनाः	१.	जो संग्रह परिग्रह से रहित है	कामैः	९.	किसी प्रकार की कामना
मयि	२.	मुझ में	अनालब्ध	११	छू नहीं पाती है
अनुरक्त	३.	जिनका लगा है	धियः	१०.	जिनकी बुद्धि का
चेतसः	४.	चित्त	जुषन्ति	१३.	अनुवभ होता है
शान्ताः	५.	जो शान्त और	यत्-तत्	१४.	उस सुख से
महान्तः	६.	उदार हैं तथा	नैरपेक्ष्यम्	१५.	निरपेक्ष प्राणियों को
अखिलजीव	७.	समस्त प्राणियों के प्रति	न विदुः	१६.	उसका ज्ञान नहीं होता
वत्सलाः ।	८.	दया का भाव रखते हैं	सुखम्मम ॥	१२.	जिस परमानन्द स्वरूप का

श्लोकार्थ—जो संग्रह-परिग्रह से रहित हैं । मुझमें जिनका चित्त लगा है । जो शान्त और उदार हैं, तथा समस्त प्राणियों के प्रति दया का भाव रखते हैं । किसी प्रकार की कामना जिनकी बुद्धि को छू नहीं पाती है । उन्हें जिस परमानन्द स्वरूप का अनुभव होता है । उस सुख से निरपेक्ष प्राणियों को उसका ज्ञान नहीं होता है ॥

अष्टदशः श्लोकः

बाध्यमानोऽपि मद्भक्तो विषयैरजितेन्द्रियः ।
प्रायः प्रगल्भया भक्त्या विषयैर्नाभिभूयते ॥१८॥

पदच्छेद— बाध्यमानः अपि मत् भक्तः विषयैः अजितेन्द्रियः ।
प्रायः प्रगल्भया भक्त्या विषयैः न अभिभूयते ॥

शब्दार्थ—

बाध्यमानः	६.	जिसे बाधा पहुँचाते रहते हैं	प्रायः	७.	वह भी प्रायः
अपि	५.	भी	प्रगल्भया	८.	क्षण-क्षण बढ़ने वाली
मत्	१.	मेरा	भक्त्या	९.	भक्ति के प्रभाव से
भक्तः	२.	भक्त	विषयैः	१०.	विषयों से
विषयैः	४.	संसार के विषय	न	१२.	नहीं होता है
अजितेन्द्रियः ।	३.	जितेन्द्रिय नहीं हो सका है	अभिभूयते ॥	११.	पराजित

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! मेरा जो भक्त जितेन्द्रिय नहीं हो सका है । संसार के विषय भी जिसे बाधा पहुँचाते रहते हैं । वह भी प्रायः क्षण-क्षण में बढ़ने वाली भक्ति के प्रभाव से विषयों से पराजित नहीं होता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यथाग्निः सुसमृद्धार्चिः करोत्येधांसि भस्मसात् ।
तथा मद्विषया भक्तिरुद्धवैनांसि कृत्स्नशः ॥१९॥

पदच्छेद—

यथा अग्निः सुसमृद्ध अर्चिः करोति एधांसि भस्मसात् ।
तथा मत् विषया भक्तिः उद्धव एनांसि कृत्स्नशः ॥

शब्दार्थ—

यथा	२.	जैसे	तथा	९.	उसी प्रकार
अग्निः	४.	आग की	मत्	१०.	मेरी
सुसमृद्ध	३	धधकती हुई	विषया	१२.	विषय बनाने वाली
अर्चिः	५.	लपटें	भक्तिः	११.	भक्ति भी
करोति	८.	कर डालती हैं	उद्धवः	१.	हे उद्धव !
एधांसि	६.	ईंधन को	एनांसि	१४.	पाप राशि को जला डालती हैं
भस्मसात् ।	७.	जलाकर भस्म	कृत्स्नशः ॥	१३.	समस्त

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! जैसे धधकती हुई आग की लपटें ईंधन को जलाकर भस्म कर डालती हैं । उसी प्रकार मेरी भक्ति भी विषय बनाने वाली समस्त पाप राशि को जला डालती है ॥

विंशः श्लोकः

न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव ।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ॥२०॥

पदच्छेद—

न साधयति माम् योगः न सांख्यम् धर्म उद्धव ।
न स्वाध्यायः तपः त्यागः यथा भक्तिः मम ऊर्जिता ॥

शब्दार्थ—

न साधयति	९.	उतने समर्थ नहीं हैं	न स्वाध्यायः	५.	जप-पाठ और
माम्	८.	मुझे प्राप्त कराने में	तपः	६.	तप
योगः	२.	योग साधन	त्यागः	७.	त्याग
न सांख्यम्	३.	ज्ञान विज्ञान	यथा	१०.	जितनी
धर्म	४.	धर्मानुष्ठान	भक्तिः	१२.	मेरी भक्ति है
उद्धव ।	१.	हे उद्धव !	मम ऊर्जिताः ॥	११.	दिनों-दिन बढ़ने वाली

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! योग साधन, ज्ञान-विज्ञान, धर्मानुष्ठान जप-पाठ और तप-त्याग मुझे प्राप्त कराने में उतने समर्थ नहीं हैं । जितनी दिनों-दिन बढ़ने वाली भक्ति है ॥

एकविंशः श्लोकः

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयाऽऽत्मा प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात् ॥२१॥

पदच्छेद— भक्त्या अहम् एकया ग्राह्यः श्रद्धया आत्मा प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनाति मत् निष्ठाः श्वपाकान् अपि सम्भवात् ॥

शब्दार्थ—

भक्त्या	५.	भक्ति से	भक्तिः	८.	भक्ति
अहम् एकया	३.	मैं अनन्य	पुनाति	१०.	पवित्र कर देती है
ग्राह्यः	६.	पकड़ में आता हूँ	मत्निष्ठा	७.	मेरी अनन्य
श्रद्धया	४.	श्रद्धा और	श्वपाकान्	१२.	चाण्डाल हैं
आत्मा	२.	आत्मा हूँ	अपि	९.	उन्हें भी
प्रियः सताम् ।	१.	मैं सन्तों का प्रियतम	सम्भवात् ॥	११.	जो जन्म से ही

श्लोकार्थ—मैं सन्तों का प्रियतम आत्मा हूँ । मैं अनन्य श्रद्धा और भक्ति से पकड़ में आता हूँ । मेरी अनन्य भक्ति उन्हें भी पवित्र कर देती है । जो जन्म से ही चाण्डाल हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

धर्मः सत्यदयोपेतो विद्या वा तपसान्विता ।
मद्भक्त्यापेतमात्मानं न सम्यक् प्रपुनाति हि ॥२२॥

पदच्छेद— धर्मः सत्य दया उपेतः विद्या वा तपसा अन्विता ।
मत् भक्त्या अपेतम् आत्मानम् न सम्यक् प्रपुनाति हि ॥

शब्दार्थ—

धर्मः	७.	धर्म	मत्	१.	जो मेरी
सत्य दया	५.	सत्य और दया से	भक्त्या	२.	भक्ति से
उपेतः	६.	युक्त	अपेतम्	३.	वञ्चित है उनके
विद्या	१०.	विद्या भी	आत्मानम्	४.	चित्त को
वा तपसा	८.	और तपस्या से	न सम्यक्	११.	भली भाँति
अन्विता ।	९.	युक्त	प्रपुनाति हि ॥	१२.	पवित्र करने में असमर्थ हैं

श्लोकार्थ—जो मेरी भक्ति से वञ्चित हैं । उनके चित्त को सत्य और दया से युक्त धर्म और तपस्या से युक्त विद्या भी भलीभाँति पवित्र करने में असमर्थ है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

कथं विनारोमहर्षं द्रवता चेतसा विना ।
विनाऽऽनन्दाश्रुकलया शुद्ध्येद् भक्त्या विनाऽऽशयः ॥२३॥

पदच्छेद—　कथम् विना रोमहर्षम् द्रवता चेतसा विना ।
　विना आनन्द अश्रु कलया शुद्ध्येद् भक्त्याविना आशयः ॥

शब्दार्थ—

कथम्	११.	कैसे	विना	८.	विना अर्थात्
विना	२.	विना	आनन्द	६.	आनन्द के
रोमहर्षम्	१.	शरीर में रोमाञ्च हुये	अश्रुकलया	७.	आँसुओं के छलके
द्रवता	३.	पिघले हुये	शुद्ध्येद्	१२.	शुद्ध हो सकता है
चेतसा	४.	चित्त के	भक्त्या	९.	पूर्ण भक्ति के
विना ।	५.	विना	विना आशयः	१०.	विना अन्तःकरण

श्लोकार्थ—शरीर में रोमाञ्च हुये विना, पिघले हुये चित्त के विना आनन्द के आँसुओं के छलके बिना, अर्थात् पूर्ण भक्ति के विना अन्तःकरण कैसे शुद्ध हो सकता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

वाग् गद्गदा द्रवते यस्य चित्तं रुदत्यभीक्ष्णं हसति क्वचिच्च ।
विलज्ज उद्गायति नृत्यते च मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति ॥२४॥

पदच्छेद—　वाक् गद्गदा द्रवते यस्य चित्तम् रुदति अभीक्ष्णम् हसति क्वचित् च ।
　विलज्जः उद्गायति नृत्यते च मत् भक्ति युक्तः भुवनम् पुनाति ॥

शब्दार्थ—

वाक् गद्गदा	२.	प्रेम सेवा वाणी गद्गद हो रही थी और	विलज्जः	९.	लाज छोड़कर
द्रवते	४.	एक ओर बहता रहता है	उद्गायति	१०.	ऊँचे स्वर से गाने लगता है
यस्य	१.	जिसकी	नृत्यते	१२.	नाचने लगता है, ऐसा व्यक्ति
चित्तम्	३.	चित्त पिघल कर	च	११.	और कभी
रुदति	६.	रोने का तांता नहीं टूटता है	मत् भक्ति	१३.	मेरी भक्ति से
अभीक्ष्णम्	५.	एक क्षण के लिये भी	युक्तः	१४.	युक्त होकर
हसति	८.	खिलखिला कर हँसने लगता है	भुवनम्	१५.	सारे संसार को
क्वचित् च ।	७.	और कभी-कभी	पुनाति ॥	१६.	पवित्र कर देता है

श्लोकार्थ—जिसकी वाणी प्रेम से गद्-गद् हो रही थी । और चित्त पिघल-पिघल कर एक ओर बहता रहता है । एक क्षण के लिये भी रोने का तांता नहीं टूटता है । और कभी-कभी खिल-खिलाकर हँसने लगता है । लाज छोड़कर ऊँचे स्वर से गाने लगता है । और कभी नाचने लगता है । ऐसा व्यक्ति मेरी भक्ति से युक्त होकर सारे संसार को पवित्र कर देता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यथाग्निना हेम मलं जहाति ध्मातं पुनः स्वं भजते च रूपम् ।
आत्मा च कर्मानुशयं विधूय मद्भक्तियोगेन भजत्यथो माम् ॥२५॥

पदच्छेद— यथा अग्निना हेम मलम् जहाति ध्मातम् पुनः स्वम् भजते च रूपम् ।
आत्मा च कर्म अनुशयम् विधूय मत् भक्ति योगेन भजति अथो माम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे		आत्मा	११. आत्मा
अग्निना	२. अग्नि में		च कर्म	१२. कर्म
हेम मलम्	४. सोना मैल		अनुशयम्	१३. वासनाओं से
जहाति	५. छोड़ देता है और		विधूय	१४. मुक्त होकर
ध्मातम्	३. तपाने पर		मत् भक्ति	९. मेरे भक्ति
पुनः स्वम्	६. फिर अपने असली		योगेन	१०. योग के द्वारा
भजते	८. प्राप्त कर लेता है वैसे ही		भजति	१६. प्राप्त हो जाता है
चरूपम् ।	७. रूप को		अथो माम् ॥	१५. फिर मुझको

श्लोकार्थ—जैसे अग्नि में तपाने पर सोना मैल छोड़ देता है । फिर अपने असली रूप को प्राप्त कर लेता है । वैसे ही मेरे भक्ति योग के द्वारा आत्मा कर्म वासनाओं से मुक्त होकर फिर मुझको प्राप्त हो जाता है ।।

षड्विंशः श्लोकः

यथा यथाऽऽत्मा परिमृज्यतेऽसौ मत्पुण्यगाथाश्रवणाभिधानैः ।
तथा तथा पश्यति वस्तु सूक्ष्मं चक्षुर्यथैवाञ्जनसम्प्रयुक्तम् ॥२६॥

पदच्छेद— यथा यथा आत्मा परिमृज्यते असौ मत् पुण्यगाथा श्रवणाभिधानैः ।
तथा तथा पश्यति वस्तु सूक्ष्मम् चक्षुः यथैव अञ्जन सम्प्रयुक्तम् ॥

शब्दार्थ—

यथा यथा	५. ज्यों ज्यों	तथा तथा	९. त्यों त्यों
आत्मा	७. चित्त का	पश्यति	१२. दर्शन होने लगते हैं
परिमृज्यते	८. मैल धुलता जाता है	वस्तु	११. वस्तु के वास्तविक तत्त्व के
असौ	६. इस	सूक्ष्मम्	१०. उसे सूक्ष्म
मत् पुण्य	१. मेरी परम पावन	चक्षुः	१६. नेत्रों का दोष मिट जाता है
गाथा	२. लीला कथा के	यथैव	१३. जैसे
श्रवण	३. श्रवण	अञ्जन	१४. अञ्जन का
अभिधानैः ।	४. कीर्तन से	सम्प्रयुक्तम् ॥	१५. प्रयोग करने पर

श्लोकार्थ—मेरी परम पावन लीला कथा के श्रवण कीर्तन से ज्यों ज्यों इस चित्त का मैल धुलता जाता है । त्यों त्यों उसे सूक्ष्म वस्तु के वास्तविक तत्त्व के दर्शन होने लगते हैं । जैसे अञ्जन का प्रयोग करने से नेत्रों का दोष मिट जाता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

विषयान् ध्यायतश्चित्तं विषयेषु विषज्जते ।
मामनुस्मरतश्चित्तं मय्येव प्रविलीयते ॥२७॥

पदच्छेद—

विषयान् ध्यायतः चित्तम् विषयेषु विषज्जते ।
माम् अनुस्मरतः चित्तम् मयि एव प्रविलीयते ॥

शब्दार्थ—

विषयान्	१.	विषयों का	माम्	६.	मेरा
ध्यायतः	२.	ध्यान करते हुये	अनुस्मरतः	७.	स्मरण करता हुआ
चित्तम्	३.	चित्त	चित्तम्	८.	चित्त
विषयेषु	४.	विषयों में	मयि एव	९.	मुझमें ही
विषज्जते ।	५.	फँस जाता है और	प्रविलीयते ॥	१०.	लीन हो जाता है

श्लोकार्थ—विषयों का ध्यान करता हुआ चित्त विषयों में फँस जाता है । और मेरा स्मरण करता हुआ चित्त मुझ में ही लीन हो जाता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तस्मादसदभिध्यानं यथा स्वप्नमनोरथम् ।
हित्वा मयि समाधत्स्व मनो मद्भावभावितम् ॥२८॥

पदच्छेद—

तस्मात् असदभि ध्यानम् यथा स्वप्न मनोरथम् ।
हित्वा मयि समाधत्स्व मनः मत् भावः भावितम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	हित्वा	७.	छोड़ कर
असत् अभि	५.	असत् वस्तुओं का	मयि	११.	मुझ में ही
ध्यानम्	६.	चिन्तन	समाधत्स्व	१२.	लगा दो
यथा	४.	समान	मनः मत्	८.	अपने मन को मेरे
स्वप्न	२.	स्वप्न और	भाव	९.	चिन्तन से
मनोरथाम् ।	३.	मनोरथों के राज्य के	भावितम् ॥	१०.	शुद्ध कर लो और उसे

श्लोकार्थ—इसलिये स्वप्न और मनोरथों के राज्य के समान असत् वस्तुओं का चिन्तन छोड़ कर अपने मन को मेरे चिन्तन से शुद्ध कर लो और उसे मुझ में ही लगा दो ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

स्त्रीणां स्त्रीसङ्गिनां सङ्गं त्यक्त्वा दूरत आत्मवान् ।
क्षेमे विविक्त आसीनश्चिन्तयेन्मामतन्द्रितः ॥२९॥

पदच्छेद—

स्त्रीणाम् स्त्रीसङ्गिनाम् सङ्गं त्यक्त्वा दूरत आत्मवान्
क्षेमे विविक्त आसीनः चिन्तयेत् माम् अतन्द्रितः ॥

शब्दार्थ—

स्त्रीणाम्	२.	स्त्रियों और	क्षेमे	८.	निर्भय और
स्त्री	३.	स्त्रियों में	विविक्ते	९.	पवित्र एकान्त स्थान में
सङ्गिनाम्	४.	आसक्त	आसीनः	१०.	बैठकर
सङ्गम्	५.	लोगों का सङ्ग	चिन्तयेत्	१३.	चिन्तन करे
त्यक्त्वा	७.	छोड़कर	माम्	१२.	मेरा ही
दूरत	६.	दूर से ही	अतन्द्रितः ॥	११.	बड़ी सावधानी से
आत्मवान् ।	१.	संयमी पुरुष			

श्लोकार्थ—संयमी पुरुष स्त्रियों और स्त्रियों में आसक्त लोगों का सङ्ग दूर से ही छोड़कर निर्भय और पवित्र एकान्त स्थान में बैठकर बड़ी सावधानी से मेरा ही चिन्तन करे ।

त्रिंशः श्लोकः

न तथास्य भवेत् क्लेशो बन्धश्चान्यप्रसङ्गतः ।
योषित्सङ्गाद् यथा पुंसो यथा तत्सङ्गिसङ्गतः ॥३०॥

पदच्छेद—

न तथा अस्य भवेत् क्लेशः बन्धः च अन्य प्रसङ्गतः ।
योषित् सङ्गात् यथा पुंसः यथा तत् सङ्गि सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

न	११.	नहीं	योषित्	२.	स्त्रियों के
तथा अस्य	८.	वैसा इसे	सङ्गात्	३.	सङ्ग से और
भवेत्	१२.	होता है	यथा पुंसः	१.	पुरुष को जैसा
क्लेशबन्धः	७.	क्लेश और बन्धन होता है	यथा तत्	४.	जैसा स्त्री
च अन्य	९.	और अन्य किसी के भी	सङ्गि	५.	सङ्गियों के
प्रसङ्गतः ।	१०	सङ्ग से	सङ्गतः ॥	६.	सङ्ग से

श्लोकार्थ—पुरुष को जैसा स्त्रियों के सङ्ग से और जैसा स्त्री सङ्गियों के सङ्ग से क्लेश और बन्धन होता है । वैसा इसे और अन्य किसी के भी सङ्ग से नहीं होता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—**यथा त्वामरविन्दाक्ष यादृशं वा यदात्मकम् ।**
ध्यायेन्मुमुक्षुरेतन्मे ध्यानं त्वं वक्तुमर्हसि ॥३१॥

पदच्छेद—

यथा त्वाम् अरविन्दाक्ष यादृशम् वा यत् आत्मकम् ।
ध्यायेत् मुमुक्षुः एतत् मे ध्यानम् त्वम् वक्तुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

यथा	७.	जिस रूप से	ध्यायेत्	१२.	ध्यान करते हैं
त्वाम्	६.	आपका	मुमुक्षुः	५.	मुमुक्षु पुरुष
अरविन्दाक्ष	१.	हे कमलनयन ! भगवान्	एतत् मे	१५.	आप मुझे बतायें
यादृशम्	९.	जिस प्रकार का या	ध्यानम्	१३.	वह ध्यान
वा	८.	अथवा	त्वम्	२.	आप
यत्	१०.	जिस	वक्तुम्	३.	यह बताने की
आत्मकम् ।	११.	भाव से	अर्हसि ॥	४.	कृपा करें कि

श्लोकार्थ—हे कमलनयन ! भगवान् आप यह बताने की कृपा करें कि मुमुक्षु पुरुष आपकी जिस रूप से अथवा जिस प्रकार का या जिस भाव से ध्यान करते हैं । वह ध्यान आप मुझे बतावें ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुउवाच—**सम आसन आसीनः समकायो यथासुखम् ।**
हस्तावुत्सङ्ग आधाय स्वनासाग्रकृतेक्षणः ॥३२॥

पदच्छेद—

सम आसने आसीनः समकायः यथा सुखम् ।
हस्तौ उत्सङ्गे आधाय स्वनासा अग्रकृत ईक्षणः ॥

शब्दार्थ—

सम	१.	समान	हस्तौ	७.	अपने दोनों हाथों की
आसने	२.	आसन पर	उत्सङ्गे	८.	अपनी गोद में
आसीनः	३.	बैठकर	आधाय	९.	रख ले और
सम	५.	सीधा रखकर	स्वनासा	१०.	अपनी नासिका के
कायः	४.	शरीर को	अग्र	११.	अग्रभाग पर
यथा सुखम् ।	६.	सुखपूर्वक बैठ जाय	कृतईक्षणः ॥	१२.	दृष्टि जमावे

श्लोकार्थ—समान आसन पर बैठकर शरीर को सीधा रखकर सुखपूर्वक बैठ जाय । अपने दोनों हाथों को अपनी गोद में रख ले और अपनी नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमावे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

प्राणस्य शोधयेन्मार्गं पूरकुम्भकरेचकैः ।
विपर्ययेणापि शनैरभ्यसेन्निर्जितेन्द्रियः ॥३३॥

पदच्छेद—

प्राणस्य शोधयेत् मार्गम् पूर कुम्भक रेचकैः ।
विपर्ययेण अपि शनैः अभ्यसेत् निर्जित इन्द्रियः ॥

शब्दार्थ—

प्राणस्य	६.	प्राणवायु के	विपर्ययेण	४.	रेचक कुम्भक पूरक प्राणयाम के द्वारा
शोधयेत्	८.	शोधन करे फिर	अपि	५.	भी
मार्गम्	७.	मार्ग अर्थात नाड़ियों का	शनैः	११.	धीरे-धीरे प्राणायाम का
पूर	१.	इसके बाद पूरक	अभ्यसेत्	१२.	अभ्यास करे
कुम्भक	२.	कुम्भक	निर्जित	१०.	संयम पूर्वक
रेचकैः ।	३.	रेचक तथा	इन्द्रियः	९.	इन्द्रियों के

श्लोकार्थ—इसके बाद पूरक कुम्भक, रेचक तथा रेचक, कुम्भक पूरक प्राणायाम के द्वारा भी प्राणवायु के मार्ग अर्थात नाड़ियों का शोधन करे फिर इन्द्रियों के संयम पूर्वक धीरे-धीरे प्राणायाम का अभ्यास करे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

हृद्यविच्छिन्नमोङ्कारं घण्टानादं बिसोर्णवत् ।
प्राणेनोदीर्य तत्राथ पुनः संवेशयेत् स्वरम् ॥३४॥

पदच्छेद—

हृदि अविछिन्नम् ओङ्कारम् घण्टानादं बिसोर्णवत् ।
प्राणेन उदीर्य तत्र अथ पुनः संवेशयेत् स्वरम् ॥

शब्दार्थ—

हृदि	१.	हृदय में	प्राणेन	६.	प्राण के द्वारा
अविछिन्नम्	४.	निरन्तर	उदीर्य	७.	उसे ऊपर ले जाय और
ओङ्कारम्	५.	ओंङ्कार का चिन्तन करे	तत्र अथ	८.	तब उसमें
घण्टानादम्	११.	घण्टा नाद के समान	पुनः	९.	पुनः
बिसोर्ण	२.	कमल नाल गत पतले सूत के	संवेशयेत्	१२.	स्थिर करे
वत् ।	३.	समान	स्वरम् ॥	११.	स्वर को

श्लोकार्थ—हृदय में कमल नाल गत पतले सूत के समान निरन्तर ओङ्कार का चिन्तन करे। प्राण के द्वारा उसे ऊपर ले जाय और तब उसमें पुनः घण्टा नाद के समान स्वर को स्थिर करे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एवं प्रणवसंयुक्तं प्राणमेव समभ्यसेत् ।
दशकृत्वस्त्रिषवणं मासादर्वाग् जितानिलः ॥३५॥

पदच्छेद—

एवम् प्रणव संयुक्तं प्राणम् एव सम् अभ्यसेत् ।
दशकृत्वः त्रिषवणम् मासात् अर्वाक् जित अनिलः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	दशकृत्वः	३.	दस-दस बार
प्रणव	४.	ओङ्कार	त्रिषवणम्	२.	प्रतिदिन तीन समय
संयुक्तं	५.	सहित	मासात्	९.	एक महीने के
प्राणम्	६.	प्राणायाम का	अर्वाक्	१०.	भीतर
एव	७.	ही	जित	१२.	वश में हो जाता है
सम्अभ्यसेत् ।	८.	अभ्यास करे	अनिलः ॥	११.	प्राणवायु

श्लोकार्थ—इस प्रकार प्रतिदिन तीन समय दस-दस बार ओङ्कार सहित प्राणायाम का ही अभ्यास करे । एक महीने के भीतर ही प्राण वायु वश में हो जाता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

हृत्पुण्डरीकमन्तःस्थमूर्ध्वनालमधोमुखम् ।
ध्यात्वोर्ध्वमुखमुन्निद्रमष्टपत्रं सकर्णिकम् ॥३६॥

पदच्छेद—

हृत् पुण्डरीकम् अन्तः स्थम् ऊर्ध्व नालम् अधः मुखम् ।
ध्यात्वा ऊर्ध्वमुखम् उन्निद्रम् अष्टपत्रम् सकर्णिकम् ॥

शब्दार्थ—

हृत्पुण्डरीकम्	२.	हृदय एक कमल है	ध्यात्वा	१.	इसके बाद ऐसा चिन्तन करे
अन्तः स्थम्	३.	वह शरीर के भीतर स्थित है	ऊर्ध्व मुखम्	८.	फिर उसका मुख ऊपर की ओर
ऊर्ध्व	५.	ऊपर की ओर है	उन्निद्रम्	९.	होकर खुल गया है
नालम्	४.	उसकी डंडी	अष्ट	१०.	उनकी आठ
अधो	७.	नीचे की ओर है	पत्रम्	११.	पंखुड़ियाँ हैं
मुखम् ।	६.	और मुँह	सकर्णिकम् ॥	१२.	उनके बीचों बीच सुकुमार कर्णिका है

श्लोकार्थ—इसके बाद ऐसा चिन्तन करे कि हृदय एक कमल है । वह शरीर के भीतर स्थित है । उसकी डंडी ऊपर की ओर है । और मुँह नीचे की ओर है । फिर उसका मुख ऊपर की ओर होकर खुल गया है । उनकी आठ पंखुड़ियाँ है । उनके बीचो बीच सुकुमार कर्णिका है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

कर्णिकाया न्यसेत् सूर्यसोमाग्नीनुत्तरोत्तरम् ।
वह्निमध्ये स्मरेद् रूपं ममैतद् ध्यानमङ्गलम् ॥३७॥

पदच्छेद—

कर्णिकायाम् न्यसेत् सूर्य सोम अग्निम् उत्तर उत्तरम् ।
वह्नि मध्ये स्मरेत् रूपम् मम एतत् ध्यानमङ्गम् ॥

शब्दार्थ—

कर्णिकायाम्	१.	कर्णिका पर	वह्निमध्ये	७.	तब अग्नि के अन्दर
न्यसेत्	२.	न्यास करना चाहिये	स्मरेत्	१०.	स्मरण करना चाहिये
सूर्य	३.	सूर्य	रूपम्	९.	रूप का
सोम	४.	चन्द्रमा और	मम एतत्	८.	मेरे इस
अग्निम्	५.	अग्नि का	ध्यान	११.	यह ध्यान बड़ा ही
उत्तर उत्तरम् ।	२.	क्रमशः	मङ्गलम् ॥	१२.	मङ्गलमय है

श्लोकार्थ—कर्णिका पर क्रमशः सूर्य चन्द्रमा और अग्नि का न्यास करना चाहिये । तब अग्नि के अन्दर मेरे इस रूप का स्मरण करना चाहिये । यह ध्यान बड़ा ही मङ्गलमय है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

समं प्रशान्तं सुमुखं दीर्घचारुचतुर्भुजम् ।
सुचारुसुन्दरग्रीवं सुकपोलं शुचिस्मितम् ॥३८॥

पदच्छेद—

समम् प्रशान्तम् सुमुखम् दीर्घचारु चतुर्भुजम् ।
सुचारु सुन्दरग्रीवम् सुकपोलम् शुचिस्मितम् ॥

शब्दार्थ—

समम्	१.	शरीर सम और	सुचारु	७.	बड़ी ही मनोरम्
प्रशान्तम्	२.	शान्त है	सुन्दर	९.	और सुन्दर है
सुमुखम्	३.	मुख कमल सुन्दर है	ग्रीवम्	८.	गरदन
दीर्घ	४.	लम्बी और	सुकपोलम्	१०.	कपोल सुन्दर है
चारु	५.	सुन्दर	शुचि	१२.	पवित्र है
चतुर्भुजम् ।	६.	चार भुजायें हैं	स्मितम् ॥	११.	मन्द मुसकान

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! शरीर सम और शान्त है । मुख कमल सुन्दर है लम्बी और सुन्दर चार भुजायें हैं । गरदन बड़ी ही मनोरम और सुन्दर है । कपोल सुन्दर हैं, मन्द मुसकान पवित्र है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

समानकर्णविन्यस्तस्फुरन्मकरकुण्डलम् ।
हेमाम्बरं घनश्यामं श्रीवत्स श्रीनिकेतनम् ॥३९॥

पदच्छेद—

समान कर्ण विन्यस्तस्फुरत् मकर कुण्डलम् ।
हेम अम्बरम् घनश्यामम् श्रीवत्स श्रीनिकेतनम् ॥

शब्दार्थ—

समान	२.	समान हैं	हेम	८.	पीले रंग का
कर्ण	१.	कान	अम्बरम्	९.	पीताम्बर फहरा रहा है और
विन्यस्त	६.	पहने हैं	घनश्यामम्	७.	मेघ के समान श्यामल शरीर पर
स्फुरत्	३.	उनमें झिलमिलाते हुये	श्रीवत्स	१०.	श्रीवत्स तथा
मकर	४.	मकराकृत	श्री	११.	लक्ष्मी जी का
कुण्डलम् ।	५.	कुण्डल	निकेतनम् ॥	१२.	चिह्न वक्षः स्थल पर है

श्लोकार्थ—दोनों कान समान हैं। उनमें झिलमिलाते हुये मकराकृत कुण्डल पहने हैं। मेघ के समान श्यामल शरीर पर पीले रंग का पीताम्बर फहरा रहा है। और श्रीवत्स तथा लक्ष्मी जी का चिह्न वक्षःस्थल पर है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

शङ्खचक्रगदापद्मवनमालाविभूषितम् ।
नूपुरैर्विलसत्पादं कौस्तुभप्रभया युतम् ॥४०॥

पदच्छेद—

शङ्ख चक्र गदा पद्म वनमाला विभूषितम् ।
नूपुरैः विल सत् पादम् कौस्तुभ प्रभया युतम् ॥

शब्दार्थ—

शङ्ख	१.	हाथों में शङ्ख	नूपुरैः	८.	नूपुर
चक्र	२.	चक्र	विलसत्	९.	शोभा दे रहे हैं
गदा	३.	गदा और	पादम्	७.	चरणों में
पद्म	४.	पद्म धारण किये हुये हैं	कौस्तुभ	१०	गले में कौस्तुभ मणि की
वनमाला	५.	गले में वनमाल	प्रभया	११.	कान्ति
विभूषितम् ।	६.	सुशोभित हो रही है	युतम् ॥	१२.	जगमगा रही है

श्लोकार्थ—हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण किये हुये हैं, गले में वनमाला सुशोभित हो रही है। चरणों में नूपुर शोभा दे रहे हैं। गले में कौस्तुभ मणि की कान्ति जगमगा रही है ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

द्युमत्किरीटकटककटिसूत्राङ्गदायुतम् ।
सर्वाङ्गसुन्दरं हृद्यं प्रसादसुमुखेक्षणम् ।
सुकुमारमभिध्यायेत् सर्वाङ्गेषु मनो दधत् ॥४१॥

पदच्छेद— द्युमत् किरीट कटक कटि सूत्र अङ्गद अयुतम् ।
सर्वाङ्ग सुन्दरम् हृद्यम् प्रसाद सुमुख ईक्षणम् ।
सुकुमारम् अभिध्यायेत् सर्वाङ्गेषु मनः दधत् ॥

शब्दार्थ—

द्युमत	१.	चमचमाते हुये	प्रसाद सुमुख	८.	सुन्दर मुख प्यार भरी
किरीट कटक	२.	किरीट-कङ्कन	ईक्षणम ।	९.	चितवन से युक्त मेरे
कटि सूत्र	३.	करधनी और	सुकुमारम्	१०.	सुकुमार रूप का
अङ्गद	४.	बाजूबन्द	अभिध्यायेत्	११.	ध्यान करना चाहिये
अयुतम्	५.	शोभायमान हो रहे हैं	सर्वाङ्गेषु	१३.	एक-एक अङ्गों में
सर्वाङ्ग सुन्दरम्	६.	मेरा अङ्ग अति सुन्दर	मनः	१२.	अपने मन को मेरे
हृद्यम्	७.	और हृदय ग्राही है	दधत् ।।	१४.	लगाना चाहिये ।

श्लोकार्थ— हे उद्धव ! चमचमाते हुये किरीट-कङ्कन, करधनी और बाजूबन्द शोभायमान हो रहे हैं। मेरा अङ्ग अति सुन्दर है और हृदय ग्राही है। सुन्दर मुख प्यार भरी चितवन से युक्त मेरे सुकुमार रूप का ध्यान करना चाहिये अपने मन को मेरे एक-एक अङ्गों में लगाना चाहिये ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यो मनसाऽऽकृष्य तन्मनः ।
बुद्ध्या सारथिना धीरः प्रणयेन्मयि सर्वतः ॥४२॥

पदच्छेद—
इन्द्रियाणि इन्द्रिय अर्थेभ्यः मनसा आकृष्य तन्मनः ।
बुद्धया सारथिना धीरः प्रणयेत् मयि सर्वतः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रियाणि	३.	इन्द्रियों को	बुद्धया	८.	बुद्धि रूप
इन्द्रिय	४.	इन्द्रियों के	सारथिना	९.	सारथी की सहायता से
अर्थेभ्यः	५.	विषयों से	धीरः	१.	बुद्धिमान पुरुष
मनसा	२.	मन के द्वारा	प्रणयेत्	१२.	लगा दे
आकृष्य	६.	खींच कर फिर	मयि	११.	मुझ में ही
तन्मनः ।	७.	उस मन को	सर्वतः ।।	१०.	चारों ओर से

श्लोकार्थ—बुद्धिमान पुरुष मन के द्वारा इन्द्रियों को इन्द्रियों के विषयों से खींच कर फिर उस मन को बुद्धि रूप सारथी की सहायता से चारों ओर से मुझ में ही लगा दे ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

तत् सर्वव्यापकं चित्तमाकृष्यैकत्र धारयेत् ।
नान्यानि चिन्तयेद् भूयः सुस्मितं भावयेन्मुखम् ॥४३॥

पदच्छेद—

तत् सर्व व्यापकम् चित्तम् आकृष्य एकत्र धारयेत् ।
न अन्यानि चिन्तयेत् भूयः सुस्मितम् भावयेत् मुखम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उस	न	९.	न करके
सर्वव्यापक	२.	सर्वव्यापक	अन्यानि	७.	अन्य अङ्गों का
चित्तम्	३.	चित्त को	चिन्तयेत्	८.	चिन्तन
आकृष्य	४.	खींच कर	भूयः सुस्मितम्	१०.	फिर मन्द मुसकान युक्त
एकत्र	५.	एक स्थान पर	भावयेत्	१२.	ध्यान करें
धारयेत् ।	६.	स्थिर करे	मुखम् ॥	११.	मेरे मुख का ही

श्लोकार्थ—उस सर्वव्यापक चित्त को खींच कर एक स्थान पर स्थिर करे । अन्य अङ्गों का चिन्तन न करके फिर मन्द मुसकान युक्त मेरे मुख का ही ध्यान करे ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

तत्र लब्धपदं चित्तमाकृष्य व्योम्नि धारयेत् ।
तच्च त्यक्त्वा मदारोहो न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥४४॥

पदच्छेद—

तत्र लब्ध पदम् चित्तम् आकृष्य व्योम्नि धारयेत् ।
तत् च त्यक्त्वा मद् आरोहः न किञ्चित् अपिचिन्तयेत् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	२.	मुखारविन्द में	तत् च	८.	और फिर आकाश का चिन्तन
लब्ध	४.	प्राप्त करले तब	त्यक्त्वा	९.	भी छोड़ कर
पदम्	३.	स्थिरता को	मद्	१०.	मेरे स्वरूप में
चित्तम्	१.	चित्त जब	आरोहः	११.	आरूढ़ हो जावे और
आकृष्य	५.	उसे वहाँ से हटाकर	न	१४.	न करे
व्योम्नि	६.	आकाश में	किञ्चित्	१२.	कुछ
धारयेत् ।	७.	स्थिर करे	अपिचिन्तयेत् ॥	१३.	भी चिन्तन

श्लोकार्थ—चित्त जब मुखारविन्द में स्थिरता को प्राप्त करले, तब उसे वहाँ से हटाकर आकाश में स्थिर करे । और फिर आकाश का चिन्तन भी छोड़कर मेरे स्वरूप में आरूढ़ हो जाय और कुछ भी चिन्तन न करे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

एवं समाहितमतिर्मामेवात्मानमात्मनि ।
विचष्टे मयि सर्वात्मन् ज्योतिर्ज्योतिषि संयुतम् ॥४५॥

पदच्छेद— एवम् समाहित मतिः माम् एव आत्मानम् आत्मनि ।
विचष्टे मयि सर्व आत्मन् ज्योतिः ज्योतिषि संयुतम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. जब इस प्रकार	विचष्टे	१३. अनुभव करने लगता है
समाहित	३. समाहित हो जाता है	मयि	१०. मुझ
मतिः	२. चित्त	सर्वात्मन्	११. परमात्मा में
माम्	९. मुझे और	ज्योतिः	४. तब जैसे ज्योति
एव	७. वैसे ही	ज्योतिषि	५. दूसरी ज्योति में
आत्मानम्	१२. अपने को	संयुतम् ॥	६. मिल कर एक हो जाती है
आत्मनि ।	८. अपने में		

श्लोकार्थ—जब इस प्रकार चित्त समाहित हो जाता है। तब जैसे ज्योति दूसरी ज्योति में मिलकर एक हो जाती है। वैसे ही अपने में मुझे और मुझ परमात्मा में अपने को अनुभव करने लगता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

ध्यानेनेत्थं सुतीव्रेण युञ्जतो योगिनो मनः ।
संयास्यत्याशु निर्वाणं द्रव्यज्ञानक्रियाभ्रमः ॥४६॥

पदच्छेद— ध्यानेन इत्थम् सुतीव्रेण युञ्जतः योगिनः मनः ।
संयास्यति आशु निर्वाणम् द्रव्य ज्ञान क्रिया भ्रमः ॥

शब्दार्थ—

ध्यानेन	४. ध्यान योग के द्वारा	संयास्यति	११. दूर हो जाता है और वह
इत्थम्	२. इस प्रकार	आशु	१०. शीघ्र ही
सुतीव्रेण	३. तीव्र	निर्वाणम्	१२. मोक्ष प्राप्त करता है
युञ्जतः	६. संयम करता है	द्रव्य	७. उसके चित्त से वस्तु
योगिनः	१. जो योगी	ज्ञान क्रिया	८. ज्ञान और उनकी प्राप्ति हेतु कर्मों का
मनः ।	५. चित्त का	भ्रमः ॥	९. भ्रम

श्लोकार्थ—जो योगी इस प्रकार तीव्र ध्यान योग के द्वारा चित्त का संयम करता है। उसके चित से वस्तु-ज्ञान और उनकी प्राप्ति हेतु कर्मों का भ्रम शीघ्र ही दूर हो जाता है। और वह मोक्ष प्राप्त करता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशः स्कन्ध चतुर्दशः अध्यायः ॥१४॥

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

पञ्चदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—जितेन्द्रियस्य युक्तस्य जितश्वासस्य योगिनः ।
मयि धारयतश्चेत उपतिष्ठन्ति सिद्धयः ॥१॥

पदच्छेद—

जितइन्द्रियस्य युक्तस्य जितश्वासस्य योगिनः ।
मयि धारयतः चेत उपतिष्ठन्ति सिद्धयः ॥

शब्दार्थ—

जित	३.	जीतकर और	मयि	८.	मुझ में
इन्द्रियस्य	२.	इन्द्रियों को	धारयतः	९.	लगाता है
युक्तस्य	६.	मन को वश में करके	चेत	७.	अपना चित्त
जित	५.	जीतकर	उपतिष्ठन्ति	११.	उपस्थित होती हैं
श्वासस्य	४.	प्राण को भी	सिद्धयः ।	१०.	तब बहुत सी सिद्धियाँ
योगिनः ॥	१.	जब साधक			

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! जब साधक इन्द्रियों को जीतकर और प्राणों को भी जीतकर मन को वश में करके अपना चित्त मुझमें लगाता है । तब बहुत सी सिद्धियाँ उपस्थित होती हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

उद्धव उवाच—कया धारणया कास्वित् कथंस्वित् सिद्धिरच्युत ।
कति वा सिद्धयो ब्रूहि योगिनां सिद्धिदो भवान् ॥२॥

पदच्छेद—

कया धारणया कास्वित् कथंस्वित् सिद्धिः अच्युत ।
कतिवा सिद्धयो ब्रूहि योगिनाम् सिद्धिदः भवान् ॥

शब्दार्थ—

कया	२.	कौन सी	कति	८.	कितनी हैं
धारणया	३.	धारणा करने से	वा सिद्धयो	७.	और वे सिद्धियाँ
कास्वित्	५.	कौन सी	ब्रूहि	१२.	उनका वर्णन कीजिये
कथंस्वित्	४.	किस प्रकार और	योगिनाम्	१०.	योगियों को
सिद्धिः	६.	सिद्धि प्राप्त होती है	सिद्धिदः	११.	सिद्धियाँ देने वाले हैं
अच्युत ।	१.	हे अच्युत !	भवान् ॥	९.	आप

श्लोकार्थ—हे अच्युत ! कौन सी धारणा करने से किस प्रकार और कौन सी सिद्धि प्राप्त होती है । और वे सिद्धियाँ कितनी हैं । आप योगियों को सिद्धियाँ देने वाले हैं । उनका वर्णन कीजिये ॥

तृतीयः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—सिद्धयोऽष्टादश प्रोक्ता धारणायोगपारगैः ।
तासामष्टौ मत्प्रधाना दशैव गुणहेतवः ॥३॥

पदच्छेद—

सिद्धयः अष्टादश प्रोक्ता धारणा योग पारगैः ।
तासामष्टौ मत् प्रधानाः दशैव गुण हे तवः ॥

शब्दार्थ—

सिद्धयः	५.	सिद्धियाँ	तासाम्	७.	उनमें
अष्टादश	४.	आठारह प्रकार की	अष्टौ	८.	आठ सिद्धियाँ तो
प्रोक्ताः	६.	बतलाई हैं	मत्	१०.	मुझमें ही रहती हैं
धारणा	१.	धारणा	प्रधानाः	९.	प्रधानरूप से
योग	२.	योग के	दशैव	११.	और दस
पारगैः ।	३.	पारगामी योगियों ने	गुण हे तवे ॥	१२.	सत्त्व गुण के विकास से मिल जाती हैं

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! धारणा योग के पारगामी योगियों ने अठारह प्रकार की सिद्धियाँ बतलाई हैं। उनमें आठ सिद्धियाँ तो प्रधान रूप से मुझमें ही रहती हैं। और दश सत्त्व गुण के विकास से मिल जाती हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

अणिमा महिमा मूर्तेर्लघिमा प्राप्तिरिन्द्रियैः ।
प्राकाम्यं श्रुतदृष्टेषु शक्तिप्रेरणमीशिता ॥४॥

पदच्छेद—

अणिमा महिमा मूर्तेः लघिमा प्राप्तिः इन्द्रियैः ।
प्राकाम्यम् श्रुत दृष्टेषु शक्ति प्रेरणम् ईशिता ॥

शब्दार्थ—

अणिमा	१.	अणिमा	प्राकाम्यम्	९.	सिद्धि प्राकाम्य है
महिमा	२.	महिमा और	श्रुत	८.	पारलौकिक पदार्थों की
मूर्ते	४.	शरीर की हैं	दृष्टेषु	७.	लौकिक और
लघिमा ।	३.	लघिमा सिद्धियाँ	शक्ति	१०.	माया के कार्यों को
प्राप्ति	५.	प्राप्ती नामक सिद्धि	प्रेरणम्	११.	इच्छानुसार करना
इन्द्रियैः	६.	इन्द्रियों की हैं	ईशिता ॥	१२.	ईशिता नाम की सिद्धि है

श्लोकार्थ—अणिमा, महिमा और लघिमा सिद्धियाँ शरीर की हैं। प्राप्ती नामक सिद्धि इन्द्रियों की है। लौकिक और पारलौकिक पदार्थों की सिद्धि प्राकाम्य है। माया के कार्यों को इच्छानुसार करना ईशिता नाम की सिद्धि है ॥

पञ्चमः श्लोकः

गुणेष्वसङ्गो वशिता यत्कामस्तदवस्यति ।
एता मे सिद्धयः सौम्य अष्टावौत्पत्तिका मताः ॥५॥

पदच्छेद—

गुणेषु असङ्गः वशिता यत् कामः तत् अवस्यति ।
एता मे सिद्धयः सौम्य अष्टौ औत्पत्तिका मताः ॥

शब्दार्थ—

गुणेषु	१.	विषयों में	एता	६.	ये
असङ्गः	२.	आसक्त न होना	मे	१२.	मुझमें
वशिता	३.	वशिता है	सिद्धयः	११.	सिद्धियाँ
यत्	४.	जिस सुख की	सौम्य	८.	हे उद्धवः
कामः	५.	कामना करे	अष्टौ	१०.	आठों
तत्	६.	उसको सीमा तक पहुँचना	औत्पत्तिका	१३.	स्वभाव से ही
अवस्यति ।	७.	कामावसायित्व है	मताः ॥	१४.	रहती हैं

श्लोकार्थ--विषयों में आसक्त न होना वशिता है । जिस सुख की कामना करे उसको सीमा तक पहुँचना कामावसायित्व है । हे उद्धव ! ये आठों सिद्धियाँ मुझमें स्वभाव में से रहती हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

अनूर्मिमत्त्वं देहेऽस्मिन् दूरश्रवणदर्शनम् ।
मनोजवः कामरूपं परकायप्रवेशनम् ॥६॥

पदच्छेद—

अनूर्मिमत्वम् देहे अस्मिन् दूर श्रवण दर्शनम् ।
मनोजवः काम रूपम् परकाय प्रवेशनम् ॥

शब्दार्थ—

अनूर्मिमत्वम्	३.	भूख, प्यासादि न होना	मनोजवः	७.	मन के साथ ही पहुँच जाना
देहे	२.	शरीर में	काम	८.	जो इच्छा हो
अस्मिन्	१.	इस	रूपम्	९.	वही रूप बना लेना
दूर	४.	बहुत दूर की वस्तु	पर	१०.	दूसरे के
श्रवण	६.	सुन लेना	काय	११.	शरीर में
दर्शनम् ।	५.	देखना और	प्रवेशनम् ॥	१२.	प्रवेश करना

श्लोकार्थ--इस शरीर में भूख प्यासादि न होना, बहुत दूर की वस्तु देखना और सुन लेना । मन के साथ ही पहुँच जाना । वही रूप बना लेना, दूसरे के शरीर में प्रवेश करना ॥

सप्तमः श्लोकः

स्वच्छन्दमृत्युर्देवानां सहक्रीडानुदर्शनम् ।
यथासङ्कल्पसंसिद्धिराज्ञाप्रतिहतागतिः ॥७॥

पदच्छेद—

स्वछन्द मृत्युः देवानाम् सह क्रीडा अनुदर्शनम् ।
यथा सङ्कल्प संसिद्धिः आज्ञा प्रतिहता गतिः ॥

शब्दार्थ—

स्वछन्द	१.	जब इच्छा हो तभी	यथा	७.	जैसा
मृत्युः	२.	शरीर छोड़ना	संकल्प	८.	सङ्कल्प हो, उसकी
देवानाम्	४.	देवताओं को	संसिद्धि	९.	सिद्धि
सह	३.	अप्सराओं के साथ	आज्ञा	१२.	सर्वत्र आज्ञा पालन
क्रीडा	५.	क्रीडा का	प्रतिहता	१०.	बिना रोक-टोक
अनुदर्शनम् ।	६.	दर्शन	गतिः ॥	११.	स्थिति के कारण

श्लोकार्थ—जब इच्छा हो तभी शरीर छोड़ना अप्सराओं के साथ देवताओं को क्रीडा का दर्शन, जैसा सङ्कल्प हो उसकी सिद्धि बिना रोक-टोक स्थिति के कारण सर्वत्र आज्ञापालन, ये दस सिद्धियाँ सत्त्व गुण के विशेष विकास से होती हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

त्रिकालज्ञत्वमद्वन्द्वं परचित्ताद्यभिज्ञता ।
अग्न्यर्काम्बुविषादादीनां प्रतिष्टम्भोऽपराजयः ॥८॥

पदच्छेद—

त्रिकालज्ञत्वम् अद्वन्द्वम् परचित्तादि अभिज्ञता ।
अग्निअर्कअम्बु विषादीनाम् प्रतिष्टम्भः अपराजयः ॥

शब्दार्थ—

त्रिकालज्ञत्वम्	१.	भूत, भविष्य वर्तमान की बात जान लेना	अर्क	६.	सूर्य
अद्वन्द्वम्	२.	द्वन्द्वों के वश में न होना	अम्बु	७.	जल
परचित्तादि	३.	दूसरे के मन की बात	विषादीनाम्	८.	विषादि की शक्ति को
अभिज्ञता ।	४.	जान लेना	प्रतिष्टम्भः	९.	स्तम्भितकर देना और
अग्नि	५.	अग्नि	अपराजयः ॥	१०.	किसी से भी पराजित न होना

श्लोकार्थ—भूत-भविष्य-वर्तमान की बात जान लेना, द्वन्द्वों के वश में न होना । दूसरे के मन की बात जान लेना, अग्नि, सूर्य, जल, विषादि की शक्ति को स्तम्भित कर देना, और किसी से भी पराजित न होना ॥

नवमः श्लोकः

एताश्चोद्देशतः प्रोक्ता योगधारणसिद्धयः ।
यया धारणया या स्याद् यथा वा स्यान्निबोध मे ॥९॥

पदच्छेद—

एताः च उद्देशतः प्रोक्ताः योगधारण सिद्धयः ।
यया धारणया या स्यात् यथा वा स्यात् निबोध मे ॥

शब्दार्थ—

एताः	३.	उनका मैंने	यया	७.	किस
च	६.	और अब	धारणया	८.	धारणा से
उद्देशतः	४.	नाम निर्देशपूर्वक	या स्यात्	९.	कौन सी सिद्धि मिलती है
प्रोक्ताः	५.	वर्णन कर दिया है	यथा वा	१०.	और वह कैसे
योगधारण	१.	योगधारणा करने से	स्यात्	११.	प्राप्त होती है
सिद्धयः ।	२.	जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं	निबोधमे ॥	१२.	इसे मुझसे सुनो

श्लोकार्थ—योगधारण करने से जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं । उनका मैंने नाम-निर्देशपूर्वक वर्णन कर दिया है । और अब किस धारणा से कौन सी सिद्धि मिलती है । और वह कैसे प्राप्त होती है । इसे मुझसे सुनो ॥

दशमः श्लोकः

भूतसूक्ष्मात्मनि मयि तन्मात्रं धारयेन्मनः ।
अणिमानमवाप्नोति तन्मात्रोपासको मम ॥१०॥

पदच्छेद—

भूतसूक्ष्म आत्मनि मयि तत् मात्रम् धारयेत् मनः ।
अणिमानम् अवाप्नोति तन्मात्र उपासकः मम ॥

शब्दार्थ—

भुत	१.	पञ्चभूतों की	मनः ।	५.	जो अपने मन को
सूक्ष्म	२.	सूक्ष्मतम मात्रायें	अणिमानम्	११.	अणिमानामक सिद्धि को प्राप्त करता है
आत्मनि	४.	शरीर है	अवाप्नोति	१२.	
मयि	३.	मेरा ही	तन्मात्र	९.	तन्मात्रात्मक शरीर की
तन्मात्रम्	६.	तन्मात्राओं में	उपासकः	१०.	उपासना करता है वह
धारयेत्	७.	लगा देता है और	मम ॥	८.	मेरे

श्लोकार्थ—पञ्चभूतों की सूक्ष्मतम मात्रायें मेरा ही शरीर है । जो अपने मन को तन्मात्राओं में लगा देता है । और मेरे तन्मात्रात्मक शरीर की उपासना करता है । वह अणिमा नाम की सिद्धि को प्राप्त करता है ॥

एकादशः श्लोकः

महत्यात्मन्मयि परे यथासंस्थं मनो दधत् ।
महिमानमवाप्नोति भूतानां च पृथक् पृथक् ॥११॥

पदच्छेद—

महति आत्मन् मयि परे यथा संस्थम् मनः दधत् ।
महिमानम् अवाप्नोति भूतानाम् च पृथक् पृथक् ॥

शब्दार्थ—

महति	१.	महतत्त्व के	महिमानम्	७.	उसे महिमा नाम की सिद्धि
आत्मन्	२.	रूप में भी	अवाप्नोति	८.	प्राप्त हो जाती है
मयि परे	३.	मैं ही प्रकाशित हो रहा हूँ	भूतानाम्	१०.	पञ्चभूतों में
यथासंस्थम्	५.	महत्तत्त्व में	च	९.	और
मनः	४.	जो अपने मन को	पृथक्	११.	अलग
दधत् ।	६.	लगा देता है	पृथक् ॥	१२.	अलग मन लगाने से उनकी महत्ता प्राप्त होती है

श्लोकार्थ—महत्तत्त्व के रूप में भी मैं ही प्रकाशित हो रहा हूँ। जो अपने मन को महत्तत्त्व में लगा देता है। उसे महिमा नाम की सिद्धि प्राप्त हो जाती है। और पञ्चभूतों में अलग-अलग मन लगाने से उनकी महत्ता प्राप्त होती है।

द्वादशः श्लोकः

परमाणुमये चित्तं भूतानां मयि रञ्जयन् ।
कालसूक्ष्मार्थतां योगी लघिमानमवाप्नुयात् ॥१२॥

पदच्छेद—

परमाणुमये चित्तम् भूतानाम् मयि रञ्जयन् ।
काल सूक्ष्म अर्थताम् योगी लघिमानम् अवाप्नुयात् ॥

शब्दार्थ—

परमाणुमये	३.	परमाणुओं को	काल	७.	परमाणु रूप काल के समान
चित्तम्	५.	अपने चित्त को	सूक्ष्म	८.	सूक्ष्म वस्तु बनने की
भूतानाम्	२.	वायु आदि भूतों के	अर्थताम्	९.	सामर्थ्य एवम्
मयि	४.	मेरा रूप समझ कर	योगी	१.	जो योगी
रञ्जयन् ।	६.	उनमें तदाकार करता है	लघिमानम्	१०.	लघिमा नामक सिद्धि का
			अवाप्नुयात् ॥	११.	प्राप्ति होती है

श्लोकार्थ—जो योगी वायु आदि भूतों के परमाणुओं को मेरा रूप समझ कर अपने चित्त को उनमें तदाकार करता है। उसे परमाणु रूप काल के समान सूक्ष्म वस्तु बनने की सामर्थ्य एवम् लघिमानाम की सिद्धि की प्राप्ति होती है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

धारयन् मय्यहंतत्त्वे मनो वैकारिकेऽखिलम् ।
सर्वेन्द्रियाणामात्मत्वं प्राप्तिं प्राप्नोति मन्मनाः ॥१३॥

पदच्छेद—

धारयन् मयि अहम् तत्त्वे मनः वैकारिके अखिलम् ।
सर्व इन्द्रियाणाम् आत्मत्वम् प्राप्तिम् प्राप्नोति मत् मनाः ॥

शब्दार्थ—

धारयन्	४.	उसमें धारणा करके	सर्व	७.	वह समस्त
मयि	३.	मेरा स्वरूप समझ कर	ईन्द्रियाणाम्	८.	इन्द्रियों का
अहम् तत्त्वे	२.	अहंकार को	आत्मत्वम्	९.	अधिष्ठाता हो जाता है
मनः	५.	अपने मन को	प्राप्तिम्	११.	प्राप्ति नाम को सिद्धि को
वैकारिके	१.	जो सात्विक	प्राप्नोति	१२.	प्राप्त करता है
अखिलम् ।	७.	एकाग्र करता है	मत् मनाः ॥	१०.	मुझमें मन लगाने वाला व्यक्ति

श्लोकार्थ—जो सात्विक अहंकार को मेरा स्वरूप समझ कर उसमें धारणा करके अपने मन को एकाग्र करता है। वह समस्त इन्द्रियों का अधिष्ठाता हो जाता है। मुझमें मन लगाने वाला व्यक्ति प्राप्ति नाम को सिद्धि को प्राप्त करता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

महत्यात्मनि यः सूत्रे धारयेन्मयि मानसम् ।
प्राकाम्यं पारमेष्ठ्यं मे विन्दतेऽव्यक्तजन्मनः ॥१४॥

पदच्छेद—

महति आत्मनि यः सूत्रे धारयेत् मयि मानसम् ।
प्राकाम्यम् पारमेष्ठ्यम् मे विन्दते अव्यक्त जन्मनः ॥

शब्दार्थ—

महति	३.	महतत्त्वाभिमानी	प्रकाम्यम्	१२.	प्राकाम्य नाम की सिद्धि
आत्मनि	४.	रूप	पारमेष्ठ्यम्	११.	सर्वोत्कृष्ट
यः	१.	जो पुरुष	मे	८.	उसे मुझ
सूत्रे	५.	सुत्रात्मा में	विन्दते	१३.	प्राप्त होती है
धारयेत्	७.	स्थिर करता है	अव्यक्त	९.	अव्यक्त
मयि	२.	मुझ	जन्मनः ॥	१०.	जन्माकी
मानसम् ।	६.	अपना मन			

श्लोकार्थ—जो पुरुष मुझ महत्त्वाभिमानी रूप सूत्रात्मा में अपना मन स्थिर करता है। उसे मुझ अव्यक्त जन्मा की सर्वोत्कृष्ट प्राकाम्य नाम की सिद्धि प्राप्त होती है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

विष्णौ त्र्यधीश्वरे चित्तं धारयेत् कालविग्रहे।
स ईशित्वमवाप्नोति क्षेत्रक्षेत्रज्ञचोदनाम् ॥१५॥

पदच्छेद—

विष्णौ त्र्यधीश्वरे चित्तम् धारयेत् काल विग्रहे।
स ईशित्वम् अवाप्नोति क्षेत्र क्षेत्रज्ञ चोदनम् ॥

शब्दार्थ—

विष्णौ	२.	मेरे	सः	७.	वह
त्र्यधीश्वरे	१.	जो त्रिगुणमयी माया के स्वामी	ईशित्वम्	११.	ईशित्व नामक सिद्धि को
चित्तम्	५.	चित्त में	अवाप्नोति	१२.	प्राप्त करता है
धारयेत्	६.	धारण करता है	क्षेत्र	८.	शरीरों और
काल	३.	काल	क्षेत्रज्ञ	९.	जीवों को
विग्रहे।	४.	स्वरूप विश्वरूप को अपने	चोदनम् ॥	१०	प्रेरित करने की सामर्थ्यरूप

श्लोकार्थ—जो त्रिगुणमयी माया के स्वामी काल स्वरूप विश्वरूप को अपने चित्त में धारण करता है वह शरीरों और जीवों को प्ररित करने की सामर्थ्य रूप ईशित्व नाम की सिद्धि को प्राप्त करता है ॥

षोडशः श्लोकः

नारायणे तुरीयाख्ये भगवच्छब्दशब्दिते।
मनो मय्यादधद् योगी मद्धर्मा वशितामियात् ॥१६॥

पदच्छेद—

नारायणे तुरीय आख्ये भगवत् शब्द शब्दिते।
मनः मयि आदधत् योगी मत् धर्मा वशिताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

नारायणे	३.	नारायण स्वरूप में	मनः	९.	मन को मुझ में
तुरीय	४.	जिसे तुरीय और	मयि	२.	मेरे
आख्ये	६.	नामक	आदधत्	१०.	लगा देता है
भगवत्	५.	भगवान्	योगी	१.	जो योगी
शब्द	७.	शब्दों से भी	मत्धर्मा	११.	उसमें मेरे गुण होने लगते हैं
शब्दिते।	८.	पुकारते हैं	वशिताम् इयात् ॥	१२.	वह वशिता नामक सिद्धि प्राप्त करता है

श्लोकार्थ— जो योगी मेरे नारायण स्वरूप में जिसे तुरीय और भगवान् नामक शब्दों से भी पुकारते हैं मन को मुझ में लगा देता है। उसमें मेरे गुण होने लगते हैं। वह वशिता नाम की सिद्धि प्राप्त करता है ॥

एकादशः श्लोकः

मन एकत्र संयुञ्ज्याज्जितश्वासो जितासनः ।
वैराग्याभ्यासयोगेन ध्रियमाणमतन्द्रितः ॥११॥

पदच्छेद— मनः एकत्र संयुञ्ज्यात् अजित् श्वासः जित आसनः ।
वैराग्य अभ्यास योगेन ध्रियमाणम् अतन्द्रितः ॥

शब्दार्थ—

मनः	७. मन को	वैराग्य	४. वैराग्य और
एकत्र	१०. एक लक्ष्य में	अभ्यास	५. अभ्यास के
संयुञ्ज्यात्	११. लगाये ।	योगेन	६. द्वारा
जित	३. जीत कर	ध्रियमाणम्	८. वश में करके
श्वासः	२. श्वास को भी	अतन्द्रितः ॥	९. बड़ी सावधानी से उसे
जित आसनः ।	१. आसन को जीत कर और		

श्लोकार्थ—राजन् ! आसन को जीत कर और श्वास को जीत कर वैराग्य और अभ्यास के द्वारा मन को वश में करके बड़ी सावधानी से उसे एक लक्ष्य में लगाये ॥

द्वादशः श्लोकः

यस्मिन् मनो लब्धपदं यदेतच्छनैः शनैर्मुञ्चति कर्मरेणून् ।
सत्त्वेन वृद्धेन रजस्तमश्च विधूय निर्वाणमुपैत्यनिन्धनम् ॥१२॥

पदच्छेद— यस्मिन् मनः लब्धपदम् यत् एतत् शनैः शनैः मुञ्चति कर्म रेणून् ।
सत्त्वेन वृद्धेन रजः तमः च विधूय निर्वाणम् उपैति अनिन्धनम् ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	३. वह उस	सत्त्वेन	९. सत्त्व गुण की
मनः	२. हमारा मन है	वृद्धेन	१०. वृद्धि से
लब्धपदम्	४. परमात्मा में स्थिर होकर	रजः	११. रजो गुणी और
यत् एतत्	१. यह जो	तमः च	१२. तमोगुणी वृत्तियों को
शनैः शनैः	७. धीरे-धीरे	विधूय	१३. नष्ट करके वह
मुञ्चति	८. धो बहाता है	निर्वाणम्	१५. शान्त
कर्म	५. कर्म वासनाओं की	उपैति	१६. हो जाता है
रेणून् ।	६. धूल को	अनिन्धनम् ॥	१४. ईंधन रहित अग्नि के समान

श्लोकार्थ—यह जो हमारा मन है । वह उस परमात्मा में स्थिर होकर कर्म वासनाओं की धूल को धीरे-धीरे धो बहाता है । सत्त्वगुण की वृद्धि से रजोगुणी और तमोगुणी वृत्तियों को नष्ट करके वह ईंधन रहित अग्नि के समान शान्त हो जाता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तदैवमात्मन्यवरुद्धचित्तो न वेद किञ्चिद् बहिरन्तरं वा ।
यथेषुकारो नृपतिं व्रजन्तमिषौ गतात्मा न ददर्श पार्श्वे ॥१३॥

पदच्छेद— तदा एवम् आत्मनि अवरुद्ध चित्तः न वेद किञ्चित् बहिः अन्तरम् वा ।
यथा इषुकारः नृपतिम् व्रजन्तम् इषौ गत आत्मा न ददर्श पार्श्वे ॥

शब्दार्थ—

तदा एवम्	१.	तब इस प्रकार	यथा	९.	जिस प्रकार
आत्मनि	३.	आत्मा में ही	इषुकारः	१०	वाण बनाने वाला
अवरुद्ध	४.	स्थिर हो जाने	नृपतिम्	१५.	राजा को भी
चित्तः	२.	चित्त के	व्रजन्तम्	१४.	जाते हुये दल-बल सहित
न वेद	८.	जान नहीं पाता है	इषौ	११.	बाण बनाने में
किञ्चित्	७.	किसी पदार्थ को	गत आत्मा	१२.	मन के तन्मय होने से
बहिः	५.	वह बाहर	न ददर्श	१६.	नहीं देख पाया था
अन्तरम् वा ।	६.	अथवा भीतर	पार्श्वे ॥	१३.	अपने पास से

श्लोकार्थ—तब इस प्रकार चित्त के आत्मा में ही स्थिर हो जाने पर वह बाहर अथवा भीतर किसी पदार्थ को जान नहीं पाता है। जिस प्रकार बाण बनाने वाला बाण बनाने में मन के तन्मय होने से अपने पास से जाते हुये दल-बल सहित राजा को भी नहीं देख पाया था ॥

चतुर्दशः श्लोकः

एकचार्यनिकेतः स्यादप्रमत्तो गुहाशयः ।
अलक्ष्यमाण आचारैर्मुनिरेकोऽल्पभाषणः ॥१४॥

पदच्छेद— एकचारी अनिकेतः स्याद् अप्रमत्तः गुहाशयः ।
अलक्ष्यमाणः आचारैः मुनिः एकः अल्पभाषणः ॥

शब्दार्थ—

एकचारी	२.	अकेले ही विचरण करना चाहिये	अलक्ष्यमाणः	८.	पहचाना न जाय
अनिकेतः	३.	मठ नहीं बनाना	आचारैः	७.	बाहरी आचारों से
स्याद्	४.	चाहिये	मुनिः	१.	सन्यासी को सर्प के समान
अप्रमत्तः	५.	प्रमाद न करे और	एकः	९.	अकेला ही रहे और
गुहाशयः ।	६.	गुफा आदि में पड़ा रहे	अल्पभाषणः ॥	१०.	बहुत कम बोले

श्लोकार्थ—सन्यासी को सर्प के समान अकेले ही विचरण करना चाहिये। मठ नहीं बनाना चाहिये। प्रमाद न करे और गुफा आदि में पड़ा रहे। बाहरी आचारों से पहिचाना न जाय अकेला ही रहे और बहुत कम बोले ॥

पञ्चदशः श्लोकः

गृहारम्भोऽति दुःखाय विफलश्चाध्रुवात्मनः ।
सर्पः परकृतं वेश्म प्रविश्य सुखमेधते ॥१५॥

पदच्छेद— गृह आरम्भः अति दुःखाय विफलः च अध्रुव आत्मनः ।
सर्पः परकृतम् वेश्म प्रविश्य सुखम् एधते ॥

शब्दार्थ—

गृह आरम्भः	३.	घर बनाने का झंझट	सर्पः	७.	साँप
अति	५.	अत्यन्त	परकृतम्	८.	दूसरों के बनाये
दुःखाय	६.	दुःख की जड़ है	वेश्म	९.	घर में
विफलः च	४.	व्यर्थ है और	प्रविश्य	१०.	घुस कर
अध्रुव	१.	इस अनित्य	सुखम्	११.	बड़े आराम से
आत्मनः ।	२	शरीर के लिये	एधते ॥	१२.	अपना समय काटता है

श्लोकार्थ—इस अनित्य शरीर के लिये घर बनाने का झंझट व्यर्थ है और अत्यन्त दुःख की जड़ है। साँप दूसरों के बनाये घर में घुस कर बड़े आराम से अपना समय काटता है ॥

षोडशः श्लोकः

एको नारायणो देवः पूर्वसृष्टं स्वमायया ।
संहृत्य कालकलया कल्पान्त इदमीश्वरः ॥१६॥

पदच्छेद— एकः नारायणः देवः पूर्व सृष्टम् स्व मायया ।
संहृत्य काल कलया कल्पान्त इदम् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

एकः	४.	बिना किसी सहायक के	संहृत्य	१२.	नष्ट कर दिया
नारायणः	२.	अन्तर्यामी	काल	१०.	काल
देवः	१.	सबके प्रकाशक	कलया	११.	शक्ति के द्वारा
पूर्व सृष्टम्	७.	पूर्व कल्प में रचे हुये	कल्पान्त	९.	कल्प के अन्त में
स्व	५.	अपनी	इदम्	८.	इस जगत् को
मायया ।	६.	माया से	ईश्वरः ॥	३.	सर्व शक्ति मान भगवान् ने

श्लोकार्थ—सब के प्रकाशक अन्तर्यामी सर्व शक्ति मान भगवान् ने बिना किसी सहायक के अपनी माया से पूर्व कल्प में रचे हुये इस जगत को कल्प के अन्त में काल-शक्ति के द्वारा नष्ट कर दिया ॥

सप्तदशः श्लोकः

एक एवाद्वितीयोऽभूदात्माधारोऽखिलाश्रयः ।
कालेनात्मानुभावेन साम्यं नीतासु शक्तिषु ।
सत्त्वादिष्वादिपुरुषः प्रधानपुरुषेश्वरः ॥१७॥

पदच्छेद— एकः एव अद्वितीयः अभूत् आत्म आधारः अखिल आश्रयः ।
कालेन आत्म अनु भावेन साम्यम् नीतासु शक्तिषु ।
सत्त्व आदिषु आदि पुरुषः प्रधान पुरुष ईश्वरः ।।

शब्दार्थ—

एकः एव	२.	अकेले ही	साम्यम्	१५.	साम्यावस्था में
अद्वितीयः	१.	सजातीय आदि भेद से शून्य	नीतासु	१६.	पहुँचा देते हैं
अभूत्	३.	शेष रह गये	शक्तिषु ।	१४.	शक्तियों को
आत्म आधारः	४.	वे सबके अधिष्ठान और	सत्त्व आदिषु	१३.	सत्त्व रज आदि समस्त
अखिल आश्रयः ।	५.	सबके आश्रय हैं	आदि पुरुषः	९.	आदि कारण परमात्मा
कालेन	१२.	काल के प्रभाव से	प्रधान	६.	प्रकृति और
आत्म	१०.	अपनी	पुरुष	७.	पुरुष दोनों के
अनुभावेन	११.	शक्ति	ईश्वरः ।	८.	नियामक

श्लोकार्थ—सजातीय आदि भेद से शून्य अकेले ही शेष रह गये। वे सबके अधिष्ठान और सबके आश्रय हैं। प्रकृति और पुरुष दोनों के नियामक आदि कारण परमात्मा अपनी शक्ति काल के प्रभाव से सत्त्व-रज आदि समस्त शक्तियों को साम्यावस्था में पहुँचा देते हैं ।।

अष्टादशः श्लोकः

परावराणां परम आस्ते कैवल्यसंज्ञितः ।
केवलानुभवानन्दसन्दोहो निरुपाधिकः ॥१८॥

पदच्छेद— पर अवराणाम् परम आस्ते कैवल्य संज्ञितः ।
केवल अनुभव आनन्द सन्दोहः निरुपाधिकः ।।

शब्दार्थ—

पर	३.	कार्य और	केवल	६.	वे केवल
अवराणाम्	४.	कारण दोनों से	अनुभव	७.	अनुभव स्वरूप और
परम आस्ते	५.	परे रहते हैं	आनन्द	८.	आनन्द घन
कैवल्य	१.	वे कैवल्य रूप	सन्दोहः	९.	मात्र हैं तथा किसी
संज्ञितः ।	२.	परमात्मा	निरुपाधिकः ।।	१०.	उपाधि का उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है

श्लोकार्थ—वे कैवल्य रूप परमात्मा कार्य और कारण दोनों से परे रहते हैं। वे केवल अनुभव स्वरूप और आनन्द घन मात्र हैं। तथा किसी उपाधि का उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है ।।

एकोनविंशः श्लोकः

केवलात्मानुभावेन स्वमायां त्रिगुणात्मिकाम् ।
संक्षोभयन् सृजत्यादौ तया सूत्रमरिन्दम ॥१९॥

पदच्छेद — केवल आत्म अनुभावेन स्वमायाम् त्रिगुण आत्मिकाम् ।
संक्षोभयन् सृजति आदौ तया सूत्रम् अरिन्दम ॥

शब्दार्थ—

केवल	२.	वे ही केवल	संक्षोभयन्	८.	क्षुब्ध करते हैं
आत्म	३.	अपनी शक्ति	सृजति	१२.	रचना करते हैं
अनुभावेन	४.	काल के द्वारा	आदौ	१०.	पहले
स्वमायाम्	७.	माया को	तया	९.	और उससे
त्रिगुण	५.	अपनी त्रिगुण	सूत्रम्	११.	क्रिया शक्ति प्रधान महत्तत्त्व की
आत्मिकाम् ।	६.	मयी	अरिन्दम ॥	१.	हे शत्रुदमन !

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमन ! वे ही प्रभु केवल अपनी शक्ति काल के द्वारा अपनी त्रिगुणमयी माया को क्षुब्ध करते हैं । और उससे पहले क्रिया शक्ति प्रधान महत्तत्त्व की रचना करते हैं ॥

विंशः श्लोकः

तामाहुस्त्रिगुणव्यक्तिं सृजन्तीं विश्वतोमुखम् ।
यस्मिन् प्रोतमिदं विश्वं येन संसरते पुमान् ॥२०॥

पदच्छेद — ताम् आहुः त्रिगुण व्यक्तिम् सृजन्तीं विश्वतः मुखम् ।
यस्मिन् प्रोतम् इदम् विश्वम् येन संसरते पुमान् ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१.	यह स्वरूप महतत्त्व ही	यस्मिन्	७.	उसी में
आहुः	४.	कहा गया है	प्रोतम्	९.	ओत-प्रोत है और
त्रिगुण	२.	तीनों गुणों की	इदम् विश्वम्	८.	यह सारा विश्व
व्यक्तिम्	३.	पहली अभिव्यक्ति	येन	१०.	इसी के कारण
सृजन्तीं विश्वतः	५.	वही सब प्रकार की सृष्टि का	संसरते	१२.	जन्म-मृत्यु के चक्कर में पड़ता है
मुखम् ।	६.	मूल कारण है	पुमान् ॥	११.	जीव

श्लोकार्थ— यह स्वरूप महतत्त्व ही तीनों गुणों की पहली अभि-व्यक्ति कहा गया है । वही सब प्रकार की सृष्टि का मूल कारण है । उसी में यह सारा विश्व ओत-प्रोत है और इसी के कारण जीव जन्म-मृत्यु के चक्कर में पड़ता है ॥

एकविंशः श्लोकः

यथोर्णनाभिर्हृदयादूर्णां सन्तत्य वक्त्रतः ।
तया विहृत्य भूयस्तां ग्रसत्येवं महेश्वरः ॥२१॥

पदच्छेद— यथा ऊर्णनाभिः हृदयात् ऊर्णाम् सन्तत्य वक्त्रतः ।
तया विहृत्य भूयः ताम् ग्रसति एवम् महेश्वरः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	तया	७.	उसी में
ऊर्णनाभिः	२. मकड़ी	विहृत्य	८.	बिहार करती है और
हृदयात्	३. अपने हृदय से	भूयः ताम्	९.	फिर उसे
ऊर्णाम्	५. जाला	ग्रसति	१०.	निगल जाती है
सन्तत्य	६. फैलाती है	एवम्	११.	वैसे ही
वक्त्रतः ।	४. मुँह के द्वारा	महेश्वरः ॥	१२.	परमात्मा इस जगत को उत्पन्न करते, विहार करते तथा लीन कर लेते हैं

श्लोकार्थ— जैसे मकड़ी अपने हृदय से मुँह के द्वारा जाला फैलाती है, उसी में बिहार करती है और फिर उसे निगल जाती है। वैसे ही परमात्मा इस जगत को उत्पन्न करते, बिहार करते, तथा अपने में लीन कर लेते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यत्र यत्र मनो देही धारयेत् सकलं धिया ।
स्नेहाद् द्वेषाद् भयाद् वापि याति तत्तत्सरूपताम् ॥२२॥

पदच्छेद— यत्र-यत्र मनः देही धारयेत् सकलम् धिया ।
स्नेहात् द्वेषात् भयात् वा अपि याति तत्-तत् सरूपताम् ॥

शब्दार्थ—

यत्र-यत्र	९. जहाँ कहीं भी	स्नेहात्	२. स्नेह से
मनः	८. मन को	द्वेषात्	३. द्वेष
देही	१. प्राणी	भयात्	५. भय से भी
धारयेत्	१०. लगा देता है	वा अपि	४. अथवा
सकलम्	६. एकाग्र रूप से	याति	१२. प्राप्त कर लेता है
धिया ।	७. अपनी बुद्धि और	तत्-तत् सरूपताम् ॥	११. वह उसी वस्तु का स्वरूप

श्लोकार्थ— प्राणी स्नेह से द्वेष से अथवा भय से भी एकाग्र रूप से अपनी बुद्धि और मन को जहाँ-कहीं भी लगा देता है। वह उसी वस्तु का स्वरूप प्राप्त कर लेता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

कीटः पेशस्कृतं ध्यायन् कुड्यां तेन प्रवेशितः ।
याति तत्सात्मतां राजन् पूर्वरूपमसन्त्यजन् ॥२३॥

पदच्छेद— कीटः पेशस्कृतम् ध्यायन् कुड्याम् तेन प्रवेशितः ।
याति तत् सात्मताम् राजन् पूर्व रूपम् असन्त्यजन् ॥

शब्दार्थ—

कीटः	५.	कीड़ा भय से	याति	१२.	हो जाता है
पेशस्कृतम्	२.	जैसे भृङ्गी के द्वारा	तत्	१०.	उसी
ध्यायन्	७.	ध्यान करता हुआ	सात्मताम्	११.	शरीर से उसके रूप में
कुड्याम्	३.	दीवार में	राजन्	१.	हे राजन् !
तेन	६.	उसी का	पूर्व रूपम्	८.	पहले शरीर का
प्रवेशितः ।	४.	बन्द किया गया	सन्त्यजन् ॥	९.	त्याग किये बिना ही

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जैसे भृङ्गी के द्वारा दीवार में बन्द किया गया कीड़ा भय से उसी का ध्यान करता हुआ, पहले शरीर का त्याग किये बिना ही उसी शरीर से उसके रूप में हो जाता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं गुरुभ्य एतेभ्य एषा मे शिक्षिता मतिः ।
स्वात्मोपशिक्षितां बुद्धिं शृणु मे वदतः प्रभो ॥२४॥

पदच्छेद— एवम् गुरुभ्य एतेभ्य एषा मे शिक्षिता मतिः ।
स्व आत्म उपशिक्षिताम् बुद्धिम् शृणुमे वदतः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	स्व आत्म	८.	मैंने अपने शरीर से
गुरुभ्य	५.	गुरुओं से	उपशिक्षिताम्	१०.	सीखा है
एतेभ्य	४.	इतने	बुद्धिम्	९.	जो कुछ
एषा	६.	ये	शृणुमे	११.	उसे मैं
मे	३.	मैंने	वदतः	१२.	सुनाता हूँ
शिक्षिता मतिः ।	७.	शिक्षायें ग्रहण की हैं	प्रभो ॥	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार मैंने इतने गुरुओं से ये शिक्षायें ग्रहण की हैं। मैंने अपने शरीर से जो कुछ सीखा है, उसे मैं सुनाता हूँ ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

देहो गुरुर्मम विरक्तिविवेकहेतुर्बिभ्रत् स्म सत्त्वनिधनं सततार्त्युदर्कम् ।
तत्त्वान्यनेन विमृशामि यथा तथापि पारक्यमित्यवसितो विचराम्यसङ्गः ॥२५॥

पदच्छेद—देहः गुरुः मम विरक्ति विवेक हेतुः बिभ्रत्स्म सत्त्वनिधनम् सतत आर्ति उदर्कम् ।
तत्त्वानि अनेन विमृशामि यथा तथा अपि पारक्यम् इति अवसितः विचरामि असङ्ग ॥

शब्दार्थ—			
देहः	१. यह शरीर	तत्त्वानि	११. तत्त्व विचार करने में
गुरुः मम	४. मेरा गुरु है	अनेन	१०. इस शरीर से मुझे
विरक्ति विवेक	२. विवेक और वैराग्य की	विमृशामि	१२. सहायता मिलती है
हेतुः	३. शिक्षा देने के कारण	यथा	९. यद्यपि
बिभ्रत्स्म	८. धारण करने वाला है	तथा अपि	१३. फिर भी
सत्त्वनिधनम्	६. जन्म-मरण और	पारक्यम्	१४. यह सियार कुत्तों का भोजन है
सतत	५. क्योंकि यह निरन्तर	इति अवसितः	१५. ऐसा निश्चय करके मैं
आर्ति उदर्कम् ।	७. दुःख रूप फल को	विचरामि असङ्गः ॥	१६. असङ्ग होकर विचरता हूँ

श्लोकार्थ—यह शरीर विवेक और वैराग्य की शिक्षा देने के कारण मेरा गुरु है। क्योंकि यह निरन्तर जन्म-मरण और दुःख रूप फल को धारण करने वाला है। यद्यपि इस शरीर से मुझे तत्त्व विचार करने में सहायता मिलती है। फिर भी यह सियार कुत्तों का भोजन है। ऐसा निश्चय करके मैं असङ्ग होकर विचरता हूँ ॥

षड्विंशः श्लोकः

जायात्मजार्थपशुभृत्यगृहाप्तवर्गान् पुष्णाति यत्प्रियचिकीर्षया वितन्वन् ।
स्वान्ते सकृच्छ्रमवरुद्धधनः स देहः सृष्ट्वास्य बीजमवसीदति वृक्षधर्मा ॥२६॥

पदच्छेद—जाया आत्मज अर्थ पशु भृत्य गृह आप्तवर्गान् पुष्णाति यत् प्रिय चिकीर्षया वितन्वन् ।
स्वान्ते सकृच्छ्रम् अवरुद्धधनः सः देहः सृष्ट्वा अस्य बीजम् अवसीदति वृक्षधर्मा ॥

शब्दार्थ—			
जाया आत्मज	३. स्त्री-पुत्र	स्वान्ते	११. आयु पूरी होने पर
अर्थ पशु	४. धन-पशु	सकृच्छ्रम्	९. बार-बार के श्रम से
भृत्य गृह	५. नोकर-चाकर	अवरुद्धधनः	१०. धन का संचय करता है
आप्तवर्गान्	६. घर-द्वार और भाई-बन्धुओं का	सः देहः	१२. वही शरीर
पुष्णाति	८. पालन-पोषण में लगा रहता है और	सृष्ट्वा	१५. बोकर उसके लिये भी
यत् प्रिय	१. जीव जिस शरीर का प्रिय	अस्य बीजम्	१४. दूसरे शरीर के लिये बीज
चिकीर्षया	२. करने की इच्छा से	अवसीदति	१६. दुःख की व्यवस्था कर देता है
वितन्वन् ।	७. विस्तार करते हुये उनके	वृक्षधर्मा ॥	१३. वृक्ष के समान

श्लोकार्थ—जीव जिस शरीर का प्रिय करने की इच्छा से स्त्री-पुत्र-पशु, नोकर-चाकर-घर-द्वार और भाई-बन्धुओं का विस्तार करते हुये उनके पालन-पोषण में लगा रहता है। और बार-बार के श्रम से धन का संचय करता है आयु पूरी होने पर वही शरीर वृक्ष के समान दूसरे शरीर के लिये बीज बोकर उसके लिये भी दुःख की व्यवस्था कर देता है ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

कपोती स्वात्मजान् वीक्ष्य बालकाञ्जालसंवृतान् ।
तानभ्यधावत् क्रोशन्ती क्रोशतो भृशदुःखिता ॥६५॥

पदच्छेद— कपोती स्वआत्मजान् वीक्ष्य बालकान् जाल संवृतान् ।
तान् अभ्यधावत् क्रोशन्ती क्रोशतः भृश दुःखिता ॥

शब्दार्थ—

कपोती	१. कपोती ने		तान्	३. उन
स्वआत्मजान्	२. अपने हृदय के टुकड़े		अभ्यधावत्	१२. उनके पास दौड़ गई
वीक्ष्य	१०. देखा, तो वह		क्रोशन्ती	११. रोती-चिल्लाती
बालकान्	४. नन्हें बच्चों को		क्रोशतः	७. चें-चें करते और
जाल	८. जाल में		भृश	५. अत्यन्त
संवृतान् ।	९. फंसे हुये		दुःखिता ॥	६. दुःख के कारण

श्लोकार्थ—कपोती ने अपने हृदय के टुकड़े उन नन्हें बच्चों को अत्यन्त दुःख के कारण चें-चें करते हुये जाल में फंसे हुये देखा । तो वह रोती चिल्लाती उनके पास दौड़ गई ॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

सासकृत्स्नेहगुणिता दीनचित्ताजमायया ।
स्वयं चाबध्यत शिचा बद्धान् पश्यन्त्यपस्मृतिः ॥६६॥

पदच्छेद— सा असकृत् स्नेह गुणिता दीनचित्त अजमायया ।
स्वयंम् च अबध्यत शिचा बद्धान् पश्यन्ती अपस्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

सा	३. वह	स्वयम् च	१०. और स्वयम् भी
असकृत्	४. अनेक वार	अबध्यत	१२. फंस गई
स्नेह	५. स्नेह की	शिचा	११. जाल में
गुणिता	६. रस्सी से बँधी हुई	बद्धान्	७. बंधे हुये बच्चों को
दीनचित्त	२. उसका चित्त दीन हो रहा था	पश्यन्ती	८. देखते हुये उसे शरीर को
अजमायया ।	१. भगवान् की माया से	अपस्मृतिः ॥	९. सुध-बुध न रही

श्लोकार्थ—भगवान् की माया से उसका चित्त दीन हो रहा था । वह अनेक बार स्नेह की रस्सी से बँधी हुई बँधे हुये बच्चों को देखते हुये उसे शरीर की सुध-बुध न रही । और स्वयम् भी जाल में फंस गई ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

कपोतश्चात्मजान् बद्धानात्मनोऽप्यधिकान् प्रियान् ।
भार्यां चात्मसमां दीनो विललापातिदुःखितः ॥६७॥

पदच्छेद— कपोतः च आत्मजान् बद्धान् आत्मनः अपि अधिकान् प्रियान् ।
भार्याम् च आत्मसमाम् दीनः विललाप अति दुःखितः ॥

शब्दार्थ—

कपोतः च	१.	और कबूतर ने	भार्याम् च	३.	अपनी पत्नी और
आत्मजान्	७.	अपने बच्चों को	आत्मसमाम्	२.	अपने सामने ही
बद्धान्	८.	बँधा हुआ और	दीनः	९.	दुःखी देखा तो वह
आत्मनः अपि	४.	अपने से भी	विललाप	१२.	विलाप करने लगा
अधिकान्	५.	अधिक	अति	१०.	अत्यन्त
प्रियान् ।	६.	प्रिय	दुःखितः ॥	११.	दुःखी होकर

श्लोकार्थ—और कबूतर ने अपने सामने ही अपनी पत्नी और अपने से भी अधिक प्रिय अपने बच्चों को बँधा हुआ और दुःखी देखा तो वह अत्यन्त दुःखी होकर विलाप करने लगा ॥

अष्टषष्टितमः श्लोकः

अहो मे पश्यतापायमल्पपुण्यस्य दुर्मतेः ।
अतृप्तस्याकृतार्थस्य गृहस्त्रैवर्गिको हतः ॥६८॥

पदच्छेद— अहो मे पश्यत अपायम् अल्प पुण्यस्य दुर्मतेः ।
अतृप्तस्य अकृत अर्थस्य गृहः त्रैवर्गिको हतः ॥

शब्दार्थ—

अहो मे	१.	हाय मुझ	अतृप्तस्य	७.	मुझे तृप्ति नहीं हुई और
पश्यत	५.	देखते-देखते सब	अकृत	९.	पूरी नहीं हुई और
अपायम्	६.	सत्यानाश हो गया	अर्थस्य	८	मेरी आशायें भी
अल्प	२.	अल्प	गृहः	११.	मेरा गृहस्थाश्रम ही
पुण्यस्य	३.	पुण्य	त्रैवर्गिको	१०.	धर्म, अर्थ एवं काम का मूल
दुर्मतेः ।	४.	दुर्बुद्धि के	हतः ॥	१२.	नष्ट हो गया

श्लोकार्थ—हाय मुझ अल्प पुण्य दुर्बुद्धि के देखते-देखते सब सत्यानाश हो गया । मुझे तृप्ति नहीं हुई और मेरी आशायें भी पूरी नहीं हुई । और धर्म-अर्थ एवं काम का मूल मेरा गृहस्थाश्रम ही नष्ट हो गया ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

अनुरूपानुकूला च यस्य मे पतिदेवता ।
शून्ये गृहे मां सन्त्यज्य पुत्रैः स्वर्याति साधुभिः ॥६९॥

पदच्छेद— अनुरूपा अनुकूला च यस्य मे पति देवता ।
शून्ये गृहे माम् सन्त्यज्य पुत्रैः स्वर्याति साधुभिः ॥

शब्दार्थ—

अनुरूपा	५.	अनुरूप थी और	शून्ये	७.	वही इस शून्य
अनुकूला	३.	अनुकूल	गृहे	८.	घर मे
च	४.	और	माम्	९.	मुझे
यस्य	१.	जो	सन्त्यज्य	१०.	छोड़ कर
मे	२.	मेरे	पुत्रैः स्वर्याति	१२.	बच्चों के साथ स्वर्ग सिधार रही है
पति देवता ।	६.	मुझे अपना इष्ट देव समझती थी	साधुभिः ॥	११.	सीधे-सादे निश्छल

श्लोकार्थ—जो मेरे अनुकूल और अनुरूप थी और मुझे अपना इष्टदेव समझती थी । वही इस शून्य घर में मुझे छोड़ कर सीधे-सादे निश्छल बच्चों के साथ स्वर्ग सिधार रही है ॥

सप्ततितमः श्लोकः

सोऽहं शून्ये गृहे दीनो मृतदारो मृतप्रजः ।
जिजीविषे किमर्थं वा विधुरो दुःखजीवितः ॥७०॥

पदच्छेद— सः अहम् शून्ये गृहे दीनः मृतदारः मृतप्रजाः ।
जिजीविषे किमर्थम् वा विधुरः दुःख जीवितः ॥

शब्दार्थ—

सः अहम्	१.	ऐसा मैं	जिजीविषे	५.	जीवित रहूँ
शून्ये	२.	इस शून्य	किमर्थम्	४.	किस प्रयोजन के लिये
गृहे	३.	घर में	वा	८.	अथवा अब तो
दीनः	९.	मुझ दीन का	विधुरः	१०.	यह विधुर जीवन
मृतदारः	६.	मेरी पत्नी मर गई	दुःख	११.	दुखः मय
मृतप्रजाः ।	७.	मेरे बच्चे मर गये	जीवितः ॥	१२.	जीवन है

श्लोकार्थ—ऐसा मैं इस शून्य घर में किस प्रयोजन के लिये जीवित रहूँ । मेरी पत्नी मर गई; मेरे बच्चे मर गये, अथवा अब तो मुझ दीन का यह विधुर जीवन दुःख मय जीवन है ।

एकसप्ततितमः श्लोकः

तांस्तथैवावृताञ्छिग्भिर्मृत्युग्रस्तान् विचेष्टतः ।
स्वयं च कृपणः शिक्षु पश्यन्नप्यबुधोऽपतत् ॥७१॥

पदच्छेद— तान् तथैव आवृतान् शिग्भिः मृत्यु ग्रस्तान् विचेष्टतः ।
स्वयम् च कृपणः शिक्षु पश्यन् अपि अबुध अपतत् ॥

शब्दार्थ—

तान्	१.	उन बच्चों को	स्वयम् च	८.	स्वयम
तथैव	२.	उसी प्रकार	कृपणः	९.	दीन होकर सब
आवृतान्	४.	फंसे हुये और	शिक्षु	१३.	जाल में
शिग्भिः	३.	जाल में	पश्यन्	१०.	देखकर
मृत्यु	५.	मृत्यु के द्वारा	अपि	११.	भी
ग्रस्तान्	६.	पकड़े हुये	अबुध	१२.	वह मूर्ख
विचेष्टतः ।	७.	फड़फड़ाते देख कर और	अपतत् ॥	१४.	कूद पड़ा ।

श्लोकार्थ—उन बच्चों को उसी प्रकार जाल में फंसे हुये और मृत्यु के द्वारा पकड़े हुये फड़फड़ाते देख कर और स्वयम् दीन होकर सब देख कर भी वह मूर्ख जाल में कूद पड़ा ॥

द्विसप्ततितमः श्लोकः

तं लब्ध्वा लुब्धकः क्रूरः कपोतं गृहमेधिनम् ।
कपोतकान् कपोतीं च सिद्धार्थः प्रययौ गृहम् ॥७२॥

पदच्छेद— तम् लब्ध्वा लुब्धकः क्रूरः कपोतम् गृहमेधिनम् ।
कपोतकान् कपोतीम् च सिद्धार्थः प्रययौ गृहम् ॥

शब्दार्थ—

तम्	३.	उन	कपोतकान्	७.	उनके बच्चों को
लब्ध्वा	८.	प्राप्त करके	कपोतीम् च	६.	कबूतरी तथा
लुब्धकः	२.	बहेलिया	सिद्धार्थः	९.	अपना काम पूरा होने पर
क्रूरः	१.	वह क्रूर	प्रययौ	११.	चला गया
कपोतम्	५.	कबूतर और	गृहम् ॥	१०.	घर
गृहमेधिनम् ।	४.	गृहस्थाश्रमी			

श्लोकार्थ—वह क्रूर बहेलिया उन गृहस्थाश्रमी कबूतर और कबूतरी तथा उनके बच्चों को प्राप्त करके अपना काम पूरा होने पर घर चला गया ॥

त्रिःसप्ततितमः श्लोकः

एवं कुटुम्ब्यशान्तात्मा द्वन्द्वारामः पतत्त्रिवत् ।
पुष्णन् कुटुम्बं कृपणः सानुबन्धोऽवसीदति ॥७३॥

पदच्छेद— एवम् कुटुम्बी अशान्तात्मा द्वन्द्व आरामः पतत्त्रिवत् ।
पुष्णन् कुटुम्बम् कृपणः सानुबन्धः अवसीदति ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	पुष्णन्	९.	भरण पोषण करता
कुटुम्बी	२.	जो कुटुम्बी है	कुटुम्बम्	८.	अपने परिवार का ही
अशान्तात्मा	६.	वह अशान्त चित्त	कृपणः	७.	दीन व्यक्ति
द्वन्द्व	४.	विषयों में ही	सानुबन्धः	१०.	विषयों में फंसा हुआ
आरामः	५.	सुख समझने वाले हैं	अवसीदति ॥	११.	दुःखी होता है
पतत्त्रिवत् ।	३.	वह पतङ्ग के समान			

श्लोकार्थ—इस प्रकार जो कुटुम्बी है वह पतङ्ग के समान विषयों में ही सुख समझने वाले हैं, वह अशान्त चित्त दीन व्यक्ति अपने परिवार का ही भरण-पोषण करता विषयों में फंसा हुआ दुःखी होता है ॥

चतुःसप्ततिमः श्लोकः

यः प्राप्य मानुषं लोकं मुक्तिद्वारमपावृतम् ।
गृहेषु खगवत् सक्तस्तमारूढच्युतं विदुः ॥७४॥

पदच्छेद— यः प्राप्य मानुषम् लोकम् मुक्ति द्वारम् अपावृतम् ।
गृहेषु खगवत सक्तः तम् आरूढ च्युतम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

यः	६.	जो व्यक्ति	गृहेषु	९.	अपनी घर गृहस्थी में
प्राप्य	७.	इसे पाकर भी	खगवत्	८.	कबूतर के समान
मानुषम्	१.	यह मनुष्य	सक्तः	१०.	फँसा हुआ है
लोकम्	२.	लोक	तम्	११.	उसे
मुक्ति	३.	मुक्ति का	आरूढ	१२.	बहुत ऊपर चढ़कर
द्वारम्	५.	द्वार है	च्युतम्	१३.	वहाँ से गिरा हुआ
अपावृतम् ।	४.	खुला हुआ	विदुः ॥	१४.	समझो

श्लोकार्थ—यह मनुष्य लोक मुक्ति का खुला हुआ द्वार है। जो व्यक्ति इसे पाकर भी कबूतर के समान अपनी घर गृहस्थी में फंसा हुआ है। उसे बहुत ऊपर चढ़कर वहाँ से गिरा हुआ समझो ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे सप्तमः अध्यायः ॥ ७ ॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

अष्टमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच—सुखमैन्द्रियकं राजन् स्वर्गे नरक एव च ।
देहिनां यद् यथा दुःखं तस्मान्नेच्छेत तद् बुधः ॥१॥

पदच्छेद— सुखम् ऐन्द्रियकम् राजन् स्वर्गे नरके एव च ।
देहिनाम् यद् यथा दुःखम् तस्मात् न इच्छेत् तद् बुधः ॥

शब्दार्थ—

सुखम्	७	सुख भी	देहिनाम्	२.	शरीरधारियों को
ऐन्द्रियकम्	६.	इन्द्रिय सम्बन्धी	यद्	३.	जो
राजन्	१.	हे राजन् !	यथा	५.	जिस प्रकार मिलता है वैसे ही
स्वर्गे	८.	स्वर्ग	दुःखम्	४.	दुःख
नरके	१०.	नरक में	तस्मात्	१२.	इसलिये
एव	११.	मिलता ही है	न इच्छेत्	१४.	इच्छा नहीं करनी चाहिये
च ।	६.	और	तद् बुधः ॥	१३.	बुद्धिमान पुरुष को उसकी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! शरीरधारियों को जो दुःख जिस प्रकार मिलता है वैसे ही इन्द्रिय सम्बन्धी सुख भी स्वर्ग और नरक में मिलता ही है । इसीलिये बुद्धिमान, पुरुष को उसकी इच्छा नहीं करनी चाहिये ॥

द्वितीयः श्लोकः

ग्रासं सुमृष्टं विरसं महान्तं स्तोकमेव वा ।
यदृच्छयैवापतितं ग्रसेदाजगरोऽक्रियः ॥२॥

पदच्छेद— ग्रासम् सुमृष्टम् विरसम् महान्तम् स्तोकम् एव वा ।
यदृच्छया एव आपतितम् ग्रसेत् अजगरः अक्रियः ॥

शब्दार्थ—

ग्रासम्	१.	भोजन	यदृच्छया	८.	स्वेच्छा से
सुमृष्टम्	२.	मधुर हो या	एव	९.	ही जो
विरसम्	३.	रूखा-सूखा	आपतितम्	१०.	सामने आ जाये उसे
महान्तम्	४.	अधिक हो	ग्रसेत्	१३.	ग्रहण कर लेना चाहिये
स्तोकम्	६	थोड़ा	अजगरः	१२.	अजगर के समान
एव	७.	ही हो	अक्रियः ॥	११.	उदासीन होकर
वा ।	५.	अथवा			

श्लोकार्थ—भोजन मधुर हो या रूखा-सूखा अधिक हो अथवा थोड़ा हो हो स्वेच्छा से ही जो सामने आ जाये उसे उदासीन होकर अजगर के समान ग्रहण कर लेना चाहिये ॥

तृतीयः श्लोकः

शयीताहानि भूरीणि निराहारोऽनुपक्रमः ।
यदि नोपनमेद् ग्रासो महाहिरिव दिष्टभुक् ॥३॥

पदच्छेद— शयीत अहानि भूरीणि निराहारः अनुपक्रमः ।
यदि न उपनमेद् ग्रासः महाहिः इव दिष्टभुक् ॥

शब्दार्थ—

शयीत	१०.	समय को बिताये	यदि	१.	यदि
अहानि	४.	दिनों तक	न उपनमेद्	५.	न प्राप्त हो तो
भूरीणि	३.	बहुत	ग्रासः	२.	कभी भोजन
निराहारः	८.	भूखे ही रह कर	महाहिः इव	६.	अजगर के समान
अनुपक्रमः ।	९.	बिना कोई चेष्टा किये	दिष्टभुक् ॥	७.	प्रारब्ध भोग समझ कर

श्लोकार्थ—यदि कभी भोजन बहुत दिनों तक न प्राप्त हो तो अजगर के समान प्रारब्ध भोग समझ कर भूखे ही रह कर बिना कोई चेष्टा किये समय को बिताये ।

चतुर्थः श्लोकः

ओजःसहोबलयुतं बिभ्रद् देहमकर्मकम् ।
शयानो वीतनिद्रश्च नेहेतेन्द्रियवानपि ॥४॥

पदच्छेद— ओजः सहो बल युतम् बिभ्रद् देहम् अकर्मकम् ।
शयानः वीत निद्रः च न ईहेत इन्द्रियवान् अपि ॥

शब्दार्थ—

ओजः	३.	इन्द्रिय बल और	शयानः	१०.	सोया हुआ सा रहे
सहो	२.	मनोबल	वीत	९.	रहित होने पर भी
बल	४.	देह बल से	निद्रः	८.	निद्रा
युतम्	५.	युक्त	च	११.	और
बिभ्रद्	६.	होने पर भी	न ईहेत	१४.	उनसे कोई चेष्टा न करे
देहम्	१	शरीर में	इन्द्रियवान्	१२.	कर्मेन्द्रियों के होने पर
अकर्मकम् ।	७.	निश्चेष्ट ही रहे	अपि ॥	१३.	भी

श्लोकार्थ— शरीर में मनो बल, इन्द्रिय बल और देह बल से युक्त होने पर भी निश्चेष्ट ही रहे । निद्रा रहित होने पर भी सोया हुआ सा रहे, और कर्मेन्द्रियों के होने पर भी उनसे कोई चेष्टा न करे ॥

पञ्चमः श्लोकः

मुनिः प्रसन्नगम्भीरो दुर्विगाह्यो दुरत्ययः।
अनन्तपारो ह्यक्षोभ्यः स्तिमितोद इवार्णवः ॥५॥

पदच्छेद— मुनिः प्रसन्न गम्भीरः दुर्विगाह्यः दुरत्ययः।
अनन्तपारः हि अक्षोभ्यः स्तिमितोदः इव अर्णवः ॥

शब्दार्थ—

मुनिः	१. मुनि को	अनन्तपारः	६. असीम होना चाहिये
प्रसन्न	२. सर्वदा प्रसन्न और	हि अक्षोभ्यः	१०. उसमें क्षोभ न हो
गम्भीरः	३. गम्भीर रहना चाहिये	स्तिमितोदः	७. निश्चल जल वाले
दुर्विगाह्यः	४. उसका भाव अथाह	इव	९. समान
दुरत्ययः।	५. अपार और	अर्णवः ॥	८. समुद्र के

श्लोकार्थ—मुनि को सर्वदा प्रसन्न और गम्भीर रहना चाहिये उसका भाव अथाह अपार और असीम होना चाहिये। निश्चल जल वाले समुद्र के समान उसमें क्षोभ न हो ॥

षष्ठः श्लोकः

समृद्धकामो हीनो वा नारायणपरो मुनिः।
नोत्सर्पेत न शुष्येत सरिद्भिरिव सागरः ॥६॥

पदच्छेद— समृद्ध कामः हीनः वा नारायणपरः मुनिः।
न उत्सर्पेत न शुष्येत सरिद्भिः इव सागरः ॥

शब्दार्थ—

समृद्ध	९. प्राप्ति पर	न उत्सर्पेत	४. न बढ़ता है
कामः	८. सांसारिक पदार्थों की	न शुष्येत	५. न घटता है वैसे ही
हीनः	११. उनके अभाव में सम रहना चाहिये	सरिद्भिः	३. नदियों के मिलने पर
वा	१०. अथवा	इव	१. जैसे
नारायणपरः	६. भगवत्परायण	सागरः ॥	२. समुद्र
मुनिः।	७. साधक मुनि को		

श्लोकार्थ—जैसे समुद्र नदियों के मिलने पर न बढ़ता है, न घटता है। वैसे ही भगवत्परायण साधक मुनि को सांसारिक पदार्थों की प्राप्ति पर अथवा उनके अभाव में सम रहना चाहिये ॥

सप्तमः श्लोकः

दृष्ट्वा स्त्रियं देवमायां तद्भावैरजितेन्द्रियः ।
प्रलोभितः पतत्यन्धे तमस्यग्नौ पतङ्गवत् ॥७॥

पदच्छेद— दृष्ट्वा स्त्रियम् देवमायाम् तत् भावैः अजितेन्द्रियः ।
प्रलोभितः पतति अन्धे तमसि अग्नौ पतङ्गवत् ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	६.	देख कर	प्रलोभितः	९.	मोहित होकर
स्त्रियम्	५.	स्त्री को	पतति	१२.	गिर जाता है
देवमायाम्	४.	देवताओं की माया रूप	अन्धे	१०.	घोर
तत्	७.	उसके हाव	तमसि	११.	अन्धकार में
भावैः	८.	भावों से	अग्नौ	२.	अग्नि में गिरता है वैसे ही
अजितेन्द्रियः ।	३.	अजितेन्द्रिय पुरुष	पतङ्गवत् ॥	१.	जैसे पतिङ्गा

श्लोकार्थ—जैसे पतिङ्गा अग्नि में गिरता है। वैसे ही अजितेन्द्रिय पुरुष देवताओं की माया रूप स्त्री को देख कर उसके हाव-भावों से मोहित होकर घोर अन्धकार में गिर जाता है ॥

अष्टमः श्लोकः

योषिद्धिरण्याभरणाम्बरादिद्रव्येषु मायारचितेषु मूढः ।
प्रलोभितात्मा ह्युपभोगबुद्ध्या पतङ्गवन्नश्यति नष्टदृष्टिः ॥८॥

पदच्छेद— योषित् हिरण्य आभरण अम्बर, आदि द्रव्येषु मायारचितेषु मूढः ।
प्रलोभित आत्माहि उपभोग बुद्धया पतङ्गवत् नश्यति नष्ट दृष्टिः ॥

शब्दार्थ—

योषित्	३.	कामिनी	प्रलोभित	११.	फँसा हुआ है
हिरण्य	४.	कञ्चन	आत्माहि	१०.	जिनका चित्त इनमें
आभरण	५.	गहने	उपभोग	८.	उपभोग
अम्बर, आदि	६.	कपड़े आदि	बुद्धया	९.	बुद्धि से
द्रव्येषु	७.	पदार्थों में लिप्त है और	पतङ्गवत्	१३.	पतङ्गे के समान
मायारचितेषु	२.	माया द्वारा रचे हुये	नश्यति	१४.	नष्ट हो जाता है
मूढः ।	१.	जो मूढ	नष्ट दृष्टिः ॥	१२.	वह विवेक बुद्धि खोकर

श्लोकार्थ—जो मूढ माया द्वारा रचे हुये कामिनी, कञ्चन, गहने, कपड़े आदि पदार्थों में लिप्त है। और उपभोग बुद्धि से जिनका चित्त इनमें फंसा हुआ है। वह विवेक बुद्धि खोकर पतङ्गे के समान नष्ट हो जाता है ॥

नवमः श्लोकः

स्तोकं स्तोकं ग्रसेद् ग्रासं देहो वर्तेत यावता ।
गृहानहिंसन्नातिष्ठेद् वृत्तिं माधुकरीं मुनिः ॥६॥

पदच्छेद— स्तोकम् स्तोकम् ग्रसेद् ग्रासम् देहः वर्तेत यावता ।
गृहान् अहिंसन् आतिष्ठेत् वृत्तिम् माधुकरीम् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

स्तोकम्	७.	थोड़ा	गृहान्	५.	अनेक घरों से
स्तोकम्	८.	थोड़ा	अहिंसन्	६.	उन्हें कष्ट न देते हुये
ग्रसेद्	१०.	प्राप्त करके	आतिष्ठेत्	१३.	चलानी चाहिये
ग्रासम्	६.	भोजन	वृत्तिम्	१२.	जीविका
देहः	३.	शारीरिक	माधुकरीम्	११.	भौंरे के समान
वर्तेत	४.	व्यवहार हो, तब-तक	मुनिः ॥	१.	साधक मुनि को
यावता ।	२.	जब-तक			

श्लोकार्थ—साधक मुनि को जब तक शारीरिक व्यवहार हो तब-तक अनेक घरों से उन्हें कष्ट न देते हुये थोड़ा-थोड़ा भोजन प्राप्त करके भौंरे के समान जीविका चलानी चाहिये ॥

दशमः श्लोकः

अणुभ्यश्च महद्भ्यश्च शास्त्रेभ्यः कुशलो नरः ।
सर्वतः सारमादद्यात् पुष्पेभ्य इव षट्पदः ॥१०॥

पदच्छेद— अणुभ्यः च महद्भ्यः च शास्त्रेभ्यः कुशलः नरः ।
सर्वतः सारम् आदद्यात् पुष्पेभ्यः इव षट् पदः ॥

शब्दार्थ—

अणुभ्यः	६.	छोटे	सर्वतः	६.	सभी
च	७.	और	सारम्	११.	उनका सार
महद्भ्यः च	८.	बड़े	आदद्यात्	१२.	ग्रहण कर लेना चाहिये
शास्त्रेभ्यः	१०.	शास्त्रों से	पुष्पेभ्यः	३.	पुष्पों से उनका सार लेता है
कुशलः	४.	वैसे ही बुद्धिमान	इव	२.	जैसे
नरः ।	५.	पुरुष को	षट् पदः ॥	१.	भौंरा

श्लोकार्थ—भौंरा जैसे पुष्पों से उनका सार ले लेता है। वैसे ही बुद्धिमान पुरुष को छोटे और बड़े सभी शास्त्रों से उनका सार ग्रहण कर लेना चाहिये ॥

एकादशः श्लोकः

सायन्तनं श्वस्तनं वा न संगृह्णीत भिक्षितम् ।
पाणिपात्रोदरामत्रो मक्षिकेव न सङ्ग्रही ॥११॥

पदच्छेद— सायन्तनम् श्वस्तनम् वा न संगृह्णीत भिक्षितम् ।
पाणि पात्र उदर अमत्र मक्षिका इव न सङ्ग्रही ॥

शब्दार्थ—

सायन्तनम्	१.	सन्यासी को सायंकाल	पाणि	८.	भिक्षा लेने के लिये हाथ और
श्वस्तनम्	३.	दूसरे दिन के लिये	पात्र	७.	पात्र के रूप में
वा	२.	अथवा	उदर	९.	रखने के लिये उदर रूपी
न	६.	नहीं करना चाहिये	अमत्र	१०.	पात्र ही होना चाहिये
संगृह्णीत	५.	सङ्ग्रह	मक्षिका इव	११.	मधुमक्खियों के समान
भिक्षितम् ।	४	भिक्षा का	न सङ्ग्रही ॥	१२.	सङ्ग्रह नहीं करना चाहिये

श्लोकार्थ——सन्यासी को सायंकाल अथवा दूसरे दिन के लिये भिक्षा का संग्रह नहीं करना चाहिये । पात्र के रूप में भिक्षा लेने के लिये हाथ और रखने के लिये उदर रूपी पात्र ही होना चाहिये । मधुमक्खियों के समान संग्रह नहीं करना चाहिये ॥

द्वादशः श्लोकः

सायन्तनं श्वस्तनं वा न संगृह्णीत भिक्षुकः ।
मक्षिका इव सङ्गृह्णन् सह तेन विनश्यति ॥१२॥

पदच्छेद— सायन्तनम् श्वस्तनम् वा न संगृह्णीत भिक्षुकः ।
मक्षिका इव संगृह्णन् सह तेन विनश्यति ॥

शब्दार्थ—

सायन्तनम्	२.	सायंकाल	मक्षिका	८.	मधुमक्खी
श्वस्तनम्	४.	अगले दिन के लिये	इव	९.	के समान
वा	३.	अथवा	संग्रह्णन्	७.	यदि वह संग्रह करता है तो
न	६.	न करे	सह	११.	साथ ही
संगृह्णीत	५.	किसी प्रकार का संग्रह	तेन	१०.	उसी संग्रह किये हुये के
भिक्षुकः ।	१	भिक्षुक सन्यासी	विनश्यति ॥	१२.	जीवन गँवा बैठता है

श्लोकार्थ—भिक्षुक सन्यासी सायंकाल अथवा अगले दिन के लिये किसी प्रकार का संग्रह न करे । यदि वह संग्रह करता है तो मधुमक्खी के समान संग्रह किये हुये के साथ ही जीवन गँवा बैठता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

पदापि युवतीं भिक्षुर्न स्पृशेद् दारवीमपि ।
स्पृशन् करीव बध्येत करिण्या अङ्गसङ्गतः ॥१३॥

पदच्छेद— पदापि युवतीं भिक्षुः न स्पृशेद् दारवीम् अपि ।
स्पृशन् करीव बध्येत करिण्याः अङ्ग सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

पदापि	२.	कभी पैर से भी	स्पृशन्	८.	स्त्री का स्पर्श करने पर
युवतीं	५.	स्त्री का	करीव	९.	जैसे हाथी
भिक्षुः	१.	सन्यासी को	बध्येत	१३.	बँध जायेगा
न	७.	न करना चाहिये (क्योंकि)	करिण्याः	१०.	हथिनी के
स्पृशेद्	६.	स्पर्श	अङ्ग	११.	अङ्ग
दारवीम्	३.	काठ की बनी हुई	सङ्गतः ॥	१२.	सङ्ग से बँध जाता है (वैसे ही वह)
अपि ।	४.	भी			

श्लोकार्थ—सन्यासी को कभी पैर से भी काठ की बनी हुई भी स्त्री का स्पर्श नहीं करना चाहिये। क्योंकि स्त्री का स्पर्श करने पर जैसे हाथी, हथिनी के अङ्ग-सङ्ग से बँध जाता है। वैसे ही बंध जायेगा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नाधिगच्छेत स्त्रियं प्राज्ञः कर्हिचिन्मृत्युमात्मनः ।
बलाधिकैः स हन्येत गजैरन्यैर्गजो यथा ॥१४॥

पदच्छेद— न अधिगच्छेत् स्त्रियम् प्राज्ञः कर्हिचित् मृत्युम् आत्मनः ।
बल अधिकैः स हन्येत गजैः अन्यैः गजः यथा ॥

शब्दार्थ—

न अधिगच्छेत्	४.	भोग्य रूप से स्वीकार न करे	बल अधिकैः	११.	अधिक बलवान पुरुषों द्वारा
स्त्रियम्	२.	स्त्री को	स	७.	ऐसा पुरुष
प्राज्ञः	१.	विवेकी पुरुष	हन्येत	१२.	मारा जायेगा
कर्हिचित्	३.	कभी भी	गजैः	८.	हाथियों से
मृत्युम्	६.	मूर्तिमती मृत्यु है	अन्यैः	९.	दूसरे
आत्मनः ।	५.	क्योंकि वह उसकी	गजःयथा ॥	१०.	हाथी के समान

श्लोकार्थ—विवेकी पुरुष स्त्री को कभी भी भोग्य रूप से स्वीकार न करे। क्योंकि वह उसकी मूर्तिमती मृत्यु है। ऐसा पुरुष हाथियों से दूसरे हाथी के समान अधिक बलवान पुरुषों द्वारा मारा जायेगा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

न देयं नोपभोग्यं च लुब्धैर्यद् दुःखसञ्चितम् ।
भुङ्क्ते तदपि तच्चान्यो मधुहेवार्थविन्मधु ॥१५॥

पदच्छेद— न देयम् न उपभोग्यम् च लुब्धैः यत् दुःख सञ्चितम् ।
भुङ्क्ते तदपि तत् च अन्यः मधुहा इव अर्थ वित् मधु ॥

शब्दार्थ—

न देयम्	५.	न तो किसी को देते हैं	भुङ्क्ते	१०.	उसी प्रकार भोग करता है
न उपभोग्यम्	६.	और न उसका उपभोग करते हैं	तदपि	७.	फिर भी
च लुब्धैः	१.	लोभी पुरुष	तत् च	८.	उस धन का
यत्	३.	जो धन	अन्यः	९.	कोई और व्यक्ति
दुःख	२.	बड़े दुःख के साथ	मधुहा इव	११.	जैसे मधु निकालने वाला
सञ्चितम् ।	४.	इकट्ठा करता है (उसे वे)	अर्थवित्मधु ॥	१२.	प्रयोजन को जान कर मधुमक्खी के मधु का भोग करता है

श्लोकार्थ—लोभी पुरुष बड़े दुःख के साथ जो धन इकट्ठा करता है, उसे वे न तो किसी को देते हैं, और न उसका उपभोग करते हैं। फिर भी उस धन का कोई और व्यक्ति उसी प्रकार भोग करता है। जैसे मधु निकालने वाला प्रयोजन को जान कर मधुमक्खी के मधु का भोग करता है ॥

षोडशः श्लोकः

सुदुःखोपार्जितैर्वित्तैराशासानां गृहाशिषः ।
मधुहेवाग्रतो भुङ्क्ते यतिर्वै गृहमेधिनाम् ॥१६॥

पदच्छेद— सुदुःख उपार्जितैः वित्तैः आशासानाम् गृह आशिषः ।
मधुहा एव अग्रतः भुङ्क्ते यतिः वै गृह मेधिनाम् ॥

शब्दार्थ —

सुदुःख	३.	अत्यन्त कठिनाई से	मधुहा एव	१०.	मधु वाले के समान
उपार्जितैः	४.	इकट्ठे किये गये	अग्रतः	११.	उनसे पहले
वित्तैः	५.	पदार्थों से	भुङ्क्ते	१२.	उसे भोगते हैं
आशासनाम्	८.	आशा रखते हैं	यतिः	९.	ब्रह्मचारी, सन्यासी आदि
गृह	६.	गृहस्थ	वैगृह-	१.	गृहस्थ
आशिषः ।	७.	सुख भोग की	मेधिनाम् ॥	२.	मनुष्यों के द्वारा

श्लोकार्थ—गृहस्थ मनुष्यों के द्वारा अत्यन्त कठिनाई से इकट्ठे किये गये पदार्थों से गृहस्थ सुख भोग की आशा रखते हैं। ब्रह्मचारी, सन्यासी आदि मधु वाले के समान उनसे पहले उसे भोगते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

ग्राम्यगीतं न शृणुयाद् यतिर्वनचरः क्वचित् ।
शिक्षेत हरिणाद् बद्धान्मृगयोर्गीतमोहितात् ॥१७॥

पदच्छेद— ग्राम्य गीतम् न शृणुयात् यतिः वनचरः क्वचित् ।
शिक्षेत हरिणात् बद्धात् मृगयोः गीत मोहितात् ॥

शब्दार्थ—

ग्राम्य	४.	विषय सम्बन्धी	शिक्षेत	१३.	यही शिक्षा लेनी चाहिये
गीतम्	४.	गीत	हरिणात्	१२.	हरिण से
न	६.	नहीं	बद्धात्	११.	बँधे हुये
शृणुयात्	७.	सुनने चाहिये	मृगयोः	८.	व्याध के
यतिः	२.	सन्यासी को	गीत	९.	गीत से
वनचरः	१.	वनवासी	मोहितात् ॥	१०.	मोहित होकर
क्वचित् ।	३.	कभी			

श्लोकार्थ—वनवासी सन्यासी को कभी विषय सम्बन्धी गीत नहीं सुनने चाहिये । व्याध के गीत से मोहित होकर बँधे हुये हरिण से यही शिक्षा लेनी चाहिये ॥

अष्टदशः श्लोकः

नृत्यवादित्रगीतानि जुषन् ग्राम्याणि योषिताम् ।
आसां क्रीडनको वश्य ऋष्यशृङ्गो मृगीसुतः ॥१८॥

पदच्छेद— नृत्य वादित्र गीतानि जुषम् ग्राम्याणि योषिताम् ।
आसाम् क्रीडनकः वश्यः ऋष्यशृङ्गः मृगी सुतः ॥

शब्दार्थ—

नृत्य	८.	नाचना	आसाम्	१०.	उनकी
वादित्र	७.	बजाना	क्रीडनकः	११.	कठपुतली बन गये थे और
गीतानि	६.	गाना	वश्यः	१२.	उनके वश में हो गये थे
जुषन्	९.	देख-सुनकर	ऋष्यशृङ्गः	३.	ऋष्य शृङ्ग मुनि
ग्राम्याणि	५.	विषय सम्बन्धी	मृगी	१.	हरिणी के गर्भ से
योषिताम् ।	४.	स्त्रियों का	सुतः ॥	२.	पैदा हुये

श्लोकार्थ—हरिणी के गर्भ से पैदा हुये ऋष्य शृङ्ग मुनि स्त्रियों का विषय सम्बन्धी गाना, बजाना, नाचना देख-सुनकर उनकी कठपुतली बन गये थे, और उनके वश में हो गये थे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

जिह्वयातिप्रमाथिन्या जनो रसविमोहितः।
मृत्युमृच्छत्यसद्बुद्धिर्मीनस्तु बडिशैर्यथा ॥१९॥

पदच्छेद— जिह्वया अति प्रमाथिन्या जनः रस विमोहितः।
मृत्युम् ऋच्छति असद् बुद्धिः मीनः तु बडिशैः यथा ॥

शब्दार्थ—

जिह्वया	११.	जिह्वा के वश में होकर मारा जाता है	मृत्युम्	४.	मृत्यु को
अति प्रमाथिन्या	१०.	अपने मन को मथने से	ऋच्छति	५.	प्राप्त होती है, वैसे ही
जनः	७.	मनुष्य भी	असद् बुद्धिः	६.	दुर्बुद्धि
रस-	८.	स्वाद का	मीनः तु	२.	मछली
विमोहितः।	९.	लोभी	बडिशैः	३.	काँटे में लगे मांस के लोभ से
			यथा ॥	१.	जिस प्रकार

श्लोकार्थ—जिस प्रकार मछली काँटे में लगे मांस के लोभ से मृत्यु को प्राप्त होती है। वैसे ही दुर्बुद्धि मनुष्य भी स्वाद का लोभी अपने मन को मथने से जिह्वा के वश में होकर मारा जाता है ॥

विंशः श्लोकः

इन्द्रियाणि जयन्त्याशु निराहारा मनीषिणः।
वर्जयित्वा तु रसनं तन्निरन्नस्य वर्धते ॥२०॥

पदच्छेद— इन्द्रियाणि जयन्ति आशु निराहाराः मनीषिणः।
वर्जयित्वा तु रसनम् तत् निः अन्नस्य वर्धते ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रियाणि	३.	दूसरी इन्द्रियों पर	वर्जयित्वा	७.	वश में नहीं होती, अर्थात्
जयन्ति	५.	विजय प्राप्त कर लेता है	तु रसनम्	६.	परन्तु इससे रसनेन्द्रिय
आशु	४.	बहुत शीघ्र	तत् निः	९.	छोड़ देने पर वह और
निराहाराः	२.	भोजन बन्द करके	अन्नस्य	८.	भोजन
मनीषिणः।	१.	विवेकी पुरुष	वर्धते ॥	१०.	प्रबल हो जाती है

श्लोकार्थ— विवेकी पुरुष भोजन बन्द करके दूसरी इन्द्रियों पर बहुत शीघ्र विजय प्राप्त कर लेता है। परन्तु इससे रसनेन्द्रिय वश में नहीं होती, अर्थात् भोजन छोड़ देने पर वह और प्रबल हो जाती है ॥

एकविंशः श्लोकः

तावज्जितेन्द्रियो न स्याद् विजितान्येन्द्रियः पुमान् ।
न जयेद् रसनं यावज्जितं सर्वं जिते रसे ॥२१॥

पदच्छेद— तावत् जितेन्द्रियः न स्यात् विजित अन्य इन्द्रियः पुमान् ।
न जयेद् रसनम् यावत् जितम् सर्वम् जिते रसे ॥

शब्दार्थ—

			न जयेद्	९.	नहीं जीत लेता है और
तावत्	४.	तब-तक	रसनम्	८.	रसनेन्द्रियों को
जितेन्द्रियः	५.	जितेन्द्रिय	यावत्	७.	जब-तक
न स्यात्	६.	नहीं कहलाता	जितम्	१३.	अन्य इन्द्रियों को जीत लिया
विजित	३.	जीत कर भी	सर्वम्	१२.	सभी
अन्य इन्द्रियः	२.	अन्य इन्द्रियों को	जिते	११.	जीत लेने पर तो
पुमान् ।	१.	मनुष्य	रसे ॥	१०.	रसनेन्द्रिय को

श्लोकार्थ—मनुष्य अन्य इन्द्रियों को जीत कर भी तब-तक जितेन्द्रिय नहीं कहलाता है । जब-तक रसनेन्द्रिय को नहीं जीत लेता है । और रसनेन्द्रिय को जीत लेने पर तो सभी अन्य इन्द्रियों को जीत लिया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

पिङ्गला नाम वेश्याऽऽसीद् विदेहनगरे पुरा ।
तस्या मे शिक्षितं किञ्चिन्निबोध नृपनन्दन ॥२२॥

पदच्छेद— पिङ्गला नाम वेश्या आसीद् विदेह नगरे पुरा ।
तस्याः मे शिक्षितम् किञ्चित् निबोध नृपनन्दन ॥

शब्दार्थ—

पिङ्गला	५.	पिङ्गला	तस्याः	८.	उससे
नाम वेश्या	६.	नाम की एक वेश्या	मे	९.	मैंने
आसीद्	७.	रहती थी	शिक्षितम्	११.	शिक्षा ग्रहण की है
विदेह	३.	विदेह	किञ्चित्	१०.	जो कुछ
नगरे	४.	नगरी मिथिला में	निबोध	१२.	उसे सुनो
पुरा ।	२.	प्राचीन काल में	नृप नन्दन ॥	१.	हे नृपनन्दन !

श्लोकार्थ—हे नृपनन्दन ! प्राचीन काल में विदेह नगरी मिथिला में पिङ्गला नाम की एक वेश्या रहती थी । उससे मैंने जो कुछ शिक्षा ग्रहण की है उसे सुनो ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

सा स्वैरिण्येकदा कान्तं सङ्केत उपनेष्यती ।
अभूत् काले बहिर्द्वारि बिभ्रती रूपमुत्तमम् ॥२३॥

पदच्छेद— सा स्वैरिणी एकदा कान्तम् सङ्केत उपनेष्यती ।
अभूत् काले बहिः द्वारि बिभ्रती रूपम् उत्तमम् ॥

शब्दार्थ—

सा	३. वह वेश्या	अभूत्	१२. खड़ी रही
स्वैरिणी	२. स्वेच्छा चारिणी	काले	११. बहुत देर तक
एकदा	१. एक बार	बहिः	१०. बाहर
कान्तम्	४. किसी पुरुष को	द्वारि	९. दरवाजे के
सङ्केत	५. रमण स्थान में	बिभ्रती	८. बना कर
उपनेष्यती ।	६. लाने के लिये	रूपम् उत्तमम् ॥	७. सुन्दर रूप

श्लोकार्थ—एक बार स्वेच्छाचारिणी वह वेश्या किसी पुरुष को रमण स्थान में लाने के लिये सुन्दर रूप बनाकर दरवाजे के बाहर बहुत देर तक खड़ी रही ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

मार्ग आगच्छतो वीक्ष्य पुरुषान् पुरुषर्षभ ।
तान्छुल्कदान् वित्तवतः कान्तान् मेनेऽर्थकामुका ॥२४॥

पदच्छेद— मार्गे आगच्छतः वीक्ष्य पुरुषान् पुरुषर्षभ ।
तान् शुल्कदान् वित्तवतः कान्तान् मेने अर्थ कामुका ॥

शब्दार्थ—

मार्ग	४. उस मार्ग से	शुल्कदान्	९. धन देकर अपना
आगच्छतः	५. आते हुये	वित्तवतः	११. धनवान पुरुष
वीक्ष्य	७. देख कर	कान्तान्	१०. उपभोग करने वाला
पुरुषान्	६. मनुष्यों को	मेने	१२. समझती थी
पुरुषर्षभ ।	१. हे नररत्न !	अर्थ	२. धन की
तान्	८. उन्हें	कामुका ॥	३. कामनावाली (वह वेश्या)

श्लोकार्थ—हे नररत्न ! धन की कामना वाली वह वेश्या उस मार्ग से आते हुये मनुष्यों को देख कर उन्हें धन देकर अपना उपभोग करने वाला कोई धनवान् पुरुष समझती थी ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

आगतेष्वपयातेषु सा सङ्केतोपजीविनी ।
अप्यन्यो वित्तवान् कोऽपि मामुपैष्यति भूरिदः ॥२५॥

पदच्छेद— आगतेषु अपयातेषु सा सङ्केत उपजीविनी ।
अपि अन्यः वित्तवान् कः अपि माम् उपैष्यति भूरिदः ॥

शब्दार्थ—

आगतेषु	१.	आने वाले व्यक्तियों के	अन्यः	६.	दूसरा
अपयातेषु	२.	आगे बढ़ जाने पर	वित्तवान्	१०.	धनवान्
सा	५.	वह (वेश्या)	कः अपि	८.	कोई
सङ्केत	३.	सङ्केत स्थल से	माम्	११.	मेरे पास
उपजीविनी ।	४.	जीविका चलाने वाली	उपैष्यति	१२.	अवश्य आयेगा
अपि	६.	अबकीबार	भूरिदः ॥	७.	बहुत सा धन देने वाला

श्लोकार्थ—आने-वाले व्यक्तियों के आगे बढ़ जाने पर सङ्केत स्थल से जीविका चलाने वाली वह वेश्या अबकीबार बहुत सा धन देने वाला कोई दूसरा धनवान् मेरे पास अवश्य आयेगा ॥

षड्विंशः श्लोकः

एवं दुराशया ध्वस्तनिद्रा द्वार्यवलम्बती ।
निर्गच्छन्ती प्रविशती निशीथं समपद्यत ॥२६॥

पदच्छेद— एवम् दुराशया ध्वस्त निद्रा द्वारि अवलम्बती ।
निर्गच्छन्ती प्रविशती निशीथम् समपद्यत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इसी प्रकार	अवलम्बती ।	६.	सहारा लेकर खड़े-खड़े
दुराशया	२.	दुराशा के कारण	निर्गच्छन्ती	७.	बाहर आते और
ध्वस्त	४.	छोड़कर	प्रविशती	८.	कभी अन्दर जाते
निद्रा	४.	निद्रा को	निशीथम्	९.	आधी रात
द्वारि	५.	दरवाजे का	समपद्यत ॥	१०.	हो गई

श्लोकार्थ—इसी प्रकार दुराशा के कारण निद्रा को छोड़ कर दरवाजे का सहारा लेकर खड़े-खड़े बाहर आते और कभी अन्दर जाते, आधी रात हो गई ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तस्या वित्ताशया शुष्यद्वक्त्राया दीनचेतसः ।
निर्वेदः परमो जज्ञे चिन्ताहेतुः सुखावहः ॥२७॥

पदच्छेद— तस्याः वित्त आशया शुष्यत् वक्त्राया दीनचेतसः ।
निर्वेदः परमः जज्ञे चिन्ता हेतुः सुख आवहः ॥

शब्दार्थ—

तस्याः	३. उसका	निर्वेदः	८. वैराग्य
वित्त	१. धन की	परमः	७. तथा अत्यन्त
आशया	२. आशा के कारण	जज्ञे	९. उत्पन्न हुआ
शुष्यत्	५. सूख गया और	चिन्ता	११. चिन्ता ही थी, फिर भी
वक्त्रायाः	४ मुख	हेतुः	१०. जिसका कारण
दीनचेतसः ।	६ चित्त व्याकुल हो गया था	सुख आवहः ॥	१२. वह सुख का कारण था

श्लोकार्थ—धन की आशा के कारण उसका मुख सूख गया और चित्त व्याकुल हो गया था । तथा अत्यन्त वैराग्य उत्पन्न हुआ, जिसका कारण चिन्ता ही थी, फिर भी वह सुख का कारण था ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तस्या निर्विण्णचित्ताया गीतं श्रृणु यथा मम ।
निर्वेद आशापाशानां पुरुषस्य यथा ह्यसिः ॥२८॥

पदच्छेद— तस्या निर्विण्ण चित्तायाः गीतम् श्रृणु यथा मम ।
निर्वेद आशा पाशानाम् पुरुषस्य यथाहि असिः ॥

शब्दार्थ—

तस्या	३. उसने	निर्वेद	१३. केवल वैराग्य ही समर्थ है
निर्विण्ण	१. वैराग्य युक्त	आशा	११. आशा रूपी
चित्तायाः	२. चित्त से	पाशानाम्	१२. फांसी को काटने के लिये
गीतम्	५. गाना गाया उसे	पुरुषस्य	१०. मनुष्य की
श्रृणु	७. सुनो	यथाहि	९. समान
यथा	४. जैसा	असिः ॥	८. तलवार के
मम ।	६ मुझसे		

श्लोकार्थ—वैराग्य युक्त चित्त से उसने जैसा गाना गाया उसे मुझसे सुनो । तलवार के समान मनुष्य की आशा रूपी फांसी को काटने के लिये केवल वैराग्य ही समर्थ है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

न ह्यङ्गाजातनिर्वेदो देहबन्धं जिहासति ।
यथा विज्ञानरहितो मनुजो ममतां नृप ॥२९॥

पदच्छेद— नहि अङ्ग अजात निर्वेदः देह बन्धम् जिहासति ।
यथा विज्ञान रहितः मनुजः ममताम् नृप ॥

शब्दार्थ—

नहि	६.	वैसे ही नहीं	यथा	८.	जैसे
अङ्ग	१.	प्रिय	विज्ञान-	९.	ज्ञान से
अजात	४.	उत्पन्न नहीं हुआ है	रहितः	१०.	रहित
निर्वेदः	३.	जिसे वैराग्य	मनुजः	११.	मनुष्य
देह बन्धम्	५.	वह शरीर के बन्धन को	ममताम्	१२.	ममता को नहीं छोड़ना चाहता है
जिहासति ।	७.	छोड़ना चाहता है	नृप ॥	२.	प्रिय राजन्

श्लोकार्थ—प्रिय राजन् ! जिसे वैराग्य उत्पन्न नहीं हुआ है, वह शरीर के बन्धन को वैसे ही नहीं छोड़ना चाहता है, जैसे ज्ञान से रहित मनुष्य ममता को नहीं छोड़ना चाहता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

पिङ्गलोवाच— अहो मे मोहविततिं पश्यताविजितात्मनः ।
या कान्तादसतः कामं कामये येन बालिशा ॥३०॥

पदच्छेद— अहो मे मोह विततिम् पश्यत अविजित आत्मनः ।
या कान्तात् असतः कामम् कामये येन बालिशा ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	हाय ! हाय	या	७.	मैं
मे	२.	मेरे	कान्तात्	१०.	पुरुषों से
मोह विततिम्	३.	मोह का विस्तार तो	असतः	९.	तुच्छ
पश्यत	४.	देखो	कामम्	११.	विषय सुख की
अविजित	६.	अधीन हो गई	कामये	१२.	कामना करती हूँ
आत्मनः ।	५.	मैं इन्द्रियों के	येन बालिशा ॥	८.	जिससे विवेक शून्य होकर

श्लोकार्थ— हाय ! हाय मेरे मोह का विस्तार तो देखो । मैं इन्द्रियों के अधीन हो गई । जिससे मैं विवेक शून्य होकर तुच्छ पुरुषों से विषय सुख की कामना करती हूँ ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

सन्तं समीपे रमणं रतिप्रदं वित्तप्रदं नित्यमिमं विहाय ।
अकामदं दुःखभयाधिशोक-मोहप्रदं तुच्छमहं भजेऽज्ञा ॥३१॥

पदच्छेद— सन्तम् समीपे रमणम् रतिप्रदम् वित्तप्रदम् नित्यम् इमम् विहाय ।
अकामदम् दुःखभय अधिशोक मोहप्रदम् तुच्छम् अहम् भजे अज्ञा ॥

शब्दार्थ—					
सन्तम्	५.	विद्यमान	अकामदम्	११.	एक भी कामना पूरी न करने
समीपे	४.	मेरे हृदय के अत्यन्त निकट में	दुःखभय	१२.	दुःखमय
रमणम्	१	जो वास्तविक प्रेम	अधिशोक	१३.	आधि-व्याधि-शोक
रतिप्रदम्	२.	सुख और (परमार्थ का)	मोहप्रदम्	१४.	मोह को देने वाले
वित्तप्रदम्	३.	सच्चा धन देने वाले हैं	तुच्छम्	१५.	तुच्छ मनुष्यों का
नित्यम्	६.	नित्य स्वरूप हैं	अहम्	९.	मैं
इमम्	७.	उन	भजे	१६.	सेवन करती रही ।
विहाय ।	८.	परमात्मा को छोड़ कर	अज्ञा ॥	१०.	मूर्ख

श्लोकार्थ—जो वास्तविक प्रेम सुख और परमार्थ का सच्चा धन देने वाले हैं । मेरे हृदय के अत्यन्त निकट में विद्यमान नित्य स्वरूप हैं । उन परमात्मा को छोड़ कर मैं मूर्ख एक भी कामना पूरी न करने वाले दुःखमय आधि-व्याधि शोक-मोह को देने वाले तुच्छ मनुष्यों का सेवन करती रही ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

अहो मयाऽऽत्मा परितापितो वृथा साङ्केत्यवृत्त्यातिविगर्ह्यवार्तया ।
स्त्रैणान्नराद् यार्थतृषोऽनुशोच्यात् क्रीतेन वित्तं रतिमात्मनेच्छती ॥३२॥

पदच्छेद— अहो मया आत्मा परितापितः वृथा साङ्केत्य वृत्त्या अतिविगर्ह्य वार्तया ।
स्त्रैणात् नरात् या अर्थतृषः अनुशोच्यात् क्रीतेन वित्तम् रतिम् आत्मना इच्छती ॥

शब्दार्थ—					
अहो मया	१.	बड़े खेद की बात है कि मैंने	स्त्रैणात् नरात्	१२.	लम्पट मनुष्यों के द्वारा
आत्मा	२.	अपने शरीर और मन को	या	१०.	मैं
परितापितः	४.	कष्ट दिया	अर्थतृषः	९.	धन की प्यास के कारण
वृथा	३.	व्यर्थ ही	अनुशोच्यात्	११.	शोक करने योग्य
साङ्केत्य	५.	मैंने वेश्या	क्रीतेन वित्तम्	१३.	धन से खरीदे हुये
वृत्त्या	६.	वृत्ति रूप	रतिम्	१५.	रति सुख की
अतिविगर्ह्य	७.	अत्यन्त निन्दित	आत्मना	१४.	इस शरीर से
वार्तया ।	८.	जीविका का आश्रय लिया	इच्छती ॥	१६.	इच्छा करती रही

श्लोकार्थ—बड़े खेद की बात है कि मैंने अपने शरीर और मन को व्यर्थ ही कष्ट दिया । मैंने वेश्या वृत्ति रूप अत्यन्त निन्दित जीविका का आश्रय लिया । धन की प्यास के कारण मैं शोक करने योग्य लम्पट मनुष्यों के द्वारा धन से खरीदे हुये इस शरीर से रति सुख की इच्छा करती रही ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यदस्थिभिर्निर्मितवंशवंश्यस्थूणं त्वचा रोमनखैः पिनद्धम् ।
क्षरन्नवद्वारमगारमेतद् विण्मूत्रपूर्णं मदुपैति कान्या ॥३३॥

पदच्छेद— यद् अस्थिभिः निर्मित वंशवंश्य स्थूणम् त्वचारोम नखैः पिनद्धम् ।
क्षरत् नवद्वारम् अगारम् एतद् विण्मूत्र पूर्णम् मद् उपैति कान्या ॥

शब्दार्थ—

यद अस्थिभिः	१. जो शरीर हड्डियों के		क्षरद्	९. मल निकालते ही रहते हैं
निर्मित	४. बनाया गया है		नवद्वारम्	८. इसमें नौ दरवाजे हैं जिनसे
वंशवंश्य	२. टेढ़े तिरछे बांस		अगारम् एतद्	११. यह शरीर इन्हीं का घर है
स्थूणम्	३. और खम्भों से		विण्मूत्र पूर्णम्	१०. मल-मूत्र से भरा हुआ
त्वचारोम	५. चाम रोएँ और		मद्	१२. मेरे
नखैः	६. नाखूनों से यह		उपैति	१४. इस शरीर का सेवन करेगी
पिनद्धम् ।	७. छाया गया है		कान्या ॥	१३. अतिरिक्त और कौन

श्लोकार्थ—जो शरीर हड्डियों को टेढ़े तिरछे बांस और खम्भों से बनाया गया है। चाम रोयें और नाखूनों से यह छाया गया है। इसमें नौ दरवाजे हैं। जिनसे मल निकलते ही रहते हैं। मल-मूत्र से भरा हुआ यह शरीर इन्हीं का घर है। मेरे अतिरिक्त और कौन इस शरीर का सेवन करेगी ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

विदेहानां पुरे ह्यस्मिन्नहमेकैव मूढधीः ।
यान्यमिच्छन्त्यसत्यस्मादात्मदात् काममच्युतात् ॥३४॥

पदच्छेद— विदेहानाम् पुरे हि अस्मिन् अहम् एका एव मूढ धीः ।
यः अन्यम् इच्छन्ति असती अस्मात् आत्मदात् कामम् अच्युताम् ॥

शब्दार्थ—

विदेहानाम्	२. विदेह की	यः	७. जो मैं
पुरे हि	३. नगरी में	अन्यम्	११. सांसारिक प्राणियों से
अस्मिन्	१. इस	इच्छन्ती	१३. इच्छा करती रही
अहम् एका	४. अकेली मैं	असती	८. कुलटा
एव मूढ	५. ही मूर्ख	अस्मात् आत्मदात्	९. इन आत्मदानी
धीः ।	६. बुद्धि वाली हूँ	कामम्	१२. भोग की
		अच्युतात् ॥	१०. अविनाशी परमात्मा को छोड़ कर

श्लोकार्थ—इस विदेह की नगरी में अकेली मैं ही मूर्ख बुद्धि वाली हूँ। जो मैं कुलटा इन आत्मदानी अविनाशी परमात्मा को छोड़ कर सांसारिक प्राणियों से भोग की इच्छा करती रही ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

सुहृत् प्रेष्ठतमो नाथ आत्मा चायं शरीरिणाम् ।
तं विक्रीयात्मनैवाहं रमेऽनेन यथा रमा ॥३५॥

पदच्छेद— सुहृत् प्रेष्ठतमः नाथ आत्मा च अयम् शरीरिणाम् ।
तम् विक्रीय आत्मना एव अहम् रमे अनेन यथा रमा ॥

शब्दार्थ—

सुहृत्	३. प्रेमी	तम् विक्रीय	९. बेंच कर इन्हें खरीद लूंगी और
प्रेष्ठतमः	४. प्रियतम	आत्मना एव	८. अपने को ही
नाथ	५. स्वामी	अहम्	७. अब मैं
आत्मा च	६. और आत्मा हैं	रमे	११. विहार करूंगी
अयम्	२. प्रभु प्राणियों के	अनेन	१०. इनके साथ वैसे ही
शरीरिणाम् ।	१. मेरे हृदय में विराजमान	यथा रमा ॥	१२. जैसे लक्ष्मी जी विहार करती हैं

श्लोकार्थ—मेरे हृदय में विराजमान प्रभु प्राणियों के प्रेमी, प्रियतम, स्वामी और आत्मा हैं । अब मैं अपने को ही बेंच कर इन्हें खरीद लूंगी, और इनके साथ वैसे ही विहार करूंगी जैसे लक्ष्मी जी विहार करती हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

कियत् प्रियं ते व्यभजन् कामा ये कामदा नराः ।
आद्यन्तवन्तो भार्याया देवा वा कालविद्रुताः ॥३६॥

पदच्छेद— क्रियत् प्रियम् ते व्यभजन् कामाः ये कामदाः नराः ।
आद्यन्तवन्तः भार्यायाः देवाः वा काल विद्रुताः ॥

शब्दार्थ—

क्रियत् प्रियम्	५. कितना सुख	आद्यन्तवन्तः	७. ये तो पैदा होते और मरते हैं
ते	४. तुझे	भार्यायाः	१२. पत्नियों को कितना सुख दिया है
व्यभजन्	६. दिया है (अरे)	देवाः	११. देवताओं ने अपनी
कामाः ये	१. जो भोग हैं उन्होंने और	वा	८. अथवा
कामदाः	२. भोगों को देने वाले	काल	९. काल के
नराः ।	३. सांसारिक प्राणियों ने	विद्रुताः ॥	१०. गाल में पड़े हुये

श्लोकार्थ—जो भोग हैं, उन्होंने और भोगों को देने वाले सांसारिक प्राणियों ने तुझे कितना सुख दिया है । अरे ये तो पैदा होते और मरते रहे हैं । अथवा काल के गाल में पड़े हुये देवताओं ने अपनी पत्नियों को कितना सुख दिया है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

नूनं मे भगवान् प्रीतो विष्णुः केनापि कर्मणा ।
निर्वेदोऽयं दुराशाया यन्मे जातः सुखावहः ॥३७॥

पदच्छेद— नूनम् मे भगवान् प्रीतः विष्णुः केन अपि कर्मणा ।
निर्वेदः अयम् दुराशायाः यत् मे जातः सुख आवहः ॥

शब्दार्थ—

नूनम् मे	१.	अवश्य ही मेरे	निर्वेदः	११.	वैराग्य
भगवान्	४.	भगवान्	अयम्	६.	यह
प्रीतः	६.	मुझ पर प्रसन्न हैं	दुराशायाः	८.	दुराशा से
विष्णुः	५.	विष्णु	यत् मे	७.	क्योंकि मुझे
केन अपि	१.	किसी शुभ	जातः	१२.	उत्पन्न हुआ है
कर्मणा ।	३.	कर्म से ही	सुख आवहः ॥	१०.	सुख दायक

श्लोकार्थ—अवश्य ही मेरे किसी शुभ कर्म से ही भगवान् विष्णु मुझ पर प्रसन्न हैं । क्योंकि मुझे दुराशा से यह सुख दायक वैराग्य उत्पन्न हुआ है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

मैवं स्युर्मन्दभाग्यायाः क्लेशा निर्वेदहेतवः ।
येनानुबन्धं निर्हृत्य पुरुषः शममृच्छति ॥३८॥

पदच्छेद— मा एवम् स्युः मन्द भाग्यायाः क्लेशाः निर्वेद हेतवः ।
येन अनुबन्धम् निर्हृत्य पुरुषः शमम् ऋच्छति ॥

शब्दार्थ—

मा एवम् स्युः	६.	मुझे न होते	येन	७.	जिस वैराग्य से
मन्द	१.	यदि मैं मन्द	अनुबन्धम्	८.	समस्त बन्धनों को
भाग्यायाः	२.	भागिनी होती तो	निर्हृत्य	९.	काट कर
क्लेशाः	५.	ये दुःख ही	पुरुषः	१०.	मनुष्य
निर्वेद	३.	वैराग्य के	शमम्	११.	शान्ति-लाभ
हेतवः ।	४.	कारण भूत	ऋच्छति ॥	१२.	करता है

श्लोकार्थ—यदि मैं मन्द भागिनी होती तो वैराग्य के कारण भूत ये दुःख ही मुझे न होते । जिस वैराग्य से समस्त बन्धनों को काट कर मनुष्य शान्ति-लाभ करता है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

तेनोपकृतमादाय शिरसा ग्राम्यसङ्गताः ।
त्यक्त्वा दुराशाः शरणं व्रजामि तमधीश्वरम् ॥३९॥

पदच्छेद— तेन उपकृतम् आदाय शिरसा ग्राम्य सङ्गताः ।
त्यक्त्वा दुराशाः शरणम् व्रजामि तम् अधीश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

तेन	१.	इसलिये	त्यक्त्वा	५.	छोड़कर
उपकृतम्	७.	भगवान् का उपकार	दुराशाः	४.	दुराशा
आदाय	८.	स्वीकार करते हुये	शरणम्	११.	शरण
शिरसा	६.	सिर से	व्रजामि	१२.	ग्रहण करती हूँ ।
ग्राम्य	२.	विषय	तम्	९.	उन्हीं
सङ्गताः ।	३.	भोगों की	अधीश्वरम् ॥	१०.	जगदीश्वर की

श्लोकार्थ—इसलिये विषय भोगों की दुराशा छोड़कर सिर से भगवान् का उपकार स्वीकार करते हुये उन्हीं जगदीश्वर की शरण ग्रहण करती हूँ ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

सन्तुष्टा श्रद्दधत्येतद्यथालाभेन जीवती ।
विहराम्यमुनैवाहमात्मना रमणेन वै ॥४०॥

पदच्छेद— सन्तुष्टा श्रद्दधती एतत् यथा लाभेन जीवती ।
विहरामि अमुना एव अहम् आत्मना रमणेन वै ॥

शब्दार्थ—

सन्तुष्टा	५.	बड़े सन्तोष तथा	विहरामि	१२.	विहार करूँगी
श्रद्दधती	६.	श्रद्धा के साथ रहूँगी	अमुना	८.	इस
एतत्	३.	उसी से	एव	९.	ही
यथा	१.	अब मुझे जो	अहम्	७.	और
लाभेन	२.	प्राप्त हो जायेगा	आत्मना	१०.	आत्म तत्त्व में
जीवती ।	४.	जीवन निर्वाह करके	रमणेन वै ॥	११.	रमण करती हुई

श्लोकार्थ—अब मुझे जो प्राप्त हो जायेगा उसी से जीवन निर्वाह करके बड़े सन्तोष तथा श्रद्धा के साथ रहूँगी । और मैं इस ही आत्म तत्त्व में रमण करती हुई विहार करूँगी ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

संसारकूपे पतितं विषयैर्मुषितेक्षणम् ।
ग्रस्तं कालाहिनाऽऽत्मानं कोऽन्यस्त्रातुमधीश्वरः ॥४१॥

पदच्छेद— संसार कूपे पतितम् विषयैः मुषित ईक्षणम् ।
ग्रस्तम् काल अहिना आत्मानम् कः अन्यः त्रातुम् अधीश्वरः ॥

शब्दार्थ—

संसार	१. संसार रूपी	ग्रस्तम्	९.	अपने मुख में दबा रखा है
कूपे	२. कुएँ में	काल अहिना	८.	कालरूपी सर्प ने
पतितम्	३. गिरे हुये	आत्मानम्	७.	इस जीव को
विषयैः	४. विषयों के द्वारा	कः अन्यः	११.	अन्य कौन
मुषित	६. हीन बनाये गये	त्रातुम्	१२.	इसकी रक्षा कर सकता है
ईक्षणम् ।	५. दृष्टि	अधीश्वरः ॥	१०.	अब भगवान् को छोड़कर

श्लोकार्थ—संसार रूपी कुएँ में गिरे हुये विषयों के द्वारा दृष्टि हीन बनाये गये इस जीव को काल-रूपी सर्प ने अपने मुख में दबा रखा है। अब भगवान् को छोड़कर अन्य कौन इसकी रक्षा कर सकता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

आत्मैव ह्यात्मनो गोप्ता निर्विद्येत यदाखिलात् ।
अप्रमत्त इदं पश्येद् ग्रस्तं कालाहिना जगत् ॥४२॥

पदच्छेद— आत्मा एव हि आत्मनः गोप्ता निर्विद्येत यदा अखिलात् ।
अप्रमत्तः इदम् पश्येत् ग्रस्तम् काल अहिना जगत् ॥

शब्दार्थ—

आत्माएव	४. उस समय स्वयं ही	अप्रमत्तः	८.	इसलिये बड़ी सावधानी के साथ
हि आत्मनः	५. अपनी	इदम्	७.	यह
गोप्ता	६. रक्षा कर लेता है	पश्येत्	९.	देखना चाहिये कि
निर्विद्येत	३. विरक्त हो जाता है	ग्रस्तम्	१२.	ग्रसा हुआ है
यदा	१. जब जीव	काल अहिना	११.	काल रूपी अजगर से
अखिलात् ।	२. समस्त विषयों से	जगत् ॥	१०.	सारा जगत्

श्लोकार्थ—जब जीव समस्त विषयों से विरक्त हो जाता है उस समय स्वयं ही अपनी रक्षा कर लेता है। यह इसलिये बड़ी सावधानी के साथ देखना चाहिये कि सारा जगत् काल रूपी अजगर से ग्रसा हुआ है ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच— एवं व्यवसितमतिर्दुराशां कान्ततर्षजाम् ।
छित्त्वोपशममास्थाय शय्यामुपविवेश सा ॥४३॥

पदच्छेद — एवम् व्यवसित मतिः दुराशाम् कान्त तर्षजाम् ।
छित्त्वा उपशमम् आस्थाय शय्याम् उपविवेश सा ॥

शब्दार्थ—

एवम्	३.	ऐसा	छित्त्वा	८.	त्याग कर
व्यवसित	४.	निश्चय करके	उपशमम्	९.	शान्ति
मतिः	२.	बुद्धि से	आस्थाय	१०.	प्राप्त करके
दुराशाम्	७.	दुराशा को	शय्याम्	११.	सेज पर जाकर
कान्त	५.	प्रिय से	उपविवेश	१२.	सो रही
तर्षजाम् ।	६.	मिलने की	सा ॥	१.	वह पिङ्गला वेश्या

श्लोकार्थ—हे राजन् ! वह पिङ्गला वेश्या बुद्धि से ऐसा निश्चय कर के प्रिय से मिलने की दुराशा को त्याग कर शान्ति प्राप्त कर के सेज पर जाकर सो रही ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

आशा हि परमं दुःखं नैराश्यं परमं सुखम् ।
यथा सञ्छिद्य कान्ताशां सुखं सुष्वाप पिङ्गला ॥४४॥

पदच्छेद— आशा हि परमम् दुःखम् नैराश्यम् परमम् सुखम् ।
यथा सञ्छिद्य कान्ताशाम् सुखम् सुष्वाप पिङ्गला ॥

शब्दार्थ—

आशा हि	१.	आशा ही	यथा	७.	जैसे कि
परमम्	२.	सबसे बड़ा	सञ्छिद्य	९.	बिल्कुल त्याग कर
दुःखम्	३.	दुःख है और	कान्ताशाम्	८.	पुरुष की आशा को
नैराश्यम्	४.	निराशा ही	सुखम्	११.	सुख पूर्वक
परमम्	५.	सब से बड़ा	सुष्वाप	१२.	सो सकी थी
सुखम् ।	६.	सुख है	पिङ्गला ॥	१०.	पिङ्गला वेश्या

श्लोकार्थ—आशा ही सबसे बड़ा दुःख है और निराशा ही सबसे बड़ा सुख है। जैसे कि पुरुष की आशा को बिल्कुल त्याग कर पिङ्गला वेश्या सुख पूर्वक सो सकी थी ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे अष्टमः अध्यायः ॥ ८ ॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

ब्राह्मण उवाच— परिग्रहो हि दुःखाय यद् यत्प्रियतमं नृणाम् ।

अनन्तं सुखमाप्नोति तद् विद्वान् यस्त्वकिञ्चनः ॥१॥

पदच्छेद— परिग्रहः हि दुःखाय यद्-यत् प्रियतमम् नृणाम् ।

अनन्तम् सुख माप्नोति तद् विद्वान् यः तु अकिञ्चनः ॥

शब्दार्थ—

परिग्रहः हि	४.	संग्रह ही	सुखम्	११.	सुख को
दुःखाय	५.	दुःख का कारण है	आप्नोति	१२.	प्राप्त करता है
यद्-तत्	२.	जो-जो वस्तुयें	तद्	६.	यह बात समझ कर
प्रियतमम्	३.	प्रिय लगती हैं, उनका	विद्वान्	७.	जो विद्वान और
नृणाम्	१.	मनुष्यों को	यः तु	८.	बुद्धिमान व्यक्ति
अनन्तम् ।	१०.	वह अनन्त	अकिञ्चनः ॥	९.	अकिञ्चन भाव से रहता है

श्लोकार्थ—मनुष्यों को जो-जो वस्तुयें प्रिय लगतीं हैं, उनका संग्रह ही दुःख का कारण है यह बात समझ कर जो विद्वान् और बुद्धिमान व्यक्ति अकिञ्चन भाव से रहता है वह अनन्त सुख को प्राप्त करता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

सामिषं कुररं जघ्नुर्बलिनो ये निरामिषाः ।

तदामिषं परित्यज्य स सुखं समविन्दत ॥२॥

पदच्छेद— सामिषम् कुररम् जघ्नुः बलिनः ये निरामिषाः ।

तत् आमिषम् परित्यज्य सः सुखम् समविन्दत ॥

शब्दार्थ—

सामिषम्	१.	मांस का टुकड़ा लिये	तत्	८.	उस
कुररम्	२.	एक कुरर पक्षी को	आमिषम्	९.	मांस के टुकड़े को
जघ्नुः	६.	मारने लगे	परित्यज्य	१०.	फेंक कर ही
बलिनः	५.	बलवान पक्षी	सः	७.	उस कुरर पक्षी ने
ये	३.	जिनके पास	सुखम्	११.	सुख
निरामिषाः ।	४.	मांस नहीं था ऐसे	समविन्दत ॥	१२.	पाया

श्लोकार्थ—मांस का टुकड़ा लिये हुये एक कुरर पक्षी को जिनके पास मांस नहीं था ऐसे बलवान पक्षी मारने लगे । उस कुरर पक्षी ने उस मांस के टुकड़े को फेंक कर ही सुख पाया ॥

तृतीयः श्लोकः

न मे मानावमानौ स्तो न चिन्ता गेहपुत्रिणाम् ।
आत्मक्रीड आत्मरतिर्विचरामीह बालवत् ॥३॥

पदच्छेद— न मे मान अवमानौ स्तः न चिन्ता गेह पुत्रिणाम् ।
आत्मक्रीडः आत्मरतिः विचरामि इह बाल वत् ॥

शब्दार्थ—

न मे	१. मुझे न तो		आत्मक्रीडः	६. अपने साथ ही खेलता हूँ	
मान	२. मान और		आत्मरतिः	८. मैं आत्मा में ही रमता हूँ	
अवमानौ	३. अपमान का		विचरामि	१३. विचरण करता हूँ	
स्तः न	४. ध्यान है, न		इह	१०. मैं इस संसार में	
चिन्ता	७. चिन्ता है		बाल	११. बालक के	
गेह	५. घर और		वत् ॥	१२. समान	
पुत्रिणाम् ।	६. परिवार वालों की				

श्लोकार्थ—मुझे न तो मान और अपमान का ध्यान है न घर और परिवार वालों की चिन्ता है। मैं आत्मा में ही रमता हूँ। अपने साथ ही खेलता हूँ। मैं इस संसार में बालक के समान विचरण करता हूँ ॥

चतुर्थः श्लोकः

द्वावेव चिन्तया मुक्तौ परमानन्द आप्लुतौ ।
यो विमुग्धो जडो बालो यो गुणेभ्यः परं गतः ॥४॥

पदच्छेद— द्वौ एव चिन्तया मुक्तौ परमानन्द आप्लुतौ ।
यः विमुग्धः जडः बालः यः गुणेभ्यः परम् गतः ॥

शब्दार्थ—

द्वौ	१. दो प्रकार के लोग	यः	७. एक तो वह जो
एव	२. ही	विमुग्धः	८. भोला-भाला
चिन्तया	३. चिन्ता से	जडः बालः	९. निश्चेष्ट नन्हा सा बालक है और
मुक्तौ	४. मुक्त और	यः	१०. दूसरा वह जो
परमानन्द	५. परम आनन्द में	गुणेभ्यः	११. गुणों से
आप्लुतौ ।	६. मग्न रहते हैं	परम् गतः ॥	१२. परे (जीवन मुक्त) हो चुका है

श्लोकार्थ—दो ही प्रकार के लोग चिन्ता से मुक्त और परमानन्द में मग्न रहते हैं। एक तो वह जो भोला-भाला निश्चेष्ट नन्हा सा बालक है। और दूसरा वह जो गुणों से परे जीवन-मुक्त हो चुका है ॥

पञ्चमः श्लोकः

क्वचित् कुमारी त्वात्मानं वृणानान् गृहमागतान् ।
स्वयं तानर्हयामास क्वापि यातेषु बन्धुषु ॥५॥

पदच्छेद— क्वचित् कुमारी तु आत्मानम् वृणानान् गृहम् आगतान् ।
स्वयम् तान् अर्हयामास क्वापि यातेषु बन्धुषु ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	किसी जगह	स्वयम्	१०.	उसने स्वयम् ही
कुमारी तु	२.	एक कुमारी कन्या के	तान्	११.	उनका
आत्मानम्	४.	उसे	अर्हयामास	१२.	आतिथ्य सत्कार किया
वृणानान्	५.	वरण करने के लिये	क्वापि	८.	कहीं
गृहम्	३.	घर	यातेषु	९.	चले गये थे
आगतान् ।	६.	कई लोग आये	बन्धुषु ॥	७.	उस समय घर के लोग

श्लोकार्थ—किसी जगह एक कुमारी कन्या के घर उसे वरण करने के लिये कई लोग आये । उस समय घर के लोग कहीं चले गये थे । उसने स्वयं ही उनका आतिथ्य सत्कार किया ॥

षष्ठः श्लोकः

तेषामभ्यवहारार्थं शालीन् रहसि पार्थिव ।
अवघ्नन्त्याः प्रकोष्ठस्थाश्चक्रुः शङ्खाः स्वनं महत् ॥६॥

पदच्छेद— तेषाम् अभ्यवहार अर्थम् शालीन् रहसि पार्थिव ।
अवघ्नन्त्याः प्रकोष्ठस्थाः चक्रुः शङ्खाः स्वनम् महत् ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	२.	उनको	अवघ्नन्त्याः	७.	कूटने लगी
अभ्यवहार	३.	भोजन कराने के	प्रकोष्ठस्थाः	८.	तब कलाई में स्थित
अर्थम्	४.	लिये	चक्रुः	१२.	लगी ।
शालीन्	६.	धान	शङ्खाः	९.	शङ्ख की चूड़ियाँ
रहसि	५.	वह एकान्त में	स्वनम्	११.	बजने
पार्थिव ।	१.	हे राजन् ।	महत् ॥	१०.	जोर-जोर से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उनको भोजन कराने के लिये वह एकान्त में धान कूटने लगी । तब कलाई में स्थित शङ्ख की चूड़ियाँ जोर-जोर से बजने लगीं ॥

सप्तमः श्लोकः

सा तज्जुगुप्सितं मत्वा महती व्रीडिता ततः ।
बभञ्जैकैकशः शङ्खान् द्वौ द्वौ पाण्योरशेषयत् ॥७॥

पदच्छेद— सा तत् जुगुप्सितम् मत्वा व्रीडिता ततः ।
बभञ्ज एकैकशः शङ्खान् द्वौ द्वौ पाण्योः अशेषयत् ॥

शब्दार्थ—

सा	४.	उस कन्या को	बभञ्ज	६.	तोड़ दी और
तत्	१.	उस शब्द को	एकैकशः	७.	एक-एक करके
जुगुप्सितम्	२.	निन्दित	शङ्खान्	८.	सभी चूड़ियाँ
मत्वा	३.	समझ कर	द्वौ द्वौ	११.	दो-दो चूड़ियाँ ही
महती व्रीडिता	५.	बड़ी लज्जा लगी	पाण्योः	१०.	दोनों हाथों में केवल
ततः ।	६.	तब उसने	अशेषयत् ॥	१२.	रहने दीं

श्लोकार्थ—उस शब्द को निन्दित समझ कर उस कन्या को बड़ी लज्जा लगी । तब उसने एक-एक करके सभी चूड़ियाँ तोड़ दीं और दोनों हाथों में केवल दो-दो चूड़ियाँ ही रहने दीं ॥

अष्टमः श्लोकः

उभयोरप्यभूद् घोषो ह्यवघ्नन्त्याः स्म शङ्खयोः ।
तत्राप्येकं निरभिददेकस्मान्नाभवद् ध्वनिः ॥८॥

पदच्छेद— उभयोः अपि अभूद् घोषः हि अवघ्नन्त्या स्म शङ्खयोः ।
तत्र अपिएकम् निरभिदत् एकस्मात् न अभवत् ध्वनिः ॥

शब्दार्थ—

उभयोः	२.	उन दो-दो	तत्र	७.	तब उसने
अपि	४.	भी	अपिएकम्	८.	एक-एक चूड़ी और
अभूद् घोषः	५.	ध्वनि हो रही	निरभिदत्	९.	तोड़ दी
हि अवघ्नन्त्याः	१.	धान कूटते समय उसकी	एकस्मात्	१०.	फिर एक चूड़ी से
स्म	६.	थी	न अभवत्	१२.	आवाज नहीं हुई
शङ्खयोः ।	३.	चूड़ियों से	ध्वनिः ॥	११.	किसी प्रकार की

श्लोकार्थ—धान कूटते समय उसकी उन दो-दो चूड़ियों से भी ध्वनि हो रही थी । तब उसने एक-एक चूड़ी और तोड़ दी । फिर एक चूड़ी से किसी प्रकार की आवाज नहीं हुई ॥

नवमः श्लोकः

अन्वशिक्षमिमं तस्या उपदेशमरिन्दम ।
लोकाननुचरन्नेतान् लोकतत्त्वविवित्सया ॥९॥

पदच्छेद— अन्वशिक्षम् इमम् तस्याः उपदेशम् अरिन्दम ।
लोकान् अनुचरन् एतान् लोकतत्त्व विवित्सया ॥

शब्दार्थ—

अन्वशिक्षम्	१०.	यह शिक्षा ग्रहण की है	लोकान्	५.	लोगों के बीच
इमम्	८.	इस	अनुचरन्	६.	घूमते हुये
तस्याः	७.	मैंने उसके	एतान्	४.	इन
उपदेशम्	९.	आचरण से	लोकतत्त्व	२.	लोगों का
अरिन्दम ।	१.	हे शत्रुदमन !	विवित्सया ॥	३.	आचार-विचार जानने के लिये

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमन ! लोगों का आचार-विचार जानने के लिये इन लोगों के बीच घूमते हुये मैंने उसके इस आचरण से यह शिक्षा ग्रहण की है ॥

दशमः श्लोकः

वासे बहूनां कलहो भवेद् वार्ता द्वयोरपि ।
एक एव चरेत्तस्मात् कुमार्या इव कङ्कणः ॥१०॥

पदच्छेद— वासे बहूनाम् कलहः भवेत् वार्ता द्वयोः अपि ।
एकः एव चरेत् तस्मात् कुमार्याः इव कङ्कणः ॥

शब्दार्थ—

वासे	२.	एक साथ रहने पर	एकः	१०.	अकेले
बहूनाम्	१.	बहुत से लोगों के	एव	११.	ही
कलहः	३.	कलह	चरेत्	१२.	विचरना चाहिये
भवेत्	४.	होता है	तस्मात्	७.	इसलिये
वार्ता	६.	बात-चीत होती है	कुमार्याः	८.	कुमारी कन्या की
द्वयोः अपि ।	५.	दो लोगों के रहने पर भी	इव कङ्कणः ॥	९.	चूड़ी के समान

श्लोकार्थ—हे राजन् ! बहुत से लोगों के एक साथ रहने पर कलह होता है। दो लोगों के रहने पर भी बात-चीत होती है। इसलिये कुमारी कन्या की चूड़ी के समान अकेले ही विचरना चाहिये ॥

एकादशः श्लोकः

मन एकत्र संयुञ्ज्याज्जितश्वासो जितासनः ।
वैराग्याभ्यासयोगेन ध्रियमाणमतन्द्रितः ॥११॥

पदच्छेद— मनः एकत्र संयुञ्ज्यात् अजित् श्वासः जित आसनः ।
वैराग्य अभ्यास योगेन ध्रियमाणम् अतन्द्रियः ॥

शब्दार्थ—

मनः	७.	मन को	वैराग्य	४.	वैराग्य और
एकत्र	१०.	एक लक्ष्य में	अभ्यास	५.	अभ्यास के
संयुञ्ज्यात्	११.	लगाये ।	योगेन	६.	द्वारा
जित	३.	जीत कर	ध्रियमाणम्	८.	वश में करके
श्वासः	२.	श्वास को भी	अतन्द्रियः ॥	९.	बड़ी सावधानी से उसे
जित आसनः ।	१.	आसन को जीत कर और			

श्लोकार्थ—राजन् ! आसन को जीत कर और श्वास को जीत कर वैराग्य और अभ्यास के द्वारा मन को वश में करके बड़ी सावधानी से उसे एक लक्ष्य में लगाये ॥

द्वादशः श्लोकः

यस्मिन् मनो लब्धपदं यदेतच्छनैः शनैर्मुञ्चति कर्मरेणून् ।
सत्त्वेन वृद्धेन रजस्तमश्च विधूय निर्वाणमुपैत्यनिन्धनम् ॥१२॥

पदच्छेद— यस्मिन् मनः लब्धपदम् यत् एतत् शनैः शनैः मुञ्चति कर्म रेणून् ।
सत्त्वेन वृद्धेन रजः तमः च विधूय निर्वाणम् उपैति अनिन्धनम् ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन्	३.	वह उस	सत्त्वेन	९.	सत्त्व गुण की
मनः	२.	हमारा मन है	वृद्धेन	१०.	वृद्धि से
लब्धपदम्	४.	परमात्मा में स्थिर होकर	रजः	११.	रजो गुणी और
यत् एतत्	१.	यह जो	तमः च	१२.	तमोगुणी वृत्तियों को
शनैः शनैः	७.	धीरे-धीरे	विधूय	१३.	नष्ट करके वह
मुञ्चति	८.	धो बहाता है	निर्वाणम्	१५.	शान्त
कर्म	५.	कर्म वासनाओं की	उपैति	१६.	हो जाता है
रेणून् ।	६.	धूल को	अनिन्धनम् ॥	१४.	ईंधन रहित अग्नि के समान

श्लोकार्थ—यह जो हमारा मन है । वह उस परमात्मा में स्थिर होकर कर्म वासनाओं की धूल को धीरे-धीरे धो बहाता है । सत्त्वगुण की वृद्धि से रजोगुणी और तमोगुणी वृत्तियों को नष्ट करके वह ईंधन रहित अग्नि के समान शान्त हो जाता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

तदैवमात्मन्यवरुद्धचित्तो न वेद किञ्चिद् बहिरन्तरं वा ।
यथेषुकारो नृपतिं व्रजन्तमिषौ गतात्मा न ददर्श पार्श्वे ॥१३॥

पदच्छेद— तदा एवम् आत्मनि अवरुद्ध चित्तः न वेद किञ्चित् बहिः अन्तरम् वा ।
यथा इषुकारः नृपतिम् व्रजन्तम् इषौ गत आत्मा न ददर्श पार्श्वे ॥

शब्दार्थ—

तदा एवम्	१.	तब इस प्रकार	यथा	६.	जिस प्रकार
आत्मनि	३.	आत्मा में ही	इषुकारः	१०	वाण बनाने वाला
अवरुद्ध	४.	स्थिर हो जाने	नृपतिम्	१५.	राजा को भी
चित्तः	२.	चित्त के	व्रजन्तम्	१४.	जाते हुये दल-बल सहित
न वेद	८.	जान नहीं पाता है	इषौ	११.	बाण बनाने में
किञ्चित्	७.	किसी पदार्थ को	गत आत्मा	१२.	मन के तन्मय होने से
बहिः	५.	वह बाहर	न ददर्श	१६.	नहीं देख पाया था
अन्तरम् वा ।	६.	अथवा भीतर	पार्श्वे ॥	१३.	अपने पास से

श्लोकार्थ—तब इस प्रकार चित्त के आत्मा में ही स्थिर हो जाने पर वह बाहर अथवा भीतर किसी पदार्थ को जान नहीं पाता है। जिस प्रकार बाण बनाने वाला बाण बनाने में मन के तन्मय होने से अपने पास से जाते हुये दल-बल सहित राजा को भी नहीं देख पाया था ॥

चतुर्दशः श्लोकः

एकचार्यनिकेतः स्यादप्रमत्तो गुहाशयः ।
अलक्ष्यमाण आचारैर्मुनिरेकोऽल्पभाषणः ॥१४॥

पदच्छेद— एकचारी अनिकेतः स्याद् अप्रमत्तः गुहाशयः ।
अलक्ष्यमाणः आचारैः मुनिः एकः अल्पभाषणः ॥

शब्दार्थ—

एकचारी	२.	अकेले ही विचरण करना चाहिये	अलक्ष्यमाणः	८.	पहचाना न जाय
अनिकेतः	३.	मठ नहीं बनाना	आचारैः	७.	बाहरी आचारों से
स्याद्	४.	चाहिये	मुनिः	१.	सन्यासी को सर्प के समान
अप्रमत्तः	५.	प्रमाद न करे और	एकः	६.	अकेला ही रहे और
गुहाशयः ।	६.	गुफा आदि में पड़ा रहे	अल्पभाषणः ॥	१०.	बहुत कम बोले

श्लोकार्थ—सन्यासी को सर्प के समान अकेले ही विचरण करना चाहिये। मठ नहीं बनाना चाहिये। प्रमाद न करे और गुफा आदि में पड़ा रहे। बाहरी आचारों से पहिचाना न जाय अकेला ही रहे और बहुत कम बोले ॥

पञ्चदशः श्लोकः

गृहारम्भोऽति दुःखाय विफलश्चाध्रुवात्मनः ।
सर्पः परकृतं वेश्म प्रविश्य सुखमेधते ॥१५॥

पदच्छेद— गृह आरम्भः अति दुःखाय विफलः च अध्रुव आत्मनः ।
सर्पः परकृतम् वेश्म प्रविश्य सुखम् एधते ॥

शब्दार्थ—

गृह आरम्भः	३. घर बनाने का झंझट	सर्पः	७.	साँप
अति	५. अत्यन्त	परकृतम्	८.	दूसरों के बनाये
दुःखाय	६. दुःख की जड़ है	वेश्म	९.	घर में
विफलः च	४. व्यर्थ है और	प्रविश्य	१०.	घुस कर
अध्रुव	१. इस अनित्य	सुखम्	११.	बड़े आराम से
आत्मनः ।	२ शरीर के लिये	एधते ॥	१२.	अपना समय काटता है

श्लोकार्थ—इस अनित्य शरीर के लिये घर बनाने का झंझट व्यर्थ है और अत्यन्त दुःख की जड़ है। साँप दूसरों के बनाये घर में घुस कर बड़े आराम से अपना समय काटता है ॥

षोडशः श्लोकः

एको नारायणो देवः पूर्वसृष्टं स्वमायया ।
संहृत्य कालकलया कल्पान्त इदमीश्वरः ॥१६॥

पदच्छेद— एकः नारायणः देवः पूर्व सृष्टम् स्व मायया ।
संहृत्य काल कलया कल्पान्त इदम् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

एकः	४. बिना किसी सहायक के	संहृत्य	१२.	नष्ट कर दिया
नारायणः	२. अन्तर्यामी	काल	१०.	काल
देवः	१. सबके प्रकाशक	कलया	११.	शक्ति के द्वारा
पूर्व सृष्टम्	७. पूर्व कल्प में रचे हुये	कल्पान्त	९.	कल्प के अन्त में
स्व	५. अपनी	इदम्	८.	इस जगत् को
मायया ।	६. माया से	ईश्वरः ॥	३.	सर्व शक्ति मान भगवान् ने

श्लोकार्थ—सब के प्रकाशक अन्तर्यामी सर्व शक्ति मान भगवान् ने बिना किसी सहायक के अपनी माया से पूर्व कल्प में रचे हुये इस जगत को कल्प के अन्त में काल-शक्ति के द्वारा नष्ट कर दिया ॥

सप्तदशः श्लोकः

एक एवाद्वितीयोऽभूदात्माधारोऽखिलाश्रयः ।
कालेनात्मानुभावेन साम्यं नीतासु शक्तिषु ।
सत्त्वादिष्वादिपुरुषः प्रधानपुरुषेश्वरः ॥१७॥

पदच्छेद— एकः एव अद्वितीयः अभूत् आत्म आधारः अखिल आश्रयः ।
कालेन आत्म अनु भावेन साम्यम् नीतासु शक्तिषु ।
सत्त्व आदिषु आदि पुरुषः प्रधान पुरुष ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

एकः एव	२. अकेले ही	साम्यम्	१५. साम्यावस्था में
अद्वितीयः	१. सजातीय आदि भेद से शून्य	नीतासु	१६. पहुँचा देते हैं
अभूत्	३. शेष रह गये	शक्तिषु ।	१४. शक्तियों को
आत्म आधारः	४. वे सबके अधिष्ठान और	सत्त्व आदिषु	१३. सत्त्व रज आदि समस्त
अखिल आश्रयः ।	५. सबके आश्रय हैं	आदि पुरुषः	९. आदि कारण परमात्मा
कालेन	१२. काल के प्रभाव से	प्रधान	६. प्रकृति और
आत्म	१०. अपनी	पुरुष	७. पुरुष दोनों के
अनुभावेन	११. शक्ति	ईश्वरः ।	८. नियामक

श्लोकार्थ—सजातीय आदि भेद से शून्य अकेले ही शेष रह गये। वे सबके अधिष्ठान और सबके आश्रय हैं। प्रकृति और पुरुष दोनों के नियामक आदि कारण परमात्मा अपनी शक्ति काल के प्रभाव से सत्त्व-रज आदि समस्त शक्तियों को साम्यावस्था में पहुँचा देते हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

परावराणां परम आस्ते कैवल्यसंज्ञितः ।
केवलानुभवानन्दसन्दोहो निरुपाधिकः ॥१८॥

पदच्छेद— पर अवराणाम् परम आस्ते कैवल्य संज्ञितः ।
केवल अनुभव आनन्द सन्दोहः निरुपाधिकः ॥

शब्दार्थ—

पर	३. कार्य और	केवल	६. वे केवल
अवराणाम्	४. कारण दोनों से	अनुभव	७. अनुभव स्वरूप और
परम आस्ते	५. परे रहते हैं	आनन्द	८. आनन्द घन
कैवल्य	१. वे कैवल्य रूप	सन्दोहः	९. मात्र हैं तथा किसी
संज्ञितः ।	२. परमात्मा	निरुपाधिकः ॥	१०. उपाधि का उनसे कोई सम्बन्ध नहीं हैं

श्लोकार्थ—वे कैवल्य रूप परमात्मा कार्य और कारण दोनों से परे रहते हैं। वे केवल अनुभव स्वरूप और आनन्द घन मात्र हैं। तथा किसी उपाधि का उनसे कोई सम्बन्ध नहीं है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

केवलात्मानुभावेन स्वमायां त्रिगुणात्मिकाम् ।
संक्षोभयन् सृजत्यादौ तया सूत्रमरिन्दम ॥१९॥

पदच्छेद— केवल आत्म अनुभावेन स्वमायाम् त्रिगुण आत्मिकाम् ।
संक्षोभयन् सृजति आदौ तया सूत्रम् अरिन्दम ॥

शब्दार्थ—

केवल	२.	वे ही केवल	संक्षोभयन्	८.	क्षुब्ध करते हैं
आत्म	३.	अपनी शक्ति	सृजति	१२.	रचना करते हैं
अनुभावेन	४.	काल के द्वारा	आदौ	१०.	पहले
स्वमायाम्	७.	माया को	तया	९.	और उससे
त्रिगुण	५.	अपनी त्रिगुण	सूत्रम्	११.	क्रिया शक्ति प्रधान महत्तत्त्व की
आत्मिकाम् ।	६.	मयी	अरिन्दम ॥	१.	हे शत्रुदमन !

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमन ! वे ही प्रभु केवल अपनी शक्ति काल के द्वारा अपनी त्रिगुणमयी माया को क्षुब्ध करते हैं । और उससे पहले क्रिया शक्ति प्रधान महत्तत्त्व की रचना करते हैं ॥

विंशः श्लोकः

तामाहुस्त्रिगुणव्यक्तिं सृजन्तीं विश्वतोमुखम् ।
यस्मिन् प्रोतमिदं विश्वं येन संसरते पुमान् ॥२०॥

पदच्छेद— ताम् आहुः त्रिगुण व्यक्तिम् सृजन्तीं विश्वतः मुखम् ।
यस्मिन् प्रोतम् इदम् विश्वम् येन संसरते पुमान् ॥

शब्दार्थ—

ताम्	१.	यह स्वरूप महतत्त्व ही	यस्मिन्	७.	उसी में
आहुः	४.	कहा गया है	प्रोतम्	९.	ओत-प्रोत है और
त्रिगुण	२.	तीनों गुणों की	इदम् विश्वम्	८.	यह सारा विश्व
व्यक्तिम्	३.	पहली अभिव्यक्ति	येन	१०.	इसी के कारण
सृजन्तीं विश्वतः	५.	वही सब प्रकार की सृष्टि का	संसरते	१२.	जन्म-मृत्यु के चक्कर में पड़ता है
मुखम् ।	६.	मूल कारण है	पुमान् ॥	११.	जीव

श्लोकार्थ— यह स्वरूप महतत्त्व ही तीनों गुणों की पहली अभि-व्यक्ति कहा गया है । वही सब प्रकार की सृष्टि का मूल कारण है । उसी में यह सारा विश्व ओत-प्रोत है और इसी के कारण जीव जन्म-मृत्यु के चक्कर में पड़ता है ॥

एकविंशः श्लोकः

यथोर्णनाभिर्हृदयादूर्णां सन्तत्य वक्त्रतः ।
तया विहृत्य भूयस्तां ग्रसत्येवं महेश्वरः ॥२१॥

पदच्छेद— यथा ऊर्णनाभिः हृदयात् ऊर्णाम् सन्तत्य वक्त्रतः ।
तया विहृत्य भूयः ताम् ग्रसति एवम् महेश्वरः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	तया	७.	उसी में
ऊर्णनाभिः	२. मकड़ी	विहृत्य	८.	बिहार करती है और
हृदयात्	३. अपने हृदय से	भूयः ताम्	९.	फिर उसे
ऊर्णाम्	५. जाला	ग्रसति	१०.	निगल जाती है
सन्तत्य	६. फैलाती है	एवम्	११.	वैसे ही
वक्त्रतः ।	४. मुँह के द्वारा	महेश्वरः ॥	१२.	परमात्मा इस जगत को उत्पन्न करते, बिहार करते तथा लीन कर लेते हैं

श्लोकार्थ— जैसे मकड़ी अपने हृदय से मुँह के द्वारा जाला फैलाती है, उसी में बिहार करती है और फिर उसे निगल जाती है। वैसे ही परमात्मा इस जगत को उत्पन्न करते, बिहार करते, तथा अपने में लीन कर लेते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यत्र यत्र मनो देही धारयेत् सकलं धिया ।
स्नेहाद् द्वेषाद् भयाद् वापि याति तत्तत्सरूपताम् ॥२२॥

पदच्छेद— यत्र-यत्र मनः देही धारयेत् सकलम् धिया ।
स्नेहात् द्वेषात् भयात् वा अपि याति तत्-तत् सरूपताम् ॥

शब्दार्थ—

यत्र-यत्र	९. जहाँ कहीं भी	स्नेहात्	२.	स्नेह से
मनः	८. मन को	द्वेषात्	३.	द्वेष
देही	१. प्राणी	भयात्	५.	भय से भी
धारयेत्	१०. लगा देता है	वा अपि	४.	अथवा
सकलम्	६. एकाग्र रूप से	याति	१२.	प्राप्त कर लेता है
धिया ।	७. अपनी बुद्धि और	तत्-तत् सरूपताम् ॥	११.	वह उसी वस्तु का स्वरूप

श्लोकार्थ—प्राणी स्नेह से द्वेष से अथवा भय से भी एकाग्र रूप से अपनी बुद्धि और मन को जहाँ-कहीं भी लगा देता है। वह उसी वस्तु का स्वरूप प्राप्त कर लेता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

कीटः पेशस्कृतं ध्यायन् कुड्यां तेन प्रवेशितः ।
याति तत्सात्मतां राजन् पूर्वरूपमसन्त्यजन् ॥२३॥

पदच्छेद— कीटः पेशस्कृतम् ध्यायन् कुडचाम् तेन प्रवेशितः ।
याति तत् सात्मताम् राजन् पूर्व रूपम् असन्त्यजन् ॥

शब्दार्थ—

कीटः	५.	कीड़ा भय से	याति	१२.	हो जाता है
पेशस्कृतम्	२.	जैसे भृङ्गी के द्वारा	तत्	१०.	उसी
ध्यायन्	७.	ध्यान करता हुआ	सात्मताम्	११.	शरीर से उसके रूप में
कुडघाम्	३.	दीवार में	राजन्	१.	हे राजन् !
तेन	६.	उसी का	पूर्व रूपम्	८.	पहले शरीर का
प्रवेशितः ।	४.	बन्द किया गया	सन्त्यजन् ॥	९.	त्याग किये बिना ही

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जैसे भृङ्गी के द्वारा दीवार में बन्द किया गया कीड़ा भय से उसी का ध्यान करता हुआ, पहले शरीर का त्याग किये बिना ही उसी शरीर से उसके रूप में हो जाता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं गुरुभ्य एतेभ्य एषा मे शिक्षिता मतिः ।
स्वात्मोपशिक्षितां बुद्धिं शृणु मे वदतः प्रभो ॥२४॥

पदच्छेद— एवम् गुरुभ्य एतेभ्य एषा मे शिक्षिता मतिः ।
स्व आत्म उपशिक्षिताम् बुद्धिम् शृणुमे वदतः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	स्व आत्म	८.	मैंने अपने शरीर से
गुरुभ्य	५.	गुरुओं से	उपशिक्षिताम्	१०.	सीखा है
एतेभ्य	४.	इतने	बुद्धिम्	९.	जो कुछ
एषा	६.	ये	शृणुमे	११.	उसे मैं
मे	३.	मैंने	वदतः	१२.	सुनाता हूँ
शिक्षिता मतिः ।	७.	शिक्षायें ग्रहण की हैं	प्रभो ॥	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार मैंने इतने गुरुओं से ये शिक्षायें ग्रहण की हैं । मैंने अपने शरीर से जो कुछ सीखा है, उसे मैं सुनाता हूँ ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

देहो गुरुर्मम विरक्तिविवेकहेतुर्बिभ्रत् स्म सत्त्वनिधनं सततार्त्युदर्कम् ।
तत्त्वान्यनेन विमृशामि यथा तथापि पारक्यमित्यवसितो विचराम्यसङ्गः ॥२५॥

पदच्छेद—देहः गुरुः मम विरक्ति विवेक हेतुः बिभ्रत्स्म सत्त्वनिधनम् सतत आर्ति उदर्कम् ।
तत्त्वानि अनेन विमृशामि यथा तथा अपि पारक्यम् इति अवसितः विचरामि असङ्ग ॥

शब्दार्थ—			
देहः	१. यह शरीर	तत्त्वानि	११. तत्त्व विचार करने में
गुरुः मम	४. मेरा गुरु है	अनेन	१०. इस शरीर से मुझे
विरक्ति विवेक	२. विवेक और वैराग्य की	विमृशामि	१२. सहायता मिलती है
हेतुः	३. शिक्षा देने के कारण	यथा	९. यद्यपि
बिभ्रत्स्म	८. धारण करने वाला है	तथा अपि	१३. फिर भी
सत्त्वनिधनम्	६. जन्म-मरण और	पारक्यम्	१४. यह सियार कुत्तों का भोजन है
सतत	५. क्योंकि यह निरन्तर	इति अवसितः	१५. ऐसा निश्चय करके मैं
आर्ति उदर्कम् ।	७. दुःख रूप फल को	विचरामि असङ्गः ॥	१६. असङ्ग होकर विचरता हूँ

श्लोकार्थ—यह शरीर विवेक और वैराग्य की शिक्षा देने के कारण मेरा गुरु है। क्योंकि यह निरन्तर जन्म-मरण और दुःख रूप फल को धारण करने वाला है। यद्यपि इस शरीर से मुझे तत्त्व विचार करने में सहायता मिलती है। फिर भी यह सियार कुत्तों का भोजन है। ऐसा निश्चय करके मैं असङ्ग होकर विचरता हूँ ॥

षड्विंशः श्लोकः

जायात्मजार्थपशुभृत्यगृहाप्तवर्गान् पुष्णाति यत्प्रियचिकीर्षया वितन्वन् ।
स्वान्ते सकृच्छ्रमवरुद्धधनः स देहः सृष्ट्वास्य बीजमवसीदति वृक्षधर्मा ॥२६॥

पदच्छेद—जाया आत्मज अर्थ पशु भृत्य गृह आप्तवर्गान् पुष्णाति यत् प्रिय चिकीर्षया वितन्वन् ।
स्वान्ते सकृच्छ्रम् अवरुद्धधनः सः देहः सृष्ट्वा अस्य बीजम् अवसीदति वृक्षधर्मा ॥

शब्दार्थ—			
जाया आत्मज	३. स्त्री-पुत्र	स्वान्ते	११. आयु पूरी होने पर
अर्थ पशु	४. धन-पशु	सकृच्छ्रम्	९. बार-बार के श्रम से
भृत्य गृह	५. नोकर-चाकर	अवरुद्धधनः	१०. धन का संचय करता है
आप्तवर्गान्	६. घर-द्वार और भाई-बन्धुओं का	सः देहः	१२. वही शरीर
पुष्णाति	८. पालन-पोषण में लगा रहता है और	सृष्ट्वा	१५. बोकर उसके लिये भी
यत् प्रिय	१. जीव जिस शरीर का प्रिय	अस्य बीजम्	१४. दूसरे शरीर के लिये बीज
चिकीर्षया	२. करने की इच्छा से	अवसीदति	१६. दुःख की व्यवस्था कर देता है
वितन्वन् ।	७. विस्तार करते हुये उनके	वृक्षधर्मा ॥	१३. वृक्ष के समान

श्लोकार्थ—जीव जिस शरीर का प्रिय करने की इच्छा से स्त्री-पुत्र-पशु, नोकर-चाकर-घर-द्वार और भाई-बन्धुओं का विस्तार करते हुये उनके पालन-पोषण में लगा रहता है। और बार-बार के श्रम से धन का संचय करता है आयु पूरी होने पर वही शरीर वृक्ष के समान दूसरे शरीर के लिये बीज बोकर उसके लिये भी दुःख की व्यवस्था कर देता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

जिह्वैकतोऽमुमपकर्षति कर्हि तर्षा शिश्नोऽन्यतस्त्वगुदरं श्रवणं कुतश्चित् ।
घ्राणोऽन्यतश्चपलदृक् क्वच कर्मशक्तिर्बह्व्यः सपत्न्य इव गेहपतिं लुनन्ति ।२७।

पदच्छेद— जिह्वाएकतः अमुम् अपकर्षति कर्हि तर्षाशिश्नः अन्यतः त्वगुदरम् श्रवणम् कुतश्चित् ।
घ्राणः अन्यतः चपलदृक् क्वच कर्मशक्तिः बह्व्यः सपत्न्यः इव गेहपतिम् लुनन्ति ।।

शब्दार्थ—			
जिह्वा एकतः	७. जीभ एक ओर	घ्राणः	१३. तथा नाक
अमुम्	५. इस जीव को	अन्यतः	१४. अन्य दिशा में खींचते हैं
अपकर्षति	८. खींचती है	चपलदृक् क्वच	१५. कभी-कभी चञ्चल नेत्र और
कर्हि	६. कभी	कर्म शक्तिः	१६. कर्मेन्द्रियाँ दूसरी दिशाओं में खींचते हैं
तर्षाशिश्नः	९. कभीप्यास औरजननेन्द्रिय	बह्व्यः सपत्न्यः	२. बहुत सी सौतें
अन्यतः	१०. दूसरी ओर खींचती हैं	इव	१. जैसे
त्वगुदरम्	११. त्वचा पेट और	गेहपतिम्	३. एक गृह पति को अपनी-अपनी ओर
श्रवणम् कुतश्चित् ।	१२. कान कभी	लुनन्ति ।।	४. खींचती है, वैसे ही

श्लोकार्थ—जैसे बहुत सी सौतें एक गृह पति को अपनी-अपनी ओर खींचती हैं । वैसे ही इस जीव को कभी जीभ एक ओर खींचती है । कभी प्यास और जननेन्द्रिय दूसरी ओर खींचती हैं । कभी-कभी त्वचा पेट और कान तथा कभी नाक अन्य दिशा में खींचती हैं । कभी-कभी चञ्चल नेत्र और कर्मेन्द्रियाँ दूसरी दिशा में खींचती हैं ।।

अष्टविंशः श्लोकः

सृष्ट्वा पुराणि विविधान्यजयाऽऽत्मशक्त्या वृक्षान् सरीसृपपशून् खगदंशमत्स्यान् ।
तैस्तैरतुष्टहृदयः पुरुषं विधाय ब्रह्मावलोकधिषणं मुदमाप देवः ।।२८।।

पदच्छेद—सृष्ट्वा पुराणि विविधानि अजया आत्म शक्त्या वृक्षान्-सरीसृप पशून् खगदंश मत्स्यान् ।
तैः तैः अतुष्ट हृदयः पुरुषम् विधाय ब्रह्म अवलोक धिषणम् मुदम् आप देवः ।।

शब्दार्थ—			
सृष्ट्वा	९. रचीं पर	तैः तैः	१०. उन-उन योनियों से
पुराणि	२. पहले	अतुष्ट हृदयः	११ उन्हें सन्तोष नहीं हुआ, तब
विविधानि	८. अनेकों प्रकार की योनियाँ	पुरुषम्	१४. मनुष्य शरीर की
अजया आत्म-	३. अपनी अचिन्त्य	विधाय	१५. रचना करके उन्होंने
शक्त्या	४. शक्ति माया से	ब्रह्म अवलोक	१२. ब्रह्म का साक्षात्कार करने वाली
वृक्षान् सरीसृप	५. वृक्ष, रेंगने वाले जन्तु	धिषणम्	१३. बुद्धि से युक्त
पशून् खगदंश	६. पशु-पक्षी-डांस और	मुदम् आप	१६. अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त की
मत्स्यान् ।	७. मछली आदि	देवः ।।	१. वैसे तो भगवान् ने

श्लोकार्थ—वैसे तो भगवान् ने पहले अपनी अचिन्त्य शक्ति माया से वृक्ष, रेंगने वाले जन्तु, पशु-पक्षी डांस और मछली आदि अनेक प्रकार की योनियाँ रचीं उन-उन योनियों से उन्हें सन्तोष नहीं हुआ, तब ब्रह्म का साक्षात्कार करने वाली बुद्धि से युक्त मनुष्य शरीर की रचना करके उन्होंने अत्यन्त प्रसन्नता प्राप्त की ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

लब्ध्वा सुदुर्लभमिदं बहुसम्भवान्ते मानुष्यमर्थदमनित्यमपीह धीरः ।
तूर्णं यतेत न पतेदनुमृत्यु यावन्निःश्रेयसाय विषयः खलु सर्वतः स्यात् ॥२९॥

पदच्छेद—लब्ध्वा सुदुर्लभम् बहुसम्भव अन्ते मानुष्यम् अर्थदम् अनित्यम् अपि इह धीरः ।
तूर्णम् यत् एतत् न पतेत् अनुमृत्यु यावत् निःश्रेयसाय विषयः खलु सर्वतः स्यात् ॥

शब्दार्थ—

लब्ध्वा	८.	पाकर	तूर्णम्	१२.	शीघ्र ही
सुदुर्लभम् इदम्	६.	इस दुर्लभ	यत् एतत्	१३.	प्रयत्न करे
बहुसम्भव अन्ते	४.	अनेक जन्मों के बाद	न पतेत्	१०.	नहीं आती है तब-तक
मानुष्यम्	७.	मनुष्य शरीर को	अनुमृत्यु यावत्	९.	जब-तक मृत्यु
अर्थदम्	५.	पुरुषार्थों को देने वाले	निःश्रेयसाय	११.	मोक्ष प्राप्ति के लिये
अनित्यम्	३.	अनित्य होने पर भी	विषयः खलु	१४.	क्योंकि विषय-भोग तो
अपि इह	२.	इस संसार में	सर्वतः	१५.	सभी योनियों में
धीरः ।	१.	धीर बुद्धि पुरुष को चाहिये कि	स्यात् ॥	१६.	प्राप्त हो सकता है

श्लोकार्थ—धीर बुद्धि पुरुषों को चाहिये कि इस संसार में अनित्य होने पर भी अनेक जन्मों के बाद पुरुषार्थ को देने वाले इस दुर्लभ मनुष्य शरीर को पाकर जब-तक मृत्यु नहीं आती है। तब-तक मोक्ष प्राप्ति के लिये शीघ्र ही प्रयत्न करे क्योंकि विषय-भोग तो सभी योनियां में प्राप्त हो सकता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

एवं सञ्जातवैराग्यो विज्ञानालोक आत्मनि ।
विचरामि महीमेतां मुक्तसङ्गोऽनहङ्कृतिः ॥३०॥

पदच्छेद— एवम् सञ्जात वैराग्यः विज्ञान आलोक आत्मनि ।
विचरामि महीम् एताम् मुक्त सङ्गः अनहङ्कृतिः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	यही सब सोचकर	विचरामि	११.	विचरण करता हूँ
सञ्जात	३.	उत्पन्न हो गया	महीम्	१०.	पृथ्वी पर
वैराग्यः	२.	मुझे वैराग्य	एताम्	९.	इस
विज्ञान	५.	ज्ञान-विज्ञान का	मुक्त सङ्गः	७.	अब मैं असङ्ग भाव से
आलोक	६.	प्रकाश फैल गया है	अनहङ्कृतिः ॥	८.	अहंकार रहित होकर
आत्मनि ।	४.	मेरे हृदय में			

श्लोकार्थ—यही सब सोचकर मुझे वैराग्य उत्पन्न हो गया। मेरे हृदय में ज्ञान-विज्ञान का प्रकाश फैल गया है। अब मैं असङ्ग भाव से अहंकार रहित होकर इस पृथ्वी पर विचरण करता हूँ ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

न ह्येकस्माद् गुरोर्ज्ञानं सुस्थिरं स्यात् सुपुष्कलम् ।
ब्रह्मैतदद्वितीयं वै गीयते बहुधर्षिभिः ॥३१॥

पदच्छेद— न हि एकस्मात् गुरोः ज्ञानम् सुस्थिरम् स्यात् सुपुष्कलम् ।
ब्रह्म एतत् अद्वितीयम् वै गीयते बहुधा ऋषिभिः ॥

शब्दार्थ—

न हि	६.	नहीं	ब्रह्म	१२.	ब्रह्म का
एकस्मात्	१.	अकेले	एतत्	१०.	इस
गुरोः	२.	गुरु से ही	अद्वितीयम्	११.	अद्वितीय
ज्ञानम्	५.	बोध	वै	८.	निश्चय ही तभी तो
सुस्थिरम्	४.	सुदृढ़	गीयते	१४.	गान किया है
स्यात्	७.	होता है	बहुधा	१३.	अनेक प्रकार से
सुपुष्कलम् ।	३.	यथेष्ट और	ऋषिभिः ॥	९.	ऋषियों ने

श्लोकार्थ—अकेले गुरु से ही यथेष्ट और सुदृढ़ बोध नहीं होता है। निश्चय ही तभी तो ऋषियों ने इस अद्वितीय ब्रह्म का अनेक प्रकार से गान किया है।

द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—इत्युक्त्वा स यदुं विप्रस्तमामन्त्र्य गभीरधीः ।
वन्दितोऽभ्यर्थितो राज्ञा ययौ प्रीतो यथागतम् ॥३२॥

पदच्छेद— इति उक्त्वा सः यदुम् विप्रः तम् आमन्त्र्य गभीरधीः ।
वन्दितः अभ्यर्थितः राज्ञा ययौ प्रीतः यथा आगतम् ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	वन्दितः	८.	वन्दना से
उक्त्वा	४.	उपदेश दिया गया तब	अभ्यर्थितः	७.	पूजा और
सः यदुम्	२.	उन राजा यदु को जब	राज्ञाः	६.	राजा यदु की
विप्रः	५.	वे दत्तात्रेय जी	ययौ	१२.	चले गये
तम् आमन्त्र्य	११.	उनसे अनुमति लेकर	प्रीतः यथा	९.	प्रसन्न होकर जिस प्रकार
गभीरधीः ।	१.	गम्भीर बुद्धि अवधूत दत्तात्रेय के द्वारा	आगतम् ॥	१०.	आये थे वैसे ही इच्छानुसार

श्लोकार्थ—गम्भीर बुद्धि अवधूत दत्तात्रेय के द्वारा राजा यदु को जब इस प्रकार उपदेश दिया गया तब वे दत्तात्रेय जी राजा यदु की पूजा और वन्दना से प्रसन्न होकर जिस प्रकार आये थे। वैसे ही इच्छानुसार उनसे अनुमति लेकर चले गये ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अवधूतवचः श्रुत्वा पूर्वेषां नः स पूर्वजः ।
सर्वसङ्गविनिर्मुक्तः समचित्तो बभूव ह ॥३३॥

पदच्छेद— अवधूत वचः श्रुत्वा पूर्वेषाम् नः सः पूर्वजः ।
सर्वसङ्ग विनिर्मुक्तः समचित्तः बभूव ह ॥

शब्दार्थ—

अवधूत	५. दत्तात्रेय की	पूर्वजः ।	३. पूर्वज
वचः	६. यह बात	सर्वसङ्ग	८. समस्त असक्तियों से
श्रुत्वा	७. सुनकर	विनिर्मुक्तः	९. छुटकारा पा गये और
पूर्वेषाम्	२. पूर्वजों के भी	समचित्तः	१०. समदर्शी
नः	१. हमारे	बभूव ह ॥	११. हो गये
सः	४. वे राजा यदु		

श्लोकार्थ—हमारे पूर्वजों के भी पूर्वज वे राजा यदु दत्तात्रेय की यह बात सुनकर समस्त आसक्तियों से छुटकारा पा गये और समदर्शी हो गये ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशः स्कन्धः नवमः अध्यायः ॥९॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—मयोदितेष्ववहितः स्वधर्मेषु मदाश्रयः ।
वर्णाश्रमकुलाचारमकामात्मा समाचरेत् ॥१॥

पदच्छेद— मया उदितेषु अवहितः स्वधर्मेषु मत् आश्रयः ।
वर्ण आश्रम कुल आचारम् अकाम आत्मा समाचरेत् ॥

शब्दार्थ—

मया	३.	मेरे द्वारा	वर्ण आश्रम	९.	वर्ण-आश्रम और
उदितेषु	४.	बताये गये	कुल	१०.	कुल के अनुसार
अवहितः	६.	सावधानी से पालन करे	आचारम्	११.	सदाचार का भी
स्वधर्मेषु	५.	अपने धर्मों का	अकाम	७.	निष्काम
मत	१.	मेरी	आत्मा	८.	भाव से
आश्रयः ।	२.	शरण में रह कर	समाचरेत् ।	१२.	अनुष्ठान करे

श्लोकार्थ—मेरी शरण में रह कर मेरे द्वारा बताये गये अपने धर्मों का सावधानी से पालन करे। और निष्काम भाव से वर्ण-आश्रम और कुल के अनुसार सदाचार का भी अनुष्ठान करे ॥

द्वितीयः श्लोकः

अन्वीक्षेत विशुद्धात्मा देहिनां विषयात्मनाम् ।
गुणेषु तत्त्वध्यानेन सर्वारम्भविपर्ययम् ॥२॥

पदच्छेद— अन्वीक्षेत विशुद्ध आत्मा देहिनाम् विषय आत्मनाम् ।
गुणेषु तत्त्व ध्यानेन सर्वारम्भ विपर्ययम् ॥

शब्दार्थ—

अन्वीक्षेत	३.	यह विचार करना चाहिये कि	गुणेषु	७.	विषयों में
विशुद्ध	१.	शुद्ध	तत्त्व	८.	सुख
आत्मा	२.	चित्त व्यक्ति को	ध्यानेन	९.	खोजता है, जबकि
देहिनाम्	६.	मनुष्य	सर्वारम्भ	१०.	उसके सारे कार्य
विषय	४.	विषय	विपर्ययम् ॥	११.	विपरीत होते हैं
आत्मनाम् ।	५.	परायण			

श्लोकार्थ—शुद्ध चित्त व्यक्ति को यह विचार करना चाहिये कि विषय परायण मनुष्य विषयों में सुख खोजता है। जबकि उसके सारे कार्य विपरीत होते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

सुप्तस्य विषयालोको ध्यायतो वा मनोरथः ।
नानात्मकत्वाद् विफलस्तथा भेदात्मधीर्गुणैः ॥३॥

पदच्छेद— सुप्तस्य विषय आलोकः ध्यायतः वा मनोरथः ।
नाना आत्म कत्वाद् विफलः तथा भेद आत्मधीः गुणैः ॥

शब्दार्थ—

सुप्तस्य	१.	जिस प्रकार स्वप्नावस्था में	नाना	७.	नाना प्रकार से
विषय	५.	विषयों का	आत्म कत्वाद्	८.	वस्तु विषयक होने के कारण
आलोकः	६.	अनुभव करना	विफलः	९.	व्यर्थ है
ध्यायतः	४.	जाग्रत् में मन ही मन	तथा	१०.	उसी प्रकार
वा	३.	अथवा	भेद आत्मधीः	१२.	भेद-बुद्धि भी व्यर्थ है
मनोरथः ।	२.	मनोरथ करते समय	गुणैः ॥	११.	इन्द्रियों के द्वारा होने वाली

श्लोकार्थ—जिस प्रकार स्वप्नावस्था में मनोरथ करते समय अथवा जाग्रत् में मन ही मन विषयों का अनुभव करना नाना प्रकार से वस्तु विषयक होने के कारण व्यर्थ है। उसी प्रकार इन्द्रियों के द्वारा होने वाली भेद बुद्धि भी व्यर्थ है ॥

चतुर्थः श्लोकः

निवृत्तं कर्म सेवेत प्रवृत्तं मत्परस्त्यजेत् ।
जिज्ञासायां संप्रवृत्तो नाद्रियेत् कर्मचोदनाम् ॥४॥

पदच्छेद— निवृत्तम् कर्म सेवेत प्रवृत्तम् मत् परः त्यजेत् ।
जिज्ञासायाम् संप्रवृत्तः न आद्रियेत् कर्म चोदनाम् ॥

शब्दार्थ—

निवृत्तम्	२.	निष्काम	जिज्ञासायाम्	७.	आत्म जिज्ञासा का
कर्म	३.	कर्म	संप्रवृत्तः	८.	उदय हो जाने पर फिर
सेवेत	४.	करना चाहिये और	न	११.	नहीं
प्रवृत्तम्	५.	सकाम कर्मों का	आद्रियेत्	१२.	आदर करना चाहिये
मत् परः	१.	मेरे परायण पुरुष को	कर्म	१०.	कर्मों का भी
त्यजेत् ।	६.	त्याग कर देना चाहिये	चोदनाम् ॥	९.	विधि रूप से

श्लोकार्थ—मेरे परायण पुरुष को निष्काम कर्म करना चाहिये, और सकाम कर्मों का त्याग कर देना चाहिये। आत्म जिज्ञासा का उदय हो जाने पर फिर विधि रूप से कर्मों का भी आदर नहीं करना चाहिये ॥

पञ्चमः श्लोकः

यमानभीक्ष्णं सेवेत नियमान् मत्परः क्वचित् ।
मदभिज्ञं गुरुं शान्तमुपासीत मदात्मकम् ॥५॥

पदच्छेद— यमान् अभीक्षणम् सेवेत नियमान् मत् परः क्वचित् ।
मत् अभिज्ञम् गुरुम् शान्तम् उपासीत् मत् आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

यमान्	१. अहिंसा आदि यमों का	मत् अभिज्ञम्	८.	मेरे स्वरूप को जानने वाले
अभीक्षणम्	२. सतत	गुरुम्	१०.	गुरु की
सेवेत	३. सेवन करे	शान्तम्	९.	और शान्त
नियमान्	७. नियमों का भी सेवन करे	उपासीत्	१३.	सेवा करे
मत्	५. मेरे	मत्	११.	मेरा ही
परः	६. परायण होकर	आत्मकम् ॥	१२.	स्वरूप समझ कर
क्वचित् ।	४. आत्मज्ञान के विरोधी न होने पर			

श्लोकार्थ—अहिंसा आदि यमों का सतत सेवन करे। आत्म ज्ञान के विरोधी न होने पर मेरे परायण होकर नियमों का भी सेवन करे। और मेरे स्वरूप को जानने वाले शान्त गुरु को मेरा ही स्वरूप समझ कर सेवा करे ॥

षष्ठः श्लोकः

अमान्यमत्सरो दक्षो निर्ममो दृढसौहृदः ।
असत्वरोऽर्थजिज्ञासुरनसूयुरमोघवाक् ॥६॥

पदच्छेद— अमानी अमत्सरो दक्षो निर्ममो दृढ सौहृदः ।
असत्वरः अर्थ जिज्ञासुः अनसूयुः अमोघ वाक् ॥

शब्दार्थ—

अमानी	१. शिष्य अभिमान रहित हो	असत्वरः	७.	कोई काम जल्दी में न करे
अमत्सरो	२. किसी से डाह न करे	अर्थ	८.	परमार्थ के सम्बन्ध में
दक्षो	३. कर्म करने में कुशल हो	जिज्ञासुः	९.	ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा वाला हो
निर्ममो	४. ममता से रहित हो	अनसूयुः	१०.	किसी के गुणों में दोष न देखे
दृढ	५. गुरु के प्रति दृढ	अमोघ	११.	व्यर्थ की
सौहृदः ।	६. अनुराग हो	वाक् ॥	१२.	बात न करे

श्लोकार्थ—शिष्य अभिमान रहित हो, किसी से डाह न करे। कर्म करने में कुशल हो, ममता से रहित हो, गुरु के प्रति दृढ अनुराग हो, कोई काम जल्दी में न करे, परमार्थ के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा वाला हो, किसी के गुणों में दोष न देखे और व्यर्थ की बात न करे ॥

सप्तमः श्लोकः

जायापत्यगृहक्षेत्रस्वजनद्रविणादिषु ।
उदासीनः समं पश्यन् सर्वेष्वर्थमिवात्मनः ॥७॥

पदच्छेद— जाया अपत्य गृह क्षेत्र स्वजन द्रविण आदिषु ।
उदासीनः समम् पश्यन् सर्वेषु अर्थम् इव आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

जाया	१. जिज्ञासु व्यक्ति स्त्री	उदासीनः	१४. उदासीन रहे
अपत्य	२. पुत्र	समम्	१२. एकसम
गृह	३. घर	पश्यन्	१३. दृष्टि रखे और सबसे
क्षेत्र	४. खेत	सर्वेषु	८. सम्पूर्ण
स्वजन	५. स्वजन और	अर्थम्	९. पदार्थों में
द्रविण	६. धन	इव	११. समान
आदिषु ।	७. आदि	आत्मनः ॥	१०. आत्मा के

श्लोकार्थ—जिज्ञासु व्यक्ति स्त्री, पुत्र, घर, खेत, स्वजन और धन आदि सम्पूर्ण पदार्थों में आत्मा के समान एक सम दृष्टि रखें और सबसे उदासीन रहे ॥

अष्टमः श्लोकः

विलक्षणः स्थूलसूक्ष्माद् देहादात्मेक्षितास्वदृक् ।
यथाग्निर्दारुणो दाह्याद् दाहकोऽन्यः प्रकाशकः ॥८॥

पदच्छेद— विलक्षणः स्थूल सूक्ष्मात् देहात् आत्मा ईक्षिता स्वदृक् ।
यथा अग्निः दारुणः दाह्यात् दाहकः अन्यः प्रकाशकः ॥

शब्दार्थ—

विलक्षणः	१४. सर्वथा भिन्न है	यथा	१. हे उद्धव ! जैसे
स्थूल	११. स्थूल तथा	अग्निः	४. अग्नि
सूक्ष्मात्	१२. सूक्ष्म	दारुणः	६. लकड़ी
देहात्	१३. शरीर से	दाह्यात्	५. जलने वाली
आत्मा	१०. आत्मतत्त्व रूप (परमात्मा)	दाहकः	२. जलाने और
ईक्षिता	९. साक्षी	अन्यः	७. भिन्न है, वैसे ही
स्वदृक् ।	८. स्वयम् प्रकाश एवं	प्रकाशकः ॥	३. प्रकाशित करने वाली

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! जैसे जलाने और प्रकाशित करने वाली अग्नि जलने वाली लकड़ी से भिन्न है वैसे ही स्वयम् प्रकाश एवं साक्षी आत्मतत्त्व रूप परमात्मा स्थूल तथा सूक्ष्म शरीर से सर्वथा भिन्न है ॥

नवमः श्लोकः

निरोधोत्पत्त्यणुबृहन्नानात्वं तत्कृतान् गुणान् ।
अन्तः प्रविष्ट आधत्त एवं देहगुणान् परः ॥९॥

पदच्छेद-- निरोध उत्पत्ति अणुबृहत् नानात्वम् तत् कृतान् गुणान् ।
अन्तः प्रविष्टः आधत्तः एवम् देह गुणान् परः ॥

शब्दार्थ—

निरोध	४.	विनाश	अन्तः	१०.	शरीर के अन्दर
उत्पत्ति	३.	अग्नि की उत्पत्ति	प्रविष्टः	११.	प्रवेश करने पर शरीर के
अणुबृहत्	५.	बड़ाई-छोटाई आदि	आधत्तः	१२.	धर्मों की प्रतीति होती है
नानात्वम्	६.	अनेक गुण प्रतीत होते हैं	एवम्	७.	इसी प्रकार
तत्कृतान्	१.	उस लकड़ी के	देह गुणान्	८.	देह के धर्मों से
गुणान् ।	२.	गुणों से ही	परः ॥	९.	परे आत्मतत्त्व में

श्लोकार्थ—उस लकड़ी के गुणों से ही अग्नि की उत्पत्ति, विनाश, बड़ाई-छोटाई आदि अनेक गुण प्रतीत होते हैं । इसी प्रकार देह के धर्मों से परे आत्मतत्त्व में शरीर के अन्दर प्रवेश करने पर शरीर के धर्मों की प्रतीति होती है ॥

दशमः श्लोकः

योऽसौ गुणैर्विरचितो देहोऽयं पुरुषस्य हि ।
संसारस्तन्निबन्धोऽयं पुंसो विद्याच्छिदात्मनः ॥१०॥

पदच्छेद— यः असौ गुणैः विरचितः देहः अयम् पुरुषस्य हि ।
संसार तत् निबन्धः अयम् पुंसः विद्या आच्छित् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

यः	२.	जो	संसार	१०.	संसार भी
असौ	१.	यह	तत् निबन्धः	११.	इसी का कारण है
गुणैः	३.	माया के गुणों ने	अयम्	९.	यह
विरचितः	७.	निर्माण किया है	पुंसः	८.	जीव का
देहः	६.	स्थूल-सूक्ष्म शरीरों का	विद्या	१३.	स्वरूप का ज्ञान होने पर
अयम्	४.	इस	आच्छित्	१४.	इसकी जड़ कट जाती है
पुरुषस्य हि ।	५.	पुरुष के	आत्मनः ॥	१२.	अतः आत्मा के

श्लोकार्थ—यह जो माया के गुणों ने इस पुरुष के स्थूल-सूक्ष्म शरीरों का निर्माण किया है । जीव का यह संसार भी इसी का कारण है । अतः आत्मा के स्वरूप का ज्ञान होने पर इसकी जड़ कट जाती है ॥

एकादशः श्लोकः

तस्माज्जिज्ञासयाऽऽत्मानमात्मस्थं केवलं परम् ।
सङ्गम्य निरसेदेतद्वस्तुबुद्धिं यथाक्रमम् ॥११॥

पदच्छेद— तस्मात् जिज्ञासया आत्मानम् आत्मस्थम् केवलम् परम् ।
सङ्गम्य निरसेत एतत् वस्तु बुद्धिम् यथा क्रमम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात	१.	इसलिये	सङ्गम्य	५.	उसे जानकर
जिज्ञासया	४.	जानने की इच्छा से	निरसेत	१२.	मिटा देना चाहिये
आत्मनम्	३.	आत्मा को	एतत्	८.	ऐसी
आत्मस्थम्	२.	अपने आप में स्थित	वस्तु	९.	शरीरादि में होने वाली
केवलम्	६.	केवल अज्ञान ही	बुद्धिम्	१०.	सत्यत्व बुद्धि को
परम् ।	७.	जिसका मूल कारण है	यथाक्रमम् ॥	११.	क्रम के अनुसार

श्लोकार्थ—इसलिये अपने आप में स्थित आत्मा को जानने की इच्छा से उसे जानकर केवल अज्ञान ही जिसका मूल कारण है। ऐसी शरीरादि में होने वाली सत्यत्व बुद्धि को क्रम के अनुसार मिटा देना चाहिये '

द्वादशः श्लोकः

आचार्योऽरणिराद्यः स्यादन्तेवास्युत्तरारणिः ।
तत्सन्धानं प्रवचनं विद्यासन्धिः सुखावहः ॥१२॥

पदच्छेद— आचार्यः अरणिः आद्यः स्यात् अन्तेवासी उत्तर अरणिः ।
तत् सन्धानम् प्रवचनम् विद्या सन्धिः सुख आवहः ॥

शब्दार्थ—

आचार्यः	३.	आचार्य	तत्	१०.	उनका
अरणिः	५.	अरणि और	सन्धानम्	१२.	मन्थन काष्ठ है
आद्यः	४.	ऊपर की	प्रवचनम्	११.	उपदेश
स्यात्	९.	होता है और	विद्या,	१.	विद्यारूप
अन्तेवासी	६.	शिष्य	सन्धिः	२.	अग्नि की उत्पत्ति के लिये
उत्तर	७.	नीचे की	सुख	१३.	जिससे अत्यन्त सुख
अरणि. ।	८.	अरणि	आवहः ॥	१४.	प्राप्त होता है

श्लोकार्थ—विद्यारूप अग्नि की उत्पत्ति के लिये आचार्य ऊपर की अरणि और शिष्य नीचे की अरणि होता है। और उनका उपदेश मन्थन काष्ठ है। जिससे अत्यन्त सुख प्राप्त होता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

वैशारदी सातिविशुद्धबुद्धिर्धुनोति मायां गुणसम्प्रसूताम् ।
गुणांश्च सन्दह्य यदात्ममेतत् स्वयं च शाम्यत्यसमिद् यथाग्निः ॥१३॥

पदच्छेद—वैशारदी सा अति विशुद्ध बुद्धिः धुनोति मायाम् गुण सम्प्रसूताम् ।
गुणान् च सन्दह्य यत् आत्मम् एतत् स्वयम् च शाम्यति असमिद् यथा अग्निः ॥

शब्दार्थ—

वैशारदी	१.	शिष्य को प्राप्त	गुणान् च	९.	फिर वे गुण भी
सा अति	२.	वह अत्यन्त	सन्दह्य	१०.	भस्म हो जाते हैं
विशुद्ध	३.	शुद्ध	यत्	११.	जिनसे
बुद्धिः	४.	ज्ञान	आत्मम् एतत्	१२.	यह संसार बना हुआ है
धुनोति	८.	भस्म कर देता है	स्वयम्	१३.	फिर वह ज्ञानाग्नि स्वयम् भी
मायाम्	७.	विषयों की माया को	च शाम्यति	१५.	शान्त हो जाती है
गुण	५.	गुणों से	असमिद्	१४.	समिधा रहित
सम्प्रसूताम् ।	६.	बनी हुई	यथा अग्निः ॥	१५.	अग्नि के समान

श्लोकार्थ—शिष्य को प्राप्त वह अत्यन्त शुद्ध ज्ञान गुणों से बनी हुई विषयों की माया को भस्म कर देता है। फिर वे गुण भी भस्म हो जाते हैं, जिनसे यह संसार बना हुआ है फिर वह ज्ञानाग्नि स्वयम् भी समिधारहित अग्नि के समान शान्त हो जाती है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अथैषां कर्मकर्तॄणां भोक्तॄणां सुखदुःखयोः ।
नानात्वमथ नित्यत्वं लोककालागमात्मनाम् ॥१४॥

पदच्छेद—　अथ एषाम् कर्म कर्तॄणाम् भोक्ताणाम् सुख दुःखयोः ।
नानात्वम् अथ नित्यत्वम् लोक काल आगम आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

अथ	७.	इन जीवों को	नानात्वम्	८.	अनेक
एषाम्	६.	इन	अथ	९.	तथा
कर्म	१.	यदि तुम कर्म के	नित्यत्वम्	१४.	नित्य मानते हैं
कर्तॄणाम्	२.	कर्ता और	लोक	१०.	जगत्
भोक्ताणाम	५.	भोक्ता	काल	११.	काल और
सुख	३.	सुख	आगम	१२.	वेद तथा
दुःखयोः ।	४.	दुःख के	आत्मनाम् ॥	१३.	आत्माओं को

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! यदि तुम कर्म के कर्ता और सुख-दुःख के भोक्ता इन जीवों को अनेक तथा जगत्-काल और वेद तथा आत्माओं को नित्य मानते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

मन्यसे सर्वभावानां संस्था ह्यौत्पत्तिकी यथा।
तत्तदाकृतिभेदेन जायते भिद्यते च धीः ॥१५॥

पदच्छेद— मन्यसे सर्वभावानाम् संस्था हि औत्पत्तिकी यथा।
तत्-तत् आकृति भेदेन जायते भिद्यते च धीः ॥

शब्दार्थ—

मन्यसे	५. मानते हो और	तत्-तत्	६. ऐसा समझते हो कि उनकी
सर्वभावानाम्	१. यदि समस्त पदार्थों की	आकृति	७. आकृतियों के
संस्था हि	२. स्थिति	भेदेन	८. भेद से
औत्पत्तिकी	३. उत्पन्न होने	जायते	१०. उत्पन्न होता और
यथा।	४. जैसी	भिद्यते	११. बदलता रहता है
		च धीः॥	९. उनके अनुसार ज्ञान भी

श्लोकार्थ—यदि समस्त पदार्थों की स्थिति उत्पन्न होने जैसी मानते हो और ऐसा समझते हो कि उनकी आकृतियों के भेद से उनके अनुसार ज्ञान भी उत्पन्न होता और बदलता रहता है ॥

षोडशः श्लोकः

एवमप्यङ्ग सर्वेषां देहिनां देहयोगतः।
कालावयवतः सन्ति भावा जन्मादयोऽसकृत् ॥१६॥

पदच्छेद— एवम् अपि अङ्ग सर्वेषाम् देहिनाम् देह योगतः।
काल अवयवतः सन्तिभावाः जन्म आदयः असकृत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२. ऐसा	काल	५. संवत्सरादि काल के
अपि	३. मानने पर भी	अवयवतः	६. अवयवों के
अङ्ग	१. हे राजन्	सन्ति	१४. होती हैं
सर्वेषाम्	८. सभी	भावाः	१२. अवस्थायें
देहिनाम्	९. जीवों की	जन्म	१०. जन्म-मरण
देह	४. देह और	आदयः	११. आदि
योगतः।	७. सम्बन्ध से होने वाली	असकृत॥	१३. अनेक बार

श्लोकार्थ—हे राजन्! ऐसा मानने पर भी देह और संवत्सरादि काल के अवयवों के सम्बन्ध से होने वाली सभी जीवों की जन्म-मरण आदि अवस्थायें अनेक बार होती हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

अत्रापि कर्मणां कर्तुरस्वातन्त्र्यं च लक्ष्यते ।
भोक्तुश्च दुःखसुखयोः कोन्वर्थो विवशं भजेत् ॥१७॥

पदच्छेद— अत्र अपि कर्मणाम् कर्तुः अस्वा तन्त्र्यम् च लक्ष्यते ।
भोक्तुः च दुःख सुखयोः कोन्वर्थः विवशम् भजेत् ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	यहाँ	भोक्तु	८.	भोक्ता जीव
अपि	२.	भी	च	६.	और
कर्मणाम्	३.	कर्मों का	दुःख	७.	दुःख का
कर्तुः	४.	कर्ता	सुःखयोः	५.	सुख
अस्वा	९.	पर	कोन्वर्थः	१२.	स्वार्थ-परमार्थ से
तन्त्र्यम्	१०.	तन्त्र ही	विवशम्	१३.	इस प्रकार विवश होकर परतन्त्र होने पर वह
च लक्ष्यते ।	११.	दिखाई देता है	भजेत् ॥	१४.	वञ्चित रह जायेगा

श्लोकार्थ—यहाँ भी कर्मों का कर्ता सुख और दुःख का भोक्ता जीव परतन्त्र ही दिखाई देता है। स्वार्थ-परमार्थ से इस प्रकार विवश होकर परतन्त्र होने पर वह वञ्चित रह जायेगा ॥

अष्टदशः श्लोकः

न देहिनां सुखं किञ्चिद् विद्यते विदुषामपि ।
तथा च दुःखं मूढानां वृथाहङ्करणं परम् ॥१८॥

पदच्छेद— न देहिनाम् सुखम् किञ्चित् विद्यते विदुषाम् अपि ।
तथा च दुःख मूढानाम् वृथा अहङ्करणम् परम् ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं	तथा	९.	इसी प्रकार
देहिनाम्	२.	व्यक्तियों को	च	८.	और
सुखम्	५.	सुख	दुःख	११.	दुःख नहीं मिलता है
किञ्चित्	३.	थोड़ा	मूढानाम्	१०.	मूर्खों को
विद्यते	७.	मिलता है	वृथा	१४.	व्यर्थ की बात है
विदुषाम्	१.	कभी-कभी विद्वान	अहङ्करणम्	१२.	अतः फल के बारे में अहङ्कार करना
अपि ।	४.	भी	परम् ॥	१३.	बहुत

श्लोकार्थ—कभी-कभी विद्वान व्यक्तियों को थोड़ा भी सुख नहीं मिलता है। और इसी प्रकार मूर्खों को दुःख नहीं मिलता है। अतः फल के बारे में अहङ्कार करना बहुत व्यर्थ की बात है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यदि प्राप्तिं विघातं च जानन्ति सुखदुःखयोः।
तेऽप्यद्धा न विदुर्योगं मृत्युर्न प्रभवेद् यथा ॥१९॥

पदच्छेद— यदि प्राप्तिम् विघातम् च जानन्ति सुःख दुःखयोः।
ते अपि अद्धा न विदुः योगम् मृत्युः न प्रभवेत् यथा ॥

शब्दार्थ—

यदि	१.	यदि ऐसा मानों कि कुछ लोग	ते अपिअद्धा	७.	वस्तुतः वे लोग भी
प्राप्तिम्	३.	प्राप्ति और	न विदुः	९.	नहीं जानते हैं
विघातम्	५.	विनाश का	योगम्	८.	ऐसा कोई उपाय
च जानन्ति	६.	उपाय जानते हैं तो	मृत्युः	११.	मृत्यु का कोई
सुःख	२.	सुःख की	न प्रभवेत्	१२.	प्रभाव न हो सके
दुःखयोः।	४.	दुःख के	यथा ॥	१०.	जिससे

श्लोकार्थ—यदि ऐसा मानें कि कुछ लोग सुख की प्राप्ति और दुःख के विनाश का उपाय जानते हैं। तो वस्तुतः वे लोग भी ऐसा कोई उपाय नहीं जानते हैं, जिससे मृत्यु का कोई प्रभाव न हो सके ॥

विंशः श्लोकः

कोन्वर्थः सुखयत्येनं कामो वा मृत्युरन्तिके।
आघातं नीयमानस्य वध्यस्येव न तुष्टिदः ॥२०॥

शब्दार्थ—

पदच्छेद— कोन्वर्थः सुखयति एनम् कामः वा मृत्युः अन्तिके।
आघातम् नीयमानस्य वध्यस्य इव न तुष्टिदः ॥

कोन्वर्थः	३.	ऐसा कौन सा पदार्थ	आघातम्	८.	मारने के लिये
सुखयति	६.	सुख दे सके	नीयमानस्य	९.	ले जाये जा रहे
एनम्	५.	इस प्राणी को	वध्यस्य	१०.	मनुष्य को
कामः वाः	४.	अथवा भोग-कामना है जोइव		७.	जैसे
मृत्युः	१.	जब मृत्यु	न	१२.	नहीं दे सकती हैं
अन्तिके।	२.	निकट ही है तो	तुष्टिदः ॥	११.	कोई भी वस्तु सन्तुष्टि

श्लोकार्थ—जब मृत्यु निकट ही है तो ऐसा कौन सा पदार्थ अथवा भोग कामना है जो इस प्राणी को सुख दे सके। जैसे मारने के लिये ले जाये जा रहे मनुष्य को कोई भी वस्तु सन्तुष्टि नहीं दे सकती है ॥

एकविंशः श्लोकः

श्रुतं च दृष्टवद् दुष्टं स्पर्धासूयात्ययव्ययैः ।
बह्वन्तरायकामत्वात् कृषिवच्चापि निष्फलम् ॥२१॥

पदच्छेद— श्रुतम् च दृष्टवत् दुष्टम् स्पर्धा असूया अत्ययव्ययैः ।
बहु अन्तराय कामत्वात् कृषिवत् च अपि निष्फलम् ॥

शब्दार्थ—

श्रुतम्	२.	पारलौकिक सुख भी	बहु	९.	बहुत
च दृष्टवत्	१.	और लौकिक सुख के समान	अन्तराय	१०.	विघ्न है
दुष्टम्	७.	दोष से युक्त है	कामत्वात्	८.	वहाँ कामना पूर्ण होने में
स्पर्धा	३.	बराबरी वालों से होड़	कृषिवत	१३.	खेती के समान
असूया	४.	अधिक सुख वालों से असूया	च	११.	और
अत्ययः	६.	नाश आदि	अपि	१२.	कभी-कभी
व्ययैः ।	५.	पुण्यक्षीण होना और	निष्फलम् ॥	१४.	स्वर्ग भी निष्फल हो जाता है

श्लोकार्थ—और लौकिक सुख के समान पारलौकिक सुख भी बराबरी वालों से होड़ अधिक सुख वालों से असूया पुण्यक्षीण होना और नाश आदि दोष से युक्त है । वहाँ कामना पूर्ण होने में बहुत विघ्न हैं । और कभी-कभी खेती के समान स्वर्ग भी निष्फल हो जाता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अन्तरायैरविहतो यदि धर्मः स्वनुष्ठितः ।
तेनापि निर्जितं स्थानं यथा गच्छति तच्छृणु ॥२२॥

पदच्छेद— अन्तरायैः अविहतः यदि धर्म स्वनुतिष्ठतः ।
तेन अपि निर्जितम् स्थानम् यथा गच्छति तत् शृणु ॥

शब्दार्थ—

अन्तरायैः	५.	विघ्न के पूरा हो जाय तो	निर्जितम्	७.	द्वारा मिलने वाले
अविहतः	४.	बिना किसी	स्थानम्	८.	स्वर्गादि स्थान
यदि	१.	यदि यज्ञादि	यथा	९.	जिस प्रकार
धर्मः	२.	धर्म का	गच्छति	१०.	प्राप्त होता है
स्वनुतिष्ठतः ।	३.	अनुष्ठान	तत्	११.	उसे
तेन अपि	६.	उसके भी	शृणु ॥	१२.	सुनो

श्लोकार्थ—यदि यज्ञादि धर्म का अनुष्ठान बिना किसी विघ्न के पूरा हो जाय तो उसके भी द्वारा मिलने वाले स्वर्गादि स्थान जिस प्रकार प्राप्त होता है, उसे सुनो ॥

त्रयविंशः श्लोकः

इष्टेवह देवता यज्ञैः स्वर्लोकं याति याज्ञिकः ।
भुञ्जीत देववत्तत्र भोगान् दिव्यान् निजार्जितान् ॥२३॥

पदच्छेद— इष्ट्वा इह देवता यज्ञैः स्वर्लोकम् याति याज्ञिकः ।
भुञ्जीत देववत् तत्र भोगान् दिव्याम् निजार्जितान् ॥

शब्दार्थ—

इष्ट्वा	४.	आराधना करके	भुञ्जीत	१२.	भोगता है
इह	२.	इस लोक में	देववत्	११.	देवताओं के समान
देवता यज्ञैः	३.	यज्ञों के द्वारा देवताओं को	तत्र	७.	और वहाँ
स्वर्लोकम्	५.	स्वर्ग लोक में	भोगान्	१०.	भोगों को
याति	६.	जाता है	दिव्याम्	९.	दिव्य
याज्ञिकः ।	१.	यज्ञ करने वाला पुरुष	निजार्जितान् ॥	८.	अपने पुण्य कर्मों के उपार्जित

श्लोकार्थ—यज्ञ करने वाला पुरुष इस लोक में यज्ञों के द्वारा देवताओं की आराधना करके स्वर्गलोक में जाता है । और वहाँ अपने पुण्य कर्मों के उपार्जित दिव्य भोगों को देवताओं के समान भोगता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

स्वपुण्योपचिते शुभ्रे विमान उपगीयते ।
गन्धर्वैर्विहरन् मध्ये देवीनां हृद्यवेषधृक् ॥२४।

पदच्छेद— स्व पुण्यः उपचिते शुभ्रे विमान उपगीयते ।
गन्धर्वैः विहरन् मध्ये देवीनाम् हृद्यवेषधृक् ॥

शब्दार्थ—

स्व पुण्यः	१.	अपने पुण्यों के द्वारा	विहरन्	१०.	बिहार करता है और
उपचिते	५.	भोगों से युक्त	मध्ये	९.	बीच
शुभ्रे	६.	चमकीले	देवीनाम्	८.	सुर-सुन्दरियों के
विमाने	७.	विमान पर बैठकर	हृद्य	२.	सुन्दर
उपगीयते ।	१२.	उसके गुणो का गान होता है	वेष	३.	वेष
गन्धर्वैः	११.	गन्धर्वों के द्वारा	धृक् ॥	४.	धारण करके

श्लोकार्थ—अपने पुण्यों के द्वारा सुन्दर वेषधारण करके के भोगों से युक्त चमकीले विमान पर बैठकर सुर-सुन्दरियों के बीच विहार करता है और गन्धर्वों के द्वारा उसके गुणों का गान होता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

स्त्रीभिः कामगयानेन किङ्किणीजालमालिना ।
क्रीडन् न वेदात्मपातं सुराक्रीडेषु निर्वृतः ॥२५॥

पदच्छेद— स्त्रीभिः कामग यानेन किङ्किणी जाल मालिना ।
क्रीडन् न वेद आत्मपातम् सुर आक्रीडेषु निर्वृतः ॥

शब्दार्थ—

स्त्रीभिः	६.	स्त्रियों के साथ	क्रीडन्	९.	विहार करके
कामग	४.	इच्छानुसार चलने वाले	न वेद	१३.	नहीं जानता है
यानेन	५.	विमान पर बैठकर	आत्म	११.	अपने
किङ्किणी	१.	छोटी-छोटी घंटियों के	पातम्	१२.	पुण्यों की समाप्ति को
जाल	२.	समूह की	सुर	७.	देवताओं के
मालिना ।	३.	माला से युक्त	आक्रीडेषु	८.	क्रीडास्थलों में
			निर्वृतः ॥	१०.	आनन्दित होता है और

श्लोकार्थ——छोटी-छोटी घंटियों के समूह की माला से युक्त इच्छानुसार चलने वाले विमान पर बैठकर स्त्रियों के साथ देवताओं के क्रीडास्थलों में विहार करके आनन्दित होता है । और अपने पुण्यों की समाप्ति को नहीं जानता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

तावत् प्रमोदते स्वर्गे यावत् पुण्यं समाप्यते ।
क्षीणपुण्यः पतत्यर्वागनिच्छन् कालचालितः ॥२६॥

पदच्छेद— तावत् प्रमोदते स्वर्गे यावत् पुण्यम् समाप्यते ।
क्षीण पुण्यः पतति अर्वाक् अनिच्छन् कालचालितः ॥

शब्दार्थ—

तावत्	४.	तब-तक वह	क्षीण	८.	समाप्त होने पर
प्रमोदते	६.	आनन्द करता है और	पुण्यः	७.	पुण्यों के
स्वर्गे	५.	स्वर्ग में	पतति	१२.	नीचे गिर पड़ता है
यावत्	१.	जब-तक	अर्वाक्	११.	तत्काल
पुण्यम्	२.	उसका पुण्य	अनिच्छन्	१०.	इच्छा न रहने पर भी
समाप्यते ।	३.	समाप्त नहीं होता है	कालचालितः ॥	९.	काल की चाल से प्रेरित होकर

श्लोकार्थ—जब-तक उसका पुण्य समाप्त नहीं होता है, तब-तक वह स्वर्ग में आनन्द करता है और पुण्यों के समाप्त होने पर काल की चाल से प्रेरित होकर इच्छा न रहने पर भी तत्काल नीचे गिर पड़ता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यद्यधर्मरता सङ्गादसतां वाजितेन्द्रियः ।
कामात्मा कृपणो लुब्धः स्त्रैणो भूतविहिंसकः ॥२७॥

पदच्छेद— यदि अधर्मरतः सङ्गात् असताम् वा अजित इन्द्रियः ।
काम आत्मा कृपणः लुब्धः स्त्रैणः भूत विहिंसकः ॥

शब्दार्थ—

यदि	१.	यदि कोई मनुष्य	काम	९.	करने लगे और
अधर्मरतः	४.	अधर्म परायण हो जाय	आत्मा	८.	मन की
सङ्गात्	३.	सङ्गति में पड़कर	कृपणः	११.	कृपणता करे
असताम्	२.	दुष्टों की	लुब्धः	१०.	लोभवश
वा	५.	अथवा	स्त्रैणः	१२.	स्त्री लम्पट हो जाय तथा
अजित	७.	वश में होकर	भूत	१३.	प्राणियों को
इन्द्रियः ।	६.	इन्द्रियों के	विहिंसकः ॥	१४.	सताने लगे

श्लोकार्थ—यदि कोई मनुष्य दुष्टों की सङ्गति में पड़कर अधर्म परायण हो जाय अथवा इन्द्रियों के वश में होकर मन की करने लगे और लोभवश कृपणता करे स्त्रीलम्पट हो जाय तथा प्राणियों को सताने लगे ॥

अष्टविंशः श्लोकः

पशूनविधिनाऽऽलभ्य प्रेतभूतगणान् यजन् ।
नरकानवशो जन्तुर्गत्वा यात्युल्वणं तमः ॥२८॥

पदच्छेद— पशून् अविधिना आलभ्य प्रेत भूतगणान् यजन् ।
नरकान् अवशः जन्तुः गत्वा याति उल्वणम् तमः ॥

शब्दार्थ—

पशून्	२.	पशुओं की	नरकान्	१०.	नरक में
अविधिना	१.	विधिविरुद्ध	अवशः	९.	विवश होकर
आलभ्य	३.	बलि देकर	जन्तुः	८.	तब तो वह प्राणी
प्रेत	५.	प्रेतों के	गत्वा	११	जाकर
भूत	४.	भूत और	याति	१४.	भटकता है
गणान्	६.	समूह की	उल्वणम्	१२.	घोर
यजन् ।	७.	उपासना में लग जाय	तमः ॥	१३.	अन्धकार में

श्लोकार्थ—विधि-विरुद्ध पशुओं की बलि देकर भूत और प्रेतों के समूह की उपासना में लग जाय तब तो वह प्राणी विवश होकर नरक में जाकर घोर अन्धकार में भटकता है ॥

एकोनत्रिंश श्लोकः

कर्माणि दुःखोदर्काणि कुर्वन् देहेन तैः पुनः ।
देहमाभजते तत्र किं सुखं मर्त्यधर्मिणः ॥२९॥

पदच्छेद— कर्माणि दुःख उदर्काणि कुर्वन् देहेन तैः पुनः ।
देहम् आभजते तत्र किम् सुखम् मर्त्यधर्मिणः ॥

शब्दार्थ—

कर्माणि	१.	जो भी सकामरूप कर्म हैं	देहम्	९.	शरीर
दुःख	२.	वे दुःख रूप	आभजते	१०.	प्राप्त करता है अतः
उदर्काणि	३.	फल वाले हैं	तत्र	८.	वही जन्म मरण रूप
कुर्वन्	६.	कर्मों को करता हुआ	किम्	१३.	इससे क्या
देहेन	४.	शरीर से	सुखम्	१४.	सुख हो सकता है
तैः	५.	उन्हीं	मर्त्य	११.	मरण
पुनः ।	७.	जीव फिर से	धर्मिणः ॥	१२.	धर्मा जीव को

श्लोकार्थ—जो भी सकामरूप कर्म हैं वे दुःख रूप फल वाले हैं । शरीर से उन्हीं कर्मों को करता हुआ जीव फिर से वही जन्म-मरण रूप शरीर प्राप्त करता है । अतः मरण धर्मा जीव को इससे क्या सुख हो सकता है ॥

त्रिंशः श्लोकः

लोकानां लोकपालानां मद् भयं कल्पजीविनाम् ।
ब्रह्मणोऽपि भयं मत्तो द्विपरार्धपरायुषः ॥३०॥

पदच्छेद— लोकानाम् लोक पालानाम् मत् भयम् कल्प जीविनाम् ।
ब्रह्मणः अपि भयम् मत्तः द्वि परार्ध पर आयुषः ॥

शब्दार्थ—

लोकानाम्	३.	सारे लोक भी	ब्रह्मणः	१०.	ब्रह्मा जी
लोकपालानाम्	४.	लोक पाल भी	अपि	११.	भी
मद्	५.	मुझसे	भयम् मत्तः	१२.	मुझसे भयभीत रहते हैं
भयम्	६.	भयभीत रहते हैं	द्वि परार्ध	७.	दो परार्द्ध
कल्प	१.	एककल्प	पर	८.	परम
जीविनाम् ।	२.	आयु वाले	आयुषः ॥	९.	आयु वाले

श्लोकार्थ—एक कल्प आयु वाले सारे लोक और लोकपाल भी मुझसे भयभीत रहते हैं । दो परार्द्ध परम आयु वाले ब्रह्मा जी भी मुझसे भयभीत रहते हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

गुणाः सृजन्ति कर्माणि गुणोऽनुसृजते गुणान् ।
जीवस्तु गुणसंयुक्तो भुङ्क्ते कर्मफलान्यसौ ॥३१॥

पदच्छेद— गुणाः सृजन्ति कर्माणि गुणः अनुसृजते गुणान् ।
जीवः तु गुण संयुक्तः भुङ्क्ते कर्म फलानि असौ ॥

शब्दार्थ—

गुणाः	१.	(सत्त्व रज तम) ये तीनों गुण	जीवः तु	८.	जीव भी
सृजन्ति	३.	प्रेरित करते हैं	गुण	९.	गुणों और इन्द्रियों से
कर्माणि	२.	इन्द्रियों को उनके कर्मों में	संयुक्तः	१०.	युक्त होकर
गुणः	४.	इन्द्रियाँ	भुङ्क्ते	१२.	भोगता है
अनुसृजते	६.	करती हैं	कर्मफलानि	११.	कर्मफल को
गुणान् ।	५.	कर्म	असौ ॥	७.	और यह

श्लोकार्थ—सत्त्व, रज, तम ये तीनों गुण इन्द्रियों को उनके कर्मों में प्रेरित करते हैं। इन्द्रियाँ कर्म करती हैं। और यह जीव भी गुणों और इन्द्रियों से युक्त होकर कर्मफल को भोगता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यावत् स्याद् गुणवैषम्यं तावन्नानात्वमात्मनः ।
नानात्वमात्मनो यावत् पारतन्त्र्यं तदैव हि ॥३२॥

पदच्छेद— यावत् स्याद् गुण वैषम्यम् तावत् नानात्वम् आत्मनः ।
नानात्वम् आत्मनः यावत् पारतन्त्र्यम् तत् एव हि ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१.	जब-तक	नानात्वम्	१०.	अनेकता है
स्याद्	४.	है	आत्मनः	९.	आत्मा की
गुण	२.	गुणों की	यावत्	८.	जब-तक
वैषम्यम्	३.	विषमता	पार-	१३.	काल
तावत्	५.	तब-तक	तन्त्र्यम्	१४.	कर्म के अधीन रहना पड़ता है
नानात्वम्	७.	एकत्व की अनुभूति नहीं होती	तत्	११.	तभी-तक
आत्मनः ।	६.	आत्मा के	एव हि ॥	१२.	उन्हें

श्लोकार्थ—जब-तक गुणों की विषमता है। तब-तक आत्मा के एकत्व की अनुभूति नहीं होती और जब-तक आत्मा की अनेकता है तभी-तक उन्हें काल-कर्म के अधीन रहना पड़ता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यावदस्यास्वतन्त्रत्वं तावदीश्वरतो भयम् ।
य एतत् समुपासीरंस्ते मुह्यन्ति शुचार्पिताः ॥३३॥

पदच्छेद— यावत् अस्य अस्वतन्त्रत्वम् तावत् ईश्वरतः भयम् ।
य एतत् सम् उपासीरन् ते मुह्यन्ति शुचार्पिताः ॥

शब्दार्थ —

यावत्	१.	जब-तक	य	७.	और जो
अस्य	२.	यह जीव	एतत्	८.	सकाम कर्मों का
अस्वतन्त्रत्वम्	३.	परतन्त्र है	सम् उपासीरन्	९.	सेवन करते रहते
तावत्	४.	तब-तक इसे	ते	१०.	उन्हें
ईश्वरतः	५.	ईश्वर से	मुह्यन्ति	१२.	मोह की प्राप्ति होती है
भयम् ।	६.	भय रहता है	शुचार्पिताः ॥	११.	शोक और

श्लोकार्थ—जब-तक यह जीव परतन्त्र है तब-तक इसे ईश्वर से भय रहता है और जो सकाम कर्मों का सेवन करते रहते हैं । उन्हें शोक और मोह की प्राप्ति होती है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

काल आत्माऽऽगमो लोकः स्वभावो धर्म एव च ।
इति मां बहुधा प्राहुर्गुणव्यतिकरे सति ॥३४॥

पदच्छेद— कालः आत्मा आगमो लोकः स्वभावः धर्म एव च ।
इति माम् बहुधा प्राहुः गुण व्यतिकरे सति ॥

शब्दार्थ—

काल	४.	काल	इति	१०.	आदि
आत्मा	५.	जीव	माम्	३.	लोग मुझ आत्मा को ही
आगमः	६.	वेद	बहुधा	११.	अनेक नामों से
लोकः	७.	लोक	प्राहुः	१२.	निरूपण करने लगते हैं
स्वभावः	८.	स्वभाव	गुणव्यतिकरे	१.	माया के गुणों में क्षोभ
धर्म एव च ।	९.	और धर्म	सति ॥	२.	होने पर

श्लोकार्थ—माया के गुणों में क्षोभ होने पर लोग मुझ आत्मा को ही काल जीव वेद लोक स्वभाव और धर्म आदि अनेक नामों से निरूपण करने लगते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—गुणेषु वर्तमानोऽपि देहजेष्वनपावृतः।
गुणैर्न बध्यते देही बध्यते वा कथं विभो ॥३५॥

पदच्छेद— गुणेषु वर्तमानः अपि देहजेषु अन् अपावृतः।
गुणैः न बध्यते देही बध्यते वा कथम् विभो ॥

शब्दार्थ—

गुणेषु	४.	गुणों में	गुणैः	९.	देह से होने वाले कर्म फलों से
वर्तमानः	६.	रह रहा है	न बध्यते	१०.	नहीं बँधता है
अपि	५.	ही	देही	२.	यह जीव
देहजेषु	३.	देह आदि रूप	बध्यते	१२.	बन्धन होता है
अन्	८.	रहित है	वा कथम्	११.	फिर इसे कैसे
अपावृतः।	७.	फिर भी देह के सम्पर्क से	विभो ॥	१.	हे भगवन् !

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! यह जीव देह आदिरूप गुणों में ही रह रहा है। फिर भी देह के सम्पर्क से रहित है। देह से होने वाले कर्मफलों से नहीं बंधता है। फिर इसे कैसे बन्धन होता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

कथं वर्तेत विहरेत् कैर्वा ज्ञायेत लक्षणैः।
किं भुञ्जीतोत विसृजेच्छयीतासीत याति वा ॥३६॥

पदच्छेद— कथम् वर्तेत विहरेत् कैर्वा ज्ञायेत लक्षणैः।
किम् भुञ्जीत उत विसृजेत् शयीत आसीत याति वा ॥

शब्दार्थ—

कथम्	१.	बद्ध अथवा मुक्त पुरुष कैसा	किम्	७.	कैसे
वर्तेत	२.	वर्ताव करता है	भुञ्जीत उत	८.	भोजन करता है अथवा
विहरेत्	३.	कैसे विहार करता है	विसृजेत्	९.	कैसे मल त्याग करता है
कैर्वा	४.	अथवा किन	शयीत	१०.	कैसे सोता है
ज्ञायेत	६.	पहिचाना जाता है	आसीत	११.	कैसे बैठता है
लक्षणैः।	५.	लक्षणों से	याति वा ॥	१२.	या कैसे चलता है

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! बद्ध अथवा मुक्त पुरुष कैसा वर्ताव करता है ? अथवा किन लक्षणों से पहिचाना जाता है। कैसे भोजन करता है ? अथवा कैसे मल त्याग करता है ? कैसे सोता है ? कैसे बैठता है ? या कैसे चलता है ?

सप्तत्रिंशः श्लोकः

एतदच्युत मे ब्रूहि प्रश्नं प्रश्नविदां वर।
नित्यमुक्तो नित्यबद्ध एक एवेति मे भ्रमः ॥३७॥

पदच्छेद— एतत् अच्युत मे ब्रूहि प्रश्नम् प्रश्नविदाम् वर।
नित्यमुक्तः नित्यबद्धः एक एव इति मे भ्रमः॥

शब्दार्थ—

एतत्	५.	इस	नित्यमुक्तः	११.	नित्य मुक्त हो
अच्युत	१.	हे अच्युत !	नित्यबद्धः	१०.	नित्यबद्ध और
मे	४.	इसलिये आप मेरे	एक	८.	एक
ब्रूहि	७.	उत्तर दीजिये	एव	९.	ही आत्मा
प्रश्नम्	६.	प्रश्न का	इति	१२.	ऐसा कैसे हो सकता है
प्रश्नविदाम्	२.	प्रश्न का मर्म जानने वालों में	मे	१३.	यही मुझे
वर।	३.	आप श्रेष्ठ हैं	भ्रमः॥	१४.	भ्रम है

श्लोकार्थ—हे अच्युत ! प्रश्न का मर्म जानने वालों में आप श्रेष्ठ हैं। इसलिये आप मेरे इस प्रश्न का उत्तर दीजिये। एक ही आत्मा नित्यबद्ध और नित्यमुक्त हो, ऐसा कैसे हो सकता है। यही मुझे भ्रम है॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे भगवद् उद्धव संवादे दशमः अध्यायः॥ १०॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

एकादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—बद्धो मुक्त इति व्याख्या गुणतो मे न वस्तुनः ।
गुणस्य मायामूलत्वान्न मे मोक्षो न बन्धनम् ॥१॥

पदच्छेद— बद्धः मुक्तः इति व्याख्या गुणतः मे न वस्तुतः ।
गुणस्य माया मूलत्वात् न मे मोक्षो न बन्धनम् ॥

शब्दार्थ—

बद्धः	१.	आत्मा बद्ध है	गुणस्य	८.	सभी गुण
मुक्तः	२.	या मुक्त है	माया	९.	माया
इति	३.	इस प्रकार की	मूलत्वात्	१०.	मूलक हैं इस लिये
व्याख्या	४.	व्याख्या का व्यवहार	न मे	११.	मेरा न तो
गुणतः	६.	सत्वादि गुणों की उपाधि के कारण है	मोक्षो	१२.	मोक्ष है और
मे न	५.	मेरे अधीन रहने वाले	न	१३.	न ही
वस्तुतः ।	७.	तत्व दृष्टि से नहीं है	बन्धनम् ॥	१४.	बन्धन है

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! आत्मा बद्ध है, या मुक्त है इस प्रकार की व्याख्या का व्यवहार मेरे अधीन रहने वाले सत्वादि गुणों की उपाधि के कारण है । तत्त्व की दृष्टि से नहीं है । सभी गुण माया मूलक हैं । इसलिये मेरा न तो मोक्ष है और न ही बन्धन ॥

द्वितीयः श्लोकः

शोकमोहौ सुखं दुःखं देहापत्तिश्च मायया ।
स्वप्नो यथाऽऽत्मनः ख्यातिः संसृतिर्न तु वास्तवी ॥२॥

पदच्छेद— शोक मोहौ सुखम् दुःखम् देह आपत्तिश्च मायया ।
स्वप्नः यथा आत्मनः ख्यातिः संसृतिः न तु वास्तवी ॥

शब्दार्थ—

शोक	५.	शोक	स्वप्नः	२.	स्वप्न
मोहौ	६.	मोह	यथा	१.	जैसे
सुखम्	७.	सुख	आत्मनः	३.	बुद्धि का
दुःखम्	८.	दुःख	ख्यातिः	४.	भ्रम है, वैसे ही
देह	९.	शरीर की	संसृतिः	११.	संसार का बखेड़ा
आपत्तिश्च	१०.	उत्पत्ति और मृत्यु रूप	न तु	१४.	नहीं है
मायया ।	१२.	माया के कारण प्रतीत होते हैं	वास्तवी ॥	१३.	वह वास्तविक

श्लोकार्थ—जैसे स्वप्न बुद्धि का भ्रम है । वैसे ही शोक, मोह, सुख, दुःख शरीर की उत्पत्ति और मृत्यु रूप संसार का बखेड़ा माया के कारण प्रतीत होते हैं । वह वास्तविक नहीं है ॥

तृतीयः श्लोकः

विद्याविद्ये मम तनू विद्ध्युद्धव शरीरिणाम् ।
मोक्षबन्धकरी आद्ये मायया मे विनिर्मिते ॥३॥

पदच्छेद— विद्या अविद्ये मम तनू विद्धि उद्धव शरीरिणाम् ।
मोक्षबन्धकरी आद्ये मायया मे विनिर्मिते ॥

शब्दार्थ —

विद्या	४.	आत्मविद्या और	शरीरिणाम्	२.	शरीरधारियों को
अविद्ये	६.	अविद्या-ये दोनों ही	मोक्ष	३.	मुक्ति का अनुभव करने वाली
मम	८.	इन्हें तुम मेरा	बन्धकरी	५.	बन्धन का अनुभव कराने वाली
तनू	९.	शरीर	आद्ये	७.	मेरी अनादि शक्तियाँ है
विद्धि	१०.	जानो	मायया	१२.	माया से ही हुई हैं
उद्धव ।	१.	हे उद्धव !	मे विनिर्मिते ॥	११.	इनकी रचना मेरी

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! शरीरधारियों को मुक्ति का अनुभव करने वाली आत्मा विद्या और बन्धन का अनुभव कराने वाली अविद्या ये दोनों ही मेरी अनादि शक्तियाँ हैं । इन्हें तुम मेरा शरीर जानो । इनकी रचना मेरी माया से ही हुई है ॥

चतुर्थः श्लोकः

एकस्यैव ममांशस्य जीवस्यैव महामते ।
बन्धोऽस्याविद्ययानादिर्विद्यया च तथेतरः ॥४॥

पदच्छेद— एकस्य एव मम अंशस्य जीवस्य एव महामते ।
बन्धः अस्य अविद्यया अनादिः विद्यया च तथा इतरः ॥

शब्दार्थ—

एकस्य	३.	एक	बन्धः	११.	बन्धन होता है
एव	४.	ही है	अस्य	८.	इस जीव का
मम	५.	वह मेरा	अविद्यया	१०.	अविद्या के कारण
अंशस्य	७.	अंश है	अनादिः	९.	अनादि
जीवस्य	२.	जीव तो	विद्यया	१३.	विद्या के कारण दूसरा
एव	६.	ही	च तथा	१२.	और उसी प्रकार
महामते ।	१.	बुद्धिमान उद्धव !	इतरः ॥	१४.	मोक्ष होता है

श्लोकार्थ—हे बुद्धिमान उद्धव ! जीव तो एक ही है और वह मेरा ही अंश है । इस जीव का अनादि अविद्या के कारण बन्धन होता है । और उसी प्रकार विद्या के कारण दूसरा मोक्ष होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

अथ बद्धस्य मुक्तस्य वैलक्षण्यं वदामि ते।
विरुद्धधर्मिणोस्तात स्थितयोरेकधर्मिणि ॥५॥

पदच्छेद— अथ बद्धस्य मुक्तस्य वैलक्षण्यम् वदामि ते।
विरुद्धधर्मिणोः तात स्थितयोः एक धर्मिणि ॥

शब्दार्थ—

अथ	२.	इस प्रकार	विरुद्ध	६.	शोक और आनन्दरूप विरुद्ध
बद्धस्य	८.	उन बद्ध और	धर्मिणोः	७.	धर्म वाले जान पड़ते हैं
मुक्तस्य	९.	मुक्त जीव का	तात	१.	हे प्यारे उद्धव !
वैलक्षण्यम्	१०.	भेद मैं	स्थितयोः	५.	रहने पर भी जो
वदामि	१२.	बताता हूँ	एक	३.	मुझ एक
ते।	११.	तुम्हें	धर्मिणि ॥	४.	धर्मी में

श्लोकार्थ—हे प्यारे उद्धव ! इस प्रकार मुझ एक धर्मी में रहने पर भी जो शोक और आनन्दरूप विरुद्ध धर्म वाले जान पड़ते हैं। उन बद्ध और मुक्त जीव का भेद मैं तुम्हें बताता हूँ ॥

षष्ठः श्लोकः

सुपर्णावेतौ सदृशौ सखायौ यदृच्छयैतौ कृतनीडौ च वृक्षे।
एकस्तयोः खादति पिप्पलान्नमन्यो निरन्नोऽपि बलेन भूयान् ॥६॥

पदच्छेद— सुपर्णौ एतौ सदृशौ सखायौ यदृच्छया एतौ कृतनीडौ च वृक्षे।
एकः तयोः खादति पिप्पलान्नम् अन्यः निरन्नः अपि बलेन भूयान् ॥

शब्दार्थ—

सुपर्णौ	२.	पक्षी के	एकः	१०.	एक अर्थात् जीव तो
एतौ	१.	ये जीव और ईश्वर-दोनों	तयोः	९.	उन दोनों में
सदृशौ	३.	समान हैं और	खादति	१०.	भोगता है
सखायौ	४.	सखा हैं	पिप्पलान्नम्	११.	शरीर रूपी वृक्ष के फल-सुख दुःख
यदृच्छया	६.	स्वेच्छा से	अन्यः	१३.	और दूसरा अर्थात् ईश्वर
एतौ	५.	ये दोनों	निरन्नःअपि	१४.	फल न भोगता हुआ भी
कृतनीडौ	८.	हृदयरूपी घोंसला बना कर रहते हैं	बलेन	१५.	ज्ञान, ऐश्वर्य आदि में
च वृक्षे।	७.	शरीर रूपी वृक्ष पर	भूयान् ॥	१६.	जीव से बढ़ कर है

श्लोकार्थ—ये जीव और ईश्वर-दोनों पक्षी के समान हैं। और सखा हैं। ये दोनों स्वेच्छा से शरीर रूपी वृक्ष पर हृदयरूपी घोंसला बनाकर रहते हैं। उन दोनों में एक अर्थात जीव तो शरीररूपी वृक्ष के फल सुःख-दुःख भोगता है। और दूसरा अर्थात् ईश्वर फल न भोगता हुआ भी ज्ञान-ऐश्वर्य, आदि में जीव से बढ़कर है ॥

सप्तमः श्लोकः

आत्मानमन्यं च स वेद विद्वानपिप्पलादो न तु पिप्पलादः।
योऽविद्यया युक् स तु नित्यबद्धो विद्यामयो यः स तु नित्यमुक्तः ॥७॥

पदच्छेद— आत्मानमन्यम् च स वेद विद्वान् अपिप्पलादः न तु पिप्पलादः।
यः अविद्यया युक् सः तु नित्यबद्धः विद्यामयः यः सः तु नित्यमुक्तः ॥

शब्दार्थ—

आत्मानमन्यम्	४. अपने वास्तविक स्वरूप और जगत को भी	यः अविद्यया	८.	जो अविद्या है	
च सः	३. ईश्वर तो	युक्	६.	से युक्त है अर्थात् जीव	
वेद	५. जानता है	सः तु	१०.	तो	
विद्वान्	२. सर्वज्ञ	नित्यबद्धः	११.	नित्यबद्ध है और	
अपिप्पलादः	१. अभोक्ता:	विद्यामयः	१३.	विद्या स्वरूप है वह	
न तु	७. नहीं जानता है	यः सः तु	१२.	जो ईश्वर	
पिप्पलादः।	६. पर भोक्ता जीव इन्हें	नित्यमुक्तः ॥	१४.	नित्य मुक्त है	

श्लोकार्थ—अभोक्ता सर्वज्ञ ईश्वर तो अपने वास्तविक स्वरूप और जगत को भी जानता है पर भोक्ता जीव इन्हें नहीं जानता है। जो अविद्या से युक्त है अर्थात जीव तो नित्यबद्ध है और जो ईश्वर विद्या स्वरूप है वह नित्य मुक्त है ॥

अष्टमः श्लोकः

देहस्थोऽपि न देहस्थो विद्वान् स्वप्नाद् यथोत्थितः।
अदेहस्थोऽपि देहस्थः कुमतिः स्वप्नदृक् यथा ॥८॥

पदच्छेद— देहस्थः अपि न देहस्थः विद्वान् स्वप्नाद् यथोत्थितः।
अदेहस्थः अपि देहस्थः कुमतिः स्वप्नदृक् यथा ॥

शब्दार्थ—

देहस्थः	५. शरीर में स्थित होने	अदेहस्थः	९.	शरीर से सम्बन्ध न रखने पर
अपि	६. पर भी	अपि	१०.	भी
न देहस्थः	७. शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं रखता है	देहस्थः	१४.	अज्ञान के कारण शरीर में स्थित रहता है
विद्वान्	१. ज्ञान सम्पन्न पुरुष	कुमतिः	८.	परन्तु अज्ञानी पुरुष
स्वप्नात्	२. स्वप्न से	स्वप्न	११.	स्वप्न
यथा	४. समान	दृक्	१२.	देखने वाले पुरुष के
उत्थितः।	३. जगे हुये व्यक्ति के	यथा ॥	१३.	समान

श्लोकार्थ—ज्ञान सम्पन्न पुरुष स्वप्न से जगे हुये के समान शरीर में स्थित होने पर भी शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं रखता है। परन्तु अज्ञानी पुरुष शरीर से सम्बन्ध न रखने पर भी स्वप्न देखने वाले पुरुष के समान अज्ञान के कारण शरीर में स्थित रहता है।

नवमः श्लोकः

इन्द्रियैरिन्द्रियार्थेषु गुणैरपि गुणेषु च।
गृह्यमाणेष्वहंकुर्यान्न विद्वान् यस्त्वविक्रियः ॥९॥

पदच्छेद-- इन्द्रियैः इन्द्रिय अर्थेषु गुणैः अपि गुणेषु च।
गृह्यमाणेषु अहम् कुर्यात् न विद्वान् यः तु अविक्रियः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रियैः	१.	क्योंकि इन्द्रियों के द्वारा	गृह्यमाणेषु	८.	ग्रहण किये जाते हैं
इन्द्रिय	२.	इन्द्रियों के	अहम्	१२.	वह किसी प्रकार का अभिमान
अर्थेषु	३.	विषय	कुर्यात्	१४.	करता है
गुणैः	५.	गुणों के द्वारा	न	१३.	नहीं
अपि	७.	ही	विद्वान्	११.	आत्म स्वरूप को जान लिया है
गुणेषु	६.	गुण	यः तु	९.	जिसने
च।	४.	और	अविक्रियः।	१०.	निर्विकार

श्लोकार्थ—क्योंकि इन्द्रियों के द्वारा इन्द्रियों के विषय और गुणों के द्वारा गुण ही ग्रहण किये जाते हैं। जिसने निर्विकार आत्म स्वरूप को जान लिया है। वह किसी प्रकार का अभिमान नहीं करता है॥

दशमः श्लोकः

दैवाधीने शरीरेऽस्मिन् गुणभाव्येन कर्मणा।
वर्तमानोऽबुधस्तत्र कर्तास्मीति निबद्ध्यते ॥१०॥

पदच्छेद— दैवाधीने शरीरे अस्मिन् गुण भाव्येन कर्मणा।
वर्तमानः अबुधः तत्र कर्ता अस्मि इति निबद्धयते ॥

शब्दार्थ—

दैवाधीने	१.	प्रारब्ध के अधीन रहने वाले	वर्तमानः	९.	व्यवहार करता हुआ
शरीरे	३.	शरीर में	अबुधः	७.	अज्ञानी पुरुष
अस्मिन्	२.	इस	तत्र	८.	उनमें
गुण	५.	गुणों की	कर्ता	१०.	मैं कर्ता
भाव्येन	६.	प्रेरणा से होते हैं	अस्मि इति	११.	हूँ, इस अभिमान से
कर्मणा।	४.	सभी कर्म	निबद्धयते ॥	१२.	बँध जाता है

श्लोकार्थ—प्रारब्ध के अधीन न रहने वाले इस शरीर में सभी कर्म गुणों की प्रेरणा से होते हैं। अज्ञानी पुरुष उनमें व्यवहार करता हुआ, मैं करता हूँ। इस अभिमान से बँध जाता है॥

एकादशः श्लोकः

एवं विरक्तः शयने आसनाटनमज्जने ।
दर्शनस्पर्शनघ्राणभोजनश्रवणादिषु ॥११॥

पदच्छेद— एवम् विरक्तः शयने आसन अटनमज्जने ।
दर्शन स्पर्शन घ्राण भोजन श्रवण आदिषु ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार विचार करके	दर्शन	६.	देखने
विरक्तः	१२.	विरक्त रहता है	स्पर्शन	७.	छूने
शयने	२.	मनुष्य सोने	घ्राण	८.	सूंघने
आसन	३.	बैठने	भोजन	९.	खाने और
अटन	४.	घूमने-फिरने	श्रवण	१०.	सुनने
मज्जने ।	५.	नहाने	आदिषु ॥	११.	आदि क्रियायों से

श्लोकार्थ— इस प्रकार विचार करके मनुष्य सोने, बैठने, घूमने, फिरने, नहाने, देखने, छूने, सूंघने, खाने और सुनने आदि क्रियायों से विरक्त रहता है ॥

द्वादशः श्लोकः

न तथा बद्ध्यते विद्वांस्तत्र तत्रादयन् गुणान् ।
प्रकृतिस्थोऽप्यसंसक्तो यथा खं सवितानिलः ॥१२॥

पदच्छेद— न तथा बद्धयते विद्वान् तत्र-तत्र आदयन् गुणान् ।
प्रकृतिस्थः अपि असंसक्तः यथा खम् सविता अनिलः ॥

शब्दार्थ—

न तथा	५.	उसी प्रकार उनसे नहीं	प्रकृतिस्थः	७.	प्रकृति में रह कर
बद्धयते	६.	बँधते हैं तथा	अपि	८.	भी
विद्वान्	४.	विद्वान् पुरुष	असंसक्तः	९.	उससे असङ्ग रहते हैं
तत्र-तत्र	१.	उन-उन	यथा	१०.	जैसे
आदयन्	३.	कर्ता मान कर	खम्	११.	आकाश स्पर्श से
गुणान् ।	२.	गुणों को	सविता	१२.	सूर्य जल की आर्द्रता से और
			अनिलः ॥	१३.	वायु गन्ध से नहीं बँधते हैं

श्लोकार्थ—उन-उन गुणों को कर्तामान कर विद्वान पुरुष उसी प्रकार उनसे नहीं बँधते हैं तथा प्रकृति में रह कर भी उससे असङ्ग रहते हैं। जैसे आकाश स्पर्श से, सूर्य जल की आर्द्रता से और वायु गन्ध से नहीं बँधते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

वैशारद्येक्षयासङ्गशितया छिन्नसंशयः ।
प्रतिबुद्ध इव स्वप्नान्नानात्वात् विनिवर्तते ॥१३॥

शब्दार्थ—

पदच्छेद— वैशारद्य ईक्षया सङ्ग शितया छिन्न संशयः ।
प्रतिबुद्धः इव स्वप्नान् नानात्वात् विनिवर्तते ॥

वैशारद्य	१.	उनकी विमल	प्रतिबुद्धः	८.	जगे हुये व्यक्ति के
ईक्षया	२.	बुद्धि की तलवार	इव	९.	समान
असङ्ग	३.	असङ्ग भावना की सान से	स्वप्नान्	७.	और वे स्वप्न से
शितया	४.	तीखी हो जाती है	नाना	१०.	इस भेद बुद्धि के
छिन्न	६.	कट जाते हैं	त्वात्	११.	भ्रम से
संशयः ।	५.	जिससे सारे संशय	विनिवर्तते ॥	१२.	मुक्त हो जाते हैं

श्लोकार्थ—उनकी विमल बुद्धि की तलवार असङ्ग भावना की सान से तीखी हो जाती है। जिससे सारे संशय कट जाते हैं। और वे स्वप्न से जगे हुये व्यक्ति के समान इस भेद बुद्धि के भ्रम से मुक्त हो जाते हैं।

चतुर्दशः श्लोकः

यस्य स्युर्वीतसङ्कल्पाः प्राणेन्द्रियमनोधियाम् ।
वृत्तयः स विनिर्मुक्तो देहस्थोऽपि हि तद्गुणैः ॥१४॥

पदच्छेद— यस्य स्युः वीत सङ्कल्पाः प्राणेन्द्रिय मनः धियाम् ।
वृत्तयः सः विनिर्मुक्तः देहस्थः अपि हि तत् गुणैः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिनके	वृत्तयः	५.	समस्त चेष्टायें
स्युः	७.	होती हैं	सः	८.	वे
वीतसङ्कल्पाः	६.	बिना सङ्कल्प के	विनिर्मुक्तः	१२.	मुक्त हैं
प्राणेन्द्रिय	२.	प्राण, इन्द्रिय	देहस्थः	९.	देह में स्थित रह कर
मनः	३.	मन और	अपिहि	१०.	भी
धियाम् ।	४.	बुद्धि की	तत् गुणैः ॥	११.	उसके गुणों से

श्लोकार्थ—जिनके प्राण, इन्द्रिय, मन और बुद्धि की समस्त चेष्टायें बिना सङ्कल्प के होती हैं। वे देह में स्थित रह कर भी उसके गुणों से मुक्त हैं॥

पञ्चदशः श्लोकः

यस्यात्मा हिंस्यते हिंस्त्रैर्येन किञ्चिद् यदृच्छया ।
अर्च्यते वा क्वचित्तत्र न व्यतिक्रियते बुधः ॥१५॥

पदच्छेद— यस्य आत्मा हिंस्यते हिंस्त्रैः येन किञ्चित् यदृच्छया ।
अर्च्यते वा क्वचित् तत्र न व्यति क्रियते बुधः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	१.	जिनके	अर्च्यते	१०.	पूजा करे
आत्मा	२.	शरीर को	वा	५.	अथवा
हिंस्यते	४.	पीड़ा पहुँचायें	क्वचित्	९.	कहीं
हिंस्त्रैः	३.	चाहे हिंसक प्राणी	तत्र	१२.	उससे
येन	८.	किसी वस्तु से	न	१४.	नहीं होता है
किञ्चिद्	६.	चाहे कभी कोई व्यक्ति	व्यतिक्रियते	१३.	क्षुब्ध
यदृच्छया ।	७.	दैव योग से	बुधः ॥	११.	परन्तु विद्वान पुरुष

श्लोकार्थ—जिनके शरीर को चाहे हिंसक प्राणी पीड़ा पहुँचायें अथवा चाहे कभी कोई व्यक्ति दैवयोग से किसी वस्तु से कहीं पूजा करे । परन्तु विद्वान पुरुष उससे क्षुब्ध नहीं होता है ॥

षोडशः श्लोकः

न स्तुवीत न निन्देत कुर्वतः साध्वसाधु वा ।
वदतो गुणदोषाभ्यां वर्जितः समदृक् मुनिः ॥१६॥

पदच्छेद— न स्तुवीत ननिन्देत कुर्वतः साधु असाधु वा ।
वदतः गुण दोषाभ्याम् वर्जितः समदृक् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

न स्तुवीत	११.	न स्तुति करते हैं	वदतः	१०.	बोलने वालों की
न निन्देत	१२.	न निन्दा मरते हैं	गुण	३.	गुण और
कुर्वतः	९.	करने वालों या	दोषाभ्याम्	४.	दोष की भेद दृष्टि से
साधु	६.	अच्छे	वर्जितः	५.	रहित हैं वे
असाधु	८.	बुरे काम	समदृक्	१.	जो समदर्शी
वा ।	७.	अथवा	मुनिः ॥	२.	महात्मा

श्लोकार्थ—जो समदर्शी महात्मा गुण और दोष की भेद दृष्टि से रहित हैं । वे अच्छे अथवा बुरे काम करने वालों या बोलने वालों की न स्तुति करते हैं और न निन्दा करते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

न कुर्यान्न वदेत् किञ्चिन्न ध्यायेत् साध्वसाधु वा ।
आत्मारामोऽनया वृत्त्या विचरेञ्जडवन्मुनिः ॥१७॥

पदच्छेद— न कुर्यात् न वदेत् किञ्चित् न ध्यायेत साधु असाधुवा ।
आत्मारामः अनया वृत्त्या विचरेत् जडवत् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

न कुर्यात्	७.	न तो करते हैं	आत्मारामः	९.	आत्माराम में ही मग्न रहते हैं
न वदेत्	८.	न बोलते हैं और	अनया	१०.	वे व्यवहार में समान
किञ्चित्	२.	कुछ भी	वृत्त्या	११.	वृत्ति रखकर
न ध्यायेत्	६.	न सोचते हैं	विचरेत्	१३.	विचरण करते रहते हैं
साधु	३.	अच्छा	जडवत्	१२.	जड़ के समान
असाधु	५.	बुरा काम	मुनिः ॥	१.	जीवन्मुक्त पुरुष
वा ।	४				

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! जीवनमुक्त पुरुष कुछ भी अच्छा अथवा बुरा काम न सोचते हैं, न करते हैं, न बोलते हैं । और आत्माराम में ही मग्न रहते हैं । वे व्यवहार में समान वृत्ति रख कर जड़ के समान विचरण करते हैं ॥

अष्टदशः श्लोकः

शब्दब्रह्मणि निष्णातो न निष्णायात् परे यदि ।
श्रमस्तस्य श्रमफलो ह्यधेनुमिव रक्षतः ॥१८॥

पदच्छेद— शब्द ब्रह्मणि निष्णातः न निष्णायात् परे यदि ।
श्रमः तस्य श्रमफलः हि अधेनुम् इव रक्षतः ॥

शब्दार्थ—

शब्द ब्रह्मणि	१.	शब्द ब्रह्म (वेद) में	श्रमः	८.	परिश्रम
निष्णातः	२.	पारगंत पुरुष	तस्य	७.	उसका
न	६.	शून्य है तो	श्रमफलः	११.	श्रम के फल के समान
निष्णायात्	५.	ज्ञान से	हि	१२.	है
परे	४.	पर ब्रह्म के	अधेनुम्	९.	बिना दूध की गाय को
यदि ।	३.	यदि	इव रक्षतः ॥	१०.	पालने वाले

श्लोकार्थ—शब्द ब्रह्म वेद में पारगंत पुरुष यदि पर ब्रह्म के ज्ञान से शून्य है । तो उसका परिश्रम बिना दूध की गाय को पालने वाले श्रम के फल के समान है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

गां दुग्धदोहामसतीं च भार्यां देहं पराधीनमसत्प्रजां च ।
वित्तं त्वतीर्थीकृतमङ्ग वाचं हीनां मया रक्षति दुःखदुःखी ॥१९॥

पदच्छेद— गाम् दुग्ध दोहाम् असतीम् च भार्याम् देहम् पराधीनम् असत् प्रजाम् च ।
वित्तम् तु अतीर्थी कृतम् अङ्ग वाचम् हीनाम् मया रक्षति दुःख दुःखी ॥

शब्दार्थ—					
गाम्	४.	गाय	वित्तम् तु	११.	धन तथा
दुग्ध	२.	जिसका दूध अन्तिमवार	अतीर्थीकृतम्	१०.	पवित्र न किया गया
दोहाम्	३.	दुहा जा चुका है ऐसी	अङ्ग	१.	हे श्रेष्ठ उद्धव ।
असतीम् च	५.	और व्यभिचारिणी	वाचम्	१३.	वाणी इनकी
भार्याम्	६.	स्त्री	हीनाम् मया	१२.	मेरे गुणों से रहित
देहम्पराधीनम्	७.	पराधीन शरीर	रक्षति	१४.	रखवाली करने वाला
असत्प्रजाम्	९.	दुष्ट पुत्र	दुःख	१५.	दुःख पर
च ।	८.	और	दुःखी ॥	१६.	दुःख भोगता है

श्लोकार्थ—हे श्रेष्ठ उद्धव ! जिसका दूध अन्तिमवार दुहा जा चुका है ऐसी गाय और व्यभिचारिणी स्त्री, पराधीन शरीर और दुष्ट पुत्र पवित्र न किया गया धन तथा मेरे गुणों से रहित वाणी इनकी रखवाली करने वाला दुःख पर दुःख भोगता है ॥

विंशः श्लोकः

यस्यां न मे पावनमङ्ग कर्म स्थित्युद्भवप्राणनिरोधमस्य ।
लीलावतारेप्सितजन्म वा स्याद् वन्ध्यां गिरं तां बिभृयान्न धीरः ॥२०॥

पदच्छेद—यस्याम् न मे पावनम् अङ्ग कर्म स्थिति उद्भव प्राण निरोधम् अस्य ।
लीला अवतार ईप्सित जन्म वा स्यात् बन्ध्याम् गिरम् ताम् बिभृयात् न धीरः ॥

शब्दार्थ—					
यस्याम्	२.	जिस वाणी में	लीला अवतार	९.	लीला अवतारों में भी
न	८.	न हो और	ईप्सित	१०.	मेरे लोक प्रिय राम कृष्णादि
मे पावनम्	६.	मेरी लोक पावन	जन्म वा	११.	अवतारों का अथवा
अङ्ग	१.	हे उद्धव !	स्यात्	१२.	यशो गान न हो
कर्म	७.	लीला का वर्णन	बन्ध्याम्गिरम्	१४.	मिथ्या वाणी का
स्थिति उद्भव	४.	स्थिति-उत्पत्ति और	ताम्	१३.	ऐसी
प्राण निरोधम्	५.	प्रलय रूप	बिभृयात् न	१६.	उच्चारण या श्रवण न करे
अस्य ।	३.	इस जगत की	धीरः ॥	१५.	बुद्धिमान पुरुष

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! जिस वाणी में इस जगत की स्थिति-उत्पत्ति और प्रलय रूप मेरी लोक पावन लीला का वर्णन न हो । अथवा लीला अवतारों में भी मेरे लोक प्रिय राम कृष्णादि अवतारों का यशो-गान न हो । ऐसी मिथ्या वाणी का बुद्धिमान पुरुष उच्चारण या श्रवण न करे ॥

एकविंशः श्लोकः

एवं जिज्ञासयापोह्य नानात्वभ्रममात्मनि ।
उपारमेत विरजं मनो मय्यर्प्य सर्वगे ॥२१॥

पदच्छेद— एवम् जिज्ञासया अपोह्य नानात्व भ्रमम् आत्मनि ।
उपारमेत विरजम् मनः मयि अर्प्य सर्वगे ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	उपारमेत	१२.	संसार से उपरत हो जाये
जिज्ञासया	२.	आत्मजिज्ञासा के द्वारा	विरजम्	६.	अपना निर्मल
अपोह्य	६.	दूर करके और	मनः	१०.	मन
नानात्वम्	४.	अनेकता का	मयि	७.	मुझ
भ्रमन्	५.	भ्रम	अर्प्य	११.	लगाकर
आत्मनि ।	३.	आत्मा में	सर्वगे ॥	८.	सर्वव्यापी परत्मामा में

श्लोकार्थ—इस प्रकार आत्मजिज्ञासा के द्वारा आत्मा में अनेकता का भ्रम दूर करके और मुझ सर्वव्यापी परत्मामा में अपना निर्मल मन लगा कर संसार से उपरत हो जाये ।।

द्वाविंशः श्लोकः

यद्यनीशो धारयितुं मनो ब्रह्मणि निश्चलम् ।
मयि सर्वाणि कर्माणि निरपेक्षः समाचर ॥२२॥

पदच्छेद— यदि अनीशो धारयितुम् मनः ब्रह्मणि निश्चलम् ।
मयि सर्वाणि कर्माणि निरपेक्षः समाचर ॥

शब्दार्थ—

यदि	१.	यदि	मयि	१०.	मेरे लिये
अनीशो	६.	समर्थ नहीं हो तो	सर्वाणि	८.	सारे
धारयितुम्	५.	स्थिर करने में	कर्माणि	९.	कर्म
मनः	२.	तुम अपना मन	निरपेक्षः	७.	निरपेक्ष होकर
ब्रह्मणि	४.	ब्रह्मतत्त्व में	समाचर ॥	११.	करो
निश्चलम् ।	३.	निश्चल			

श्लोकार्थ—यदि तुम अपना मन निश्चल ब्रह्मतत्त्व में स्थिर करने में समर्थ नहीं हो तो निरपेक्ष होकर सारे कर्म मेरे लिये करो ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

श्रद्धालुर्मे कथाः शृण्वन् सुभद्रा लोकपावनीः ।
गायन्ननुस्मरन् कर्म जन्म चाभिनयन् मुहुः ॥२३॥

पदच्छेद— श्रद्धालुः मे कथाः शृण्वन् सुभद्रा लोक पावनीः ।
गायन् अनुस्मरन् कर्म जन्म च अभिनयन् मुहुः ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धालुः	५.	श्रद्धा के साथ	गायन्	१०.	गान
मे	१.	मेरी	अनुस्मरन्	११.	स्मरण और
कथाः	२.	कथायें	कर्म	९.	लीलाओं का
शृण्वन्	६.	सुनना चाहिये (तथा)	जन्म च	८.	मेरे अवतार और
सुभद्रा	४.	कल्याण रूपिणी हैं उन्हें	अभिनयन्	१२.	अभिनय करना चाहिये
लोकपावनीः ।	३.	लोकों को पवित्र करने वाली एवम्	मुहुः ॥	७.	बारम्बार

श्लोकार्थ—मेरी कथायें लोकों को पवित्र करने वाली एवम् कल्याण रूपिणी हैं । उन्हें श्रद्धा के साथ सुनना चाहिये तथा बारम्बार मेरे अवतार और लीलाओं का गान, स्मरण और अभिनय करना चाहिये ।

चतुर्विंशः श्लोकः

मदर्थे धर्मकामार्थानाचरन् मदपाश्रयः ।
लभते निश्चलां भक्तिं मय्युद्धव सनातने ॥२४॥

पदच्छेद— मत् अर्थे धर्म काम अर्थान् आचरन् मत् अपाश्रयः ।
लभते निश्चलाम् भक्तिम् मयि उद्धव सनातने ॥

शब्दार्थ—

मत्	२.	मेरे	लभते	१२.	प्राप्त करता है
अर्थे	३.	ही लिये	निश्चलाम्	१०.	अनन्य प्रेममयी
धर्मकाम	४.	धर्म-काम और	भक्तिम्	११.	भक्ति को
अर्थान्	५.	अर्थ का	मयि	८.	मुझ
आचरन्	६.	सेवन करना चाहिये	उद्धव	७.	प्रिय उद्धव ! ऐसा करने वाला भक्त
मत्अपाश्रयः ।	१.	मेरे आश्रित रह कर	सनातने ॥	९.	अविनाशी पुरुष के प्रति

श्लोकार्थ—मेरे आश्रित रह कर मेरे ही लिये धर्म-काम और अर्थ का सेवन करना चाहिये । प्रिय उद्धव ! ऐसा करने वाला भक्त मुझ अविनाशी पुरुष के प्रति अनन्य प्रेममयी भक्ति को प्राप्त करता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

सत्सङ्गलब्धया भक्त्या मयि मां स उपासिता।
स वै मे दर्शितं सद्भिरञ्जसा विन्दते पदम् ॥२५॥

पदच्छेद— सत्सङ्ग लब्धया भक्त्या मयि माम् सः उपासिता।
सः वै मे दर्शितम् सद्भिः अञ्जसा विन्दते पदम् ॥

शब्दार्थ—

सत्सङ्ग	१.	सत्सङ्ग से	सः वै	८.	तब निश्चय ही वह
लब्धया	३.	प्राप्त	मे	११.	मेरे
भक्त्या	४.	भक्ति के द्वारा	दर्शितम्	१०.	दिखाये गये मार्ग से
मयि	२.	मुझ में	सद्भिः	९.	सन्तों के द्वारा
माम्	६.	मेरी	अञ्जसा	१३.	सहज ही
सः	५.	वह	विन्दते	१४.	प्राप्त हो जाता है
उपासिता।	७.	उपासना करते हैं	पदम् ॥	१२.	परम पद को

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! सत्सङ्ग से मुझ में प्राप्त भक्ति के द्वारा वह मेरी उपासना करता है तब निश्चय ही वह सन्तों के द्वारा दिखाये गये मार्ग से मेरे परम पद को सहज ही प्राप्त हो जाता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—साधुस्तवोत्तमश्लोक मतः कीदृग्विधः प्रभो।
भक्तिस्त्वय्युपयुज्येत कीदृशी सद्भिरादृता ॥२६॥

पदच्छेद— साधुः तव उत्तमश्लोक मतः कीदृग्विधः प्रभो।
भक्तिः त्वयि उपयुज्येत कीदृशी सद्भिः आदृता ॥

शब्दार्थ—

साधुः	५.	सन्त पुरुष का	भक्तिः	९.	भक्ति
तव	२.	आपके	त्वयि	७.	आपके प्रति
उत्तमश्लोक	४.	पवित्र कीर्ति	उपयुज्यते	१०.	करनी चाहिये
मतः	३.	विचार से	कीदृशी	८.	कैसी
कीदृग्विधः	६.	क्या लक्षण है	सद्भिः	११.	जिसका सन्त लोग
प्रभो।	१.	हे भगवन् !	आदृता ॥	१२.	आदर करते हैं

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपके विचार से पवित्र कीर्ति सन्त पुरुष का क्या लक्षण है। आपके प्रति कैसी भक्ति करनी चाहिये। जिसका सन्त लोग आदर करते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

एतन्मे पुरुषाध्यक्ष लोकाध्यक्ष जगत्प्रभो ।
प्रणतायानुरक्ताय प्रपन्नाय च कथ्यताम् ॥२७॥

पदच्छेद— एतत् मे पुरुष अध्यक्ष लोक अध्यक्ष जगत् प्रभो ।
प्रणताय अनुरक्ताय प्रपन्नाय च कथ्यताम् ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१०.	यह सब रहस्य	प्रणताय	६.	विनीत
मे	५.	मुझ	अनुरक्ताय	७.	प्रेमी
पुरुष अध्यक्ष	१.	हे ब्रह्मादि देवों के स्वामी	प्रपन्नाय	९.	शरणागत भक्त से
लोक अध्यक्ष	२.	सत्यादि लोकों के रक्षक	च	८.	और
जगत्	३.	चराचर जगत् के	कथ्यताम् ॥	१०.	बताइये
प्रभो ।	४.	पालक आप			

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मादि देवों के स्वामी, सत्यादि लोकों के रक्षक चराचर जगत के पालक, आप मुझ विनीत प्रेमी और शरणागत भक्त से यह सब रहस्य बताइये ॥

अष्टविंशः श्लोकः

त्वं ब्रह्म परमं व्योम पुरुषः प्रकृतेः परः ।
अवतीर्णोऽसि भगवन् स्वेच्छोपात्तपृथग्वपुः ॥२८॥

पदच्छेद— त्वम् ब्रह्म परमम् व्योम पुरुषः प्रकृतेः परः ।
अवतीर्णो असि भगवन् स्वेच्छः उपात्त पृथक् वपुः ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	२.	आप	अवतीर्णो असि	१०.	अवतार लिया है
ब्रह्म	५.	ब्रह्म और	भगवन्	१.	हे भगवन्
परमम्	४.	पर	स्वेच्छः	७.	आपने लीला के लिये हो
व्योम पुरुषः	६.	आकाश स्वरूप हैं	उपात्त	९.	धारण करके यह
प्रकृतेः परः ।	३.	प्रकृति से परे	पृथक् वपुः ॥	८.	अलग शरीर

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आप प्रकृति से परे पर ब्रह्म और आकाश स्वरूप हैं । आपने लीला के लिये ही अलग शरीर धारण करके यह अवतार लिया है ॥

एकोनत्रिंश: श्लोक:

श्रीभगवानुवाच—कृपालुरकृतद्रोहस्तितिक्षुः सर्वदेहिनाम् ।
सत्यसारोऽनवद्यात्मा समः सर्वोपकारकः ॥२९॥

पदच्छेद— कृपालुः अकृत द्रोहः तितिक्षुः सर्व देहिनाम् ।
सत्यसारः अनवद्य आत्मा समः सर्व उपकारकः ॥

शब्दार्थ—

कृपालुः	१.	मेरा भक्त कृपा	सत्यसारः	७.	सत्य को ही सार समझने वाला
अकृत	२.	करने वाला	अनवद्य	८.	शुद्ध
द्रोहः	३.	किसी से द्रोह न करने वाला	आत्मा	९.	मनवाला
तितिक्षुः	६.	सहनशील होता है	समः	१०.	समदर्शी और
सर्व	४.	समस्त	सर्व	११.	सबका
देहिनाम् ।	५.	शरीरधारियों के प्रति	देहिनाम् ॥	१२.	भला करने वाला होता है

श्लोकार्थ—मेरा भक्त कृपा करने वाला किसी से द्रोह न करने वाला समस्त शरीरधारियों के प्रति सहनशील होता है। सत्य को ही सार समझने वाला शुद्ध मनवाला समदर्शी और सबका भला करने वाला होता है ॥

त्रिंश: श्लोक:

कामैरहतधीर्दान्तो मृदुः शुचिरकिञ्चनः ।
अनीहो मितभुक् शान्तः स्थिरो मच्छरणो मुनिः ॥३०॥

पदच्छेद— कामैः अहतधीः दान्तः मृदुः शुचिः अकिञ्चनः ।
अनीहः मितभुक् शान्तः स्थिरः मत् शरणः मुनिः ॥

शब्दार्थ—

कामैः	३.	कामनाओं से	अनीहः	९.	इच्छाओं से रहित
अहतधीः	४.	रहित बुद्धि वाला	मितभुक्	१०.	कम भोजन करने वाला
दान्तः	५.	संयमी	शान्तः	११.	शान्त चित्त और
मृदुः	६.	मधुर स्वभाव वाला	स्थिरः	१२.	स्थिर बुद्धि होता है
शुचिः	७.	पवित्र	मत्	१.	मेरी
अकिञ्चनः ।	८.	संग्रह से रहित और	शरणः मुनिः ॥	२.	शरण लेने वाला भक्त

श्लोकार्थ—मेरी शरण लेने वाला भक्त कामनाओं से रहित बुद्धि वाला, संयमी, मधुर स्वभाव वाला, पवित्र, संग्रह से रहित और इच्छाओं से रहित, कम भोजन करने वाला, शान्तचित्त और स्थिर बुद्धि होता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

अप्रमत्तो गभीरात्मा धृतिमाञ्जितषड्गुणः ।
अमानी मानदः कल्पो मैत्रः कारुणिकः कविः ॥३१॥

पदच्छेद— अप्रमत्तः गभीरात्मा धृतिमान् जित षड् गुणः ।
अमानी मानदः कल्पः मैत्रः कारुणिकः कविः ॥

शब्दार्थ—

अप्रमत्तः	१.	वह प्रमाद रहित	अमानी	७.	स्वयं मान न चाहने वाला
गभीरात्मा	२.	गम्भीर स्वभाव वाला	मानदः	८.	दूसरों को मान देने वाला
धृतिमान्	३.	धैर्यवान् होता है	कल्पः	९.	मेरे गुणों को बताने में निपुण
जित	६.	उसके वश में होते हैं	मैत्रः	१०.	सबका मित्र
षड्	४.	भूख-प्यास शोक मोह जन्म मृत्यु आदिछओं	कारुणिकः	११.	करुणा से युक्त
गुणः ।	५.	गुण	कविः ॥	१२.	मेरे यथार्थ तत्त्व को जानने वाला होता है

श्लोकार्थ—वह प्रमाद रहित गम्भीर स्वभाववाला और धैर्यवान् होता है । भूख-प्यास शोक-मोह जन्म मृत्यु आदिछओं गुण उसके वश में होते हैं । स्वयं मान न चाहने वाला, दूसरों को मान देने वाला, मेरे गुणों को बताने में निपुण सबका मित्र करुणा से युक्त मेरे यथार्थ तत्त्व को जानने वाला होता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

आज्ञायैवं गुणान् दोषान् मयादिष्टानपि स्वकान् ।
धर्मान् सन्त्यज्य यः सर्वान् मां भजेत स सत्तमः ॥३२॥

पदच्छेद— आज्ञाय एवम् गुणान् दोषान् मया आदिष्टान् अपि स्वकान् ।
धर्मान् सन्त्यज्य यः सर्वान् माम् भजेत स सत्तमः ॥

शब्दार्थ—

आज्ञाय	६.	समझ कर	धर्मान्	१०.	धर्मों को
एवम्	१.	इस प्रकार	सन्त्यज्य	११.	त्यागकर
गुणान्	४.	गुणों और	यः	७.	जो
दोषान्	५.	दोषों को	सर्वान्	९.	इन सभी
मया	२.	मेरे द्वारा	माम्	१२.	मेरा
आदिष्टान्	३.	बताये गये	भजेत	१३.	भजन करता है
अपिस्वकान् ।	८.	भी अपने	सः सत्तमः ॥	१४.	वह परम सन्त है

श्लोकार्थ—इस प्रकार मेरे द्वारा बताये गये गुणों और दोषों को समझकर जो भी अपने इन सभी धर्मों को त्याग कर मेरा भजन करता है, वह परम सन्त है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ज्ञात्वाज्ञात्वाथ ये वै मां यावान् यश्चास्मि यादृशः ।
भजन्त्यनन्यभावेन ते मे भक्ततमा मताः ॥३३॥

पदच्छेद— ज्ञात्वा अज्ञात्वा अथ ये वैमाम् यावान् यः च अस्मि यादृशः ।
भजन्ति अनन्य भावेन ते मे भक्ततमाः मताः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञात्वा	५. जानकर	भजन्ति	९. मेरा भजन करते हैं
अज्ञात्वाअथ	६. न जानकर या	अनन्य	७. अनन्य
ये वै माम्	४. जो मुझे	भावेन	८. भाव से
यावान्	२. कितना बड़ा हूँ और	ते मे	१०. वे मेरे विचार से
यः च अस्मिः	१. मैं कौन हूँ	भक्ततमाः	१०. परम भक्त
यादृशः ।	३. कैसा हूँ इस प्रकार	मताः ॥	१२. कहे जाते हैं

श्लोकार्थ—मैं कौन हूँ, कितना बड़ा हूँ और कैसा हूँ इस प्रकार जो मुझे जानकर या न जानकर अनन्य भाव से मेरा भजन करते हैं । वे मेरे विचार से परम भक्त कहे जाते हैं ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मल्लिङ्गमद्भक्तजनदर्शनस्पर्शनार्चनम् ।
परिचर्या स्तुतिः प्रह्वगुणकर्मानुकीर्तनम् ॥३४॥

पदच्छेद— मत् लिङ्ग मत् भक्त जन दर्शन स्पर्शन अर्चनम् ।
परिचर्या स्तुतिः प्रह्व गुण कर्म अनुकीर्तनम् ॥

शब्दार्थ—

मत् लिङ्ग	१. मेरी मूर्ति और	परिचर्या	६. सेवा शुश्रुषा
मद्भक्तजन	२. मेरे भक्त जनों का	स्तुतिः	७. स्तुति और
दर्शन	३. दर्शन	प्रह्वगुण	८ प्रणाम करे तथा मेरे गुण
स्पर्शन	४. स्पर्श	कर्म	९. और कर्मों का
अर्चनम् ।	५. पूजा	अनुकीर्तनम् ॥	१०. कीर्तन करे

श्लोकार्थ—मेरी मूर्ति और मेरे भक्तजनों का दर्शन स्पर्श, पूजा, सेवा, शुश्रुषा, स्तुति और प्रणाम करे तथा मेरे गुण और नामों और कर्मों का कीर्तन करे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोक

मत्कथाश्रवणे श्रद्धा मदनुध्यानमुद्धव ।
सर्वलाभोपहरणं दास्येनात्मनिवेदनम् ॥३५॥

पदच्छेद— मत् कथा श्रवणे श्रद्धा मत् अनुध्यानम् उद्धव ।
सर्वलाभः उपहरणम् दास्येन आत्म निवेदनम् ॥

शब्दार्थ—

मत्कथा	२.	मेरी कथा	सर्व	७.	समस्त
श्रवणे	३.	सुनने में	लाभः	८.	उपलब्धियों को
श्रद्धा	४.	श्रद्धा रखे और	उपहरणम्	१०.	मेरे प्रति अर्पित करके
मत्	५.	मेरा	दास्येन	९.	दास्य भाव से
अनुध्यानम्	६.	निरन्तर ध्यान करता रहे	आत्म	११.	आत्मा को
उद्धव ।	१	हे उद्धव !	निवेदनम् ॥	१२.	मुझे अर्पण कर दे

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! मेरी कथा सुनने में श्रद्धा रखे और मेरा निरन्तर ध्यान करता रहे । समस्त उपलब्धियों को दास्यभाव से मेरे प्रति अर्पित करके आत्मा को मुझे अर्पण कर दे ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

मज्जन्मकर्मकथनं मम पर्वानुमोदनम् ।
गीतताण्डववादित्रगोष्ठीभिर्मद्गृहोत्सवः ॥३६॥

पदच्छेद— मत् जन्म कर्म कथनम् मम पर्व अनुमोदनम् ।
गीत ताण्डव वादित्र गोष्ठीभिः मत् गृह उत्सवः ॥

शब्दार्थ—

मत् जन्म	१.	मेरे दिव्य जन्म	गीत	७.	तथा संगीत आदि
कर्म	२.	और कर्मों की	ताण्डव	८.	नृत्य
कथनम्	३.	चर्चा करे	वादित्र	९.	बाजे और
मम	४.	मेरे	गोष्ठीभिः	१०.	समाजों द्वारा
पर्व	५.	जन्माष्टमी आदि पर्वों पर	मत् गृह	११.	मेरे मन्दिरों में
अनुमोदनम् ।	६.	आनन्द मनावे और	उत्सवः ॥	१२.	उसव करे और करावे

श्लोकार्थ—मेरे दिव्य जन्म और कर्मों की चर्चा करे, मेरे जन्माष्टमी आदि पर्वों पर आनन्द मनावे । तथा संगीत आदि नृत्य बाजे तथा समाजों द्वारा मेरे मन्दिरों में उत्सव करे व करावे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

यात्रा बलिविधानंच सर्ववार्षिकपर्वसु।
वैदिकी तान्त्रिकी दीक्षा मदीयव्रतधारणम् ॥३७॥

पदच्छेद— यात्रा बलि विधानम् च सर्व वार्षिक पर्वसु।
वैदिकी तान्त्रिकी दीक्षा मदीय व्रतधारणम् ॥

शब्दार्थ—

यात्रा	३. मेरे स्थानों की यात्रा करे	वैदिकी	६.	वैदिक अथवा
बलिविधानम्	५. उपहारों से मेरी पूजा करे	तान्त्रिकी	७.	तान्त्रिकी पद्धति से
च सर्व	४. और विविध	दीक्षा	८.	दीक्षा ग्रहण करके
वार्षिक	१. वार्षिकी	मदीय	९.	मेरे
पर्वसु।	२. त्योहारों के दिन	व्रतधारणम् ॥	१०.	व्रतों का पालन करे

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! वार्षिकी त्योहारों के दिन मेरे स्थानों की यात्रा करे। और विविध उपहारों से मेरी पूजा करे। वैदिक अथवा तान्त्रिकी पद्धति से दीक्षा ग्रहण करके मेरे व्रतों का पालन करे ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

ममार्चास्थापने श्रद्धा स्वतः संहत्य चोद्यमः।
उद्यानोपवनाक्रीडपुरमन्दिरकर्मणि ॥३८॥

पदच्छेद— मम अर्चा स्थापने श्रद्धा स्वतः संहत्य च उद्यमः।
उद्यान उपवन आक्रीड पुर मन्दिर कर्मणि ॥

शब्दार्थ—

मम	१. मेरी	उद्यान	६.	मेरे लिये पुष्प वाटिका
अर्चा	२. मूर्तियों की	उपवन	७.	बगीचे
स्थापने	३. स्थापना में	आक्रीड	८.	क्रीडा के स्थान
श्रद्धा स्वयं	४. स्वयं श्रद्धा रखे	पुर	९.	नगर और
संहत्य च	५. अथवा लोगों के साथ मिलकर	मन्दिर	१०.	मन्दिर
उद्यमः।	१२. प्रयत्न करे	कर्मणि ॥	११.	बनवाने के कामों में

श्लोकार्थ—मेरी मूर्तियों की स्थापना में स्वयं श्रद्धा रखे, अथवा लोगों के साथ मिलकर मेरे लिए पुष्प वाटिका, बगीचे, क्रीडा के स्थान, नगर और मन्दिर बनवाने के कामों में प्रयत्न करे ॥

एकोनचत्वारिंश: श्लोकः

संमार्जनोपलेपाभ्यां सेकमण्डलवर्तनैः ।
गृहशुश्रूषणं मह्यं दासवद् यदमायया ॥३९॥

पदच्छेद— संमार्जन उपलेपाभ्यां सेकमण्डल वर्तनैः ।
गृह शुश्रूषणम् मह्यम् दासवत् यत् अमायया ॥

शब्दार्थ—

संमार्जन	७. झाड़े-बुहारे		शुश्रूषणम्	६. सेवा शुश्रूषा करे
उपलेपाभ्याम्	८. लीपे-पोते		मह्यम्	४. मेरे
सेकमण्डलम्	९. छिड़काव करे		दासवत्	१. सेवक के स्थान
वर्तनैः ।	१०. तरह-तरह के चौक पूरे		यत्	२. भक्त
गृह	५. मन्दिरों की		अमायया ।।	३. निष्कपट भाव से

श्लोकार्थ--सेवक के समान भक्त निष्कपट भाव से मेरे मन्दिरों की सेवा शुश्रूषा करे। झाड़े-बुहारे, लीपे-पोते, छिड़काव करे, तरह-तरह के चौक पूरे ।।

चत्वारिंश: श्लोकः

अमानित्वमदम्भित्वं कृतस्यापरिकीर्तनम् ।
अपि दीपावलोकं मे नोपयुञ्ज्यान्निवेदितम् ॥४०॥

पदच्छेद— अमानित्वम् अदम्भित्वम् कृतस्य अपरिकीर्तनम् ।
अपि दीप अवलोकम् मे न उपयुञ्ज्यात् निवेदितम् ।।

शब्दार्थ—

अमानित्वम्	१. अभिमान न करे	दीपअवलोकम्	७. दीपक के प्रकाश का
अदम्भित्वम्	२. दम्भ न करे	मे	५. मुझे
कृतस्य	३. अपने शुभ कर्मों का	न	९. न
अपरिकीर्तनम् ।	४. बखान न करे	उपयुञ्जयात्	६. चढ़ाये गये
अपि	८. भी	निवेदितम् ।।	१०. उपभोग करे

श्लोकार्थ--हे उद्धव ! अभिमान न करे, दम्भ न करे, अपने शुभ कर्मों का बखान न करे। मुझे चढ़ाये गये दीपक के प्रकाश का भी उपभोग न करे ।।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

यद् यदिष्टतमं लोके यच्चातिप्रियमात्मनः।
तत्तन्निवेदयेन्मह्यं तदानन्त्याय कल्पते ॥४१॥

पदच्छेद— यत्-यत् इष्ट तमम् लोके यत् च अति प्रियम् आत्मनः।
तत्-तत् निवेदयेत् मह्यम् तत् आनन्त्याय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

यत्-यत्	२.	जो-जो वस्तु	तत्-तत्	८.	वह-वह वस्तु
इष्ट	४.	अभीष्ट	निवेदयेत्	१०.	समर्पित करदे इससे
तमम्	३.	सबसे	मह्यम्	९.	मुझे
लोके	१.	संसार में	तत्	११.	वह वस्तु
यत् च	५.	और जो	आनन्त्याय	१२.	अनन्त फल वाली
अतिप्रियम्	७.	सबसे प्रिय लगे	कल्पते ॥	१३.	हो जाती है
आत्मनः।	६.	अपने को			

श्लोकार्थ—संसार में जो-जो वस्तु सबसे अभीष्ट और जो अपने को सबसे प्रिय लगे। वह-वह वस्तु मुझे समर्पित कर दे। इससे वह वस्तु अनन्त फल वाली हो जाती है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

सूर्योऽग्निर्ब्राह्मणो गावो वैष्णवः खं मरुज्जलम्।
भूरात्मा सर्वभूतानि भद्र पूजापदानि मे ॥४२॥

पदच्छेद— सूर्यः अग्निः ब्राह्मणः गावः वैष्णवः खम् मरुत् जलम्।
भूः आत्मा सर्वभूतानि भद्र पूजा पदानि मे ॥

शब्दार्थ—

सूर्यः अग्नि	२.	सूर्य-अग्नि	भूः आत्मा	८.	पृथ्वी-आत्मा और
ब्राह्मणः	३.	ब्राह्मण	सर्वभूतानि	९.	समस्त प्राणी ये सब
गावः	४.	गौ	भद्र	१.	हे भद्र ! उद्धव
वैष्णवः खम्	५.	वैष्णव-आकाश	पूजा	११.	पूजा के
मरुत्	६.	वायु	पदानि	१२.	स्थान हैं
जलम्।	७.	जल	मे ॥	१०.	मेरी

श्लोकार्थ—हे भद्र ! उद्धव सूर्य, अग्नि, ब्राह्मण, गौ, वैष्णव, आकाश, वायु, जल, पृथ्वी आत्मा और समस्त प्राणी ये सब मेरी पूजा के स्थान हैं ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

सूर्ये तु विद्यया त्रय्या हविषाग्नौ यजेत माम् ।
आतिथ्येन तु विप्राग्र्ये गोष्वङ्ग यवसादिना ॥४३॥

पदच्छेद— सूर्ये तु विद्यया त्रय्या हविषाग्नौ यजेत माम् ।
आतिथ्येन तु विप्राग्र्ये गोषु अङ्ग यवस आदिना ॥

शब्दार्थ—

सूर्ये तु	४.	सूर्य में और	आतिथ्येन	८.	आतिथ्य के द्वारा
विद्यया	३.	मन्त्रों के द्वारा	तु विप्राग्र्ये	९.	श्रेष्ठ ब्राह्मणों में
त्रय्या	२.	ऋग्वेद-यजुर्वेद-सामवेद के	गोषु	१२.	गौ में मेरी पूजा करनी चाहिये
हविषाग्नौ	५.	हवन के द्वारा अग्नि में	अङ्ग	१.	हे प्यारे उद्धव !
यजेत	७.	पूजा करनी चाहिये	यवस	१०.	हरी-हरी घास
माम् ।	६.	मेरी	आदिना ॥	११.	आदि के द्वारा

श्लोकार्थ—हे प्यारे उद्धव ! ऋग्वेद-यजुर्वेद-सामवेद के मन्त्रों के द्वारा सूर्य में और हवन के द्वारा अग्नि में मेरी पूजा करनी चाहिये । आतिथ्य के द्वारा श्रेष्ठ ब्राह्मणों में हरी-हरी घास आदि के द्वारा गौ में मेरी पूजा करनी चाहिये ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

वैष्णवे बन्धुसत्कृत्या हृदि खे ध्याननिष्ठया ।
वायौ मुख्यधिया तोये द्रव्यैस्तोयपुरस्कृतैः ॥४४॥

पदच्छेद— वैष्णवे बन्धु सत्कृत्या हृदि खे ध्यान निष्ठया ।
वायौ मुख्यधिया तोये द्रव्यैः तोय पुरस्कृतैः ॥

शब्दार्थ—

वैष्णवे	३.	वैष्णव में	वायौ	८.	वायु में तथा
बन्धु	१.	भाई बन्धु के समान	मुख्यधिया	७.	मुख्य प्राण समझने से
सत्कृत्या	२.	सत्कार के द्वारा	तोये	१२.	जल में मेरी आराधना की जाती है
हृदि	५.	हृदय	द्रव्यैः	१०.	पुष्प
खे	६.	आकाश में	तोय	९.	जल
ध्याननिष्ठया ।	४.	निरन्तर ध्यान में लगे रहने से	पुरस्कृतैः ॥	११.	आदि सामग्रियों के द्वारा

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! भाई बन्धु के समान सत्कार के द्वारा वैष्णव में निरन्तर ध्यान में लगे रहने से हृदयाकाश में, मुख्य प्राण समझने से वायु में तथा जल-पुष्प आदि सामग्रियों के द्वारा जल में मेरी आराधना की जाती है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

स्थण्डिले मन्त्रहृदयैर्भोगैरात्मानमात्मनि ।
क्षेत्रज्ञं सर्वभूतेषु समत्वेन यजेत माम् ।। ४५।।

पदच्छेद— स्थण्डिले मन्त्र हृदयैः भोगैः आत्मानम् आत्मनि ।
क्षेत्रज्ञम् सर्व भूतेषु समत्वेन यजेत माम् ।।

शब्दार्थ—

स्थण्डिले	३	मिट्टी की वेदी में	क्षेत्रज्ञम्	१०.	क्योंकि मैं सभी में क्षेत्रज्ञ
मन्त्र	२.	मन्त्रों द्वारा न्यास करके	सर्वभूतेषु	७.	सम्पूर्ण प्राणियों में
हृदयैः	१.	गुप्त	समत्वेन	६.	समदृष्टि के द्वारा
भोगैः	४.	उपयुक्त भोगों द्वारा	यजेत	९.	आराधना करनी चाहिये
आत्मानम्	११.	आत्मा के रूप में स्थित हूँ	माम् ।।	८.	मेरी
आत्मनि ।	५.	आत्मा में और			

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! गुप्त मन्त्रों के द्वारा न्यास करके मिट्टी की वेदी में उपयुक्त भोगों द्वारा आत्मा में और समदृष्टि के द्वारा सम्पूर्ण प्राणियों में मेरी आराधना करनी चाहिये । क्योंकि मैं सभी में क्षेत्रज्ञ आत्मा के रूप में स्थित हूँ ।।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

धिष्ण्येष्वेष्विति मद्रूपं शङ्खचक्रगदाम्बुजैः ।
युक्तं चतुर्भुजं शान्तं ध्यायन्नर्चेत् समाहितः ।।४६।।

पदच्छेद— धिष्ण्येषु एषु इति मद् रूपम् शङ्ख चक्र गदा अम्बुजैः ।
युक्तम् चतुर्भुजम् शान्तम् ध्यायन् अर्चेत् समाहितः ।।

शब्दार्थ—

धिष्ण्येषु	१.	ऐसी बुद्धि से	युक्तम्	६.	धारण किये हुये
एषु इति	२.	मन्त्रों के द्वारा इस प्रकार	चतुर्भुजम्	७.	चार भुजाओं वाले
मद् रूपम्	९.	मेरे स्वरूप का	शान्तम्	८.	शान्त मूर्ति
शङ्ख	३.	शङ्ख	ध्यायन्	११.	ध्यान करते हुये
चक्रगदा	४.	चक्र-गदा और	अर्चेत्	१२.	पूजन करें
अम्बुजैः ।	५.	पद्म	समाहितः ।।	१०.	एकाग्रता के साथ

श्लोकार्थ—ऐसी बुद्धि से मन्त्रों के द्वारा इस प्रकार शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म धारण किये हुये चार भुजाओं वाले शान्त मूर्ति मेरे स्वरूप का एकाग्रता के साथ ध्यान करते हुये पूजन करें ।।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

इष्टापूर्तेन मामेवं यो यजेत समाहितः ।
लभते मयि सद्भक्तिं मत्स्मृतिः साधुसेवया ॥४७॥

पदच्छेद—　इष्ट आपूर्तेन माम् एवम् यः यजेत समाहितः ।
लभते मयि सद्भक्तिम् मत्स्मृतिः साधु सेवया ॥

शब्दार्थ—

इष्टा	३.	यज्ञ यागादि इष्ट और	लभते	९.	प्राप्त होती है और
आपूर्तेन	४.	पूर्त कर्मों के द्वारा	मयि	७.	उसे मेरी
माम्	५.	मेरी	सद्भक्तिम्	८.	श्रेष्ठ भक्ति
एवम् यः	१.	इस प्रकार जो मनुष्य	मत्स्मृतिः	१२.	मेरे स्वरूप का ज्ञान भी हो जाता है
यजेत	६.	पूजा करता है	साधु	१०.	सन्त पुरुषों की
समाहितः ।	२.	एकाग्रचित्त से	सेवया ॥	११.	सेवा करने से

श्लोकार्थ—इस प्रकार जो मनुष्य एकाग्रचित्त से यज्ञ यागादि इष्ट और पूर्त कर्मों के द्वारा मेरी पूजा करता है । उसे मेरी श्रेष्ठ भक्ति प्राप्त होती है और सन्त पुरुषों की सेवा करने से मेरे स्वरूप का ज्ञान भी हो जाता है ॥

अष्टाचत्वारिंशः श्लोकः

प्रायेण भक्तियोगेन सत्सङ्गेन विनोद्धव ।
नोपायो विद्यते सध्र्यङ् प्रायणं हि सतामहम् ॥४८॥

पदच्छेद—　प्रायेण भक्ति योगेन सत्सङ्गेन बिना उद्धव ।
न उपायः विद्यते सध्र्यङ् प्रायणम् हि सताम् अहम् ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	२.	प्रायः	न उपायः	८.	कोई उपाय नहीं
भक्ति	३.	भक्ति	विद्यते	९.	प्राप्त होता है
योगेन	४.	योग और	सध्र्यङ्	७.	संसार सागर से पार होने का
सत्सङ्गेन	५.	सत्सङ्ग के	प्रायणम्	१२.	आश्रय मानते हैं
बिना	६.	अलावा	हि सताम्	१०.	क्योंकि सन्त पुरुष
उद्धव ।	१.	हे प्यारे उद्धव !	अहम् ॥	११.	मुझे अपना

श्लोकार्थ—हे प्यारे उद्धव ! प्रायः भक्ति योग और सत्सङ्ग के अलावा संसार-सागर से पार होने का कोई उपाय प्राप्त नहीं होता है । क्योंकि सन्त पुरुष मुझे अपना आश्रय मानते है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

अथैतत् परमं गुह्यं शृण्वतो यदुनन्दन।
सुगोप्यमपि वक्ष्यामि त्वं मे भृत्यः सुहृत् सखा ॥४९॥

पदच्छेद— अथ एतद् परमम् गुह्यम् शृण्वतः यदुनन्दन।
सुगोप्यम् अपि वक्ष्यामि त्वम् मे भृत्यः सुहृत् सखा ॥

शब्दार्थ—

अथ	३.	अब मैं तुम्हें	सुगोप्यम्	७.	परम रहस्य की
एतद्	४.	यह	अपिवक्ष्यामि	८.	भी बात बताता हूँ
परमम्	५.	अत्यन्त	त्वम् मे	९.	क्योंकि तुम मेरे
गुह्यम्	६.	गोपनीय	भृत्यः	१०.	प्रिय सेवक
शृण्वतः	२.	सुनो	सुहृत्	११.	हितैषी
यदुनन्दन।	१.	हे प्यारे उद्धव !	सखा ॥	१२.	प्रेमी सखा हो

श्लोकार्थ—हे प्यारे उद्धव ! सुनो अब मैं तुम्हें यह अत्यन्त गोपनीय परम रहस्य की भी बात बताता हूँ। क्योंकि तुम मेरे प्रिय सेवक, हितैषी और प्रेमी सखा हो।

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे एकादशः अध्यायः ॥ ८ ॥

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

द्वादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—न रोधयति मां योगो न साङ्ख्यं धर्म एव च।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो नेष्टापूर्तं न दक्षिणा ॥१॥

पदच्छेद— न रोधयति माम् योगः न सांख्यम् धर्म एव च।
न स्वाध्यायः तपः त्यागः न इष्टापूर्तम् न दक्षिणा ॥

शब्दार्थ—

न	२. इस प्रकार नहीं	न स्वाध्यायः	७. न स्वाध्याय
रोधयति	३. वश में कर पाता है और	तपः	८. न तपस्या
माम् योगः	१. मुझे योग	त्यागः	९. न त्याग
न सांख्यम्	४. न सांख्य या	न इष्टापूर्तम्	१०. न इष्टापूर्त और
धर्म	५. धर्म पालन ही	न	११. न ही
एव च।	६. वश में कर पाता है	दक्षिणा ॥	१२. दक्षिणा ही कर पाती है

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! मुझे योग इस प्रकार नहीं वश में कर पाता है और न सांख्य या धर्म पालन ही वश में कर पाता है। न स्वाध्याय, न तपस्या, न त्याग, न इष्टा पूर्त और न हीं दक्षिणा ही कर पाती है ॥

द्वितीयः श्लोकः

व्रतानि यज्ञश्छन्दांसि तीर्थानि नियमा यमाः।
यथावरुन्धे सत्सङ्गः सर्वसङ्गापहो हि माम् ॥२॥

पदच्छेद— व्रतानि यज्ञः छन्दांसि तीर्थानि नियमाः यमाः।
यथा अवरुन्धे सत्सङ्गः सर्वसङ्ग अपहः हि माम् ॥

व्रतानि	१. व्रत	यथा	८. जिस प्रकार
यज्ञः	२. यज्ञ	अवरुन्धे	१२. वश में कर लेता है
छन्दांसि	३. वेद	सत्सङ्गः	११. सत्सङ्ग मुझे
तीर्थानि	४. तीर्थ और	सर्वसङ्ग	९. समस्त आसक्तियों को
नियमाः	६. नियम भी	अपहः	१०. नष्ट करने वाला
यमः।	५. यम	हि माम् ॥	७. मुझे वश में नहीं कर पाते हैं

श्लोकार्थ—हे प्रिय उद्धव ! व्रत, यज्ञ, वेद, तीर्थ और यम, नियम भी मुझे वश में नहीं कर पाते हैं। जिस प्रकार समस्त आसक्तियों को नष्ट करने वाला सत्सङ्ग मुझे वश में कर लेता है ॥

तृतीयः श्लोकः

सत्सङ्गेन हि दैतेया यातुधाना मृगाः खगाः ।
गन्धर्वाप्सरसो नागाः सिद्धाश्चारणगुह्यकाः ॥३॥

पदच्छेद— सत्सङ्गेन हि दैतेया यातुधानाः मृगाः खगाः ।
गन्धर्व अप्सरसः नागाः सिद्धाः चारण गुह्यकाः ॥

शब्दार्थ—

सत्सङ्गेन हि	१.	सत्सङ्ग के द्वारा ही	गन्धर्व	६.	गन्धर्व
दैतेया	२.	दैत्य	अप्सरसः	७.	अप्सरा
यातुधानाः	३.	राक्षस	नागाः	८.	नाग
मृगाः	४.	पशु	सिद्धाः	९.	सिद्ध
खगाः	५.	पक्षी	चारण	१०.	चारण और
			गुह्यकाः ॥	११.	गुह्यकों को मेरी प्राप्ति हुई है

श्लोकार्थ—सत्सङ्ग के द्वारा ही दैत्य, राक्षस, पशु, पक्षी, गन्धर्व, अप्सरा नाग, सिद्ध, चारण और गुह्यकों को मेरी प्राप्ति हुई है ॥

चतुर्थः श्लोकः

विद्याधरा मनुष्येषु वैश्याः शूद्राः स्त्रियोऽन्त्यजाः ।
रजस्तमःप्रकृतयस्तस्मिंस्तस्मिन् युगेऽनघ ॥४॥

पदच्छेद— विद्याधराः मनुष्येषु वैश्याः शूद्राः स्त्रियः अन्त्यजाः ।
रजः तमः प्रकृतयः तस्मिन् तस्मिन् युगे अनघ ॥

शब्दार्थ—

विद्याधराः	५.	विद्याधरों	रजः तमः	११.	रजोगुणी-तमोगुणी
मनुष्येषु	६.	मनुष्यों में	प्रकृतयः	१२.	प्रकृति के जीवों को मेरी प्राप्ति हुई है
वैश्याः	७.	वैश्य	तस्मिन्	२.	उन
शूद्राः	८.	शूद्र	तस्मिन्	३.	उन
स्त्रियः	९.	स्त्री और	युगे	४.	युगों में
अन्त्यजाः ।	१०.	अन्त्यज आदि	अनघ ॥	१.	हे निष्पाप उद्धव जी !

श्लोकार्थ—हे निष्पाप उद्धव जी ! उन-उन युगों में विद्याधरों, मनुष्यों में वैश्य शूद्र, स्त्री और अन्त्यज आदि रजोगुणी, तमोगुणी प्रकृति के जीवों को मेरी प्राप्ति हुई है ॥

पञ्चमः श्लोकः

बहवो मत्पदं प्राप्तास्त्वाष्ट्रकायाधवादयः ।
वृषपर्वा बलिर्बाणो मयश्चाथ विभीषणः ॥५॥

पदच्छेद— बहवः मत् पदम् प्राप्ताः त्वाष्ट्र कायाधव आदयः ।
वृषपर्वा बलिः बाणः मयः च अथ विभीषणः ॥

शब्दार्थ—

बहवः	११.	बहुत से लोगों ने	वृषपर्वा	४.	वृषपर्वा
मत्	१२.	सत्सङ्ग से मेरे	बलि	५.	बलि
पदम्	१३.	स्थान को	बाणः	६.	बाणासुर
प्राप्ताः	१४.	प्राप्त किया है	मयः	७.	मय दानव
त्वाष्ट्र	१.	वृत्रासुर	च	९.	और
कायाधव	२.	प्रह्लाद	अथ	८.	तथा
आदयः ।	३.	आदि	विभीषणः ॥	१०.	विभीषण

श्लोकार्थ—वृत्रासुर, प्रह्लाद आदि वृषपर्वा, बलि, बाणासुर, मय दानव तथा और विभीषण बहुत से लोगों ने सत्सङ्ग से मेरे स्थान को प्राप्त किया है ॥

षष्ठः श्लोकः

सुग्रीवो हनुमानृक्षो गजो गृध्रो वणिक्पथः ।
व्याधः कुब्जा व्रजे गोप्यो यज्ञपत्न्यस्तथापरे ॥६॥

पदच्छेद— सुग्रीव हनुमान् ऋक्षः गजः गृध्रः वणिक्पथः ।
व्याधः कुब्जा व्रजे गोप्यः यज्ञपत्न्यः तथा परे ॥

शब्दार्थ—

सुग्रीव	१.	सुग्रीव	व्याधः	७.	धर्म व्याध
हनुमान्	२.	हनुमान	कुब्जा	८.	कुब्जा
ऋक्षः	३.	ऋक्षवान्	व्रजे	९.	व्रज की
गजः	४.	गजेन्द्र	गोप्यः	१०.	गोपियाँ
गृध्रः	५.	जटायु	यज्ञपत्न्यः	११.	यज्ञ पत्नियाँ तथा
वणिक्पथः ।	६.	तुलाधार वैश्य	तथा परे ॥	१२.	दूसरे लोगों ने मुझे सत्सङ्ग से प्राप्त किया है

श्लोकार्थ—सुग्रीव, हनुमान, ऋक्षवान्, गजेन्द्र, जटायु, तुलाधार वैश्य, धर्मव्याध, कुब्जा, व्रज की गोपियाँ, यज्ञ पत्नियाँ तथा दूसरे लोगों ने मुझे सत्सङ्ग से प्राप्त किया है ॥

सप्तमः श्लोकः

ते नाधीतश्रुतिगणा नोपासितमहत्तमाः ।
अव्रतातप्ततपसः सत्सङ्गान्मामुपागताः ॥७॥

पदच्छेद— ते न अधीत श्रुतिगणा न उपासित महत्तमाः ।
अव्रत अतप्ततपसः सत् सङ्गात् माम् उपागताः ॥

शब्दार्थ—

ते न	१. उन लोगों ने न तो	अव्रत	७. न व्रत किये थे और
अधीत	३. स्वाध्याय किया	अतप्त	८. नहीं
श्रुतिगणाः	२. वेदों का	तपसः	९. तपस्या की
नः	४. और न	सत् सङ्गात्	१०. केवल सत्सङ्ग के द्वारा ही
उपासित	६. उपासना की थी	माम्	११. मुझे
महत्तमाः ।	५. महापुरुषों की	उपागताः ॥	१२. प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ— उन लोगों ने न तो वेदों का स्वाध्याय किया, और न महापुरुषों की उपासना की, न व्रत किये थे, और नहीं तपस्या की । केवल सत्सङ्ग के द्वारा ही मुझे प्राप्त हो गये ॥

अष्टमः श्लोकः

केवलेन हि भावेन गोप्यो गावो नगा मृगाः ।
येऽन्ये मूढधियो नागाः सिद्धा मामीयुरञ्जसा ॥८॥

पदच्छेद— केवलेन हि भावेन गोप्यः गावः नगाः मृगाः ।
ये अन्ये मूढधियः नागाः सिद्धाः माम् ईयुः अञ्जसा ॥

शब्दार्थ—

केवलेन	८. केवल	ये अन्ये	६. इसी प्रकार अन्य अनेक
हि भावेन	९. प्रेम भाव के द्वारा	मूढधियः	७. मूढ बुद्धि लोगों ने
गोप्यः	१. गोपियाँ	नागाः	५. कालिय आदि नाग और
गावः	२. गायें	सिद्धाः	१२. सिद्ध हो गये
नगाः	३. यमलार्जुन आदि वृक्ष	माम् ईयुः	११. मुझे प्राप्त कर लिया और
मृगाः ।	४. व्रज के पशु	अञ्जसा ॥	१०. अनायास ही

श्लोकार्थ— गोपियाँ, गायें, यमलार्जुन आदि वृक्ष, व्रज के पशु, कालिय आदि नाग और इसी प्रकार अन्य अनेक मूढ बुद्धि लोगों ने केवल प्रेम भाव के प्रारा अनायास ही मुझे प्राप्त कर लिया, और सिद्ध हो गये ॥

नवमः श्लोकः

यं न योगेन सांख्येन दानव्रततपोऽध्वरैः ।
व्याख्यास्वाध्यायसंन्यासैः प्राप्नुयाद् यत्नवानपि ॥९॥

पदच्छेद— यम् न योगेन सांख्येन दान व्रत तपः अध्वरैः ।
व्याख्या स्वाध्याय संन्यासैः प्राप्नुयात् यत्नवान् अपि ॥

शब्दार्थ—

यम्	३.	मुझे	व्याख्या	८.	श्रुतियों की व्याख्या
न	११.	नहीं	स्वाध्याय	९.	स्वाध्याय और
योगेन	४.	योग	संन्यासैः	१०.	सन्यास आदि से
सांख्येन	५.	सांख्य	प्राप्नुयात्	१२.	प्राप्त कर सकते हैं
दान-व्रत	६.	दान-व्रत	यत्नवान्	१.	बड़े-बड़े प्रयत्नशील साधक
तपः अध्वरैः ।	७.	तपस्या, यज्ञ तथा	अपि ॥	२.	भी

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े प्रयत्नशील साधक भी मुझे योग, सांख्य, दान, व्रत, तपस्या, यज्ञ, श्रुतियों की व्याख्या, स्वाध्याय और सन्यास आदि से नहीं प्राप्त कर सकते हैं उसे उन्होंने सत्सङ्ग से प्राप्त कर लिया ॥

दशमः श्लोकः

रामेण सार्धं मथुरां प्रणीते श्वाफल्किना मय्यनुरक्तचित्ताः ।
विगाढभावेन न मे वियोगतीव्राधयोऽन्यं ददृशुः सुखाय ॥१०॥

पदच्छेद— रामेण सार्धम् मथुराम् प्रणीते श्वाफल्किना मयि अनुरक्तचित्ताः ।
विगाढ भावेन न मे वियोग तीव्र आधयः अन्यम् ददृशुः सुखाय ॥

शब्दार्थ—

रामेण	२.	बलराम जी के	विगाढ भावेन	१३.	व्याकुल होने के कारण
सार्धम्	३.	साथ मुझे	न मे	९.	मेरे
मथुराम्	४.	मथुरा	वियोग	१०.	वियोग की
प्रणीते	५.	ले आने पर	तीव्र	११.	तीव्र
श्वाफल्किना	१.	अक्रूर जी द्वारा	आधयः	१२.	मनोव्यथा से
मयि	६.	मुझ में	अन्यम्	१४.	अन्य कोई भी वस्तु उन्हें
अनुरक्त	७.	अनुरक्त	ददृशुः	१६.	दिखाई नहीं देती थी
चित्ताः ।	८.	चित्त होने पर	सुखाय ॥	१५.	सुखदाई

श्लोकार्थ—अक्रूर जी द्वारा बलराम जी के साथ मुझे मथुरा ले आने पर मुझ में अनुरक्त चित्त होने पर मेरे वियोग की तीव्र मनोव्यथा से व्याकुल होने के कारण अन्य कोई भी वस्तु उन्हें सुख दाई दिखाई नहीं देती थी ॥

एकादशः श्लोकः

तास्ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता मयैव वृन्दावनगोचरेण ।
क्षणार्धवत्ताः पुनरङ्ग तासां हीना मया कल्पसमा बभूवुः ॥११॥

पदच्छेद— ताः ताः क्षपाः प्रेष्ठतमेन नीता मयैव वृन्दावन गोचरेण ।
क्षणार्धवत् ताः पुनः अङ्ग तासाम् हीना मया कल्पसमाः बभूवुः ॥

शब्दार्थ—

ताः ताः	५.	वे-वे	क्षणार्धवत्	७.	आधेक्षण के समान
क्षपाः	६.	रात्रियाँ (उन्होंने)	ताः पुनः	११.	वही रात्रियाँ अब
प्रेष्ठतमेन	४.	प्रियतम के साथ	अङ्ग	९.	हे प्यारे उद्धव !
नीता	८.	बिता दी थीं	तासाम्	१०.	उनकी
मयैव	३.	मुझ हो	हीनामया	१२.	मेरे बिना
वृन्दावन	१.	वृन्दावन में	कल्पसमाः	१३.	एक-एक कल्प के समान
गोचरेण ।	२.	दिखाई देने वाले	बभूवुः ॥	१४.	हो गयी हैं

श्लोकार्थ—वृन्दावन में दिखाई देने वाले मुझ प्रियतम के साथ वे-वे रात्रियाँ उन्होंने आधे क्षण के समान बिता दी थीं । हे प्यारे उद्धव ! उनकी वही रात्रियाँ अब मेरे बिना एक-एक कल्प के समान हो गयी है ॥

द्वादशः श्लोकः

ता नाविदन् मय्यनुषङ्गबद्धधियः स्वमात्मानमदस्तथेदम् ।
यथा समाधौ मुनयोऽब्धितोये नद्यः प्रविष्टा इव नामरूपे ॥१२॥

पदच्छेद— ता न अविदन् मयि अनुषङ्ग बद्धधियः स्वम् आत्मानम् अदः तथा इदम् ।
यथा समाधौ मुनयः अब्धितोये नद्यः प्रविष्टाः इव नामरूपे ॥

शब्दार्थ—

ता	१०.	उन गोपियों को	यथा समाधौ	१.	जैसे समाधि में स्थित
न अविदन्	१४.	सुध-बुध नहीं रह गयी थी	मुनयः	२.	मुनि तथा
मयिअनुषङ्ग	८.	मुझमें प्रेम होने से	अब्धितोये	३.	समुद्र के जल में
बद्धधियः	९.	तन्मय बुद्धि वाली	नद्यः	५.	नदियाँ
स्वम् आत्मानम्	११.	शरीर, पति-पुत्र	प्रविष्टाः	४.	मिलकर
अदः	१३.	परलोक की भी	इव	७.	वैसे ही
तथा इदम् ।	१२.	इस लोक और	नामरूपे ॥	६.	अपने नाम रूप को खो देती हैं

श्लोकार्थ—जैसे समाधि में स्थित मुनि तथा समुद्र के जल में मिलकर नदियाँ अपने नाम रूप को खो देती हैं । वैसे ही मुझमें प्रेम होने से तन्मय बुद्धि वाली उन गोपियों को शरीर, पति, पुत्र, इस लोक और परलोक की भी सुध-बुध नहीं रह गयी थी ॥

त्रयोदशः श्लोकः

मत्कामा रमणं जारमस्वरूपविदोऽबलाः ।
ब्रह्म मां परमं प्रापुः सङ्गाच्छतसहस्रशः ॥१३॥

पदच्छेद—　मत् कामाः रमणम् जारम् अस्वरूप विदः अबलाः ।
ब्रह्म मां परमं प्रापुः सङ्गात् शत सहस्रशः ॥

शब्दार्थ—

मत्	६.	मुझसे	ब्रह्म	११.	ब्रह्म को
कामाः रमणम्	७.	मिलने की इच्छा की थी	माम्	९.	वे भी मुझ
जारम्	५.	जार भाव से	परमम्	१०.	परम
अस्वरूप	३.	मेरा स्वरूप न	प्रापुः	१२.	प्राप्त हो गयीं
विदः	४.	जानकर भी	सङ्गात्	८.	सङ्ग के प्रभाव से
अबलाः ।	२.	स्त्रियों ने	शतसहस्रशः ॥	१.	सैकड़ों और हजारों

श्लोकार्थ - सैकड़ों और हजारों स्त्रियों ने मेरा स्वरूप न जानकर भी जार भाव से मुझसे मिलने की इच्छा की थी। वे भी मुझ परम ब्रह्म को प्राप्त हो गयीं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्मात्त्वमुद्धवोत्सृज्य चोदनां प्रतिचोदनाम् ।
प्रवृत्तं च निवृत्तं च श्रोतव्यं श्रुतमेव च ॥१४॥

पदच्छेद—　तस्मात् त्वम् उद्धव उत्सृज्य चोदनाम् प्रति चोदनाम् ।
प्रवृत्तम् च निवृत्तम् च श्रोतव्यम् श्रुतमेव च ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	प्रवृत्तम्	६.	प्रवृत्ति
त्वम्	३.	आप	च	७.	और
उद्धव	२.	हे उद्धव !	निवृत्तम् च	८.	निवृत्ति का
उत्सृज्य	१२.	परित्याग करके मेरी शरण आ जाओ	श्रोतव्यम्	९.	सुनने योग्य और
चोदनाम्	४.	श्रुति	श्रुतमेव	११.	सुने हुये विषयों का
प्रतिचोदनाम् ।	५.	स्मृति तथा	च ॥	१०.	तथा

श्लोकार्थ— इसलिये हे उद्धव ! आप श्रुति-स्मृति तथा प्रवृत्ति और निवृत्ति का सुनने योग्य और सुने हुये विषयों का परित्याग करके मेरी शरण में आ जाओ ॥

पञ्चदशः श्लोकः

मामेकमेव शरणमात्मानं सर्वदेहिनाम् ।
याहि सर्वात्मभावेन मया स्या ह्यकुतोभयः ॥१५॥

पदच्छेद— माम् एकम् एव शरणम् आत्मानम् सर्व देहिनाम् ।
याहि सर्वात्म भावेन मया स्या हि अकुतः भयः ॥

शब्दार्थ—

माम्	४.	मुझ	याहि	८.	ग्रहण करो । क्योंकि
एकम् एव	५.	एक को ही	सर्वात्मभावेन	७.	सम्पूर्ण रूप से
शरणम्	६.	शरण	मया	९.	मेरी शरण में आ जाने से
आत्मानम्	३.	आत्मस्वरूप	स्या हि	१२.	होगा
सर्व	१.	समस्त	अकुतः	१०.	किसी भी प्रकार का
देहिनाम् ।	२.	प्राणियों के	भयः ॥	११.	भय नहीं

श्लोकार्थ—समस्त प्राणियों के आत्म स्वरूप मुझ एक की ही शरण सम्पूर्णरूप से ग्रहण करो। क्योंकि मेरी शरण में आ जाने से किसी प्रकार का भय नहीं होगा ॥

षोडशः श्लोकः

उद्धवउवाच—संशयः शृण्वतो वाचं तव योगेश्वरेश्वर ।
न निवर्तते आत्मस्थो येन भ्राम्यति मे मनः ॥१६॥

पदच्छेद— संशयः शृण्वतः वाचम् तव योगेश्वर ईश्वरः ।
न निवर्तते आत्मस्थः येन भ्राम्यति मे मनः ॥

शब्दार्थ—

संशयः	७.	मेरा संशय	न निवर्तते	८.	मिट नहीं रहा है
शृण्वतः	५.	सुनने पर भी	आत्मस्थः	६.	आत्म विषयक
वाचम्	४.	उपदेश को	येन	९.	जिससे
तव	३.	आपके	भ्राम्यति	१२.	दुविधा में भ्रमण कर रहा है
योगेश्वर	१.	हे सनकादि योगेश्वरों के	मे	१०.	मेरा
ईश्वर ।	२.	ईश्वर !	मनः ॥	१०.	मन

श्लोकार्थ—हे सनकादि योगेश्वरों के ईश्वर ! आपके उपदेश को सुनने पर भी आत्मविषयक मेरा संशय मिट नहीं रहा है। जिससे मेरा मन दुविधा में भ्रमण कर रहा है ॥

सप्तदशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—स एष जीवो विवरप्रसूतिः प्राणेन घोषेण गुहां प्रविष्टः ।
मनोमयं सूक्ष्ममुपेत्य रूपं मात्रा स्वरो वर्ण इति स्थविष्ठः ।१७।

पदच्छेद— स एष जीवः विवरः प्रसूतिः प्राणेन घोषेण गुहाम् प्रविष्टः ।
मनोमयम् सूक्ष्मम् उपेत्य रूपम् मात्रा स्वरः वर्णः इति स्थविष्ठः ।।

शब्दार्थ—

सः एषः	१.	वही यह	मनोमयम्	९.	मनोमय
जीवः	२.	जीवरूप परमात्मा	सूक्ष्मम्	१०.	सूक्ष्म
विवरः	३.	आधार आदि चक्रों में	उपेत्यरूपम्	११.	रूप को प्राप्त करके
प्रसूतिः	४.	अभिव्यक्त होकर	मात्राः	१२.	ह्रस्वदीर्घादि मात्रा
प्राणेन	५.	प्राण के साथ	स्वरः	१३.	उदात्त आदि स्वर
घोषेण	६.	नाद स्वरूप परावाणीनामक	वर्ण	१४.	ककारादि वर्ण रूप
गुहाम्	७.	मूलाधार चक्र में	इति	१५.	स्थूल वाणी को
प्रविष्टः ।	८.	प्रवेश करते हैं और	स्थविष्ठः ।।	१६.	ग्रहण कर लेते हैं

श्लोकार्थ—वही यह जीवरूप परमात्मा आधार आदि चक्रों में अभिव्यक्त होकर प्राण के साथ अनाहत नाद स्वरूप परावाणी नामक मूलाधार चक्र में प्रवेश करते हैं। और मनोमय सूक्ष्मरूप को प्राप्त करके ह्रस्वदीर्घादि मात्रा उदात्त आदि स्वर ककारादि वर्णरूप स्थूल वाणी को ग्रहण कर लेते हैं ।।

अष्टदशः श्लोकः

यथानलः खेऽनिलबन्धुरूष्मा बलेन दारुण्यधिमथ्यमानः ।
अणुः प्रजातो हविषा समिध्यते तथैव मे व्यक्तिरियं हि वाणी ।।१८।।

पदच्छेद— यथा अनलः खे अनिल बन्धुरूष्मा बलेन दारुणि अधिमथ्यमानः ।
अणुः प्रजातः हविषा समिध्यते तथैव मे व्यक्तिः इयम् हि वाणी ।।

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	अणुः	९.	सूक्ष्म चिन्गारी के रूप में
अनलः	४.	अग्नि	प्रजातः	१०.	प्रकट होती हैं फिर
खे	२.	आकाश में	हविषा	११.	आहुति देने पर
अनिलबन्धुः	८.	वायु की	समिध्यते	१२.	प्रचण्डरूपधारण कर लेती है
ऊष्मा	३.	ऊष्मारूप में स्थित	तथैव मे	१३.	वैसे ही मैं भी
बलेन	५.	बलपूर्वक	व्यक्तिः	१६.	प्रकट होता हूँ
दारुणि	६.	काष्ठ	इयम् हि	१४.	इस (परापश्यन्ती वैखरीमध्यमा)
अधिमथ्यमानः।	७.	मन्थन किये जाने पर	वाणी ।।	१५.	वाणी के रूप में

श्लोकार्थ—जैसे आकाश में ऊष्मारूप में स्थित अग्नि बलपूर्वक काष्ठ मन्थन किये जाने पर वायु की सूक्ष्म चिन्गारी के रूप में प्रकट होती है। फिर आहुति देने पर प्रचण्डरूप धारण कर लेती है। वैसे ही मैं भी इस परा, पश्यन्ती, वैखरी, मध्यमावाणी के रूप में प्रकट होता हूँ ।।

एकोनविंशः श्लोकः

एवं गदिः कर्म गतिर्विसर्गो घ्राणो रसो दृक् स्पर्शः श्रुतिश्च ।
सङ्कल्पविज्ञानमथाभिमानः सूत्रं रजःसत्त्वतमोविकारः ॥१६॥

पदच्छेद— एवम् गदिः कर्मगतिः विसर्गः घ्राणः रसः दृक् स्पर्शः श्रुतिः च ।
सङ्कल्प विज्ञानम् अथ अभिमानः सूत्रम् रजः सत्त्वतमः विकारः ॥

शब्दार्थ—

एवम् गदिः	१.	इसी प्रकार बोलना	सङ्कल्प	८.	मन से संकल्प-विकल्प करना
कर्मगतिः	२.	हाथों से काम करना चलना	विज्ञानम्	९.	बुद्धि से समझना
विसर्गः	३.	मल-मूत्र त्यागना	अथअभिमानः	१०.	तथा अहंकार के द्वारा अभिमान करना
घ्राणः रसः	४.	सूंघना-चखना	सूत्रम्	११.	महत्तत्त्व के रूप में ताना-बाना बुनना
दृक्	५.	देखना	रजः	१२.	रजोगुण
स्पर्शः	६.	छूना	सत्त्वतमः	१३.	सत्वगुण और तमोगुण के
श्रुतिः च ।	७.	सुनना और	विकारः ॥	१४.	सारे विकार मेरी हीअभिव्यक्ति है

श्लोकार्थ—इसी प्रकार बोलना हाथों से काम करना, चलना, मल-मूत्रत्यागना, सूंघना, चखना, देखना, छूना सुनना और मन से सङ्कल्प-विकल्प करना, बुद्धि से समझना, तथा अहंकार के द्वारा अभिमान करना, महत्तत्त्व के रूप में ताना-बाना बुनना, रजो गुण, सत्त्व गुण और तमोगुण के सारे विकार मेरी ही अभिव्यक्ति है ॥

विंशः श्लोकः

अयं हि जीवस्त्रिवृदब्जयोनिरव्यक्त एको वयसा स आद्यः ।
विश्लिष्टशक्तिर्बहुधेव भाति बीजानि योनिं प्रतिपद्य यद्वत् ॥२०॥

पदच्छेद— अयम् हि जीवः त्रिवृद् अब्जयोनिः अव्यक्तः एकः वयसा सः आद्यः ।
विश्लिष्ट शक्तिः बहुधा इव भाति बीजानियोनिम् प्रतिपद्य यद्वत् ॥

शब्दार्थ—

अयम् हि	१.	यह	विश्लिष्ट	११.	विभक्त होकर परमात्मा ही
जीवः	२.	सबको जीवित करने वाला	शक्तिः	१२.	माया शक्ति का आश्रय लेकर
त्रिवृद्	३.	ईश्वरी त्रिगुणमय	बहुधा इव	१३.	अनेक रूपों में
अब्जयोनिः	४.	ब्रह्माण्ड कमल का कारण	भाति	१४.	प्रतीत होने लगता है
अव्यक्तः एकः	६.	पहले एक और अव्यक्त था	बीजानियोनिम्	८.	उपजाऊ खेत में बोया बीज
वयसा	१०.	कालगति से	प्रतिपद्य	९.	अनेक रूप धारण करता है
सः आद्यः ।	५.	यह आदि पुरुष	यद् वत् ॥	७.	जिस प्रकार

श्लोकार्थ—यह सब को जीवित करने वाला ईश्वर त्रिगुणमय ब्रह्माण्ड कमल का कारण है । यह आदि पुरुष पहले एक और अव्यक्त था । जिस प्रकार उपजाऊ खेत में बोया बीज अनेक रूप धारण करता है वैसे ही कालगति से विभक्त होकर परमात्मा ही माया शक्ति का आश्रय लेकर अनेक रूपों में प्रतीत होने लगता है ॥

एकविंशः श्लोकः

यस्मिन्निदं प्रोतमशेषमोतं पटो यथा तन्तुवितानसंस्थः ।
य एष संसारतरुः पुराणः कर्मात्मकः पुष्पफले प्रसूते ॥२१॥

पदच्छेद— यस्मिन् इदम् प्रोतम् अशेषम् ओतम् पटः यथा तन्तु वितान संस्थः ।
यः एषः संसार तरुः पुराणः कर्म आत्मकः पुष्पफले प्रसूते ॥

शब्दार्थ—

यस्मिन् इदम्	५.	जिस परमात्मा में यह	यः	८.	जो
प्रोतम्	७.	प्रोत है तथा	एषः	९.	यह
अशेषम् ओतम्	६.	सारा विश्व ओत	संसार तरुः	१०.	संसार रूपी वृक्ष है यह
पटः	३.	वस्त्र	पुराणः कर्म	११.	अनादि कर्म
यथा तन्तु	१.	जैसे तागों के	आत्मकः	१२.	रूप है और इसके
वितान	२.	ताने-बाने में	पुष्पफले	१३.	फूल-फल
संस्थः ।	४.	ओत-प्रोत रहता है वैसे ही	प्रसूते ।	१४.	मोक्ष और भोग हैं

श्लोकार्थ—जैसे तागों के ताने-बाने में वस्त्र ओत-प्रोत रहता है, वैसे ही यह सारा विश्व जिस परमात्मा में ओत-प्रोत रहता है । तथा जो यह संसार रूपी वृक्ष है यह अनादि कर्मरूप है । और इसके फूल-फल मोक्ष और भोग हैं ।

द्वाविंशः श्लोकः

द्वे अस्य बीजे शतमूलस्त्रिनालः पञ्चस्कन्धः पञ्चरसप्रसूतिः ।
दशैकशाखो द्विसुपर्णनीडस्त्रिवल्कलो द्विफलोऽर्कं प्रविष्टः ॥२२॥

पदच्छेद— द्वे अस्य बीजे शतमूलः त्रिनालः पञ्चस्कन्धः पञ्चरस प्रसूतिः ।
दशैकशाखः द्विसुपर्णनीडः त्रिवल्कलः द्विफलः अर्कम् प्रविष्टः ॥

शब्दार्थ—

द्वे अस्य	१.	इस संसार वृक्ष के दो	दशैकशाखः	७.	ग्यारह इन्द्रियाँ शाखा हैं
बीजे	२.	बीज हैं पाप और पुण्य	द्विसुपर्ण	८.	जीव और ईश्वर दो पक्षी हैं जो
शतमूलः	३.	सैंकड़ों वासनायें जड़े हैं	नीडः	९.	इसमें घोंसला बनाकर रहते हैं
त्रिनालः	४.	तीन गुण तने हैं	त्रिवल्कलः	१०.	बात, पित्त, कफ छाल हैं
पञ्चस्कन्धः	५.	पाँच भूत प्रधान शाखायें है	द्विफलः	११.	सुख और दुःख दो फल हैं
पञ्चरस	६.	पाँच विषय रस है	अर्कम्	१३.	यह वृक्ष सूर्य मण्डल तक
प्रसूतिः ।	१२.	ये सब इस वृक्ष से उत्पन्न हुये हैं	प्रविष्टः ॥	१४.	फैला हुआ है

श्लोकार्थ—इस संसार वृक्ष के दो बीज हैं पाप और पुण्य । सैंकड़ों वासनायें जड़े हैं, तीन गुण तने हैं । पाँच भूत प्रधान शाखायें हैं । पाँच विषय रस हैं, ग्यारह इन्द्रियाँ शाखा हैं, जीव और ईश्वर दो पक्षी हैं । जो इसमें घोंसला बनाकर रहते हैं । बात, पित्त, कफ छाल हैं । सुख और दुःख दो फल हैं ये सब इस वृक्ष से उत्पन्न हुये हैं । यह वृक्ष सूर्य मण्डल तक फैला हुआ है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अदन्ति चैकं फलमस्य गृध्रा ग्रामेचरा एकमरण्यवासाः ।
हंसा य एकं बहुरूपमिज्यैर्मायामयं वेद स वेद वेदम् ॥२३॥

पदच्छेद— अदन्ति च एकम् फलम् अस्य गृध्राः ग्रामेचराः एकम् अरण्यवासाः ।
हंसा य एकम् बहुरूपम् इज्यैः माया मयम् वेद सः वेद वेदम् ॥

शब्दार्थ—					
अदन्ति	५.	भोग करते हैं	हंसा	७.	विवेकशील परमहंस
च एकम् फलम्	४.	एक फल दुःख का	ये	६.	मेरा जो
अस्य	३.	इस संसार वृक्ष के	एकम्	१२.	मैं एक रूप हूँ
गृध्राः	२.	कामना से युक्त गीध के समान	बहुरूपम्	१०.	अनेकों प्रकार का रूप है
ग्रामेचराः	१.	गृहस्थ लोग	इज्यैः	१३.	गुरुओं के द्वारा
एकम्	८.	इसके एक फल सुख का भोग करते हैं	मायामयम्	११.	वह तो मायामय है परन्तु
अरण्यवासाः ।	६.	वनवासी	वेद सः वेद	१४.	जो इसे समझता है, वही
			वेदम् ॥	१५.	वेदों को समझने वाला है

श्लोकार्थ—गृहस्थ लोग कामना से युक्त गीध के समान इस संसार वृक्ष के एक फल दुःख का भोग करते हैं वनवासी विवेकशील परमहंस इसके एक फल सुख का भोग करते हैं। मेरा जो अनेकों प्रकार का रूप है वह तो मायामय है। परन्तु मैं एक रूप हूँ। गुरुओं के द्वारा जो इसे समझता है। वही वेदों को समझने वाला है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं गुरूपासनयैकभक्त्या विद्याकुठारेण शितेन धीरः ।
विवृश्च्य जीवाशयमप्रमत्तः सम्पद्य चात्मानमथ त्यजास्त्रम् ॥२४॥

पदच्छेद— एवम् गुरु उपासनया एक भक्त्या विद्याकुठारेण शितेनधीरः ।
विवृश्च्य जीव आशयम् प्रमत्तः सम्पद्य च आत्मानम् अथत्यजास्त्रम् ॥

शब्दार्थ—					
एवम्	१.	हे उद्धव ! इस प्रकार	विवृश्च्य	११.	काट डालो
गुरु	२	गुरु देव की	जीव	६.	जीव
उपासनया	३.	उपासना रूप	आशयम्	१०.	भाव को
एकभक्त्या	४.	अनन्य भक्ति के द्वारा	अप्रमत्तः	८.	सावधानी से
विद्याकुठारेण	५.	अपने ज्ञान की कुल्हाड़ी की	सम्पद्य	१४.	प्राप्त करके उसी में लीन हो जाओ
शितेन	६.	तीखी धार कर लो और	च आत्मानम्	१३.	आत्मस्वरूप को
धीरः ।	७.	उसके द्वारा धैर्य एवम्	अथ त्यजास्त्रम् ॥	१२.	फिर उस वृत्तिरूप अस्त्र को छोड़कर

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! इस प्रकार गुरु देव की उपासनारूप अनन्य भक्ति के द्वारा अपने ज्ञान की कुल्हाड़ी की तीखी धार कर लो और उसके द्वारा धैर्य एवम् सावधानी से जीव-भाव को काट डालो। फिर उस वृत्ति रूप अस्त्र को छोड़कर आत्मस्वरूप को प्राप्त करके उसी में लीन हो जाओ ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशः स्कन्धः द्वादशः अध्यायः ॥१२॥

एकादशः स्कन्धः

त्रयोदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—सत्त्वं रजस्तम इति गुणा बुद्धेर्न चात्मनः ।
सत्त्वेनान्यतमौ हन्यात् सत्त्वं सत्वेन चैव हि ॥१॥

पदच्छेद— सत्त्वम् रजः तम इति गुणा बुद्धेः न च आत्मनः ।
सत्त्वेन अन्यतमौ हन्यात् सत्त्वम् सत्वेन च एव हि ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	१.	सत्व	सत्त्वेन	७.	सत्त्व के द्वारा
रजः	२.	रज और	अन्यतमौ	८.	रज और तम इन दोनों पर
तम	३.	तम	हन्यात्	९.	विजय पा लेनी चाहिये फिर
इति	४.	ये तीनों	सत्त्वम्	११.	उसकी दया आदि वृत्तियों
गुणाः बुद्धेः	५.	बुद्धि के गुण हैं	सत्वेन	१०.	सत्त्वादि गुण की शान्त वृत्ति के द्वारा
न च आत्मनः ।	६.	आत्मा के नहीं हैं	च एव हि ॥	१२.	को भी शान्तकर देना चाहिये

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! सत्व, रज और तम ये तीनों बुद्धि के गुण हैं । आत्मा के नहीं हैं । सत्व के द्वारा रज और तम इन दोनों पर विजय पा लेनी चाहिये । फिर सत्त्वादि गुण कीं शान्त वृत्ति के द्वारा उसकी दया आदि वृत्तियों को भी शान्त कर देना चाहिये ॥

द्वितीयः श्लोकः

सत्त्वाद् धर्मो भवेद् वृद्धात् पुंसो मद्भक्तिलक्षणः ।
सात्त्विकोपासया सत्त्वं ततो धर्मः प्रवर्तते ॥२॥

पदच्छेद— सत्त्वात् धर्मो भवेत् वृद्धात् पुंसः मत् भक्ति लक्षणः ।
सात्विक उपासया सत्त्वम् ततो धर्मः प्रवर्तते ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वात्	१.	सत्व गुण की	सात्विक	७.	सात्विक वस्तुओं का
धर्मो	५.	स्वधर्म की	उपासया	८.	सेवन करने से ही
भवेत्	६.	प्राप्ति होती है	सत्त्वम्	९.	सत्त्व गुण की वृद्धि होती है
वृद्धात्	२.	वृद्धि होने पर	ततो	१०.	इसके बाद
पुंसः मत्	३.	जीव को मेरे	धर्मः	११.	मेरे भक्ति रूप स्वधर्म में
भक्तिलक्षणः ।	४.	भक्ति रूप	प्रवर्तते ॥	१२.	प्रवृत्ति होने लगती है

श्लोकार्थ—सत्त्व गुण की वृद्धि होने पर जीव को मेरे भक्ति रूप स्वधर्म की प्राप्ति होती है । सात्विक वस्तुओं का सेवन करने से ही सत्त्व गुण की वृद्धि होती है । इसके बाद मेरे भक्ति रूप स्वधर्म में प्रवृत्ति होने लगती है ॥

तृतीयः श्लोकः

धर्मो रजस्तमो हन्यात् सत्त्ववृद्धिरनुत्तमः ।
आशु नश्यति तन्मूलो ह्यधर्म उभये हते ॥३॥

पदच्छेद— धर्मो रजः तमः हन्यात् सत्त्व वृद्धिः अनुत्तमः ।
आशु नश्यति तत् मूलः हि अधर्मः उभये हते ॥

शब्दार्थ—

धर्मो	६.	धर्म है	आशु	११.	शीघ्र ही
रजः तमः	१.	जिससे रजोगुण और तमोगुण	नश्यति	१२	मिट जाता है
हन्यात्	२.	नष्ट हो और	तत् मूलः	६.	उन्हीं के कारण होने वाला
सत्त्व	३.	सत्त्व गुण की	हि अधर्मः	१०.	अधर्म भी
वृद्धिः	४.	वृद्धि हो	उभये	७.	जब ये दोनों
अनुत्तमः ।	५.	वही सर्वश्रेष्ठ	हते ॥	८.	नष्ट हो जाते हैं, तब

श्लोकार्थ—जिससे रजोगुण और तमोगुण नष्ट हो और सत्त्व गुण की वृद्धि हो वही सर्वश्रेष्ठ धर्म है। जब ये दोनों नष्ट हो जाते हैं। तब उन्हीं के कारण होने वाला अधर्म भी शीघ्र ही मिट जाता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

आगमोऽपः प्रजा देशः कालः कर्म च जन्म च ।
ध्यानं मन्त्रोऽथ संस्कारो दशैते गुणहेतवः ॥४॥

पदच्छेद— आगमः अपः प्रजा देशः कालः कर्म च जन्म च ।
ध्यानम् मन्त्रः अथ संस्कारः दशैते गुण हेतवः ॥

शब्दार्थ—

आगमः	१.	शास्त्र	ध्यानम्	७.	ध्यान
अपः	२.	जल	मन्त्रः	८.	मंत्र
प्रजाः	३.	प्रजाजन	अथ	९.	और
देशःकालः	४.	देश, समय	संस्कारः	१०.	संस्कार
कर्म च	५.	कर्म और	दशैते	११.	ये दश वस्तुयें
जन्म च ।	६.	जन्म	गुण हेतवे ॥	१२.	गुणों की वृद्धि करती हैं

श्लोकार्थ—शास्त्र, जल, प्रजाजन, देश, समय, कर्म और जन्म, ध्यान, मंत्र और संस्कार ये दश वस्तुयें गुणों की वृद्धि करती हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

तत्तत् सात्त्विकमेवैषां यद् यद् वृद्धाः प्रचक्षते ।
निन्दन्ति तामसं तत्तद् राजसं तदुपेक्षितम् ॥५॥

पदच्छेद— तत्-तत् सात्त्विकम् एव एषाम् यत्-यत् वृद्धाः प्रचक्षते ।
निन्दन्ति तामसम् तत्-तत् राजसम् तत् उपेक्षितम् ॥

शब्दार्थ—

तत्-तत्	४.	वे	निन्दन्ति	७.	जिनकी निन्दा करते हैं
सात्त्विकम्	६.	सात्त्विक हैं (और)	तामसम्	९.	तामसिक हैं
एव	५.	ही	तत्-तत्	८.	वे
एषाम्	१.	इनमें से	राजसम्	१२.	राजस हैं
यत्-यत्	२.	जिनकी	तत्	११.	वे
वृद्धाः प्रचक्षते ।	३.	शास्त्रज्ञ महात्मा प्रशंसा करते हैं	उपेक्षितम् ॥	१०.	जिनकी उपेक्षा करते हैं

श्लोकार्थ—इनमें से जिनकी शास्त्रज्ञ महात्मा प्रशंसा करते हैं। वे ही सात्विक हैं। और जिनकी निन्दा करते हैं वे तामसिक हैं। जिनकी उपेक्षा करते है वे राजस हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

सात्त्विकान्येव सेवेत पुमान् सत्त्वविवृद्धये ।
ततो धर्मस्ततो ज्ञानं यावत् स्मृतिरपोहनम् ॥६॥

पदच्छेद— सात्त्विकानि एव सेवेत पुमान् सत्त्व विवृद्धये ।
ततः धर्मः ततः ज्ञानम् यावत् स्मृतिः अपोहनम् ॥

शब्दार्थ—

सात्त्विकानि	६.	सात्विक वस्तुओं का	ततः	९.	क्योंकि उससे
एव	७.	ही	धर्मः	१०.	धर्म की वृद्धि होती है और
सेवेत	८.	सेवन करना चाहिये	ततः	११.	उस धर्म की वृद्धि से
पुमान्	३.	तब-तक मनुष्य को	ज्ञानम्	१२.	आत्मतत्त्व का ज्ञान होता है
सत्त्व	४.	सत्त्व-गुण की	यावत स्मृतिः	१.	जब-तक आत्म साक्षात्कार नहीं होता और
विवृद्धये ।	५.	वृद्धि के लिये	अपोहनम् ॥	२.	गुणों की निवृत्ति नहीं होती

श्लोकार्थ —जब-तक आत्म साक्षात्कार नहीं होता है और गुणों की निवृत्ति नहीं होती है। तब-तक मनुष्य को सत्त्वगुण की वृद्धि के लिये सात्विक वस्तुओं का ही सेवन करना चाहिये। क्योंकि उससे धर्म की वृद्धि होती है। और उस धर्म की वृद्धि से आत्मतत्त्व का ज्ञान होता है ॥

सप्तमः श्लोकः

वेणुसङ्घर्षजो वह्निर्दग्ध्वा शाम्यति तद्वनम् ।
एवं गुणव्यत्ययजो देहः शाम्यति तत्क्रियः ॥७॥

पदच्छेद— वेणु सङ्घर्षजः वह्निः दग्ध्वा शाम्यति तत् वनम् ।
एवम् गुणव्यत्ययजः देहः शाम्यति तत् क्रियम् ॥

शब्दार्थ—

वेणु	१. जिस प्रकार बाँसों की	एवम्	७.	उसी प्रकार
सङ्घर्षजः	२. रगड़ से उत्पन्न	गुण	८.	गुणों के
वह्नि	३. अग्नि	व्यत्ययजः	९.	वैषम्य से उत्पन्न
दग्ध्वा	५. जलाकर	देहः	१०.	शरीर को
शाम्यति	६. स्वयं भी शान्त हो जाती है	शाम्यति	१२.	शान्त हो जाती है
तत् वनम् ।	४. उस वन को	तत् क्रियः ॥	११.	उसकी क्रियारूप ज्ञान अग्नि जला कर स्वयं भी

श्लोकार्थ—जिस प्रकार बाँसों की रगड़ से उत्पन्न अग्नि उस वन को जला कर स्वयं भी शान्त हो जाती है। उसी प्रकार गुणों ये वैषम्य से उत्पन्न शरीर को उसकी क्रिया रूप ज्ञानाग्नि जलाकर स्वयं भी शान्त हो जाती है।

अष्टमः श्लोकः

उद्धव उवाच—विदन्ति मर्त्याः प्रायेण विषयान् पदमापदाम् ।
तथापि भुञ्जते कृष्ण तत् कथं श्वखराजवत् ॥८॥

पदच्छेद— विदन्ति मर्त्याः प्रायेण विषयान् पदम् आपदाम् ।
तथापि भुञ्जते कृष्ण तत् कथम् श्वखराजवत् ॥

शब्दार्थ—

विदन्ति	३. इस बात को जानते हैं कि	तथापि	७.	फिर भी
मर्त्याः	२. सभी मनुष्य	भुञ्जते	११.	उसका भोग करते हैं
प्रायेण	१. प्रायः	कृष्ण	८.	हे श्रीकृष्ण !
विषयान्	४. विषय	तत् कथम्	१२.	इसका क्या कारण
पदम्	६. घर हैं।	श्वखराज	९.	वे कुत्ते, गधे और बकरे के
आपदाम् ।	५. विपत्तियों के	वत् ॥	१०.	समान

श्लोकार्थ—प्रायः सभी मनुष्य इस बात को जानते है कि विषय विपत्तियों का घर है। फिर भी हे श्रीकृष्ण ! वे कुत्ते, गधे और बकरे के समान उसका भोग करते हैं। इसका क्या कारण है ॥

नवमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अहमित्यन्यथाबुद्धिः प्रमत्तस्य यथा हृदि ।
उत्सर्पति रजो घोरं ततो वैकारिकं मनः ॥९॥

पदच्छेद— अहम् इति अन्यथा बुद्धिः प्रमत्तस्य यथाहृदि ।
उत्सर्पति रजः घोरम् ततः वैकारिकम् मनः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	३.	शरीरादि में	उत्सर्पति	१२.	झुक जाता है
इति	४.	इस प्रकार की	रजः	११.	रजोगुण की ओर
अन्यथा	५.	अहंकार	घोरम्	१०.	घोर
बुद्धिः	६.	बुद्धि कर लेता है	ततः	७.	तब उसका
प्रमत्तस्य	१.	जीव अज्ञान वश	वैकारिकम्	८.	सत्त्व प्रधान
यथाहृदि ।	२.	जब हृदय से	मनः ॥	९.	मन

श्लोकार्थ—जीव अज्ञान वश जब हृदय से शरीरादि में इस प्रकार की अहंकार बुद्धि कर लेता है तब उसका सत्त्व प्रधान मन घोर रजोगुण की ओर झुक जाता है ।

दशमः श्लोकः

रजोयुक्तस्य मनसः सङ्कल्पः सविकल्पकः ।
ततः कामो गुणध्यानाद् दुःसहः स्याद्धि दुर्मतेः ॥१०॥

पदच्छेद— रजः युक्तस्य मनसः सङ्कल्पः सविकल्पकः ।
ततः कामः गुणध्यानात् दुःसहः स्यात् हि दुर्मतेः ॥

शब्दार्थ—

रजः	२.	रजोगुण की	कामः	१०.	काम के फन्दे में फंस जाता है
युक्तस्य	३.	प्रधानता होने पर	गुण	७.	विषयों का
मनसः	१.	मन में	ध्यानात्	८.	चिन्तन करने के कारण
सङ्कल्पः	४.	सङ्कल्प	दुःसहः	११.	फिर मुक्त हो पाना कठिन
स विकल्पकः ।	५.	और विकल्प होने लगते हैं	स्यात् हि	१२.	हो जाता है
ततः	६.	इसके बाद	दुर्मतेः ॥	९.	अपनी दुर्बुद्धि से वह

श्लोकार्थ—मन में रजोगुण की प्रधानता होने पर सङ्कल्प और विकल्प होने लगते हैं । इसके बाद बिषयों का चिन्तन करने के कारण अपनी दुर्बुद्धि से वह काम के फन्दे में फंस जाता है फिर मुक्त हो पाना कठिन हो जाता है ॥

एकादशः श्लोकः

करोति कामवशगः कर्माण्यविजितेन्द्रियः ।
दुःखोदर्काणि सम्पश्यन् रजोवेगविमोहितः ॥११॥

पदच्छेद— करोति काम वशगः कर्माणि अविजितेन्द्रियः ।
दुःख उदर्काणि सम्पश्यन् रजः वेगविमोहितः ॥

शब्दार्थ—

करोति	४.	करने लगता है । और	दुःख	७.	कर्मों का फल दुख
काम	१.	वह अज्ञानी काम	उदर्काणि	८.	रूप ही है
वशगः	२.	वश	सम्पश्यन्	६.	यह जान कर भी कि
कर्माणि	३.	अनेक कर्म	रजः वेग	९.	रजोगुण के तीव्र वेग से
अविजितेन्द्रियः ।	५.	इन्द्रियों के वश होकर	विमोहितः ॥	१०.	मोहित रहता है

श्लोकार्थ—वह अज्ञानी काम वश अनेक कर्म करने लगता है । और इन्द्रियों के वश होकर यह जानकर भी कि कर्मों का फल दुःख रूप ही है । रजोगुण के तीव्र वेग से मोहित रहता है ॥

द्वादशः श्लोकः

रजस्तमोभ्यां यदपि विद्वान् विक्षिप्तधीः पुनः ।
अतन्द्रितो मनो युञ्जन् दोषदृष्टिर्न सज्जते ॥१२॥

पदच्छेद— रजः तमोभ्याम् यदपि विद्वान् विक्षिप्तधीः पुनः ।
अतन्द्रितः मनः युञ्जन् दोषदृष्टिः न सज्जते ॥

शब्दार्थ—

रजः	३.	रजोगुण और	अतन्द्रितः	२.	सावधानी के कारण
तमोभ्याम्	४.	तमोगुण से	मनः	१०.	मन को
यदपि	१.	यद्यपि	युञ्जन्	११.	एकाग्र करने से
विद्वान्	५.	विवेकी पुरुष का	दोष	८.	विषयों में दोष
विक्षिप्त धीः	६.	मन भी विक्षिप्त होता है	दृष्टिः	९.	दृष्टि होने के कारण और
पुनः ।	७.	परन्तु	न सज्जते ॥	१२.	उसे आसक्ति नहीं होती है

श्लोकार्थ—यद्यपि सावधानी के कारण रजोगुण और तमोगुण से विवेकी पुरुष का मन भी विक्षिप्त होता है । परन्तु विषयों में दोष दृष्टि होने के कारण और मन को एकाग्र करने से उसे आसक्ति नहीं होती है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अप्रमत्तोऽनुयुञ्जीत मनो मय्यर्पयञ्छनैः ।
अनिर्विण्णो यथाकालं जितश्वासो जितासनः ॥१३॥

पदच्छेद— अप्रमत्तः अनुयुञ्जीत मनः मयि अर्पयन् शनैः ।
अनिर्विण्णो यथा कालम् जितश्वासः जित आसनः ॥

शब्दार्थ—

अप्रमत्तः	६.	सावधानीपूर्वक	अनिर्विण्णो	५.	आलस्य रहित होकर और
अनुयुञ्जीत	१०.	मुझमें ही लगावे	यथा कालम्	४.	शक्ति और समयानुसार
मनः मयि	८.	मन को मुझे	जितश्वासः	३.	प्राणवायु को वश में करके
अर्पयन्	९.	अर्पित करके	जित	२.	जीत कर
शनैः ।	७.	धीरे-धीरे	आसनः ॥	१.	आसन को

श्लोकार्थ—आसन को जीतकर प्राण वायु को वश में करके शक्ति और समयानुसार आलस्य रहित होकर और सावधानी पूर्वक धीरे-धीरे मन को मुझे अर्पित करके मुझमें ही लगावे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

एतावान् योग आदिष्टो मच्छिष्यैः सनकादिभिः ।
सर्वतो मन आकृष्य मय्यद्धाऽऽवेश्यते यथा ॥१४॥

पदच्छेद— एतावान् योग आदिष्टः मत् शिष्यैः सनकादिभिः ।
सर्वतः मनः आकृष्य मयि अद्धा आवेश्यते यथा ॥

शब्दार्थ—

एतावान्	५.	यही	सर्वतः मनः	९.	सब ओर से
योग	४.	योग का	आकृष्य	१०.	अपने मन को खींच कर
आदिष्टः	६.	स्वरूप बताया है	मयि	११.	मुझमें ही
मत्	१.	मेरे	अद्धा	७.	वस्तुतः साधक चाहे
शिष्यैः	२.	शिष्य	आवेश्यते	१२.	लगा दे
सनकादिभिः ।	३.	सनकादि परमर्षियों ने	यथा ॥	८.	जिस प्रकार हो

श्लोकार्थ—मेरे शिष्य सनकादि परमर्षियों ने योग का यही स्वरूप बताया है वस्तुतः साधक जिस प्रकार हो सब ओर से अपने मन को खींचकर मुझमें ही लगा दे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

उद्धव उवाच—यदा त्वं सनकादिभ्यो येन रूपेण केशव।
योगमादिष्टवानेतद् रूपमिच्छामि वेदितुम् ॥१५॥

पदच्छेद— यदा त्वम् सनकादिभ्यः येन रूपेण केशव।
योगम् आदिष्टवान् एतद् रूपम् इच्छामि वेदितुम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	३.	जिस समय	योगम्	७.	योगका
त्वम्	२.	आपने	आदिष्टवान्	८.	आदेश दिया था
सनकादिभ्यः	६.	सनकादिकों को	एतद्	९.	उस
येन	४.	जिस	रूपम्	१०.	रूप को
रूपेण	५.	रूप से	इच्छामि	१२.	चाहता हूँ
केशव।	१.	हे श्रीकृष्ण !	वेदितुम् ॥	११.	मैं जानना

श्लोकार्थ—हे श्री कृष्ण ! आपने जिस समय जिस रूप से सनकादिकों को योग का उपदेश दिया था। उस रूप को मैं जानता चाहता हूँ ॥

षोडशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—पुत्रा हिरण्यगर्भस्य मानसाः सनकादयः।
पप्रच्छुः पितरं सूक्ष्मां योगस्यैकान्तिकीं गतिम् ॥१६॥

पदच्छेद— पुत्रा हिरण्यगर्भस्य मानसाः सनक आदयः।
पप्रच्छुः पितरम् सूक्ष्माम् योगस्य ऐकान्तिकीम् गतिम् ॥

शब्दार्थ—

पुत्रा	५.	पुत्र हैं	पप्रच्छुः	११.	प्रश्न किया था
हिरण्यगर्भस्य	३.	ब्रह्मा जी के	पितरम्	६.	उन्होंने अपने पिता से
मानसाः	४.	मानस	सूक्ष्माम्	८.	सूक्ष्म और
सनक	१.	सनक-	योगस्य	७.	योग का
आदयः।	२.	आदि	ऐकान्तिकीम्	९.	अन्तिम
			गतिम् ॥	१०.	सीमा के बारे में

श्लोकार्थ—सनकादि ब्रह्मा जी के मानस पुत्र हैं। उन्होंने अपने पिता से योग की सूक्ष्म और अन्तिम सीमा के बारे में प्रश्न किया था ॥

सप्तदशः श्लोकः

सनकादय ऊचुः—गुणेष्वाविशते चेतो गुणाश्चेतसि च प्रभो ।
कथमन्योन्यसंत्यागो मुमुक्षोरतितितीर्षोः ॥१७॥

पदच्छेद— गुणेषु आविशते चेतः गुणाः चेतसि च प्रभो ।
कथम् अन्योन्य संत्यागः मुमुक्षोः अतितीर्षोः ॥

शब्दार्थ—

गुणेषु	३.	गुणों अर्थात् विषयों में	कथम्	१०.	कैसे
आविशते	४.	लगा रहता है और	अन्योन्य	९.	इन्हें एक दूसरे से
चेतः	२.	चित्त	संत्यागः	११.	अलग कर सकता है
गुणाः	५	गुण भी	मुमुक्षोः	८.	मुक्ति पाने का इच्छुक व्यक्ति
चेतसि	६.	चित्त की वृत्तियों में रहते हैं	अतितीर्षोः ॥	७.	फिर संसार-सागर से पार होकर
च प्रभो ।	१.	हे प्रभो !			

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! चित्त गुणों अर्थात् विषयों में लगा रहता है । और गुण भी चित्त की वृत्तियों में रहते हैं । फिर संसार-सागर से पार होकर मुक्ति पाने का इच्छुक व्यक्ति इन्हें एक दूसरे से कैसे अलग कर सकता है ।

अष्टदशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—एवं पृष्टो महादेवः स्वयंभूर्भूतभावनः ।
ध्यायमानः प्रश्नबीजं नाभ्यपद्यत कर्मधीः ॥१८॥

पदच्छेद— एवम् पृष्टः महादेवः स्वयम् भूः भूतभावनः ।
ध्यायमानः प्रश्न बीजम् न अभ्यपद्यत कर्मधीः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	५.	इस प्रकार	ध्यायमानः	७.	ध्यान करते हुये
पृष्टः	६.	पूछे जाने पर	प्रश्न	८.	इस प्रश्न के
महादेवः	१.	देवताओं के शिरोमणि	बीजम्	९.	मूल कारण को
स्वयम् भूः	४.	स्वयं भू ब्रह्मा जी	न	१०.	नहीं
भूत	२.	प्राणियों के	अभ्यपद्यत	११.	समझ सके
भावनः ।	३.	जन्म दाता	कर्मधीः ॥	१२.	क्योंकि उनकी बुद्धि कर्म प्रधान थी

श्लोकार्थ—देवताओं के शिरोमणि प्राणियों के जन्मदाता स्वयंभू ब्रह्मा जी इस प्रकार पूछे जाने पर ध्यान करते हुये इस प्रश्न के मूल कारण को नहीं समझ सके । क्योंकि उनकी बुद्धि कर्म प्रधान थी ॥

एकोनविंशः श्लोकः

स मामचिन्तयद् देवः प्रश्नपारतितीर्षया ।
तस्याहं हंसरूपेण सकाशमगमं तदा ॥१९॥

पदच्छेद— स: माम् अचिन्तयत् देवः प्रश्नपार तितीर्षया ।
तस्य अहम् हंस रूपेण सकाशम् अगमम् तदा ॥

शब्दार्थ—

सः	२. उन		तस्य	११. उनके
माम्	६. भक्ति-भाव से		अहम्	८. मैं
अचिन्तयत्	७. मेरा चिन्तन किया, तब		हंस	९. हंस का
देवः	३. ब्रह्मा जी ने इस		रूपेण	१०. रूप धारण करके
प्रश्नपार	४. प्रश्न का उत्तर		सकाशम्	१२. पास
अतितीर्षया ।	५. देने के लिये		अगमम्	१३. गया
			तदा ॥	१. उस समय

श्लोकार्थ—उस समय उन ब्रह्मा जी ने इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये भक्ति-भाव से मेरा चिन्तन किया । तब मैं हंस का रूप धारण करके उनके पास गया ॥

विंशः श्लोकः

दृष्ट्वा मां त उपव्रज्य कृत्वा पादाभिवन्दनम् ।
ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा पप्रच्छुः को भवानिति ॥२०॥

पदच्छेद— दृष्ट्वा माम् त उपव्रज्य कृत्वा पाद अभिवन्दनम् ।
ब्रह्माणम् अग्रतः कृत्वा पप्रच्छुः को भवान् इति ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	३. देखकर सनकादि		ब्रह्माणम्	४. ब्रह्मा को
माम्	२. मुझे		अग्रतः	५. आगे करके
तउपव्रज्य	७. मेरे पास आये और		कृत्वा	६. करके
कृत्वा	१०. करके		पप्रच्छुः	११. मुझ से पूछा कि
पाद	८. मेरे चरणों की		को भवान्	१२. आप कौन हैं !
अभिवन्दनम् ।	९. वन्दना		इति ॥	१. इस प्रकार

श्लोकार्थ—इस प्रकार मुझे देख कर सनकादि ब्रह्मा को आगे करके मेरे पास आये । और मेरे चरणों की वन्दना करके मुझसे पूछा कि आप कौन हैं !

एकविंशः श्लोकः

इत्यहं मुनिभिः पृष्टस्तत्त्वजिज्ञासुभिस्तदा ।
यदवोचमहं तेभ्यस्तदुद्धव निबोध मे ।।२१।।

पदच्छेद— इति अहम् मुनिभिः पृष्टः तत्त्वजिज्ञासुभिः तदा ।
यत् अवोचम् अहम् तेभ्यः तत् उद्धव निबोध मे ।।

शब्दार्थ—

इति	५.	इस प्रकार	यत्	६.	जो
अहम्	४.	मुझसे	अवोचम्	१०.	कुछ कहा
मुनिभिः	३.	सनकादि मुनियों के द्वारा	अहम्तेभ्यः	८.	मैंने उनसे
पृष्टः	६.	पूछे जाने पर	तत्	११.	उसे
तत्त्वजिज्ञासुभिः	२.	तत्त्व के जिज्ञासु	उद्धव	१.	हे प्रिय उद्धव !
तदा ।	७.	उस समय	निबोध मे ।।	१२.	तुम मुझसे सुनो !

श्लोकार्थ—हे प्रिय उद्धव ! तत्त्व के जिज्ञासु सनकादि मुनियों के द्वारा मुझसे इस प्रकार पूछे जाने पर उस समय मैंने उनसे जो कुछ कहा । उसे तुम मुझसे सुनो ।।

द्वाविंशः श्लोकः

वस्तुनो यद्यनानात्वमात्मनः प्रश्न ईदृशः ।
कथं घटेत वो विप्रा वक्तुर्वा मे क आश्रयः ।।२२।।

पदच्छेद— वस्तुनः यदि अनानात्वम् आत्मनः प्रश्नईदृशः ।
कथम् घटेत वः विप्रा वक्तुः वा मे क आश्रयः ।।

शब्दार्थ—

वस्तुनः	३.	परमार्थरूप वस्तु	कथम्	६.	कैसे
यदि	२.	यदि	घटेत	१०.	हो सकता है
अनानात्वम्	४.	नानात्व से रहित	वः	६.	आप लोगों का
आत्मनः	५.	तब आत्मा के बारे में	विप्रा	१.	हे ब्राह्मणों !
प्रश्न	८.	प्रश्न	वक्तुः वामे	११.	अथवा मेरे कहने का
ईदृशः ।	७.	ऐसा	कः आश्रयः ।।	१२.	आश्रय क्या होगा !

श्लोकार्थ—हे ब्राह्मणो ! यदि परमार्थरूप वस्तु नानात्व से रहित है । तब आत्मा के बारे में आप लोगों का ऐसा प्रश्न कैसे हो सकता है ? अथवा मेरे कहने का आश्रय क्या होगा ।।

त्रयोविंशः श्लोकः

पञ्चात्मकेषु भूतेषु समानेषु च वस्तुतः।
को भवानिति वः प्रश्नो वाचारम्भो ह्यनर्थकः ॥२३॥

पदच्छेद— पञ्चात्मकेषु भूतेषु समान नेषु च वस्तुतः।
कः भवान् इति वः प्रश्नः वाच आरम्भः हि अनर्थकः ॥

शब्दार्थ—

पञ्चात्मकेषु	२.	पञ्चात्मक होने के कारण	कः	८.	कौन हैं
भूतेषु	१.	समस्त प्राणियों के	भवान्	७.	आप
समान	५.	अभिन्न ही हैं	इति	९.	यह
नेषु	४.	वे सब	वः प्रश्नः	१०.	आपका प्रश्न
च	६.	और तब	वाच आरम्भः	११.	केवल वाणी का व्यवहार है
वस्तुतः।	३.	वस्तुतः	हि अनर्थकः ॥	१२.	और निरर्थक है

श्लोकार्थ—समस्त प्राणियों के पञ्चात्मक होने के कारण वस्तुतः वे सब अभिन्न ही हैं। और तब आप कौन हैं। यह आपका प्रश्न केवल वाणी का व्यवहार है। और निरर्थक है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

मनसा वचसा दृष्ट्या गृह्यतेऽन्यैरपीन्द्रियैः।
अहमेव न मत्तोऽन्यदिति बुध्यध्वमञ्जसा ॥२४॥

पदच्छेद— मनसा वचसा दृष्टचा गृह्यते अन्यैः अपि इन्द्रियैः।
अहम् एव न मत्तः अन्य दिति बुध्यध्वम् अञ्जसा ॥

शब्दार्थ—

मनसा	१.	मन से	अहम्	७.	वह सब मैं
वचसा	२.	वाणी से	एव	८.	ही हूँ
दृष्टया	३.	दृष्टि से	नमत्तः	९.	मुझसे
गृह्यते	६.	ग्रहण किया जाता है	अन्यदिति	१०.	भिन्न कुछ भी नहीं है
अन्यैः	४.	तथा अन्य	बुध्यध्वम्	१२.	समझ लीजिये
अपि इन्द्रियैः।	५.	इन्द्रियों से जो कुछ	अञ्जसा ॥	११.	इसे आप विचार पूर्वक

श्लोकार्थ—हे उद्धव! मन से, वाणी से, दृष्टि से तथा अन्य इन्द्रियों से जो कुछ ग्रहण किया जाता है। वह सब मैं ही हूँ। मुझसे भिन्न कुछ भी नहीं है। इसे आप विचार पूर्वक समझ लीजिये ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

गुणेष्वाविशते चेतो गुणाश्चेतसि च प्रजाः ।
जीवस्य देह उभयं गुणाश्चेतो मदात्मनः ॥२५॥

पदच्छेद— गुणेषु आविशते चेतः गुणाः चेतसि च प्रजाः ।
जीवस्य देहः उभयम् गुणाः चेतः मत् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

गुणेषु	३. गुणों में	जीवस्य	१३. जीव के
आविशते	४. प्रवेश कर जाता है	देहः	१४. देह अर्थात उपाधि हैं
चेतः	२. यह चित्त चिन्तन करते-करते	उभयम्	१०. दोनों ही
गुणाः	६. गुण अर्थात् विषय	गुणाः	८. ये विषय और
चेतसि	७. चित्त में प्रवेश कर जाते हैं	चेत्	९. चित्त
च	५. और	मत्	१०. मेरे
प्रजाः ।	१. हे पुत्रो !	आत्मनः ॥	१२. स्वरूप भूत

श्लोकार्थ—हे पुत्रो ! यह चित्त चिन्तन करते-करते गुणों में प्रवेश कर जाता है । और गुण अर्थात् विषय चित्त में प्रवेश कर जाते हैं । ये विषय और चित्त दोनों ही मेरे स्वरूप भूत जीव के देह अर्थात् उपाधि हैं ॥

षट्विंशः श्लोकः

गुणेषु चाविशच्चित्तमभीक्ष्णं गुण सेवया ।
गुणाश्च चित्तप्रभवा मद्रूप उभयं त्यजेत् ॥२६॥

पदच्छेद— गुणेषु च अविशत् चित्तम् अभीक्ष्णम् गुण सेवया ।
गुणाः च चित्त प्रभवा मद्रूप उभयम् त्यजेत् ॥

शब्दार्थ—

गुणेषु	५. विषयों में	गुणाः च	८. विषय
च	७. और	चित्त	९. चित्त में
अविशत्	६. आसक्त हो गया है	प्रभवाः	१०. प्रविष्ट हो गये हैं
चित्तम्	४. जो चित्त	मद्रूप	११. आत्मरूप परमात्मा का साक्षात्कार करके
अभीक्ष्णम्	१. बार-बार	उभयम्	१२. इन दोनों को
गुण	२. विषयों का	त्यजेत् ॥	त्याग देना चाहिये
सेवया ।	३. सेवन करते रहने से		

श्लोकार्थ—बार-बार विषयों का सेवन करते रहने से जो चित्त विषयों में आसक्त हो गया है । और विषय चित्त में प्रविष्ट हो गये हैं । आत्मरूप परमात्मा का साक्षात्कार करके इन दोनों को त्याग देना चाहिये ॥

सप्तविंशः श्लोकः

जाग्रत् स्वप्नः सुषुप्तं च गुणतो बुद्धिवृत्तयः ।
तासां विलक्षणो जीवः साक्षित्वेन विनिश्चितः ॥२७॥

पदच्छेद— जाग्रत् स्वप्नः सुषुप्तम् च गुणतः बुद्धि वृत्तयः ।
तासाम् विलक्षणः जीवः साक्षित्वेन विनिश्चितः ॥

शब्दार्थ—

जाग्रत्	१.	जाग्रत्	तासाम्	९.	उनसे
स्वप्नः	२.	स्वप्न	विलक्षणः	१०.	विलक्षण है
सुषुप्तम् च	३.	और सुषुप्ति अवस्थायें	जीवः	८.	जीव
गुणतः	४.	गुणों के अनुसार होती हैं	साक्षित्वेन	७.	इन वृत्तियों का साक्षी होने से
बुद्धि	५.	ये सब बुद्धि की	विनिश्चितः ॥	११.	यह निश्चित है ॥
वृत्तयः ।	६.	वृत्तियाँ हैं			

श्लोकार्थ—जाग्रत् स्वप्न और सुषप्ति अवस्थायें गुणों के अनुसार होती हैं । ये सब बुद्धि की वृत्तियाँ हैं । इन वृत्तियों का साक्षी होने से जीव उनसे विलक्षण है । यह निश्चित है ।

अष्टविंशः श्लोकः

यर्हि संसृति बन्धोऽयमात्मनो गुणवृत्तिदः ।
मयि तुर्ये स्थितो जह्यात् त्यागस्तद् गुणचेतसाम् ॥२८॥

पदच्छेद— यर्हि संसृति बन्धः अयम् आत्मनः गुण वृत्तिदः ।
मयि तुर्ये स्थितः जह्यात् त्यागः तत् गुण चेतसाम् ॥

शब्दार्थ—

यर्हि	३.	जो	मयि	८.	इसलिये मुक्ष
संसृति	१.	बृद्धि की वृत्ति द्वारा होनेवाला	तुर्ये	९.	तुरीय तत्त्व में
बन्धः	४.	बन्धन है, वह	स्थितः	१०.	स्थित होकर
अयम्	२.	यह	जह्यात्	११.	बुद्धि के बन्धन का परित्याग कर दे
आत्मनः	५.	आत्मा में	त्यागः	१४.	दोनों का त्याग हो जाता है
गुण	६.	त्रिगुणमयी	तत्	१२.	इससे
वृत्तिदः ।	७.	वृत्तियों का दान करना है	गुणचेतसाम् ॥	१३.	विषय और चित्त

श्लोकार्थ—बुद्धि की वृत्ति के द्वारा होने वाला यह जो बन्धन है । वह आत्मा में त्रिगुणमयी वृत्तियों का दान करता है । इसलिये मुक्ष तुरीय तत्त्व में स्थित होकर बुद्धि के बन्धन का परित्याग कर दे । इससे विषय और चित्त दोनों का परित्याग हो जाता है ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

अहङ्कार कृतं बन्धमात्मनोऽर्थ विपर्ययम् ।
विद्वान् निर्विद्य संसार चिन्तां तुर्ये स्थितस्त्यजेत् ॥२९॥

पदच्छेद— अहङ्कार कृतम् बन्धम् आत्मनः अर्थ विपर्ययम् ।
विद्वान् निर्विद्य संसार चिन्ताम् तुर्ये स्थितः त्यजेत् ॥

शब्दार्थ—

अहङ्कार	२.	अहंकार की ही	विद्वान्	७.	इस बात को जानकर
कृतम्	३.	रचना है जो	निर्विद्य	८.	विरक्त हो जाय और
बन्धम्	१.	यह बन्धन	संसार चिन्ताम्	११.	संसार की चिन्ता को
आत्मनः	४.	आत्मा के	तुर्ये	९.	तुरीय स्वरूप में
अर्थ	५.	स्वरूप को	स्थितः	१०.	स्थित होकर
विपर्ययम् ।	६.	छिपा देता है	त्यजेत् ॥	१२.	छोड़ दे

श्लोकार्थ—यह बन्धन अहंकार की ही रचना है। जो आत्मा के स्वरूप को छिपा देता है इस बात को जानकर विरक्त हो जाये और तुरीय स्वरूप में स्थित होकर संसार की चिन्ता को छोड़ दे।

त्रिंशः श्लोकः

यावन्नानार्थधीः पुंसो न निवर्तेत युक्तिभिः ।
जागर्त्यपि स्वपन्नज्ञः स्वप्ने जागरणं यथा ॥३०॥

पदच्छेद— यावत् नानाअर्थधीः पुंसः न निवर्तेत युक्तिभिः ।
जागर्ति अपि स्वपन् अज्ञः स्वप्ने जागरणम् यथा ॥

शब्दार्थ—

यावत्	२.	जब-तक	जागर्ति	९.	यद्यपि जागता है
नाना	२.	भिन्न-भिन्न	अपि	१०.	तथापि
अर्थ	४.	पदार्थों में सत्यत्व	स्वपन्	११.	सोता हुआ सा रहता है
धीः	५.	बुद्धि	अज्ञः	८.	तब-तक अज्ञानी
पुंसः	६.	मनुष्य की	स्वप्ने	१३.	स्वप्नावस्था में जान पड़ता है
निवर्तेत	७.	निवृत्त नहीं हो जाती है	जागरणम्	१४.	मैं जाग रहा हूँ
युक्तिभिः ।	६.	युक्तियों के द्वारा	यथा ॥	१२.	जैसे

श्लोकार्थ—मनुष्य की जब-तक भिन्न-भिन्न पदार्थों सत्यत्व बुद्धि युक्तियों के द्वारा निवृत्त नहीं हो जाती है। तब-तक अज्ञानी यद्यपि जागता है। तथापि सोता हुआ सा रहता है। जैसे स्वप्नावस्था में जान पड़ता है, जाग रहा हूँ ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

असत्त्वादात्मनोऽन्येषां भावानां तत्कृता भिदा ।
गतयो हेतवश्चास्य मृषा स्वप्नदृशो यथा ॥३१॥

पदच्छेद— असत्वात् आत्मनः अन्येषाम् भावानाम् तत् कृता भिदा ।
गतयः हेतवः च अस्य मृषा स्वप्नदृशः यथा ॥

शब्दार्थ—

असत्वात्	४. कुछ भी अस्तित्व नहीं है	गतयः	८. स्वर्गादि फल
आत्मनः	१. आत्मा से	हेतवः	११. कारणभूत कर्म-ये सब
अन्येषाम्	२. अन्य	च	९. और
भावानाम्	३. देहादि प्रपञ्चका	अस्य	१०. उनके
तत्	५. इसलिये उनके	मृषा	१४. मिथ्या हैं
कृता	६. कारण होने वाले	स्वप्नदृशः	१२. स्वप्न के
भिदा ।	७. वर्णाश्रमादि भेद	यथा ॥	१३. समान

श्लोकार्थ—आत्मा से अन्य देहादि प्रपञ्च का कुछ भी अस्तित्व नहीं है। इसलिये उनके कारण होने वाले वर्णाश्रमादि भेद स्वर्गादि फल और उनके कारणभूत कर्म ये सब स्वप्न के समान मिथ्या हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यो जागरे बहिरनुक्षणधर्मिणोऽर्थान् भुङ्क्ते समस्तकरणैर्हृदि तत्सदृक्षान् ।
स्वप्ने सुषुप्त उपसंहरते स एकः स्मृत्यन्वयात्त्रिगुणवृत्तिदृगिन्द्रियेशः ॥३२॥

पदच्छेद— यः जागरे बहिः अनुक्षणधर्मिणः अर्थान् भुङ्क्ते समस्त करणैः हृदितत् सदृक्षान् ।
स्वप्ने सुषुप्ते उपसंहरते सः एकः स्मृति अन्वयात् त्रिगुण वृत्तिदृक् इन्द्रिय ईशः ॥

शब्दार्थ—

यः जागरे	१. जो जाग्रत अवस्था में	सुषुप्ते	९. सुषुप्ति अवस्था में
बहिः अनुक्षण	२. बाहर दीखनेवाले	उपसंहरते	१०. लय का अनुभव करता है
धर्मिणः अर्थान्	३. क्षणभङ्गुर धर्म वाले पदार्थों का	सः एकः	११. वह एक ही है और वही
भुङ्क्ते	८. अनुभव करता है	स्मृति	१३. तीनों अवस्थाओं में स्मृति का
समस्तकरणैः	६. समस्त इन्द्रियों से	अन्वयात्	१४. अन्वय होने से वह
हृदि	७. हृदय में	त्रिगुण वृत्तिः	१५. त्रिगुण मयी अवस्थाओं का
तत् सदृक्षान्	४. जगत में देखे हुये पदार्थों के समान ही दृक्		१६. साक्षी है
स्वप्ने ।	५. स्वप्नावस्था के पदार्थों में भी	इन्द्रियईशः ॥	१२. इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि का स्वामी है

श्लोकार्थ—जो जाग्रत अवस्था में बाहर दीखने वाले क्षण भङ्गुर धर्म वाले पदार्थों का जगत में देखे हुये पदार्थों के समान ही स्वप्नावस्था के पदार्थों में भी समस्त इन्द्रियों से हृदय में अनुभव करता है। सुषुप्ति अवस्था में लय का अनुभव करता है। वह एक ही है और वही इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि का स्वामी है। तीनों अवस्थाओं में स्मृति का अन्वय होने से वह त्रिगुणमयी अवस्थाओं का साक्षी है ।

त्रयत्रिंशः श्लोकः

एवं विमृश्य गुणतो मनसस्त्र्यवस्था मन्मायया मयि कृता इति निश्चितार्थाः ।
संछिद्य हार्दमनुमानसदुक्तितीक्ष्णज्ञानासिना भजत माखिलसंशयाधिम् ।३३।

पदच्छेद— एवम् विमृश्य गुणतः मनसः त्रिअवस्था मत् माययामयिकृता इति निश्चित अर्था ।
संछिद्यहार्दम् अनुमानसदुक्ति तीक्ष्ण ज्ञान असिनाभजतम् अखिल संशयअधिम् ।।

शब्दार्थ—

एवम् विमृस्य	१.	ऐसा विचार कर	संछिद्य	१५.	छेदन करके
गुणतः	३.	गुणों के द्वारा	हार्दम्	१६.	हृदय में स्थित मुझ परमात्मा का
मनसःत्रिअवस्था	२.	मन की तीनों अवस्थायें	अनुमान	९.	तुम लोग अनुमान से
मत् मायया	४.	मेरी माया से	सदुक्ति	१०.	सत्पुरुषों द्वारा किये गये श्रवण
मयि	५.	मेरे अंश स्वरूप जीव में	तीक्ष्ण ज्ञान	११.	और तेज ज्ञानरूपी
कृता इति	६.	कल्पित की गई है ऐसा	असिना	१२.	खड्ग के द्वारा
निश्चित	८.	निश्चित करके	भजतमा	१७.	भजन करो
अर्थाः ।	७.	आत्मरूप अर्थ	अखिल संशय	१३.	सकल संशयों के
			आधिम् ।।	१४.	आधार अहंकार का

श्लोकार्थ—ऐसा विचार कर मन की तीनों अवस्थायें गुणों के द्वारा मेरी माया से मेरे अंशस्वरूप जीव में कल्पित की गई है । ऐसा आत्म रूप अर्थ निश्चित करके तुम लोग अनुमान से सत्पुरुषों द्वारा किये गये श्रवण और तेज ज्ञान रूपी खड्ग के द्वारा सकल संशयों के आधार अहंकार का छेदन करके हृदय में स्थित मुझ परमात्मा का भजन करो ।।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ईक्षेत विभ्रममिदं मनसो विलासं दृष्टं विनष्टमतिलोलमलातचक्रम् ।
विज्ञानमेकमुरुधेव विभाति माया स्वप्नस्त्रिधा गुणविसर्गकृतो विकल्पः ।३४।

पदच्छेद— ईक्षेत विभ्रमम् इदम् मनसः विलासम् दृष्टम् विनष्टम् अति लोलम् अलात चक्रम् ।
विज्ञानम् एकम् उरुधेव विभाति माया स्वप्नः त्रिधा गुण विसर्गकृतः विकल्पः ।।

शब्दार्थ—

ईक्षेत	८.	ऐसा समझे	विज्ञानम् एकार	९.	एक ज्ञान स्वरूप आत्मा ही
विभ्रमम्	७.	यह भ्रम मात्र है	उरुधेव	१०.	अनेक सा
इदम् मनसः	१.	यह जगत मन का	विभाति	११.	प्रतीत हो रहा है
विलासम्	२.	विलास है	माया	१६.	माया का खेल है
दृष्टम्	३.	दीखने पर भी	स्वप्नः	१५.	स्वप्न के समान
विनष्टम्	४.	प्रायः नष्ट है	त्रिधा	१२.	स्थूल शरीर इन्द्रियाँ-अन्तः करण तीनप्रकार का
अतिलोलम्	६.	अत्यन्त चञ्चल है	गुण विसर्गकृतः	१४.	गुणों के परिणाम की रचना है और
अलात चक्रम् ।	५.	अलात चक्र के समान	विकल्पः ।।	१३.	विकल्प

श्लोकार्थ—यह जगत मन का विलास है, दीखने पर भी प्रायः नष्ट है। अलात चक्र के समान अत्यन्त चञ्चल हैं । यह भ्रम मात्र है । ऐसा समझे एक ज्ञान स्वरूप आत्मा ही अनेक सा प्रतीत हो रहा है । स्थूल शरीर इन्द्रियाँ अन्तःकरण तीन प्रकार का विकल्प गुणों के परिणाम की रचना है । और स्वप्न के समान माया का खेल है ।।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

दृष्टिं ततः प्रतिनिवर्त्य निवृत्ततृष्णस्तूष्णीं भवेन्निजसुखानुभवो निरीहः ।
संदृश्यते क्व च यदीदमवस्तुबुद्ध्या त्यक्तं भ्रमाय न भवेत् स्मृतिरानिपातात्

पदच्छेद—दृष्टिम् ततः प्रतिनिवर्त्य निवृत्ततृष्णः तूष्णीम् भवेत् निजसुख अनुभवः निरीहः ।
संदृश्यते क्व च यदि इदम् अवस्तुबुद्ध्या त्यक्तम् भ्रमाय न भवेत्स्मृतिः आनिपातात् ।।

शब्दार्थ—					
दृष्टिम् ततः	१.	देहादिरूप दृश्य से दृष्टि	संदृश्यते	११.	देखने में आता है
प्रतिनिवर्त्य	२.	हटा कर	क्व च यदि	९.	यद्यपि कभी-कभी
निवृत्ततृष्णः	३.	तृष्णा रहित और	इदम्	१०.	यह देहादि प्रपञ्च
तूष्णीम्	७.	शान्त होकर	अवस्तु	१२.	यह आत्मवस्तु के अतिरिक्त
भवेत्	८.	मग्न हो जाय	बुद्ध्या	१३.	समझकर
निजसुख	५.	आत्मा के आनन्द के	त्यक्तम्	१४.	छोड़ा जा चुका है, इसलिये
अनुभवः	६.	अनुभव में	भ्रमाय न भवेत्	१५.	भ्रान्ति, तथा मोह उत्पन्न नहीं हो सकता
निरीहः ।	४.	निरीह होकर तथा	स्मृतिः	१७	संस्कार मात्र की प्रतीती
			आनिपातात् ।।	१६.	देहपात पर्यन्त

श्लोकार्थ— देहादि रूप दृश्य से दृष्टि हटाकर तृष्णा रहित और निरीह होकर तथा आत्मा के आनन्द के अनुभव में शान्त होकर मग्न हो जाय । यद्यपि कभी-कभी यह देहादि प्रपञ्च देखने में आता है यह आत्म वस्तु के अतिरिक्त समझकर छोड़ा जा चुका है । इसलिये भ्रान्ति तथा मोह उत्पन्न नहीं हो सकता, देह पात पर्यन्त संस्कार मात्र की प्रतीति होती है ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

देहं च नश्वरमवस्थितमुत्थितं वा सिद्धो न पश्यति यतोऽध्यगमत् स्वरूपम् ।
दैवादपेतमुत दैववशादुपेतं वासो यथा परिकृतं मदिरामदान्धः ॥३६॥

पदच्छेद— देहम् च नश्वरम् अवस्थितम् उत्थितम् वा सिद्धः न पश्यति यतःअध्यगमत् स्वरूपम् ।
दैवात् अपेतम् उत दैववशात् उपेतम् वासः यथा परिकृतम् मदिरा मद अन्धः ।।

शब्दार्थ—					
देहम् च	१७.	शरीर की इन बातों पर	दैवात्	१५.	या दैववश कहीं आया, गया है
नश्वरम्	१६	नश्वर	अपेतम् उत	९.	अथवा शरीर पर है
अवस्थितम्	१४.	बैठा है	दैववशात्	१२.	वह प्रारब्ध वश
उत्थितम् वा	१३.	खड़ा है अथवा	उपेतम् वासः	६.	वस्त्र गिर गया है
सिद्धः	८	वैसे ही सिद्ध पुरुष	यथा	१.	जैसे
न पश्यति	१८.	दृष्टि नहीं डालता है	परिकृतम्	५.	मेरे द्वारा पहना हुआ
यतः	९.	जिस शरीर से उसने	मदिरा	२.	मदिरा पीकर
अध्यगमत	११.	साक्षात्कार किया है	मद	३.	उन्मत्त पुरुष
स्वरूम् ।	१०.	अपने स्वरूप का	अन्धः ।।	४.	यह नहीं देखता है कि

श्लोकार्थ—जैसे मदिरा पीकर उन्मत्त पुरुष यह नहीं देखता है कि मेरे द्वारा पहना हुआ वस्त्र गिर गया है अथवा शरीर पर है । वैसे ही सिद्ध पुरुष जिस शरीर से उसने अपने स्वरूप का साक्षात्कार किया है वह प्रारब्धवश खड़ा है अथवा बैठा है । या दैववश कहीं आया, गया है । नश्वर शरीर की इन बातों पर दृष्टि नहीं डालता है ।।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

देहोऽपि दैववशगः खलु कर्म यावत् स्वारम्भकं प्रतिसमीक्षत एव सासुः।
तं सप्रपञ्चमधिरूढसमाधियोगः स्वाप्नं पुनर्न भजते प्रतिबुद्धवस्तुः ॥३७॥

पदच्छेद—देहः अपि दैव वशगः खलुकर्म यावत् स्व आरम्भकम् प्रतिसमीक्षते एव सासुः ।
तम् स प्रपञ्चम् अधिरुढसमाधि योगः स्वाप्नम् पुनः न भजते प्रति बुद्ध वस्तुः ॥

शब्दार्थ—

देहः अपि	२.	यह शरीर भी	तम्	१४.	उस
दैव वशगः	३.	प्रारब्ध के अधीन है	सप्रपञ्चम्	१३.	पुरुष-स्त्री-धन आदि के सहित
खलु	४.	इसलिये	अधिरुढ	१२.	आरुढ
कर्म यावत्	६.	कर्म जब तक हैं, तब-तक	समाधि योगः	११.	समाधि पर्यन्त योग में
स्व आरम्भकम्	५.	अपने आरम्भक	स्वाप्नम् पुनः	१५.	स्वप्न के समान शरीर को फिर कभी
प्रतिसमीक्षते	७.	उनकी प्रतीक्षा करता	न भजते	१६.	नहीं स्वीकार करता है
एव	८.	ही रहता है	प्रतिबुद्ध	१०.	साक्षात्कार करने वाला तथा
सासुः ।	१.	प्राण और इन्द्रियों सहित	वस्तुः ॥	९.	आत्म वस्तु का

श्लोकार्थ—प्राण और इन्द्रियों सहित यह शरीर भी प्रारब्ध के अधीन है । इसलिये अपने आरम्भक जब तक हैं तब-तक उनकी प्रतीक्षा करता ही रहता है । आत्म वस्तु का साक्षात्कार करने वाला तथा समाधि पर्यन्त योग में आरुढ पुरुष, स्त्री, धन आदि के सहित उस स्वप्न के समान शरीर को फिर कभी नहीं स्वीकार करता है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

मयैतदुक्तं वो विप्रा गुह्यं यत् सांख्ययोगयोः ।
जानीत माऽऽगतं यज्ञं युष्मद्धर्मविवक्षया ॥३८॥

पदच्छेद— मया एतद् उक्तम् वः विप्रा गुह्यम् यत् सांख्ययोगयोः ।
जानीत मा आगतम् यज्ञम् युष्मत् धर्म विवक्षया ॥

शब्दार्थ—

मया एतद्	२.	मैंने यह	जानीत	१२.	समझो
उक्तम्	६.	कहा है वह	मा	१०.	मुझे
वः विप्रा	१.	हे सनकादि ऋषियो ! तुमसे	आगतम्	९.	आयेहुये
गुह्यम्	५.	गोपनीय रहस्य	यज्ञम्	११.	यज्ञ भगवान्
यत्	३.	जो	युष्मत् धर्म	७.	तुम लोगों को तत्व ज्ञान का
सांख्य योगयोः ।	४.	सांख्य योग का	विवक्षया ॥	८.	उपदेश करने के लिये

श्लोकार्थ—हे सनकादि ऋषियो ! तुमसे मैंने यह जो सांख्य योग का गोपनीय रहस्य कहा है । वह तुम लोगों को तत्व ज्ञान का उपदेश करने के लिये आये हुये मुझे यज्ञ भगवान् समझो ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अहं योगस्य सांख्यस्य सत्यस्यर्तस्य तेजसः ।
परायणं द्विजश्रेष्ठाः श्रियः कीर्तेर्दमस्य च ॥३९॥

पदच्छेद—

अहम् योगस्य सांख्यस्य सत्यस्य तस्य तेजसः ।
परायणं द्विजश्रेष्ठाः श्रियः कीर्तेः दमस्य च ॥

शब्दार्थ—

अहम्	२. मैं		परायणम्	१२. परमगति-परम अधिष्ठान हूँ
योगस्य	३. योग		द्विजश्रेष्ठाः	१. हे विप्रवरो !
सांख्यस्य	४. सांख्य		श्रियः	८. श्री
सत्यस्य	५. सत्य		कीर्तेः	९. कीर्ति
ऋतस्य	६. ऋत		दमस्य	११. दम को भी
तेजसः ।	७. तेज		च ॥	११. और

श्लोकार्थ—हे विप्रवरो ! मैं योग, सांख्य, सत्य, तेज, श्री, कीर्ति और दम की भी परमगति-परम अधिष्ठान हूँ ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

मां भजन्ति गुणाः सर्वे निर्गुणं निरपेक्षकम् ।
सुहृदं प्रियमात्मानं साम्यासङ्गादयोगुणाः ॥४०॥

पदच्छेद—

माम भजन्ति गुणाः सर्वे निर्गुणम् निरपेक्षकम् ।
सुहृदम् प्रियम् आत्मानम् साम्य असङ्ग आदयः गुणाः ।

शब्दार्थ —

माम्	११. मेरा		सुहृदम्	३. सबका सुहृदय
भजन्ति	१२. सेवन करते		प्रियम्	४. प्रियतम और
गुणाः	१०. गुण		आत्मानम्	५. आत्मा हूँ तथा
सर्वे	९. सभी		साम्य	६. साम्य एवम्
निर्गुणम्	१. मैं सभी गुणों से रहित हूँ		असङ्गआदयः	७. असङ्गता आदि
निरपेक्षकम् ।	२. किसी की अपेक्षा नहींकरता हूँ		गुणाः ॥	८. गुण

श्लोकार्थ— मैं सभी गुणों से रहित हूँ । किसी की अपेक्षा नहीं करता हूँ । सबका सुहृदय प्रियतम और आत्मा हूँ । तथा साम्य एवम् असङ्गता आदि सभी गुण मेरा सेवन करते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

इति मे छिन्नसन्देहा मुनयः सनकादयः ।
सभाजयित्वा परया भक्त्यागृणत संस्तवैः ॥४१॥

पदच्छेद—

इति मे छिन्न सन्देहाः मुनयः सनक आदयः ।
सभाजयित्वा परया भक्त्या अगृणत संस्तवैः ॥

शब्दार्थ—

इति मे	१.	मैंने इस प्रकार	सभाजयित्वा	६.	मेरी पूजा करके
छिन्न	६.	मिटा दिये	परया	७.	उन्होंने परम
सन्देहा	५.	सन्देह	भक्त्या	८.	भक्ति से
मुनयः	४.	मुनियों के	अगृणत	११.	मेरी महिमा का गान किया
सनक	२.	सनक	संस्तवैः ॥	१०.	स्तुतियों के द्वारा
आदयः ।	३.	आदि			

श्लोकार्थ—इस प्रकार मैंने सनकादि मुनियों के सन्देह मिटा दिये। उन्होंने परम भक्ति से मेरी पूजा करके स्तुतियों के द्वारा मेरी महिमा का गान किया ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तैरहं पूजितः सम्यक् संस्तुतः परमर्षिभिः ।
प्रत्येयाय स्वकं धाम पश्यतः परमेष्ठिनः ॥४२॥

पदच्छेद—

तैः अहम् पूजितः सम्यक् संस्तुतः परम ऋषिभिः ।
प्रति एयाय स्वकम् धाम पश्यतः परमेष्ठिनः ॥

शब्दार्थ—

तैः	१.	जब उन	प्रति एयाय	११.	लौट आया
अहम्	४.	मेरी	स्वकम्	६.	अपने
पूजितः	५.	पूजा	धाम	१०.	धाम में
सम्यक्	३.	भली-भाँति	पश्यतः	८.	सामने ही अदृश्य होकर
संस्तुतः	६.	स्तुति करली	परमेष्ठिनः ॥	७.	तब मैं ब्रह्मा जी के
परम ऋषिभिः ।	२.	परम ऋषियों ने			

श्लोकार्थ—जब उन परम ऋषियों ने भली-भाँति मेरी पूजा और स्तुति कर ली। तब मैं ब्रह्मा जी के सामने ही अदृश्य होकर अपने धाम में लौट आया ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे त्रयोदशः अध्यायः ॥१३॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
एकादशः स्कन्धः
चतुर्दशः अध्यायः
प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच—वदन्ति कृष्ण श्रेयांसि बहूनि ब्रह्मवादिनः ।
तेषां विकल्पप्राधान्यमुताहो एकमुख्यता ॥१॥

पदच्छेद—

वदन्ति कृष्ण श्रेयांसि बहूनि ब्रह्मवादिनः ।
तेषाम् विकल्प प्राधान्यम् उत अहो एक मुख्यता ॥

शब्दार्थ—

वदन्ति	६.	बतलाते हैं	तेषाम्	७.	उनमें
कृष्ण	१.	हे श्रीकृष्ण !	विकल्प	८.	अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार
श्रेयांसि	४.	आत्म कल्याण के	प्राधान्यम्	९.	सभी श्रेष्ठ हैं
बहूनि	५.	अनेकों साधन	उत अहो	१०.	अथवा
ब्रह्म	२.	ब्रह्म	एक	११.	किसी एक की
वादिन ।	३.	वादी महात्मा	मुख्यता ॥	१२.	प्रधान्यता है

श्लोकार्थ—हे श्रीकृष्ण ! ब्रह्म वादी महात्मा आत्म कल्याण के अनेकों साधन बतलाते हैं । उनमें अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार सभी श्रेष्ठ हैं । अथवा किसी एक की प्राधान्यता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

भवतोदाहृतः स्वामिन् भक्तियोगोऽनपेक्षितः ।
निरस्य सर्वतः सङ्गं येन त्वय्याविशेन्मनः ॥२॥

पदच्छेद—

भवता उदाहृतः स्वामिन् भक्ति योगः अनपेक्षितः ।
निरस्य सर्वतः सङ्गं येन त्वयि आविशेत् मनः ॥

शब्दार्थ—

भवता	२.	आपने तो	सर्वतः	६.	सब ओर से
उदाहृतः	५.	बतलाया है	सङ्गं	७.	आसक्ति
स्वामिन्	१.	मेरे स्वामी	येन	६.	क्योंकि इसी से
भक्तियोगः	३.	भक्ति योग को	त्वयि	११.	आप में ही
अनपेक्षितः	४.	निरपेक्ष एवं स्वतंत्र साधन	आविशेत्	१२.	तन्मय हो जाता है
निरस्य ।	८.	छोड़कर	मनः ॥	१०.	मन

श्लोकार्थ—मेरे स्वामी आपने तो भक्ति योग को निरपेक्ष एवं स्वतंत्र साधन बतलाया है क्योंकि उसी से सब ओर से आसक्ति छोड़कर मन आप में ही तन्मय हो जाता है ॥

तृतीयः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—कालेन नष्टा प्रलये वाणीयं वेदसंज्ञिता ।
मयाऽऽदौ ब्रह्मणे प्रोक्ता धर्मो यस्यां मदात्मकः ॥३॥

पदच्छेद—

कालेन नष्टा प्रलये वाणी इयम् वेद संज्ञिता ।
मया आदौ ब्रह्मणे प्रोक्ता धर्मो यस्याम् मत् आत्मकः ॥

शब्दार्थ—

कालेन	४.	समय के फेर से	मया	८.	मैंने अपने सङ्कल्प से ही
नष्टा	६.	लुप्त हो गई थी	आदौ	७.	फिर सृष्टि के समय
प्रलये	५.	प्रलय के अवसर पर	ब्रह्मणे प्रोक्ता	९.	इसका ब्रह्मा को उपदेश किया
वाणी	३.	वाणी	धर्मो	१२.	भागवत धर्म का वर्णन है
इयम्वेद	१.	यह वेद	यस्याम्	१०.	इसमें
संज्ञिता ।	२.	नामवाली	मत् आत्मकः ॥	११.	मेरे स्वरूप भूत

श्लोकार्थ—यह वेद नामवाली वाणी समय के फेर से प्रलय के अवसर पर लुप्त हो गई थी। फिर सृष्टि के समय मैंने अपने सङ्कल्प से ही इसका ब्रह्मा को उपदेश किया था। इसमें मेरे स्वरूप भूत भागवत धर्म का ही वर्णन है ॥

चतुर्थः श्लोकः

तेन प्रोक्ता च पुत्राय मनवे पूर्वजाय सा ।
ततो भृग्वादयोऽगृह्णन् सप्त ब्रह्ममहर्षयः ॥४॥

पदच्छेद—

तेन प्रोक्ता च पुत्राय मनवे पूर्वजाय सा ।
ततः भृगु आदयः अगृह्णन् सप्त ब्रह्म महर्षयः ॥

शब्दार्थ—

तेन	१.	उन ब्रह्माजी ने	ततः	७.	उनसे
प्रोक्ता	५.	उपदेश किया	भृगुः	८.	भृगु-अङ्गिरा-मरीचि
च	६.	और	आदयः	९.	आदि ऋषियों ने तथा
पुत्राय मनवे	३.	पुत्र मनु को	अगृह्णन्	१२.	उसे ग्रहण किया
पूर्वजाय	२.	अपने ज्येष्ठ	सप्त	११.	इन सात
सा ।	४.	इस विद्या का	ब्रह्ममहर्षयः ॥	११.	प्रजापति महर्षियों ने

श्लोकार्थ—उन ब्रह्माजी ने अपने ज्येष्ठ पुत्र मनु को इस विद्या का उपदेश किया। और उनसे भृगु-अङ्गिरा-मरीचि आदि ऋषियों ने तथा इन सात महर्षियों ने उसे ग्रहण किया ॥

पञ्चमः श्लोकः

तेभ्यः पितृभ्यस्तत्पुत्रा देवदानवगुह्यकाः ।
मनुष्याः सिद्धगन्धर्वाः सविद्याधरचारणाः ॥५॥

पदच्छेद—

तेभ्यः पितृभ्यः तत् पुत्राः देव दानव गुह्यकाः ।
मनुष्याः सिद्ध गन्धर्वाः सविद्याधरचारणाः ॥

शब्दार्थ—

तेभ्यः	२.	इन्हीं ब्रह्मर्षियों से	मनुष्याः	७.	मनुष्य
पितृभ्यः	१.	अपने पूर्वज	सिद्ध	८.	सिद्ध
तत् पुत्राः	३.	उनकी सन्तान	गन्धर्वाः	९.	गन्धर्व
देव	४.	देवता	सः	११.	और
दानव	५	दानव	विद्याधर	१०.	विद्याधर
गुह्यकाः ।	६.	गुह्यक	चारणाः ॥	१२.	चारणों नेउन्हें प्राप्त किया

श्लोकार्थ—अपने पूर्वज इन्हीं ब्रह्मर्षियों से उनकी सन्तान देवता-दानव-गुह्यक, मनुष्य, सिद्ध, गन्धर्व, विद्याधर और चारणों ने उसे धारण किया ॥

षष्ठः श्लोकः

किन्देवाः किन्नरा नागा रक्षःकिम्पुरुषादयः ।
बह्व्यस्तेषां प्रकृतयो रजःसत्त्वतमोभुवः ॥६॥

पदच्छेद—

किन्देवाः किन्नराः नागाः रक्षः किम्पुरुष आदयः ।
बह्व्यः तेषाम् प्रकृतयः रजः सत्त्व तमः भुवः ॥

शब्दार्थ—

किन्देवाः	१.	किन्देव	बह्व्यः	१२.	भिन्न-भिन्न हैं
किन्नराः	२.	किन्नर	तेषाम्	७.	उनकी
नागाः	३.	नाग	प्रकृतयः	८.	प्रकृतियाँ
रक्षः	४.	राक्षस और	रजः	१०.	रजोगुण और
किम्पुरुष	५.	किम्पुरुष	सत्त्व	९.	सत्त्व गुण
आदयः ।	६.	आदि ने इसे पूर्वजों से पाया	तमः भुवः ॥	११.	तमोगुण से उत्पन्न होने से

श्लोकार्थ—किन्देव, किन्नर, नाग, राक्षस और किम्पुरुष आदि ने इसे पूर्वजों से पाया । उनकी प्रकृतियाँ सत्त्वगुण-रजोगुण और तमोगुण से उत्पन्न होने से भिन्न-भिन्न है ॥

सप्तम : श्लोकः

याभिर्भूतानि भिद्यन्ते भूतानां मतयस्तथा ।
यथाप्रकृति सर्वेषां चित्रा वाचः स्रवन्ति हि ॥७॥

पदच्छेद—

याभिः भूतानि भिद्यन्ते भूतानाम् मतयः तथा ।
यथा प्रकृति सर्वेषाम् चित्राः वाचः स्नवन्तिहि ॥

शब्दार्थ—

याभिः	१. इन्हीं गुणों के कारण	यथा	८.	अनुसार वे
भूतानि	२. प्राणियों में	प्रकृति	७.	अपनी प्रकृति के
भिद्यन्ते	६. भेद हो जाता है और	सर्वेषाम्	९.	सभी
भूतानाम्	४. उन प्राणियों की	चित्राः	११.	भिन्न-भिन्न अर्थ
मतयः	५. बुद्धि वृत्तियों में	वाचः	१०.	वेद वाणी के
तथा ।	३. तथा	स्नवन्तिहि ॥	१२.	ग्रहण करते हैं

श्लोकार्थ—इन्हीं गुणों के कारण प्राणियों में तथा उन प्राणियों की बुद्धि वृत्तियों में भेद हो जाता है । और अपनी प्रकृति के अनुसार वे वेद वाणी के भिन्न-भिन्न अर्थ ग्रहण करते हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

एवं प्रकृतिवैचित्र्याद् भिद्यन्ते मतयो नृणाम् ।
पारम्पर्येण केषाञ्चित् पाखण्डमतयोऽपरे ॥८॥

पदच्छेद—

एवम् प्रकृति वैचित्र्याद् भिद्यन्ते मयतः नृणाम् ।
पारम्पर्येण केषाञ्चित् पाखण्डमतयः अपरे ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इसी प्रकार	पारम्पर्येण	४.	परम्परागत उपदेश के भेद से
प्रकृति	२. स्वभाव	केषाञ्चित्	९.	कुछ लोग तो
वैचित्र्याद्	३. भेद तथा	पाखण्ड	१०.	पाखण्ड से
भिद्यन्ते	७. भिन्नता आ जाती है	मततः	११.	बुद्धि वाले भी हो जाते हैं
मतयः	६. बुद्धि में	अपरे ॥	८.	और अन्य
नृणाम् ।	५. मनुष्यों की			

श्लोकार्थ—इसी प्रकार-भेद तथा परमपरागत उपदेश के भेद से मनुष्यों की बुद्धि में भिन्नता आ जाती है । और अन्य कुछ लोग तो पाखण्ड से बुद्धि वाले भी हो जाते हैं ॥

नवमः श्लोकः

मन्मायामोहितधियः पुरुषाः पुरुषर्षभ ।
श्रेयो वदन्त्यनेकान्तं यथाकर्म यथारुचि ॥९॥

पदच्छेद— मत् माया मोहित धियः पुरुषाः पुरुषर्षभ ।
श्रेयः वदन्ति अनेकान्तम् यथा कर्म यथा रुचि ॥

शब्दार्थ—

मत्	४. मेरी	श्रेयः	१०.	आत्म कल्याण के
मायः	५. माया से	वदन्ति	१२.	बतलाते हैं
मोहित	६. मोहित हो रही है	अनेकान्तम्	११.	अनेक साधन
धियः	३. बुद्धि	यथा कर्म	७.	इसलिये अपने कर्म संस्कार
पुरुषा	२. सभी मनुष्यों की	यथा	८.	तथा
पुरुषर्षभ ।	१. प्रिय उद्धव !	रुचि ॥	९.	रुचि के अनुसार वे

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! सभी मनुष्यों की बुद्धि मेरी माया से मोहित हो रही है । इसलिये अपने कर्म संस्कार तथा रुचि के अनुसार वे आत्म कल्याण के अनेक साधन बतलाते हैं ॥

दशमः श्लोकः

धर्ममेके यशश्चान्ये कामं सत्यं दमं शमम् ।
अन्ये वदन्ति स्वार्थं वा ऐश्वर्यं त्यागभोजनम् ॥१०॥

पदच्छेद— धर्मम् एके यशः च अन्ये कामम् सत्यम् दमम् शमम् ।
अन्ये वदन्ति स्वार्थम् वा ऐश्वर्यम् त्याग भोजनम् ॥

शब्दार्थ—

धर्मम्	२. धर्म को	अन्ये	१२.	अन्य
एके	१. एकाचार्य पूर्वमीमांसक	वदन्ति	१५.	बतलाते हैं
यशः	४. यश को	स्वार्थम्	१४.	मनुष्य जीवन का स्वार्थ परमलाभ
च अन्ये	३. और दूसरे साहित्याचार्य	वा	११.	तथा
कामम्	५. काम शास्त्री काम को	ऐश्वर्यम्	९.	दण्ड नीतिकार ऐश्वर्य को
सत्यम्	६. योगवेत्ता सत्य	त्याग	१०.	त्यागी त्याग को
दमम्	८. दमादि को	भोजनम् ॥	१३.	भोग को ही
शमम् ।	७. शम-तथा			

श्लोकार्थ—एकाचार्य पूर्व मीमांसक धर्म को और दूसरे साहित्याचार्य यश को. काम शास्त्री काम को, योगवेत्ता सत्य, शम तथा दमादि को, दण्डनीति कार ऐश्वर्य को, त्यागी त्याग को तथा अन्य भोग को ही मनुष्य जीवन का स्वार्थ परमलाभ बतलाते है ॥

एकादशः श्लोकः

केचिद् यज्ञतपोदानं व्रतानि नियमान् यमान् ।
आद्यन्तवन्त एवैषां लोकाः कर्मविनिर्मिताः ।
दुःखोदर्कास्तमोनिष्ठाः क्षुद्रानन्दाः शुचार्पिताः ॥११॥

पदच्छेद— केचिद् यज्ञ तपः दानम् व्रतानि नियमान् यमान् ।
आद्यन्तवन्त एव एषाम् लोकाः कर्म विनिर्मिताः ।
दुःख उदर्काः तमः निष्ठाः क्षुद्र आनन्दाः शुचा अर्पिताः ॥

शब्दार्थ—			
केचित्	१. कोई कर्म योगी लोग	कर्म	६. क्योंकि वे कर्मों से
यज्ञ-तपः	२. यज्ञ-तपः	विनिर्मिताः	१०. प्राप्त होने वाले है । अतः
दानम् व्रतानि	३. दानम्-व्रत तथा	दुःख उदर्काः	११. वे दुःख ही देने वाले हैं
नियमान्	५. नियम को पुरुषार्थ बतलाते हैं	तमः	१२. घोर अज्ञान ही
यमान्	४. यम और	निष्ठाः	१३. उनकी गति है
आद्यन्तवन्तएव	८. उत्पत्ति और नाशवान ही हैं	क्षुद्र	१५. क्षुद्र ही है तथा वे
एषाम्	६. इन कर्मों के फल रूप	आनन्दा	१४. उनसे मिलने वाला सुख भी
लोकाः ।	७. प्राप्त होने वाले लोक भी	शुचा अर्पिताः ।	१६. शोक से परिपूर्ण है

श्लोकार्थ—कोई कर्म योगी लोग यज्ञ-तप-दान-व्रत और यम-नियम को पुरुषार्थ बतलाते हैं । इन कर्मों के फल रूप प्राप्त होने वाले लोक भी उत्पत्ति और नाशवान् हैं । क्योंकि वे कर्मों से प्राप्त होने वाले हैं । अतः वे घोर दुःख ही देते हैं । घोर अज्ञान ही उनकी गति है । उनसे मिलने वाला सुख भी क्षुद्र ही है । तथा वे शोक से परिपूर्ण हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

मय्यर्पितात्मनः सभ्य निरपेक्षस्य सर्वतः ।
मयाऽऽत्मना सुखं यत्तत् कुतः स्याद् विषयात्मनाम् ॥१२॥

पदच्छेद— मयि अर्पित आत्मनः सभ्य निरपेक्षस्य सर्वतः ।
मया आत्मना सुखम् यत्तत् कुतः स्यात् विषय आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—			
मयि	४. जिसने मुझमें ही अपने	मया	८. मेरे स्फुरित होने से
अर्पित	६. लगा रखा है	आत्मना	७. उसकी आत्मा में
आत्मनः	५. अन्तः करण को	सुखम्-यत्	६. उसे जो सुख मिलता है
सभ्य	१. हे उद्धव !	तत्	१० वह सुख
निरपेक्षस्य	३. निरपेक्ष होकर	कुतः स्यात्	१२. कैसे मिल सकता है
सर्वतः ।	२. सब ओर से	विषय आत्मनाम् ॥	११. विषय परायण लोगों को

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! सब ओर से निरपेक्ष होकर जिसने मुझमें ही अन्तःकरण को लगा रक्खा है । उसकी आत्मा में मेरे स्फुरित होने से उसे जो सुख मिलता है । वह सुख विषय परायण लोगों को कैसे मिल सकता है ।

त्रयोदशः श्लोकः

अकिञ्चनस्य दान्तस्य शान्तस्य समचेतसः ।
मया सन्तुष्टमनसः सर्वाः सुखमया दिशः ॥१३॥

पदच्छेद— अकिञ्चनस्य दान्तस्य शान्तस्य समचेतसः ।
मया सन्तुष्ट मनसः सर्वाः सुखमया दिशः ॥

शब्दार्थ—

अकिञ्चनस्य	२.	अकिञ्चन हैं तथा	मया	८.	मेरी प्राप्ति से ही
अस्य	१.	जो	सन्तुष्ट	९.	सन्तुष्ट हो गया है
दान्तस्य	३.	इन्द्रियों पर विजय पाकर	मनसः	७.	जिसका मन
शान्तस्य	४.	शान्त	सर्वाः	१०.	उसके लिये
अस्य	५.	और	सुखमया	१२.	आनन्द से परिपूर्ण हैं
समचेतसः ।	६.	समदर्शी हो गया है	दिशः ॥	११.	सभी दिशाएँ

श्लोकार्थ—जो अकिञ्चन है तथा इन्द्रियों पर विजय पाकर शान्त और समदर्शी हो गया है। उसके लिये सभी दिशाएँ आनन्द से परिपूर्ण हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

न पारमेष्ठ्यं न महेन्द्रधिष्ण्यं न सार्वभौमं न रसाधिपत्यम् ।
न योगसिद्धीरपुनर्भवं वा मय्यर्पितात्मेच्छति मद् विनान्यत् ॥१४॥

पदच्छेद— न पारमेष्ठ्यम् न महेन्द्रधिष्ण्यम् न सार्वभौमम् न रसाधिपत्यम् ।
न योग सिद्धिम् अपुनः भवम् वा मयि अर्पितात्मा इच्छति मद् विनान्यत् ॥

शब्दार्थ—

न	३.	वह न तो	न योगसिद्धिम्	१०.	न योग की सिद्धियाँ चाहता है
पारमेष्ठ्यम्	४.	ब्रह्मा का पद चाहता है	अपुनः भवम्	१२.	मोक्ष की कामना करता है
न	५.	और न	वा	११.	अथवा
महेन्द्रधिष्ण्यम्	६.	देवराज इन्द्र का	मयि	१.	जिसने मुझमें
न सार्व	७.	न सम्राट	अर्पितात्मा	२.	अपने आपको अर्पित कर दिया है
भौमम्	८.	बनने की इच्छा रखता है	इच्छति	१४.	नहीं चाहता है
न रसाधिपत्यम् ।	९.	न रसातल का स्वामी	मत् विनान्यत् ॥	१३.	वह मेरे अतिरिक्त और कुछ भी

श्लोकार्थ—जिसने मुझमें अपने आपको अर्पित कर दिया है, वह न तो ब्रह्मा का पद चाहता है और न देवराज इन्द्र का, न सम्राट् बनने की इच्छा रखता है, न रसातल का स्वामी होना चाहता है। योग की सिद्धियाँ चाहता है अथवा न मोक्ष की कामना करता है। वह मेरे अतिरिक्त और कुछ भी नहीं चाहता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

न तथा मे प्रियतम आत्मयोनिर्न शङ्करः ।
न च सङ्कर्षणो न श्रीर्नैवात्मा च यथा भवान् ॥१५॥

पदच्छेद— न तथा मे प्रियतमः आत्मयोनिः न शङ्करः ।
न च सङ्कर्षणः न श्रीः न एव आत्मा च यथ भवान् ॥

शब्दार्थ—

न	६.	न तो	न च	९.	और न
तथा	३.	उतने	सङ्कर्षणः	१०.	सगे भाई बलराम हैं
मे	५.	मुझे	न श्रीः	११.	न लक्ष्मी जी हैं और
प्रियतमः	४.	प्रिय	न एव	१२.	न ही
आत्मयोनिः	७.	स्वयम् ब्रह्मा हैं और	आत्मा	१३.	अपना आत्मा उतना प्रिय है
न शङ्करः ।	८.	नहीं शङ्कर हैं	च यथा	२.	जितने प्रिय हो
			भवान् ॥	१.	हे उद्धव ! तुम मुझे

श्लोकार्थ—हे उद्धाव ! तुम मुझे जितने प्रिय हो, उतने प्रिय मुझे न तो स्वयम् ब्रह्मा हैं और न शङ्कर ही हैं । और न सगे भाई बलराम हो हैं । न लक्ष्मी हैं, और न ही अपना आत्मा उतना प्रिय है ॥

षोडशः श्लोकः

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनम् ।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः ॥१६॥

पदच्छेद— निरपेक्षम् मुनिम् शान्तम् निर्वैरम् समदर्शनम् ।
अनुव्रजामि अहम् नित्यम् पूयेय इति अङ्घ्रिरेणुभिः ॥

शब्दार्थ—

निरपेक्षम्	१.	जिसे किसी की अपेक्षा नहीं है	अहम्	६.	मैं
मुनिम्	२.	जो मुनि है	नित्यम्	७.	नित्य उसके
शान्तम्	४.	शान्त-भाव से	पूयेय	१२.	मुझे पवित्र कर दे
निर्वैरम्	३.	वैर भाव से रहित होकर	इति	९.	कि
समदर्शनम्	५.	सर्वत्र सम दृष्टि रखता है	अङ्घ्रि	१०.	उसके चरणों की
अनुव्रजामि ।	८.	पोछे-पीछे घूमा करता हूँ	रेणुभिः ॥	११.	धूलि मुझ पर गिरे और

श्लोकार्थ—जिसे किसी की अपेक्षा नहीं है । जो मुनि है । और वैर-भाव से रहित होकर शान्त-भाव से सर्वत्र सम दृष्टि रखता है । मैं नित्य उसके पीछे-पीछे घूमा करता हूँ । कि उसके चरणों की धूलि मुझ पर गिरे । और मुझे पवित्र कर दे ॥

सप्तदशः श्लोकः

निष्किञ्चना मय्यनुरक्तचेतसः शान्ता महान्तोऽखिलजीववत्सलाः ।
कामैरनालब्धधियो जुषन्ति यत् तन्नैरपेक्ष्यं न विदुः सुखं मम ॥१७॥

पदच्छेद– निष्किञ्चनाः मयि अनुरक्त चेतसः शान्ताः महान्तः अखिल जीव वत्सलाः ।
कामैः अनालब्धधियः जुषन्ति यत् तत् नैरपेक्ष्यम् न विदुः सुखम् मम ॥

शब्दार्थ—

निष्किञ्चनाः	१.	जो संग्रह परिग्रह से रहित है	कामैः	६.	किसी प्रकार की कामना
मयि	२.	मुझ में	अनालब्ध	११	छू नहीं पाती है
अनुरक्त	३.	जिनका लगा है	धियः	१०.	जिनकी बुद्धि का
चेतसः	४.	चित्त	जुषन्ति	१३.	अनुवभ होता है
शान्ताः	५.	जो शान्त और	यत्-तत्	१४.	उस सुख से
महान्तः	६.	उदार हैं तथा	नैरपेक्ष्यम्	१५.	निरपेक्ष प्राणियों को
अखिलजीव	७.	समस्त प्राणियों के प्रति	न विदुः	१६.	उसका ज्ञान नहीं होता
वत्सलाः ।	८.	दया का भाव रखते हैं	सुखम्मम ॥	१२.	जिस परमानन्द स्वरूप का

श्लोकार्थ—जो संग्रह-परिग्रह से रहित हैं। मुझमें जिनका चित्त लगा है। जो शान्त और उदार हैं, तथा समस्त प्राणियों के प्रति दया का भाव रखते हैं। किसी प्रकार की कामना जिनकी बुद्धि को छू नहीं पाती है। उन्हें जिस परमानन्द स्वरूप का अनुभव होता है। उस सुख से निरपेक्ष प्राणियों को उसका ज्ञान नहीं होता है ॥

अष्टदशः श्लोकः

बाध्यमानोऽपि मद्भक्तो विषयैरजितेन्द्रियः ।
प्रायः प्रगल्भया भक्त्या विषयैर्नाभिभूयते ॥१८॥

पदच्छेद— बाध्यमानः अपि मत् भक्तः विषयैः अजितेन्द्रियः ।
प्रायः प्रगल्भया भक्त्या विषयैः न अभिभूयते ॥

शब्दार्थ—

बाध्यमानः	६.	जिसे बाधा पहुँचाते रहते हैं	प्रायः	७.	वह भी प्रायः
अपि	५.	भी	प्रगल्भया	८.	क्षण-क्षण बढ़ने वाली
मत्	१.	मेरा	भक्त्या	९.	भक्ति के प्रभाव से
भक्तः	२.	भक्त	विषयैः	१०.	विषयों से
विषयैः	४.	संसार के विषय	न	१२.	नहीं होता है
अजितेन्द्रियः ।	३.	जितेन्द्रिय नहीं हो सका है	अभिभूयते ॥	११.	पराजित

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! मेरा जो भक्त जितेन्द्रिय नहीं हो सका है। संसार के विषय भी जिसे बाधा पहुँचाते रहते हैं। वह भी प्रायः क्षण-क्षण में बढ़ने वाली भक्ति के प्रभाव से विषयों से पराजित नहीं होता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यथाग्निः सुसमृद्धार्चिः करोत्येधांसि भस्मसात् ।
तथा मद्विषया भक्तिरुद्धवैनांसि कृत्स्नशः ॥१६॥

पदच्छेद—

यथा अग्निः सुसमृद्ध अर्चिः करोति एधांसि भस्मसात् ।
तथा मत् विषया भक्तिः उद्धव एनांसि कृत्स्नशः ॥

शब्दार्थ—

यथा	२.	जैसे	तथा	६.	उसी प्रकार
अग्निः	४.	आग की	मत्	१०.	मेरी
सुसमृद्ध	३	धधकती हुई	विषया	१२.	विषय बनाने वाली
अर्चिः	५.	लपटें	भक्तिः	११.	भक्ति भी
करोति	८.	कर डालती हैं	उद्धवः	१.	हे उद्धव !
एधांसि	६.	ईंधन को	एनांसि	१४.	पाप राशि को जला डालती हैं
भस्मसात् ।	७.	जलाकर भस्म	कृत्स्नशः ॥	१३.	समस्त

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! जैसे धधकती हुई आग की लपटें ईंधन को जलाकर भस्म कर डालती हैं । उसी प्रकार मेरी भक्ति भी विषय बनाने वाली समस्त पाप राशि को जला डालती है ॥

विंशः श्लोकः

न साधयति मां योगो न सांख्यं धर्म उद्धव ।
न स्वाध्यायस्तपस्त्यागो यथा भक्तिर्ममोर्जिता ॥२०॥

पदच्छेद—

न साधयति माम् योगः न सांख्यम् धर्म उद्धव ।
न स्वाध्यायः तपः त्यागः यथा भक्तिः मम ऊर्जिता ॥

शब्दार्थ—

न साधयति	६.	उतने समर्थ नहीं हैं	न स्वाध्यायः	५.	जप-पाठ और
माम्	८.	मुझे प्राप्त कराने में	तपः	६.	तप
योगः	२.	योग साधन	त्यागः	७.	त्याग
न सांख्यम्	३.	ज्ञान विज्ञान	यथा	१०.	जितनी
धर्म	४.	धर्मानुष्ठान	भक्तिः	१२.	मेरी भक्ति है
उद्धव ।	१.	हे उद्धव !	मम ऊर्जिताः ॥	११.	दिनों-दिन बढ़ने वाली

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! योग साधन, ज्ञान-विज्ञान, धर्मानुष्ठान जप-पाठ और तप-त्याग मुझे प्राप्त कराने में उतने समर्थ नहीं हैं । जितनी दिनों-दिन बढ़ने वाली भक्ति है ॥

एकविंशः श्लोकः

भक्त्याहमेकया ग्राह्यः श्रद्धयाऽऽत्मा प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनाति मन्निष्ठा श्वपाकानपि सम्भवात् ॥२१॥

पदच्छेद— भक्त्या अहम् एकया ग्राह्यः श्रद्धया आत्मा प्रियः सताम् ।
भक्तिः पुनाति यत् निष्ठाः श्वपाकान् अपि सम्भवात् ॥

शब्दार्थ—

भक्त्या	५. भक्ति से		भक्तिः	८. भक्ति	
अहम् एकया	३. मैं अनन्य		पुनाति	१०. पवित्र कर देती है	
ग्राह्यः	६. पकड़ में आता हूँ		मत्निष्ठा	७. मेरी अनन्य	
श्रद्धया	४. श्रद्धा और		श्वपाकान्	१२. चाण्डाल हैं	
आत्मा	२. आत्मा हूँ		अपि	९. उन्हें भी	
प्रियः सताम् ।	१. मैं सन्तों का प्रियतम		सम्भवात् ॥	११. जो जन्म से ही	

श्लोकार्थ—मैं सन्तों का प्रियतम आत्मा हूँ । मैं अनन्य श्रद्धा और भक्ति से पकड़ में आता हूँ । मेरी अनन्य भक्ति उन्हें भी पवित्र कर देतो है । जो जन्म से ही चाण्डाल हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

धर्मः सत्यदयोपेतो विद्या वा तपसान्विता ।
मद्भक्त्यापेतमात्मानं न सम्यक् प्रपुनाति हि ॥२२॥

पदच्छेद— धर्मः सत्य दया उपेतः विद्या वा तपसा अन्विता ।
मत् भक्त्या अपेतम् आत्मानम् न सम्यक् प्रपुनाति हि ॥

शब्दार्थ—

धर्मः	७. धर्म	मत्	१. जो मेरी
सत्य दया	५. सत्य और दया से	भक्त्या	२. भक्ति से
उपेतः	६. युक्त	अपेतम्	३. वञ्चित है उनके
विद्या	१०. विद्या भी	आत्मानम्	४. चित्त को
वा तपसा	८. और तपस्या से	न सम्यक्	११. भली भाँति
अन्विता ।	९. युक्त	प्रपुनाति हि ॥	१२. पवित्र करने में असमर्थ हैं

श्लोकार्थ—जो मेरी भक्ति से वञ्चित हैं । उनके चित्त को सत्य और दया से युक्त धर्म और तपस्या से युक्त विद्या भी भलीभाँति पवित्र करने में असमर्थ है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

कथं विनारोमहर्षं द्रवता चेतसा विना ।
विनाऽऽनन्दाश्रुकलया शुद्धयेद् भक्त्या विनाऽऽशयः ॥२३॥

पदच्छेद— कथम् विना रोमहर्षम् द्रवता चेतसा विना ।
विना आनन्द अश्रु कलया शुद्धयेद् भक्त्याविना आशयः ॥

शब्दार्थ—

कथम्	११.	कैसे	विना	८.	विना अर्थात्
विना	२.	विना	आनन्द	६.	आनन्द के
रोमहर्षम्	१.	शरीर में रोमाञ्च हुये	अश्रुकलया	७.	आँसुओ के छलके
द्रवता	३.	पिघले हुये	शुद्धयेद्	१२.	शुद्ध हो सकता है
चेतसा	४.	चित्त के	भक्त्या	९.	पूर्ण भक्ति के
विना ।	५.	विना	विना आशयः	१०.	विना अन्तःकरण

श्लोकार्थ—शरीर में रोमाञ्च हुये विना, पिघले हुये चित्त के विना आनन्द के आँसुओं के छलके बिना, अर्थात् पूर्ण भक्ति के विना अन्तःकरण कैसे शुद्ध हो सकता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

वाग् गद्‌गदा द्रवते यस्य चित्तं रुदत्यभीक्ष्णं हसति क्वचिच्च ।
विलज्ज उद्गायति नृत्यते च मद्भक्तियुक्तो भुवनं पुनाति ॥२४॥

पदच्छेद— वाक् गद्‌गदा द्रवते यस्य चित्तम् रुदति अभीक्ष्णम् हसति क्वचित् च ।
विलज्जः उद्‌गायति नृत्यते च मत् भक्ति युक्तः भुवनम् पुनाति ॥

शब्दार्थ—

वाक् गद्‌गदा	२.	प्रेम सेवा वाणी गद्‌गद हो रही थी और	विलज्जः	९.	लाज छोड़कर
द्रवते	४.	एक ओर बहता रहता है	उद्‌गायति	१०.	ऊँचे स्वर से गाने लगता है
यस्य	१.	जिसकी	नृत्यते	१२.	नाचने लगता है, ऐसा व्यक्ति
चित्तम्	३.	चित्त पिघल कर	च	११.	और कभी
रुदति	६.	रोने का ताँता नहीं टूटता है	मत् भक्ति	१३.	मेरी भक्ति से
अभीक्ष्णम्	५.	एक क्षण के लिये भी	युक्तः	१४.	युक्त होकर
हसति	८.	खिलखिला कर हँसने लगता है	भुवनम्	१५.	सारे संसार को
क्वचित् च ।	७.	और कभी-कभी	पुनाति ॥	१६.	पवित्र कर देता है

श्लोकार्थ—जिसकी वाणी प्रेम से गद्-गद् हो रही थी । और चित्त पिघल-पिघल कर एक ओर बहता रहता है । एक क्षण के लिये भी रोने का ताँता नहीं टूटता है । और कभी-कभी खिल-खिलाकर हँसने लगता है । लाज छोड़कर ऊँचे स्वर से गाने लगता है । और कभी नाचने लगता है । ऐसा व्यक्ति मेरी भक्ति से युक्त होकर सारे संसार को पवित्र कर देता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यथाग्निना हेम मलं जहाति ध्मातं पुनः स्वं भजते च रूपम् ।
आत्मा च कर्मानुशयं विधूय मद्भक्तियोगेन भजत्यथो माम् ॥२५॥

पदच्छेद— यथा अग्निना हेम मलम् जहाति ध्मातम् पुनः स्वम् भजते च रूपम् ।
आत्मा च कर्म अनुशयम् विधूय मत् भक्ति योगेन भजति अथो माम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	आत्मा	११. आत्मा
अग्निना	२. अग्नि में	च कर्म	१२. कर्म
हेम मलम्	४. सोना मैल	अनुशयम्	१३. वासनाओं से
जहाति	५. छोड़ देता है और	विधूय	१४. मुक्त होकर
ध्मातम्	३. तपाने पर	मत् भक्ति	९. मेरे भक्ति
पुनः स्वम्	६. फिर अपने असली	योगेन	१०. योग के द्वारा
भजते	८. प्राप्त कर लेता है वैसे ही	भजति	१६. प्राप्त हो जाता है
चरूपम् ।	७. रूप को	अथो माम् ॥	१५. फिर मुझको

श्लोकार्थ—जैसे अग्नि में तपाने पर सोना मैल छोड़ देता है। फिर अपने असलो रूप को प्राप्त कर लेता है। वैसे ही मेरे भक्ति योग के द्वारा आत्मा कर्म वासनाओं से मुक्त होकर फिर मुझको प्राप्त हो जाता है।

षट्विंशः श्लोकः

यथा यथाऽऽत्मा परिमृज्यतेऽसौ मत्पुण्यगाथाश्रवणाभिधानैः ।
तथा तथा पश्यति वस्तु सूक्ष्मं चक्षुर्यथैवाञ्जनसम्प्रयुक्तम् ॥२६॥

पदच्छेद— यथा यथा आत्मा परिमृज्यते असौ मत् पुण्यगाथा श्रवणाभिधानैः ।
तथा तथा पश्यति वस्तु सूक्ष्मम् चक्षुः यथैव अञ्जन सम्प्रयुक्तम् ॥

शब्दार्थ—

यथा यथा	५. ज्यों ज्यों	तथा तथा	९. त्यों त्यों
आत्मा	७. चित्त का	पश्यति	१२. दर्शन होने लगते हैं
परिमृज्यते	८. मैल धुलता जाता है	वस्तु	११. वस्तु के वास्तविक तत्त्व के
असौ	६. इस	सूक्ष्मम्	१०. उसे सूक्ष्म
मत् पुण्य	१. मेरी परम पावन	चक्षुः	१६. नेत्रों का दोष मिट जाता है
गाथा	२. लीला कथा के	यथैव	१३. जैसे
श्रवण	३. श्रवण	अञ्जन	१४. अञ्जन का
अभिधानैः ।	४. कीर्तन से	सम्प्रयुक्तम् ॥	१५. प्रयोग करने पर

श्लोकार्थ—मेरी परम पावन लीला कथा के श्रवण कीर्तन से ज्यों ज्यों इस चित्त का मैल धुलता जाता है। त्यों त्यों उसे सूक्ष्म वस्तु के वास्तविक तत्त्व के दर्शन होने लगते हैं। जैसे अञ्जन का प्रयोग करने से नेत्रों का दोष मिट जाता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

विषयान् ध्यायतश्चित्तं विषयेषु विषज्जते ।
मामनुस्मरतश्चित्तं मय्येव प्रविलीयते ॥२७॥

पदच्छेद—

विषयान् ध्यायतः चित्तम् विषयेषु विषज्जते ।
माम् अनुस्मरतः चित्तम् मयि एव प्रविलीयते ॥

शब्दार्थ—

विषयान्	१.	विषयों का	माम्	६.	मेरा
ध्यायतः	२.	ध्यान करते हुये	अनुस्मरतः	७.	स्मरण करता हुआ
चित्तम्	३.	चित्त	चित्तम्	८.	चित्त
विषयेषु	४.	विषयों में	मयि एव	९.	मुझमें ही
विषज्जते ।	५.	फँस जाता है और	प्रविलीयते ॥	१०.	लीन हो जाता है

श्लोकार्थ—विषयों का ध्यान करता हुआ चित्त विषयों में फँस जाता है । और मेरा स्मरण करता हुआ चित्त मुझ में ही लीन हो जाता है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तस्मादसदभिध्यानं यथा स्वप्नमनोरथम् ।
हित्वा मयि समाधत्स्व मनो मद्भावभावितम् ॥२८॥

पदच्छेद—

तस्मात् असदभि ध्यानम् यथा स्वप्न मनोरथम् ।
हित्वा मयि समाधत्स्व मनः मत् भावः भावितम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	हित्वा	७.	छोड़ कर
असत् अभि	५.	असत् वस्तुओं का	मयि	११.	मुझ में ही
ध्यानम्	६.	चिन्तन	समाधत्स्व	१२.	लगा दो
यथा	४.	समान	मनः मत्	८.	अपने मन को मेरे
स्वप्न	२.	स्वप्न और	भाव	९.	चिन्तन से
मनोरथम् ।	३.	मनोरथों के राज्य के	भावितम् ॥	१०.	शुद्ध कर लो और उसे

श्लोकार्थ—इसलिये स्वप्न और मनोरथों के राज्य के समान असत् वस्तुओं का चिन्तन छोड़ कर अपने मन को मेरे चिन्तन से शुद्ध कर लो और उसे मुझ में ही लगा दो ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

स्त्रीणां स्त्रीसङ्गिनां सङ्गं त्यक्त्वा दूरत आत्मवान् ।
क्षेमे विविक्त आसीनश्चिन्तयेन्मामतन्द्रितः ॥२९॥

पदच्छेद—

स्त्रीणाम् स्त्रीसङ्गिनाम् सङ्गं त्यक्त्वा दूरत आत्मवान्
क्षेमे विविक्त आसीनः चिन्तयेत् माम् अतन्द्रितः ॥

शब्दार्थ—

स्त्रीणाम्	२.	स्त्रियों और	क्षेमे	८.	निर्भय और
स्त्री	३.	स्त्रियों में	विविक्ते	९.	पवित्र एकान्त स्थान में
सङ्गिनाम्	४.	आसक्त	आसीनः	१०.	बैठकर
सङ्गम्	५.	लोगों का सङ्ग	चिन्तयेत्	१३.	चिन्तन करे
त्यक्त्वा	७.	छोड़कर	माम्	१२.	मेरा ही
दूरत	६.	दूर से ही	अतन्द्रितः ॥	११.	बड़ी सावधानी से
आत्मवान् ।	१.	संयमी पुरुष			

श्लोकार्थ—संयमी पुरुष स्त्रियों और स्त्रियों में आसक्त लोगों का सङ्ग दूर से ही छोड़कर निर्भय और पवित्र एकान्त स्थान में बैठकर बड़ी सावधानी से मेरा ही चिन्तन करे ।

त्रिंशः श्लोकः

न तथास्य भवेत् क्लेशो बन्धश्चान्यप्रसङ्गतः ।
योषित्सङ्गाद् यथा पुंसो यथा तत्सङ्गिसङ्गतः ॥३०॥

पदच्छेद—

न तथा अस्य भवेत् क्लेशः बन्धः च अन्य प्रसङ्गतः ।
योषित् सङ्गात् यथा पुंसः यथा तत् सङ्गि सङ्गतः ॥

शब्दार्थ—

न	११.	नहीं	योषित्	२.	स्त्रियों के
तथा अस्य	८.	वैसा इसे	सङ्गात्	३.	सङ्ग से और
भवेत्	१२.	होता है	यथा पुंसः	१.	पुरुष को जैसा
क्लेशबन्धः	७.	क्लेश और बन्धन होता है	यथा तत्	४.	जैसा स्त्री
च अन्य	९.	और अन्य किसी के भी	सङ्गि	५.	सङ्गियों के
प्रसङ्गतः ।	१०	सङ्ग से	सङ्गतः ॥	६.	सङ्ग से

श्लोकार्थ—पुरुष को जैसा स्त्रियों के सङ्ग से और जैसा स्त्री सङ्गियों के सङ्ग से क्लेश और बन्धन होता है । वैसा इसे और अन्य किसी के भी सङ्ग से नहीं होता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—**यथा त्वामरविन्दाक्ष यादृशं वा यदात्मकम् ।**
ध्यायेन्मुमुक्षुरेतन्मे ध्यानं त्वं वक्तुमर्हसि ॥३१॥

पदच्छेद—

यथा त्वाम् अरविन्दाक्ष यादृशम् वा यत् आत्मकम् ।
ध्यायेत् मुमुक्षुः एतत् मे ध्यानम् त्वम् वक्तुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

यथा	७.	जिस रूप से	ध्यायेत्	१२.	ध्यान करते हैं
त्वाम्	६.	आपका	मुमुक्षुः	५.	मुमुक्षु पुरुष
अरविन्दाक्ष	१.	हे कमलनयन ! भगवान्	एतत् मे	१५.	आप मुझे बतायें
यादृशम्	९.	जिस प्रकार का या	ध्यानम्	१३.	वह ध्यान
वा	८.	अथवा	त्वम्	२.	आप
यत्	१०.	जिस	वक्तुम्	३.	यह बताने की
आत्मकम् ।	११.	भाव से	अर्हसि ॥	४.	कृपा करें कि

श्लोकार्थ—हे कमलनयन ! भगवान् आप यह बताने की कृपा करें कि मुमुक्षु पुरुष आपकी जिस रूप से अथवा जिस प्रकार का या जिस भाव से ध्यान करते हैं । वह ध्यान आप मुझे बतावें ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—**सम आसन आसीनः समकायो यथासुखम् ।**
हस्तावुत्सङ्ग आधाय स्वनासाग्रकृतेक्षणः ॥३२॥

पदच्छेद—

सम आसने आसीनः समकायः यथा सुखम् ।
हस्तौ उत्सङ्गे आधाय स्वनासा अग्रकृत ईक्षणः ॥

शब्दार्थ—

सम	१.	समान	हस्तौ	७.	अपने दोनों हाथों को
आसने	२.	आसन पर	उत्सङ्गे	८.	अपनी गोद में
आसीनः	३.	बैठकर	आधाय	९.	रख ले और
सम	५.	सीधा रखकर	स्वनासा	१०.	अपनी नासिका के
कायः	४.	शरीर को	अग्र	११.	अग्रभाग पर
यथा सुखम् ।	६.	सुखपूर्वक बैठ जाय	कृतईक्षणः ॥	१२.	दृष्टि जमावे

श्लोकार्थ—समान आसन पर बैठकर शरीर को सीधा रखकर सुखपूर्वक बैठ जाय । अपने दोनों हाथों को अपनी गोद में रख ले और अपनी नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमावे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

प्राणस्य शोधयेन्मार्गं पूरकुम्भकरेचकैः ।
विपर्ययेणापि शनैरभ्यसेन्निर्जितेन्द्रियः ॥३३॥

पदच्छेद—

प्राणस्य शोधयेत् मार्गम् पूर कुम्भक रेचकैः ।
विपर्ययेण अपि शनैः अभ्यसेत् निर्जित इन्द्रियः ॥

शब्दार्थ—

प्राणस्य	६.	प्राणवायु के	विपर्ययेण	४.	रेचक कुम्भक पूरक प्राणयाम के द्वारा
शोधयेत्	८.	शोधन करे फिर	अपि	५.	भी
मार्गम्	७.	मार्ग अर्थात नाड़ियों का	शनैः	११.	धीरे-धीरे प्राणायाम का
पूर	१.	इसके बाद पूरक	अभ्यसेत्	१२.	अभ्यास करे
कुम्भक	२.	कुम्भक	निर्जित	१०.	संयम पूर्वक
रेचकैः ।	३.	रेचक तथा	इन्द्रियः	९.	इन्द्रियों के

श्लोकार्थ—इसके बाद पूरक कुम्भक, रेचक तथा रेचक, कुम्भक पूरक प्राणायाम के द्वारा भी प्राणवायु के मार्ग अर्थात नाड़ियों का शोधन करे फिर इन्द्रियों के संयम पूर्वक धीरे-धीरे प्राणायाम का अभ्यास करे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

हृद्यविच्छिन्नमोङ्कारं घण्टानादं बिसोर्णवत् ।
प्राणेनोदीर्य तत्राथ पुनः संवेशयेत् स्वरम् ॥३४॥

पदच्छेद—

हृदि अविछिन्नम् ओङ्कारम् घण्टानादं बिसोर्णवत् ।
प्राणेन उदीर्य तत्र अथ पुनः संवेशयेत् स्वरम् ॥

शब्दार्थ—

हृदि	१.	हृदय में	प्राणेन	६.	प्राण के द्वारा
अविछिन्नम्	४.	निरन्तर	उदीर्य	७.	उसे ऊपर ले जाय और
ओङ्कारम्	५.	ओंङ्कार का चिन्तन करे	तत्र अथ	८.	तब उसमें
घण्टानादम्	११	घण्टा नाद के समान	पुनः	९.	पुनः
बिसोर्ण	२.	कमल नाल गत पतले सूत के	संवेशयेत्	१२.	स्थिर करे
वत् ।	३.	समान	स्वरम् ॥	११.	स्वर को

श्लोकार्थ—हृदय में कमल नाल गत पतले सूत के समान निरन्तर ओङ्कार का चिन्तन करे। प्राण के द्वारा उसे ऊपर ले जाय और तब उसमें पुनः घण्टा नाद के समान स्वर को स्थिर करे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एवं प्रणवसंयुक्तं प्राणमेव समभ्यसेत् ।
दशकृत्वस्त्रिषवणं मासादर्वाग् जितानिलः ॥३५॥

पदच्छेद—

एवम् प्रणव संयुक्तं प्राणम् एव सम् अभ्यसेत् ।
दशकृत्वः त्रिषवणम् मासात् अर्वाक् जित अनिलः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	दशकृत्वः	३.	दस-दस बार
प्रणव	४.	ओङ्कार	त्रिषवणम्	२.	प्रतिदिन तीन समय
संयुक्तं	५.	सहित	मासात्	९.	एक महीने के
प्राणम्	६.	प्राणायाम का	अर्वाक्	१०.	भीतर
एव	७.	ही	जित	१२.	वश में हो जाता है
सम्अभ्यसेत् ।	८.	अभ्यास करे	अनिलः ॥	११.	प्राणवायु

श्लोकार्थ—इस प्रकार प्रतिदिन तीन समय दस-दस बार ओङ्कार सहित प्राणायाम का ही अभ्यास करे । एक महीने के भीतर ही प्राण वायु वश में हो जाता है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

हृत्पुण्डरीकमन्तःस्थमूर्ध्वनालमधोमुखम् ।
ध्यात्वोर्ध्वमुखमुन्निद्रमष्टपत्रं सकर्णिकम् ॥३६॥

पदच्छेद—

हृत् पुण्डरीकम् अन्तः स्थम् ऊर्ध्व नालम् अधः मुखम् ।
ध्यात्वा ऊर्ध्वमुखम् उन्निद्रम् अष्टपत्रम् सकर्णिकम् ॥

शब्दार्थ—

हृत्पुण्डरीकम्	२.	हृदय एक कमल है	ध्यात्वा	१.	इसके बाद ऐसा चिन्तन करे
अन्तः स्थम्	३.	वह शरीर के भीतर स्थित है	ऊर्ध्व मुखम्	८.	फिर उसका मुख ऊपर की ओर
ऊर्ध्व	५.	ऊपर की ओर है	उन्निद्रम्	९.	होकर खुल गया है
नालम्	४.	उसकी डंडी	अष्ट	१०.	उनकी आठ
अधो	७.	नीचे की ओर है	पत्रम्	११.	पंखुड़ियाँ हैं
मुखम् ।	६.	और मुँह	सकर्णिकम् ॥	१२.	उनके बीचों बीच सुकुमार कर्णिका है

श्लोकार्थ—इसके बाद ऐसा चिन्तन करे कि हृदय एक कमल है । वह शरीर के भीतर स्थित है । उसकी डंडी ऊपर की ओर है । और मुँह नीचे की ओर है । फिर उसका मुख ऊपर की ओर होकर खुल गया है । उनकी आठ पंखुड़ियाँ है । उनके बीची बीच सुकुमार कर्णिका है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

कर्णिकाया न्यसेत् सूर्यसोमाग्नीनुत्तरोत्तरम् ।
वह्निमध्ये स्मरेद् रूपं ममैतद् ध्यानमङ्गलम् ॥३७॥

पदच्छेद—

कर्णिकायाम् न्यसेत् सूर्य सोम अग्निम् उत्तर उत्तरम् ।
वह्नि मध्ये स्मरेत् रूपम् मम एतत् ध्यानमङ्गम् ॥

शब्दार्थ—

कर्णिकायाम्	१.	कर्णिका पर	वह्निमध्ये	७.	तब अग्नि के अन्दर
न्यसेत्	२.	न्यास करना चाहिये	स्मरेत्	१०.	स्मरण करना चाहिये
सूर्य	३.	सूर्य	रूपम्	९.	रूप का
सोम	४.	चन्द्रमा और	मम एतत्	८.	मेरे इस
अग्निम्	५.	अग्नि का	ध्यान	११.	यह ध्यान बड़ा ही
उत्तर उत्तरम् ।	२.	क्रमशः	मङ्गलम् ॥	१२.	मङ्गलमय है

श्लोकार्थ—कर्णिका पर क्रमशः सूर्य चन्द्रमा और अग्नि का न्यास करना चाहिये । तब अग्नि के अन्दर मेरे इस रूप का स्मरण करना चाहिये । यह ध्यान बड़ा ही मङ्गलमय है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

समं प्रशान्तं सुमुखं दीर्घचारुचतुर्भुजम् ।
सुचारुसुन्दरग्रीवं सुकपोलं शुचिस्मितम् ॥३८॥

पदच्छेद—

समम् प्रशातन्म् सुमुखम् दीर्घचारु चतुर्भुजम् ।
सुचारु सुन्दरग्रीवम् सुकपोलम् शुचिस्मितम् ॥

शब्दार्थ—

समम्	१.	शरीर सम और	सुचारु	७.	बड़ी हो मनोरम्
प्रशान्तम्	२.	शान्त हैं	सुन्दर	९.	और सुन्दर है
सुमुखम्	३.	मुख कमल सुन्दर है	ग्रीवम्	८.	गरदन
दीर्घ	४.	लम्बी और	सुकपोलम्	१०.	कपोल सुन्दर है
चारु	५.	सुन्दर	शुचि	१२.	पवित्र है
चतुर्भुजम् ।	६.	चार भुजायें हैं	स्मितम् ॥	११.	मन्द मुसकान

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! शरीर सम और शान्त है । मुख कमल सुन्दर है लम्बी और सुन्दर चार भुजायें हैं । गरदन बड़ी ही मनोरम और सुन्दर है । कपोल सुन्दर हैं, मन्द मुसकान पवित्र है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

समानकर्णविन्यस्तस्फुरन्मकरकुण्डलम् ।
हेमाम्बरं घनश्यामं श्रीवत्स श्रीनिकेतनम् ॥३९॥

पदच्छेद—

समान कर्ण विन्यस्तस्फुरत् मकर कुण्डलम् ।
हेम अम्बरम् घनश्यामम् श्रीवत्स श्रीनिकेतनम् ॥

शब्दार्थ—

समान	२.	समान हैं	हेम	८.	पीले रंग का
कर्ण	१.	कान	अम्बरम्	९.	पीताम्बर फहरा रहा है और
विन्यस्त	६.	पहने हैं	घनश्यामम्	७.	मेघ के समान श्यामल शरीर पर
स्फुरत्	३.	उनमें झिलमिलाते हुये	श्रीवत्स	१०.	श्रीवत्स तथा
मकर	४.	मकराकृत	श्री	११.	लक्ष्मी जी का
कुण्डलम् ।	५.	कुण्डल	निकेतनम् ॥	१२.	चिह्न वक्षः स्थल पर है

श्लोकार्थ—दोनों कान समान हैं। उनमें झिलमिलाते हुये मकराकृत कुण्डल पहने हैं। मेघ के समान श्यामल शरीर पर पीले रंग का पीताम्बर फहरा रहा है। और श्रीवत्स तथा लक्ष्मी जी का चिह्न वक्षःस्थल पर है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

शङ्खचक्रगदापद्मवनमालाविभूषितम् ।
नूपुरैर्विलसत्पादं कौस्तुभप्रभया युतम् ॥४०॥

पदच्छेद—

शङ्ख चक्र गदा पद्म वनमाला विभूषितम् ।
नूपुरैः विल सत् पादम् कौस्तुभ प्रभया युतम् ॥

शब्दार्थ—

शङ्ख	१.	हाथों में शङ्ख	नूपुरैः	८.	नूपुर
चक्र	२.	चक्र	विलसत्	९.	शोभा दे रहे हैं
गदा	३.	गदा और	पादम्	७.	चरणों में
पद्म	४.	पद्म धारण किये हुये हैं	कौस्तुभ	१०	गले में कौस्तुभ मणि की
वनमाला	५.	गले में वनमाल	प्रभया	११.	कान्ति
विभूषितम् ।	६.	सुशोभित हो रही है	युतम् ॥	१२.	जगमगा रही है

श्लोकार्थ—हाथों में शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म धारण किये हुये हैं, गले में वनमाला सुशोभित हो रही है। चरणों में नूपुर शोभा दे रहे हैं। गले में कौस्तुभ मणि की कान्ति जगमगा रही है।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

द्युमत्किरीटकटककटिसूत्राङ्गदायुतम् ।
सर्वाङ्गसुन्दरं हृद्यं प्रसादसुमुखेक्षणम् ।
सुकुमारमभिध्यायेत् सर्वाङ्गेषु मनो दधत् ॥४१॥

पदच्छेद—
द्युमत् किरीट कटक कटि सूत्र अङ्गद अयुतम् ।
सर्वाङ्ग सुन्दरम् हृद्यम् प्रसाद सुमुख ईक्षणम् ।
सुकुमारम् अभिध्यायेत् सर्वाङ्गेषु मनः दधत् ॥

शब्दार्थ—

द्युमत्	१.	चमचमाते हुये	प्रसाद सुमुख	८.	सुन्दर मुख प्यार भरी
किरीट कटक	२.	किरीट-कङ्कन	ईक्षणम् ।	९.	चितवन से युक्त मेरे
कटि सूत्र	३.	करधनी और	सुकुमारम्	१०.	सुकुमार रूप का
अङ्गद	४.	बाजूबन्द	अभिध्यायेत्	११.	ध्यान करना चाहिये
अयुतम्	५.	शोभायमान हो रहे हैं	सर्वाङ्गेषु	१३.	एक-एक अङ्गों में
सर्वाङ्ग सुन्दरम्	६.	मेरा अङ्ग अति सुन्दर	मनः	१२.	अपने मन को मेरे
हृद्यम्	७.	और हृदय ग्राही है	दधत् ॥	१४.	लगाना चाहिये ।

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! चमचमाते हुये किरीट-कङ्कन, करधनी और बाजूबन्द शोभायमान हो रहे हैं। मेरा अङ्ग अति सुन्दर है और हृदय ग्राही है। सुन्दर मुख प्यार भरी चितवन से युक्त मेरे सुकुमार रूप का ध्यान करना चाहिये अपने मन को मेरे एक-एक अङ्गों में लगाना चाहिये ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यो मनसाऽऽकृष्य तन्मनः ।
बुद्ध्या सारथिना धीरः प्रणयेन्मयि सर्वतः ॥४२॥

पदच्छेद—
इन्द्रियाणि इन्द्रिय अर्थेभ्यः मनसा आकृष्य तन्मनः ।
बुद्धया सारथिना धीरः प्रणयेत् मयि सर्वतः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रियाणि	३.	इन्द्रियों को	बुद्धया	८.	बुद्धि रूप
इन्द्रिय	४.	इन्द्रियों के	सारथिना	९.	सारथी की सहायता से
अर्थेभ्यः	५.	विषयों से	धीरः	१.	बुद्धिमान पुरुष
मनसा	२.	मन के द्वारा	प्रणयेत्	१२.	लगा दे
आकृष्य	६.	खींच कर फिर	मयि	११.	मुझ में ही
तन्मनः ।	७.	उस मन को	सर्वतः ॥	१०.	चारों ओर से

श्लोकार्थ—बुद्धिमान पुरुष मन के द्वारा इन्द्रियों को इन्द्रियों के विषयों से खींच कर फिर उस मन को बुद्धि रूप सारथी की सहायता से चारों ओर से मुझ में ही लगा दे ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

तत् सर्वव्यापकं चित्तमाकृष्यैकत्र धारयेत् ।
नान्यानि चिन्तयेद् भूयः सुस्मितं भावयेन्मुखम् ॥४३॥

पदच्छेद—

तत् सर्व व्यापकम् चित्तम् आकृष्य एकत्र धारयेत् ।
न अन्यानि चिन्तयेत् भूयः सुस्मितम् भावयेत् मुखम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. उस	न	९. न करके
सर्वव्यापक	२. सर्वव्यापक	अन्यानि	७. अन्य अङ्गों का
चित्तम्	३. चित्त को	चिन्तयेत्	८. चिन्तन
आकृष्य	४. खींच कर	भूयः सुस्मितम्	१०. फिर मन्द मुसकान युक्त
एकत्र	५. एक स्थान पर	भावयेत्	१२. ध्यान करें
धारयेत् ।	६. स्थिर करे	मुखम् ॥	११. मेरे मुख का ही

श्लोकार्थ—उस सर्वव्यापक चित्त को खींच कर एक स्थान पर स्थिर करे । अन्य अङ्गों का चिन्तन न करके फिर मन्द मुसकान युक्त मेरे मुख का ही ध्यान करे ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

तत्र लब्धपदं चित्तमाकृष्य व्योम्नि धारयेत् ।
तच्च त्यक्त्वा मदारोहो न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ॥४४॥

पदच्छेद—

तत्र लब्ध पदम् चित्तम् आकृष्य व्योम्नि धारयेत् ।
तत् च त्यक्त्वा मद् आरोहः न किञ्चित् अपिचिन्तयेत् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	२. मुखारविन्द में	तत् च	८. और फिर आकाश का चिन्तन
लब्ध	४. प्राप्त करले तब	त्यक्त्वा	९. भी छोड़ कर
पदम्	३. स्थिरता को	मद्	१०. मेरे स्वरूप में
चित्तम्	१. चित्त जब	आरोहः	११. आरूढ़ हो जावे और
आकृष्य	५. उसे वहाँ से हटाकर	न	१४. न करे
व्योम्नि	६. आकाश में	किञ्चित्	१२. कुछ
धारयेत् ।	७. स्थिर करे	अपिचिन्तयेत् ॥	१३. भी चिन्तन

श्लोकार्थ—चित्त जब मुखारविन्द में स्थिरता को प्राप्त करले, तब उसे वहाँ से हटाकर आकाश में स्थिर करे । और फिर आकाश का चिन्तन भी छोड़कर मेरे स्वरूप में आरूढ़ हो जाय और कुछ भी चिन्तन न करे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

एवं समाहितमतिर्मामेवात्मानमात्मनि ।
विचष्टे मयि सर्वात्मन् ज्योतिर्ज्योतिषि संयुतम् ॥४५॥

पदच्छेद— एवम् समाहित मतिः माम् एव आत्मानम् आत्मनि ।
विचष्टे मयि सर्व आत्मन् ज्योतिः ज्योतिषि संयुतम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	जब इस प्रकार	विचष्टे	१३.	अनुभव करने लगता है
समाहित	३.	समाहित हो जाता है	मयि	१०.	मुझ
मतिः	२.	चित्त	सर्वात्मन्	११.	परमात्मा में
माम्	६.	मुझे और	ज्योतिः	४.	तब जैसे ज्योति
एव	७.	वैसे ही	ज्योतिषि	५.	दूसरी ज्योति में
आत्मानम्	१२.	अपने को	संयुतम् ॥	६.	मिल कर एक हो जाती है
आत्मनि ।	८.	अपने में			

श्लोकार्थ—जब इस प्रकार चित्त समाहित हो जाता है । तब जैसे ज्योति दूसरी ज्योति में मिलकर एक हो जाती है । वैसे ही अपने में मुझे और मुझ परमात्मा में अपने को अनुभव करने लगता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

ध्यानेनेत्थं सुतीव्रेण युञ्जतो योगिनो मनः ।
संयास्यत्याशु निर्वाणं द्रव्यज्ञानक्रियाभ्रमः ॥४६॥

पदच्छेद— ध्यानेन इत्थम् सुतीव्रेण युञ्जतः योगिनः मनः ।
संयास्यति आशु निर्वाणम् द्रव्य ज्ञान क्रिया भ्रमः ॥

शब्दार्थ—

ध्यानेन	४.	ध्यान योग के द्वारा	संयास्यति	११.	दूर हो जाता है और वह
इत्थम्	२.	इस प्रकार	आशु	१०.	शीघ्र ही
सुतीव्रेण	३.	तीव्र	निर्वाणम्	१२.	मोक्ष प्राप्त करता है
युञ्जतः	६.	संयम करता है	द्रव्य	७.	उसके चित्त से वस्तु
योगिनः	१.	जो योगी	ज्ञान क्रिया	८.	ज्ञान और उनकी प्राप्ति हेतु कर्मों का
मनः ।	५.	चित्त का	भ्रमः ॥	६.	भ्रम

श्लोकार्थ—जो योगी इस प्रकार तीव्र ध्यान योग के द्वारा चित्त का संयम करता है । उसके चित से वस्तु-ज्ञान और उनकी प्राप्ति हेतु कर्मों का भ्रम शीघ्र ही दूर हो जाता है । और वह मोक्ष प्राप्त करता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशः स्कन्ध चतुर्दशः अध्यायः ॥१४॥

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

पञ्चदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—जितेन्द्रियस्य युक्तस्य जितश्वासस्य योगिनः ।
मयि धारयतश्चेत उपतिष्ठन्ति सिद्धयः ॥१॥

पदच्छेद—

जितइन्द्रियस्य युक्तस्य जितश्वासस्य योगिनः ।
मयि धारयतः चेत उपतिष्ठन्ति सिद्धयः ॥

शब्दार्थ—

जित	३.	जीतकर और	मयि	८.	मुझ में
इन्द्रियस्य	२.	इन्द्रियों को	धारयतः	९.	लगाता है
युक्तस्य	६.	मन को वश में करके	चेत	७.	अपना चित्त
जित	५.	जीतकर	उपतिष्ठन्ति	११.	उपस्थित होती हैं
श्वासस्य	४.	प्राण को भी	सिद्धयः ।	१०.	तब बहुत सी सिद्धियाँ
योगिनः ॥	१.	जब साधक			

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! जब साधक इन्द्रियों को जीतकर और प्राणों को भी जीतकर मन को वश में करके अपना चित्त मुझमें लगाता है । तब बहुत सी सिद्धियाँ उपस्थित होती हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

उद्धव उवाच—कया धारणया कास्वित् कथंस्वित् सिद्धिरच्युत ।
कति वा सिद्धयो ब्रूहि योगिनां सिद्धिदो भवान् ॥२॥

पदच्छेद—

कया धारणया कास्वित् कथंस्वित् सिद्धिः अच्युत ।
कतिवा सिद्धयो ब्रूहि योगिनाम् सिद्धिदः भवान् ॥

शब्दार्थ—

कया	२.	कौन सी	कति	८.	कितनी हैं
धारणया	३.	धारणा करने से	वा सिद्धयो	७.	और वे सिद्धियाँ
कास्वित्	५.	कौन सी	ब्रूहि	१२.	उनका वर्णन कीजिये
कथंस्वित्	४.	किस प्रकार और	योगिनाम्	१०.	योगियों को
सिद्धिः	६.	सिद्धि प्राप्त होती है	सिद्धिदः	११.	सिद्धियाँ देने वाले हैं
अच्युत ।	१.	हे अच्युत !	भवान् ॥	९.	आप

श्लोकार्थ—हे अच्युत ! कौन सी धारणा करने से किस प्रकार और कौन सी सिद्धि प्राप्त होती है । और वे सिद्धियाँ कितनी हैं । आप योगियों को सिद्धियाँ देने वाले हैं। उनका वर्णन कीजिये ॥

तृतीयः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—सिद्धयोऽष्टादश प्रोक्ता धारणायोगपारगैः ।
तासामष्टौ मत्प्रधाना दशैव गुणहेतवः ॥३॥

पदच्छेद—

सिद्धयः अष्टादश प्रोक्ता धारणा योग पारगैः ।
तासामष्टौ मत् प्रधानाः दशैव गुण हे तवः ॥

शब्दार्थ—

सिद्धयः	५.	सिद्धियाँ	तासाम्	७.	उनमें
अष्टादश	४.	आठारह प्रकार की	अष्टौ	८.	आठ सिद्धियाँ तो
प्रोक्ताः	६.	बतलाई हैं	मत्	१०.	मुझमें ही रहती हैं
धारणा	१.	धारणा	प्रधानाः	९.	प्रधानरूप से
योग	२.	योग के	दशैव	११.	और दस
पारगैः ।	३.	पारगामी योगियों ने	गुण हे तवे ॥	१२.	सत्त्व गुण के विकास से मिल जाती हैं

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! धारणा योग के पारगामी योगियों ने अठारह प्रकार की सिद्धियाँ बतलाई हैं। उनमें आठ सिद्धियाँ तो प्रधान रूप से मुझमें ही रहती हैं। और दश सत्त्व गुण के विकास से मिल जाती हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

अणिमा महिमा मूर्तेर्लघिमा प्राप्तिरिन्द्रियैः ।
प्राकाम्यं श्रुतदृष्टेषु शक्तिप्रेरणमीशिता ॥४॥

पदच्छेद—

अणिमा महिमा मूर्तेः लघिमा प्राप्तिः इन्द्रियैः ।
प्राकाम्यम् श्रुत दृष्टेषु शक्ति प्रेरणम् ईशिता ॥

शब्दार्थ—

अणिमा	१.	अणिमा	प्राकाम्यम्	९.	सिद्धि प्राकाम्य है
महिमा	२.	महिमा और	श्रुत	८.	पारलौकिक पदार्थों की
मूर्ते	४.	शरीर की हैं	दृष्टेषु	७.	लौकिक और
लघिमा ।	३.	लघिमा सिद्धियाँ	शक्ति	१०.	माया के कार्यों को
प्राप्ति	५.	प्राप्ती नामक सिद्धि	प्रेरणम्	११.	इच्छानुसार करना
इन्द्रियैः	६.	इन्द्रियों की हैं	ईशिता ॥	१२.	ईशिता नाम की सिद्धि है

श्लोकार्थ –अणिमा, महिमा और लघिमा सिद्धियाँ शरीर की हैं। प्राप्ती नामक सिद्धि इन्द्रियों की है। लौकिक और पारलौकिक पदार्थों की सिद्धि प्राकाम्य है। माया के कार्यों को इच्छानुसार करना ईशिता नाम की सिद्धि है ॥

पञ्चमः श्लोकः

गुणेष्वसङ्गो वशिता यत्कामस्तदवस्यति ।
एता मे सिद्धयः सौम्य अष्टावौत्पत्तिका मताः ॥५॥

पदच्छेद—

गुणेषु असङ्गः वशिता यत् कामः तत् अवस्यति ।
एता मे सिद्धयः सौम्य अष्टौ औत्पत्तिका मताः ॥

शब्दार्थ—

गुणेषु	१.	विषयों में	एता	९.	ये
असङ्गः	२.	आसक्त न होना	मे	१२.	मुझमें
वशिता	३.	वशिता है	सिद्धयः	११.	सिद्धियाँ
यत्	४.	जिस सुख की	सौम्य	८.	हे उद्धव:
कामः	५.	कामना करे	अष्टौ	१०.	आठों
तत्	६.	उसकी सीमा तक पहुँचना	औत्पत्तिका	१३.	स्वभाव से ही
अवस्यति ।	७.	कामावसायित्व है	मताः ॥	१४.	रहती हैं

श्लोकार्थ—विषयों में आसक्त न होना वशिता है। जिस सुख की कामना करे उसकी सीमा तक पहुँचना कामावसायित्व है। हे उद्धव ! ये आठों सिद्धियाँ मुझमें स्वभाव में से रहती हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

अनूर्मिमत्त्वं देहेऽस्मिन् दूरश्रवणदर्शनम् ।
मनोजवः कामरूपं परकायप्रवेशनम् ॥६॥

पदच्छेद—

अनूर्मिमत्वम् देहे अस्मिन् दूर श्रवण दर्शनम् ।
मनोजवः काम रूपम् परकाय प्रवेशनम् ॥

शब्दार्थ—

अनूर्मिमत्वम्	३.	भूख, प्यासादि न होना	मनोजवः	७.	मन के साथ ही पहुँच जाना
देहे	२.	शरीर में	काम	८.	जो इच्छा हो
अस्मिन्	१.	इस	रूपम्	९.	वही रूप बना लेना
दूर	४.	बहुत दूर की वस्तु	पर	१०.	दूसरे के
श्रवण	६.	सुन लेना	काय	११.	शरीर में
दर्शनम् ।	५.	देखना और	प्रवेशनम् ॥	१२.	प्रवेश करना

श्लोकार्थ—इस शरीर में भूख प्यासादि न होना, बहुत दूर की वस्तु देखना और सुन लेना। मन के साथ ही पहुँच जाना। वही रूप बना लेना, दूसरे के शरीर में प्रवेश करना ॥

सप्तमः श्लोकः

स्वच्छन्दमृत्युर्देवानां सहक्रीडानुदर्शनम् ।
यथासङ्कल्पसंसिद्धिराज्ञाप्रतिहतागतिः ॥७॥

पदच्छेद—

स्वछन्द मृत्युः देवानाम् सह क्रीडा अनुदर्शनम् ।
यथा सङ्कल्प संसिद्धिः आज्ञा प्रतिहता गतिः ॥

शब्दार्थ—

स्वछन्द	१.	जब इच्छा हो तभी	यथा	७.	जैसा
मृत्युः	२.	शरीर छोड़ना	संकल्प	८.	सङ्कल्प हो, उसकी
देवानाम्	४.	देवताओं को	संसिद्धि	९.	सिद्धि
सह	३.	अप्सराओं के साथ	आज्ञा	१२.	सर्वत्र आज्ञा पालन
क्रीडा	५.	क्रीडा का	प्रतिहता	१०.	बिना रोक-टोक
अनुदर्शनम् ।	६.	दर्शन	गतिः ॥	११.	स्थिति के कारण

श्लोकार्थ—जब इच्छा हो तभी शरीर छोड़ना अप्सराओं के साथ देवताओं को क्रीडा का दर्शन, जैसा सङ्कल्प हो उसकी सिद्धि बिना रोक-टोक स्थिति के कारण सर्वत्र आज्ञापालन, ये दस सिद्धियाँ सत्त्व गुण के विशेष विकास से होती हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

त्रिकालज्ञत्वमद्वन्द्वं परचित्ताद्यभिज्ञता ।
अग्न्यर्काम्बुविषादीनां प्रतिष्टम्भोऽपराजयः ॥८॥

पदच्छेद—

त्रिकालज्ञत्वम् अद्वन्द्वम् परचित्तादि अभिज्ञता ।
अग्निअर्कअम्बु विषादीनाम् प्रतिष्टम्भः अपराजयः ॥

शब्दार्थ—

त्रिकालज्ञत्वम्	१.	भूत, भविष्य वर्तमान की बात जान लेना	अर्क	६.	सूर्य
अद्वन्द्वम्	२.	द्वन्द्वों के वश में न होना	अम्बु	७.	जल
परचित्तादि	३.	दूसरे के मन की बात	विषादीनाम्	८.	विषादि की शक्ति को
अभिज्ञता ।	४.	जान लेना	प्रतिष्टम्भः	९.	स्तम्भितकर देना और
अग्नि	५.	अग्नि	अपराजयः ॥	१०.	किसी से भी पराजित न होना

श्लोकार्थ—भूत-भविष्य-वर्तमान की बात जान लेना, द्वन्द्वों के वश में न होना । दूसरे के मन की बात जान लेना, अग्नि, सूर्य, जल, विषादि की शक्ति को स्तम्भित कर देना, और किसी से भी पराजित न होना ॥

नवमः श्लोकः

एताश्चोद्देशतः प्रोक्ता योगधारणसिद्धयः ।
यया धारणया या स्याद् यथा वा स्यान्निबोध मे ॥९॥

पदच्छेद—

एताः च उद्देशतः प्रोक्ताः योगधारण सिद्धयः ।
यया धारणया या स्यात् यथा वा स्यात् निबोध मे ॥

शब्दार्थ—

एताः	३. उनका मैंने	यया	७. किस
च	६. और अब	धारणया	८. धारणा से
उद्देशतः	४. नाम निर्देशपूर्वक	या स्यात्	९. कौन सी सिद्धि मिलती है
प्रोक्ताः	५. वर्णन कर दिया है	यथा वा	१०. और वह कैसे
योगधारण	१. योगधारणा करने से	स्यात्	११. प्राप्त होती है
सिद्धयः ।	२. जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं	निबोधमे ॥	१२. इसे मुझसे सुनो

श्लोकार्थ—योगधारण करने से जो सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं । उनका मैंने नाम-निर्देशपूर्वक वर्णन कर दिया है । और अब किस धारणा से कौन सी सिद्धि मिलती है । और वह कैसे प्राप्त होती है । इसे मुझसे सुनो ॥

दशमः श्लोकः

भूतसूक्ष्मात्मनि मयि तन्मात्रं धारयेन्मनः ।
अणिमानमवाप्नोति तन्मात्रोपासको मम ॥१०॥

पदच्छेद—

भूतसूक्ष्म आत्मनि मयि तत् मात्रम् धारयेत् मनः ।
अणिमानम् अवाप्नोति तन्मात्र उपासकः मम ॥

शब्दार्थ—

भूत	१. पञ्चभूतों की	मनः ।	५. जो अपने मन को
सूक्ष्म	२. सूक्ष्मतम मात्रायें	अणिमानम्	११. अणिमानामक सिद्धि को प्राप्त करता है
आत्मनि	४. शरीर है	अवाप्नोति	१२.
मयि	३. मेरा ही	तन्मात्र	९. तन्मात्रात्मक शरीर की
तन्मात्रम्	६. तन्मात्राओं में	उपासकः	१०. उपासना करता है वह
धारयेत्	७. लगा देता है और	मम ॥	८. मेरे

श्लोकार्थ—पञ्चभूतों की सूक्ष्मतम मात्रायें मेरा ही शरीर है । जो अपने मन को तन्मात्राओं में लगा देता है । और मेरे तन्मात्रात्मक शरीर की उपासना करता है । वह अणिमा नाम की सिद्धि को प्राप्त करता है ॥

एकादशः श्लोकः

महत्यात्मन्मयि परे यथासंस्थं मनो दधत् ।
महिमानमवाप्नोति भूतानां च पृथक् पृथक् ॥११॥

पदच्छेद—

महति आत्मन् मयि परे यथा संस्थम् मनः दधत् ।
महिमानम् अवाप्नोति भूतानाम् च पृथक् पृथक् ॥

शब्दार्थ—

महति	१. महतत्त्व के	महिमानम्	७.	उसे महिमा नाम की सिद्धि
आत्मन्	२. रूप में भी	अवाप्नोति	८.	प्राप्त हो जाती है
मयि परे	३. मैं ही प्रकाशित हो रहा हूँ	भूतानाम्	१०.	पञ्चभूतों में
यथासंस्थम्	५. महत्तत्व में	च	९	और
मनः	४. जो अपने मन को	पृथक्	११.	अलग
दधत् ।	६. लगा देता है	पृथक् ॥	१२.	अलग मन लगाने से उनकी महत्ता प्राप्त होती है

श्लोकार्थ—महत्तत्व के रूप में भी मैं ही प्रकाशित हो रहा हूँ। जो अपने मन को महत्तत्व में लगा देता है। उसे महिमा नाम की सिद्धि प्राप्त हो जाती है। और पञ्चभूतों में अलग-अलग मन लगाने से उनकी महत्ता प्राप्त होती है।

द्वादशः श्लोकः

परमाणुमये चित्तं भूतानां मयि रञ्जयन् ।
कालसूक्ष्मार्थतां योगी लघिमानमवाप्नुयात् ॥१२॥

पदच्छेद—

परमाणुमये चित्तम् भूतानाम् मयि रञ्जयन् ।
काल सूक्ष्म अर्थताम् योगी लघिमानम् अवाप्नुयात् ॥

शब्दार्थ—

परमाणुमये	३. परमाणुओं को	काल	७.	परमाणु रूप काल के समान
चित्तम्	५. अपने चित्त को	सूक्ष्म	८.	सूक्ष्म वस्तु बनने की
भूतानाम्	२. वायु आदि भूतों के	अर्थताम्	९.	सामर्थ्य एवम्
मयि	४. मेरा रूप समझ कर	योगी	१.	जो योगी
रञ्जयन् ।	६. उनमें तदाकार करता है	लघिमानम्	१०.	लघिमा नामक सिद्धि की
		अवाप्नुयात् ॥	११.	प्राप्ति होती है

श्लोकार्थ—जो योगी वायु आदि भूतों के परमाणुओं को मेरा रूप समझ कर अपने चित्त को उनमें तदाकार करता है। उसे परमाणु रूप काल के समान सूक्ष्म वस्तु बनने की सामर्थ्य एवम् लघिमानाम की सिद्धि की प्राप्ति होती है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

धारयन् मय्यहंतत्त्वे मनो वैकारिकेऽखिलम् ।
सर्वेन्द्रियाणामात्मत्वं प्राप्तिं प्राप्नोति मन्मनाः ॥१३॥

पदच्छेद—

धारयन् मयि अहम् तत्त्वे मनः वैकारिके अखिलम् ।
सर्व इन्द्रियाणाम् आत्मत्वम् प्राप्तिम् प्राप्नोति मत् मनाः ॥

शब्दार्थ—

धारयन्	४.	उसमें धारणा करके	सर्व	७.	वह समस्त
मयि	३.	मेरा स्वरूप समझ कर	इन्द्रियाणाम्	८.	इन्द्रियों का
अहम् तत्त्वे	२.	अहंकार को	आत्मत्वम्	९.	अधिष्ठाता हो जाता है
मनः	५.	अपने मन को	प्राप्तिम्	११.	प्राप्ति नाम की सिद्धि को
वैकारिके	१.	जो सात्विक	प्राप्नोति	१२.	प्राप्त करता है
अखिलम् ।	७.	एकाग्र करता है	मत् मनाः ॥	१०.	मुझमें मन लगाने वाला व्यक्ति

श्लोकार्थ—जो सात्विक अहंकार को मेरा स्वरूप समझ कर उसमें धारणा करके अपने मन को एकाग्र करता है। वह समस्त इन्द्रियों का अधिष्ठाता हो जाता है। मुझमें मन लगाने वाला व्यक्ति प्राप्ति नाम की सिद्धि को प्राप्त करता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

महत्यात्मनि यः सूत्रे धारयेन्मयि मानसम् ।
प्राकाम्यं पारमेष्ठ्यं मे विन्दतेऽव्यक्तजन्मनः ॥१४॥

पदच्छेद—

महति आत्मनि यः सूत्रे धारयेत् मयि मानसम् ।
प्राकाम्यम् पारमेष्ठ्यम् मे विन्दते अव्यक्त जन्मनः ॥

शब्दार्थ—

महति	३.	महतत्त्वाभिमानी	प्राकाम्यम्	१२.	प्राकाम्य नाम की सिद्धि
आत्मनि	४.	रूप	पारमेष्ठ्यम्	११.	सर्वोत्कृष्ट
यः	१.	जो पुरुष	मे	८.	उसे मुझ
सूत्रे	५.	सुत्रात्मा में	विन्दते	१३.	प्राप्त होती है
धारयेत्	७.	स्थिर करता है	अव्यक्त	९.	अव्यक्त
मयि	२.	मुझ	जन्मनः ॥	१०.	जन्माकी
मानसम् ।	६.	अपना मन			

श्लोकार्थ—जो पुरुष मुझ महत्त्वाभिमानी रूप सूत्रात्मा में अपना मन स्थिर करता है। उसे मुझ अव्यक्त जन्मा की सर्वोत्कृष्ट प्राकाम्य नाम की सिद्धि प्राप्त होती है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

विष्णौ त्र्यधीश्वरे चित्तं धारयेत् कालविग्रहे।
स ईशित्वमवाप्नोति क्षेत्रक्षेत्रज्ञचोदनाम् ॥१५॥

पदच्छेद—

विष्णौ त्र्यधीश्वरे चित्तम् धारयेत् काल विग्रहे।
स ईशित्वम् अवाप्नोति क्षेत्र क्षेत्रज्ञ चोदनम् ॥

शब्दार्थ—

विष्णौ	२.	मेरे	सः	७.	वह
त्र्यधीश्वरे	१.	जो त्रिगुणमयी माया के स्वामी	ईशित्वम्	११.	ईशित्व नामक सिद्धि को
चित्तम्	५.	चित्त में	अवाप्नोति	१२.	प्राप्त करता है
धारयेत्	६.	धारण करता है	क्षेत्र	८.	शरीरों और
काल	३.	काल	क्षेत्रज्ञ	९.	जीवों को
विग्रहे।	४.	स्वरूप विश्वरूप को अपने	चोदनम् ॥	१०	प्रेरित करने की सामर्थ्यरूप

श्लोकार्थ—जो त्रिगुणमयी माया के स्वामी काल स्वरूप विश्वरूप को अपने चित्त में धारण करता है वह शरीरों और जीवों को प्ररित करने की सामर्थ्य रूप ईशित्व नाम की सिद्धि को प्राप्त करता है ॥

षोडशः श्लोकः

नारायणे तुरीयाख्ये भगवच्छब्दशब्दिते।
मनो मय्यादधद् योगी मद्धर्मा वशितामियात् ॥१६॥

पदच्छेद—

नारायणे तुरीय आख्ये भगवत् शब्द शब्दिते।
मनः मयि आदधत् योगी मत् धर्मा वशिताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

नारायणे	३.	नारायण स्वरूप में	मनः	९.	मन को मुझ में
तुरीय	४.	जिसे तुरीय और	मयि	२.	मेरे
आख्ये	६.	नामक	आदधत्	१०.	लगा देता है
भगवत्	५.	भगवान्	योगी	१.	जो योगी
शब्द	७.	शब्दों से भी	मत्धर्मा	११.	उसमें मेरे गुण होने लगते हैं
शब्दिते।	८.	पुकारते हैं	वशिताम् इयात् ॥	१२.	वह वशिता नामक सिद्धि प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—जो योगी मेरे नारायण स्वरूप में जिसे तुरीय और भगवान् नामक शब्दों से भी पुकारते हैं मन को मुझ में लगा देता है। उसमें मेरे गुण होने लगते हैं। वह वशिता नाम की सिद्धि प्राप्त करता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

निर्गुणे ब्रह्मणि मयि धारयन् विशदं मनः ।
परमानन्दमाप्नोति यत्र कामोऽवसीयते ॥१७॥

पदच्छेद—

निर्गुणे ब्रह्मणि मयि धारयन् विशदम् मनः ।
परम् आनन्दम् आप्नोति यत्र कामः अवसीयते ॥

शब्दार्थ—

निर्गुणे	२.	निर्गुण	परम्	७.	उसे परम
ब्रह्मणि	३.	ब्रह्म में	आनन्दम्	८.	आनन्द
मयि	१.	जो साधक मुझ	आप्नोति	९.	प्राप्त होता है
धारयन्	६.	स्थिर कर लेता है	यत्र	१०.	जहाँ
विशदम्	४.	अपना निर्मल	कामः	११.	समस्त कामानाओं के
मनः ।	५.	मन	अवसीयते ॥	१२.	पूर्ण होने से कामवसायित्व सिद्धि मिलती है

श्लोकार्थ—जो साधक मुझ निर्गुण ब्रह्म में अपना निर्मल मन स्थिर कर लेता हैं । उसे परम आनन्द प्राप्त होता है । जहाँ समस्त कामनाओं के पूर्ण होने से कामावसायित्व सिद्धि मिलती है ॥

अष्टदशः श्लोकः

श्वेतद्वीपपतौ चित्तं शुद्धे धर्ममये मयि ।
धारयञ्छ्वेततां याति षडूर्मिरहितो नरः ॥१८॥

पदच्छेद—

श्वेतद्वीप पतौ चित्तम् शुद्धे धर्ममये मयि ।
धारयन् श्वेतताम् याति षडूर्मि रहितो नरः ॥

शब्दार्थ—

श्वेतद्वीप	१.	श्वेतद्वीप के	धारयन्	७.	स्थिर करके
पतौ	२.	स्वामी	श्वेताम्	९.	शुद्ध स्वरूप को
चित्तम्	६.	चित्त को	याति	१०.	प्राप्त करता है और वह
शुद्धे	३.	अत्यन्त शुद्ध और	षडूर्मिः	११.	छः ऊर्मियों से
धर्ममये	४.	धर्ममय	रहितो	१२.	रहित हो जाता है
मयि ।	५.	मुझमें	नरः ॥	८.	मनुष्य

श्लोकार्थ—श्वेतद्वीप के स्वामी अत्यन्त शुद्ध और धर्ममय मुझ में चित्त को स्थिर करके मनुष्य शुद्ध स्वरूप को प्राप्त करता है । और वह छः ऊर्मियों (भूख, प्यास जन्म, मृत्यु, शोक, मोह) इनसे रहित हो जाता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

मय्याकाशात्मनि प्राणे मनसा घोषमुद्वहन् ।
तत्रोपलब्धा भूतानां हंसो वाचः श्रृणोत्यसौ ॥१९॥

पदच्छेद—

मयि आकाश आत्मनि प्राणे मनसा घोषम् उद्वहन् ।
तत्र उपलब्धा भूतानाम् हंसः वाचः श्रृणोति असौ ॥

शब्दार्थ—

मयि	३. मुझ	तत्र	१०. उस
आकाश	१. आकाश	उपलब्धा	११. आकाश में प्राप्त होने वाली
आत्मनि	२. स्वरूप	भूतानाम्	१२. विविध प्राणियों की
प्राणे	४. समष्टि प्राण में	हंसः	९. जीव
मनसा	५. मन के द्वारा	वाचः	१३. बोली
घोषम्	६. अनाहत नाद का	श्रृणोति	१४. सुन समझ सकता है
उद्वहन् ।	७. चिन्तन करने वाला	असौ ॥	८. यह

श्लोकार्थ—आकाश स्वरूप मुझ समष्टि प्राण में मन के द्वारा अनाहतनाद का चिन्तन करने वाला यह जीव उस आकाश में प्राप्त होने वाली विविध प्राणियों की बोली सुन समझ सकता है ॥

विंशः श्लोकः

चक्षुस्त्वष्टरि संयोज्य त्वष्टारमपि चक्षुषि ।
मां तत्र मनसा ध्यायन् विश्वं पश्यति सूक्ष्मदृक् ॥२०॥

पदच्छेद—

चक्षुः त्वष्टरि संयोज्य त्वष्टारम् अपि चक्षुषि ।
माम् तत्र मनसा ध्यायन् विश्वम् पश्यति सूक्ष्मदृक् ॥

शब्दार्थ—

चक्षुः	१. जो योगी नेत्रों को	माम्	८. मेरा
त्वष्टरि	२. सूर्य में और	तत्र मनसा	७. उन दोनों के संयोग में मन ही मन
संयोज्य	६. संयुक्त कर देता है और	ध्यायन्	९. ध्यान करता है
त्वष्टारम्	३. सूर्य को	विश्वम्	११. वह सारे संसार को
अपि	४. भी	पश्यति	१२. देख सकता है
चक्षुषि ।	५. नेत्रों में	सूक्ष्मदृक् ॥	१०. उसकी दृष्टि सूक्ष्म हो जाती है

श्लोकार्थ—जो योगी नेत्रों को सूर्य में और सूर्य को भी नेत्रों में संयुक्त कर देता है । और उन दोनों के संयोग में मन ही मन मेरा ध्यान करता है उसकी दृष्टि सूक्ष्म हो जाती है । वह सारे संसार को देख सकता है ॥

एकविंशः श्लोकः

मनो मयि सुसंयोज्य देहं तदनु वायुना ।
मद्धारणानुभावेन तत्रात्मा यत्र वै मनः ॥२१॥

पदच्छेद—

मनः मयि सुसंयोज्य देहं तत् अनु वायुना ।
मत् धारणा अनुभावेन तत्र आत्मा यत्र वै मनः ॥

शब्दार्थ—

मनः	१.	मन और	मत् धारणा	७.	मेरी धारणा
मयि	५.	मुझमें	अनुभावेन	८.	करने पर
सुसंयोज्य	६.	जोड़ देने पर और	तत्र	१२.	वहाँ पहुँच जाता है
देहम्	२.	शरीर को	आत्मा	११.	शरीर भी
तत् अनु	४.	सहित	यत्र वै	१०.	जहाँ जाता है उसका
वायुना ।	३.	प्राणवायु के	मनः ॥	९.	योगी का मन

श्लोकार्थ—मन और शरीर को प्राण-वायु के सहित मुझ में जोड़ देने पर और मेरी धारणा करने पर योगी का मन जहाँ जाता है उसका शरीर भी वहीं पहुँच जाता है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

यदा मन उपादाय यद् यद् रूपं बुभूषति ।
तत्तद् भवेन्मनोरूपं मद्योगबलमाश्रयः ॥२२॥

पदच्छेद—

यदा मनः उपादाय यद-यद रूपम् बुभूषति ।
तत्-तत् भवेत् मनः रूपम् मद् योग बलम् आश्रयः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जिस समय योगी	तत्-तत्	७.	तो वह
मनः	२.	मन को	भवेत्	९.	धारणा कर लेता है क्योंकि
उपादाय	३.	उपादान कारण बनाकर	मनः रूपम्	८.	अपने मन के अनुकूल रूप
यद्-यद्	४.	किसी देवता आदि का	मद्	१२.	मुझ में लगा दिया है
रूपम्	५.	रूप	योगे बलम्	१०.	योग बल का
बुभूषति ।	६.	धारण करना चाहता है	आश्रयः ॥	११.	आश्रय लेकर उसने मन को

श्लोकार्थ—जिस समय योगी मन को उपादान कारण बनाकर किसी देवता आदि का रूप धारण करना चाहता है । तो वह अपने मन के अनुकूल रूप धारण कर लेता है । क्योंकि योगबल का आश्रय लेकर उसने मन को मुझ में लगा दिया है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

परकायं विशन् सिद्ध आत्मानं तत्र भावयेत् ।
पिण्डं हित्वा विशेत् प्राणो वायुभूतः षडङ्घ्रिवत् ॥२३॥

पदच्छेद—

परकायम् विशन् सिद्ध आत्मानम् तत्र भावयेत् ।
पिण्डम् हित्वा विशेत् प्राणः वायुभूतः षडङ्घ्रिवत् ॥

शब्दार्थ—

परकायम्	२.	दूसरे शरीर में	पिण्डम्	१०.	अपना शरीर
विशन्	३.	प्रवेश करना चाहे तो	हित्वा	११.	छोड़कर
सिद्ध	१.	जो योगी	विशेत्	१२.	दूसरे शरीर में प्रवेश कर जाता है
आत्मानम्	४.	उसे अपने में वहीं	प्राणः वायुभूत	७.	इससे उसका प्राण वायु रूप होकर
तत्र	५.	मेरे होने की	षडङ्घ्रि	८.	भौंरे के
भावयेत् ॥	६.	भावना करनी चाहिये	वत् ॥	९.	समान

श्लोकार्थ—जो योगी दूसरे शरीर में प्रवेश करना चाहे । तो उसे अपने शरीर में वहीं मेरे होने की भावना करनी चाहिये । इससे उसका प्राण वायु रूप होकर भौंरे के समान अपना शरीर छोड़कर दूसरे शरीर में प्रवेश कर जाता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

पार्ष्ण्याऽऽपीड्य गुदं प्राणं हृदुरःकण्ठमूर्धसु ।
आरोप्य ब्रह्मरन्ध्रेण ब्रह्म नीत्वोत्सृजेत्तनुम् ॥२४॥

पदच्छेद—

पार्ष्ण्या आपीड्य गुदम् प्राणम् हृत् उरः कण्ठ मूर्धसु ।
आरोप्य ब्रह्म रन्ध्रेण ब्रह्म नीत्वा उत्सृजेत् तनुम् ॥

शब्दार्थ—

पार्ष्ण्या	१.	एड़ी से	आरोप्य	७.	ले जाकर फिर
आपीड्य	३.	दबाकर	ब्रह्मरन्ध्रेण	८.	ब्रह्मरन्ध्र के द्वारा उसे
गुदम्	२.	गुदाद्वार को	ब्रह्म	९.	ब्रह्म में
प्राणम्	४.	प्राण वायु को	नीत्वा	१०.	लीन करके
हृत् उरः	५.	हृदय, वक्षः स्थल	उत्सृजेत्	१२.	परित्याग करदे
कण्ठ मूर्धसु ।	६.	कण्ठ और मस्तक में	तनुम् ॥	११.	शरीर का

श्लोकार्थ—एड़ी से गुदा द्वार को दबा कर प्राणवायु को, हृदय, वक्षः स्थल, कण्ठ और मस्तक में ले जाकर फिर ब्रह्मरन्ध्र के द्वारा उसे ब्रह्म में लीन करके शरीर का परित्याग कर दे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

विहरिष्यन् सुराक्रीडे मत्स्थं सत्त्वं विभावयेत् ।
विमानेनोपतिष्ठन्ति सत्त्ववृत्तीः सुरस्त्रियः ॥२५॥

पदच्छेद—

विहरिष्यन् सुर आक्रीडे मत्स्थम् सत्त्वम् विभावयेत् ।
विमानेन उपतिष्ठन्ति सत्त्ववृत्तीः सुरस्त्रियः ॥

शब्दार्थ—

विहरिष्यन्	३. विहार करने की इच्छा होने पर	विमानेन	१०. विमान पर चढ़कर
सुर	१. देवताओं के	उपतिष्ठन्ति	११. उसके पास पहुँच जाती है
आक्रीडे	२. विहार स्थल में	सत्त्ववृत्तीः	७. सत्त्वगुण की अंशरूप
मत्स्थम्	४. मेरे शुद्ध	सुर	८. सुर
सत्त्वम्	५. सत्त्वमय स्वरूप को	स्त्रियः ॥	९. सुन्दरियाँ
विभावयेत् ।	६. भावना करे । इससे		

श्लोकार्थ—देवताओं के विहार स्थल में विहार करने की इच्छा होने पर मेरे शुद्ध सत्त्वमय स्वरूप की भावना करें । इससे सत्त्वगुण की अंशरूप सुर सुन्दरियाँ विमान पर चढ़कर उसके पास पहुँच जाती हैं ।

षड्विंशः श्लोकः

यथा सङ्कल्पयेद् बुद्ध्या यदा वा मत्परः पुमान् ।
मयि सत्ये मनो युञ्जस्तथा तत् समुपाश्नुते ॥२६॥

पदच्छेद—

यथा सङ्कल्पयेद बुद्धया यदा वा मत्परः पुमान् ।
मयि सत्ये मनः युञ्जन् तथा तत् समुपाश्नुते ॥

शब्दार्थ—

यथा	४. जैसा	मयि	८. मुझमें
सङ्कल्पयेद्	५. सङ्कल्प करता है	सत्ये	७. सत्य सङ्कल्प स्वरूप
बुद्धया	१. चित्त से	मनः	९. अपना मन
यदा	३. जब	युञ्जन्	१०. लगा देता है
वा	६. अथवा	तथातत्	११. वह उसी समय वही वस्तु
मत्परः पुमान् ।	२. मेरे परायण हुआ पुरुष	समुपाश्नुते ॥	१२. प्राप्त कर लेता है

श्लोकार्थ—चित्त से मेरे परायण हुआ पुरुष जब जैसा सङ्कल्प करता है । अथवा सत्य सङ्कल्प स्वरूप मुझ में अपना मन लगा देता है । वह उसी समय वही वस्तु प्राप्त कर लेता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यो वै मद्भावमापन्न ईशितुर्वशितुः पुमान् ।
कुतश्चिन्न विहन्येत तस्य चाज्ञा यथा मम ॥२७॥

पदच्छेद—

यः वै मत् भावम् आपन्न ईशितुः वशितुः पुमान् ।
कुतश्चित् न विहन्येत तस्य च आज्ञा यथा मम ॥

शब्दार्थ—

यः वै	१. जो	कुतश्चित्	११.	कोई
मत् भावम्	५. मेरे रूप का चिन्तन करके	न विहन्येत	१२.	नहीं टाल सकता
आपन्न	६. उसी भाव से युक्त हो जाता है	तस्य च	७.	उसकी
ईशितुः	३. ईशित्व और	आज्ञा	८.	आज्ञा
वशितुः	४. वशित्व के स्वामी	यथा	१०.	समान
पुमान् ।	२. पुरुष	मम ॥	९.	मेरी आज्ञा के

श्लोकार्थ—जो पुरुष ईशित्व और वशित्व के स्वामी मेरे रूप का चिन्तन करके उसी भाव से युक्त हो जाता है। उसकी आज्ञा मेरी आज्ञा के समान कोई नहीं टाल सकता है ॥

अष्टविंशः श्लोकः

मद्भक्त्या शुद्धसत्त्वस्य योगिनो धारणाविदः ।
तस्य त्रैकालिकी बुद्धिर्जन्ममृत्यूपबृंहिता ॥२८॥

पदच्छेद—

मत् भक्त्या शुद्ध सत्त्वस्य योगिनः धारणा विदः ।
तस्य त्रैकालिकी बुद्धिः जन्म मृत्यु उपबृंहिता ॥

शब्दार्थ—

मत् भक्त्या	३. मेरी भक्ति के प्रभाव से	तस्य	६.	उसकी वह
शुद्ध	४. शुद्ध	त्रैकालिकी	११.	वह भूत, भविष्य, वर्तमान को
सत्त्वस्य	५. सत्त्वमय हो गया है	बुद्धिः	७.	बुद्धि
योगिनः	१. जिस योगी का मन	जन्म	८.	जन्म
धारणा	२. मेरी धारणा करते-करते	मृत्यु	९.	मृत्यु
विदः ।	१२. जान जाता है	उपबृंहिता ॥	१०.	आदि को जान लेती है और

श्लोकार्थ—जिस योगी का मन मेरी भक्ति के प्रभाव से शुद्ध सत्त्वमय हो गया है। उसकी वह बुद्धि जन्म-मृत्यु आदि को जान लेती है। और वह भूत, भविष्य, वर्तमान को जान जाता है ॥

एकोनत्रिंश श्लोकः

अग्न्यादिभिर्न हन्येत मुनेर्योगमयं वपुः ।
मद्योगश्रान्तचित्तस्य यादसामुदकं यथा ॥२९॥

पदच्छेद—

अग्नि आदिभिः न हन्येत मुनेः योगमयम् वपुः ।
मत् योग श्रान्त चित्तस्य यादसाम् उदकम् यथा ॥

शब्दार्थ—

अग्नि	१०.	अग्नि	मत् योग	६.	मुझमें लगा कर
आदिभिः	११.	जल आदि कोई भी पदार्थ	श्रान्त	७.	शिथिल कर दिया है उसके
न हन्येत	१२.	नहीं नष्ट कर सकते हैं	चित्तस्य	५.	अपना चित्त
मुनेः	४.	वैसे ही जिस योगी ने	यादसाम्	३.	जल के प्राण का नाश नहीं होता
योगमयम्	८.	योगमय	उदकम्	२.	जल के द्वारा
वपुः ।	९.	शरीर को	यथा ॥	१.	जैसे

श्लोकार्थ—जैसे जल के द्वारा जल के प्राणी का नाश नहीं होता है। वैसे ही जिस योगी ने अपना चित्त मुझमें लगा कर शिथिल कर दिया है उसके योग मय शरीर को अग्नि जल आदि कोई भी पदार्थ नहीं नष्ट कर सकते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

मद्विभूतीरभिध्यायन् श्रीवत्सास्त्रविभूषिताः ।
ध्वजातपत्रव्यजनैः स भवेदपराजितः ॥३०॥

पदच्छेद —

मत् विभूतीः अभिध्यायन् श्रीवत्स अस्त्र विभूषिताः ।
ध्वज आतपत्र व्यजनैः स भवेत् अपराजितः ॥

शब्दार्थ—

मत् विभूतीः	६.	मेरे अवतारों का	ध्वजआतपत्र	४.	ध्वजा, छत्र
अभिध्यायन्	७.	ध्यान करता है	व्यजनैः	५.	चँवर आदि से सम्पन्न
श्रीवत्स	१.	जो पुरुष श्रीवत्स चिह्न	सः	८.	वह
अस्त्र	२.	शङ्ख, गदा, पद्म, चक्रादि आयुधों से	भवेत्	१०.	हो जाता है
विभूषिताः ।	३.	विभूषित तथा	अपराजितः ॥	९.	अजेय

श्लोकार्थ—जो पुरुष श्रीवत्स चिह्न शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, चक्रादि आयुधों से विभूषित तथा ध्वजा, छत्र, चँवर आदि से सम्पन्न मेरे अवतारों का ध्यान करता है। वह अजेय हो जाता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

उपासकस्य मामेवं योगधारणया मुनेः ।
सिद्धयः पूर्वकथिता उपतिष्ठन्त्यशेषतः ॥३१॥

पदच्छेद—

उपासकस्य माम् एवम् योगधारणया मुनेः ।
सिद्धयः पूर्व कथिताः उपतिष्ठन्ति अशेषतः ॥

शब्दार्थ—

उपासकस्य	४.	उपासना करता है और	सिद्धयः	८.	सिद्धियाँ
माम्	३.	मेरी	पूर्व	१०.	मैंने पहले
एवम्	१.	इस प्रकार	कथिताः	११.	वर्णन किया है
योग	५.	योग	उपतिष्ठन्ति	९.	प्राप्त हो जाती है जिनका
धारणया	६.	धारणा के द्वारा मेरा चिन्तन करता है	अशेषतः।	७.	उसे वे सभी
मुनेः ॥	२.	जो विचारशील पुरुष			

श्लोकार्थ—इस प्रकार जो विचारशील पुरुष मेरी उपासना करता है और योग धारणा के द्वारा मेरा चिन्तन करता है। उसे वे सारी सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं जिनका मैंने पहले वर्णन किया है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

जितेन्द्रियस्य दान्तस्य जितश्वासात्मनो मुनेः ।
मद्धारणां धारयतः का सा सिद्धिः सुदुर्लभा ॥३२॥

पदच्छेद—

जितेन्द्रियस्य दान्तस्य जितश्वास आत्मनः मुनेः ।
मत् धारणाम् धारयतः का सा सिद्धिः सुदुर्लभाः ॥

शब्दार्थ—

जितेन्द्रियस्य	४.	इन्द्रियों पर विजय पा ली है	मत् धारणाम्	६.	जो मेरे स्वरूप की धारणा
दान्तस्य	५.	जो संयमी है	धारयतः	७.	करता है उसके लिये
जितश्वास	२.	जिसने अपने प्राण	का सा	८.	वह कौन सी
आत्मनः	३.	मन और	सिद्धिः	९	सिद्धि है
मुनेः ।	१.	प्यारे उद्धव !	सुदुर्लभा ॥	१०.	जो दुर्लभ हो

श्लोकार्थ—प्यारे उद्धव जिसने अपने प्राण-मन और इन्द्रियों पर विजय पाली है जो संयमी है, जो मेरे स्वरूप की धारण करता है, उसके लिये कौन सी सिद्धि है जो दुर्लभ हो।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अन्तरायान् वदन्त्येता युञ्जतो योगमुत्तमम् ।
मया सम्पद्यमानस्य कालक्षपणहेतवः ॥३३॥

पदच्छेद—

अन्तरायान् वदन्ति एता युञ्जतः योगम् उत्तमम् ।
मया सम्पद्ये मानस्य काल क्षपण हेतवः ॥

शब्दार्थ—

अन्तरायान्	८.	विघ्न ही	मया	४.	मुझसे
वदन्ति	९	मानते हैं	सम्पद्य	५.	एकाकार
एताः	७.	इन सिद्धियों को भी	मानस्य	६.	होने वाले योगी
युञ्जतः	३.	अभ्यास करने वाले और	काल	१०.	क्योंकि ये समय
योगम्	२.	योगों का	क्षपण	११.	बिताने के कारण
उत्तमम् ।	१.	उत्तम	हेतवः ॥	१२.	मात्र हैं

श्लोकार्थ—उत्तम योगों का अभ्यास करने वाले और मुझसे एकाकार होने वाले योगी इन सिद्धियों को भी विघ्न ही मानते हैं। क्योंकि ये समय बिताने के कारण मात्र हैं (अर्थात् इनसे समय का दुरुपयोग होता है) ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

जन्मौषधितपोमन्त्रैर्यावतीरिह सिद्धयः ।
योगेनाप्नोति ताः सर्वा नान्यैर्योगगतिं व्रजेत् ॥३४॥

पदच्छेद—

जन्म-औषधी तपः मन्त्रैः यावतीः इह सिद्धयः ।
योगेन आप्नोति ताः सर्वा न अन्यैः योगगतिम् व्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

जन्म	२.	जन्म	योगेन	९.	योग के द्वारा
औषधी	३.	औषधी	आप्नोति	१०.	मिल जाती हैं, परन्तु
तपः	४.	तपस्या औ	ताः सर्वाः	८.	वे सभी
मन्त्रैः	५.	मन्त्रादि के द्वारा	न अन्यैः	१३.	मुझसे चित्त लगाये बिना नहीं
यावती	६.	जितनी	योग	११.	योग की
इह	१.	इस संसार में	गतिम्	१२.	अन्तिम सीमा
सिद्धयः ।	७.	सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं	व्रजेत् ॥	१४.	होती है

श्लोकार्थ—इस संसार में जन्म औषधी तपस्या और मन्त्रादि के द्वारा जितनी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। वे सभी योग के द्वारा मिल जाती हैं परन्तु योग की अन्तिम सीमा मुझसे चित्त लगाये बिना नहीं होती है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

सर्वासामपि सिद्धीनां हेतुः पतिरहं प्रभुः ।
अहं योगस्य सांख्यस्य धर्मस्य ब्रह्मवादिनाम् ॥३५॥

पदच्छेद—

सर्वासाम् अपि सिद्धीनाम् हेतुः पतिः अहम् प्रभुः ।
अहम् योगस्य सांख्यस्य धर्मस्य ब्रह्म वादिनाम् ॥

शब्दार्थ—

सर्वासाम्	७.	समस्त	अहम्	६.	मैं उनका एवम्
अपि	१२.	भी हूँ	योगस्य	३.	योग
सिद्धीनाम्	८.	सिद्धियों का	सांख्यस्य	४	सांख्य और
हेतुः	९.	हेतु और	धर्मस्य	५.	धर्मादि बहुत से साधन बताये हैं
पतिरहम्	११.	मैं उनका पति	ब्रह्म	१.	ब्रह्म
प्रभुः ।	१०.	स्वामी हूँ तथा	वादिनाम् ॥	२.	वादियों में

श्लोकार्थ—ब्रह्म वादियों में योग सांख्य और धर्मादि बहुत से साधन बताये हैं । मैं उनका एवम् समस्त सिद्धियों का हेतु और स्वामी हूँ तथा मैं उनका पति भी हूँ ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

अहमात्माऽऽन्तरो बाह्योऽनावृतः सर्वदेहिनाम् ।
यथा भूतानि भूतेषु बहिरन्तः स्वयं तथा ॥३६॥

पदच्छेद—

अहम् आत्मा आन्तरः बाह्यः अनावृतः सर्व देहिनाम् ।
यथा भूतानि भूतेषु बहिः अन्तः स्वयम् तथा ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१२.	मैं ही हूँ	यथा	१.	जैसे
आत्मा	११.	आत्म स्वरूप	भूतानि	४.	सूक्ष्म महाभूत ही हैं
आन्तरः	७.	भीतर	भूतेषु	२.	पञ्चभूतों में
बाह्यः	८.	बाहर	बहिः अन्तः	३.	बाहर भीतर सर्वत्र
अनावृतः	१०.	निरावरण	स्वयम्	९.	स्वयम्
सर्व देहिनाम् ।	६.	समस्त प्राणियों के	तथा ॥	५.	उसी प्रकार

श्लोकार्थ—जैसे, पञ्चभूतों में बाहर-भीतर सर्वत्र सूक्ष्म महाभूत ही हैं । उसी प्रकार समस्त प्राणियों के भीतर-बाहर स्वयम् निरावरण आत्म स्वरूप मैं ही हूँ ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे पञ्चदशः अध्यायः ॥ १५ ॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

षोडशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच— त्वं ब्रह्म परमं साक्षादनाद्यन्तमपावृतम् ।
सर्वेषामपि भावानां त्राणस्थित्यप्ययोद्भवः ॥१॥

पदच्छेद—

त्वम् ब्रह्म परमम् साक्षात् अनाद्यन्तम् अपावृतम् ।
सर्वेषाम् अपि भावानाम् त्राणस्थिति अप्यय उद्भवः ॥

शब्दार्थ—

त्वम्	१.	आप	सर्वेषाम्	७.	समस्त
ब्रह्म	४.	ब्रह्म हैं	अपि	१२.	भी आप ही हैं
परमम्	३.	पर	भावानाम्	८.	प्राणियों और पदार्थों की
साक्षात्	२.	स्वयम्	त्राणस्थिति	१०.	स्थिति रक्षा और
अनाद्यन्तम्	५.	आपका आदि है न अन्त है	अप्यय	११.	प्रलय के कारण
अपावृतम् ।	६.	आप आवरण रहित हैं	उद्भवः ॥	९.	उत्पत्ति

श्लोकार्थ—आप स्वयम् पर ब्रह्म हैं, आपका आदि है न अन्त है । समस्त प्राणियों और पदार्थों की उत्पत्ति, स्थिति, रक्षा और प्रलय के कारण भी आप ही हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

उच्चावचेषु भूतेषु दुर्ज्ञेयमकृतात्मभिः ।
उपासते त्वां भगवन् याथातथ्येन ब्राह्मणाः ॥२॥

पदच्छेद—

उच्चावचेषु भूतेषु दुर्ज्ञेयम् अकृत आत्मभिः ।
उपासते त्वाम् भगवन् याथातथ्येन ब्राह्मणाः ॥

शब्दार्थ—

उच्चावचेषु	१.	आप ऊँचे-नीचे	उपासते	९.	उपासना तो
भूतेषु	२.	सभी प्राणियों में स्थित हैं	त्वाम्	७.	आपकी
दुर्ज्ञेयम्	५.	वे आपको नहीं जान सकते हैं	भगवान्	६.	हे भगवान् !
अकृत	४.	वश में नहीं किया है	याथातथ्येन	८.	यथोचित
आत्मभिः ।	३.	जिन्होंने मन और इन्द्रियों को	ब्राह्मणाः ॥	१०.	ब्रह्मवेत्ता पुरुष ही करते हैं

श्लोकार्थ—आप ऊँचे-नीचे सभी प्राणियों में स्थित हैं । जिन्होंने मन और इन्द्रियों को वश में नहीं किया है । वे आपको नहीं जान सकते हैं । हे भगवन् ! आपकी यथोचित उपासना तो ब्रह्मवेत्ता पुरुष ही करते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

येषु येषु च भावेषु भक्त्या त्वां परमर्षयः।
उपासीनाः प्रपद्यन्ते संसिद्धिं तद् वदस्व मे ॥३॥

पदच्छेद—

येषु-येषु च भावेषु भक्त्या त्वाम् परमर्षयः।
उपासीनाः प्रपद्यन्ते संसिद्धिम् तत् वदस्व मे ॥

शब्दार्थ—

येषु-येषु	३. जिन रूपों	उपासीनाः	७. उपासना करके
च	४. और	प्रपद्यन्ते	९. प्राप्त करते हैं
भावेषु	५. विभूतियों की	संसिद्धिम्	८. सिद्धि
भक्त्या	६. परम भक्ति के साथ	तत्	१०. वह आप
त्वाम्	२. आपके	वदस्व	१२. कहिये
परमर्षयः।	१. बड़े-बड़े ऋषिमहर्षि	मे ॥	११. मुझसे

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि आपके जिन रूपों और विभूतियों की परम भक्ति के साथ उपासना करके सिद्धि प्राप्त करते हैं। वह आप मुझ से कहिये ॥

चतुर्थः श्लोकः

गूढश्चरसि भूतात्मा भूतानां भूतभावन।
न त्वां पश्यन्ति भूतानि पश्यन्तं मोहितानि ते ॥४॥

पदच्छेद—

गूढः चरसि भूतात्मा भूतानाम् भूत भावन।
न त्वाम् पश्यन्ति भूतानि पश्यन्तम् मोहितानि मे ॥

शब्दार्थ—

गूढः	४. आप उनमें गुप्त रह कर	न त्वाम्	९. आपको नहीं
चरसि	५. लीला करते रहते हैं	पश्यन्ति	१०. देख पाते हैं
भूतात्मा	३. आप सबके अन्तरात्मा हैं	भूतानि	८. समस्त प्राणी
भूतानाम्	१. हे समस्त प्राणियों के	पश्यन्तम्	६. आप सबको देखते हैं परन्तु
भूतभावन।	२. जीवन दाता प्रभो!	मोहितानि मे ॥	७. आपकी माया से मोहित

श्लोकार्थ—हे समस्त प्राणियों के जीवनदाता प्रभो! आप सब के अन्तरात्मा हैं। आप उनमें गुप्त रह कर लीला करते रहते हैं। आप सबको देखते हैं। परन्तु आपकी माया से मोहित समस्त प्राणी आपको नहीं देख पाते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

याः काश्च भूमौ दिवि वै रसायां विभूतयो दिक्षु महाविभूते ।
ता मह्यमाख्याह्यनुभाविताास्ते नमामि ते तीर्थपदाङ्घ्रिपद्मम् ॥५॥

पदच्छेद—

याः काः च भूमौ दिवि वैरसायाम् विभूतयः दिक्षु महाविभूते ।
ताः मह्यम् आख्याहि अनुभाविताः तेनमामिते तीर्थपद अङ्घ्रिपद्मम् ॥

शब्दार्थ—

याः	७.	जो	ताः	११.	उनका
काः च	८.	कोई भी	मह्यम्	१०.	आप कृपा करके मुझसे
भूमौ	२.	पृथ्वी	आख्याहि	१२.	वर्णन कीजिये
दिविवै	३.	स्वर्ग	अनुभाविताः	६.	आपके प्रभाव से युक्त
रसायाम् ।	४.	पाताल तथा	नमामि	१६.	मैं बन्दना करता हूँ
विभूतयः	९.	विभूतियाँ हैं	ते	१४	आपके
दिक्षुः	५.	दिशा-विदिशाओं में	तीर्थपाद	१३.	तीर्थों को भी तीर्थ बनाने वाले
महाविभूते	१.	अचिन्त्य ऐश्वर्य सम्पन्न प्रभो	अङ्घ्रिपद्मम् ॥	१५.	चरण कमलों की

श्लोकार्थ—अचिन्त्य ऐश्वर्य सम्पन्न प्रभो ! पृथ्वी, स्वर्ग, पाताल तथा दिशा-विदिशाओं में आपके प्रभाव से युक्त जो कोई भी विभूतियाँ हैं । आप कृपा करके मुझसे उनका वर्णन कोजिए तीर्थों को भी तीर्थ बनाने वाले आपके चरण कमलों की मैं बन्दना करता हूँ ॥

षष्ठः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच— **एवमेतदहं पृष्टः प्रश्नं प्रश्नविदां वर ।**
युयुत्सुना विनशने सपत्नैरर्जुनेन वै ॥६॥

पदच्छेद—

एवम् एतद् अहम् पृष्टः प्रश्नम् प्रश्न विदाम् वर ।
युयुत्सुना विनशने सपत्नैः अर्जुनेन वै ॥

शब्दार्थ—

एवम्	८.	इसी प्रकार	वरः ।	२.	श्रेष्ठ उद्धव !
एतद्	९.	यह	युयुत्सुना	६.	युद्ध के लिये तत्पर
अहम्	१०.	मुझसे	विनशने	४.	कुरुक्षेत्र में
पृष्टः	१२.	पूछा था	सपत्नैः	५.	शत्रुओं से
प्रश्नम्	१०.	प्रश्न	अर्जुनेन	७.	अर्जुन ने भी
प्रश्नविदाम्	१.	प्रश्न को समझने वालों में	वै ॥	३.	निश्चय ही

श्लोकार्थ—प्रश्न को समझने वालों में श्रेष्ठ उद्धव ! निश्चय ही कुरुक्षेत्र में शत्रुओं से युद्ध के लिये तत्पर अर्जुन ने भी इसी प्रकार यह प्रश्न मुझसे पूछा था ॥

सप्तमः श्लोकः

ज्ञात्वा ज्ञातिवधं गर्ह्यमधर्मं राज्यहेतुकम् ।
ततो निवृत्तो हन्ताहं हतोऽयमिति लौकिकः ॥७॥

पदच्छेद—

ज्ञात्वा ज्ञातिवधम् गर्ह्यम् अधर्मम् राज्यहेतुकम् ।
ततो निवृत्तो हन्ताहम् हतः अयम् इति लौकिकः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञात्वा	६. समझकर	ततो	११. अतः यह युद्ध से
ज्ञातिवधम्	१. कुटुम्बियों को मारना	निवृत्तो	१२. उपरत हो गया है
गर्ह्यम्	४. अत्यन्तनिन्दित और	हन्ताहम्	९. मैं मारने वाला हूँ और यह
अधर्मम्	५. अधर्म कार्य	हतः	१०. मारा गया है
राज्य	२. वह भी राज्य	अयम इति	८. उसने सोचा कि
हेतुकम् ।	३. के लिये	लौकिकः ॥	७. साधारण पुरुषों के समान

श्लोकार्थ—कुटुम्बियों को मारना वह भी राज्य के लिये अत्यन्तनिन्दित और अधर्म कार्य समझकर साधारण पुरुषों के समान उसने सोचा कि मैं मारने वाला हूँ। और यह मारा गया है। अतः यह युद्ध से उपरत हो गया है।

अष्टमः श्लोकः

स तदा पुरुषव्याघ्रो युक्त्या मे प्रतिबोधितः ।
अभ्यभाषत मामेवं यथा त्वं रणमूर्धनि ॥८॥

पदच्छेद—

सः तदा पुरुषव्याघ्रः युक्त्या मे प्रतिबोधितः ।
अभ्यभाषत माम एवम् यथा त्वम् रणमूर्धनि ॥

शब्दार्थ—

सः	७. अर्जुन को	अभ्यभाषत	१२. प्रश्न किया था
तदा	१. तब	माम्	९. अर्जुन ने भी मुझसे
पुरुषव्याघ्रः	६. वीर शिरोमणि	एवम्	११. इसी प्रकार
युक्त्या	५. बहुत सी युक्तियां देकर	यथात्वम्	१०. तुम्हारे समान
मे	२. मैंने	रण	३. रण
प्रतिबोधितः ।	८. समझाया	मूर्धनि ॥	४. भूमि में

श्लोकार्थ—तब मैंने रणभूमि में बहुत सी युक्तियाँ देकर वीर शिरोमणि अर्जुन को समझाया। अर्जुन ने भी मुझसे तुम्हारे समान इसी प्रकार प्रश्न किया था ॥

नवमः श्लोकः

अहमात्मोद्धवामीषां भूतानां सुहृदीश्वरः ।
अहं सर्वाणि भूतानि तेषां स्थित्युद्भवाप्ययः ॥९॥

पदच्छेद—

अहम् आत्मा उद्धव अमीषाम् भूतानाम् सुहृद् ईश्वरः ।
अहम् सर्वाणि भूतानि तेषाम् स्थिति उद्भव अप्ययः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	२.	मैं	अहम्	८.	मैं
आत्मा	५.	आत्मा	सर्वाणि	९.	इन समस्त
उद्धव	१.	उद्धव जी !	भूतानि	१०.	प्राणियों और पदार्थों के रूप में हूँ
अमीषाम्	३.	इन	तेषाम्	११.	और इनकी
भूतानाम्	४.	समस्त प्राणियों का	स्थिति	१३.	स्थिति और
सुहृद	६.	हितैषी सुहृद	उद्भव	१२.	उत्पत्ति
ईश्वरः ।	७.	ईश्वर और नियामक हूँ	अप्ययः ॥	१४.	प्रलय का कारण भी हूँ

श्लोकार्थ—उद्धवजी ! मैं इन समस्त प्राणियों का आत्मा हितैषी-सुहृद, ईश्वर और नियामक हूँ । मैं इन समस्त प्राणियों और पदार्थों के रूप में और इनकी उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय का कारण हूँ ॥

दशमः श्लोकः

अहं गतिर्गतिमतां कालः कलयतामहम् ।
गुणानां चाप्यहं साम्यं गुणिन्यौत्पत्तिको गुणः ॥१०॥

पदच्छेद—

अहम् गतिः गतिमताम् कालः कलयताम् अहम् ।
गुणानाम् च अपि अहम् साम्यम् गुणिनि औत्पत्तिका गुणः ॥

शब्दार्थ—

अहम्	२.	मैं	गुणानाम्	७.	गुणों में
गतिः	३.	गति हूँ	च अपि	८.	भी
गतिमताम्	१.	गतिशील पदार्थों में	अहम्	९.	मैं
कालः	६.	काल हूँ	साम्यम्	१०.	उनकी साम्यावस्था हूँ
कलयताम्	४.	अपने अधीन करने वालों में	गुणिनि	११.	जितने गुणवान् पदार्थ हैं
अहम् ।	५.	मैं	औत्पत्तिकः गुणः ॥	१२.	उनका स्वभाविक गुण हूँ

श्लोकार्थ—गतिशील पदार्थों में मैं गति हूँ । अपने अधीन करने वालों में मैं काल हूँ । गुणों में भी मैं उनकी साम्यावस्था हूँ । जितने गुणवान् पदार्थ हैं । उनका स्वभाविक गुण हूँ ॥

एकादशः श्लोकः

गुणिनामप्यहं सूत्रं महतां च महानहम् ।
सूक्ष्माणामप्यहं जीवो दुर्जयानामहं मनः ॥११॥

पदच्छेद—

गुणिनाम् अपि अहम् सूत्रम् महताम् च महानहम् ।
सूक्ष्माणाम् अपि अहम् जीवः दुर्जयानाम् अहम् मनः ॥

शब्दार्थ—

गुणिनाम्	१.	गुण युक्त वस्तुओं में	सूक्ष्माणाम्	७.	सूक्ष्म वस्तुओं में
अपि अहम्	२.	भी मैं	अपि	८.	भी
सूत्रम्	३.	सूत्रात्मा हूँ	अहम्	९.	मैं
महताम्	५.	महानों में	जीवः	१०.	जीव हूँ और
च	४.	और	दुर्जयानाम्	११.	कठिनाई से वश में होने वालों में
महानहम् ।	६.	महत्तत्त्व हूँ	अहम् मनः ॥	१२.	मैं मन हूँ

श्लोकार्थ—गुण युक्त वस्तुओं में भी मैं सूत्रात्मा हूँ । और महानों में महत्तत्त्व हूँ । सूक्ष्म वस्तुओं में भी मैं जीव हूँ । और कठिनाई से वश में होने वालों में मैं मन हूँ ॥

द्वादशः श्लोकः

हिरण्यगर्भो वेदानां मन्त्राणां प्रणवस्त्रिवृत् ।
अक्षराणामकारोऽस्मि पदानिच्छन्दसामहम् ॥१२॥

पदच्छेद—

हिरण्यगर्भः वेदानाम् मन्त्राणाम् प्रणवः त्रिवृतः ।
अक्षराणाम् अकारः अस्मि पदानि छन्दसामहम् ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यगर्भः	२.	हिरण्यगर्भ हूँ	अक्षराणाम्	६.	मैं अक्षरों में
वेदानाम्	१.	मैं वेदों में	अकारः	७.	अकार
मन्त्राणाम्	३.	मन्त्रों में	अस्मि	८.	हूँ और
प्रणवः	५.	ओंकार हूँ	पदानि	१०.	त्रिपदा गायत्री हूँ
त्रिवृत् ।	४.	तीन मन्त्रों वाला	छन्दसामहम् ॥	९.	मैं छन्दों में

श्लोकार्थ—मैं वेदों में हिरण्यगर्भ हूँ । मन्त्रों में तीन मन्त्रों वाला ओंकार हूँ । मैं अक्षरों में अकार हूँ और मैं छन्दों में त्रिपदा गायत्री हूँ ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इन्द्रोऽहं सर्वदेवानां वसूनामस्मि हव्यवाट् ।
आदित्यानामहं विष्णू रुद्राणां नीललोहितः ॥१३॥

पदच्छेद—

इन्द्रः अहम् सर्व देवानाम् वसूनाम् अस्मि हव्यवाट् ।
आदित्यानाम् अहम् विष्णुः रुद्राणाम् नीललोहितः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रः	३.	इन्द्र हूँ	आदित्यानाम्	७.	आदित्यों में
अहम्	१.	मैं	अहम्	८.	मैं
सर्व देवानाम्	२.	समस्त देवताओं में	विष्णुः	९.	विष्णु और
वसूनाम्	४.	आठ वसुओं में	रुद्राणाम्	१०.	एकादश रुद्रों में
अस्मि	६.	हूँ	नीललोहितः ॥	११.	नीललोहित नाम का रुद्र हूँ
हव्यवाट् ।	५.	अग्नि			

श्लोकार्थ—मैं समस्त देवताओं में इन्द्र हूँ, आठ वसुओं में अग्नि हूँ। आदित्यों में मैं विष्णु हूँ। और एकादश रुद्रों में नीललोहित नाम का रुद्र हूँ ॥

चतुर्दशः श्लोकः

ब्रह्मर्षीणां भृगुरहं राजर्षीणामहं मनुः ।
देवर्षीणां नारदोऽहं हविर्धान्यस्मि धेनुषु ॥१४॥

पदच्छेद—

ब्रह्मर्षीणाम् भृगुः अहम् राजर्षीणाम् अहम् मनुः ।
देवर्षीणाम् नारदः अहम् हविः धानी अस्मि धेनुषु ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मर्षिणाम्	१.	ब्रह्मर्षियों में	देवर्षीणाम्	८.	देवर्षियों में
भृगुः	३.	भृगु और	नारदः	९.	नारद हूँ और
अहम्	२.	मैं	अहम्	७.	मैं
राजर्षीणाम्	४.	राजर्षियों में	हविः धानी	१२.	कामधेनु हूँ
अहम्	५.	मैं	अस्मि	११.	मैं
मनुः ।	६.	मनु हूँ	धेनुषु ॥	१०.	गौओं में

श्लोकार्थ—ब्रह्मर्षियों में मैं भृगु और राजर्षियों में मैं मनु हूँ। मैं देवर्षियों में नारद हूँ, और गौओं में मैं कामधेनु हूँ ॥

पञ्चदशः श्लोकः

सिद्धेश्वराणां कपिलः सुपर्णोऽहं पतत्त्रिणाम् ।
प्रजापतीनां दक्षोऽहं पितृणामहमर्यमा ॥१५॥

पदच्छेद—

सिद्धेश्वराणाम् कपिलः सुपर्णः अहम् पतत्त्रिणाम् ।
प्रजापतीनाम् दक्षः अहम् पितृणाम् अहम् अर्यमा ॥

शब्दार्थ—

सिद्धेश्वराणाम्	१.	सिद्धेश्वरों में	प्रजापतीनाम्	६.	प्रजापतियों में
कपिलः	२.	कपिल और	दक्षः	८.	दक्ष प्रजापति हूँ
सुपर्णः	५.	गरुड़ हूँ	अहम्	७.	मैं
अहम्	४.	मैं	पितृणाम्	९.	पितरों में
पतत्त्रिणाम् ।	३.	पक्षियों में	अहम् अर्यमा ॥	१०.	मैं अर्यमा हूँ

श्लोकार्थ—सिद्धेश्वरों में कपिल और पक्षियों में मैं गरुड़ हूँ । और प्रजापतियों में मैं दक्ष प्रजापति हूँ । पितरों में मैं अर्यमा हूँ ॥

षोडशः श्लोकः

मां विद्ध्युद्धव दैत्यानां प्रह्लादमसुरेश्वरम् ।
सोमं नक्षत्रौषधीनां धनेशं यक्षरक्षसाम् ॥१६॥

पदच्छेद—

मां विद्धि उद्धव दैत्यानां प्रह्लादम् असुरेश्वरम् ।
सोमं नक्षत्रौषधीनां धनेशम् यक्ष रक्षसाम् ॥

शब्दार्थ—

माम्	२.	मुझे	सोमम्	९.	चन्द्रमा
विद्धि	३.	ऐसा समझो कि मैं	नक्षत्र	८.	नक्षत्रों में
उद्धव	१.	प्रिय उद्धव !	ओषधीनाम्	१०.	ओषधियों में सोमरस
दैत्यानाम्	४.	दैत्यों में	धनेशम्	१३.	कुबेर हूँ
प्रह्लादम्	७.	प्रह्लाद हूँ और	यक्ष	११.	यक्ष
असुर	५.	दैत्य	रक्षसाम् ॥	१२.	राक्षसों में
ईश्वरम् ॥	६.	राज			

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! मुझे ऐसा समझो कि मैं दैत्यों में दैत्य राज प्रह्लाद हूँ । और नक्षत्रों में चन्द्रमा, ओषधियों में सोमरस और यक्ष-राक्षसों में कुबेर हूँ ॥

सप्तदशः श्लोकः

ऐरावतं गजेन्द्राणां यादसां वरुणं प्रभुम् ।
तपतां द्युमतां सूर्यं मनुष्याणां च भूपतिम् ॥१७॥

पदच्छेद—

ऐरावतम् गजेन्द्राणाम् यादसाम् वरुणम् प्रभुम् ।
तपताम् द्युमताम् सूर्यम् मनुष्याणाम् च भूपतिम् ॥

शब्दार्थ—

ऐरावतम्	२. ऐरावत	तपताम्	६. तपने और
गजेन्द्राणाम्	१. मैं गजराजों में	द्युमताम्	७. चमकने वालों में
यादसाम्	३. जल निवासियों में	सूर्यम्	८. सूर्य और
वरुणम्	५. वरुण	मनुष्याणाम्	९. मनुष्यों में
प्रभुम् ।	४. उनका प्रभु	च भूपतिम् ॥	१०. राजा हूँ

श्लोकार्थ—मैं गज राजों में ऐरावत, जल निवासियों में उनका प्रभु वरुण, तपने और चमकने वालों में सूर्य और मनुष्यों में राजा हूँ ॥

अष्टदशः श्लोकः

उच्चैः श्रवास्तुरङ्गाणां धातूनामस्मि काञ्चनम् ।
यमः संयमतां चाहं सर्पाणामस्मि वासुकिः ॥१८॥

पदच्छेद—

उच्चैश्रवाः तुरङ्गाणाम् धातूनाम् अस्मि काञ्चनम् ।
यमः संयमताम् च अहम् सर्पाणाम् अस्मि वासुकिः ॥

शब्दार्थ—

उच्चैश्रवाः	२. उच्चैश्रवा	यमः	८. यम तथा
तुरङ्गाणाम्	१. मैं घोड़ों में	संयमताम्	७. दण्डधारियों में
धातूनाम्	३. धातुओं में	च अहम्	६. और मैं
अस्मि	५. हूँ	सर्पाणाम्	९. सर्पों में
काञ्चनम् ।	४. सोना	अस्मि वासुकिः ॥	१०. वासुकि हूँ

श्लोकार्थ—मैं घोड़ों में उच्चैश्रवा, धातुओं में सोना हूँ । और मैं दण्डधारियों में यम तथा सर्पों में वासुकि हूँ ॥

एकोनविंशः श्लोकः

नागेन्द्राणामनन्तोऽहं मृगेन्द्रः शृङ्गिदंष्ट्रिणाम् ।
आश्रमाणामहं तुर्यो वर्णानां प्रथमोऽनघ ॥१६॥

पदच्छेद—

नागेन्द्राणाम् अनन्तः अहम् मृगेन्द्रः शृङ्गि दंष्ट्रिणाम् ।
आश्रमाणाम् अहम् तुर्यः वर्णानाम् प्रथमः अनघ ॥

शब्दार्थ—

नागेन्द्राणाम्	३.	नागराजों में	आश्रमाणाम्	८.	आश्रमों में
अनन्तः	४.	शेषनाग	अहम्	९.	मैं
अहम्	२.	मैं	तुर्यः	१०.	सन्यास आश्रम और
मृगेन्द्रः	७.	उनका राजा सिंह	वर्णानाम्	११.	वर्णों में
शृङ्गि	५.	सींग और	प्रथमः	१२.	ब्राह्मण हूँ
दंष्ट्रिनाम् ।	६.	दाढ़ वाले जीवों में	अनघ ॥	१.	हे निष्पाप उद्धव जी !

श्लोकार्थ—हे निष्पाप उद्धव जी ! मैं नागराजों में शेषनाग सींग और दाढ़ वाले जीवों में उनका राजा सिंह, आश्रमों में मैं सन्यास आश्रम और वर्णों में ब्राह्मण हूँ ॥

विंशः श्लोकः

तीर्थानां स्रोतसां गङ्गा समुद्रः सरसामहम् ।
आयुधानां धनुरहं त्रिपुरघ्नो धनुष्मताम् ॥२०॥

पदच्छेद—

तीर्थानाम् स्रोतसाम् गङ्गा समुद्रः सरसाम् अहम् ।
आयुधानाम् धनुः अहम् त्रिपुरघ्नः धनुष्मताम् ॥

शब्दार्थ—

तीर्थानाम्	१.	मैं तीर्थ और	आयुधानाम्	८.	अस्त्र-शस्त्रों में
स्रोतसाम्	२.	नदियों में	धनुः	९.	धनुष हूँ और
गङ्गा	३.	गङ्गा और	अहम्	७.	मैं
समुद्रः	६.	समुद्र हूँ	त्रिपुरघ्नः	११.	त्रिपुरारि शङ्कर हूँ
सरसाम्	४.	जलाशयों में	धनुष्मताम् ॥	१०.	धनुर्धरों में
अहम् ।	५.	मैं			

श्लोकार्थ—मैं तीर्थ और नदियों में गङ्गा और जलाशयों में मैं समुद्र हूँ । मैं अस्त्र-शस्त्रों में धनुष हूँ । और धनुर्धरों में त्रिपुरारि शङ्कर हूँ ॥

एकविंशः श्लोकः

धिष्ण्यानामस्म्यहं मेरुर्गहनानां हिमालयः ।
वनस्पतीनामश्वत्थ ओषधीनामहं यवः ॥२१॥

पदच्छेद—

धिष्ण्यानाम् अस्मि अहम् मेरुः गहनानाम् हिमालयः ।
वनस्पतीनाम् अश्वत्थ ओषधीनाम् अहम् यवः ॥

शब्दार्थ—

धिष्ण्यानाम्	२.	निवास स्थानों में	वनस्पतीनाम्	७.	वनस्पतियों में
अस्मि	४.	हूँ और	अश्वत्थ	८.	पीपल और
अहम्	१.	मैं	ओषधीनाम्	६.	धान्यों में
मेरुः	३.	सुमेरु	अहम्	१०.	मैं
गहनानाम्	५.	दुर्गमस्थानों में	यवः ॥	११.	जौ हूँ
हिमालयः ।	६.	हिमालय			

श्लोकार्थ—मैं निवास स्थानों में सुमेरु हूँ और दुर्गम स्थानों में हिमालय, वनस्पतियों में पीपल और धान्यों में जौ हूँ ॥

द्वाविंशः श्लोकः

पुरोधसां वसिष्ठोऽहं ब्रह्मिष्ठानां बृहस्पतिः ।
स्कन्दोऽहं सर्वसेनान्यामग्रण्यां भगवानजः ॥२२॥

पदच्छेद—

पुरोधसाम् वशिष्ठः अहम् ब्रह्मिष्ठानाम् बृहस्पतिः ।
स्कन्दः अहम् सर्व सेनान्याम् अग्रण्याम् भगवान् अजः ॥

शब्दार्थ—

पुरोधसाम्	२.	पुरोहितों में	अहम्	६.	मैं
वशिष्ठः	३.	वशिष्ठ और	सर्व	७.	समस्त
अहम्	१.	मैं	सेनान्याम्	८.	सेनापतियों में
ब्रह्मिष्ठानाम्	४.	ब्रह्मवेत्ताओं में	अग्रण्याम्	१०.	सन्मार्ग प्रवर्तकों में
बृहस्पतिः ।	५.	बृहस्पति हूँ	भगवान्	११.	भगवान्
स्कन्दः	६.	स्वामिकार्तिकेय और	अजः ॥	१२.	ब्रह्मा हूँ

श्लोकार्थ—मैं पुरोहितों में वशिष्ठ और ब्रह्मवेत्ताओं में बृहस्पति हूँ । मैं समस्त सेनापतियों में स्वामीकार्तिकेय और सन्मार्ग प्रवर्तकों में भगवान् ब्रह्मा हूँ ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यज्ञानां ब्रह्मयज्ञोऽहं व्रतानामविहिंसनम् ।
वाय्वग्न्यर्काम्बुवागात्मा शुचीनामप्यहं शुचिः ॥२३॥

पदच्छेद—

यज्ञानाम् ब्रह्म यज्ञः अहम् व्रतानाम् अविहिंसनम् ।
वायु अग्नि अर्क अम्बु वाक् आत्मा शुचीनाम् अपि अहम् शुचिः ॥

शब्दार्थ—

यज्ञानाम्	२. पञ्च महायज्ञों में	अर्क अम्बु	११. सूर्य-जल
ब्रह्म यज्ञः	३. ब्रह्म यज्ञ हूँ	वाक् आत्मा	१२. वाणी एवम् आत्मा हूँ
अहम्	१. मैं	शुचीनाम्	६. शुद्ध करने वालों पदार्थों में
व्रतानाम्	४. व्रतों में	अपि	७. भी
अविहिंसनम्	५. अहिंसाव्रत और	अहम्	८. मैं
वायु अग्नि	१०. वायु-अग्नि	शुचिः ॥	९. नित्य शुद्ध

श्लोकार्थ—मैं पञ्चमहायज्ञों में ब्रह्म यज्ञ हूँ । व्रतों में अहिंसा व्रत और शुद्ध करने वाले पदार्थों में भी मैं नित्य शुद्ध वायु-अग्नि, सूर्य, जल, वाणी एवम् आत्मा हूँ ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

योगानामात्मसंरोधो मन्त्रोऽस्मि विजिगीषताम् ।
आन्वीक्षिकी कौशलानां विकल्पः ख्यातिवादिनाम् ॥२४॥

पदच्छेद—

योगानाम् आत्म संरोधः मन्त्रः अस्मि विजिगीषताम् ।
आन्वीक्षिकी कौशलानाम् विकल्पः ख्याति वादिनाम् ॥

शब्दार्थ—

योगानाम्	१. आठ प्रकार के योगों में	आन्वीक्षिकी	८. तर्क विद्या
आत्म	२. मैं मनो	कौशलानाम्	७. कौशलों में
संरोधः	३. निरोध रूप समाधि हूँ	विकल्पः	११. विकल्प हूँ
मन्त्रः	५. मैं मन्त्र नीतिबल	ख्याति	९. तथा ख्याति
अस्मि	६. हूँ	वादिनाम् ॥	१०. वादियों में
विजिगीषताम् ।	४. विजय के इच्छकों में रहने रहने वाला		

श्लोकार्थ—आठ प्रकार के योगों में मैं मनो निरोध रूप समाधि हूँ । विजय के इच्छुकों में रहने वाला मैं मन्त्रनीति बल हूँ । कौशलों में तर्क विद्या तथा ख्याति वादियों में विकल्प हूँ ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

स्त्रीणां तु शतरूपाहं वै पुंसां स्वायम्भुवो मनुः ।
नारायणो मुनीनां च कुमारो ब्रह्मचारिणाम् ॥२५॥

पदच्छेद—

स्त्रीणां तु शतरूपा अहम् पुंसाम् स्वायम्भुवः मनुः ।
नारायणः मुनीनाम् च कुमारो ब्रह्मचारिणाम् ॥

शब्दार्थ—

स्त्रीणाम् तु	२.	स्त्रियों में	नारायणः	८.	नारायण
शतरूपा	३.	मनुपत्नी शतरूपा और	मुनीनाम्	७.	मुनियों में
अहम्	१.	मैं	च	६.	और
पुंसाम्	४.	पुरुषों में	कुमारो	१२.	सनत्कुमार हूँ
स्वायम्भुवः	५.	स्वायम्भुव	ब्रह्म	१०.	ब्रह्म
मनुः ।	६.	मनु हूँ	चारिणाम् ॥	११.	चारियों में

श्लोकार्थ- मैं स्त्रियों में मनुपत्नी शतरूपा और पुरुषों में स्वायम्भुव मनु हूँ । मुनियों में नारायण और ब्रह्मचारियों में सनत्कुमार हूँ ॥

षड्विंशः श्लोकः

धर्माणामस्मि संन्यासः क्षेमाणामबहिर्मतिः ।
गुह्यानां सूनृतं मौनं मिथुनानामजस्त्वहम् ॥२६॥

पदच्छेद—

धर्माणाम् अस्मि संन्यासः क्षेमाणाम् अबहिः मतिः ।
गुह्यानाम् सूनृतम् मौनम् मिथुनानाम् अजस्त्वहम् ॥

शब्दार्थ—

धर्माणाम्	१.	मैं धर्मों में	गुह्यानाम्	६.	अभिप्राय गोपन के साधनों में
अस्मि	३.	हूँ	सूनृतम्	७.	मधुर वचन एवम्
संन्यासः	२.	अभयदान रूप संन्यास	मौनम्	८.	मौन हूँ और
क्षेमाणाम्	४.	अभय के साधनों में मैं	मिथुनानाम्	९.	स्त्री पुरुष के जोड़ों में
अबहिर्मतिः ।	५.	अन्तः निष्ठा हूँ	अजस्त्वहम् ॥	१०.	मैं प्रजापति हूँ

श्लोकार्थ—मैं धर्मों में अभयदानरूप संन्यास हूँ । अभय के साधनों में मैं अन्तः निष्ठा हूँ । अभिप्राय गोपन के साधनों में मधुर वचन एवम् मौन हूँ । और स्त्री पुरुष के जोड़ों में मैं प्रजापतिहूँ ॥

सप्तविंशः श्लोकः

संवत्सरोऽस्म्यनिमिषामृतूनां मधुमाधवौ ।
मासानां मार्गशीर्षोऽहं नक्षत्राणां तथाभिजित् ॥२७॥

पदच्छेद—

संवत्सरः अस्मि अनिमिषाम् ऋतूनाम् मधु माधवौ ।
मासानाम् मार्गशीर्षः अहम् नक्षत्राणाम् तथा अभिजित् ॥

शब्दार्थ—

संवत्सरः	२.	मैं संवत्सर रूपकाल	मासानाम्	७.	महीनों में
अस्मि	३.	हूँ	मार्गशीर्षः	८.	मार्गशीर्ष
अनिमिषाम्	१.	सदा सावधान रह कर जागने वालों में	अहम्	११.	मैं
ऋतूनाम्	४.	ऋतुओं में	नक्षत्राणाम्	१०.	नक्षत्रों में
मधु	५.	मैं	तथा	९.	तथा
माधवौ ।	६.	बसन्त हूँ	अभिजित् ॥	१२.	अभिजित् नक्षत्र हूँ

श्लोकार्थ—सदा सावधान रह कर जागने वालों में मैं संवत्सर रूप काल हूँ । ऋतुओं में मैं बसन्त हूँ । महीनों में मार्गशीर्ष तथा नक्षत्रों में मैं अभिजित् नक्षत्र हूँ ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

अहं युगानां च कृतं धीराणां देवलोऽसितः ।
द्वैपायनोऽस्मि व्यासानां कवीनां काव्य आत्मवान् ॥२८॥

पदच्छेद—

अहम् युगानाम् च कृतम् धीराणाम् देवलः असितः ।
द्वैपायनः अस्मि व्यासानाम् कवीनाम् काव्य आत्मवान् ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१.	मैं	द्वैपायनः	८.	श्रीकृष्ण द्वैपाइन व्यास
युगानाम्	२.	युगों में	अस्मि	१३.	हूँ
च	९.	और	व्यासानाम्	७.	व्यासों में
कृतम्	३.	सत्य युग	कवीनाम्	११.	कवियों में
धीराणाम	४.	विवेकियों में	काव्यः	१२.	शुक्राचार्य
देवल	५.	महर्षि देवल	आत्मवान् ॥	१०.	मनस्वी
असितः ।	६.	और असित			

श्लोकार्थ—मैं युगों में सत्ययुग विवेकियों में महर्षि देवल और असित, व्यासों में श्रीकृष्ण द्वैपायन व्यास और मनस्वी कवियों में शुक्राचार्य हूँ ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

वासुदेवो भगवतां त्वं तु भागवतेष्वहम् ।
किंपुरुषाणां हनुमान् विद्याध्राणां सुदर्शनः ॥२९॥

पदच्छेद—

वासुदेवः भगवताम् त्वम् तु भागवतेषु अहम् ।
किम् पुरुषाणाम् हनुमान् विद्याध्राणाम् सुदर्शनः ॥

शब्दार्थ—

वासुदेवः	३.	वासुदेव हूँ	किम्	६.	किम्
भगवताम्	२.	भगवानों में	पुरुषाणाम्	७.	पुरुषों में
त्वम्	५.	तुम (उद्धव) हो	हनुमान्	८.	हनुमान् और
तु भागवतेषु	४.	मेरे प्रेमी भक्तों में	विद्याध्राणाम्	९.	विद्याधरों में
अहम् ।	१.	मैं	सुदर्शनः ॥	१०.	सुदर्शन हूँ

श्लोकार्थ—मैं भगवानों में वासुदेव हूँ । मेरे प्रेमी भक्तों में तुम उद्धव हो । किम्पुरुषों में हनुमान् और विद्याधरों में मैं सुदर्शन हूँ ॥

त्रिंशः श्लोकः

रत्नानां पद्मरागोऽस्मि पद्मकोशः सुपेशसाम् ।
कुशोऽस्मि दर्भजातीनां गव्यमाज्यं हविःष्वहम् ॥३०॥

पदच्छेद—

रत्नानाम् पद्मरागः अस्मि पद्मकोशः सुपेशसाम् ।
कुशः अस्मि दर्भजातीनाम् गव्यमाज्यम् हविःषु अहम् ॥

शब्दार्थ—

रत्नानाम्	१.	मैं रत्नों में	कुशः	७.	कुश
पद्मरागः	२.	पद्मराग हूँ	अस्मि	८.	हूँ
अस्मि	५.	हूँ तथा	दर्भजातीनाम्	६.	तृणों में
पद्मकोशः	४.	मैं कमल की कली	गव्यमाज्यम्	१०.	गाय की घी हूँ
सुपेशसाम् ।	३.	सुन्दर वस्तुओं में	हविः षु अहम् ॥	९.	और मैं हविष्यों में

श्लोकार्थ— मैं रत्नों में पद्मराग हूँ, सुन्दर वस्तुओं में मैं कमल की कली हूँ । तथा तृणों में कुश हूँ । और मैं हविष्यों में गाय का घी हूँ ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

व्यवसायिनामहं लक्ष्मीः कितवानां छलग्रहः ।
तितिक्षास्मि तितिक्षूणां सत्त्वं सत्त्ववतामहम् ॥३१॥

पदच्छेद—

व्यवसायिनाम् अहम् लक्ष्मीः कितवानाम् छल ग्रहः ।
तितिक्षा अस्मि तितिक्षूणाम् सत्त्वम् सत्त्ववताम् अहम् ॥

शब्दार्थ—

व्यवसायिनाम्	२.	व्यापारियों में रहने वाली	तितिक्षा	९.	तितिक्षा और
अहम्	१.	मैं	अस्मि	१२.	हूँ
लक्ष्मीः	३.	लक्ष्मी और	तितिक्षूणाम्	८.	तितिक्षुओं में
कितवानाम्	५.	कपट करने वालों में	सत्त्वम्	११.	सत्त्वगुण
छल	४.	छल	सत्त्ववताम्	१०.	सात्विक पुरुषों में रहने वाला
ग्रहः ।	६.	द्यूत क्रीड़ा हूँ	अहम् ॥	७.	मैं

श्लोकार्थ—मैं व्यापारियों में रहने वाली लक्ष्मी और छल-कपट करने वालों में द्यूत क्रीड़ा हूँ । मैं तितिक्षुओं में तितिक्षा और सात्विक पुरुषों में रहने वाला सत्त्वगुण हूँ ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

ओजः सहो बलवतां कर्माहं विद्धि सात्त्वताम् ।
सात्त्वतां नवमूर्तीनामादिमूर्तिरहं परा ॥३२॥

पदच्छेद—

ओजः सहः बलवताम् कर्माहं विद्धि सात्त्वताम् ।
सात्त्वताम् नवमूर्तीनाम् आदि मूर्तिः अहम् परा ॥

शब्दार्थ—

ओजः	२.	उत्साह और	सात्त्वताम्	७.	वैष्णवों की पूज्य
सहः	३.	पराक्रम हूँ	नवमूर्तीनाम्	८.	नौ मूर्तियों में
बलवताम्	१.	मैं बलवानों में	आदि	१०.	पहली और श्रेष्ठ
कर्माहम्	५.	मुझे निष्काम कर्म	मूर्तिः	१२.	मूर्ति वासुदेव हूँ
विद्धि	६.	समझो	अहम्	९.	मैं
सात्त्वताम् ।	४.	भगवद्भक्तों में	परा ॥	११.	श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—मैं बलवानों में उत्साह और पराक्रम हूँ, भगवद्भक्तों में मुझे निष्काम कर्म समझो । वैष्णवों की पूज्य नौ मूर्तियों में (वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, नारायण हयग्रीव, वराह, नृसिंह और ब्रह्मा) इन नौ मूर्तियों में पहली और श्रेष्ठ मूर्ति वासुदेव हूँ ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

विश्वावसुः पूर्वचित्तिर्गन्धर्वाप्सरसामहम् ।
भूधराणामहं स्थैर्यं गन्धमात्रमहं भुवः ॥३३॥

पदच्छेद—

विश्वावसुः पूर्वचित्तिः गन्धर्व अप्सरसाम् अहम् ।
भूधराणाम् अहम् स्थैर्यम् गन्ध मात्रम् अहम् भुवः ॥

शब्दार्थ—

विश्वावसुः	३.	विश्वावसु और	अहम्	७.	मैं
पूर्वचित्तिः	५.	पूर्वचित्ति नाम की अप्सरा हूँ	स्थैर्यम्	८.	स्थिरता और
गन्धर्व	२.	गन्धर्वों में	गन्ध	११.	गन्ध
अप्सरसाम्	४.	अप्सराओं में	मात्रम्	१०.	शुद्ध अविकारी
अहम् ।	१.	मैं	अहम्	१२.	मैं हूँ
भूधराणाम्	६.	पर्वतों में	भुवः ॥	९.	पृथ्वी में

श्लोकार्थ—मैं गन्धर्वों में विश्वावसु और अप्सराओं में पूर्वचित्ति नाम की अप्सरा हूँ। पर्वतों में मैं स्थिरता और पृथ्वी में शुद्ध अविकारी गन्ध मैं हूँ ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अपां रसश्च परमस्तेजिष्ठानां विभावसुः ।
प्रभा सूर्येन्दुताराणां शब्दोऽहं नभसः परः ॥३४॥

पदच्छेद—

अपाम् रसः च परमः तेजिष्ठानाम् विभावसुः ।
प्रभा सूर्येन्दुताराणाम् शब्दः अहम् नभसः परः ॥

शब्दार्थ—

अपाम्	१.	मैं जल में	प्रभा	९.	प्रभा तथा
रसः	२.	रस	सूर्येन्दु	७.	सूर्य चन्द्र
च	६.	और	ताराणाम्	८.	तारों में
परमः	४.	परम तेजस्वी	शब्दः	१२.	शब्द हूँ
तेजिष्ठानाम्	३.	तेजस्वियों में	अहम् नभसः	१०.	आकाश में मैं
विभावसुः ।	५.	अग्नि हूँ	परः ॥	११.	उसका एक मात्र गुण

श्लोकार्थ—मैं जल में रस, तेजस्वियों मे परम तेजस्वी अग्नि हूँ। और सूर्य-चन्द्र, तारों में प्रभा तथा आकाश में मैं उसका एकमात्र गुण शब्द हूँ ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ब्रह्मण्यानां बलिरहं वीराणामहमर्जुनः ।
भूतानां स्थितिरुत्पत्तिरहं वै प्रतिसङ्क्रमः । ३५।।

पदच्छेद—

ब्रह्मण्यानाम् बलिः अहम् वीराणाम् अहम् अर्जुनः ।
भूतानाम् स्थितिः उत्पत्तिः अहम् वै प्रति सङ्क्रमः ।।

शब्दार्थ—

ब्रह्मण्यानाम्	२.	ब्राह्मण भक्तों में	भूतानाम्	८.	प्राणियों में
बलिः	३.	बलि हूँ	स्थितिः	१०.	स्थिति
अहम्	१.	मैं	उत्पत्तिः	९.	उनकी उत्पत्ति
वीराणाम्	५.	वीरों में	अहम्	७.	मैं
अहम्	४.	मैं	वै प्रति	११.	और
अर्जुनः ।	६.	अर्जुन हूँ	सङ्क्रमः ।।	१२.	प्रलय हूँ

श्लोकार्थ—मैं ब्राह्मण भक्तों में बलि हूँ । मैं वीरों में अर्जुन हूँ । मैं प्राणियों में उनकी उत्पत्ति-स्थिति और प्रलय हूँ ।।

षट्त्रिंशः श्लोकः

गत्युक्त्युत्सर्गोपादानमानन्दस्पर्शलक्षणम् ।
आस्वादश्रुत्यवघ्राणमहं सर्वेन्द्रियेन्द्रियम् ।।३६।।

पदच्छेद—

गति उक्ति उत्सर्ग उपादानम् आनन्द स्पर्श लक्षणम् ।
आस्वाद श्रुति अवघ्राणम् अहम् सर्वेन्द्रिय इन्द्रियम् ।।

शब्दार्थ—

गति	१.	मैं पैरों में चलने की शक्ति	आस्वाद	८.	रसना में स्वाद लेने की
उक्ति	२.	वाणी में बोलने की	श्रुति	९.	कानों में सुनने की
उत्सर्ग	३.	मल त्याग करने की	अवघ्राणम्	१०.	नासिका में सूंघने की
उपादानम्	४.	हाथों में पकड़ने की	अहम्	१३.	मैं ही हूँ
आनन्द	५.	जननेन्द्रिय में आनन्द भोग की	सर्वेन्द्रिय	११.	समस्त इन्द्रियों में
स्पर्श	६.	त्वचा में स्पर्श शक्ति	इन्द्रियम् ।।	१२.	इन्द्रिय शक्ति
लक्षणम् ।	७.	नैनों में देखने की शक्ति हूँ			

श्लोकार्थ—मैं पैरों में चलने की शक्ति, वाणी में बोलने की शक्ति, मल त्याग करने की शक्ति, हाथों में पकड़ने की शक्ति, जननेन्द्रिय में आनन्द भोग की, त्वचा में स्पर्श शक्ति, नैनों में देखने की शक्ति, रसना में स्वाद लेने की, कानों में सुनने की, नासिका में सूंघने की तथा समस्त इन्द्रियों में इन्द्रिय शक्ति मैं ही हूँ ।।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पृथिवी वायुराकाश आपो ज्योतिरहं महान् ।
विकारः पुरुषोऽव्यक्तं रजः सत्त्वं तमः परम् ॥३७॥

पदच्छेद— पृथिवी वायुः आकाश आपः ज्योतिः अहम् महान् ।
विकारः पुरुषः अव्यक्तम् रजः सत्त्वम् तमः परम् ॥

शब्दार्थ—

पृथिवी	१.	पृथ्वी	विकारः	७.	पञ्चमहाभूत
वायुः	२.	वायु	पुरुषः	८.	जीव
आकाशः	३.	आकाश	अव्यक्तम्	९.	अव्यक्त प्रकृति
आपः ज्योति	४.	जल, तेज	रजः सत्त्वम्	१०.	सत्त्व-रज
अहम्	५.	अहंकार	तमः	११.	तम और उनसे
महान् ।	६.	महत्तत्त्व	परम् ॥	१२.	परे रहने वाला जीव मैं ही हूँ

श्लोकार्थ—पृथ्वी, वायु, आकाश, जल, तेज, अहंकार, महत्तत्त्व, पञ्चमहाभूत, जीव, अव्यक्त, प्रकृति, सत्त्व-रज-तम और उनसे परे रहने वाला जीव मैं ही हूँ ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

अहमेतत्प्रसंख्यानं ज्ञानं तत्त्वविनिश्चयः ।
मयेश्वरेण जीवेन गुणेन गुणिना विना ।
सर्वात्मनापि सर्वेण न भावो विद्यते क्वचित् ॥३८॥

पदच्छेद— अहम् एतत् प्रसंख्यानम् ज्ञानम् तत्त्व विनिश्चयः ।
मया ईश्वरेण जीवेन गुणेन गुणिना विना ।
सर्व आत्मना अपि सर्वेण न भावः विद्यते क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

अहम्	५.	मैं ही हूँ	विना ।	११.	मेरे अतिरिक्त
एतत्	१.	इन तत्वों की	सर्व आत्मना	९.	मैं ही सबका आत्मा हूँ
प्रसंख्यानम्	२.	गणना	अपि	१२.	और कोई भी
ज्ञानम्	३.	लक्षणों द्वारा उनका ज्ञान तथा	सर्वेण	१०.	मैं ही सब कुछ हूँ
तत्त्व विनिश्चयः	४.	तत्त्व ज्ञानरूप फल भी	न	१५.	नहीं
मया ईश्वरेण	६.	मैं ईश्वर हूँ	भावः	१३.	पदार्थ
जीवेन-गुणेन	६.	मैं जीव-गुण और	विद्यते	१६.	है
गुणिना	८.	गुणी भी मैं ही हूँ	क्वचित् ॥	१४.	कहीं भी

श्लोकार्थ—इन तत्वों की गणना लक्षणों द्वारा उनका ज्ञान तथा तत्त्व ज्ञानरूप फल भी मैं ही हूँ । मैं ईश्वर हूँ, मैं ही जीव गुण और गुणी भी मैं ही हूँ । मैं ही सबका आत्मा हूँ । मैं ही सब कुछ हूँ । मेरे अतिरिक्त और कोई भी पदार्थ कहीं भी नहीं है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

संख्यानं परमाणूनां कालेन क्रियते मया।
न तथा मे विभूतीनां सृजतोऽण्डानि कोटिशः ॥३९॥

पदच्छेद—

संख्यानम् परमाणूनाम् कालेन क्रियते मया।
न तथा मे विभूतीनाम् सृजतः अण्डानि कोटिशः ॥

शब्दार्थ—

संख्यानम्	४.	गणना तो	न	१०.	नहीं हो सकती
परमाणूनाम्	३.	परमाणुओं की	तथा	११.	फिर वैसे ही
कालेन	२.	किसी समय	मे	६.	पर मेरे द्वारा
क्रियते	५.	की जा सकती हैं	विभूतीनाम्	१२.	मेरी विभूतियों की गणना नहीं हो सकती है
मया	१.	मेरे द्वारा	सृजतः	७.	रचे हुये
अण्डानि	९.	ब्रह्माण्डों की गणना	कोटिशः ॥	८.	कोटि-कोटि

श्लोकार्थ—मेरे द्वारा किसी समय परमाणुओं की गणना तो की जा सकती है। पर मेरे द्वारा रचे हुये कोटि-कोटि ब्रह्माण्डों की गणना नहीं हो सकती है। फिर वैसे ही मेरी विभूतियों की गणना नहीं हो सकती है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

तेजः श्रीः कीर्तिरैश्वर्यं ह्रीस्त्यागः सौभगं भगः।
वीर्यं तितिक्षा विज्ञानं यत्र यत्र स मेंऽशकः ॥४०॥

पदच्छेद—

तेजः श्रीः कीर्तिः ऐश्वर्यम् ह्रीः त्यागः सौभगम् भगः।
वीर्यम् तितिक्षा विज्ञानम् यत्र-यत्र स मे अंशकः ॥

शब्दार्थ—

तेजः	२.	तेज	वीर्यम्	९.	पराक्रम
श्रीः	३.	श्री	तितिक्षा	१०.	तितिक्षा और
कीर्तिः	४.	कीर्ति	विज्ञानम्	११.	विज्ञान आदि श्रेष्ठ गुण हैं
ऐश्वर्यम्	५.	ऐश्वर्य	यत्र-यत्र	१.	जहाँ-जहाँ
ह्रीः त्यागः	७.	लज्जा-त्याग	सः मे	१२.	वह मेरा ही
सौभगम् भगः।	८.	सौन्दर्य, सौभाग्य	अंशकः ॥	१३.	अंश है

श्लोकार्थ—जहाँ जहाँ तेज, श्री, कीर्ति, ऐश्वर्य, लज्जा, त्याग, सौन्दर्य, सौभाग्य, पराक्रम, तितिक्षा और विज्ञान आदि श्रेष्ठ गुण हैं। वह मेरा ही अंश है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

एतास्ते कीर्तिताः सर्वाः सङ्क्षेपेण विभूतयः ।
मनोविकारा एवैते यथा वाचाभिधीयते ॥४१॥

पदच्छेद—

एताः ते कीर्तिताः सर्वाः सङ्क्षेपेण विभूतयः ।
मनः विकाराः एवैते यथा वाचा अभिधीयते ॥

शब्दार्थ—

एताः	१.	मैंने ये	मनः	८.	मनो
ते	५.	तुम से	विकाराः	९.	विकार मात्र हैं
कीर्तिताः	६.	बतायो है	एवैते	७.	ये
सर्वाः	२.	सब	यथा	१०.	जैसे
सङ्क्षेपेण	४.	संक्षेप में	वाचा	११.	वाणी के द्वारा
विभूतयः ।	३.	विभूतियाँ	अभिधीयते ॥	१२.	कही गई कोई वस्तु परमार्थ नहीं होती है

श्लोकार्थ—मैंने ये सब विभूतियाँ संक्षेप में तुमसे बतायो हैं । ये मनोविकार मात्र हैं । जैसे वाणी के द्वारा कही गई वस्तु परमार्थ नहीं है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

वाचं यच्छ मनो यच्छ प्राणान् यच्छेन्द्रियाणि च ।
आत्मानमात्मना यच्छ न भूयः कल्पसेऽध्वने ॥४२॥

पदच्छेद—

वाचम् यच्छ मनः यच्छ प्राणान् यच्छ इन्द्रियाणि च ।
आत्मानम् आत्मना यच्छ न भूयः कल्पसे अध्वने ॥

शब्दार्थ—

वाचम्	१.	वाणी के स्वच्छन्द भाषण से	आत्मानम्	९.	प्रपञ्चात्मिक बुद्धि को
यच्छ	२.	रोको	आत्मना	८.	सात्विक बुद्धि के द्वारा
मनः	३.	मन के सङ्कल्प विकल्प को	यच्छ	१०.	शान्त करो
यच्छ	४.	रोको	न	१३.	नहीं
प्राणान् यच्छ	५.	प्राणों को वश में करो	भूयः	११.	फिर तुम्हें
इन्द्रियाणि	७.	इन्द्रियों का दमन करो	कल्पसे	१४.	भटकना पड़ेगा
च ।	६.	और	अध्वने ॥	१२.	संसार के बीहड़ मार्ग में

श्लोकार्थ—वाणी की स्वच्छन्दता को रोको, मन के सङ्कल्प, विकल्प को रोको, प्राणों को वश में करो और इन्द्रियों का दमन करो । सात्विक बुद्धि के द्वारा प्रपञ्चात्मिक बुद्धि को शान्त करो, फिर तुम्हें संसार के बीहड़ मार्ग में नहीं भटकना पड़ेगा ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

यो वै वाङ्मनसी सम्यगसंयच्छन् धिया यतिः ।
तस्य व्रतं तपो दानं स्रवत्यामघटाम्बुवत् ॥४३॥

पदच्छेद— यः वै मनसी सम्यक् असंयच्छन् धिया यतिः ।
तस्य व्रतम् तपः दानम् स्रवति आमघट अम्बुवत् ॥

शब्दार्थ—

यः वै	१.	जो	तस्य	८.	उसके
मनसी	४.	वाङ् वाणी और	व्रतम्	९.	व्रत
सम्यक्	५.	मन को	तपः	१०.	तप और
असंयच्छन्	६.	पूर्णतया वश में नहीं कर लेता है	दानम्	११.	दान
धिया	३.	बुद्धि के द्वारा	स्रवति	१४.	क्षीण हो जाते हैं
यतिः ।	२.	साधक	आमघट	१२.	कच्चे घड़े में भरे हुये
			अम्बुवत् ॥	१३.	जल के समान

श्लोकार्थ—जो साधक बुद्धि के द्वारा वाणी और मन को पूर्णतया वश में नहीं कर लेता है । उसके व्रत, तप और दान कच्चे घड़े में भरे हुये जल के समान क्षीण हो जाते हैं ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मान्मनोवचःप्राणान् नियच्छेन्मत्परायणः ।
मद्भक्तियुक्तया बुद्ध्या ततः परिसमाप्यते ॥४४॥

पदच्छेद— तस्मात् मनः वचः प्राणान् नियच्छेत् मत् परायणः ।
मत् भक्ति युक्तया बुद्धया ततः परिसमाप्यते ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	मत्	४.	मेरी
मनः	९.	मन और	भक्ति	५.	भक्ति
वचः	८.	वाणी	युक्तया	६.	युक्त
प्राणान्	१०	प्राणों का	बुद्धया	७.	बुद्धि से
नियच्छेत्	११.	संयम करे	ततः	१२.	ऐसा करने पर वह
मत्	२.	मेरे प्रेमी भक्त को चाहिये कि	परिसमाप्यते ॥	१३.	कृत कृत्य हो जाता है
परायणः ।	३.	मेरे परायण होकर			

श्लोकार्थ—इसलिये मेरे प्रेमी भक्तको चाहिये कि मेरे परायण होकर मेरी, भक्ति युक्त बुद्धि से, वाणी, मन और प्राणों का संयम करे, ऐसा करने पर वह कृत कृत्य हो जाता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे षोडशः अध्यायः ॥१६॥

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

सप्तदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच—यस्त्वयाभिहितः पूर्वं धर्मस्त्वद्भक्तिलक्षणः ।
वर्णाश्रमाचारवतां सर्वेषां द्विपदामपि ॥१॥

पदच्छेद—

य: त्वया अभिहितः पूर्वम् धर्म त्स्वद् भक्ति लक्षणः ।
वर्ण आश्रम आचारवताम् सर्वेषाम् द्विपदाम् अपि ॥

शब्दार्थ—

यः त्वया	२.	आपने जो	वर्ण	३.	वर्ण और
अभिहितः	१०.	उपदेश किया था ।	आश्रम	४.	आश्रम धर्म के
पूर्वम्	१.	पहले	आचारवताम्	५.	पालन करने वालों के लिए
धर्मस्त्वद्	९.	उस धर्म का	सर्वेषाम्	६.	सामान्यतः
भक्ति	११.	जिससे आपकी भक्ति	द्विपदाम्	७.	मनुष्यमात्र के लिये
लक्षणः ।	१२.	प्राप्त होती है	अपि ॥	८.	भी

श्लोकार्थ—पहले आपने जो वर्ण और आश्रम धर्म के पालन करने वालों के लिये सामान्यतः मनुष्य मात्र के लिये भी उस धर्म का उपदेश किया था जिससे आपकी भक्ति प्राप्त होती है ॥

द्वितीयः श्लोकः

यथानुष्ठीयमानेन त्वयि भक्तिर्नृणां भवेत् ।
स्वधर्मेणारविन्दाक्ष तत्‌ समाख्यातुमर्हसि ॥२॥

पदच्छेद—

यथा अनुष्ठीयमानेन त्वयि भक्तिः नृणाम् भवेत् ।
स्वधर्मेण अरविन्दाक्ष तत् समाख्यातुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

यथा	३.	जिस प्रकार	स्वधर्मेण	४.	अपने धर्म का
अनुष्ठीयमानेन	५.	अनुष्ठान करके	अरविन्दाक्ष	१.	हे कमल नयन !
त्वयि	६.	आपकी	तत्	९.	उसे
भक्तिः	७.	भक्ति	समाख्यातुम्	१०.	बतलाने की
नृणाम्	२.	मनुष्य	अर्हसि ॥	११.	कृपा करें
भवेत् ।	८.	प्राप्त कर सके			

श्लोकार्थ—हे कमलनयन ! मनुष्य जिस प्रकार अपने धर्म का अनुष्ठान करके आपकी भक्ति प्राप्त कर सके । उसे बतलाने का कष्ट करें ॥

तृतीयः श्लोकः

पुरा किल महाबाहो धर्मं परमकं प्रभो ।
यत्तेन हंसरूपेण ब्रह्मणेऽभ्यात्थ माधव ।३॥

पदच्छेद—

पुरा किल महाबाहो धर्मम् परमकम् प्रभो ।
यत् तेन हंसरूपेण ब्रह्मणे अभ्यात्थ माधव ॥

शब्दार्थ—

पुरा	५.	पहले	यत्तेन	६.	आपने
किल	४.	निश्चय ही	हंस	७.	हंस
महाबाहो	२.	महाबाहु	रूपेण	८.	रूप से अवतार ग्रहण करके
धर्मम्	११.	धर्म का	ब्रह्मणे	९.	ब्रह्माजी को
परमकम्	१०.	परम	अभ्यात्थ	१२.	उपदेश किया था
प्रभो ।	१.	हे प्रभो !	माधव ॥	३.	माधव !

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! महाबाहु माधव ! निश्चय ही पहले आपने हंस रूप से अवतार ग्रहण करके ब्रह्मा जी को परमधर्म का उपदेश किया है ॥

चतुर्थः श्लोकः

स इदानीं सुमहता कालेनामित्रकर्शन ।
न प्रायो भविता मर्त्यलोके प्रागनुशासितः ॥४॥

पदच्छेद—

सः इदानीम् सुमहता कालेन अमित्रकर्शन ।
न प्रायो भविता मर्त्यलोके प्राक् अनुशासितः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	वह	न प्रायो	९.	प्रायः नहीं सा
इदानीम्	७.	इस समय	भविता	१०.	रह गया था
सुमहता	४.	बहुत	मर्त्यलोके	८.	मर्त्यलोक
कालेन	५.	समय बीत जाने पर	प्राक्	२.	आपने उसका बहुत पहले
अमित्रकर्शन ।	१.	हे रिपुसूदन !	अनुशासितः ॥	३.	उपदेश किया था । अतः

श्लोकार्थ—हे रिपुसूदन ! आपने उसका बहुत पहले उपदेश किया था । अतः बहुत समय बीत जाने पर वह इस समय मर्त्यलोक में प्रायः नहीं सा रह गया था ॥

पञ्चमः श्लोकः

वक्ता कर्ताविता नान्यो धर्मस्याच्युत ते भुवि ।
सभायामपि वैरिञ्च्यां यत्र मूर्तिधराः कलाः ॥५॥

पदच्छेद— वक्ता कर्ता अविता न अन्यः धर्मस्य अच्युत ते भुवि ।
सभायाम् अपि वैरिञ्च्याम् यत्र मूर्तिधराः कलाः ॥

शब्दार्थ—

वक्ता कर्ता	१३. प्रवचन प्रवर्तन और	सभायाम्	४.	सभा में
अविता	१४. संरक्षण कर सके	अपि	५.	भी
न अन्यः	१०. आपके बिना ऐसा कोई नहीं है	वैरिञ्च्याम्	३.	ब्रह्मा की उस
धर्मस्य	१२. धर्म का	यत्र	६.	जहाँ
अच्युत	१. हे अच्युत !	मूर्ति	८.	मूर्तिमान् होकर
ते	११. जो आपके इस	धराः	९.	विराजमान रहते हैं
भुवि ।	२. पृथ्वी में तथा	कलाः ॥	७.	सम्पूर्ण वेद

श्लोकार्थ हे अच्युत ! पृथ्वी में तथा ब्रह्मा की उस सभा में भी जहाँ सम्पूर्ण वेद मूर्तिमान होकर विराजमान रहते हैं । आपके बिना ऐसा कोई नहीं है । जो आपके इस धर्म का प्रवचन, प्रवर्तन और संरक्षण कर सके ॥

षष्ठः श्लोकः

कर्त्रावित्रा प्रवक्त्रा च भवता मधुसूदन ।
त्यक्ते महीतले देव विनष्टं कः प्रवक्ष्यति ॥६॥

पदच्छेद— कर्त्रावित्रा प्रवक्त्रा च भवता मधुसूदन ।
त्यक्ते महीतले देव विनष्टम् कः प्रवक्ष्यति ॥

शब्दार्थ—

कर्त्रा	३. इस धर्म के प्रवर्तक	त्यक्ते	९.	त्याग दिये जाने पर
अवित्रा	४. रक्षक	महीतले	८.	पृथ्वी तल के
प्रवक्ता	६. उपदेशक	देव	२.	देव !
च	५. और	विनष्टम्	१०.	विनष्ट हुये धर्म को
भवता	७. आपके द्वारा	कः	११.	कौन
मधुसूदन !	१. हे मधुसूदन !	प्रवक्ष्यति ॥	१२.	बतायेगा

श्लोकार्थ—हे मधुसूदन देव ! इस धर्म के प्रवर्तक, रक्षक और उपदेशक आपके द्वारा पृथ्वी तल के त्याग दिये जाने पर विनष्ट हुये धर्म को कौन बतायेगा ॥

सप्तमः श्लोकः

तत्त्वं नः सर्वधर्मज्ञ धर्मस्त्वद्भक्तिलक्षणः ।
यथा यस्य विधीयेत तथा वर्णय मे प्रभो ॥७॥

पदच्छेद— तत्त्वम् नः सर्वधर्मज्ञ धर्मः त्वद् भक्ति लक्षणः ।
यथा यस्य विधीयेत तथा वर्णय मे प्रभो ॥

शब्दार्थ—

तत्त्वम्	३. इसलिये आप	यथा	६.	जिसके लिये
नः	४. हमसे	यस्य	१०.	उसका जैसा
सर्वधर्मज्ञ	२. समस्त धर्मों के मर्मज्ञ !	विधीयेत	११.	विधान हो
धर्म	८. धर्म का वर्णन कीजिये !	तथा	१२.	वह भी आप
त्वद्	५. अपनी	वर्णय	१४.	बतलाइये
भक्ति	६. भक्ति	मे	१३.	मुझसे
लक्षणः ।	७. प्राप्त कराने वाले	प्रभो ॥	१.	हे प्रभो !

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! समस्त धर्मों के मर्मज्ञ ! इसलिये आप हमसे अपनी भक्ति प्राप्त कराने वाले धर्म का वर्णन कीजिये। और जिसके लिये उसका जैसा विधान हो वह भी आप मुझसे बतलाइये ॥

अष्टमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इत्थं स्वभृत्यमुख्येन पृष्टः स भगवान् हरिः ।
प्रीतः क्षेमाय मर्त्यानां धर्मानाह सनातनान् ॥८॥

पदच्छेद— इत्थम् स्वभृत्य मुख्येन पृष्टः सः भगवान् हरिः ।
प्रीतः क्षेमाय मर्त्यानाम् धर्मान् आह सनातनान् ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	३. इस प्रकार	प्रीतः	७.	अत्यन्त प्रसन्न होकर
स्वभृत्य	१. अपने भक्त	क्षेमाय	९.	कल्याण के लिये उन्हें
मुख्येन	२. शिरोमणि उद्धव जी के द्वारा	मर्त्यानाम्	८.	प्राणियों के
पृष्टः	४. प्रश्न करने पर	धर्मान्	११.	धर्मों का
सः भगवान्	५. उन भगवान	आह	१२.	उपदेश दिया
हरिः ।	६. श्री कृष्ण ने	सनातनान् ॥	१०.	सनातन

श्लोकार्थ—अपने भक्त शिरोमणि उद्धव जी के द्वारा इस प्रकार प्रश्न करने पर उन भगवान् श्रीकृष्ण ने अत्यन्त प्रसन्न होकर प्राणियों के कल्याण के लिये उन्हें सनातन धर्मों का उपदेश दिया ॥

नवमः श्लोकः

श्रीभगवानुउवाच—धर्म्यं एष तव प्रश्नो नैःश्रेयसकरो नृणाम् ।
वर्णाश्रमाचारवतां तमुद्धव निबोध मे ॥९॥

पदच्छेद—

धर्म्यं एष तव प्रश्नः नैःश्रेयसकरः नृणाम् ।
वर्णाश्रम आचारवताम् तम् उद्धव निबोध मे ॥

शब्दार्थ—

धर्म्यं	५.	धर्ममय है और	वर्णाश्रम	६.	वर्णाश्रम धर्म का
एष	३.	यह	आचारवताम्	७.	आचरण करने वाले
तव	२.	तुम्हारा	तम्	१०.	उसे तुम
प्रश्नः	४.	प्रश्न	उद्धव	१.	हे उद्धव !
नैःश्रेयसकरः	९.	परम कल्याण स्वरूप है	निबोध	१२.	सुनो
नृणाम् ।	८.	मनुष्यों के लिये	मे ॥	११.	मुझसे

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! तुम्हारा यह प्रश्न धर्ममय है, और वर्णाश्रम धर्म का आचारण करने वाले मनुष्यों के लिये परम कल्याण स्वरूप है । उसे तुम मुझसे सुनो ॥

दशमः श्लोकः

आदौ कृतयुगे वर्णो नृणां हंस इति स्मृतः ।
कृतकृत्याः प्रजा जात्या तस्मात् कृतयुगं विदुः ॥१०॥

पदच्छेद—

आदौ कृतयुगे वर्णः नृणाम् हंस इति स्मृतः ।
कृत कृत्याः प्रजाः जात्या तस्मात् कृतयुगम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

आदौ	१.	कल्प के आदि में	कृत	१०.	कृत
कृतयुगे	२.	सतयुग में	कृत्याः	११.	कृत्य होते थे
वर्णः	६.	एक ही वर्ण	प्रजाः	९.	सब लोग
नृणाम्	३.	मनुष्यों का	जात्या	८.	उस समय जन्म से ही
हंस	४.	हंस	तस्मात्	१२.	इसलिये
इति	५.	नामक	कृतयुगम्	१३.	उसे कृतयुग भी
स्मृतः ।	७.	कहा जाता था	विदुः ॥	१४.	कहते थे

श्लोकार्थ—कल्प के आदि में सतयुग में मनुष्यों का हंस नामक एक ही वर्ण कहा जाता था । उस समय जन्म से ही सब लोग कृत-कृत्य होते थे । इसलिये उसे कृतयुग भी कहते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

वेदः प्रणव एवाग्रे धर्मोऽहं वृषरूपधृक्।
उपासते तपोनिष्ठा हंसं मां मुक्तकिल्बिषाः ॥११॥

पदच्छेद—

वेदः प्रणवः एव अग्रे धर्मः अहम् वृष रूपधृक्।
उपासते तपः निष्ठा हंसम् माम् मुक्त किल्बिषाः ॥

शब्दार्थ—

वेदः	३.	वेद था और	उपासते	१२.	उपासना करते थे
प्रणवः एव	२.	केवल प्रणव ही	तपः निष्ठा	९.	तपोनिष्ठ भक्तजन
अग्रे	१.	उस समय	हंसम्	११.	हंस रूप परमात्मा की
धर्मः	६.	धर्म था	माम्	१०.	मुझ
अहम्	४.	मैं ही	मुक्त	८.	रहित और
वृषरूपधृक्।	५.	वृषभरूपधारी	किल्बिषाः ॥	७.	उस समय पाप

श्लोकार्थ—उस समय केवल प्रणव ही वेद था, और मैं ही वृषभरूपधारी धर्म था। उस समय पाप रहित और तपोनिष्ठ भक्तजन मुझ हंसरूप परमात्मा की उपासना करते थे ॥

द्वादशः श्लोकः

त्रेतामुखे महाभाग प्राणान्मे हृदयात्त्रयी।
विद्या प्रादुरभूत्तस्या अहमासं त्रिवृन्मखः ॥१२॥

पदच्छेद—

त्रेता मुखे महाभाग प्राणात् मे हृदयात् त्रयी।
विद्या प्रादुः अभूत् तस्या अहम आसम् त्रिवृत्मखः ॥

शब्दार्थ—

त्रेतामुखे	२.	त्रेता का आरम्भ होने पर	विद्या	७.	विद्या
महाभाग	१.	परमभाग्यवान् उद्धव !	प्रादुः अभूत्	८.	प्रकट हुई और
प्राणात्	५.	श्वास-प्रश्वास के द्वारा	तस्याः	९.	उस विद्या से
मे	३.	मेरे	अहम्ः आसम्	१२.	मैं प्रकट हुआ
हृदयात्	४.	हृदय से	त्रिवृत्	१०.	होता, अध्वर्यु उद्गाता के
त्रयी।	६.	ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद	मखः ॥	११.	कर्म यज्ञ के रूप में

श्लोकार्थ—परमभाग्यवान् उद्धव ! त्रेता का आरम्भ होने पर मेरे हृदय से श्वास-प्रश्वास के द्वारा ऋग्वेद-सामवेद-यजुर्वेद रूपी त्रयी विद्या प्रकट हुई और उस विद्या से होता अध्वर्यु उद्गाता के कर्म यज्ञ के रूप में मैं प्रकट हुआ ॥

त्रयोदशः श्लोकः

विप्रक्षत्रियविट्शूद्रा मुखबाहूरुपादजाः ।
वैराजात् पुरुषाज्जाता य आत्माचारलक्षणाः ॥१३॥

पदच्छेद—

विप्र क्षत्रिय विट् शूद्रा मुख बाहु उरु पादजाः ।
वैराजात् पुरुषात् जाताः ये आत्माचार लक्षणाः ।।

शब्दार्थ—

विप्र	६.	ब्राह्मण	वैराजात्	१.	विराट्
क्षत्रिय	७.	क्षत्रिय	पुरुषात्	२.	पुरुष के
विट्शूद्रा	८.	वैश्य, शूद्रों की	जाताः	६.	उत्पत्ति हुई
मुख-बाहु	३.	मुख, भुजा	ये	११.	उनके
उरु	४.	जंघा और	आत्माचार	१२.	स्वभाव और आचरण से होती है
पादजाः ।	५.	चरणों से क्रमशः	लक्षणाः ।।	१०.	उनकी पहिचान

श्लोकार्थ—विराट् पुरुष के मुख, भुजा, जंघा और चरणों से क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्रों की उत्पत्ति हुई उनकी पहिचान उनके स्वभाव और आचरण से होती है ।।

चतुर्दशः श्लोकः

गृहाश्रमो जघनतो ब्रह्मचर्यं हृदो मम ।
वक्षःस्थानाद् वने वासो न्यासः शीर्षणि संस्थितः ॥१४॥

पदच्छेद—

गृह आश्रमः जघनतः ब्रह्मचर्यम् हृदः मम ।
वक्षः स्थानाद् वने वासो न्यासः शीर्षणि संस्थितः ।।

शब्दार्थ—

गृह	३.	गृहस्थ	वक्षः	७.	वक्षः
आश्रमः	४.	आश्रम	स्थानाद्	८.	स्थल से
जघनतः	२.	उरु स्थल से	वने वासः	६.	वान प्रस्थ आश्रम और
ब्रह्मचर्यम्	६.	ब्रह्मचर्य आश्रम	न्यासः	११.	संन्यास आश्रम की
हृदः	५.	हृदय से	शीर्षणि	१०.	मस्तक से
मम ।	१.	मेरे ही	संस्थितः ।।	१२.	उत्पत्ति हुई है

श्लोकार्थ—मेरे ही उरुस्थल से गृहस्थ-आश्रम हृदय से ब्रह्मचर्य आश्रम वक्षः स्थल से वानप्रस्थ आश्रम और मस्तक से सन्यास आश्रम की उत्पत्ति हुई है ।।

पञ्चदशः श्लोकः

वर्णानामाश्रमाणां च जन्मभूम्यनुसारिणीः ।
आसन् प्रकृतयो नृणां नीचैर्नीचोत्तमोत्तमाः ॥१५॥

पदच्छेद—

वर्णानाम् आश्रमाणाम् च जन्म भूम्यनुसारिणीः ।
आसन् प्रकृतयः नृणाम् नीचैः उत्तम उत्तमाः ॥

शब्दार्थ—

वर्णानाम्	१.	इन वर्ण और	आसन्	१३.	हो गये
आश्रमाणाम्	२.	आश्रमों के पुरुषों के	प्रकृतयः	३.	स्वभाव
च	५.	और	नृणाम्	९.	उत्पन्न होने के कारण
जन्म	४.	जन्म	नीचैः	८.	अधम स्थानों से
भूमि	६.	स्थानों के	नीच	१०.	अधम और
अनुसारिणीः ।	७.	अनुसार	उत्तम	१२.	उत्तम
			उत्तमाः ॥	११.	उत्तम स्थानों से उत्पन्न होने से स्वभाव

श्लोकार्थ—इन वर्ण और आश्रमों के पुरुषों के स्वभाव जन्म और स्थानों के अनुसार अधम स्थानों से उत्पन्न होने के कारण अधम और उत्तम स्थानों से उत्पन्न होने से उत्तम हो गये ॥

षोडशः श्लोकः

शमो दमस्तपः शौचं सन्तोषः क्षान्तिरार्जवम् ।
मद्भक्तिश्च दया सत्यं ब्रह्मप्रकृतयस्त्विमाः ॥१६॥

पदच्छेद—

शमः दमः तपः शौचम् सन्तोषः क्षान्तिः अर्जवम् ।
मद् भक्तिः च दया सत्यम् ब्रह्म प्रकृतयः तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

शमः	१.	शम	मद् भक्तिः	८.	मेरी भक्ति
दमः	२.	दम	च दया	९.	और दया
तपः	३.	तपस्या	सत्यम्	१०.	सत्य
शौचम्	४.	पवित्रता	ब्रह्म	१३.	ब्राह्मण वर्ण के
सन्तोषः	५.	सन्तोष	प्रकृतयः	१४.	स्वभाव हैं
क्षान्तिः	६.	क्षमा शीलता	तु	११.	ये
आर्जवम् ।	७.	सीधापन	इमाः ॥	१२.	ही

श्लोकार्थ—शम, दम, तपस्या, पवित्रता, सन्तोष, क्षमा शीलता, सीधापन, मेरी भक्ति और दया, सत्य ये ही ब्राह्मण वर्ण के स्वभाव हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

तेजो बलं धृतिः शौर्यं तितिक्षौदार्यमुद्यमः ।
स्थैर्यं ब्रह्मण्यतैश्वर्यं क्षत्रप्रकृतयस्त्विमाः ॥१७॥

पदच्छेद—

तेजः बलम् धृतिः शौर्यम् तितिक्षा औदार्यम् उद्यमः ।
स्थैर्यम् ब्रह्मण्यता ऐश्वर्यम् क्षत्र प्रकृतयः तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

तेजः	१.	तेज	स्थैर्यम्	८.	स्थिरता
बलम्	२.	बल	ब्रह्मण्यता	९.	ब्राह्मण भक्ति और
धृतिः	३.	धैर्य	ऐश्वर्यम्	१०.	ऐश्वर्य
शौर्यम्	४.	वीरता	क्षत्र	१२.	क्षत्रिय वर्ण के
तितिक्षा	५.	सहनशीलता	प्रकृतयः	१३.	स्वभाव हैं
औदार्यम्	६.	उदारता	तु इमाः ॥	११.	ये
उद्यमः ।	७.	उद्योगशीलता			

श्लोकार्थ—तेज, बल, धैर्य, वीरता, सहनशीलता, उदारता, उद्योगशीलता, स्थिरता, ब्राह्मणभक्ति और ऐश्वर्य ये क्षत्रिय वर्ण के स्वभाव हैं ॥

अष्टदशः श्लोकः

आस्तिक्यं दाननिष्ठा च अदम्भो ब्रह्मसेवनम् ।
अतुष्टिरर्थोपचयैर्वैश्यप्रकृतयस्त्विमाः ॥१८॥

पदच्छेद—

आस्तिक्यम् दान निष्ठा च अदम्भः ब्रह्मसेवनम् ।
अतुष्टिः अर्थ उपचयैः वैश्य प्रकृतय तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

आस्तिक्यम्	१.	आस्तिकता	अतुष्टिः	९.	सन्तुष्ट न होना
दाननिष्ठा	२.	दानशीलता	अर्थ	७	धन
च	६.	और	उपचयैः	८.	संचय से
अदम्भः	३.	दम्भहीनता	वैश्य	११.	वैश्य वर्ण के
ब्रह्म	४.	ब्राह्मणों की	प्रकृतयः	१२.	स्वभाव हैं
सेवनम्	५.	सेवा करना	तु इमाः ॥	१०.	ये

श्लोकार्थ—आस्तिकता, दानशीलता, दम्भहीनता, ब्राह्मणों की सेवा करना । और धन संचय से सन्तुष्ट न होना । ये वैश्य वर्ण के स्वभाव हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

शुश्रूषणं द्विजगवां देवानां चाप्यमायया ।
तत्र लब्धेन सन्तोषः शूद्रप्रकृतयस्त्विमाः ॥१९॥

पदच्छेद—

शुश्रूषणम् द्विज गवाम् देवानाम् च अपि मायया ।
तत्र लब्धेन सन्तोषः शूद्र प्रकृतयः तु इमाः ॥

शब्दार्थ—

शुश्रूषणम्	६.	सेवा करना	तत्र	७.	उसी से
द्विज	१.	ब्राह्मण	लब्धेन	८.	जो मिल जाय उसमें
गवाम्	२.	गौ	सन्तोषः	९.	सन्तुष्ट रहना
देवानाम्	४.	देवताओं की	शूद्र	११.	शूद्र वर्ण का
च अपि	३.	और	प्रकृतयः	१२.	स्वभाव है
मायया	५.	निष्कपट भाव से	तु इमाः ॥	१०.	यह

श्लोकार्थ—ब्राह्मण, गौ और देवताओं की निष्कपट भाव से सेवा करना, उसी से जो मिल जाय उसमें सन्तुष्ट रहना यह शूद्र वर्ण का स्वभाव है ॥

विंशः श्लोकः

अशौचमनृतं स्तेयं नास्तिक्यं शुष्कविग्रहः ।
कामः क्रोधश्च तर्षश्च स्वभावोऽन्तेवसायिनाम् ॥२०॥

पदच्छेद—

अशौचम् अनृतम् स्तेयम् नास्तिक्यम् शुष्क विग्रहः ।
कामः क्रोधः च तर्षः च स्वभावः अन्ते अवसायिनाम् ॥

शब्दार्थ—

अशौचम्	१.	अपवित्रता	कामः	७.	काम
अनृतम्	२.	झूठ बोलना	क्रोधः	८.	क्रोध
स्तेयम्	३.	चोरी करना	च तर्षः	१०.	तृष्णा के वश में रहना
नास्तिक्यम्	४.	ईश्वर को न मानना	च	९.	और
शुष्क	५.	झूठ-मूठ	स्वभावः	१२.	स्वभाव हैं
विग्रहः ।	६.	झगड़ा करना	अन्तेअवसायिनाम् ॥	११.	ये अन्त्यजों के

श्लोकार्थ—अपवित्रता, झूठ बोलना, चोरी करना, ईश्वर को न मानना, झूठ-मूठ, झगड़ा करना, काम, क्रोध और तृष्णा के वश में रहना, ये अन्त्यजों के स्वभाव हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

अहिंसा सत्यमस्तेयमकामक्रोधलोभता ।
भूतप्रियहितेहा च धर्मोऽयं सार्ववर्णिकः ॥२१॥

पदच्छेद—

अहिंसा सत्यम् अस्तेयम् अकाम क्रोध लोभता ।
भूतप्रिय हित ईहा च धर्मो अयम् सार्ववर्णिकः ॥

शब्दार्थ—

अहिंसा	१.	हिंसा न करना	भूतप्रिय	७.	प्राणियों की प्रसन्नता
सत्यम्	२.	सत्य बोलना	हित ईहा	९.	हित चाहना
अस्तेयम्	३.	चोरी न करना	च	८.	और
अकाम	४.	काम	धर्मो	१२.	साधारण धर्म है
क्रोध	५.	क्रोध और	अयम्	१०.	यह
लोभता ।	६.	लोभ से दूर रहना	सार्ववर्णिकः ॥	११.	चारों वर्णों का

श्लोकार्थ—हिंसा न करना, सत्य बोलना, चोरी न करना, काम, क्रोध और लोभ से दूर रहना, प्राणियों की प्रसन्नता और हित चाहना, यह चारों वर्षों का साधारण धर्म है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

द्वितीयं प्राप्यानुपूर्व्याज्जन्मोपनयनं द्विजः ।
वसन् गुरुकुले दान्तो ब्रह्माधीयीत चाहुतः ॥२२॥

पदच्छेद—

द्वितीयम् प्राप्य आनुपूर्व्यात् जन्म उपनयनम् द्विजः ।
वसन् गुरुकुले दान्तः ब्रह्माधीयीत च आहुतः ॥

शब्दार्थ—

द्वितीयम्	४.	द्वितीय	वसन्	८.	रहे और
प्राप्य	६.	प्राप्त करके	गुरुकुले	७.	गुरुकुल में
आनुपूर्व्यात्	२.	संस्कारों के क्रम से	दान्तः	९.	इन्द्रियों को वश में रखे
जन्म	५.	जन्म	ब्रह्माधीयीत	१२.	वेद का अध्ययन करे
उपनयनम्	३.	यज्ञोपवीत संस्कार रूप	च	१०.	और
द्विजः ।	१.	ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य	आहुतः ॥	११.	आचार्य के बुलाने पर

श्लोकार्थ—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, संस्कारों के क्रम से यज्ञोपवीत संस्कार रूप द्वितीय जन्म प्राप्त करके गुरुकुल में रहे, और इन्द्रियों को वश में रखे, और आचार्य के बुलाने पर वेद का अध्ययन करे ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

मेखलाजिनदण्डाक्षब्रह्मसूत्रकमण्डलून् ।
जटिलोऽधौतदद्वासोऽरक्तपीठः कुशान दधत् ॥२३॥

पदच्छेद—

मेखला अजिन दण्ड अक्ष ब्रह्मसूत्र कमण्डलून् ।
जटिलः अधौत दद्वासः अरक्त पीठः कुशान् दधत् ॥

शब्दार्थ—

मेखला	१. मेखला	जटिलः	७. सिर पर जटा रक्खे
अजिन	२. मृगचर्म	अधौत	९. न धोवे
दण्ड	३. वर्ण के अनुसार दण्ड	दद्वासः	८. शौकीनी के लिये दांत और वस्त्र
अक्ष	४. रुद्राक्ष की माला	अरक्त	१०. रंगीन
ब्रह्मसूत्र	५. यज्ञोपवीत और	पीठः	११. आसन पर न बैठे और
कमण्डलून् ।	६. कमण्डलु धारण करे ।	कुशान् दधत् ॥	१२. कुश धारण करे

श्लोकार्थ—मेखला, मृगचर्म, वर्ण के अनुसार दण्ड, रुद्राक्ष की माला, यज्ञोपवीत और कमण्डलु धारण करे। सिर पर जटा रक्खे, शौकीनी के लिये दांत और वस्त्र न धोवे। रंगीन आसन पर न बैठे और कुश धारण करे॥

द्विचतुर्विंशः श्लोकः

स्नानभोजनहोमेषु जपोच्चारे च वाग्यतः ।
नच्छिन्द्यान्नखरोमाणि कक्षोपस्थगतान्यपि ॥२४॥

पदच्छेद—

स्नान भोजन होमेषु जप उच्चारे च वाग्यतः ।
नच्छिन्द्यात् नखरोमाणि कक्ष उपस्थ गतानि अपि ॥

शब्दार्थ—

स्नान	१. स्नान	नच्छिन्द्यात्	१२. न काटे
भोजन	२. भोजन	नखरोमाणि	१०. बाल और नाखूनों को
होमेषु	३. होम (हवन)	कक्ष	७. कक्ष और
जप	४. जप	उपस्थ	८. गुप्तेन्द्रियों में
उच्चारे च	५. और मल-मूत्र त्यागते समय	गतानि	९. स्थित
वाग्यतः ।	६. मौन रहे	अपि ॥	११. भी

श्लोकार्थ—स्नान, भोजन, हवन, जप और मल-मूत्र त्यागते समय मौन रहे। कक्ष और गुप्तेन्द्रियों में स्थित बाल और नाखूनों को भी न काटे॥

पञ्चविंशः श्लोकः

रेतो नावकिरेज्जातु ब्रह्मव्रतधरः स्वयम् ।
अवकीर्णेऽवगाह्याप्सु यतासुस्त्रिपदीं जपेत् ॥२५॥

पदच्छेद—

रेतः न अवकिरेत् जातु ब्रह्म व्रतधरः स्वयम् ।
अवकीर्णे अवगाह्य अप्सु यतअसु त्रिपदीम् जपेत् ॥

शब्दार्थ—

रेतः	३.	वीर्य	अवकीर्णे	७.	स्वप्नादि में वीर्य स्खलित होने पर
न अवकिरेत्	४.	पात न करे	अवगाह्य	९.	स्नान करके
जातु	२.	कभी भी	अप्सु	८.	जल में
ब्रह्म	५.	ब्रह्मचर्य का	यतअसु	१०.	प्राणायाम करे तथा
व्रतधरः	६.	पालन करे	त्रिपदीम्	११.	गायत्री का
स्वयम् ।	१.	स्वयं	जपेत् ॥	१२.	जप करे

श्लोकार्थ—स्वयं कभी भी वीर्यपात न करे ब्रह्मचर्य का पालन करे । स्वप्नादि में वीर्य स्खलित होने पर जल में स्नान करके प्राणायाम करे । तथा गायत्री का जप करे ॥

षट्विंशः श्लोकः

अग्न्यर्काचार्यगोविप्रगुरुवृद्धसुराञ्छुचिः ।
समाहित उपासीत सन्ध्ये च यतवाग् जपन् ॥२६॥

पदच्छेद—

अग्नि-अर्क आचार्य गो-विप्र गुरु-वृद्ध सुरान् शुचिः ।
समाहितः उपासीत सन्ध्ये च यतवाक् जपन् ॥

शब्दार्थ—

अग्नि-अर्क	३.	अग्नि-सूर्य	समाहितः	२.	एकाग्रचित्त होकर
आचार्य	४.	आचार्य	उपासीत	८.	उपासना करनी चाहिये
गो-विप्र	५.	गौ-ब्राह्मण	सन्ध्ये	११.	सायं-एवं-प्रातः सन्ध्योपासन एवं
गुरु वृद्ध	६.	गुरु वृद्धजन और	च	९.	और
सुरान्	७.	देवताओं की	यतवाक्	१०.	मौन रह कर
शुचिः ।	१.	ब्रह्मचारी को पवित्रता के साथ	जपन् ॥	१२.	जप करना चाहिये ॥

श्लोकार्थ—ब्रह्मचारी को पवित्रता के साथ एकाग्रचित्त होकर, अग्नि, सूर्य, आचार्य, गौ-ब्राह्मण, गुरु, वृद्धजन और देवताओं की उपासना करनी चाहिये । और मौन रह कर सायं एवं प्रातः सन्ध्योपासन एवं जप करना चाहिये ॥

सप्तविंशः श्लोकः

आचार्यं मां विजानीयान्नावमन्येत कर्हिचित् ।
न मर्त्यबुद्ध्यासूयेत सर्वदेवमयो गुरुः ॥२७॥

पदच्छेद—

आचार्यम् माम् विजानीयात् न अवमन्येत कर्हिचित् ।
न मर्त्य बुद्ध्या असूयेत सर्व देवमयः गुरुः ॥

शब्दार्थ—

आचार्यम्	१.	आचार्य को	न	१०.	न करे । क्योंकि
माम्	२.	मेरा ही स्वरूप	मर्त्य	७.	साधारण मनुष्य
विजानीयात्	३.	समझे	बुद्ध्या	८.	समझ कर उनमें
न	६.	न करे	असूयेत	९.	दोष दृष्टि
अवमन्येत	५.	तिरस्कार	सर्व देवमयः	१२.	सर्वदेवमय होता है
कर्हिचित् ।	४.	कभी उनका	गुरुः ॥	११.	गुरु

श्लोकार्थ—आचार्य को मेरा ही स्वरूप समझे, कभी उनका तिरस्कार न करे । साधारण मनुष्य समझ कर उनमें दोष दृष्टि न करे, क्योंकि गुरु सर्वदेवमय होता है ।

अष्टविंशः श्लोकः

सायं प्रातरुपानीय भैक्ष्यं तस्मै निवेदयेत् ।
यच्चान्यदप्यनुज्ञातमुपयुञ्जीत संयतः ॥२८॥

पदच्छेद—

सायम् प्रातः उपानीय भैक्ष्यम् तस्मै निवेदयेत् ।
यत् च अन्यत् अपि अनुज्ञातम् उपयुञ्जीत संयतः ॥

शब्दार्थ—

सायम्	१.	सायंकाल और	यत्	९.	जो कुछ प्राप्त हो उसका
प्रातः	२.	प्रातः काल	च अन्यत्	[illegible]	और उसके अतिरिक्त
उपानीय	३.	प्राप्त हुई	अपि	८.	भी
भैक्ष्यम्	४.	भिक्षा	अनुज्ञातम्	१०.	आज्ञानुसार
तस्मै	.	गुरुदेव को	उपयुञ्जीत	१२.	उपभोग करे
निवेदयेत् ।	६.	सौंप दे	संयतः ॥	११.	बड़े संयम से

श्लोकार्थ—सायं काल और प्रातः काल प्राप्त हुई भिक्षा गुरुदेव को सौंप दे । उसके अतिरिक्त जो कुछ प्राप्त हो उसका आज्ञानुसार बड़े संयम से उपभोग करे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

शुश्रूषमाण आचार्यं सदोपासीत नीचवत् ।
यानशय्यासनस्थानैर्नातिदूरे कृताञ्जलिः ॥२९॥

पदच्छेद—

शुश्रूषमाणः आचार्यम् सदा उपासीत नीचवत् ।
यान शय्यासन स्थानैः न अतिदूरे कृत अञ्जलिः ॥

शब्दार्थ—

शुश्रूषमाणः	२. सेवा शुश्रूषा के द्वारा	यान	६.	उनके कहीं जाने पर तथा
आचार्यम्	४. आचार्य की	शय्यासन	७.	सोने बैठने पर
सदा	३. सर्वदा	स्थानैः	१०.	स्थान पर ही रहे
उपासीत	५. आज्ञा में तत्पर रहे	न अति दूरे	९.	उनके पास के
नीचवत् ।	१. अत्यन्त छोटे व्यक्ति के समान	कृत अञ्जलिः ॥	८.	हाथ जोड़ कर

श्लोकार्थ—अत्यन्त छोटे व्यक्ति के समान सेवा शुश्रूषा के द्वारा सर्वदा आचार्य की आज्ञा में तत्पर रहे। उनके कहीं जाने पर तथा सोने, बैठने पर हाथ जोड़कर उनके पास के स्थान पर ही रहे ॥

त्रिंशः श्लोकः

एवंवृत्तो गुरुकुले वसेद् भोगविवर्जितः ।
विद्या समाप्यते यावद् बिभ्रद् व्रतमखण्डितम् ॥३०॥

पदच्छेद—

एवम् वृत्तः गुरु कुले वसेत् भोग विवर्जितः ।
विद्या समाप्यते यावत् बिभ्रद् व्रतम् अखण्डितम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	६. इसी प्रकार	विद्या	२.	विद्याध्ययन
वृत्तः	७. आचरण करता हुआ	समाप्यते	३.	समाप्त न हो जाय तब-तक
गुरुकुले	८. गुरुकुल में	यावत्	१.	जब-तक
वसेत्	९. निवास करे और	बिभ्रद्	१२.	धारण करे
भोग	४. सब प्रकार के भोगों से	व्रतम्	११.	ब्रह्मचर्य व्रत
विवर्जितः ।	५. दूर रह कर	अखण्डितम् ॥	१०.	अखण्ड

श्लोकार्थ—जब-तक विद्याध्ययन समाप्त न हो जाय तब-तक सब प्रकार के भोगों से दूर रह कर इसी प्रकार आचरण करता हुआ गुरुकुल में निवास करे। और अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत धारण करे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

यद्यसौ छन्दसां लोकमारोढयन् ब्रह्मविष्टपम् ।
गुरवे विन्यसेद् देहं स्वाध्यायार्थं बृहद्व्रतः ॥३१॥

पदच्छेद—

यदि असौ छन्दसाम् लोकम् आरोक्ष्यन् ब्रह्मविष्टपम् ।
गुरवे विन्यसेद् देहम् स्वाध्याय अर्थम् बृहद्व्रत ॥

शब्दार्थ—

यदि	१.	यदि	गुरवे	११.	आचार्य की सेवा में
असौ	२.	ब्रह्मचारी	विन्यसेद्	१२.	समर्पित कर दे
छन्दसाम्	३.	(मूर्तिमान) वेदों के	देहम्	८.	अपना सारा जीवन
लोकम्	४.	निवास स्थान में	स्वाध्याय	९.	स्वाध्याय के
आरोक्ष्यन्	५.	जाना चाहे तो	अर्थम्	१०.	लिये
ब्रह्मविष्टपम् ।	६.	नैष्ठिक ब्रह्मचर्य व्रत ले	बृहद्व्रतः ॥	७.	और महान संकल्प लेकर

श्लोकार्थ—यदि ब्रह्मचारी (मूर्तिमान) वेदों के निवास स्थान में जाना चाहे तो नैष्टिक ब्रह्मचर्य व्रत ले। और महान संकल्प लेकर अपना सारा जीवन स्वाध्याय के लिये आचार्य को सेवा में समर्पित कर दे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

अग्नौ गुरावात्मनि च सर्वभूतेषु मां परम् ।
अपृथग्धीरुपासीत ब्रह्मवर्चस्व्यकल्मषः ॥३२॥

पदच्छेद—

अग्नौ गुरौ आत्मनि च सर्वभूतेषु माम् परम् ।
अपृथक् धीः उपासीत ब्रह्म वर्चस्वी अकल्मषः ॥

शब्दार्थ—

अग्नौ	४.	अग्नि	अपृथक्	९.	एकत्व
गुरौ	५.	गुरु	धीः	१०.	बुद्धि करके
आत्मनि	६.	अपने शरीर	उपासीत	१२.	उपासना करनी चाहिये
च	७.	और	ब्रह्म	१.	ब्रह्म
सर्वभूतेषु	८.	समस्त प्राणियों में	वर्चस्वी	२.	तेज से सम्पन्न
माम् परम् ।	९.	मुझ परम पुरुष की ही	अकल्मषः ॥	३.	पाप रहित ब्रह्मचारी को

श्लोकार्थ—ब्रह्म तेज से सम्पन्न पाप रहित ब्रह्मचारी को अग्नि, गुरु, अपने शरीर और समस्त प्राणियों में एकत्व बुद्धि करके मुझ परम पुरुष की ही उपासना करनी चाहिये ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

स्त्रीणां निरीक्षणस्पर्शसंलापक्ष्वेलनादिकम् ।
प्राणिनो मिथुनीभूतानगृहस्थोऽग्रतस्त्यजेत् ॥३३॥

पदच्छेद—

स्त्रीणाम् निरीक्षण स्पर्श संलाप क्ष्वेलन आदिकम् ।
प्राणिनः मिथुनी भूतान् अगृहस्थः अग्रतः त्यजेत् ॥

शब्दार्थ—

स्त्रीणाम्	१.	स्त्रियों को	प्राणिनः	९.	प्राणियों को
निरीक्षण	२.	देखना	मिथुनी	७.	मैथुन
स्पर्श	३.	स्पर्श करना	भूतान्	८.	करते हुये
संलाप	४.	उनसे बातचीत करना	अगृहस्थः	१०.	गृहस्थ से भिन्न ब्रह्मचारी
क्ष्वेलन	५.	हंसी मसखरी करना	अग्रतः	११.	दूर से ही
आदिकम् ।	६.	आदि	त्यजेत् ॥	१२.	त्याग दे

श्लोकार्थ—स्त्रियों को देखना, स्पर्श करना, उनसे बात चीत करना, हंसी मसखरी करना आदि, मैथुन करते हुये प्राणियों को गृहस्थ से भिन्न ब्रह्मचारी दूर से ही त्याग दे ।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

शौचमाचमनं स्नानं सन्ध्योपासनमार्जवम् ।
तीर्थसेवा जपोऽस्पृश्याभक्ष्यासंभाष्यवर्जनम् ॥३४॥

पदच्छेद—

शौचम् आचमनम् स्नानम् सन्ध्या उपासना आर्जवम् ।
तीर्थसेवा जपः अस्पृश्य अभक्ष्य असंभाष्य वर्जनम् ॥

शब्दार्थ—

शौचम्	१.	शौच	तीर्थ सेवा	७.	तीर्थ सेवन
आचमनम्	२.	आचमन	जपः	८.	जप
स्नानम्	३.	स्नान	अस्पृश्य	९.	अस्पृश्यों को न छूना
सन्ध्या	४.	सन्ध्या	अभक्ष्य	१०.	अभक्ष्य वस्तुओं को न खाना
उपासना	५.	उपासना	असंभाष्य	११.	जिनसे बोलना न चाहिये उनसे
आर्जवम् ।	६.	सरलता	वर्जनम् ॥	१२.	न बोलना आदि व्यवहार करना चाहिये

श्लोकार्थ—शौच, आचमन, स्नान, सन्ध्या, उपासना, सरलता, तीर्थ सेवन, जप, अस्पृश्यों को न छूना, अभक्ष्य वस्तुओं को न खाना, जिनसे बोलना न चाहिये, उनसे न बोलना आदि व्यवहार करना चाहिये ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

सर्वाश्रमप्रयुक्तोऽयं नियमः कुलनन्दन ।
मद्भावः सर्वभूतेषु मनोवाक्कायसंयमः ॥३५॥

पदच्छेद—

सर्व आश्रम प्रयुक्तः अयम् नियमः कुलनन्दन ।
मद्भावः सर्व भूतेषु मनः वाक्काय संयमः ॥

शब्दार्थ—

सर्व	४.	(ब्रह्मचारी आदि)	मद्भावः	१२.	मुझे ही देखना चाहिये
आश्रम	५.	सभी आश्रमों के लिये	सर्व	१०.	समस्त
प्रयुक्तः	६.	बताया गया है	भूतेषु	११.	भूत प्राणियों में
अयम्	२.	यह	मनः	७.	मन
नियमः	३.	नियम	वाक्काय	८.	वाणी और शरीर का
कुलनन्दन ।	१.	प्रिय उद्धव !	संयमः ॥	९.	संयम रूप नियम तथा

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! यह नियम, (ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास) सभी आश्रमों के लिये बताया गया है । मन, वाणी और शरीर का संयम रूप नियम तथा समस्त प्राणियों में मुझे ही देखना चाहिये ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

एवं बृहद्व्रतधरो ब्राह्मणोऽग्निरिव ज्वलन् ।
मद्भक्तस्तीव्रतपसा दग्धकर्माशयोऽमलः ॥३६॥

पदच्छेद—

एवम् बृहत् व्रतधरः ब्राह्मणः अग्निः इव ज्वलन् ।
मत्भक्तः तीव्र तपसा दग्ध कर्मआशयः अमलः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	४.	इन नियमों का पालन मरने से	मत्भक्तः	१२.	और वह मेरा भक्त हो जाता है
बृहत्	१.	नैष्टिक	तीव्र	७.	तीव्र
व्रतधरः	२.	ब्रह्मचारी	तपसा	८.	तपस्या के कारण
ब्राह्मणः	३.	ब्राह्मण	दग्ध	१०.	भस्म हो जाते हैं तथा
अग्निःइव	५.	अग्नि के समान	कर्मआशयः	९.	उसके कर्म संस्कार
ज्वलन् ।	६.	तेजस्वी हो ज ता है और	अमलः ॥	११.	अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है

श्लोकार्थ—नैष्टिक ब्रह्मचारी ब्राह्मण इन नियमों का पालन करने से अग्नि के समान तेजस्वी हो जाता है । और तीव्र तपस्या के कारण उसके कर्म संस्कार भस्म हो जाते हैं । एवम् अन्तःकरण शुद्ध हो जाता है । और वह मेरा भक्त हो जाता है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

अथानन्तरमावेश्यन् यथा जिज्ञासितागमः ।
गुरवे दक्षिणां दत्त्वा स्नायाद् गुर्वनुमोदितः ॥३७॥

पदच्छेद—

अथ अनन्तरम् आवेश्यन् यथा जिज्ञासित आगमः ।
गुरवे दक्षिणाम् दत्त्वा स्नायात् गुरू अनुमोदितः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. और द्वितीय	गुरवे	७. आचार्य को
अनन्तरम्	२. गृस्थाश्रम में	दक्षिणाम्	८. दक्षिणा
आवेश्यन्	३. प्रवेश करने की इच्छा होने पर	दत्त्वा	९. देकर
यथा	४. विधिपूर्वक	स्नायात्	१२. समावर्त संस्कार करावे
जिज्ञासित	६. अध्ययन समाप्त करके	गुरू	१०. उनका
आगमः ।	५. वेदों का	अनुमोदितः ॥	११. अनुमति लेकर

श्लोकार्थ—और द्वितीय गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने की इच्छा होने पर विधिपूर्वक वेदों का अध्ययन समाप्त करके आचार्य को दक्षिणा देकर उनकी अनुमति लेकर समावर्तन संस्कार कराये ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

गृहं वनं वोपविशेत् प्रव्रजेद् वा द्विजोत्तमः ।
आश्रमादाश्रमं गच्छेन्नान्यथा मत्परश्चरेत् ॥३८॥

पदच्छेद—

गृहम् वनम् वा उपविशेत् प्रव्रजेत् वा द्विजोत्तमः ।
आश्रमात् आश्रमम् गच्छेत् न अन्यथा मत्परः चरेत् ॥

शब्दार्थ—

गृहम्	१. ब्रह्मचारी गृहस्थाश्रम में	आश्रमा	७. अथवा वह एक आश्रम से
वनम् वा	२. अथवा वान प्रस्थ आश्रम में	आश्रमात्	८. क्रमशः दूसरे आश्रम में
उपविशेत्	३. प्रवेश करे	गच्छेत्	९. प्रवेश करे
प्रव्रजेत्	६. सन्यास भी ले सकता है	न अन्यथा	११. इनके अतिरिक्त स्वेच्छाचार न
वा	४. यदि	मत्परः	१०. मेरा भक्त
द्विजोत्तमः ।	५. ब्राह्मण हो तो	चरेत् ॥	१२. करे

श्लोकार्थ—ब्रह्मचारी गृहस्थाश्रम में अथवा वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करे। यदि ब्राह्मण हो तो सन्यास भी ले सकता है। अथवा वह एक आश्रम से क्रमशः दूसरे आश्रम में प्रवेश करे, मेरा भक्त इनके अतिरिक्त स्वेच्छाचार न करे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

गृहार्थी सदृशीं भार्यामुद्वहेदजुगुप्सिताम् ।
यवीयसीं तु वयसा तां सवर्णामनुक्रमम् ॥३९॥

पदच्छेद—

गृहार्थी सदृशीम् भार्याम् उद्वहेत् अजुगुप्सिताम् ।
यवीयसीम् तु वयसा ताम् सवर्णाम् अनुक्रमम् ॥

शब्दार्थ—

गृहार्थी	१.	गृहस्थाश्रम में जाने वाला व्यक्ति	यवीयसीम्	३.	अपने से छोटी
सदृशीं	५.	अपने अनुरूप तथा	तु वयसा	४.	अवस्था वाली
भार्याम्	८.	अपनी पत्नी	ताम्	७.	कन्या को
उद्वहेत्	९.	बनावे अथवा	सवर्णाम्	२.	अपने ही वर्ण की
अजुगुप्सिताम् ।	६.	कुलीन	अनुक्रमम् ॥	१०.	अपने से निम्न वर्ण की कन्य से विवाह करे

श्लोकार्थ—गृहस्थाश्रम में जाने वाला व्यक्ति अपने ही वर्ण की अपने से छोटी अवस्था वाली अपने अनुरूप तथा कुलीन कन्या को अपनी पत्नी बनावे; अथवा अपने से निम्न वर्ण की कन्या से विवाह करे ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

इज्याध्ययनदानानि सर्वेषां च द्विजन्मनाम् ।
प्रतिग्रहोऽध्यापनं च ब्राह्मणस्यैव याजनम् ॥४०॥

पदच्छेद—

इज्या अध्ययन दानानि सर्वेषाम् च द्विजन्मनाम् ।
प्रतिग्रहः अध्यापनम् च ब्राह्मणस्य एव याजनम् ॥

शब्दार्थ—

इज्या	१.	यज्ञ-यागादि	प्रतिग्रहः	७.	दान लेना
अध्ययन	२.	अध्ययन और	अध्यापनम्	९.	पढ़ाना तथा
दानानि	३.	दान करने का अधिकार	च	८.	और
सर्वेषाम्	५.	समानरूप से है	ब्राह्मणस्य	११.	केवल ब्राह्मणों को
च	६.	और	एव	१२.	ही है
द्विजन्मनाम् ।	४.	ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को	याजनम् ॥	१०.	यज्ञ कराने का अधिकार

श्लोकार्थ—यज्ञ यागादि अध्ययन और दान करने का अधिकार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों को समानरूप से है। और दान लेना और पढ़ाना तथा यज्ञ कराने का अधिकार केवल ब्राह्मणों को ही है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

प्रतिग्रहं मन्यमानस्तपस्तेजोयशोनुदम् ।
अन्याभ्यामेव जीवेत शिलैर्वा दोषदृक् तयोः ॥४१॥

पदच्छेद—

प्रतिग्रहम् मन्यमानः तपः तेजः यशः नुदम् ।
अन्याभ्याम् एव जीवेत शिलैः वा दोषदृक् तयोः ॥

शब्दार्थ—

प्रतिग्रहम्	१.	ब्राह्मण दान लेने की वृत्ति को	अन्याभ्याम्	७.	पढ़ाने और यज्ञ कराने के द्वारा
मन्यमानः	६.	समझ कर	एव जीवेत	८.	ही जीवन निर्वाह करे
तपः	२.	तपस्या	शिलैः	१२.	खेतों में पड़े दाने बीन कर खाये
तेजः	३.	तेज और	वा	९.	अथवा
यशः	४.	यश का	दोषदृक्	११.	दोष दृष्टि हो तो
नुदम् ।	५.	नाश करने वाली	तयोः ॥	१०.	यदि इन दोनों वृत्तियों

श्लोकार्थ—ब्राह्मण दान लेने की वृत्ति को तपस्या, तेज और यश का नाश करने वाली समझ कर पढ़ाने और यज्ञ कराने के द्वारा ही जीवन निर्वाह करे । अथवा यदि इन दोनों वृत्तियों में दोष दृष्टि हो तो खेतों में पड़े दाने बीन कर खाये । और उनसे जीवन निर्वाह करे ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

ब्राह्मणस्य हि देहोऽयं क्षुद्रकामाय नेष्यते ।
कृच्छ्राय तपसे चेह प्रेत्यानन्तसुखाय च ॥४२॥

पदच्छेद—

ब्राह्मणस्य हि देहः अयम् क्षुद्रकामाय नेष्यते । कृच्छ्राय
तपसे च इह प्रेत्य अनन्त सुखाय च ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मणस्य	१.	ब्राह्मण का	तपसे	८.	तपस्या करने
हि देहः	३.	शरीर	च इह	६.	वह इस लोक में
अयम्	२.	यह	प्रेत्य	१०.	अन्त में
क्षुद्रकामाय	४.	विषय भोग आदि तुच्छ कामनाओं के लिये	अनन्त	११.	अनन्त
नेष्यते ।	५.	नहीं है	सुखाय	१२.	आनन्द स्वरूप मोक्ष के लिये है
कृच्छ्राय	७.	जीवन पर्यन्त कष्ट भोगने	च ॥	९.	और

श्लोकार्थ—ब्राह्मण का यह शरीर विषय भोगादि तुच्छ कामनाओं के लिये नहीं है । वह इस लोक में जीवन पर्यन्त कष्ट भोगने, तपस्या करने और अन्त में अनन्त आनन्द स्वरूप मोक्ष के लिये है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

शिलोञ्छवृत्त्या परितुष्टचित्तो धर्मं महान्तं विरजं जुषाणः ।
मय्यर्पितात्मा गृह एव तिष्ठन्नातिप्रसक्तः समुपैति शान्तिम् ॥४३॥

पदच्छेद—

शिलोञ्छ वृत्त्या परितुष्ट चित्तः धर्मम् महान्तम् विरजम् जुषाणः ।
मयि अर्पित आत्मा गृहे एव तिष्ठन् न अतिप्रसक्तः सम् उपैति शान्तिम् ॥

शब्दार्थ—

शिलोञ्छ	७.	खेतों, बाजारों में गिरे दाने चुनकर	मयि अर्पित	१२.	मुझे समर्पित कर देता है
वृत्त्या	१०.	जीवन निर्वाह करता है	आत्मा	११.	अपना शरीर प्राणादि आत्मा
परितुष्ट	८.	सन्तुष्ट	गृहे एव	१.	जो ब्राह्मण घर में ही
चित्तः	९.	चित्त से	तिष्ठन्	२.	रह कर
धर्मम्	४.	धर्म का	न	१४.	नहीं होता है वही
महान्तम्	३.	अपने महान	अति प्रसक्तः	१३.	कहीं भी आसक्त
विरजम्	५.	निष्काम भाव से	सम् उपैति	१६.	प्राप्त करता है
जुषाणः ।	६.	पालन करता है	शान्तिम् ॥	१५.	परम शान्ति

श्लोकार्थ—जो ब्राह्मण घर में ही रह कर अपने महान धर्म का निष्काम भाव से पालन करता है खेतों में, बाजारों में गिरे दाने चुनकर सन्तुष्ट चित्त से जीवन निर्वाह करता है, और अपना शरीर प्राण आदि आत्मा मुझे समर्पित कर देता है, कहीं भी आसक्त नहीं होता है वही परमशान्ति प्राप्त करता है ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

समुद्धरन्ति ये विप्रं सीदन्तं मत्परायणम् ।
तानुद्धरिष्ये नचिरादापद्भ्यो नौरिवार्णवात् ॥४४॥

पदच्छेद—

समुद्धरन्ति ये विप्रम् सीदन्तम् मत् परायणम् ।
तान् उद्धरिष्ये न चिरात् आपद्भ्यो नौः इव अर्णवात् ॥

शब्दार्थ—

समुद्धरन्ति	६.	विपत्ति से बचा लेता है	तान्	७.	उन्हें मैं
ये	१.	जो लोग	उद्धरिष्ये	१०.	बचा लेता हूँ
विप्रम्	५.	ब्राह्मण को	न चिरात्	८.	शीघ्र ही
सीदन्तम्	२.	विपत्ति में पड़े कष्ट से	आपद्भ्यो	९.	आपत्तियों से उसी प्रकार
मत्	३.	मेरे	नौः	१२.	नौका बचा लेती है
परायणम् ।	४.	भक्त	इव अर्णवात् ॥	११.	जैसे समुद्र में डूबते प्राणी को

श्लोकार्थ—जो लोग विपत्ति में पड़े कष्ट पा रहे मेरे भक्त ब्राह्मण को विपत्ति से बचा लेता है उन्हें मैं शीघ्र ही आपत्तियों से उसी प्रकार बचा लेता हूँ । जैसे समुद्र में डूबते प्राणी को नौका बचा लेती है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सर्वाः समुद्धरेद् राजा पितेव व्यसनात् प्रजाः ।
आत्मानमात्मना धीरो यथा गजपतिर्गजान् ॥४५॥

पदच्छेद—

सर्वाः समुद्धरेत् राजा पितेव व्यसनात् प्रजाः ।
आत्मानम् आत्मना धीरः यथा गजपतिः गजान् ॥

शब्दार्थ—

सर्वाः	३.	सारी	आत्मानम्	१२.	अपना उद्धार करे
समुद्धरेत्	६.	उद्धार करे	आत्मना	११.	स्वयं अपने आपसे
राजा	१.	राजा	धीरः	१०.	वैसे धीर पुरुष
पितेव	२.	पिता के समान	यथा	७.	जैसे
व्यसनात्	५.	कष्ट से	गजपतिः	८.	गजराज
प्रजाः ।	४.	प्रजा का	गजान् ॥	९.	दूसरे गजों की रक्षा करता है

श्लोकार्थ—राजा पिता के समान सारी प्रजा का कष्ट से उद्धार करे । जैसे गजराज दूसरे गजों की रक्षा करता है । वैसे ही धीर पुरुष स्वयं अपने आप से अपना उद्धार करे ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

एवंविधो नरपतिर्विमानेनार्कवर्चसा ।
विधूयेहाशुभं कृत्स्नमिन्द्रेण सह मोदते ॥४६॥

पदच्छेद—

एवम् विधः नरपतिः विमानेन अर्क वर्चसा ।
विधूय इह अशुभम् कृत्स्नम् इन्द्रेण सह मोदते ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस	विधूय	७.	मुक्त होकर अन्त समय
विधः	२.	प्रकार आचरण करके	इह	४.	इस संसार में
नरपतिः	३.	राजा	अशुभम्	६.	पापों से
विमानेन	१०.	विमान पर चढ़कर	कृत्स्नम्	५.	समस्त
अर्क	८.	सूर्य के समान	इन्द्रेण	११.	स्वर्गलोक में इन्द्र के
वर्चसा ।	९.	तेजस्वी	सह मोदते ॥	१२.	साथ सुख भोगता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार आचरण करके राजा इस संसार में समस्त पापों से मुक्त होकर अन्त समय में सूर्य के समान तेजस्वी विमान पर चढ़कर स्वर्गलोक में इन्द्र के साथ सुख भोगता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोक :

सीदन् विप्रो वणिग्वृत्त्या पण्यैरेवापदं तरेत् ।
खड्गेन वाऽऽपदाक्रान्तो न श्ववृत्त्या कथञ्चन ॥४७॥

पदच्छेद—

सीदन् विप्रः वणिक् वृत्त्या पण्यैः एव आपदम् तरेत् ।
खड्गेन वा आपद आक्रान्तः न श्ववृत्त्या कथञ्चन् ॥

शब्दार्थ—

सीदन्	२.	कष्ट में हो तो	खड्गेन	११.	तलवार लेकर क्षत्रिय वृत्ति से काम चलाए
विप्रः	१.	ब्राह्मण	वा	८.	अथवा
वणिक्	३.	वैश्य	आपद	९.	विपत्ति
वृत्त्या	४.	वृत्ति का आश्रय ले	आक्रान्तः	१०.	ग्रस्त होने पर
पण्यैः एव	५.	तथा वस्तुयें बेच कर ही	न	१४.	नहीं करे
आपदम्	६.	उस विपत्ति को	श्ववृत्त्या	१२.	नीचों की सेवा
तरेत् ।	७.	पार करे	कथञ्चन् ॥	१३.	कभी भी

श्लोकार्थ—ब्राह्मण कष्ट में हो तो वैश्य वृत्ति का आश्रय ले, तथा वस्तुयें बेच कर ही उस विपत्ति को पार करे । अथवा विपत्ति ग्रस्त होने पर तलवार लेकर क्षत्रिय वृत्ति से काम चलाये । नीचों की सेवा कभी भी नहीं करे ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

वैश्यवृत्त्या तु राजन्यो जीवेन्मृगययाऽऽपदि ।
चरेद् वा विप्ररूपेण न श्ववृत्त्या कथञ्चन ॥४८॥

पदच्छेद—

वैश्य वृत्त्या तु राजन्यः जीवेत् मृगयया आपदि ।
चरेत् वा विप्ररूपेण न श्ववृत्त्या कथञ्चन् ॥

शब्दार्थ—

वैश्य	३.	वैश्य	चरेत्	१०.	आचरण करे परन्तु
वृत्त्या	४.	वृत्ति-व्यापार	वा	७.	अथवा
तु राजन्यः	१.	इसी प्रकार क्षत्रिय	विप्र	८.	ब्राह्मण
जीवेत्	६.	जीवन निर्वाह करे	रूपेण	९.	के समान
मृगयया	५.	या शिकार के द्वारा	न श्ववृत्त्या	१२.	नीचों की सेवा न करे
आपदि ।	२.	विपत्ति ग्रस्त होने पर	कथञ्चद् ॥	११.	कभी भी

श्लोकार्थ—इसी प्रकार क्षत्रिय विपत्ति ग्रस्त होने पर वैश्य वृत्ति-व्यापार या शिकार के द्वारा जीवन निर्वाह करे । अथवा ब्राह्मण के समान आचरण करे, परन्तु कभी भी नीचों की सेवा न करे ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

शूद्रवृत्तिं भजेद् वैश्यः शूद्रः कारुकटक्रियाम् ।
कृच्छ्रान्मुक्तो न गर्ह्येण वृत्तिं लिप्सेत कर्मणा ॥४९॥

पदच्छेद—

शूद्र वृत्तिम् भजेद् वैश्यः शूद्रः कारुकट क्रियाम् ।
कृच्छ्रात् मुक्तः न गर्हेण वृत्तिम् लिप्सेत कर्मणा ॥

शब्दार्थ—

शूद्र	२.	शूद्रों की	कृच्छ्रात्	८.	कष्ट से
वृत्तिम्	३.	वृत्ति-सेवा से	मुक्तः	९.	मुक्त हो जाने पर
भजेद्	४.	जीवन निर्वाह कर ले	न गर्हेण	१०.	निम्न वर्णों की
वैश्यः	१.	वैश्य आपत्ति पड़ने पर	वृत्तिम्	११.	वृत्ति से
शूद्रः	५.	और शूद्र	लिप्सेत	१३.	लोभ न करे
कारुकट	६.	चटाई बुनने आदि कारु	कर्मणा ॥	१२.	जीविकोपार्जन करने का
क्रियाम् ।	७.	वृत्ति का आश्रय लेले परन्तु			

श्लोकार्थ—वैश्य आपत्ति पड़ने पर शूद्रों की वृत्ति-सेवा से जीवन निवाह कर ले और शूद्र चटाई बुनने आदि कारु वृत्ति का आश्रय ले ले, परन्तु कष्ट से मुक्त हो जाने पर निम्नवर्णों की वृत्ति से जीविकोपार्जन करने का लोभ न करे ॥

पञ्चाशः श्लोकः

वेदाध्यायस्वधास्वाहाबल्यन्नाद्यैर्यथोदयम् ।
देवर्षिपितृभूतानि मद्रूपाण्यन्वहं यजेत् ॥५०॥

पदच्छेद—

वेदअध्याय स्वधा स्वाहा बल्यन्नाद्यैः यथा उदयम् ।
देवर्षि पितृ भूतानि मत् रूपाणि अन्वहम् यजेत् ॥

शब्दार्थ—

वेदअध्याय	१.	वेदाध्ययन रूप ब्रह्मयज्ञ	देवर्षि	८.	ऋषि-देवता
स्वधा	२.	तर्पण रूप पितृयज्ञ	पितृ	९.	पितर
स्वाहा	३.	हवन रूप देवयज्ञ	भूतानि	१०.	मनुष्यादि सभी प्राणियों की
बल्यन्नाद्यैः	४.	काकबलि आदि भूतयज्ञ	मत् रूपाणि	७.	मेरे स्वरूप भूत
यथा	५.	और अन्नदान रूप अतिथियज्ञ	अन्वहम्	११.	प्रतिदिन
उदयम् ।	६.	के द्वारा अपनी शक्ति के अतिथियज्ञ	यजेत् ॥	१२.	पूजा करता रहे

श्लोकार्थ—वेदाध्ययन रूप ब्रह्मयज्ञ, दर्पण रूप पितृयज्ञ, हवन रूप देवयज्ञ, काकबलि आदि भूतयज्ञ और अन्नदान रूप अतिथि यज्ञ के द्वारा अपनी शक्ति के अनुसार मेरे स्वरूप भूत ऋषि-देवता-पितर और मनुष्यादि सभी प्राणियों की प्रतिदिन पूजा करता रहे ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

यदृच्छयोपपन्नेन शुक्लेनोपार्जितेन वा ।
धनेनापीडयन् भृत्यान् न्यायेनैवाहरेत् क्रतून् ॥५१॥

पदच्छेद—

यदृच्छया उपपन्नेन शुक्लेन उपार्जितेन वा ।
धनेन् आपीडयन् भृत्यान् न्यायेन एव आहरेत् क्रतून् ॥

शब्दार्थ—

यदृच्छया	१.	गृहस्थ अनायास ही	आपीडयन्	८.	कष्ट न देते हुये
उपपन्नेन	२.	प्राप्त	भृत्यान्	७.	अपने भृत्यों आदि को
शुक्लेन	४.	शास्त्रोक्त रीति से	न्यायेन	९.	न्याय और विधि के साथ
उपार्जितेन	५.	उपार्जित	एव	१०.	ही
वा ।	३.	अथवा	आहरेत्	१२.	करे
धनेन्	६.	अपने शुद्ध धन से	क्रतून् ॥	११.	यज्ञ

श्लोकार्थ—गृहस्थ पुरुष अनायास ही प्राप्त अथवा शास्त्रोक्तरीति से उपार्जित अपने शुद्ध धन से अपने भृत्यों आदि को कष्ट न देते हुये न्याय और विधि के साथ ही यज्ञ करे ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

कुटुम्बेषु न सज्जेत न प्रमाद्येत् कुटुम्ब्यपि ।
विपश्चिन्नश्वरं पश्येददृष्टमपि दृष्टवत् ॥५२॥

पदच्छेद—

कुटुम्बेषु न सज्जेत न प्रमाद्येत् कुटुम्बि अपि ।
विपश्चित् नश्वरम् पश्येद् दृष्टम् अपि दृष्ट वत् ॥

शब्दार्थ—

कुटुम्बेषु	१.	गृहस्थ पुरुष कुटुम्ब में	नश्वरम्	११.	नाशवान्
न सज्जेत	२.	आसक्त न हो	पश्येद्	१२.	समझे
न प्रमाद्येत्	५.	भजन में प्रमाद न करे	दृष्टम्	९.	परलोक की वस्तुओं को
कुटुम्बि	३.	बड़ा कुटुम्ब होने पर	अपि	१०.	भी
अपि ।	४.	भी	दृष्ट	७.	इस लोक की वस्तुओं के
विपश्चित्	६.	बुद्धिमान् पुरुष	वत् ॥	८.	समान

श्लोकार्थ—गृहस्थ पुरुष कुटुम्ब में आसक्त न हो। बड़ा कुटुम्ब होने पर भी भजन में प्रमाद न करे। बुद्धिमान पुरुष इस लोक की वस्तुओं के समान परलोक की वस्तुओं को भी नाशवान् समझे ।

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

पुत्रदाराप्तबन्धूनां सङ्गमः पान्थसङ्गमः ।
अनुदेहं वियन्त्येते स्वप्नो निद्रानुगो यथा ॥५३॥

पदच्छेद—

पुत्र दारा आप्त बन्धूनाम् सङ्गमः पान्थ सङ्गमः ।
अनुदेहम् वियन्ति एते स्वप्नः निद्रा अनुगः यथा ॥

शब्दार्थ—

पुत्र	१.	पुत्र	अनुदेहम्	१४.	शरीर के रहने तक ही रहता है
दारा	२.	स्त्री	वियन्ति	१३.	सम्बन्ध भी
आप्त	३.	भाई	एते	१२.	इन लोगों का
बन्धूनाम्	४.	बन्धु गुरुजनों का	स्वप्नः	९.	स्वप्न
सङ्गमः	५.	मिलना-जुलना	निद्रा	१०.	निद्रा के
पान्थ	६.	रास्ते में	अनुगः	११.	टूटने तक ही रहता है वैसे ही
सङ्गमः ।	७.	मिलने के समान है	यथा ॥	८.	जैसे

श्लोकार्थ—पुत्र, स्त्री, भाई, बन्धु, गुरुजनों का मिलना,-जुलना रास्ते में मिलने के समान है । जैसे स्वप्न निद्रा के टूटने तक ही रहता है । वैसे ही इन लोगों का सम्बन्ध ही शरीर के रहने तक ही रहता है ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

इत्थं परिमृशन्मुक्तो गृहेष्वतिथिवद् वसन् ।
न गृहैरनुबध्येत निर्ममो निरहङ्कृतः ॥५४॥

पदच्छेद—

इत्थम् परिमृशन् मुक्तः गृहेषु अतिथिवत् वसन् ।
न गृहैः अनुबध्येत निर्ममः निरहङ्कृत ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	गृहस्थ पुरुष इस प्रकार	न	१०.	नहीं
परिमृशन्	२.	विचार करके	गृहैः	९.	घर के फन्दे में
मुक्तः	५.	अनासक्त भाव से	अनुबध्येत	११.	बंधता है
गृहेषु	३.	घर गृहस्थी में	निर्ममः	७.	जो ममता और
अतिथिवत्	४.	अतिथि के समान	निरहङ्कृत ॥	८.	अहंकार से रहित है वह
वसन् ।	६.	रहे			

श्लोकार्थ—गृहस्थ पुरुष इस प्रकार विचार करके घर गृहस्थी में अतिथि के समान अनासक्त भाव से रहे । जो ममता और अहंकार से रहित है । वह घर के फन्दों में नहीं बंधता है ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

कर्मभिर्गृहमेधीयैरिष्ट्वा मामेव भक्तिमान् ।
तिष्ठेद् वनं वोपविशेत् प्रजावान् वा परिव्रजेत् ॥५५॥

पदच्छेद—

कर्मभिः गृहमेधीयैः इष्ट्वा माम् एव भक्तिमान् ।
तिष्ठेत् वनम् वा उपविशेत् प्रजावान् वा परिव्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

कर्मभिः	३.	कर्मों के द्वारा	तिष्ठेत्	७	घर में रहे
गृहमेधीयैः	२.	गृहस्थोचित्त शास्त्रोक्त	वनम्	६.	वानप्रस्थ आश्रम में
इष्ट्वा	६.	आराधना करे	वा	११.	अथवा
माम्	४.	मेरो	उपविशेत्	१०.	चला जाय
एव	५.	ही	प्रजावान् वा	८.	अथवा यदि पुत्रवान हो तो
भक्तिमान् ।	१.	भक्तिमान पुरुष	परिव्रजेत् ॥	१२.	संन्यास आश्रम स्वीकार करे

श्लोकार्थ—भक्तिमान पुरुष गृहस्थेचित्त शास्त्रोक्त कर्मों के द्वारा मेरी आराधना करे । घर में रहे, अथवा यदि पुत्रवान् हो तो वानप्रस्थ आश्रम में चला जाय । अथवा संन्या आश्रम स्वीकार करे ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

यस्त्वासक्तमतिर्गेहे पुत्रवित्तैषणातुरः ।
स्त्रैणः कृपणधीर्मूढो ममाहमिति बध्यते ॥५६॥

पदच्छेद—

यः तु आसक्तमतिः गेहे पुत्र वित्तएषणा आतुरः ।
स्त्रैणः कृपणधीः मूढः मम् अहम् इति वध्यते ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१	जो लोग	स्त्रैणः	७	स्त्री लम्पट और
आसक्तमतिः	३.	आसक्त बुद्धि होते हैं	कृपणधीः	८.	कृपण बुद्धि वाले वे
गेहे	२.	घर-गृहस्थी में	मूढः	९.	मूढ जन
पुत्र	४.	स्त्री-पुत्र और	मम् अहम्	१०.	मैं मेरे के
वित्तएषणा	५.	धन की कामनाओं में	इति	११.	चक्कर में
आतुरः ।	६.	फंसे रहते हैं	वध्यते ॥	१२.	बंध जाते हैं

श्लोकार्थ—जो लोग घर गृहस्थी में आसक्त बुद्धि होते हैं । स्त्री-पुत्र और धन की कामनाओं में फसे रहते हैं । स्त्री, लम्पट और कृपण बुद्धि वाले वे मूढ जन मैं मेरे के चक्कर में बंध जाते हैं ॥

सप्तपञ्चाशतः श्लोकः

अहो मे पितरौ वृद्धौ भार्या बालात्मजाऽऽत्मजाः ।
अनाथा मामृते दीनाः कथं जीवन्ति दुःखिताः ॥५७॥

पदच्छेद—

अहो मे पितरौ वृद्धौ भार्या बालआत्मज आत्मजः ।
अनाथाः माम् ऋते दीनाः कथम् जीवन्ति दुःखिताः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	वे सोचते हैं हाय !	अनाथाः	६.	अनाथ और
मे पितरौ	२.	मेरे मां-बाप	माम् ऋते	७.	मेरे न रहने पर
वृद्धौ	३.	बूढे हो गये	दीनाः	८.	ये दीन
भार्या	४.	पत्नी के	कथम्	११.	फिर ये कैसे
बालआत्मज	६.	छोटे छोटे हैं	जीवन्ति	१२.	जीवित रहेंगे
आत्मजाः ।	५.	बाल-बच्चे अभी	दुःखिताः ॥	१०.	दुःखी हो जायेंगे

श्लोकार्थ—वे सोचते हैं हाय ! मेरे मां-बाप बूढे हो गये, पत्नी से बाल-बच्चे अभी छोटे-छोटे हैं। मेरे न रहने पर ये दीन-अनाथ और दुःखी हो जायेंगे। फिर ये कैसे जीवित रहेंगे ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

एवं गृहाशयाक्षिप्तहृदयो मूढधीरयम् ।
अतृप्तस्ताननुध्यायन् मृतोऽन्धं विशते तमः ॥५८॥

पदच्छेद—

एवम् गृह आशय आक्षिप्त हृदयः मूढधीः अयम् ।
अतृप्तः तान् अनुध्यायन् मृतः अन्धम् विशतेतमः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	अतृप्तः	८.	तृप्त न होता हुआ
गृह आशय	२.	घर गृहस्थी की वासना से	तान्	८.	उन विषय भोगों से
आक्षिप्त	४.	विक्षिप्त है	अनुध्यायन्	९.	उन्हीं का ध्यान करता हुआ
हृदयः	३.	जिसका चित्त	मृतः	१०.	मर कर
मूढधीः	५.	वह मूर्ख बुद्धि	अन्धम्	११.	घोर
अयम् ।	६.	पुरुष	विशतेतमः ॥	१२.	नरक में जाता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार घर गृहस्थी की वासना से जिसका चित्त विक्षिप्त है। वह मूर्ख बुद्धि पुरुष उन विषय भोगों से तृप्त न होता हुआ; उन्हीं का ध्यान करता हुआ मर कर घोर नरक में जाता है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे सप्तदशः अध्यायः ॥ १७ ॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—वनं विविक्षुः पुत्रेषु भार्यां न्यस्य सहैव वा ।
वन एव वसेच्छान्तस्तृतीयं भागमायुषः ॥१॥

पदच्छेद—

वनम् विविक्षुः पुत्रेषु भार्याम् न्यस्य सह एव वा ।
वन एव वसेत् शान्तः तृतीयम् भाग मायुषः ॥

शब्दार्थ—

वनम्	१.	यदि गृहस्थ वानप्रस्थ में	वन एव	८.	वन में ही
विविक्षुः	२.	जाना चाहे तो	वसेत्	९.	निवास करे
पुत्रेषु	४.	पुत्रों के हाथ	शान्तः	७.	फिर शान्त चित्त से
भार्याम्	३.	अपनी पत्नी को	तृतीयम्	११.	तीसरा
न्यस्य	५.	सौंप दे	भाग	१२.	भाग को वन में ही रह कर बिताये
सह एव वा ।	६.	अथवा अपने साथ ही ले ले	मायुषः ॥	१०.	अपनी आयु का

श्लोकार्थ—यदि गृहस्थ वानप्रस्थ में जाना चाहे तो अपनी पत्नी को पुत्रों के हाथ सौंप दे । अथवा अपने साथ ही ले ले, फिर शान्त चित्त से वन में निवास करे । और अपनी आयु का तीसरा भाग वन में ही रह कर बिताये ॥

द्वितीयः श्लोकः

कन्दमूलफलैर्वन्यैर्मेध्यैर्वृत्तिं प्रकल्पयेत् ।
वसीत वल्कलं वासस्तृणपर्णाजिनानि च ॥२॥

पदच्छेद—

कन्दमूल फलैः वन्यैः मेध्यैः वृत्तिम् प्रकल्पयेत् ।
वसीत वल्कलम् वासः तृणपर्ण अजिनानि च ॥

शब्दार्थ—

कन्दमूल	३.	कन्द-मूल और	वसीत	१२.	काम चलाने
फलैः	४.	फलों से ही	वल्कलम्	८.	वृक्षों की छाल
वन्यैः	१.	उसे वन के	वासः	७.	वस्त्र की जगह
मेध्यैः	२.	पवित्र	तृणपर्ण	९.	घास-पात
वृत्तिम्	५.	शरीर निर्वाह	अजिनानि	११.	मृगछाला से ही
प्रकल्पयेत् ।	६.	करना चाहिये	च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—उसे वन के पवित्र कन्द-मूल और फलों से ही शरीर निर्वाह करना चाहिये । वस्त्र की जगह वृक्षों की छाल घास-पात और मृग छाला से ही काम चलावे ॥

तृतीयः श्लोकः

केशरोमनखश्मश्रुमलानि बिभृयाद् दतः।
न धावेदप्सु मज्जेत त्रिकालं स्थण्डिलेशयः ॥३॥

पदच्छेद—

केश रोम नख श्मश्रु मलानि बिभृयाद् दतः।
न धावेत् अप्सु मज्जेत त्रिकालम् स्थण्डिलेशयः ॥

शब्दार्थ—

केश-रोम	१.	केश-रोम	न	८.	नहीं
नख	२.	नख और	धावेत्	७.	साफ़ करे
श्मश्रु	३.	मूँछ दाढ़ी रूप	अप्सु	९.	जल में घुसकर
मलानि	४.	शरीर के मल को	मज्जेत	११.	स्नान करे और
बिभृयाद्	५.	धारण करे	त्रिकालम्	१०.	तीनों समय
दतः।	६.	दाँतों को	स्थण्डिलेशयः ॥	१२.	धरती पर सोये

श्लोकार्थ—केश, रोम, नख और मूँछ-दाढ़ी रूप शरीर के मल को धारण करे। दाँतों को साफ नहीं करे, जल में घुसकर तीनों समय स्नान करे और धरती पर सोये ॥

चतुर्थः श्लोकः

ग्रीष्मे तप्येत पञ्चाग्नीन् वर्षास्वासारषाड् जले।
आकण्ठमग्नः शिशिरे एवंवृत्तस्तपश्चरेत् ॥४॥

पदच्छेद—

ग्रीष्मे तप्येत पञ्चाग्निन् वर्षासुआसार पाड्जले।
आकण्ठमग्नः शिशिरे एवं वृत्तः तपः चरे त् ॥

शब्दार्थ—

ग्रीष्मे	१.	ग्रीष्म ऋतु में	आकण्ठ	८.	गले तक
तप्येत	३.	तापे	मग्नः	९.	जल में डूबा रहे
पञ्चाग्नीन्	२.	पञ्चाग्नि	शिशिरे	७.	जाड़े के दिनों में
वर्षा सु	४.	वर्षा ऋतु में	एवं वृत्त	१०.	इस प्रकार
आसारषाड्	५.	धारा प्रवाह	तपः	११.	घोर तपस्यामय जीवन
जले।	६.	जल में रहे	चरेत् ॥	१२.	व्यतीत करे

श्लोकार्थ—ग्रीष्म ऋतु में पञ्चाग्नि तापे; वर्षा ऋतु में धारा प्रवाह जल में रहे। जाड़े के दिनों में गले तक जल में डूबा रहे, इस प्रकार घोर तपस्यामय जीवन व्यतीत करे ॥

पञ्चमः श्लोकः

अग्निपक्वं समश्नीयात् कालपक्वमथापि वा ।
उलूखलाश्मकुट्टो वा दन्तोलूखल एव वा ॥५॥

पदच्छेद—

अग्नि पक्वम् समश्नीयात् काल पक्वम् अथ अपि वा ।
उलूखल अश्मकुट्टः वा दन्त उलूखल एव वा ॥

शब्दार्थ—

अग्नि	१.	कन्द, मूल, आग में	उलूखल	७.	ओखली में
पक्वम्	२.	भून कर	अश्मकुट्टः	९.	सिल पर कूट ले
समश्नीयात्	३.	खाले	वा	८.	या
कालपक्वम्	६.	समयानुसार पके फल खावे	दन्त	११.	दाँतों से ही
अथ	४.	अथ	उलूखल	१२.	चबा-चबाकर खा ले
अपि वा ।	५.	वा	एव वा ॥	१०.	अन्यथा

श्लोकार्थ—कन्द, मूल, फल आग में भून कर खाले, अथवा समयानुसार पके फल खावे । ओखली में या सिल पर कूट ले, अन्यथा दाँतों से चबा-चबा कर खाले ॥

षष्ठः श्लोकः

स्वयं संचिनुयात् सर्वमात्मनो वृत्तिकारणम् ।
देशकालबलाभिज्ञो नाददीतान्यदाहृतम् ॥६॥

पदच्छेद—

स्वयम् संचिनुयात् सर्वम् आत्मनः वृत्तिकारणम् ।
देश काल बल अभिज्ञः न आददीत अन्यत् आहृतम् ॥

शब्दार्थ—

स्वयम्	५.	वानप्रस्थी को स्वयम् ही	देश	७.	देश
संचिनुयात्	६.	लाने चाहिये	काल	८.	काल
सर्वम्	४.	सब प्रकार के कन्द-मूल	बल	९.	आदि से
आत्मनः	१.	अपने	अभिज्ञः	१०.	अनभिज्ञ
वृत्ति	२.	जीवन-निर्वाह के	न आददीत	१३.	न खाये
कारणम् ।	३.	लिये	अन्यत्	११.	दूसरों के द्वारा
			आहृतम् ॥	१२.	लाये पदार्थ

श्लोकार्थ—अपने जीवन निर्वाह के लिये सब प्रकार के कन्द-मूल वानप्रस्थी को स्वयम ही लाने चाहिये । देश-काल आदि से अनभिज्ञ दूसरों के द्वारा लाये पदार्थ न खाये ॥

सप्तमः श्लोकः

वन्यैश्चरुपुरोडाशैर्निर्वपेत् कालचोदितान् ।
न तु श्रौतेन पशुना मां यजेत वनाश्रमी ॥७॥

पदच्छेद—

वन्यैः चरु पुरोडाशैः निर्वपेत् काल चोदितान् ।
न तु श्रौतेन पशुना माम् यजेतवन आश्रमी ॥

शब्दार्थ—

वन्यैः	१.	नीवारादि जंगली अन्न से ही	न तु	१२.	न करे
चरु	२.	चरु	श्रौतेन	८.	वेद विहित
पुरोडाशैः	३.	पुरोडासादि	पशुना	९.	पशुओं द्वारा
निर्वपेत्	४.	तैयार करे उन्हीं से	माम्	१०.	मेरा
काल	५.	समोचित	यजेत	११.	यजन
चोदितान् ।	६.	आग्रमणादि वैदिक कर्म करे	वन आश्रमी ॥	७.	वानप्रस्थी हो जाने पर

श्लोकार्थ—नीवारादि जंगली अन्न से ही चरु पुरोडास आदि तैयार करे उन्हीं से समयोचित आग्रमणादि वैदिक कर्म करे वानप्रस्थी हो जाने पर वेद विहित पशुओं द्वारा मेरा यजन न करे ॥

अष्टमः श्लोकः

अग्निहोत्रं च दर्शश्च पूर्णमासश्च पूर्ववत् ।
चातुर्मास्यानि च मुनेराम्नातानि च नैगमैः ॥८॥

पदच्छेद—

अग्निहोत्रम् च दर्शः च पूर्णमासः च पूर्ववत् ।
चातुर्मास्यानि च मुनेः आम्नातानि च नैगमैः ॥

शब्दार्थ—

अग्निहोत्रम्	३.	अग्निहोत्र	चातुर्मास्यानि	९.	चातुर्मास्यादि का
च	४.	और	च	६.	तथा
दर्शः च	५.	दर्श	मुनेः	२.	वानप्रस्थी के लिये
पूर्णमासः	७.	पौर्णमास	आम्नातानि	१२.	विधान किया है
च	११.	ही	च	८.	और
पूर्ववत् ।	१०.	गृहस्थों के समान	नैगमैः ॥	१.	वेद वेत्ताओं ने

श्लोकार्थ—वेद वेत्ताओं ने वानप्रस्थी के लिये अग्निहोत्र और दर्श तथा पौर्णमास और चातुर्मास्यादि का गृहस्थों के समान ही विधान किया है ॥

नवमः श्लोकः

एवं चीर्णेन तपसा मुनिर्धमनिसन्ततः।
मां तपोमयमाराध्य ऋषिलोकादुपैति माम् ॥९॥

पदच्छेद—

एवम् चीर्णेन तपसा मुनिः धर्मनिसन्ततः।
माम् तपोमयम् आराध्य ऋषि लोकात् उपैति माम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	तपोमयम्	६.	तपस्या के द्वारा
चीर्णेन	२.	घोर	आराध्य	८.	आराधना करके
तपसा	३.	तपस्या के द्वारा	ऋषि	९.	पहले ऋषि
मुनिः	४.	मुनि की	लोकात्	१०.	लोक में जाता है फिर वहाँ से
धर्मनिसन्ततः।	५.	नसें मात्र रह जाती हैं तब	उपैति	१२.	आ जाता है
माम्	७.	मेरी	माम् ॥	११.	मेरे पास

श्लोकार्थ—इस प्रकार घोर तपस्या के द्वारा मुनि की नसें मात्र रह जाती हैं तब तपस्या के द्वारा मेरी आराधना करके पहले ऋषि लोक में जाता है फिर वहाँ से मेरे पास आ जाता है ॥

दशमः श्लोकः

यस्त्वेतत् कृच्छ्रतश्चीर्णं तपो निःश्रेयसं महत्।
कामायाल्पीयसे युञ्ज्याद् बालिशः कोऽपरस्ततः ॥१०॥

पदच्छेद—

यः तु एतत् कृच्छ्रतः चीर्णम् तपः निःश्रेयसम् महत्।
कामाय अल्पीयसे युञ्ज्यात् बालिशः कः अपरः ततः ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जो पुरुष	कामाय	९.	प्राप्ति के लिये
एतत्	२.	इस	अल्पीयसे	८.	छोटे-मोटे फलों की
कृच्छ्रतः	४.	कष्ट से किये हुये	युञ्ज्यात्	१०.	करता है
चीर्णम्	३.	बड़े	बालिशः	१२.	उससे बढ़ कर मूर्ख
तपः	७.	तप को	कः	१३.	कौन
निःश्रेयसम्	५.	मोक्ष देने वाले	अपरः	१४.	होगा
महत्।	६.	इस महान्	ततः ॥	११.	तो

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस बड़े कष्ट से किये हुये मोक्ष देने वाले इस महान् तप को छोटे-मोटे फलों की प्राप्ति के लिये करता है तो उससे बढ़कर मूर्ख कौन होगा ॥

एकादशः श्लोकः

यदासौ नियमेऽकल्पो जरया जातवेपथुः ।
आत्मन्यग्नीन् समारोप्य मच्चित्तोऽग्निं समाविशेत् ॥११॥

पदच्छेद—

यदा असौ नियमे अकल्पः जरया जात वे पथुः ।
आत्मनि अग्नीन् अग्नीन् समारोप्य मत् चित्तः अग्निम् समाविशत् ॥

शब्दार्थ—

यदा असौ	१.	वानप्रस्थी जब	आत्मनि	८.	भावना के द्वारा अपने अन्तः करण में
नियमे	२.	आश्रम के नियमों का	अग्नीन्	७.	यज्ञाग्नियों को
अकल्पः	३.	पालन करने में असमर्थ हो जाय	समारोप्य	९.	आरोपित करके
जरया	४.	और बुढ़ापे के कारण	मत् चित्तः	१०.	मन को मुझ में लगाकर
जात	६.	लगे, तब	अग्निम्	११.	अग्नि में
वे पथुः ।	५.	शरीर काँपने	समाविशत् ॥	१२.	प्रवेश कर जाय

श्लोकार्थ—वानप्रस्थी जब आश्रम के नियमों का पालन करने में असमर्थ हो जाय । और बुढ़ापे के कारण शरीर काँपने लगे, तब यज्ञाग्नियों को भावना के द्वारा अपने अन्तः करण में आरोपित करके मनको मुझ में लगाकर अग्नि में प्रवेश कर जाये ॥

द्वादशः श्लोकः

यदा कर्मविपाकेषु लोकेषु निरयात्मसु ।
विरागो जायते सम्यङ् न्यस्ताग्निः प्रव्रजेत्ततः ॥१२॥

पदच्छेद—

यदा कर्म विपाकेषु लोकेषु निरयात्म सु ।
विरागः जायते सम्यङ् न्यस्त अग्निः प्रव्रजेत्ततः ॥

शब्दार्थ—

यदा कर्म	१.	जब कर्मों के	जायते	७.	हो जाय, तब
विपाकेषु	२.	फल रूप प्राप्त होने वाले	सम्यङ्	५.	उनसे भली-भाँति
लोकेषु	३.	लोक	न्यस्त	९.	परित्याग करके
निरयात्म सु ।	४.	नरक के समान लगें और	अग्निः	८.	यज्ञाग्नियों का
विरागः	६.	वैराग्य	प्रव्रजेत्ततः ॥	१०.	संन्यास ले ले ।

श्लोकार्थ—जब कर्मों के फल रूप प्राप्त होने वाले लोक नरक के समान लगें, और उनसे भली-भाँति वैराग्य हो जाय, तब यज्ञाग्नियों का परित्याग करके संन्यास ले ले ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इष्ट्वा यथोपदेशं मां दत्त्वा सर्वस्वमृत्विजे ।
अग्नीन स्वप्राण आवेश्य निरपेक्षः परिव्रजेत् ॥१३॥

पदच्छेद— इष्ट्वा यथा उपदेशम् माम् दत्त्वा सर्वस्वम् ऋत्विजे ।
अग्नीन् स्व प्राण आवेश्य निरपेक्ष परिव्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

इष्ट्वा	४.	पूजन करके	ऋत्विजे	६.	ऋत्विज को
यथा	२.	के अनुसार	अग्नीन्	८.	यज्ञ की अग्नियों को
उपदेशम्	१.	पहले बताई विधि	स्व प्राण	९.	अपने प्राणों में
माम्	३.	मेरा	आवेश्य	१०.	लीन करले और फिर
दत्त्वा	७.	दे दे	निरपेक्ष	११.	किसी की अपेक्षा न करता हुआ
सर्वस्वम् ।	५.	अपना सब कुछ	परिव्रजेत् ॥	१२.	स्वच्छन्द विचरण करे

श्लोकार्थ—पहले बताई विधि के अनुसार मेरा पूजन करके अपना सब कुछ ऋत्विज को दे दे । यज्ञ की अग्नियों को अपने प्राणों में लीन कर ले; फिर किसी की अपेक्षा न करता हुआ स्वच्छन्द विचरण करे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

विप्रस्य वै संन्यसतो देवा दारादिरूपिणः ।
विघ्नान् कुर्वन्त्ययं ह्यस्मानाक्रम्य समियात् परम् ॥१४॥

पदच्छेद— विप्रस्य वै संन्यसतो देवा दारादि रूपिणः ।
विघ्नान् कुर्वन्ति अयम् हि अस्मान् आक्रम्य समियात् परम् ॥

शब्दार्थ—

विप्रस्य वै	१.	जब ब्राह्मण	कुर्वन्ति	७.	डालते हैं
संन्यसतो	२.	सन्यास लेने लगता है तो	अयम्	८.	यह तो
देवा	३.	देवता लोग	हि अस्मान्	९.	हम लोगों को
दारादि	४.	स्त्री,पुत्र, सगे सम्बन्धियों का	आक्रम्य	१०.	लाँघकर
रूपिणः ।	५.	रूप धारण करके	समियात्	१२.	प्राप्त होने जा रहा है
विघ्नान्	६.	उसके संन्यास में विघ्न	परम् ॥	११.	परमात्मा को

श्लोकार्थ—जब ब्राह्मण संन्यास लेने लगता है तो देवता लोग स्त्री-पुत्र-सगे सम्बन्धियों का रूप धारण करके उसके संन्यास में विघ्न डालते हैं । यह तो हम लोगों को लाँघ कर परमात्मा को प्राप्त होने जा रहा है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

बिभृयाच्चेन्मुनिर्वासः कौपीनाच्छादनं परम् ।
त्यक्तं न दण्डपात्राभ्यामन्यत् किञ्चिदनापदि ॥१५॥

पदच्छेद—

बिभृयात् चेत् मुनिः वासः कौपीन् आच्छादनम् परम् ।
त्यक्तम् न दण्डपात्राभ्याम् अन्यत् किञ्चित् अनापदि ॥

शब्दार्थ—

बिभृयात्	३.	धारण करे तो	त्यक्तम्	८.	को छोड़कर
चेत् मुनिः	१.	संन्यासी यदि	न	११	अपने पास न रखे
वासः	२.	वस्त्र	दण्डपात्राभ्याम्	७	आश्रमोचित दण्ड कमण्डलु
कौपीन	४.	केवल लंगोटी लगावे	अन्यत्	९	अन्य और
आच्छादनम्	६.	छोटा कपड़ा लपेट सकता है	किञ्चित्	१०.	कोई वस्तु
परम् ।	५.	उसके ऊपर	अनापदि ॥	१२.	यह नियम आपत्ति के अतिरिक्त सदा के लिये है

श्लोकार्थ—सन्यासी यदि वस्त्र धारण करे तो केवल लंगोटी लगावे, उसके ऊपर छोटा कपड़ा लपेट सकता है । आश्रमोचित दण्ड कमण्डलु को छोड़कर अन्य और कोई वस्तु अपने पास न रखे । यह नियम आपत्ति काल के अतिरिक्त सदा के लिये है ॥

षोडशः श्लोकः

दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं वस्त्रपूतं पिबेज्जलम् ।
सत्यपूतां वदेद् वाचं मनः पूतं समाचरेत् ॥१६॥

दच्छेद—

दृष्टिपूतम् न्यसेत् पादम् वस्त्रपूतम् पिबेत् जलम् ।
सत्यपूताम् वदेद् वाचम् मनः पूतम् समाचरेत् ॥

शब्दार्थ—

दृष्टिपूतम्	१.	नेत्रों से धरती देखकर	सत्यपूताम्	७.	सत्य से पवित्र हुई
न्यसेत्	३.	रखे	वदेद्	९.	बोले और
पादम्	२.	पैर	वाचम्	८.	वाणी
वस्त्र-	४.	कपड़े से	मनः	१०.	बुद्धि से
पूतम्	५.	छानकर	पूतम्	११.	सोच-विचार कर
पिबेत् जलम्	६.	जल पिये	समाचरेत् ॥	१२.	कार्य करे

श्लोकार्थ—नेत्रों से धरती देखकर पैर रखे, कपड़े से छानकर जल पिये । सत्य से पवित्र हुई वाणी बोले और बुद्धि से सोच-विचार कर प्रत्येक कार्य करे ॥

सप्तदशः श्लोकः

मौनानीहानिलायामा दण्डा वाग्देहचेतसाम् ।
न ह्येते यस्य सन्त्यङ्ग वेणुभिर्न भवेद् यतिः ॥१७॥

पदच्छेद—

मौन अनीहा अनिल आयामाः दण्डाः वाग्देह चेतसाम् ।
नहि एते यस्य सन्ति अङ्ग वेणुभिः न भवेत् यतिः ॥

शब्दार्थ—

मौन	२.	मौन	नहि एते	९.	ये तीनों दण्ड नहीं
अनीहा	३.	निश्चेष्ट स्थिति और	यस्य	८.	जिसके पास
अनिल	५.	प्राणों का	सन्ति	१०.	हैं
आयामाः	६.	प्राणायाम	अङ्ग	११.	प्यारे उद्धव !
दण्डाः	७.	दण्ड है	वेणुभिः	१२.	वह केवल बास का दण्ड धारण करने से
वाग्देह	१.	वाणी के लिये; शरीर के लिये	न भवेत्	१४.	नहीं हो जाते हैं
चेतसाम् ।	४.	मन के लिये	यतिः ॥	१३.	दण्डी स्वामी

श्लोकार्थ—वाणी के लिये, शरीर के लिये मौन निश्चेष्ट स्थिति और मन के लिये प्राणों का प्राणायाम दण्ड है । जिसके पास ये तीनों दण्ड नहीं हैं । प्यारे उद्धव ! वह केवल बांस का दण्ड धारण करने से दण्डी स्वामी नहीं हो जाते हैं ।

अष्टदशः श्लोकः

भिक्षां चतुर्षु वर्णेषु विगर्ह्यान् वर्जयंश्चरेत् ।
सप्तागारान संक्लृप्तांस्तुष्येल्लब्धेन तावता ॥१८॥

पदच्छेद—

भिक्षाम् चतुर्षु वर्णेषु विर्गह्यान् वर्जयन् चरेत् ।
सप्त आगारान् असंक्लृप्तान् संतुष्येत् लब्धेन तावता ॥

शब्दार्थ—

भिक्षाम्	८.	भिक्षा	सप्त	६.	सात
चतुर्षु	३.	चारों	आगारान्	७.	घरों से
वर्णेषु	४.	वर्णों में	असंक्लृप्तान्	५.	अनिश्चित
विर्गह्यान्	१.	संयासी पतिनों को	संतुष्येत्	१२.	सन्तुष्ट रहे
वर्जयन्	२.	छोड़कर	लब्धेन	१०.	जितना मिल जाय
चरेत् ।	९.	ग्रहण करे	तावता ॥	११.	उतने से ही

श्लोकार्थ—संन्यासी पतितों को छोड़कर चारों वर्णों में अनिश्चित सात घरों से भिक्षा ग्रहण करे । जितना मिल जाय उतने से ही सन्तुष्ट रहे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

बहिर्जलाशयं गत्वा तत्रोपस्पृश्य वाग्यतः ।
विभज्य पावितं शेषं भुञ्जीताशेषमाहृतम् ॥१६॥

पदच्छेद—

बहिः जलाशयम् गत्वा तत्र उपस्पृश्य वाग्यतः ।
विभज्य पावितम् शेषम् भुञ्जीत अशेषम् आहृतम् ॥

शब्दार्थ—

बहिः	१.	बस्ती के बाहर	विभज्य	६.	एवं विभक्त करके
जलाशयम्	२.	जलाशय पर	पावितम्	८.	पवित्र
गत्वा	३.	जाकर	शेषम्	१०.	जो बचे उसे
तत्र	४.	वहाँ	भुञ्जीत	१२.	खा ले
उपस्पृश्य	५.	आचमनादि करके	अशेषम्	७.	समस्त भिक्षान्न को
वाग्यतः ।	११.	मौन रहकर	आहृतम् ॥	६.	लाये हुये

श्लोकार्थ—बस्ती के बाहर जलाशय पर जाकर वहाँ आचमनादि करके लाये हुये समस्त भिक्षान्न को पवित्र एवं विभक्त करके जो बचे उसे मौन रहकर खा ले ॥

विंशः श्लोक

एकश्चरेन्महीमेतां निःसङ्गः संयतेन्द्रियः ।
आत्मक्रीड आत्मरत आत्मवान् समदर्शनः ॥२०॥

पदच्छेद—

एकः चरेत् महीम् एताम् निःसङ्गः संयत इन्द्रियः ।
आत्मक्रीडः आत्मरतः आत्मवान् सम दर्शनः ॥

शब्दार्थ—

एकः	१.	संन्यासी को अकेले ही	इन्द्रियः ।	६.	इन्द्रियों को
चरेत्	४.	विचरना चाहिये वह	आत्मक्रीडः	८.	अपने आप में ही मस्त रहे
महीम्	३.	पृथ्वी पर	आत्मरतः	६.	आत्म प्रेम में तन्मय रहे
एताम्	२.	इस	आत्मवान्	१०.	आत्मा में स्थित रहकर
निःसङ्गः	५.	आसक्ति रहित होकर	सम	११.	सर्वत्र समान
संयत	७.	अपने वश में रखे	दर्शनः ॥	१२.	दृष्टि रखे

श्लोकार्थ—संन्यासी को अकेले ही इस पृथ्वी पर विचरना चाहिये, वह आसक्ति रहित होकर इन्द्रियों को वश में रखे । अपने आप में ही मस्त रहे, आत्म प्रेम में तन्मय रहे, आत्मा में 'स्थित रहकर समान दृष्टि रखे ॥

एकविंशः श्लोकः

विविक्तक्षेमशरणो मद्भावविमलाशयः।
आत्मानं चिन्तयेदेकमभेदेन मया मुनिः ॥२१॥

पदच्छेद—

विविक्त क्षेम शरणः मत् भावः विमल आशयः।
आत्मानम् चिन्तयेत् एकम् अभेदेन मया मुनिः ॥

शब्दार्थ—

विविक्त क्षेम	२.	निर्जन और निर्भय होकर एकान्त स्थान में	आत्मानम्	८.	वह अपने आपको
शरणः	३.	रहना चाहिये	चिन्तयेत्	१२.	चिन्तन करे
मत्	४.	मेरे प्रति	एकम्	११.	अद्वितीय अखण्ड के रूप में
भावः	६.	भाव मुक्त होने के कारण	अभेदेन	१०.	अभिन्न और
विमल	७.	निर्मल होना चाहिये	मया	९.	मुझसे
आशयः।	५.	उसका हृदय	मुनिः ॥	१.	संन्यासी को

श्लोकार्थ—संन्यासी को निर्जन और निर्भय होकर एकान्त स्थान में रहना चाहिये। मेरे प्रति उसका हृदय भाव मुक्त होने के कारण निर्मल होना चाहिये। वह अपने आप को मुझसे अभिन्न और अद्वितीय अखण्ड के रूप में चिन्तन करे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अन्वीक्षेतात्मनो बन्धं मोक्षं च ज्ञाननिष्ठया।
बन्ध इन्द्रियविक्षेपो मोक्ष एषां च संयमः ॥२२॥

पदच्छेद—

अन्वीक्षेत आत्मानः बन्धम् मोक्षम् च ज्ञाननिष्ठया।
बन्धः इन्द्रियः विक्षेपः मोक्षः एषाम् च संयमः ॥

शब्दार्थ—

अन्वीक्षेत	६.	विचार करे और	बन्धः	९.	बन्धन है
आत्मानः	२.	चित्त के	इन्द्रियः	७.	निश्चय करे कि इन्द्रियों का
बन्धम्	३.	बन्धन	विक्षेपः	८.	विषयों के लिये विक्षिप्त होना
मोक्षम्	५.	मोक्ष पर	मोक्षः	१२.	मोक्ष है
च	४.	और	एषाम् च	१०.	और उनको
ज्ञाननिष्ठया।	१.	वह अपनी ज्ञान निष्ठा से	संयमः ॥	११.	संयम में रखना

श्लोकार्थ—वह अपनी ज्ञान निष्ठा से चित्त के बन्धन और मोक्ष पर विचार करे, और निश्चय करे कि इन्द्रियों का विषयों के लिये विक्षिप्त होना बन्धन है। और उनको संयम में रखना मोक्ष है ॥

त्रयोविंशः श्लोक

तस्मान्नियम्य षड्वर्गं मद्भावेन चरेन्मुनिः ।
विरक्तः क्षुल्लकामेभ्यो लब्ध्वाऽऽत्मनि सुखं महत् ॥२३॥

पदच्छेद—

तस्मात् नियम्य षड्वर्ग मत् भावेन चरेत् मुनिः ।
विरक्तः क्षुल्ल कामेभ्यः लब्ध्वा आत्मनि सुख महत् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	विरक्तः	७.	उनकी ओर से मुँह मोड़ ले और
नियम्य	४.	जीत ले	क्षुल्ल	६.	क्षुद्रता समझकर
षड्वर्ग	३.	मन और पाँचों ज्ञानेन्द्रियों को	कामेभ्यः	५.	भोगों की
मत्	१२.	वह मेरी	लब्ध्वा	११.	अनुभव करे
भावेन	१३.	भावना से भर कर	आत्मनि	८.	अपने आप में ही
चरेत्	१४.	पृथ्वी में विचरता रहे	सुख	१०.	सुख का
मुनिः ।	२.	सन्यासी को चाहिये	महत् ॥	९.	परम

श्लोकार्थ—इसलिये सन्यासी को चाहिये कि मन और पाँचों इन्द्रियों को जीत ले, भोगों को क्षुद्रता समझकर उनकी ओर से मुँह मोड़ ले। और अपने आप में ही परम सुख का अनुभव करे। वह मेरी भावना से भर कर पृथ्वी में विचरता रहे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

पुरग्रामव्रजान् सार्थान् भिक्षार्थं प्रविशंश्चरेत् ।
पुण्यदेशसरिच्छैलवनाश्रमवतीं महीम् ॥२४॥

पदच्छेद—

पुर ग्राम व्रजान् सार्थान् भिक्षार्थम् प्रविशन् चरेत् ।
पुण्यदेश सरित् शैल वन आश्रमवतीम् महीम् ॥

शब्दार्थ—

पुर ग्राम	२.	नगर-गाँव	पुण्यदेश	६.	संन्यासी पवित्र, देश
व्रजान्	३.	अहीरों की बस्तियाँ	सरित्	७.	नदी
सार्थान्	४.	यात्रियों की टोली में	शैल	८.	पर्वत
भिक्षार्थम्	१.	भिक्षा के लिये	वन	९.	वन और
प्रविशन्	५.	प्रवेश करता हुआ	आश्रमवतीम्	१०.	आश्रमों से पूर्ण
चरेत् ।	१२.	विचरण करे	महीम् ॥	११.	पृथ्वी पर

श्लोकार्थ—भिक्षा के लिये नगर-गाँव, अहीरों की बस्तियाँ यात्रियों की टोली में प्रवेश करता हुआ संन्यासी पवित्र देश, नदी, पर्वत, वन और आश्रमों से पूर्ण पृथ्वी पर विचरण करे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

वानप्रस्थाश्रमपदेष्वभीक्ष्णं भैक्ष्यमाचरेत् ।
संसिध्यत्याश्वसंमोहः शुद्धसत्त्वः शिलान्धसा ॥२५॥

पदच्छेद—

वानप्रस्थ आश्रम पदेषु अभीक्षणम् भैक्ष्यम् आचरेत् ।
संसिध्यति आशु असंमोहः शुद्ध सत्त्वः शिलान्धसा ॥

शब्दार्थ—

वानप्रस्थ	३. वानप्रस्थियों के	संसिध्यति	१२.	सिद्धि प्राप्त होती है
आश्रम	४. आश्रम	आशु	११.	शीघ्र ही
पदेषु	५. स्थानों से ही	असंमोहः	१०.	मोह का विनाश होकर
अभीक्षणम्	२ अधिकतर	शुद्ध	९.	शुद्धि और
भैक्ष्यम्	१. भिक्षा को भी	सत्त्वः	८.	चित्त की
आचरेत् ।	६. ग्रहण करे (क्योंकि)	शिलान्धसा ॥	७.	कटे खेतों के दानों से बनी भिक्षा द्वारा

श्लोकार्थ—भिक्षा को भी अधिकतर वानप्रस्थियों के आश्रम स्थानों से ही ग्रहण करे। क्योंकि कटे खेतों के दानों से बनी भिक्षा द्वारा चित्त की शुद्धि और मोह का विनाश होकर शीघ्र ही सिद्धि प्राप्त होती है ॥

षट्विंशः श्लोकः

नैतद् वस्तुतया पश्येद् दृश्यमानं विनश्यति ।
असक्तचित्तो विरमेदिहामुत्र चिकीर्षितात् ॥२६॥

पदच्छेद—

न एतद् वस्तुतया पश्येत् दृश्यमानम् विनश्यति ।
आसक्त चित्तः विरमेत् इह अमुत्र चिकीर्षितात् ॥

शब्दार्थ—

न	४. कभी न	आसक्त	८.	कहीं न लगावे
एतद्	२. इस जगत को	चित्तः	७.	अपने चित्त को
वस्तुतया	३. सत्य वस्तु	विरमेत्	१२.	विरक्त हो जाये
पश्येत्	५. समझे, क्योंकि यह	इह	९.	इस लोक और
दृश्यमानम्	१. विचारवान संन्यासी दृश्यमान्	अमुत्र	१०.	परलोक में
विनश्यति ।	६. प्रत्यक्ष ही नाशवान है	चिकीर्षितात् ॥	११.	जो कुछ करने की इच्छा हो उससे

श्लोकार्थ—विचारवान संन्यासी दृश्यमान् इस जगत को सत्य वस्तु कभी न समझे; क्योंकि यह प्रत्यक्ष ही नाशवान है। अपने चित्त को कहीं न लगावें, इस लोक और परलोक में जो कुछ इच्छा हो उससे विरक्त हो जावे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यदेतदात्मनि जगन्मनोवाक्प्राणसंहतम् ।
सर्वं मायेति तर्केण स्वस्थस्त्यक्त्वा न तत् स्मरेत् ॥२७॥

पदच्छेद— यत् एतत् आत्मनि जगत् मनोवाक् प्राण प्राण संहतम् ।
सर्वम् माया इति तर्केण स्वस्थः त्यक्त्वान तत् स्मरेत् ॥

शब्दार्थ—

यत्	५.	यह	सर्वम्	८.	वह सब
एतत्	६.	जो कुछ	माया इति	९.	माया ही है
आत्मनि	१.	आत्मा में	तर्केण	१०.	ऐसा तर्क से विचार करके
जगत्	७.	संसार है	स्वस्थः	१४.	अपने स्वरूप में स्थिर हो जाये
मनोवाक्	२.	मन, वाणी और	त्यक्त्वान	११.	उसका त्याग कर दे
प्राण	३.	प्राणों का	तत्	१३.	न करे और
संहतम् ।	४.	सङ्घात रूप	स्मरेत् ॥	१२.	फिर कभी उसका स्मरण तक

श्लोकार्थ—आत्मा में मन, वाणी और प्राणों का सङ्घात रूप यह जो कुछ संसार है । वह सब माया ही है । ऐसा तर्क से विचार करके उसका त्याग कर दे, फिर कभी उसका स्मरण तक न करे; और अपने स्वरूप में स्थिर हो जावे ॥

अष्टविंशः श्लोकः

ज्ञाननिष्ठो विरक्तो वा मद्भक्तो वानपेक्षकः ।
सलिङ्गानाश्रमांस्त्यक्त्वा चरेदविधिगोचरः ॥२८॥

पदच्छेद— ज्ञाननिष्ठः विरक्तः वा मत् भक्तः वा अनपेक्षकः ।
सलिङ्गान् आश्रमान् त्यक्त्वा चरेत् अविधि गोचरः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञाननिष्ठः	१.	ज्ञाननिष्ठ	सलिङ्गान्	८.	उनके चिह्नों को
विरक्तः	२.	विरक्त मुमुक्षु	आश्रमान्	७	आश्रमों और
वा	३.	अथवा	त्यक्त्वा	९.	छोड़कर
मत्	५.	मेरा	चरेत्	१२.	स्वच्छन्द विचरण करे
भक्त	६.	भक्त	अविधि	१०.	वेद-शास्त्र के विधि-निषेधों
वाअनपेक्षकः ।	४.	मोक्ष की भी अपेक्षा न रखने वाला	गोचरः ॥	११.	से परे होकर

श्लोकार्थ—ज्ञाननिष्ठ विरक्त मुमुक्षु अथवा मोक्ष की भी अपेक्षा न रखने वाला मेरा भक्त आश्रमों और उनके चिह्नों को छोड़कर वेद शास्त्र के विधि निषेधों से परे होकर स्वच्छन्द विचरण करे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

बुधो बालकवत् क्रीडेत् कुशलो जडवच्चरेत् ।
वदेदुन्मत्तवद् विद्वान् गोचर्यां नैगमश्चरेत् ॥२९॥

पदच्छेद—

बुधः बालकवत् क्रीडेत् कुशलः जडवत् चरेत् ।
वदेत् उन्मत्त वत् विद्वान् गोचर्याम् नैगमः चरेत् ॥

शब्दार्थ—

बुधः	१. वह बुद्धिमान हो कर भी	वदेत्	९. बातचीत करे और		
बालकवत्	२. बालकों के समान	उन्मत्तवत्	८. पागल के समान		
क्रीडेत्	३. खेले	विद्वान्	७. विद्वान होकर भी		
कुशलः	४. निपुण होकर भी	गोचर्याम्	११. पशु की वृत्ति से		
जडवत्	५. जड़ के समान	नैगमः	१०. वेद-विधि का जानकार होकर भी		
चरेत् ।	६. रहे	चरेत् ॥	१२. रहे		

श्लोकार्थ—वह बुद्धिमान होकर भी बालकों के समान खेले, निपुण होकर भी जड़ के समान रहे; विद्वान होकर भी पागल के समान बातचीत करे, और वेद-विधि जानकार होकर भी पशु वृत्ति से रहे ॥

त्रिंशः श्लोकः

वेदवादरतो न स्यान्न पाखण्डी न हैतुकः ।
शुष्कवादविवादे न कञ्चित् पक्षं समाश्रयेत् ॥३०॥

पदच्छेद—

वेद वादरतः न स्यात् न पाखण्डी न हैतुकः ।
शुष्क वाद विवादे न कश्चित् पक्षम् समाश्रयेत् ॥

शब्दार्थ—

वेद	१. वेदों के	शुष्क	६. जहाँ कोरा
वादरतः	२. कर्मकाण्ड की व्याख्या में	वाद-विवादे	७. वाद-विवाह हो वहाँ
न स्यात्	३. न लगे	न कश्चित्	८. कोई भी
न पाखण्डी	४. पाखण्ड न करे	पक्षम्	९. पक्ष
न हैतुकः ।	५. तर्क-वितर्क से बचे	समाश्रयेत् ॥	१०. न ले

श्लोकार्थ—वेदों के कर्मकाण्ड की व्याख्या में न लगे, पाखण्ड न करे, तर्क-वितर्क के बचे; जहाँ कोरा वाद-विवाद हो वहाँ कोई भी पक्ष न ले ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

नोद्विजेत जनाद् धीरो जनं चोद्वेजयेन्न तु ।
अतिवादांस्तितिक्षेत नावमन्येत कञ्चन ।
देहमुद्दिश्य पशुवद् वैरं कुर्यान्न केनचित् ॥३१॥

पदच्छेद— नः उद्विजेत जनात् धीरः जनम् च उद्विजयेत् न तु ।
अतिवादान् तितिक्षेत् न अवमन्येत् कञ्चन ।
देहम् उद्दिश्य पशुवत् वैरम् कुर्यात् न केनचित् ॥

शब्दार्थ—

नः उद्विजेत्	३. उद्विग्न न हो और	कञ्चन ।	९.	अपमान
जनात्	२. किसी भी प्राणी से	देहम्	८.	किसी का
धीरः	१. इतना धैर्यवान् हो कि	उद्दिश्य	११.	इस शरीर के लिये
जनम्	४. स्वयं किसी प्राणी को	पशुवत्	१२.	पशु के समान
च उद्विजयेत् न तु ।	५. उद्विग्न न करे	वैरम्	१४.	वैर
अतिवादान्	६. कोई उसकी निन्दा करे	कुर्यात्	१६.	करे
तितिक्षेत्	७. तो प्रसन्नता से सह ले	न	१५.	न
न अवमन्येत्	१०. न करे	केनचित् ॥	१३.	किसी से भी

श्लोकार्थ—इतना धैर्यवान् हो कि किसी भी प्राणी से उद्विग्न न हो, और स्वयं किसी प्राणी को उद्विग्न न करे कोई उसकी निन्दा न करे तो प्रसन्नता से सह ले; किसी का अपमान न करे। इस शरीर के लिये पशु के समान किसी से भी वैर न करे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

एक एव परो ह्यात्मा भूतेष्वात्मन्यवस्थितः ।
यथेन्दुरुदपात्रेषु भूतान्येकात्मकानि च ॥३२॥

पदच्छेद— एक एव परः हि आत्मा भूतेषु आत्मनि अवस्थितः ।
यथाइन्दु उद पात्रेषु भूतानि एकात्मकानि च ॥

शब्दार्थ—

एक एव	४. वैसे ही एक	यथाइन्दु	१.	जैसे एक ही चन्द्रमा
परः हि आत्मा	५. परमात्मा	उद	२.	जल से भरे हुये
भुतेषु	६. समस्त प्राणियों में	पात्रेषु	३.	विभिन्न पात्रों में दिखाई देता है
आत्मनि	७. और अपने में भी	भुतानि	९.	पञ्चभूतों से बने
अवस्थितः ।	८. स्थित है क्योंकि	एकात्मकानि च ॥	१०.	सब के शरीर भी तो एक ही हैं

श्लोकार्थ—जैसे एक ही चन्द्रमा जल से भरे हुये पात्रों में दिखाई देता है। वैसे ही एक परमात्मा समस्त प्राणियों में और अपने में भी स्थिति है। क्योंकि पञ्चभूतों से बने सब के शरीर भी तो एक ही हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अलब्ध्वा न विषीदेत काले कालेऽशनं क्वचित् ।
लब्ध्वा न हृष्येद् धृतिमानुभयं दैवतन्त्रितम् ॥३३॥

पदच्छेद—

अलब्धा न विषीदेत काले-काले अशनम् क्वचित् ।
लब्ध्वा न हृष्येत् धृतिमान् उभयम् दैव तन्त्रितम् ॥

शब्दार्थ—

अलब्धा	४.	न मिलने पर	लब्ध्वा	७.	मिलने पर
न	६.	नहीं होना चाहिये और	न हृष्येत्	८.	हर्षित न होना चाहिये
विषीदेन	५.	दुःखी	धृतिमान्	९.	वह धैर्य रखे, और
काले-काले	२.	समय पर	उभयम्	१०.	हर्ष-विषाद दोनों को
अशनम्	३.	भोजन के	दैव	११.	प्रारब्ध के
क्वचित् ।	१.	सन्यासी को कभी	तन्त्रितम् ॥	१२.	अधीन समझे

श्लोकार्थ—संन्यासी को कभी समय पर भोजन के न मिलने पर हर्षित नहीं होना चाहिये, वह धैर्य रखे हर्ष-विषाद दोनों को प्रारब्ध के अधीन समझे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

आहारार्थं समीहेत युक्तं तत् प्राणधारणम् ।
तत्त्वं विमृश्यते तेन तद् विज्ञाय विमुच्यते ॥३४॥

पदच्छेद—

आहार अर्थम् समीहेत युक्तम् तत् प्राण धारणम् ।
तत्त्वम् विमृश्येत् तेन तत् विज्ञाय विमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

आहार	१.	भोजन के	तत्त्वम्	८.	तत्त्व का
अर्थम्	२.	लिये	विमृश्येत्	९.	विचार होता है
समीहेत्	३.	भिक्षा माँगनी चाहिये	तेन	७.	प्राण रहने से ही
युक्तम् तत्	४.	ऐसा करना उचित है	तत्	१०.	तत्त्व विचार से
प्राण	५.	भिक्षा से प्राणों की	विज्ञाय	११.	तत्त्व ज्ञान होने से
धारणम् ।	६.	रक्षा होती है	विमुच्यते ॥	१२.	मुक्ति होती है

श्लोकार्थ—भोजन के लिये भिक्षा माँगनी चाहिये ऐसा करना उचित है । भिक्षा से प्राणों की रक्षा होती है । प्राण रहने से ही तत्त्व का विचार से तत्त्व ज्ञान होने से मुक्ति होती है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

यदृच्छयोपपन्नान्नमद्याच्छ्रेष्ठमुतापरम् ।
तथा वासस्तथा शय्यां प्राप्तं प्राप्तं भजेन्मुनिः ॥३५॥

पदच्छेद—

यदृच्छया उपपन्ना अन्नम् अद्यात् श्रेष्ठम् उतअपरम् ।
तथा वासः तथा शय्याम् प्राप्तम्-प्राप्तम् भजेत् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

यदृच्छया	२.	प्रारब्ध के अनुसार	तथा वासः	८.	जैसा वस्त्र
उपपन्ना	३.	प्राप्त हुई भिक्षा का	तथा शय्याम्	१०.	जैसा बिछौना
अन्नम्	४.	अन्न	प्राप्तम्	९.	मिले और
अद्यात्	७.	खाना चाहिये	प्राप्तम्	११.	मिल जाय
श्रेष्ठम्	५.	अच्छे	भजेत्	१२.	उसी से काम चला ले
उतअपरम् ।	६.	या बुरे का विचार किये बिना ही	मुनिः ॥	१.	संन्यासी को

श्लोकार्थ—संन्यासी को प्रारब्ध के अनुसार प्राप्त हुई भिक्षा का अन्न अच्छे या बुरे का विचार किये बिना ही खाना चाहिये। जैसा वस्त्र मिले और जैसा बिछौना मिल जाय उसी से काम चला ले ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

शौचमाचमनं स्नानं न तु चोदनया चरेत् ।
अन्यांश्च नियमाञ्ज्ञानी यथाहं लीलयेश्वरः ॥३६॥

पदच्छेद—

शौचम् आचमनम् स्नानम् न तु चोदनया चरेत् ।
अन्यान् च नियमान् ज्ञानी यथा अहम् लीलया ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

शौचम्	५.	शौच	अन्यान् च	८.	और दूसरे
आचमनम्	६.	आचमन	नियमान्	९.	नियमों का आचरण करें
स्नानम्	७.	स्नान	ज्ञानी	४.	वैसे ही ज्ञान निष्ठ पुरुष भी
न तु	११.	न	यथा अहम्	१.	जैसे मैं
चोदनया	१०.	किसी की प्रेरणा से	लीलया	३.	अपनी लीला से ही नियमों का पालन करता हूँ
चरेत् ।	१२.	करे	ईश्वरः ॥	२.	परमेश्वर होने पर भी

श्लोकार्थ—जैसे मैं परमेश्वर होने पर भी अपनी लीला से ही नियमों का पालन करता हूँ। वैसे ही ज्ञान निष्ठ पुरुष भी शौच, आचमन, स्नान और दूसरे नियमों का आचरण करे, किन्तु किसी की प्रेरणा से न करे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

न हि तस्य विकल्पाख्या या च मद्वीक्षया हता ।
आदेहान्तात् क्वचित् ख्यातिस्ततः सम्पद्यते मया ॥३७॥

पदच्छेद—

नहि तस्य विकल्प आख्या या च मत् वीक्षया हता ।
आदेह अन्तात् क्वचित् ख्यातिः ततः समपद्यते मया ॥

शब्दार्थ—

नहि	३.	नहीं होती	आदेह	६.	शरीर के
तस्य	१.	ज्ञान निष्ठ पुरुष को	अन्तात्	१०.	अन्त तक
विकल्प आख्या	२.	भेद की प्रतीति हो	क्वचित्	८.	यदि कभी
या च	४.	जो पहले थी वह	ख्यातिः	११.	बाधित भेद की प्रतीति होती है
मत्	५.	मुझ सर्वात्माके	ततः	१२.	तब भी
वीक्षया	६.	साक्षात्कार से	समपद्यते	१४.	एक हो जाता है
हता ।	७.	नष्ट हो गई	मया ॥	१३.	देह पात हो जाने पर मुझसे

श्लोकार्थ—ज्ञान निष्ठ पुरुष को भेद की प्रतीति ही नहीं होती है । जो पहले थी वह मुझ सर्वात्मा के साक्षात्कार से नष्ट हो गई । यदि कभी शरीर के अन्त तक बाधित भेद की प्रतीति होती है । तब भी देह पात हो जाने पर मुझ से एक हो जाता है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

दुःखोदर्केषु कामेषु जातनिर्वेद आत्मवान् ।
अजिज्ञासितमद्धर्मो गुरुं मुनिमुपाव्रजेत् ॥३८॥

पदच्छेद—

दुःख उदर्केषु कामेषु जात निर्वेद आत्मवान् ।
आजिज्ञासित मद्धर्मे गुरुम् मुनिम् उपाव्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

दुःख	२.	दुःखदायी	अजिज्ञासित	७.	न जानता हो तो
उदर्केषु	१.	परिणाम में	मद्धर्मे	६.	यदि मेरी प्राप्ति के साधनों को
कामेषु	३.	विषय-भोगों के प्रति	गुरुम्	६.	सद्गुरु के
जातनिर्वेद	४.	उत्पन्न हुई विरक्ति वाला	मुनिम्	८.	ब्रह्मनिष्ठ
आत्मवान् ।	५.	जितेन्द्रिय पुरुष	उपाव्रजेत् ॥	१०.	पास जाय

श्लोकार्थ—परिणाम में दुःखदायी विषय भोगों के प्रति उत्पन्न हुई विरक्ति वाला जितेन्द्रिय पुरुष यदि मेरी प्राप्ति के धनों को न जानता हो तो ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु के पास जाय ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

तावत् परिचरेद् भक्तः श्रद्धावाननसूयकः ।
यावद् ब्रह्म विजानीयान्मामेव गुरुमादृतः ॥३९॥

पदच्छेद—

तावत् परिचरेत् भक्तः श्रद्धावान् अनसूयकः ।
यावत् ब्रह्म विजानीयात् माम् एव गुरुम् आदृतः ॥

शब्दार्थ—

तावत्	७.	तब-तक	ब्रह्म	५.	ब्रह्म का
परिचरेत्	१२.	उनकी सेवा करे	विजानीयात्	६.	ज्ञान हो
भक्तः	१.	वह गुरु की दृढ़ भक्ति करे	माम्	९.	मुझे
श्रद्धावान्	२.	श्रद्धा रखे और	एव	१०.	ही
अनसूयकः	३.	उनमें दोष न निकाले	गुरुम्	११.	गुरु के रूप में जानकर
यावत्	४.	जब-तक	आदृतः ॥	८.	बड़े आदर से

श्लोकार्थ- वह गुरु की दृढ़ भक्ति करे, श्रद्धा रखे और उनमें दोष न निकाले जब-तक ब्रह्म का ज्ञान हो तब-तक बड़े आदर से मुझे ही गुरु के रूप में जानकर उनकी सेवा करे ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

यस्त्वसंयतषड्वर्गः प्रचण्डेन्द्रियसारथिः ।
ज्ञानवैराग्यरहितस्त्रिदण्डमुपजीवति ॥४०॥

पदच्छेद —

यः तु असंयत षड्वर्गः प्रचण्ड इन्द्रिय सारथिः ।
ज्ञान वैराग्य रहितः त्रिदण्डम् उप जीवति ॥

शब्दार्थ—

यः तु	१.	जिसने	ज्ञान	७.	जो ज्ञान और
असंयत	३.	विजय नहीं प्राप्त की है	वैराग्य	८.	वैराग्य से
षड्वर्गः	२.	पाँच इन्द्रियों और मन पर	रहितः	९.	रहित है और यदि
प्रचण्ड	६.	बिगड़े हुये हैं	त्रिदण्डम्	१०.	त्रिदण्डी संन्यासी का वेष बनाकर
इन्द्रिय	४.	जिसके इन्द्रिय रूपी घोड़े	उपजीवति ॥	११.	पेट पालता है तो वह संन्यास धर्म का सर्व नाश करता है
सारथिः ।	५.	और बुद्धि रूपी सारथी			

श्लोकार्थ—जिसने पाँच इन्द्रियों और मन पर विजय नहीं प्राप्त की है। जिसके इन्द्रिय रूपी घोड़े और बुद्धि रूपी सारथी बिगड़े हुये हैं, जो ज्ञान और वैराग्य से रहित है और यदि त्रिदण्डी संन्यासी का वेष बनाकर पेट पालता है। (तो वह संन्यासी धर्म का सर्वनाश करता है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

सुरानात्मानमात्मस्थं निह्नुते मां च धर्महा ।
अविपक्वकषायोऽस्मादमुष्माच्च विहीयते ॥४१॥

पदच्छेद—

सुरान् आत्मानम् आत्मस्थम् निह्नुते माम् च धर्महा ।
अविपक्व कषायः अस्मात् अमुष्मात् च विहीयते ॥

शब्दार्थ—

सुरान्	१. वह देवताओं को	अविपक्व	८. क्षीण नहीं होती, व		
आत्मानम्	२. अपने आपको	कषायः	७. उसकी वासनायें		
आत्मस्थम्	४. अपने हृदय में स्थित	अस्मात्	९ इस लोक		
निह्नुते	५. ठगने की चेष्टा करता है वह	अमुष्मात्	११. परलोक दोनों से		
माम् च	३. मुझको एवम्	च	१०. और		
धर्महा ।	६. संन्यास धर्म का नाश करता है	विहीयते ॥	१२. हाथ धो बैठता है		

श्लोकार्थ—वह देवताओं को, अपने आपको एवम् अपने हृदय में स्थित मुझको ठगने की चेष्टा करता है, वह संन्यास धर्म का नाश करता है । उसकी वासनायें क्षीण नहीं होती, वह इस लोक और परलोक दोनों से हाथ धो बैठता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

भिक्षोर्धर्मः शमोऽहिंसा तप ईक्षा वनौकसः ।
गृहिणो भूतरक्षेज्या द्विजस्याचार्यसेवनम् ॥४२॥

पदच्छेद—

भिक्षोः धर्मः शमः अहिंसा तप ईक्षा वन औकसः ।
गृहिणः भूत रक्षाज्या द्विजस्य आचार्य सेवनम् ॥

शब्दार्थ—

भिक्षोर्धर्मः	१. संन्यासी का मुख्य धर्म है	गृहिणः	७. गृहस्थ का धर्म है
शमः	२. शान्ति और	भूत	८. प्राणियों की
अहिंसा	३. अहिंसा	रक्षाज्या	९. रक्षा और यज्ञ-याग
तप	५. तपस्या और	द्विजस्य	१०. ब्रह्मचारी का धर्म है
ईक्षा	६. भगवद्भाव !	आचार्य	११. आचार्य की
वन औकसः ।	४. वानप्रस्थी का धर्म है	सेवनम् ॥	१२. सेवा करना

श्लोकार्थ—संन्यासी का मुख्य धर्म है, शान्ति और अहिंसा, वानप्रस्थी का धर्म है, तपस्या और भगवद्भाव ! गृहस्थ का धर्म है, प्राणियों की रक्षा और यज्ञ-याग, ब्रह्मचारी का धर्म है; आचार्य की सेवा करना ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

ब्रह्मचर्यं तपः शौचं सन्तोषो भूतसौहृदम् ।
गृहस्थस्याप्यृतौ गन्तुः सर्वेषां मदुपासनम् ॥४३॥

पदच्छेद—

ब्रह्मचर्यम् तपः शौचम् सन्तोषः भूत सौहृदम् ।
गृहस्थस्य अपि ऋतौ गन्तुः सर्वेषाम् मत् उपासनम् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मचर्यम्	५.	उसके लिये भी ब्रह्मचर्य	गृहस्थस्य	१.	गृहस्थ
तपः	६.	तपस्या	अपि	२.	भी केवल
शौचम्	७.	शौच	ऋतौ	३.	ऋतुकाल में ही
सन्तोषः	८.	सन्तोष और	गन्तुः	४.	अपनी स्त्री का सहवास करे
भूत	९.	समस्त प्राणियों के प्रति	सर्वेषाम्	१२.	सभी को करनी चाहिये
सौहृदम् ।	१०.	प्रेम-भाव ये मुख्य धर्म हैं	मत्उपासनम् ॥	११.	मेरी उपासना तो

श्लोकार्थ—गृहस्थ भी केवल ऋतु काल में ही अपनी स्त्री का सहवास करे। उसके लिये भी ब्रह्मचर्य, तपस्या, शौच, सन्तोष और समस्त प्राणियों के प्रति प्रेम-भाव ये मुख्य धर्म हैं। मेरी उपासना तो सभी को करनी चाहिये ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

इति मां यः स्वधर्मेण भजन् नित्यमनन्यभाक् ।
सर्वभूतेषु मद्भावो मद्भक्तिं विन्दते दृढाम् ॥४४॥

पदच्छेद—

इति माम् यः स्वधर्मेण भजन् नित्यम् अनन्यभाक् ।
सर्वभूतेषु मत् भावः मत्भक्तिम् विन्दते दृढाम् ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	सर्वभूतेषु	८.	समस्त प्राणियों में
माम्	६.	मेरी	मत्	९.	मेरी
यः	१.	जो पुरुष	भावः	१०.	भावना करता है
स्वधर्मेण	४.	अपने वर्णाश्रम धर्म के द्वारा	मत्भक्तिम्	१२.	भक्ति
भजन्	७.	सेवा में लगा रहता है और	विन्दते	१३.	प्राप्त हो जाती है
नित्यम्	५.	नित्य	दृढाम् ॥	११.	उसे मेरी अविचल
अनन्यभाक् ॥	३.	अनन्य भाव से			

श्लोकार्थ—जो पुरुष इस प्रकार अनन्य भाव से अपने वर्णाश्रम धर्म के द्वारा नित्य मेरी सेवा में लगा रहता है। और समस्त प्राणियों में मेरी भावना करता है। उसे मेरी अविचल भक्ति प्राप्त हो जाती है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

भक्त्योद्धवानपायिन्या सर्वलोकमहेश्वरम् ।
सर्वोत्पत्त्यप्ययं ब्रह्म कारणं मोपयाति सः ॥४५॥

पदच्छेद—

भक्त्या उद्धव अनपायित्वा सर्वलोक महेश्वरम् ।
सर्वउत्पत्ति अप्ययम् ब्रह्मकारणम् मा उपयाति सः ॥

शब्दार्थ—

भक्त्या	८.	अखण्ड भक्ति के द्वारा	सर्वउत्पत्ति	४.	सब की उत्पत्ति और
उद्धव	१.	उद्धव जी !	अप्ययम्	५.	प्रलय का
अनपायित्वा	७.	नित्य बढ़ने वाली	ब्रह्मकारणम्	६.	परम कारण ब्रह्म हूँ
सर्वलोक	२.	मैं सम्पूर्ण लोकों का	मा उपयाति	१०.	मुझे प्राप्त कर लेता है
महेश्वरम् ।	३.	एक मात्र स्वामी	सः ॥	९.	वह

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! मैं सम्पूर्ण लोकों का एक मात्र स्वामी सब की उत्पत्ति और प्रलय का परम कारण ब्रह्म हूँ । नित्य बढ़ने वाली अखण्ड भक्ति के द्वारा वह मुझे प्राप्त कर लेता है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

इति स्वधर्मनिर्णिक्तसत्त्वो निर्ज्ञातमद्गतिः ।
ज्ञानविज्ञानसम्पन्नो नचिरात् समुपैति माम् ॥४६॥

पदच्छेद—

इति स्वधर्म निर्णिक्तसत्त्वः निर्ज्ञात मत् गतिः ।
ज्ञान विज्ञान सम्पन्नः नचिरात् समउपैति माम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार गृहस्थ	ज्ञान	७.	ज्ञान
स्वधर्म	२.	अपने धर्म पालन के द्वारा	विज्ञान	८.	विज्ञान से
निर्णिक्तसत्त्वः	३.	शुद्ध अन्तःकरण होकर	सम्पन्नः	९.	सम्पन्न हो कर
निर्ज्ञात	६.	जान लेता है और	नचिरात्	१०.	शीघ्र ही
मत्	४.	मेरे	समउपैति	१२.	प्राप्त कर लेता है
गतिः ।	५.	ऐश्वर्य स्वरूप को	माम् ॥	११.	मुझे

श्लोकार्थ—इस प्रकार गृहस्थ अपने धर्म पालन के द्वारा शुद्ध अन्तःकरण होकर मेरे ऐश्वर्य स्वरूप को जान लेता है । और ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न होकर शीघ्र ही मुझे प्राप्त कर लेता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

वर्णाश्रमवतां धर्म एष आचारलक्षणः ।
स एव मद्भक्तियुतो निःश्रेयसकरः परः ॥४७॥

पदच्छेद—

वर्णाश्रमवताम् धर्मः एषः आचार लक्षणः ।
सः एव मत् भक्ति युतः निः श्रेयसकरः परः ॥

शब्दार्थ—

वर्णाश्रमवताम्	४.	वर्णाश्रमियों का	सः एव	६.	यदि इसी धर्म में
धर्मः	५.	धर्म बतलाया है	मत् भक्ति	७.	मेरी भक्ति का
एषः	१.	मैंने तुम्हें यह	युतः	८.	पुट लग जाय
आचार	२.	सदाचार	निः श्रेयसकरः	१०.	कल्याण की प्राप्ति हो जाय
लक्षणः ।	३.	रूप	परः ॥	९.	तब तो उसे परम्

श्लोकार्थ—मैंने तुम्हें यह सदाचार रूप वर्णाश्रमियों का धर्म बतलाया है । यदि इसी धर्म में मेरी भक्ति का पुट लग जाय, तब तो उसे परम कल्याण की प्राप्ति हो जाय ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

एतत्तेऽभिहितं साधो भवान् पृच्छति यच्च माम् ।
यथा स्वधर्मसंयुक्तो भक्तो मां समियात् परम् ॥४८॥

पदच्छेद—

एतत् ते अभिहितम् साधो भवान् पृच्छति यत् च माम् ।
यथा स्वधर्म संयुक्तः भक्तः माम् समियात् परम् ॥

शब्दार्थ—

एतत् ते	६.	आपको यह सब	यथा	८.	जिस प्रकार
अभिहितम्	७.	बता दिया	स्वधर्म	९.	अपने धर्म का
साधो	१.	साधु स्वभाव उद्धव !	संयुक्तः	१०.	पालन करके
भवान्	२.	आपने	भक्तः	११.	भक्त पुरुष
पृच्छति	५.	प्रश्न किया था उस सम्बन्ध में	माम्	१२.	मुझ
यत् च	४.	जो	समियात्	१४.	प्राप्त कर लेते हैं
माम् ।	३.	मुझसे	परम् ॥	१३.	पर ब्रह्म को

श्लोकार्थ—साधु स्वभाव उद्धव ! आपने मुझ से जो प्रश्न किया था, उस सम्बन्ध में आपको यह सब बता दिया । जिस प्रकार अपने धर्म का पालन करके भक्त पुरुष मुझ पर ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे अष्टादशः अध्यायः ॥१८॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

एकोनविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—यो विद्याश्रुतसम्पन्न आत्मवान् नानुमानिकः ।
मायामात्रमिदं ज्ञात्वा ज्ञानं च मयि संन्यसेत् ॥१॥

पदच्छेद— यः विद्या श्रुत सम्पन्नः आत्मवान् न अनुमानिकाः ।
माया मात्रम् इदम् ज्ञात्वा ज्ञानम् च मयि संन्यसेत् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	उद्धव जी ! जिसने	माया मात्रम्	८.	माया-मात्र
विद्या	३.	आत्मसाक्षात्कार	इदम्	७.	वह इस द्वैत प्रपञ्च को
श्रुत	२.	श्रवण, मनन निदिध्यासनके द्वारा	ज्ञात्वा	९.	जानकर इसे निवृत्ति के साधन
सम्पन्नः	४.	कर लिया है	ज्ञानम्	१०.	वृत्ति ज्ञान को
आत्मवान्	५.	जो ब्रह्मनिष्ठ है	च मयि	११.	मुझमें
न अनुमानिकाः ।	६.	जिसका निश्चय अनुमानों पर ही निर्भर नहीं है	सन्यसेत् ॥	१२.	लीन कर दे

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! जिसने श्रवण, मनन, निदिध्यासन के द्वारा आत्मसाक्षात्कार कर लिया है। जो ब्रह्मनिष्ठ है । जिसका निश्चय अनुमानों पर ही निर्भर नहीं हैं। वह इस द्वैत प्रपञ्च को माया-मात्र जानकर इसे निवृत्ति के साधन वृत्ति-ज्ञान को मुझमें लीन कर दे ॥

द्वितीयः श्लोकः

ज्ञानिनस्त्वहमेवेष्टः स्वार्थो हेतुश्च संमतः ।
स्वर्गश्चैवापवर्गश्च नान्योऽर्थो मदृते प्रियः ॥२॥

पदच्छेद— ज्ञानिनः तु अहम् एव इष्टः स्वार्थाः हेतुः च संमतः ।
स्वर्गः च एव अपवर्गः च न अन्यः अर्थः मत् ऋते प्रियः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानिनः	१.	ज्ञानी पुरुष का	स्वर्ग च एव	६.	स्वर्ग और
तु अहम्	३.	मैं ही हूँ	अपवर्गः	७.	अपवर्ग भी
एव इष्टः	२.	अभीष्ट पदार्थ	च न	१२.	नहीं करता
स्वार्था	५.	साध्य	अन्यः अर्थः	१०.	और किसी भी पदार्थ से
हे तु च	४.	उसका साधम और	मत् ऋते	९.	मेरे अतिरिक्त
संमतः ।	८.	मैं ही हूँ	प्रियः ॥	११.	वह प्रेम

श्लोकार्थ—ज्ञानी पुरुष का अभीष्ट पदार्थ मैं ही हूँ। उसका साधम और साध्य स्वर्ग और अपवर्ग भी मैं ही हूँ । मेरे अतिरिक्त और किसी भी पदार्थ से वह प्रेम नहीं करता ॥

तृतीयः श्लोक

ज्ञानविज्ञानसंसिद्धाः पदं श्रेष्ठं विदुर्मम ।
ज्ञानी प्रियतमोऽतो मे ज्ञानेनासौ बिभर्ति माम् ॥३॥

पदच्छेद—

ज्ञान विज्ञान संसिद्धा पदम् श्रेष्ठम् विदुः मम् ।
ज्ञानी प्रियतमः अतः मे ज्ञानेन असौ बिभर्ति माम् ॥

शब्दार्थ—

ज्ञान	१	जो ज्ञान और	ज्ञानी	८.	ज्ञानी पुरुष
विज्ञान	२.	विज्ञान से सम्पन्न	प्रियतमः	९.	सबसे प्रिय है
संसिद्धा	३.	सिद्ध पुरुष हैं	अतः मे	७.	इसलिये मुझे
पदम् श्रेष्ठम्	५.	वास्तविक स्वरूप को	ज्ञानेन असौ	१०	क्योंकि वह ज्ञान के द्वारा
विदुः	६.	जानते हैं	बिभर्ति	१२.	अपने अन्तःकरण में धारण करता है
मम् ।	४.	वे ही मेरे	माम् ॥	११.	मुझे

श्लोकार्थ—जो ज्ञान और विज्ञान से सम्पन्न सिद्ध पुरुष हैं। वे ही मेरे वास्तविक स्वरूप को जानते हैं। इसलिये मुझे ज्ञानी पुरुष सबसे प्रिय है। क्योंकि वह ज्ञान के द्वारा मुझे अपने अन्तःकरण में धारण करता है ॥

चतुर्थः श्लोकः

तपस्तीर्थं जपो दानं पवित्राणीतराणि च ।
नालं कुर्वन्ति तां सिद्धिं या ज्ञानकलया कृता ॥४॥

पदच्छेद—

तपः तीर्थम् जपः दानम् पवित्राणि इतराणि च ।
न अलम् कुर्वन्ति ताम् सिद्धिम् या ज्ञान-कलया कृता ॥

शब्दार्थ—

तपः	६.	तपस्या	न अलम्	१३.	पूर्णतया नहीं
तीर्थम्	७.	तीर्थ	कुर्वन्ति	१४.	प्राप्त हो सकती है
जपः	८.	जप	ताम्	५.	वह
दानम्	९.	दान	सिद्धिम्	४.	सिद्धि प्राप्त होती है
पवित्राणि	११.	अन्तःकरण की शुद्धि तथा	या	३.	जो
इतराणि	१२.	किसी भी साधन से	ज्ञान-कलया	१.	तत्त्व ज्ञान के लेशमात्र
च ।	१०.	और	कृता ॥	२.	उदय होने से

श्लोकार्थ—तत्त्व ज्ञान के लेशमात्र उदय होने से जो सिद्धि प्राप्त होती है। वह तपस्या, तीर्थ, जप, दान और अन्तःकरण की शुद्धि तथा किसी भी साधन से पूर्णतया नहीं प्राप्त हो सकती है ॥

पञ्चमः श्लोकः

तस्माज्ज्ञानेन सहितं ज्ञात्वा स्वात्मानमुद्धव ।
ज्ञानविज्ञानसम्पन्नो भज मां भक्तिभावितः ॥५॥

पदच्छेद—

तस्मात् ज्ञानेन सहितम् ज्ञात्वा स्वात्मानम् उद्धव ।
ज्ञान-विज्ञान सम्पन्नः भज माम् भक्ति भावितः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	२. इसलिये तुम	ज्ञान-विज्ञान	७.	ज्ञान-विज्ञान से
ज्ञानेन	३. ज्ञान के	सम्पन्नः	८.	सम्पन्न होकर
सहितम्	४. सहित	भज	१२.	भजन करो
ज्ञात्वा	६. जानकर फिर	माम्	११.	मेरा
स्वात्मानम्	५. अपने आत्मस्वरूप को	भक्ति	९.	भक्ति
उद्धव ।	१. हे उद्धव !	भावितः ॥	१०.	भाव से

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! इसलिये तुम ज्ञान के सहित अपने आत्मस्वरूप को जान कर फिर ज्ञान-विज्ञान से सम्पन्न हो कर भक्ति-भाव से मेरा भजन करो ॥

षष्ठः श्लोकः

ज्ञानविज्ञानयज्ञेन मामिष्ट्वाऽऽत्मानमात्मनि ।
सर्वयज्ञपतिं मां वै संसिद्धिं मुनयोऽगमन् ॥६॥

पदच्छेद—

ज्ञान-विज्ञान यज्ञेन मा मिष्ट्वा आत्मानम् आत्मनि ।
सर्व यज्ञपतिम् माम् वै संसिद्धिम् मुनयः अगमन् ॥

शब्दार्थ—

ज्ञान-विज्ञान	२. ज्ञान-विज्ञान रूप	सर्व	५.	समस्त
यज्ञेन	३. यज्ञ के द्वारा	यज्ञपतिम्	६.	यज्ञों के अधिपति
मा	८. मेरा	माम् वै	१०.	मेरे साक्षात्कार रूप
मिष्ट्वा	९. यजन करके	संसिद्धिम्	११.	परम् सिद्धि को
आत्मानम्	७. आत्मस्वरूप	मुनयः	१.	बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों ने
आत्मनि ।	४. अपने अन्तःकरण में	अगमन् ॥	१२.	प्राप्त किया है

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों ने ज्ञान-विज्ञान रूप यज्ञ के द्वारा अपने अन्तःकरण में समस्त यज्ञों के अधिपति आत्मस्वरूप मेरा यजन करके मेरे साक्षात्कार रूप परम सिद्धि को प्राप्त किया है ॥

सप्तमः श्लोकः

त्वय्युद्धवाश्रयति यस्त्रिविधो विकारो
मायान्तराऽऽपतति नाद्यपवर्गयोर्यत् ।
जन्मादयोऽस्य यदमी तव तस्य किं स्यु-
राद्यन्तयोर्यदसतोऽस्ति तदेव मध्ये ॥७॥

पदच्छेद—

त्वयि उद्धव आश्रयति यः त्रिविधः विकारः माया अन्तरा आपतति न आद्यपवर्गयोः यत् ।
जन्म आदयः अस्य यत् अमी तव तस्य किम् स्युः आदि अन्तयोः यत् सतः अस्ति तदेव मध्ये ॥

शब्दार्थ—			
त्वयि	४. तुम्हारे	जन्म आदयः	१०. जन्म आदि भाव विकार हैं
उद्धव	१. हे उद्धव !	अस्ययत् अमी	६. इसके जो ये
आश्रयति	५. आश्रित हैं	तव तस्य	११. उनसे तुम्हारा
यः त्रिविधः	२. तीन प्रकार के	किम् स्युः	१२. कोई सम्बन्ध नहीं है
विकारः	३. विकारों वाला शरीर	आदि	१३. क्योंकि आदि और
माया	८. माया है	अन्तयोः	१४. अन्त में
अन्तराआपतति	७. बीच में प्रतीत होने से यह	यत् सत् अस्ति	१५. जो असत् है
न अद्यपवर्गयोः यत् ।	६. यह आदि और अन्त में न होने से	तदेव मध्ये ॥	१६. वह बीच में भी असत् ही है

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! तीन प्रकार के विकारों वाला शरीर तुम्हारे आश्रित है। यह आदि और अन्त में न होने से तथा बीच में प्रतीत होने से यह माया है। इसके जो ये जन्म आदि भाव-विकार हैं, उनसे तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं है। क्योंकि आदि और अन्त में जो असत् है वह बीच में भी असत् ही है ॥

अष्टमः श्लोकः

उद्धव उवाच—ज्ञानं विशुद्धं विपुलं यथैतद्वैराग्यविज्ञानयुतं पुराणम् ।
आख्याहि विश्वेश्वर विश्वमूर्ते त्वद्भक्तियोगं च महद्विमृग्यम् ॥८॥

पदच्छेद—ज्ञानम् विशुद्धम् विपुलम् यथा एतत् वैराग्य विज्ञान युतम् पुराणम् ।
आख्याहि विश्वेश्वर विश्वमूर्ते त्वद् भक्ति योगम् च महत् विमृग्यम् ॥

शब्दार्थ—			
ज्ञानम्	७. ज्ञान	आख्याहि	१०. मुझे स्पष्ट करके समझाइये
विशुद्धम्	६. विशुद्ध	विश्वेश्वर	२. जगत के स्वामी
विपुलम्	६. सुदृढ़ हो जाय, उसी प्रकार	विश्वमूर्ते	१. हे विश्वरूप परमात्मन् !
यथा एतत्	८. जिस प्रकार	त्वद्	११. क्योंकि आपका
वैराग्य	३. आपका यह वैराग्य	भक्ति योगम् च	१५. भक्ति योग
विज्ञान युतम्	४. और विज्ञान से युक्त	महत्	१३. ब्रह्मा आदि महापुरुष भी
पुराणम् ।	५. सनातन एवम्	विमृग्यम् ॥	१४. ढूंढ़ा करते है

श्लोकार्थ—हे विश्व रूप परमात्मन् ! जगत के स्वामी आपका वैराग्य और विज्ञान से युक्त सनातन एवम् विशुद्ध ज्ञान जिस प्रकार सुदृढ़ हो जाय उसी प्रकार मुझे स्पष्ट करके समझाइये । क्योंकि आपका भक्तियोग ब्रह्मा आदि महापुरुष भी ढूंढा करते हैं ॥

नवमः श्लोकः

तापत्रयेणाभिहतस्य घोरे संतप्यमानस्य भवाध्वनीश ।
पश्यामि नान्यच्छरणं तवाङ्घ्रिद्वन्द्वातपत्रादमृताभिवर्षात् ॥९॥

पदच्छेद—तापत्रयेण अभिहतस्य घोरे संतप्य मानस्य भवाध्वनीश ।
पश्यामि न अन्यत् शरणम् तव अङ्घ्रि द्वन्द्व आतपत्रात् अमृत अभिवर्षात् ॥

शब्दार्थ—

तापत्रयेण	३.	तीनों तापों के	पश्यामि	१४.	दिखाई देता है
अभिहतस्य	४.	थपेड़े खा रहे हैं	न अन्यत्	१२.	अतिरिक्त अन्य कोई
घोरे	५.	और अत्यन्त	शरणम्	१३.	आश्रय नहीं
संतप्य	६.	जल	तव	८.	उनके लिये आपके
मानस्य	७.	रहे हैं	अङ्घ्रिद्वन्द्व	१०.	युगलचरणारविन्दों को ।
भवअध्वनि	२.	जो पुरुष इस संसार के विकट मार्ग में	आतपत्रात्	११.	छत्र-छाया के
ईश ।	१.	हे मेरे स्वामी !	अमृत अभिवर्षात् ॥	९.	अमृत वर्षा करने वाले

श्लोकार्थ—हे मेरे स्वामी ! जो पुरुष इस संसार के विकट मार्ग में तीनों तापों के थपेड़े खा रहे हैं। और अत्यन्त जल रहे हैं । उनके लिये आपके अमृत वर्षा करने वाले युगल चरणाविन्दों की छत्र छाया के अतिरिक्त अन्य कोई आश्रय नहीं दिखाई देता है ।

दशमः श्लोकः

दष्टं जनं संपतितं बिलेऽस्मिन् कालाहिना क्षुद्रसुखोरुतर्षम् ।
समुद्धरैनं कृपयाऽऽपवर्ग्यैर्वचोभिरासिञ्च महानुभाव ॥१०॥

पदच्छेद— दष्टम् जनम् संपतितम् बिले अस्मिन् काल अहिना क्षुद्र सुख उरुतर्षम् ।
समुद्धर एनम् कृपया अपवर्ग्यैः वचोभिः आसिञ्च महानुभाव ॥

शब्दार्थ—

दष्टम्	३.	डसा हुआ	समुद्धर	११.	उद्धार कीजिये और
जनम्	६.	आपका यह सेवक	एनम्	१०.	इसका
संपतितम्	८.	पड़ा हुआ	कृपया	९.	आप कृपा करके
विलेअस्मिन्	७.	इस अंधेरे कुयें में	अपवर्ग्यैः	१२.	मोक्ष दायक
कालअहिना	२.	कालरूपी सर्प से	वचोभिः	१३.	वचनामृत के द्वारा
क्षुद्र सुख	४.	क्षुद्र सुख भोगों की	आसिञ्च	१४.	इसे सराबोर कीजिये
उरु तर्षम् ।	५.	तीव्र तृष्णा से युक्त	महानुभाव ॥	१.	हे महानुभाव !

श्लोकार्थ—हे महानुभाव ! कालरूपी सर्प से डसा हुआ क्षुद्र सुख भोगों की तीव्र तृष्णा से युक्त आपका यह सेवक इस अंधेरे कुयें में पड़ा हुआ है । आप कृपा करके इसका उद्धार कीजिये और मोक्ष दायक वचनामृत के द्वारा इसे सराबोर कीजिये ॥

एकादशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच— इत्थमेतत् पुरा राजा भीष्मं धर्मभृतां वरम् ।
अजातशत्रुः पप्रच्छ सर्वेषां नोऽनुश्रृण्वताम् ॥११॥

पदच्छेद—

इत्थम् एतत् पुरा राजा भीष्मम् धर्मभृताम् वरम् ।
अजातशत्रुः पप्रच्छ सर्वेषाम् नः अनुश्रृण्वताम् ।।

शब्दार्थ—

इत्थम्	२. इसी प्रकार		वरम् ।	७. श्रेष्ठ
एतत्	३. यह प्रश्न		अजातशत्रुः	५. युधिष्ठिर ने
पुरा	१. पहले		पप्रच्छ	६. पूछा था
राजा	४. राजा		सर्वेषाम्	११. सब ने
भीष्मम्	८. भीष्मपितामह से		नः	१०. जिसे हम
धर्मभृताम् ।	६. धर्म का आचरण करने वालों में		अनुश्रृण्वताम् ।।	१२. सुना था

श्लोकार्थ—बहुत पहले इसी प्रकार यह प्रश्न राजा युधिष्ठिर ने धर्म का आचरण करने वालों में श्रेष्ठ भीष्मपितामह से पूछा था । जिसे हम सबने सुना था ।।

द्वादशः श्लोकः

निवृत्ते भारते युद्धे सुहृन्निधनविह्वलः ।
श्रुत्वा धर्मान् बहून् पश्चान्मोक्षधर्मानपृच्छत ॥१२॥

पदच्छेद—

निवृत्ते भारते युद्धे सुहृत् निधन विह्वलः ।
श्रुत्वा धर्मान् बहून् पश्चात् मोक्षधर्मान् अपृच्छत् ।।

शब्दार्थ—

निवृत्ते	३. समाप्त हो चुका था, और	श्रुत्वा	६. सुनने के
भारते	१. जब महाभारत	धर्मान्	८. धर्मों को
युद्धे	२. महायुद्ध	बहून्	७. पितामह से बहुत से
सुहृत्	४. युधिष्ठिर अपने स्वजनों के	पश्चात्	१०. पश्चात उन्होंने
निधन	५. निधन से	मोक्षधर्मान्	११. मोक्ष के साधनों के सम्बन्ध में
विह्वलः ।	६. व्याकुल हो रहे थे, तब	अपृच्छत् ।।	१२. प्रश्न किया था

श्लोकार्थ—जब महाभारत युद्ध समाप्त हो चुका था, और युधिष्ठिर अपने स्वजनों के निधन से व्याकुल हो रहे थे, तब पितामह से बहुत से धर्मों को सुनने के पश्चात् उन्होंने मोक्ष के साधनों के सम्बन्ध में प्रश्न किया था ।।

त्रयोदशः श्लोकः

तानहं तेऽभिधास्यामि देवव्रतमुखाच्छ्रुतान् ।
ज्ञानवैराग्यविज्ञानश्रद्धाभक्त्युपबृंहितान् ॥१३॥

पदच्छेद—

तान् अहम् ते अभिधास्यामि देवव्रत मुखात् श्रुतान् ।
ज्ञान वैराग्य विज्ञान श्रद्धा भक्ति उपबृंहितान् ॥

शब्दार्थ—

तान्	४.	उन मोक्ष धर्मों को	ज्ञान	७.	ज्ञान
अहम् ते	५.	मैं तुम्हें	वैराग्य	८.	वैराग्य
अभिधास्यामि	६.	सुनाऊँगा, जो	विज्ञान	९.	विज्ञान
देवव्रत	१.	भीष्म पितामह के	श्रद्धा	१०.	श्रद्धा और
मुखात्	२.	मुख से	भक्ति	११.	भक्ति के भावों से
श्रुतान् ।	३.	सुने हुये	उपबृंहितान् ॥	१२.	परिपूर्ण हैं

श्लोकार्थ—भीष्म पितामह के मुख से सुने हुये उन मोक्ष धर्मों को मैं तुम्हें सुनाऊँगा, जो ज्ञान, वैराग्य, विज्ञान, श्रद्धा और भक्ति के भावों से परिपूर्ण हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नवैकादश पञ्च त्रीन् भावान् भूतेषु येन वै ।
ईक्षेताथैकमप्येषु तज्ज्ञानं मम निश्चितम् ॥१४॥

पदच्छेद—

नव एकादश पञ्च त्रीन् भावान् भूतेषु येन वै ।
ईक्षेत अथ एकम् अप्येषु तत् ज्ञानम् मम् निश्चितम् ॥

शब्दार्थ—

नव	२.	प्रकृति पुरुषादि महत्तत्व अहंकारादि	ईक्षेत	१०.	देखा जाता है
एकादश	३.	पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय एक मन	अथ	७.	और
पञ्च त्रीन्	४.	पांच महाभूत और तीन गुण	एकम्	९.	एक परमात्म तत्त्व
भावान्	६.	कार्यों में देखे जाते हैं	अप्येषु	८.	इनमें भी
भूतेषु	५.	सम्पूर्ण	तत् ज्ञानम्	११.	वह परोक्ष ज्ञान है
येन वै ।	१.	जिस ज्ञान से	मम् निश्चितम् ॥	१२.	ऐसा मेरा निश्चय है

श्लोकार्थ—जिस ज्ञान से प्रकृति, पुरुष, महत्तत्व, अहंकार और पांच तन्मात्रायें ये, पांच कर्मेन्द्रि पांच ज्ञानेन्द्रिय, एक मन, पांच महाभूत और तीन गुण सम्पूर्ण कार्यों में देखे जाते है और एक परमात्म तत्त्व को देखा जाता है । वह परोक्ष ज्ञान है । ऐसा मेरा निश्चय है

पञ्चदशः श्लोकः

एतदेव हि विज्ञानं न तथैकेन येन यत् ।
स्थित्युत्पत्त्यप्ययान् पश्येद् भावानां त्रिगुणात्मनाम् ॥१५॥

पदच्छेद— एतद् एव हि विज्ञानम् न तथा एकेन येन यत् ।
स्थिति उत्पत्ति अप्ययान् पश्येद् भावानाम् त्रिगुण आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	४. तब यह	स्थिति उत्पत्ति	१०. उनकी स्थिति-उत्पत्ति और
एव हि	५. ही निश्चित	अप्ययान्	११. प्रलय का
विज्ञानम्	६. विज्ञान कहा जाता है	पश्येद्	१२. विचार करे
न तथा	३. उनको पहले के समान न देखे	भावानाम्	९. अवयव पदार्थ हैं
एकेन	२. एक तत्त्व से एकात्मक तत्त्वों को देखता था	त्रिगुण	७. यह शरीरादित्रिगुणात्मक
येन यत् ।	१. जब जिस	आत्मनाम् ॥	८. स्वरूप

श्लोकार्थ— जब-जिस एक तत्त्व से एकात्मक तत्त्वों को देखता था, उनको पहले के समान न देखे। तब वह ही निश्चित विज्ञान कहा जाता है। यह शरीरादित्रिगुणात्मक स्वरूप अवयव पदार्थ हैं। उनकी स्थिति-उत्पत्ति और प्रलय का विचार करे॥

षोडशः श्लोकः

आद्यावन्ते च मध्ये च सृज्यात् सृज्यं यदन्वियात् ।
पुनस्तत्प्रतिसंक्रामे यच्छिष्येत तदेव सत् ॥१६॥

पदच्छेद— आदौ अन्ते च मध्ये च सृज्यात् सृज्यम् यत् अन्वियात् ।
पुनः तत् प्रति संक्रामे यत् शिष्येत तत् एव सत् ॥

शब्दार्थ—

आदौ अन्ते च	२. सृष्टि के प्रारम्भ में और अन्त में	पुनः	७. और फिर
मध्ये च तत्	४. वही मध्य में भी रहती है	तत्	८. उन कार्यों का
सृज्यात्	५. वही प्रतीयमान कार्य से	प्रतिसंक्रामे	९. प्रलय अथवा बाध होने पर
सृज्यम्	६. कालान्तर में अनुगत रहती है	यत्	१०. उसके साक्षी या अधिष्ठान रूप
यत्	१. जो तत्त्व वस्तु	शिष्येत	११. शेष रह जाती है
अन्वियात् ।	३. कारण रूप से रहती है	तत् एव सदा ॥	१२. वही सत्य परमार्थ वस्तु है

श्लोकार्थ—जो तत्त्व वस्तु सृष्टि के प्रारम्भ में और अन्त में कारण रूप से रहती है। वही मध्य में भी रहती है। वही प्रतीयमान कार्य से कालान्तर में अनुगत रहती हैं। फिर उन कार्यों का प्रलय अथवा बाध होने पर उसके साक्षी या अधिष्ठान रूप शेष रह जाती है। वही सत्य परमार्थ वस्तु है॥

सप्तदशः श्लोकः

श्रुतिः प्रत्यक्षमैतिह्यमनुमानं चतुष्टयम् ।
प्रमाणेष्वनवस्थानाद् विकल्पात् स विरज्यते ॥१७॥

पदच्छेद—

श्रुतिः प्रत्यक्षम् ऐतिह्यम् अनुमानम् चतुष्टयम् ।
प्रमाणेषु अनवस्थानात् विकल्पात् स विरज्यते ॥

शब्दार्थ—

श्रुतिः	१. श्रुति		प्रमाणेषु	५. प्रमाणों में
प्रत्यक्षम्	२. प्रत्यक्ष		अनवस्थानात्	७. इनको कसौटी पर कसने से सत्य सिद्ध नहीं होता
ऐतिह्यम्	३. ऐतिह्य और		विकल्पात्	९. विविध कल्पनाओं से
अनुमानम्	४. अनुमान		स	८. विवेकी पुरुष
चतुष्टयम् ।	६. ये चार मुख्य हैं		विरज्यते ॥	१०. विरक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—श्रुति प्रत्यक्ष ऐतिह्य और अनुमान प्रमाणों से ये चार मुख्य हैं। इनको कसौटी पर कसने से सत्य सिद्ध नहीं होता है। विवेकी पुरुष विधि कल्पनाओं से विरक्त हो जाता है ॥

अष्टदशः श्लोकः

कर्मणां परिणामित्वादाविरिञ्च्यादमङ्गलम् ।
विपश्चिन्नश्वरं पश्येददृष्टमपि दृष्टवत् ॥१८॥

पदच्छेद—

कर्मणाम् परिणामित्वात् आविरिञ्च्यात् अमङ्गलम् ।
विपश्चित् नश्वरम् पश्येत् अदृष्टम् अपि दृष्टवत् ॥

शब्दार्थ—

कर्मणाम्	२. वह यज्ञादि कर्मों के		नश्वरम्	९. नाशवान्
परिणामित्वात्	३. नश्वर होने के कारण		पश्येत्	१०. समझे
आविरिञ्च्यात्	४. ब्रह्म लोक पर्यन्त		अदृष्टम्	५. स्वर्गादि सुख को
अमङ्गलम् ।	८. अमङ्गलकारी एवं		अपि	६. भी
विपश्चित्	१. विवेकी पुरुष को चाहिये कि		दृष्टवत् ॥	७. इस विषय सुख के समान ही

श्लोकार्थ—विवेकी पुरुष को चाहिये कि वह यज्ञादि कर्मों के नश्वर होने के कारण ब्रह्मलोक पर्यन्त स्वर्गादि सुख को भी इस विषय सुख के समान ही नाशवान् समझे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

भक्तियोगः पुरैवोक्तः प्रीयमाणाय तेऽनघ ।
पुनश्च कथयिष्यामि मद्भक्तेः कारणं परम् ॥१६॥

पदच्छेद—

भक्ति योगः पुरा एवोक्तः प्रीयमाणाय ते अनघ ।
पुनः च कथयिष्यामि मत् भक्तेः कारणम् परम् ॥

शब्दार्थ—

भक्ति	२. भक्ति	पुनः च	७.	इसलिये तुम्हें फिर से
योगः	३. योग का वर्णन	कथयिष्यामि	१२.	बतलाता हूँ
पुरा	४. पहले ही	मत्	८.	अपनी
एवोक्तः	५. सुना चुका हूँ	भक्तेः	६.	भक्ति प्राप्त होने का
प्रीयमाणाय	६. उसमें तुम्हारी बहुत प्रीति है	कारणम्	११.	साधन
ते अनघ ।	१. निष्पाप उद्धव जी ! मैं तुम्हें	परम् ॥	१०.	श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—निष्पाप उद्धव जी ! मैं तुम्हें भक्ति योग का वर्णन पहले ही सुना चुका हूँ। उसमें तुम्हारी बहुत प्रीति है। इसलिये तुम्हें फिर से अपनी भक्ति प्राप्त होने का श्रेष्ठ साधन बतलाता हूँ ॥

विंशः श्लोकः

श्रद्धामृतकथायां मे शश्वन्मदनुकीर्तनम् ।
परिनिष्ठा च पूजायां स्तुतिभिः स्तवनं मम ॥२०॥

पदच्छेद—

श्रद्धा अमृत कथायाम् मे शश्वत् मत् अनुकीर्तनम् ।
परिनिष्ठा च पूजायाम् स्तुतिभिः स्तवनम् मम ॥

शब्दार्थ—

श्रद्धा	४. श्रद्धा रखे	परिनिष्ठा	६.	अत्यन्त निष्ठा रखे और
अमृत	२. अमृतमयी	च	७.	और
कथायाम्	३. कथा में	पूजायाम्	८.	मेरी पूजा में
मे	१. मेरी भक्ति का इच्छुक मेरी	स्तुतिभिः	१०.	स्तोत्रों के द्वारा
शश्वत् मत्	५. निरन्तर मेरे	स्तवनम्	१२.	स्तुति करे
अनुकीर्तनम् ।	६. गुण-लीला और नामों का संकीर्तन करे	मम ॥	११.	मेरी

श्लोकार्थ—मेरी भक्ति का इच्छुक मेरी अमृतमयी कथा में श्रद्धा रखे, निरन्तर मेरे गुण लीला और नामों का संकीर्तन करे और मेरी पूजा में अत्यन्त निष्ठा रखे और स्तोत्रों के द्वारा मेरी स्तुति करे ॥

एकविंशः श्लोकः

आदरः परिचर्यायां सर्वाङ्गैरभिवन्दनम् ।
मद्भक्तपूजाभ्यधिका सर्वभूतेषु मन्मतिः ॥२१॥

पदच्छेद—

आदरः परिचर्यायाम् सर्वाङ्गैः अभिवन्दनम् ।
मत् भक्त पूजा अभ्यधिका सर्वभूतेषु मत् मतिः ॥

शब्दार्थ—

आदरः	२. प्रेम रक्खे	भक्त	६. भक्तों की
परिचर्यायाम्	१. मेरी सेवा पूजा में	पूजा	७. पूजा
सर्वाङ्गैः	३. सामने साष्टांग	अभ्यधिका	८. मेरी पूजा से बढ़ कर करे
अभिवन्दनम् ।	४. प्रणाम करे	सर्वभूतेषु	९. और समस्त प्राणियों में
मत्	५. मेरे	मत् मतिः ॥	१०. मुझे ही देखे

श्लोकार्थ—मेरी सेवा पूजा में प्रेम रक्खे सामने साष्टांग प्रमाण करे । मेरे भक्तों की पूजा मेरी पूजा से बढ़ कर करे । और समस्त प्राणियों में मुझे ही देखे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

मदर्थेष्वङ्गचेष्टा च वचसा मद्गुणेरणम् ।
मय्यर्पणं च मनसः सर्वकामविवर्जनम् ॥२२॥

पदच्छेद—

मद् अर्थेषु अङ्ग चेष्टा च वचसा मत् गुण ईरणम् ।
मयि अर्पणम् च मनसः सर्वकाम विवर्जनम् ॥

शब्दार्थ—

मद् अर्थेषु	३. मेरे ही लिये करे	मयि	९. मुझे
अङ्ग	१. अपने एक-एक अङ्ग की	अर्पणम्	१०. अर्पित कर दे तथा
चेष्टा	२. चेष्टा	च	७. और
च वचसा	४. और वाणी से	मनसः	८. अपना मन भी
मत् गुण	५. मेरे ही गुणों का	सर्वकाम	११. सारी कामनायें
ईरणम् ।	६. गान करे	विवर्जनम् ॥	१२. छोड़ दे

श्लोकार्थ—अपने एक-एक अंग की चेष्टा मेरे ही लिये करे, और वाणी से मेरे ही गुणों का गान करे । और अपना मन भी मुझे अर्पित कर दे । तथा सारी कामनायें छोड़ दे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

मदर्थेऽर्थपरित्यागो भोगस्य च सुखस्य च ।
इष्टं दत्तं हुतं जप्तं मदर्थं यद् व्रतं तपः ॥२३॥

पदच्छेद—

मद् अर्थे अर्थ परित्यागः भोगस्य च सुखस्य च ।
इष्टम् दत्तम् हुतम् जप्तम् मत् अर्थम् यद्व्रतम् तपः ॥

शब्दार्थ—

मद् अर्थे	१. मेरे लिये	इष्टम्	७. जो कुछ यज्ञ
अर्थ	२. धन	दत्तम् हुतम्	८. दान, हवन
परित्यागः	६. परित्याग कर दे	जप्तम्	९. जप
भोगस्य	३. भोग	मत् अर्थम्	१२. मेरे लिये ही करे
च	४. और	यद्व्रतम्	१०. व्रत और
सुखस्य च ।	५. प्राप्त सुख का भी	तपः ॥	११. तप किया है, वह सब

श्लोकार्थ—मेरे लिये धन, भोग और प्राप्त सुख का भी परित्याग कर दे । जो कुछ यज्ञ, दान, हवन, जप, व्रत और तप किया है । वह सब मेरे लिये ही करे ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एवं धर्मैर्मनुष्याणामुद्धवात्मनिवेदिनाम् ।
मयि सञ्जायते भक्तिः कोऽन्योऽर्थोऽस्यावशिष्यते ॥२४॥

पदच्छेद—

एवम् धर्मैः मनुष्याणाम् उद्धव आत्म निवेदिनाम् ।
मयि सञ्जायते भक्तिः कः अन्यः अर्थः अस्य अवशिष्यते ॥

शब्दार्थ—

एवम्	३. इस प्रकार	मयि	७. उसके हृदय में मेरी
धर्मैः	४. धर्मों का पालन करते हैं	सञ्जायते	९. उदय होता है
मनुष्याणाम्	२. जो मनुष्य	भक्तिः	८. प्रेम मयि भक्ति का
उद्धव	१. हे उद्धव जी !	कः अन्यः अर्थः	११. और किस दूसरी वस्तु का
आत्म	५. और मेरे प्रति आत्म	अस्य	१०. फिर उनके लिये
निवेदिनाम् ।	६. निवेदन कर देते हैं	अवशिष्यते ॥	१२. प्राप्त होना शेष रह जाता है

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! जो मनुष्य इस प्रकार धर्मों का पालन करते हैं । और मेरे प्रति आत्म निवेदन कर देते हैं । उसके हृदय में मेरी प्रेममयी भक्ति का उदय होता है । फिर उनके लिये और किस दूसरी वस्तु का प्राप्त होना शेष रह जाता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यदाऽऽत्मन्यर्पितं चित्तं शान्तं सत्त्वोपबृंहितम् ।
धर्मं ज्ञानं सवैराग्यमैश्वर्यं चाभिपद्यते ॥२५॥

पदच्छेद—

यदा आत्मनि अर्पित चित्तम् शान्तम् सत्त्व उपबृंहितम् ।
धर्मम् ज्ञानम् सवैराग्यम् ऐश्वर्यम् च अभिपद्यते ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	इस प्रकार जब	धर्मम्	७.	उस समय साधक को धर्म
आत्मनि	५.	आत्मा में	ज्ञानम्	८.	ज्ञान
अर्पित	६.	लग जाता है	सवैराग्यम्	९.	वैराग्यम्
चित्तम्	२.	चित्त में	ऐश्वर्यम्	११.	ऐश्वर्य
शान्तम्	४.	वह शान्त हो कर	च	१०.	और
सत्त्व उपबृंहितम् ।	३.	सत्त्व गुण की वृद्धि होती है और	अभिपद्यते ॥	१२.	स्वयं ही प्राप्त हो जाता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार जब चित्त में सत्त्व गुण की वृद्धि होती है। और वह शान्त हो कर आत्मा में लग जाता है। उस समय साधक को धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य स्वयं ही प्राप्त हो जाता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

यदर्पितं तद् विकल्पे इन्द्रियैः परिधावति ।
रजस्वलं चासन्निष्ठं चित्तं विद्धि विपर्ययम् ॥२६॥

पदच्छेद—

यत् अर्पितम् तत् विकल्पे इन्द्रियैः परिधावति ।
रजस्वलम् च असन्निष्ठम् चित्तम् विद्धि विपर्ययम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	यह चित्त जहाँ	रजस्वलम्	७.	रजोगुण से युक्त
अर्पितम्	२.	लगता है	च	८.	और
तत्	३.	वह संसार	असन्निष्ठम्	९.	असत वस्तु में लगे हुये ऐसे
विकल्पे	४.	विविध कल्पनाओं से भरपूर है	चित्तम्	१०.	चित्त को तुम
इन्द्रियैः	५.	उसमें लग कर इन्द्रियों के साथ	विद्धि	१२.	समझो
परिधावति ।	६.	भटकने लगता है	विपर्ययम् ॥	११.	अधर्म, अज्ञान, और मोह का घर

श्लोकार्थ—यह चित्त जहाँ लगता है, वह संसार विविध कल्पनाओं से भरपूर है। उसमें लग कर इन्द्रियों के साथ भटकने लगता है। रजोगुण से युक्त और असत् वस्तु में लगे हुये ऐसे चित्त को तुम अधर्म अज्ञान और मोह का घर समझो ॥

सप्तविंशः श्लोकः

धर्मो मद्भक्तिकृत् प्रोक्तो ज्ञानं चैकात्म्यदर्शनम् ।
गुणेष्वसङ्गो वैराग्यमैश्वर्यं चाणिमादयः ॥२७॥

पदच्छेद—

धर्मः मत् भक्ति कृत् प्रोक्तो ज्ञानम् च ऐकात्म्य दर्शनम् ।
गुणेषु असङ्गः वैराग्यम् ऐश्वर्यम् च अणिमादयः ॥

शब्दार्थ—

धर्मः	३.	वही धर्म	गुणेषु	८.	विषयों से
मत् भक्ति	१.	जिससे मेरी भक्ति	असङ्गः	६.	असङ्ग-निर्लेप रहना ही
कृत्	२.	हो	वैराग्यम्	१०.	वैराग्यम्
प्रोक्तः	४.	कहा गया है	ऐश्वर्यम्	१३.	ऐश्वर्य है
ज्ञानम्	७.	ज्ञान है	च	१२.	ऐश्वर्य है
च ऐकात्म्य	५.	और एकता का	अणिमादयः ॥	११.	अणिमादि सिद्धियाँ ही
दर्शनम् ।	६.	साक्षात्कार ही			

श्लोकार्थ—जिससे मेरी भक्ति हो, वही धर्म कहा गया है । और एकता का साक्षात्कार ही ज्ञान है । विषयों से असङ्ग-निर्लेप रहना ही वैराग्य है । और अणिमादि सिद्धियाँ ही ऐश्वर्य हैं ॥

अष्टविंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—यमः कतिविधः प्रोक्तो नियमो वारिकर्शन ।
कः शमः को दमः कृष्ण का तितिक्षा धृतिः प्रभो ॥२८॥

पदच्छेद—

यमः कति विधः प्रोक्तः नियमः वारिकर्शन ।
कः शमः कः दमः कृष्ण का तितिक्षा धृतिः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

यमः	२.	यम और	कः दमः	७.	शम क्या है ?
कतिविधः	४.	कितने प्रकार के	कः दमः	८.	दम क्या है ?
प्रोक्तः	५.	कहे गये हैं	कृष्ण	६.	हे श्री कृष्ण
नियमः	३.	नियम	का तितिक्षा	१०.	तितिक्षा और
वारिकर्शन ।	१.	हे शत्रुमर्दन !	धृतिः	११.	धैर्य क्या है ?
			प्रभो ॥	६.	हे प्रभो !

श्लोकार्थ—हे शत्रुमर्दन ! यम और नियम कितने प्रकार के कहे गये हैं । हे श्रीकृष्ण ! शम क्या है ? दम क्या है ? हे प्रभो ! तितिक्षा और धैर्य क्या है ?

एकोनत्रिंशः श्लोकः

किं दानं किं तपः शौर्यं किं सत्यमृतमुच्यते ।
कस्त्यागः किं धनं चेष्टं को यज्ञः का च दक्षिणा ॥२९॥

पदच्छेद—

किम् दानम् किम् तपः शौर्यम् किम् सत्यम् ऋतम् उच्यते ।
कः त्यागः किम् धनम् चेष्टम् कः यज्ञः का च दक्षिणा ॥

शब्दार्थ—

किम् दानम्	१. दान क्या है	कः त्यागः	७. त्याग क्या है
किम् तपः	२. तपस्या क्या है	किम् धनम्	९. कौन सा है
शौर्यम्	३. शूरता	चेष्टम्	८. अभीष्ट धन
किम् सत्यम्	४. क्या है सत्य और	कः यज्ञः	१०. यज्ञ किसे कहते हैं
ऋतम्	५. ऋतु	का च	१२. क्या वस्तु है
उच्यते ।	६. किसे कहते हैं ?	दक्षिणा ॥	११. दक्षिणा

श्लोकार्थ—दान क्या है ? तपस्या क्या है ? शूरता क्या है ? सत्य और ऋत किसे कहते हैं । त्याग क्या है ? अभीष्ट धन कौन सा है ? यज्ञ किसे कहते हैं ? दक्षिणा क्या वस्तु है ?

त्रिंशः श्लोकः

पुंसः किंस्विद् बलं श्रीमन् भगो लाभश्च केशव ।
का विद्या ह्रीः परा का श्रीः किं सुखं दुःखमेव च ॥३०॥

पदच्छेद—

पुंसः किम् स्विद् बलम् श्रीमन् भगः लाभः च केशव ।
का विद्या ह्रीः परा का श्रीः किम् सुखम् दुखःम् एव च ॥

शब्दार्थ—

पुंसः	३. पुरुष का	का विद्या	८. विद्या क्या है
किम्स्विद्	५. क्या है ?	ह्रीः	९. लज्जा
बलम्	४. सच्चा बल	परा	७. उत्तम
श्रीमन्	१. श्रीमान्	का श्रीः	१०. क्या है ? श्री
भगः लाभः च	६. भग क्या है, लाभ क्या वस्तु है ?	किम् सुखम्	११. किसे कहते हैं ? सुख और
केशव ।	२. केशव	दुःखम् एव च ॥	१२. दुःख क्या है ?

श्लोकार्थ—श्रीमान् केशव ! पुरुष का सच्चा बल क्या है ? भग क्या है ? लाभ क्या वस्तु है ? उत्तम विद्या क्या है ? लज्जा क्या है ? श्री किसे कहते हैं ? सुख और दुःख क्या है ?

एकत्रिंशः श्लोकः

कः पण्डितः कश्च मूर्खः कः पन्था उत्पथश्च कः ।
कः स्वर्गो नरकः कः स्वित् को बन्धुरुत किं गृहम् ॥३१॥

पदच्छेद—

कः पण्डितः कः च मूर्खः कः पन्था उत्पथः च कः ।
कः स्वर्गः नरकः कः स्वित् कः बन्धुः उत किम् गृहम् ॥

शब्दार्थ—

कः पण्डितः	१.	पण्डित कौन है ?	कः स्वर्गः	८.	स्वर्ग क्या है और
कः च	३.	कौन है ?	नरकः	७.	नरक और
मूर्खः	२.	और मूर्ख	कः स्वित्	९.	किसे कहते हैं
कः पन्था	४.	सुमार्ग क्या है ?	कः बन्धुः	१०.	भाई-बन्धु किसे मानना चाहिये ?
उत्पथः च	५.	और कुमार्ग	उत किम्	१२.	क्या है ?
कः ।	६.	किसे कहते हैं ?	गृहम् ॥	११.	और घर

श्लोकार्थ—पण्डित कौन है ? और मूर्ख कौन है ? सुमार्ग क्या है ? और कुमार्ग किसे कहते हैं ? नरक और स्वर्ग क्या है ? और किसे कहते हैं ? भाई बन्धु किसे मानना चाहिये ? और घर क्या है ?

द्वात्रिंशः श्लोकः

कः आढ्यः को दरिद्रो वा कृपणः कः कः ईश्वरः ।
एतान् प्रश्नान् मम ब्रूहि विपरीतांश्च सत्पते ॥३२॥

पदच्छेद—

कः आढ्यः कः दरिद्रः वा कृपणः कः कः ईश्वरः ।
एतान् प्रश्नान् मम ब्रूहि विपरीतान् च सत्पते ॥

शब्दार्थ—

कः आढ्यः	१.	धनवान् कौन है ?	एतान्	८.	आप मेरे इन
कः दरिद्रः	३.	निर्धन कौन है ?	प्रश्नान्	९.	प्रश्नों का
वा	२.	अथवा	मम ब्रूहि	१०.	उत्तर दीजिये
कृपणः	४.	कृपण	विपरीतान्	१२.	विरोधी भावों की भी व्याख्या करिये
कः	५	कौन है और	च	११.	और इनके
कः ईश्वरः ।	६.	ईश्वर किसे कहते हैं	सत्पते ॥	७.	हे भक्त वत्सल प्रभो !

श्लोकार्थ—धनवान् कौन है ? अथवा निर्धन कौन है ? कृपण कौन है ? और ईश्वर किसे कहते है ? हे भक्त वत्सल प्रभो ! आप मेरे इन प्रश्नों का उत्तर दीजिये ? और इनके विरोधी भावों की भी व्याख्या करिये ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अहिंसा सत्यमस्तेयमसङ्गो ह्रीरसञ्चयः ।
आस्तिक्यं ब्रह्मचर्यं च मौनं स्थैर्यं क्षमाभयम् ॥३३॥

पदच्छेद—

अहिंसा सत्यम् अस्तेयम् असङ्गः ह्रीः असञ्चयः ।
आस्तिक्यम् ब्रह्मचर्यम् च मौनम् स्थैर्यम् क्षमा अभयम् ॥

शब्दार्थ—

अहिंसा	१.	यमबारह हैं, अहिंसा	आस्तिक्यम्	७.	आस्तिकता
सत्यम्	२.	सत्य	ब्रह्मचर्यम्	८.	ब्रह्मचर्य
अस्तेयम्	३.	चोरी न करना	च	११.	और
असङ्गः	४.	असङ्गता	मौनम् स्थैर्यम्	९.	मौन स्थिरता
ह्रीः	५.	लज्जा	क्षमा	१०.	क्षमा
असञ्चयः ।	६.	असञ्चय आवश्यकता से अधिक धन न जोड़ना	अभयम् ॥	१२.	अभय

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! यम बारह हैं अहिंसा, सत्य, चोरी न करना, असङ्गता, लज्जा, असञ्चय आवश्यकता से अधिक धन न जोड़ना । आस्तिकता, ब्रह्मचर्य, मौन, स्थिरता, क्षमा और अभय ये यम हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

शौचं जपस्तपो होमः श्रद्धाऽऽतिथ्यं मदर्चनम् ।
तीर्थाटनं परार्थेहा तुष्टिराचार्यसेवनम् ॥३४॥

पदच्छेद—

शौचम् जपः तपः होमः श्रद्धा आतिथ्यम् मत् अर्चनम् ।
तीर्थाटनम् परार्थेहा तुष्टिः आचार्य सेवनम् ॥

शब्दार्थ—

शौचम्	१.	पवित्रता	तीर्थाटनम्	७.	तीर्थ यात्रा
जपः तपः	२.	जप, तप	परार्थेहा	८.	परोपकार की चेष्टा
होमः	३.	हवन	तुष्टिः	९.	सन्तोष और
श्रद्धा	४.	श्रद्धा	आचार्य	१०.	गुरु की
आतिथ्यम्	५.	अतिथि सेवा	सेवनम् ॥	११.	सेवा (ये नियम हैं)
मत् अर्चनम् ।	६.	मेरी पूजा			

श्लोकार्थ—पवित्रता, जप, तप, हवन, श्रद्धा, अतिथि सेवा, मेरी पूजा, तीर्थ यात्रा परोपकार की चेष्टा, सन्तोष और गुरु की सेवा ये नियम हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एते यमाः सनियमा उभयोर्द्वादश स्मृताः ।
पुंसामुपासितास्तात यथाकामं दुहन्ति हि ॥३५॥

पदच्छेद—

एते यमाः सनियमा उभयोः द्वादश स्मृताः ।
पुंसाम् उपासिताः तात यथा कामम् दुहन्ति हि ॥

शब्दार्थ—

एते	१. इन	पुंसाम्	८. जो पुरुष
यमाः	२. यम और	उपासिताः	९. इनका पालन करते हैं
सनियमा	३. नियम	तात	७. उद्धव जी !
उभयोः	४. दोनों की संख्या	यथा	११. अनुसार
द्वादश	५. बारह-बारह	कामम्	१०. वे इच्छा के
स्मृता ।	६. मानी गई है	दुहन्ति हि ॥	१२. भोग और मोक्ष प्राप्त करते हैं

श्लोकार्थ—इन यम और नियम दोनों की संख्या बारह-बारह मानी है । उद्धव जी ! जो पुरुष इनका पालन करते हैं । वे इच्छा के अनुसार भोग और मोक्ष प्राप्त करते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोक

शमो मन्निष्ठा बुद्धेर्दम इन्द्रियसंयमः ।
तितिक्षा दुःखसंमर्षो जिह्वोपस्थजयो धृतिः ॥३६॥

पदच्छेद—

शमः मत् निष्ठता बुद्धेः दम इन्द्रिय संयमः ।
तितिक्षा दुःख संमर्षः जिह्वा उपस्थ जयः धृतिः ॥

शब्दार्थ—

शमः	४. शम है	तितिक्षा	१०. तितिक्षा है
मत्	२. मुझमें	दुःख	८. न्याय से प्राप्त दुःख के
निष्ठता	३. लग जाना ही	संमर्षः	९. सहने का नाम
बुद्धेः	१. बुद्धि का	जिह्वा	११. जिह्वा और
दम	७. दम है	उपस्थ	१२. जननेन्द्रियों पर
इन्द्रिय	५. इन्द्रियों के	जयः	१३. विजय प्राप्त करना
संयमः ।	६. संयम का नाम	धृतिः ॥	१४. धैर्य है

श्लोकार्थ—बुद्धि का मुझमें लग जाना ही शम है । इन्द्रियों के संयम का नाम दम है । न्याय से प्राप्त दुःख के सहने का नाम तितिक्षा है । जिह्वा और जननेन्द्रियों पर विजय प्राप्त करना धैर्य है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

दण्डन्यासः परं दानं कामत्यागस्तपः स्मृतम् ।
स्वभावविजयः शौर्यं सत्यं च समदर्शनम् ॥३७॥

पदच्छेद—

दण्डन्यासः परम् दानम् काम त्यागः तपः स्मृतम् ।
स्वभावविजयः शौर्यम् सत्यम् च सम दर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

दण्डन्यासः	१.	किसी से द्रोह न करना	स्वभाव	७.	अपनी वासनाओं पर
परम् दानम्	२.	सब से बड़ा दान है	विजयः	८.	विजय प्राप्त करना ही
काम	३.	कामनाओं का	शौर्यम्	९.	शूरता है
त्यागः	४.	त्याग करना ही	सत्यम्	१२.	सत्य है
तपः	५.	तप	च सम	१०.	और समस्वरूप परमात्मा का
स्मृतम् ।	६.	कहा गया है	दर्शनम् ॥	११.	दर्शन ही

श्लोकार्थ—किसी से द्रोह न करना सब से बड़ा दान है । कामनाओं का त्याग करना ही तप कहा गया है । अपनी वासनाओं पर विजय प्राप्त करना ही शूरता है । और समस्वरूप परमात्मा का दर्शन ही सत्य है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

ऋतं च सूनृता वाणी कविभिः परिकीर्तिता ।
कर्मस्वसङ्गमः शौचं त्यागः संन्यास उच्यते ॥३८॥

पदच्छेद—

ऋतम् च सूनृता वाणी कविभिः परिकीर्तिता ।
कर्मसु असङ्गमः शौचम् त्यागः संन्यास उच्यते ॥

शब्दार्थ—

ऋतम्	५.	ऋत	कर्मसु	७.	कर्मों में
च	१.	और	असङ्गमः	८.	आसक्त न होना ही
सूनृता	२.	सत्य तथा मधुर	शौचम्	९.	शौच है और
वाणी	३.	भाषण को	त्यागः	१०.	कामनाओं का त्याग ही
कविभिः	४.	महात्माओं ने	संन्यास	११.	सच्चा संन्यास
परिकीर्तिता ।	६.	कहा है	उच्यते ॥	१२.	कहा गया है

श्लोकार्थ—और सत्य तथा मधुर भाषण को महात्माओं ने ऋत कहा है । कर्मों में आसक्त न होना ही शौच है । और कामनाओं का त्याग ही सच्चा संन्यास कहा गया है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

धर्म इष्टं धनं नृणां यज्ञोऽहं भगवत्तमः ।
दक्षिणा ज्ञानसन्देशः प्राणायामः परं बलम् ॥३९॥

पदच्छेद—

धर्मः इष्टम् धनम् नृणाम् यज्ञः अहम् भगवत् तमः ।
दक्षिणा ज्ञान सन्देशः प्राणायामः परम् बलम् ॥

शब्दार्थ—

धर्मः	१.	धर्म ही	दक्षिणा	९.	दक्षिणा है और
इष्टम् धनम्	३.	अभीष्ट धन है	ज्ञान	७.	ज्ञान का
नृणाम्	२.	मनुष्यों का	सन्देशः	८.	उपदेश देना ही
यज्ञः	६.	यज्ञ हूँ	प्राणायामः	१०.	प्राणायाम ही
अहम्	४.	मैं	परम्	११.	श्रेष्ठ
भगवत् तमः ।	५.	परमेश्वर ही	बलम् ॥	१२.	बल है

श्लोकार्थ—धर्म ही अभीष्ट धन है । मैं परमेश्वर ही यज्ञ हूँ । ज्ञान का उपदेश देना ही दक्षिणा है । और प्राणायाम ही श्रेष्ठ बल है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

भगो म ऐश्वरो भावो लाभो मद्भक्तिरुत्तमः ।
विद्याऽऽत्मनि भिदाबाधो जुगुप्सा ह्रीरकर्मसु ॥४०॥

पदच्छेद—

भगः मे ऐश्वरः भावः लाभः मत् भक्तिः उत्तमः ।
विद्या आत्मनि भिदा बाधः जुगुप्सा हरि कर्मसु ॥

शब्दार्थ—

भगः	३.	भग है	विद्या	१०.	सच्ची विद्या है
मे ऐश्वरः	१.	मेरा ऐश्वर्य	आत्मनि	७.	ब्रह्म और आत्मा के
भावः	२.	ही	भिदा	८.	भेद का
लाभः	६.	उत्तम लाभ है	बाधः	९.	मिट जाना ही
मत्	४.	मेरी	जुगुप्सा	१२.	घृणा होने का नाम लज्जा है
भक्तिः उत्तमः ।	५.	श्रेष्ठ भक्ति ही	ह्रिरकर्मसु ॥	११.	पाप करने से

श्लोकार्थ—मेरा ऐश्वर्य ही भग है । मेरी श्रेष्ठ भक्ति ही उत्तम लाभ है । ब्रह्म और आत्मा के भेद का मिट जाना ही सच्ची विद्या है । पाप करने से घृणा होने का नाम लज्जा है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीर्गुणा नैरपेक्ष्याद्याः सुखं दुःखसुखात्ययः ।
दुःखं कामसुखापेक्षा पण्डितो बन्धमोक्षवित् ॥४१॥

पदच्छेद— श्रीः गुणाः नैरपेक्ष्य आद्याः सुखम् दुःख सुख अत्ययः ।
दुःखम् काम सुख अपेक्षा पण्डितः बन्ध मोक्षवित् ॥

शब्दार्थ—

श्रीः	४.	शरीर का सच्चा सौन्दर्य है	दुःखम्	१२.	दुःख है
गुणाः	३.	गुण ही	काम	९.	विषय भोगों से
नैरपेक्ष्य	१.	निरपेक्षता	सुख	१०.	सुख की
आद्याः	२.	आदि	अपेक्षा	११.	अपेक्षा ही
सुखम्	८.	सुख है	पण्डितः	१६.	वही पण्डित है
दुःख	५.	दुःख और	बन्ध	१३.	जो बन्धन और
सुख	६.	सुख दोनों की भावना का	मोक्ष	१४.	मोक्ष का
अत्ययः ।	७.	सदा के लिये नष्ट हो जाना	वित् ॥	१५.	तत्त्व जानता है

श्लोकार्थ—निरपेक्षता आदि गुण ही शरीर का सच्चा सौन्दर्य है । दुःख और सुख दोनों की भावना का सदा के लिये नष्ट हो जाना सुख है । विषय भोगों से सुख को अपेक्षा ही दुःख है । जो बन्धन और मोक्ष का तत्त्व जानता है । वही पण्डित है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

मूर्खो देहाद्यहंबुद्धिः पन्था मन्निगमः स्मृतः ।
उत्पथश्चित्तविक्षेपः स्वर्गः सत्त्वगुणोदयः ॥४२॥

पदच्छेद— मूर्खः देहादि अहम् बुद्धिः पन्थाः मत् निगमः स्मृतः ।
उत्पथः चित्त विक्षेपः स्वर्गः सत्त्व गुण उदयः ॥

शब्दार्थ—

मूर्खः	३.	मूर्ख है	उत्पथः	१०.	कुमार्ग है और
देहादि	१.	शरीरादि में	चित्त	८.	चित्त की
अहम् बुद्धिः	२.	जिसको अहं बुद्धि है वही	विक्षेपः	९.	बहिर्मुखता ही
पन्थाः	६.	मार्ग ही सुमार्ग	स्वर्गः	१४.	सच्चा स्वर्ग है
मत्	४.	मुझसे	सत्त्व	११.	सत्त्व
निगमः	५.	मिला देने वाला	गुण	१३.	गुण की
स्मृतः ।	७.	कहा जाता है	उदयः ॥	१२.	वृद्धि ही

श्लोकार्थ—शरीरादि में जिसकी अहं बुद्धि है, वही मूर्ख है । मुझसे मिला देने वाला मार्ग ही सुमार्ग कहा जाता है । चित्त की बहिर्मुखता ही कुमार्ग है । और सत्त्व गुण की वृद्धि ही सच्चा स्वर्ग है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

नरकस्तमउन्नाहो बन्धुर्गुरुरहं सखे ।
गृहं शरीरं मानुष्यं गुणाढ्यो ह्याढ्य उच्यते ॥४३॥

पदच्छेद—

नरकः तम उन्नाहः बन्धुः गुरुः अहम् सखे ।
गृहम् शरीरम् मानुष्यम् गुण आढ्यः आढ्यः उच्यते ॥

शब्दार्थ—

नरकः	३.	नरक है और	गृहम्	६.	सच्चा घर है
तम उन्नाहः	२.	तमोगुण की वृद्धि ही	शरीरम्	८.	शरीर ही
बन्धुः	५.	सच्चा भाई-बन्धु है	मानुष्यम्	७.	यह मनुष्य
गुरुः	४.	गुरु ही	गुण आढ्यः	१०.	जो गुणों से सम्पन्न है
अहम्	६.	और वह मैं हूँ	हि आढ्यः	११.	वही धनी
सखे ।	१.	हे सखे !	उच्यते ।।	१२.	कहा जाता है

श्लोकार्थ—हे सखे तमोगुण की वृद्धि ही नरक है और गुरु ही सच्चा भाई बन्धु है, और वह मैं हूँ। यह मनुष्य शरीर ही सच्चा घर है, जो गुणों से सम्पन्न है । वही धनी कहा जाता है ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

दरिद्रो यस्त्वसन्तुष्टः कृपणो योऽजितेन्द्रियः ।
गुणेष्वसक्तधीरीशो गुणसङ्गो विपर्ययः ॥४४॥

पदच्छेद—

दरिद्रः यः तु असन्तुष्टः कृपणः यः अजितेन्द्रियः ।
गुणेषु असक्तधीः ईशः गुण सङ्गः विपर्ययः ॥

शब्दार्थ—

दरिद्रः	३.	वही दरिद्र है	गुणेषु	७.	विषयों में जिसकी
यः तु	१.	जिसके चित्त में	असक्तधीः	८.	चित्तवृत्ति आसक्त नहीं है
असन्तुष्टः	२.	असन्तोष है	ईशः	९.	वही ईश्वर है और जो
कृपणः	६.	वही कृपण है	गुण	१०.	विषयों में
यः	४.	जो	सङ्ग	११.	आसक्त है
अजितेन्द्रियः ।	५.	जितेन्द्रिय नहीं है	विपर्ययः ॥	१२.	वही असमर्थ है

श्लोकार्थ—जिसके चित्त में असन्तोष है, वही दरिद्र है। जो जितेन्द्रिय नहीं है, वही कृपण है। विषयों में जिसकी चित्तवृत्ति आसक्त नहीं है, वही ईश्वर है। और जो विषयों में आसक्त है। वही असमर्थ है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

एत उद्धव ते प्रश्नाः सर्वे साधु निरूपिताः ।
किं वर्णितेन बहुना लक्षणं गुणदोषयोः ।
गुणदोषदृशिर्दोषो गुणस्तूभयवर्जितः ॥४५॥

पदच्छेद—

एते उद्धव ते प्रश्नाः सर्वे साधु निरूपिताः ।
किम् वर्णितेन बहुना लक्षणम् गुण दोषयोः ।
गुण दोष दृशिः दोषः गुणः तु भय वर्जितः ॥

शब्दार्थ—

एते	२.	ये जो	लक्षणम्	७.	लक्षण
उद्धव ते	१.	हे उद्धव ! तुम्हारे	गुण दोषयोः ।	६.	मैं तुम्हें गुण और दोषों का
प्रश्नाः	३.	प्रश्न थे	गुण दोष	१०.	गुण और दोषों पर
सर्वे	४.	उन सबका	दृशिः दोषः	११.	दृष्टि जाना ही सबसे बड़ा दोष है
साधुनिरूपिताः	५.	भलीभाँति उत्तर दे दिया	गुणः तु	१४.	सबसे बड़ा गुण है
किम् वर्णितेन	९.	कहाँ तक बताऊँ ? बस इतना समझो	भय	१२.	इन दोषों में
बहुना	८.	अलग-अलग बहुत प्रकार से	वर्जितः ॥	१३.	दृष्टि का न जाना ही

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! तुम्हारे ये जो प्रश्न थे, उन सबका (मैंने) भलीभाँति उत्तर दे दिया । मैं तुम्हें गुण और दोषों का लक्षण अलग-अलग कहाँ तक बताऊँ बहुत प्रकार से बस इतना समझो, गुण और दोषों पर दृष्टि जाना ही । सबसे बड़ा दोष है । इन दोषों में दृष्टि का न जाना ही सबसे बड़ा गुण है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे एकोनविंशः अध्यायः ॥ १९ ॥

एकादशः स्कन्धः
विंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच—**विधिश्च प्रतिषेधश्च निगमो हीश्वरस्य ते ।**
अवेक्षतेऽरविन्दाक्ष गुणं दोषं च कर्मणाम् ॥१॥

पदच्छेद—

विधिः च प्रतिषेधः च निगमः हि ईश्वरस्य ते ।
अवेक्षते अरविन्दाक्ष गुणम् दोषम् च कर्मणाम् ॥

शब्दार्थ—

विधिः च	५. उसमें कुछ विधि है	अवेक्षते	१२. परीक्षा करके ही तो होता है
प्रतिषेधः	७. कुछ निषेध है	अरविन्दाक्ष	१. हे कमलनयन श्रीकृष्ण !
च	६. और	गुणम्	९. गुण
निगमः	४. आपकी आज्ञा ही वेद है	दोषम्	११. दोष की
हि ईश्वरस्य	३. सर्व शक्तिमान हैं	च	१०. और
ते ।	२ आप	कर्मणाम् ॥	८. यह सब कर्मों के

श्लोकार्थ—हे कमलनयन श्रीकृष्ण ! आप सर्व शक्तिमान हैं । आपकी आज्ञा ही वेद है । उसमें कुछ विधि है और कुछ निषेध है । यह सब कर्मों के गुण और दोष की परीक्षा करके ही तो होता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

वर्णाश्रमविकल्पं च प्रतिलोमानुलोमजम् ।
द्रव्यदेशवयः कालान् स्वर्गं नरकमेव च ॥२॥

पदच्छेद—

वर्णाश्रम विकल्पम् च प्रतिलोम अनुलोमजम् ।
द्रव्य देश वयः कालान् स्वर्गम् नरकम् एव च ॥

शब्दार्थ—

वर्णाश्रम	१. वर्णाश्रम	देश	७. देश
विकल्पम्	२. भेद	वयः	८. आयु और
च	४. और	कालान्	९. काल तथा
प्रतिलोम	३. प्रतिलोम	स्वर्गम्	१०. स्वर्ग और
अनुलोमजम् ।	५. अनुलोम से उत्पन्न (वर्णशंकर)	नरकम्	११. नरक के भेदों का
द्रव्य	६. द्रव्य	एव च ॥	१२. बोध भी वेदों से ही होता है

श्लोकार्थ—वर्णाश्रम भेद प्रतिलोम और अनुलोम से उत्पन्न वर्णशंकर द्रव्य, देश, आयु और काल तथा स्वर्ग और नरक के भेदों का बोध भी वेदों से ही होता है ॥

तृतीयः श्लोकः

गुणदोषभिदादृष्टिमन्तरेण वचस्तव ।
निःश्रेयसं कथं नृणां निषेधविधिलक्षणम् ॥३॥

पदच्छेद—

गुण दोषभिदा दृष्टिम् अन्तरेण वचः तव ।
निःश्रेयसम् कथम् नृणाम् निषेध विधि लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

गुण	६.	यदि उसमें गुण	निःश्रेयसम्	११.	कल्याण करने में समर्थ हो
दोषभिदा	७.	दोष में भेद करने वाली	कथम्	१२.	कैसे हो
दृष्टिम्	८.	दृष्टि	नृणाम्	१०.	प्राणियों का
अन्तरेण	९.	न हो तो वह	निषेध	४.	निषेध ही तो
वचः	२.	वाणी वेद है, परन्तु	विधि	३.	उसमें विधि
तव ।	१.	आपकी	लक्षणम् ॥	५.	भरा है

श्लोकार्थ—आपकी वाणी वेद है, परन्तु उसमें विधि-निषेध ही तो भरा है। यदि उसमें गुण दोष में भेद करने वाली दृष्टि न हो तो वह प्राणियों का कल्याण करने में समर्थ हो कैसे हो।

चतुर्थः श्लोकः

पितृदेवमनुष्याणां वेदश्चक्षुस्तवेश्वर ।
श्रेयस्त्वनुपलब्धेऽर्थे साध्यसाधनयोरपि ॥४॥

पदच्छेद—

पितृ देव मनुष्याणाम् वेदः चक्षुः तव ईश्वरः ।
श्रेयः तु अनुपलब्धे अर्थे साध्य साधनयोः अपि ॥

शब्दार्थ—

पितृ देव	४.	पितर-देवता और	श्रेयः तु	६.	श्रेष्ठ
मनुष्याणाम्	५.	मनुष्यों के लिये	अनुपलब्धे	८.	क्योंकि उसी से अदृष्ट
वेदः	३.	वेद ही	अर्थे	९.	वस्तुओं का बोध होता है
चक्षुः	७.	मार्ग दर्शक का काम करता है	साध्य	१०.	साध्य और
तव	२.	आपकी वाणी	साधनयोः	११.	साधना का निर्णय
ईश्वरः ।	१.	सर्व शक्तिमान परमेश्वर	अपि ॥	१२.	भी उसी से होता है

श्लोकार्थ—सर्व शक्तिमान परमेश्वर आपकी वाणी वेद ही पितर-देवता और मनुष्यों के लिए श्रेष्ठ मार्ग दर्शक का काम करता है। क्योंकि उसी से अदृष्ट वस्तुओं का बोध होता है। साध्य और साधना का निर्णय भी उसी से होता है ॥

पञ्चमः श्लोकः

गुणदोषभिदादृष्टिर्निगमात्ते न हि स्वतः ।
निगमेनापवादश्च भिदाया इति ह भ्रमः ॥५॥

पदच्छेद—

गुण दोषभिदा दृष्टिः निगमात् ते न हि स्वतः ।
निगमेन अपवादः च भिदाया इति ह भ्रमः ॥

शब्दार्थ—

गुण	१.	गुण और	निगमेन	८.	आपकी वाणी ही
दोषभिदा	२.	दोषों में भेद	अपवादः	१०.	विरोध भी करती है
दृष्टिः	३.	दृष्टि	च	७.	और
निगमात्	५.	वेद के ही अनुसार है	भिदाया	६.	भेद का
ते	४.	आप की वाणी	इति ह	११.	इसलिये मुझे
न हि स्वतः ।	६.	किसी की अपनी कल्पना नहीं है	भ्रमः ॥	१२.	भ्रम हो रहा है

श्लोकार्थ—गुण और दोषों में भेद दृष्टि आपकी वाणी वेद के ही अनुसार है, किसी की अपनी कल्पना नहीं है । और आपकी वाणी भेद का विरोध भी करती है ॥

षष्ठः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—योगास्त्रयो मया प्रोक्ता नृणां श्रेयोविधित्सया ।
ज्ञानं कर्म च भक्तिश्च नोपायोऽन्योऽस्ति कुत्रचित् ॥६॥

पदच्छेद—

योगाः त्रयः मया प्रोक्ताः नृणाम् श्रेयः विधित्सया ।
ज्ञानम् कर्म च भक्तिः च न उपायः अन्यः अस्ति कुत्रचिद् ॥

शब्दार्थ—

योगः	५.	योगों का	ज्ञानम्	७.	ज्ञान
त्रयः	४.	ज्ञान, कर्म, और भक्ति रूप	कर्म च	८.	कर्म और
मया	१.	मैंने	भक्तिः च	६.	भक्ति के
प्रोक्ताः	६.	उपदेश किया है	न उपायः	१२.	उपाय
नृणाम् श्रेयः	२.	मनुष्यों का कल्याण	अन्यः	१०.	अतिरिक्त मानव कल्याण का
विधित्सया ।	३.	करने की इच्छा से	अस्ति	१३.	नहीं है
			कुत्रचिद् ॥	११.	अन्य कोई

श्लोकार्थ—मैंने मनुष्यों का कल्याण करने की इच्छा से ज्ञान, कर्म और भक्तिरूप योगों का उपदेश किया है । ज्ञान, कर्म और भक्ति के अतिरिक्त मानव कल्याण का अन्य कोई उपाय नहीं है ॥

सप्तमः श्लोकः

निर्विण्णानां ज्ञानयोगो न्यासिनामिह कर्मसु ।
तेष्वनिर्विण्णचित्तानां कर्मयोगस्तु कामिनाम् ॥७॥

पदच्छेद—

निर्विण्णानाम् ज्ञान योगः न्यासिनाम् इह कर्मसु ।
तेषु अनिर्विण्ण चित्तानाम् कर्म योगः तु कामिनाम् ॥

शब्दार्थ—

निर्विण्णानाम्	३.	विरक्त हो गये हैं और	तेषु	८.	कर्मों और उनके फलों से
ज्ञान	५.	वे ज्ञान	अनिर्विण्ण	९.	वैराग्य नहीं हुआ है
योगः	६.	योग के अधिकारी हैं	चित्तानाम्	७.	जिनके चित्त में
न्यासिनाम्	४.	उनका त्याग कर चुके हैं	कर्म योगः	१२.	कर्म योग के अधिकारी हैं
इह	१.	इस लोक में	तु	१०.	और वे
कर्मसु ।	२.	जो लोग कर्मों और उनके	कामिनाम् ॥	११.	सकाम व्यक्ति

श्लोकार्थ—इस लोक में जो लोग कर्मों और उनके फलों से विरक्त हो गये हैं। और उनका त्याग कर चुके हैं, वे ज्ञान योग के अधिकारी हैं। जिनके चित्त में कर्मों और उनके फलों से वैराग्य नहीं हुआ है। और वे सकाम व्यक्ति कर्म योग के अधिकारी हैं॥

अष्टमः श्लोकः

यदृच्छया मत्कथादौ जातश्रद्धस्तु यः पुमान् ।
न निर्विण्णो नातिसक्तो भक्तियोगोऽस्य सिद्धिदः ॥८॥

पदच्छेद—

यदृच्छया मत् कथा आदौ जात श्रद्धाः तु यः पुमान् ।
न निर्विण्णः न अतिसक्तः भक्ति योगः अस्यसिद्धिदः ॥

शब्दार्थ—

यदृच्छया	५.	सौभाग्यवश	न निर्विण्णः	३.	न तो अत्यन्त विरक्त है और
मत्	६.	मेरी	न अतिसक्तः	४.	न अति आसक्त ही है
कथा आदौ	७.	कथा लीला आदि में	भक्ति	१०.	भक्ति
जात श्रद्धा	८.	जिसकी श्रद्धा हो गयी है	योगः	११.	योग के द्वारा ही
तु यः	१.	जो	अस्य	९.	उसे
पुमान् ।	२.	पुरुष	सिद्धिदः ॥	१२.	सिद्धि मिल सकती है

श्लोकार्थ—जो पुरुष न तो अत्यन्त विरक्त है; और न अति आसक्त ही है। सौभाग्यवश मेरी कथा लीला आदि में जिसकी श्रद्धा हो गई है। उसे भक्ति योग के द्वारा ही सिद्धि मिल सकती है॥

नवमः श्लोकः

तावत् कर्माणि कुर्वीत न निर्विद्येत यावता ।
मत्कथाश्रवणादौ वा श्रद्धा यावन्न जायते ॥९॥

पदच्छेद—

तावत् कर्माणि कुर्वीत न निर्विद्येत यावता ।
मत् कथा श्रवण आदौ वा श्रद्धा यावत् न जायते ॥

शब्दार्थ—

तावत्	१.	विधि-निषेध के अनुसार तब तक	मत् कथा	९.	मेरी लीला कथा के
कर्माणि	२.	कर्म	श्रवण	१०.	श्रवण-कीर्तन
कुर्वीत	३.	करना चाहिये	आदौ	११.	आदि में
न	६.	न हो जाय	वा	७.	अथवा
निर्विद्येत	५.	वैराग्य	श्रद्धा	१२.	श्रद्धा
यावता ।	४.	मेरी	यावत्	८.	जब-तक
			न जायते ॥	१३.	न हो जाय

श्लोकार्थ—विधिनिषेध के अनुसार तब-तक कर्म करना चाहिये, जब-तक वैराग्य न हो जाय अथवा जब-तक मेरी लीला कथा के श्रवण कीर्तन आदि में श्रद्धा न हो जाय ॥

दशमः श्लोकः

स्वधर्मस्थो यजन् यज्ञैरनाशीःकाम उद्धव ।
न याति स्वर्गनरकौ यद्यन्यन्न समाचरेत् ॥१०॥

पदच्छेद—

स्वधर्मस्थो यजन् यज्ञैः अनाशीः काम उद्धव ।
न याति स्वर्ग नरकौ यदि अन्यत् समाचरेत् ॥

शब्दार्थ—

स्वधर्मस्थः	२.	इस प्रकार अपने धर्म में स्थित रहकर	न याति	१२.	नहीं जाता है
यजन्	६.	मेरी आराधना करता रहे	स्वर्ग	१०.	स्वर्ग और
यज्ञैः	३.	यज्ञों के द्वारा	नरकौ	११.	नरक कहीं
अनाशीः	४.	बिना किसी आशा या	यदि अन्यत्	७.	जो विहित कर्म के अतिरिक्त
काम	५.	कामना के	न	८.	अन्य कर्म नहीं
उद्धव	१.	हे उद्धव !	समाचरेत् ॥	९.	करता है, वह

श्लोकार्थ—हे उद्धव ! इस प्रकार अपने धर्म में स्थित रहकर यज्ञों के द्वारा बिना किसी आशा या कामना के मेरी आराधना करता रहे । जो विहित कर्म के अतिरिक्त अन्य कर्म नहीं करता है, वह स्वर्ग और नरक कहीं नहीं जाता है ॥

एकादशः श्लोकः

अस्मिँल्लोके वर्तमानः स्वधर्मस्थोऽनघः शुचिः ।
ज्ञानं विशुद्धमाप्नोति मद्भक्तिं वा यदृच्छया ॥११॥

पदच्छेद—

अस्मिन् लोके वर्तमानः स्वधर्मस्थः अनघः शुचिः ।
ज्ञानम् विशुद्धम् आप्नोति मत् भक्तिम् वा यदृच्छया ॥

शब्दार्थ—

अस्मिन्	३.	इस	ज्ञानम्	९.	तत्त्वज्ञान
लोके	४.	शरीर में	विशुद्धम्	८.	वह आत्म साक्षात्कार रूप विशुद्ध
वर्तमानः	५.	रहते-रहते ही	आप्नोति	१०.	प्राप्त करता है
स्वधर्मस्थः	१.	अपने धर्म में निष्ठावान् पुरुष	मत् भक्तिम्	१२.	मेरी भक्ति
अनघः	६.	रागादि मलों से मुक्त होकर	वा	११.	अथवा
शुचिः ।	७.	पवित्र हो जाता है	यदृच्छया ॥	२.	सौभाग्य से

श्लोकार्थ—अपने धर्म में निष्ठावान् पुरुष सौभाग्य से इस शरीर में रहते-रहते ही रागादि मलों से मुक्त होकर पवित्र हो जाता है । वह आत्मसाक्षात्कार रूप विशुद्ध तत्त्वज्ञान अथवा मेरी भक्ति प्राप्त करता है ॥

द्वादशः श्लोकः

स्वर्गिणोऽप्येतमिच्छन्ति लोकं निरयिणस्तथा ।
साधकं ज्ञानभक्तिभ्यामुभयं तदसाधकम् ॥१२॥

पदच्छेद—

स्वर्गिणः अपि एतम् इच्छन्ति लोकम् निरयिणःतथा ।
साधकम् ज्ञान भक्तिभ्याम् उभयम् तत् साधकम् ॥

शब्दार्थ—

स्वर्गिणः	१.	स्वर्ग	साधकम्	१०.	प्राप्त कराने वाला है
अपि	४.	भी	ज्ञान	७.	क्योंकि मनुष्य शरीर ज्ञान
एतम्	५.	मनुष्य शरीर की	भक्तिभ्याम्	८.	और भक्ति
इच्छन्ति	६.	अभिलाषा करते हैं	उभयम्	९.	दोनों को
लोकम्	३.	लोकों में रहने वाले लोग	तत्	११.	जबकि स्वर्ग और नरक का शरीर
निरयिणःतथा	२.	तथा नरक दोनों ही	साधकम् ॥	१२.	किसी भी साधन के उपयुक्त नहीं है

श्लोकार्थ—स्वर्ग तथा नरक दोनों ही लोकों में रहने वाले लोग भी मनुष्य शरीर की अभिलाषा करते हैं । क्योंकि मनुष्य शरीर ज्ञान और भक्ति दोनों को प्राप्त कराने वाला है, जबकि स्वर्ग और नरक का शरीर किसी भी साधन के उपयुक्त नहीं है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

न नरः स्वर्गतिं काङ्क्षेन्नारकीं वा विचक्षणः।
नेमं लोकं च काङ्क्षेत देहावेशात् प्रमाद्यति ॥१३॥

पदच्छेद— न नरः स्वर्गतिम् काङ्क्षेत् नारकीम् वा विचक्षणः।
न इमम् लोकम् च काङ्क्षेत देह आवेशात् प्रमाद्यति ॥

शब्दार्थ—

न	३.	न तो	न	१२.	न करे, क्योंकि
नरः	२.	पुरुष	इमम्	९.	वह इस मनुष्य
स्वर्गतिम्	४.	स्वर्ग की	लोकम्	१०.	शरीर की भी
काङ्क्षेत्	५.	अभिलाषा करे	च	८.	और
नारकीम्	७.	न नरक की	काङ्क्षेत्	११.	कामना
वा	६.	और	देह आवेशात्	१३.	शरीर में गुण बुद्धि हो जाने से
विचक्षणः।	१.	बुद्धिमान	प्रमाद्यति ॥	१४.	साधन में प्रमाद होने लगता है

श्लोकार्थ—बुद्धिमान पुरुष न तो स्वर्ग की अभिलाषा करे और न नरक की। और वह इस मनुष्य शरीर की भी कामना न करे, क्य कि शरीर में गुण बुद्धि हो जाने से साधन में प्रमाद होने लगता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

एतद् विद्वान् पुरा मृत्योरभवाय घटेत सः।
अप्रमत्त इदं ज्ञात्वा मर्त्यमप्यर्थसिद्धिदम् ॥१४॥

पदच्छेद— एतत् विद्वान् पुरा मृत्योः अभवाय घटेत सः।
अप्रमत्तः इदम् ज्ञात्वा मर्त्यम् अपि अर्थ सिद्धिदम् ॥

शब्दार्थ—

एतत्	१०.	यह	अप्रमत्तः	९.	सावधान होकर
विद्वान्	११.	ज्ञान प्राप्त करले जिससे	इदम्	५.	यह
पुरा	८.	पूर्व ही	ज्ञात्वा	६.	जानकर
मृत्योः	७.	मृत्यु होने से	मर्त्यम्	१.	मनुष्य शरीर मरण धर्मा होने
अभवाय	१३.	जन्म-मृत्यु के चक्कर में	अपि	२.	पर भी
घटेत	१४.	सदा-सदा के लिये छूट जाये	अर्थ	३.	परमार्थ वस्तु की
सः।	१२.	वह	सिद्धिम् ॥	४.	प्राप्ति कराने वाला है

श्लोकार्थ—मनुष्य शरीर मरण धर्मा होने पर भी परमार्थ वस्तु की प्राप्ति कराने वाला है। यह जानकर मृत्यु होने से पूर्व ही सावधान होकर यह ज्ञान प्राप्त कर ले जिससे वह जन्म-मृत्यु के चक्कर से सदा-सदा के लिये छूट जाय ॥

पञ्चदशः श्लोकः

छिद्यमानं यमैरेतैः कृतनीडं वनस्पतिम् ।
खगः स्वकेतमुत्सृज्य क्षेमं याति ह्यलम्पटः ॥१५॥

पदच्छेद—

छिद्यमानम् यमैः एतैः कृत नीडम् वनस्पतिम् ।
खगः स्वकेतम् उत्सृज्य क्षेमम् याति हि लम्पटः ॥

शब्दार्थ—

छिद्यमानम्	३.	प्रतिक्षण काटे जा रहे	खगः	८.	जीवरूपी पक्षी
यमैः	२.	यमदूतों द्वारा	स्वकेतम्	९.	अपने घर को
एतैः	१.	इन	उत्सृज्य	१०.	छोड़कर
कृत	६.	बनाकर रहने वाला	क्षेमम्	११.	कल्याण को
नीडम्	५.	घोंसला	याति हि	१२.	प्राप्त करता है
वनस्पतिम् ।	४.	शरीर रूपी वृक्ष पर	लम्पटः ॥	७.	अनासक्त

श्लोकार्थ—इन यम दूतों द्वारा प्रतिक्षण काटे जा रहे शरीररूपी वृक्ष पर घोंसला बनाकर जीवरूपी रहने वाला पक्षी अपने घर को छोड़कर कल्याण को प्राप्त करता है ॥

षोडशः श्लोकः

अहोरात्रैश्छिद्यमानं बुद्ध्वाऽऽयुर्भयवेपथुः ।
मुक्तसङ्गः परं बुद्ध्वा निरीह उपशाम्यति ॥१६॥

पदच्छेद—

अहोरात्रैः छिद्यमानम् बुद्ध्वा आयुः भय वेपथुः ।
मुक्त सङ्गः परम् बुद्ध्वा निरीह उपशाम्यति ॥

शब्दार्थ—

अहोरात्रैः	१.	दिन और रात	मुक्त	८.	छोड़कर
छिद्यमानम्	३.	क्षीण कर रहे हैं	सङ्गः	७.	वह व्यक्ति इस शरीर में आसक्ति
बुद्ध्वा	४.	यह जानकर	परम्	९.	परमतत्त्व का
आयुः	२.	शरीर की आयु को	बुद्ध्वा	१०.	ज्ञान प्राप्त करके
भय	५.	जो भय से	निरीह	११.	जीवन मरण से निरपेक्ष होकर
वेपथुः	६.	कांप उठता है	उपशाम्यति ॥	१२.	अपने आत्मा में ही शान्त हो जाता है

श्लोकार्थ—दिन और रात शरीर की आयु को क्षीण कर रहे हैं, यह जानकर जो भय से कांप उठता है । वह व्यक्ति इस शरीर में आसक्ति छोड़कर परमतत्त्व का ज्ञान प्राप्त करके जीवन मरण से निरपेक्ष होकर अपने आत्मा में ही शान्त हो जाता है ।

सप्तदशः श्लोकः

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ॥१७॥

पदच्छेद— नृ देहम् आद्यम् सुलभम् सुदुर्लभम् प्लवम् सुकल्पम् गुरुकर्णधारम् ।
मया अनुकूलेन नभस्वत् ईरितम् पुमान् भव अब्धिम् न तरेत् स आत्महा ॥

शब्दार्थ—

नृदेहम्	३.	यह मनुष्य शरीर ही	मया	९.	स्मरण मात्र से ही मैं
आद्यम्	१.	सबसे पहले तो	अनुकूलेन	१०.	अनुकूल
सुलभम्	२.	शुभ कर्मों की प्राप्ति का मूल	नभस्वत	११.	वायु के रूप में इसे
सुदुर्भम्	४.	अत्यन्त दुर्लभ है	ईरितम्	१२.	लक्ष्य को ओर बढ़ाने लगता है
प्लवम्	५.	यह संसार को पार करने की	पुमान्	१३	फिर भी जो मनुष्य
सुकल्पम्	६.	सुदृढ़ नौका है	भवअब्धिम्	१४.	भव सागर को
गुरु	७.	गुरुदेव ही	नतरेत्	१५.	पार न कर सके
कर्णधारम् ।	८.	इसके केवट है	स आत्महा ॥	१६.	वह आत्मा का हनन करने वाला है

श्लोकार्थ—सबसे पहले तो शुभ कर्मों की प्राप्ति का मूल यह मनुष्य शरीर ही अत्यन्त दुर्लभ है। यह संसार को पार करने की सुदृढ़ नौका है, गुरुदेव ही इसके केवट हैं। स्मरण मात्र से ही मैं अनुकूल वायु के रूप में इसे लक्ष्य को ओर बढ़ाने लगता है। फिर भी जो मनुष्य भव सागर को पार न कर सके वह आत्मा का हनन करने वाला है।

अष्टदशः श्लोकः

यदाऽऽरम्भेषु निर्विण्णो विरक्तः संयतेन्द्रियः ।
अभ्यासेनात्मनो योगी धारयेदचलं मनः ॥१८॥

पदच्छेद— यदा आरम्भेषु निर्विण्णो विरक्तः संयतेन्द्रियः ।
अभ्यासेनात्मानः योगी धारयेत् अचलम् मनः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब पुरुष	अभ्यासेन	८.	और अभ्यास के द्वारा
आरम्भेषु	२.	कर्मों से	आत्मनः	९.	अपना
निर्विण्णः	३.	उद्विग्न और	योगी	७.	योग में स्थित हो जाय
विरक्तः	४.	विरक्त हो जाय	धारयेत्	१२.	धारण कर ले
संयते	६.	अपने वश में करके	अचलम्	११.	मुझ परमात्मा में निश्चल रूप से
इन्द्रियः ।	५.	और इन्द्रियों को	मनः ॥	१०.	मन

श्लोकार्थ—जब पुरुष कर्मों से उद्विग्न और विरक्त हो जाय और इन्द्रियों को अपने वश में करके योग में स्थित हो जाय और अभ्यास के द्वारा अपना मन मुझ परमात्मा में निश्चल से धारण कर ले ॥

एकोनविंश श्लोकः

धार्यमाणं मनो यर्हि भ्राम्यदाश्वनवस्थितम् ।
अतन्द्रितोऽनुरोधेन मार्गेणात्मवशं नयेत् ॥१९॥

पदच्छेद—

धार्य माणम् मनः यर्हि भ्राम्यत् आशु अनवस्थितम् ।
अतन्द्रितः अनुरोधेन मार्गेण आत्म वशम् न येत ॥

शब्दार्थ—

धार्यमाणम्	२.	स्थिर करते समय	अतन्द्रितः	८.	तब बड़ी सावधानी से
मनः	३.	मन	अनुरोधेन	७.	समझा-बुझाकर
यर्हि	१.	जब	मार्गेण	९.	सही मार्ग से उसे
भ्राम्यत्	६.	इधर-उधर भटकने लगे	आत्म	१०.	अपने
आशु	५.	द्रुतगति से	वशम्	११.	वश में
अनवस्थितम् ।	४.	चञ्चल होकर	न येत् ॥	१२.	कर ले

श्लोकार्थ—जब स्थिर करते समय मन चञ्चल होकर द्रुतगति से इधर-उधर भटकने लगे । तब बड़ी सावधानी से समझा बुझाकर सही मार्ग से उसे अपने वश में कर ले ॥

विंशः श्लोकः

मनोगतिं न विसृजेज्जितप्राणो जितेन्द्रियः ।
सत्त्वसम्पन्नया बुद्ध्या मन आत्मवशं नयेत् ॥२०॥

पदच्छेद—

मनोगतिम् न विसृजेत् जितप्राणः जित इन्द्रियः ।
सत्त्वसम्पन्नया बुद्धया मनः आत्मवशम् नयेत् ॥

शब्दार्थ—

मनोगतिम्	४.	मन को एक क्षण के लिये भी	सत्त्व	७.	सत्त्व
न	५.	स्वतन्त्र न	सम्पन्नया	८.	सम्पन्न
विसृजेत्	६.	छोड़े	बुद्धया	९.	बुद्धि के द्वारा
जितप्राणः	१.	प्राणों को वश में करके	मनः	८.	मन को
जित	३.	जीतकर	आत्मवशम्	१०.	अपने वश में
इन्द्रियः ।	२.	और इन्द्रियों को	नयेत् ॥	१२.	कर लेना चाहिये

श्लोकार्थ—प्राणों को वश में करके और इन्द्रियों को जीतकर मन को एक क्षण के लिये भी स्वतन्त्र न छोड़े, सत्त्व सम्पन्न बुद्धि के द्वारा मन को अपने वश में कर लेना चाहिये ॥

एकविंशः श्लोकः

एष वै परमो योगो मनसः संग्रहः स्मृतः।
हृदयज्ञत्वमन्विच्छन् दम्यस्येवार्वतो मुहुः ॥२१॥

पदच्छेद—

एष वै परमः योगः मनसः संग्रहः स्मृतः।
हृदयज्ञत्वम् अन्विच्छन् दम्यस्य इव अर्वतः मुहुः ॥

शब्दार्थ—

एष वै	१०.	निर्जन और निर्भय होकर	हृदयज्ञत्वम्	४.	अपने मन के समान बनाने को
परमः	११.	यह भी परम	अन्विच्छन्	५.	इच्छा करने वाला सवार
योगः	१२.	योग है	दम्यस्य	२.	सिखाये जाने योग्य
मनसः	७.	वैसे ही मन को समझाकर	इव	१.	जैसे
संग्रह	८.	वश में करने को	अर्वतः	३.	घोड़े को
स्मृतः।	९.	कहा गया है	मुहुः ॥	६.	बार-बार पुचकारकर उसे वश में कर लेता है

श्लोकार्थ—जैसे सिखाये जाने योग्य घोड़े को अपने मन के समान बनाने की इच्छा करने वाला सवार बार-बार पुचकारकर उसे वश में कर लेता है। वैसे ही मन को समझाकर वश में करने को कहा गया है। यह भी परम योग है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

सांख्येन सर्वभावानां प्रतिलोमानुलोमतः।
भवाप्ययावनुध्यायेन्मनो यावत् प्रसीदति ॥२२॥

पदच्छेद—

सांख्येन सर्वभावानाम् प्रतिलोम अनुलोमतः।
भव अप्ययौ अनुध्यायेत् मनः यावत् प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

सांख्येन	१.	सांख्यशास्त्र में	भव अप्ययौ	४.	सृष्टि और प्रलय का
सर्व	२.	समस्त	अनुध्यायेत्	७.	चिन्तन तब-तक करना चाहिये
भावानाम्	३.	पदार्थों की	मनः	९.	मन
प्रतिलोम	६.	प्रतिलोम का	यावत्	८.	जब-तक
अनुलोमतः।	५.	अनुलोम और	प्रसीदति ॥	१०.	शान्त न हो जाय

श्लोकार्थ—सांख्यशास्त्र में समस्त पदार्थों की सृष्टि और प्रलय का अनुलोम और प्रतिलोम का चिन्तन तब-तक करना चाहिये जब-तक मन शान्त न हो जाय ॥

त्रयविंशः श्लोकः

निर्विण्णस्य विरक्तस्य पुरुषस्योक्तवेदिनः ।
मनस्त्यजति दौरात्म्यं चिन्तितस्यानुचिन्तया ॥२३॥

पदच्छेद—

निर्विण्णस्य विरक्तस्य पुरुषस्यः उक्त वेदिनः ।
मनः त्यजति दौरात्म्यम् चिन्तितस्य अनुचिन्तया ॥

शब्दार्थ—

निर्विण्णस्य	१.	संसार से उद्विग्न	तिष्ठेत्	६.	मन
विरक्तस्य	२.	विरक्त तथा	मनः त्यजति	११.	छोड़ देता है
पुरुषस्यः	५.	मनुष्य का	दौरात्म्यम्	१०.	चञ्चलता
उक्त	३.	उक्त बात को	चिन्तितस्य	७.	गुरु के उपदेशानुसार
वेदिनः ।	४.	समझ लेने वाले	अनु	८.	बार-बार
			चिन्तया	९.	चिन्तन करने से

श्लोकार्थ—संसार से उद्विग्न विरक्त तथा उक्त बात को कमझ लेने वाले गुरु के उपदेशानुसार मनुष्य का मन चिन्तन विषय का बार-बार चिन्तन न करने से चञ्चलता छोड़ देता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

यमादिभिर्योगपथैरान्वीक्षिक्या च विद्यया ।
ममार्चोपासनाभिर्वा नान्यैर्योग्यं स्मरेन्मनः ॥२४॥

पदच्छेद—

यम आदिभिः योग पथैः अन्वीक्षिक्या च विद्यया ।
मम अर्चा उपासनाभिः वा न अन्यैः योग्यम् स्मरेत् मनः ॥

शब्दार्थ—

यम	१.	यम-नियम	मम अर्चा	७.	मेरी प्रतिमा को
आदिभिः	२.	आदि	उपासनाभिः	८.	उपासना से
योग पथैः	३.	अष्टाङ्ग योग मार्गों से	वा	९.	तथा
अन्वीक्षिक्या	५.	वस्तु तत्त्व का निरीक्षण करने वाली और	न अन्यैः	१०.	इसके लिये अन्य कोई
च	४.	और	योग्यम्	११.	उपाय उचित नहीं है
विद्यया ।	६.	आत्म विद्या से	स्मरेत्मनः ॥	१२.	मन परमात्मा का चिन्तन करने लगता है

श्लोकार्थ—यम-नियम आदि अष्टांग योग मार्गों से और वस्तु तत्त्व का निरीक्षण करने वाली आत्म विद्या से तथा मेरी प्रतिमा की उपासना से मन परमात्मा का चिन्तन करने लगता है । इसके लिये अन्य कोई उपाय उचित नहीं है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

यदि कुर्यात् प्रमादेन योगी कर्म विगर्हितम् ।
योगेनैव दहेद् दंहो नान्यत्तत्र कदाचन ॥२५॥

पदच्छेद— यदि कुर्यात् प्रमादेन योगी कर्म विगर्हितम् ।
योगेन एव यदेत् अंहः व अन्यत् तत्र कदाचन् ॥

शब्दार्थ—

यदि	१.	यदि कभी	योगेन	७.	योग के द्वारा
कुर्यात्	६.	हो जाय तो	एवयदेत्	८	ही उस पाप को
प्रमादेन	३.	प्रमादवश	अंहः	६.	जला डाले
योगी	२.	योगी से	न अन्यत्	१२.	दूसरे प्रायश्चित कर्म न करे
कर्म	५.	कर्म	तत्र	१०.	उस विषय में
विगर्हितम् ।	४.	कोई पाप	कदावन् ॥	११.	कभी भी

श्लोकार्थ—यदि कभी योगी से प्रमादवश कोई पाप कर्म हो जाय तो योग के द्वारा ही उस पाप को जला डाले । उस विषय में कभी भी दूसरे प्रायश्चित कर्म न करे ॥

षट्विंशः श्लोकः

स्वे स्वेऽधिकारे या निष्ठा स गुणः परिकीर्तितः ।
कर्मणां जात्यशुद्धानामनेन नियमः कृतः ।
गुणदोषविधानेन सङ्गानां त्याजनेच्छया ॥२६॥

पदच्छेद— स्वे-स्वे अधिकारे या निष्ठा सः गुणः परिकीर्तितः ।
कर्मणाम् जाति शुद्धानाम् अनेन निगमः कृतः ।
गुण दोष विधानेन सङ्गानाम् त्याजन इच्छया ॥

शब्दार्थ—

स्वे-स्वे	१.	अपने-अपने	अनेन	१४.	शास्त्र का तात्पर्य इनका
अधिकारे	२.	अधिकार में	निगमः	१५.	नियन्त्रण नियम हो
यानिष्ठा	३.	जो निष्ठा है	कृतः ।	१६.	है
सः गुणः	४.	वही गुण	गुण-दोष	६.	क्योंकि इस गुण और दोष के
परिकीर्तितः ।	५.	कहा गया है	विधानेन	७.	विधान से
कर्मणाम्	११.	कर्म तो	सङ्गानाम्	८.	आसक्ति
जाति	१२.	जन्म से ही	त्याजन	६.	त्याग की
शुद्धानाम्	१३.	अशुद्ध है	इच्छया ॥	१०.	इच्छा ही शास्त्र का तात्पर्य है

श्लोकार्थ—अपने-अपने अधिकार में जो निष्ठा है । वही गुण कहा गया है । क्योंकि इस गुण और दोष के विधान से आसक्ति के त्याग की इच्छा ही शास्त्र का तात्पर्य है । कर्म तो जन्म से ही अशुद्ध है । शास्त्र का तात्पर्य इनका नियन्त्रण नियम ही है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

जातश्रद्धो मत्कथासु निर्विण्णः सर्वकर्मसु ।
वेद दुःखात्मकान् कामान् परित्यागेऽप्यनीश्वरः ॥२७॥

पदच्छेद—

जात श्रद्धः मत्कथासु निर्विण्णः सर्व कर्मसु ।
वेद दुःख आत्मकान् परित्यागे अपि न ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

जात	६. वान हो	वेद	१०. जानता हो, पर
श्रद्धः	५. श्रद्धा	दुःख	८. दुःख
मत् कथासु	४. मेरी लीला कथा के प्रति	आत्मकान्	९. रूप
निर्विण्णः	३. विरक्त हो गया हो और	कामान्	७. समस्त भोगवासनाओं को
सर्व	१. जो साधक समस्त	परित्यागे	११. उनके त्याग में
कर्मसु ।	२. कर्मों से	अपि न ईश्वरः ॥	१२. फिर भी समर्थ न हो

श्लोकार्थ—जो साधक समस्त कर्मों से विरक्त हो गया हो, और मेरी लीला कथा के प्रति श्रद्धावान् हो, पर समस्त भोग वासनाओं को दुःख रूप जानता हो, तथा उनके त्याग में फिर भी समर्थ न हो ॥

अष्टविंशः श्लोकः

ततो भजेत मां प्रीतः श्रद्धालुर्दृढनिश्चयः ।
जुषमाणश्च तान् कामान् दुःखोदर्कांश्च गर्हयन् ॥२८॥

पदच्छेद—

ततः भजेत् माम् प्रीतः श्रद्धालुः दृढ निश्चयः ।
जुषमाणः च तान् कामान् दुःख उद्कान् च गर्हयन् ॥

शब्दार्थ—

ततः	७. पश्चात्	जुषमाणः	५. भोगते हुये
भजेत्	१२. भजन करे	च तान्	३. उन
माम्	११. मेरा	कामान्	४. भोगों को
प्रीतः	१०. प्रेम से	दुःख	२. दुःखदायी
श्रद्धालु	८. श्रद्धा	उद्कान्	१. वह परिणाम में
दृढ़निश्चयः ।	९. दृढ़ निश्चय और	च गर्हयन् ॥	६. और उनकी निन्दा करते हुये

श्लोकार्थ—वह परिणाम दुःखदायी उन भोगों को भोगते हुये और उनकी निन्दा करते हुये पश्चात् श्रद्धा दृढ़ निश्चय और प्रेम से मेरा भजन करे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

प्रोक्तेन भक्तियोगेन भजतो मासकृन्मुनेः ।
कामा हृदय्या नश्यन्ति सर्वे मयि हृदि स्थिते ॥२९॥

पदच्छेद—

प्रोक्तेन भक्ति योगेन भजतः मा असकृत् मुनेः ।
कामाः हृदय्याः नश्यन्ति सर्वे मयि हृदि स्थिते ॥

शब्दार्थ—

प्रोक्तेन	१.	इस प्रकार मेरे बतलाये हुये	कामाः	११.	वासनायें
भक्तियोगेन	२.	भक्ति योग के द्वारा	हृदय्याः	९.	उसके हृदय की
भजतः	५.	भजन करने से मैं	नश्यन्ति	१२.	नष्ट हो जाती है
मा	३.	मेरा	सर्वे	१०.	सारी
असकृत्	४	निरन्तर	मयि	८.	मेरे विराजमान होते ही
मुनेः ।	६.	उस साधक के	हृदिस्थिते ॥	७	हृदय में बैठ जाता हूँ

श्लोकार्थ—इस प्रकार मेरे बतलाये हुये भक्ति योग के द्वारा मेरा निरन्तर भजन करने से मैं उस साधक के हृदय में बैठ जाता हूँ। मेरे विराजमान होते ही उसके हृदय की सारी वासनायें नष्ट हो जाती हैं॥

त्रिंशः श्लोकः

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्व संशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि मयि दृष्टेऽखिलात्मनि ॥३०॥

पदच्छेद—

भिधते हृदय ग्रन्थिः छिद्यन्ते सर्व संशयाः ।
क्षीयन्ते च अस्य कर्माणि मयि दृष्टे अखिल आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

भिधते	७.	टूट जाती है	क्षीयन्ते	१२.	क्षीण हो जाती हैं
हृदय	५	हृदय की	च अस्य	४.	उस साधक के
ग्रन्थिः	६.	गांठ	कर्माणि	११.	और कर्म वासनायें
छिद्यन्ते	१०.	छिन्न-भिन्न हो जाते हैं	मयि	२.	मुझ ब्रह्म का
सर्व	८.	उसके सारे	दृष्टे	३.	साक्षात्कार हो जाता है तो
संशयाः ।	९	संशय	अखिल आत्मनि ॥	१.	इस प्रकार जब सबके आत्मरूप

श्लोकार्थ—इस प्रकार जब सबके आत्मरूप मुझ ब्रह्म का साक्षात्कार हो जाता है। तो उस साधक के हृदय की गांठ टूट जाती। उसके सारे संशय छिन्न-भिन्न हो जाते हैं और कर्म वासनायें क्षीण हो जाती हैं॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तस्मान्मद्भक्तियुक्तस्य योगिनो वै मदात्मनः ।
न ज्ञानं न च वैराग्यं प्रायः श्रेयो भवेदिह ॥३१॥

पदच्छेद—

तस्मात् मत् भक्ति युक्तस्य योगिनः वै मत् आत्मनः ।
न ज्ञानम् न च वैराग्यम् प्रायः श्रेयः भवत् इह ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. इसीलिये	न ज्ञानम्	८.	उसके लिये ज्ञान
मत्	२. मेरी	न च	१०.	आवश्यकता नहीं होती
भक्ति	३. भक्ति से	वैराग्यम्	९	अथवा वैराग्य की
युक्तस्य	४. युक्त	प्रायः	१३.	मेरी भक्ति से ही
योगिनः	५. जो योगी	श्रेयः	१२.	उसका कल्याण तो
वै मत्	६. मेरे	भवत्	१४.	हो जाता है
आत्मनः ।	७. चिन्तन में मग्न रहता है	इह ॥	११.	इस लोक में

श्लोकार्थ—इसीलिये मेरी भक्ति से युक्त जो योगी मेरे चिन्तन में मग्न रहता है। उसके लिये ज्ञान अथवा वैराग्य की आवश्यकता नहीं होती, इसलोक में उसका कल्याण तो मेरी भक्ति से ही हो जाता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यत् कर्मभिर्यत्तपसा ज्ञानवैराग्यतश्च यत् ।
योगेन दानधर्मेण श्रेयोभिरितरैरपि ॥३२॥

पदच्छेद—

यत् कर्मभिः यत् तपसा ज्ञान वैराग्यतः च यत् ।
योगेन दान धर्मेणश्रेयोभिः इतरैः अपि ॥

शब्दार्थ—

यत्	१. जो	योगेन	८.	योग
कर्मभिः	२. कर्म के द्वारा	दान	९.	दान
यत्	३. जो	धर्मेण	१०.	धर्म और
तपसा	४. तपस्या	श्रेयोभिः	१२.	कल्याण मार्गों के द्वारा
ज्ञान	५. ज्ञान और	इतरैः	११.	दूसरे
वैराग्यतः	६. वैराग्य के द्वारा	अपि ॥	१३.	प्राप्त होता है वह मेरी भक्ति से मिल जाता है
च यत् ।	७. तथा जो			

श्लोकार्थ—जो कर्म के द्वारा, जो तपस्या के द्वारा, ज्ञान और वैराग्य के द्वारा तथा जो योग-दान धर्म और दूसरे कल्याण मार्गों के द्वारा प्राप्त होता है। वह मेरी भक्ति से मिल जाता है ॥

त्रयोत्रिंशः श्लोकः

सर्वं मद्भक्तियोगेन मद्भक्तो लभतेऽञ्जसा ।
स्वर्गापवर्गं मद्धाम कथञ्चिद् यदि वाञ्छति ॥३३॥

पदच्छेद—

सर्वम् मत् भक्ति योगेन मत् भक्तः लभते अञ्जसा ।
स्वर्गा पवर्गम् मत् धाम कथञ्चित् यदि वाञ्छति ॥

शब्दार्थ—

सर्वम्	७.	वह सब	स्वर्गा	१.	स्वर्ग
मत्-भक्ति	८.	मेरी भक्ति	अपवर्गम्	२.	अपवर्ग
योगेन	९.	योग के प्रभाव से	मत्धाम	३.	मेरा परमधाम अथवा
मत्-भक्त	१०.	मेरा भक्त	कथञ्चित्	५.	कोई भी वस्तु
लभते	१२.	प्राप्त कर लेता है	यदि	४.	यदि
अञ्जसा ।	११.	अनायास ही	वाञ्छति ॥	६.	चाहता है तो

श्लोकार्थ—स्वर्ग-अपवर्ग मेरा परमधाम अथवा यदि कोई भी वस्तु चाहता है तो वह सब मेरी भक्ति योग के प्रभाव से मेरा भक्त अनायास ही प्राप्त कर लेता है ॥

चतुःत्रिंशः श्लोकः

न किञ्चित् साधवो धीरा भक्ता ह्येकान्तिनो मम ।
वाञ्छन्त्यपि मया दत्तं कैवल्यमपुनर्भवम् ॥३४॥

पदच्छेद—

न किञ्चित् साधवः धीराः भक्ताः हि एकान्तिनः मम् ।
वान्छन्ति अपि मया दत्तम् कैवल्यम् अपुनर्भवम् ॥

शब्दार्थ—

न किञ्चित्	६.	स्वयं तो कुछ नहीं	वान्छन्ति	७.	चाहते हैं परन्तु
साधवः	४.	साधु	अपि	१२.	भी नहीं लेना चाहते हैं
धीराः	३.	धैर्यवान्	मया	८.	मेरे
भक्ताः	५.	भक्त	दत्तम्	९.	देने पर
हि एकान्तिनः	२.	अनन्य प्रेमी एवम्	कैवल्यम्	१०.	कैवल्य
मम् ।	१.	मेरे	अपुनर्भवम् ॥	११.	मोक्ष

श्लोकार्थ—मेरे अनन्य प्रेमी भक्त एवम् धैर्यवान् साधु भक्त स्वयं तो कुछ नहीं चाहते हैं । परन्तु मेरे देने पर कैवल्य मोक्ष भी नहीं लेना चाहते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नैरपेक्ष्यं परं प्राहुर्निःश्रेयसमनल्पकम् ।
तस्मान्निराशिषो भक्तिर्निरपेक्षस्य मे भवेत् ॥३५॥

पदच्छेद—

नैरपेक्ष्यम् परम् प्राहुः निः श्रेयसम् अन अल्पकम् ।
तस्मात् निराशिषः भक्तिः निरपेक्षस्य मे भवेत् ॥

शब्दार्थ—

नैरपेक्ष्यम्	४.	निरपेक्षता को ही	तस्मात्	६.	इसलिये
परम्	१.	सबसे श्रेष्ठ	निराशिषः	७.	निष्काम और
प्राहुः	५.	माना गया है	भक्तिः	९.	भक्ति
निःश्रेयसम्	३.	परम कल्याण	निरपेक्षस्य	८.	निरपेक्ष व्यक्ति को
अनअल्पकम्	२.	और महान	मे भवेत् ॥	१०.	मेरी प्राप्त होती है

श्लोकार्थ—सबसे श्रेष्ठ और महान परम कल्याण निरपेक्षता को ही माना गया है। इसलिये निष्काम और निरपेक्ष व्यक्ति को मेरी भक्ति प्राप्त होती है ॥

षट्त्रिंशः श्लोक

न मय्येकान्तभक्तानां गुणदोषोद्भवा गुणाः ।
साधूनां समचित्तानां बुद्धेः परमुपेयुषाम् ॥३६॥

पदच्छेद—

न मयि एकान्त भक्तानाम् गुणदोषः उद्भवा गुणा ।
साधू नाम् सम चित्तानाम् बुद्धेः परम् उपेयुषाम् ॥

शब्दार्थ—

न	१२.	कोई सम्बन्ध नहीं होता है	गुणाः ।	११.	पाप पुण्य से
मयि	१.	मेरे	साधूनाम्	८.	महात्माओं का
एकान्त	२.	अनन्य प्रेमी	समचित्तानाम्	७.	समदर्शी
भक्तानाम्	३.	भक्तों का और	बुद्धेः	४.	बुद्धि से अतीत
गुणदोष	९.	विधि और निषेध से	परम्	५.	परम तत्त्व को
उद्भवा	१०.	होने वाले	उपेयुषाम् ॥	६.	प्राप्त हुये

श्लोकार्थ—मेरे अनन्य प्रेमी भक्तों का और बुद्धि से अतीत परमतत्त्व को प्राप्त हुये समदर्शी महात्माओं का विधि-निषेध से होने वाले पाप-पुण्य से कोई सम्बन्ध नहीं होता है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

एवमेतान् मयाऽऽदिष्टाननुतिष्ठन्ति मे पथः ।
क्षेमं विन्दन्ति मत्स्थानं यद् ब्रह्म परमं विदुः ॥३७॥

पदच्छेद—

एवम् एतान् मया आदिष्टान् अनुतिष्ठन्ति मे पथः ।
क्षेमम् विन्दन्ति मत् स्थानम् यत् ब्रह्म परमम् विदुः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	क्षेमम्	८.	वे परम कल्याण स्वरूप
एतान्	४.	इन ज्ञान, भक्ति और	विन्दन्ति	१०.	प्राप्त करते हैं
मया	२.	मेरे कर्म आदि	मत् स्थानम्	९.	मेरे परमधाम को
आदिष्टान्	३.	बतलाये हुये	यत्	११.	क्योंकि वे
अनुतिष्ठन्ति	७.	आश्रय लेते हैं	ब्रह्म	१३.	ब्रह्मतत्त्व को
मे	५.	मेरे	परमम्	१२.	पर
पथः ।	६.	मार्गों का जो लोग	विदुः ॥	१४.	जान लेते हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार मेरे बतलाये हुये इन ज्ञान, भक्ति और कर्म आदि मेरे मार्गों का जो लोग आश्रय लेते हैं। वे परम कल्याण स्वरूप मेरे परमधाम को प्राप्त करते हैं। क्योंकि वे पर-ब्रह्मतत्त्व को जान लेते हैं॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशः स्कन्धे विंशः अध्यायः ॥२०॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—य एतान् मत्पथो हित्वा भक्तिज्ञानक्रियात्मकान् ।
क्षुद्रान् कामांश्चलैः प्राणैर्जुषन्तः संसरन्ति ते ॥१॥

पदच्छेद— यः एतान् मत्पथः हित्वा भक्ति ज्ञान क्रिया आत्मकान् ।
क्षुद्रान् कामान् चलैः प्राणैः जुषन्तः संसरन्ति ते ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो मनुष्य	क्षुद्रान्	१०.	क्षुद्र
एतान्	५.	इन	कामान्	११.	भोगों को
मत्पथः	६.	मेरी प्राप्ति के तीन मार्गों को	चलैः	८.	चञ्चल
हित्वा	७.	छोड़ कर	प्राणैः	९.	इन्द्रियों के द्वारा
भक्ति-ज्ञान	२.	भक्ति-ज्ञान और	जुषन्तः	१२.	भोगते रहते हैं
क्रिया	३.	कर्म	संसरन्ति	१४.	संसार के चक्कर में भटकते है
आत्मकान् ।	४.	योगरूप	ते ॥	१३.	वे बार-बार

श्लोकार्थ—जो मनुष्य भक्ति-ज्ञान और कर्म योगरूप इन मेरी प्राप्ति के तीन मार्गों को छोड़कर चञ्चल इन्द्रियों के द्वारा क्षुद्र भोगों को भोगते रहते हैं । वे बार-बार संसार के चक्कर में भटकते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

स्वे स्वेऽधिकारे या निष्ठा स गुणः परिकीर्तितः ।
विपर्ययस्तु दोषः स्यादुभयोरेष निश्चयः ॥२॥

पदच्छेद— स्वे-स्वे अधिकारे यानिष्ठा सः गणः परिकीर्तितः ।
विपर्ययः तु दोषः स्यात् उभयोः एष निश्चयः ॥

शब्दार्थ—

स्वे-स्वे	१.	अपने-अपने	विपर्ययः	७.	इसके विपरीत चेष्ठा को
अधिकारे	२.	अधिकार के अनुसार	तु दोषः	८.	दोष
या	३.	धर्म में जो	स्यात्	९.	माना गया है
निष्ठा	४.	निष्ठा होती है	उभयोः	१०.	गुण और दोष दोनों का
सः गणः	५.	उसे गुण	एष	११.	इसी प्रकार
परिकीर्तितः ।	६.	कहते हैं	निश्चयः ॥	१२.	निर्णय किया गया है

श्लोकार्थ—अपने-अपने अधिकार के अनुसार धर्म में जो निष्ठा होती है । उसे गुण कहते हैं इसलिये विपरीत चेष्ठा को दोष माना गया है । गुण और दोष दोनों का इसी प्रकार निर्णय किया गया है ॥

तृतीयः श्लोकः

शुद्ध्यशुद्धी विधीयेते समानेष्वपि वस्तुषु ।
द्रव्यस्य विचिकित्सार्थं गुणदोषौ शुभाशुभौ ॥३॥

पदच्छेद —

शुद्धि अशुद्धि विधीयेते समानेषु अपि वस्तुषु ।
द्रव्यस्य विचिकित्सार्थम् गुणदोषो शुभ अशुभौ ॥

शब्दार्थ—

शुद्धि	४.	शुद्धि	द्रव्यस्य	११.	वह द्रव्य के बारे में
अशुद्धि	५.	अशुद्धि	विचिकित्सार्थम्	१२.	सन्देह उत्पन्न करके स्वरूप निरूपण हेतु है
विधीयेते	१०.	जो विधान किया जाता है	गुण	६.	गुण
समानेषु	२.	समान होने पर	दोषौ	७.	दोष और
अपि	३.	भी	शुभ	८.	शुभ
वस्तुषु ।	१.	वस्तुओं के	अशुभौ ॥	९.	अशुभ आदि का

श्लोकार्थ—वस्तुओं के समान होने पर भी शुद्धि-अशुद्धि, गुण-दोष और शुभ-अशुभ आदि का जो विधान किया जाता है, वह द्रव्य के बारे में सन्देह उत्पन्न करके स्वरूप निरूपण हेतु है ॥

चतुर्थः श्लोकः

धर्मार्थं व्यवहारार्थं यात्रार्थमिति चानघ ।
दर्शितोऽयं मयाऽऽचारो धर्ममुद्वहतां धुरम् ॥४॥

पदच्छेद—

धर्म अर्थम् व्यवहार अर्थम् यात्रा अर्थम् इति च अनघ ।
दर्शितः अयम् मया आचारः धर्मम् उद्वहताम् धुरम् ॥

शब्दार्थ—

धर्म	८.	धर्म	दर्शितः	१४.	उपदेश किया है
अर्थम्	९.	सम्पादन करने के लिये	अयम्	२.	यह
व्यवहार अर्थम्	१०.	व्यवहार के लिये और	मया	४.	मैंने ही मनु आदि का रूप धारण करके
यात्रा	११.	व्यक्तिगत जीवन	आचारः	३.	आचार
अर्थम्	१२.	निर्वाह के लिये	धर्मम्	५.	धर्म का
इति च	१३.	इस प्रकार का	उद्वहताम्	७.	ढोने वालों को
अनघ ।	१.	हे निष्पाप उद्धव !	धुरम् ॥	६.	भार

श्लोकार्थ—हे निष्पाप उद्धव ! यह आचार मैंने ही मनु आदि का रूप धारण करके धर्म का भार ढोने वालों को धर्म सम्पादन करने के लिये, व्यवहार के लिये और व्यक्तिगत जीवन निर्वाह के लिये इस प्रकार का उपदेश किया है ॥

पञ्चमः श्लोकः

भूम्यम्ब्वग्न्यनिलाकाशा भूतानां पञ्च धातवः ।
आब्रह्मस्थावरादीनां शारीरा आत्मसंयुताः ॥५॥

पदच्छेद—

भूमि अम्बु अग्नि अनिल आकाशाः भूतानाम् पञ्चधातवः ।
आब्रह्म स्थावर आदीनाम् शरीराः आत्म संयुताः ॥

शब्दार्थ—

भूमि	१.	पृथ्वी	आब्रह्म	७.	ब्रह्मा से लेकर
अम्बु	२.	जल	स्थावर	९.	स्थिर रहने वाले
अग्नि अनिल	३.	तेज-वायु	आदीनाम्	८.	पर्वत आदि
आकाशाः	६.	आकाश	शरीराः	११.	सबके शरीरों के
भूतानाम्	४.	भूत ही	आत्म	१२.	सबका आत्मा
पञ्च	५.	ये पाँच	संयुताः॥	१०.	एक ही है
धातवः ।	११.	मूल कारण हैं			

श्लोकार्थ—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश ये पांच भूत ही ब्रह्मा से लेकर स्थिर रहने वाले पर्वत आदि सबके शरीरों के मूल कारण हैं। सबका आत्मा एक ही है ॥

षष्ठः श्लोकः

वेदेन नामरूपाणि विषमाणि समेष्वपि ।
धातुषूद्धव कल्प्यन्ते एतेषां स्वार्थसिद्धये ॥६॥

पदच्छेद—

वेदेन नाम रूपाणि विषमाणि समेषु अपि ।
धातुषु उद्धव कल्पयन्ते एतेषाम् स्वार्थ सिद्धये ॥

शब्दार्थ—

वेदेन	५.	वेदों ने	धातुषु	२.	शरीरों के पञ्चभूत
नाम	६.	इनके नाम और	उद्धव	१.	प्रिय उद्धव
रूपाणि	७.	रूप	कल्पयन्ते	९.	बनाये हैं कि
विषमाणि	८.	इसलिये अलग-अलग	एतेषाम्	१०.	इनका
समेषु	३.	समान होने पर	स्वार्थ	११.	पुरुषार्थ
अपि ।	४.	भी	सिद्धये ॥	१२.	सिद्ध न हो सके

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! शरीरों के पञ्चभूत समान होने पर भी वेदों ने इनके नाम और रूप इसलिये अलग-अलग बनाये हैं कि इनका पुरुषार्थ सिद्ध हो सके ॥

सप्तमः श्लोकः

देशकालादिभावानां वस्तूनां मम सत्तम ।
गुणदोषौ विधीयेते नियमार्थं हि कर्मणाम् ॥७॥

पदच्छेद—

देशकाल आदि भावानाम् वस्तुनाम् मम सत्तम ।
गुण दोषौ विधीयते नियमार्थम् हि कर्मणाम् ॥

शब्दार्थ—

देशकाल	१. देश-काल	गुण	८.	गुण
आदि	२. आदि	दोषौ	७.	दोषों का
भावानाम्	३. भावात्मक	विधीयते	९.	विधान भी
वस्तूनाम्	४. वस्तुओं के	नियम	११.	नियन्त्रण के
मम	५. मेरे द्वारा	अर्थम् हि	१०.	लिये ही किया गया है
सत्तम ।	६. हे साधु श्रेष्ठ उद्धव !	कर्मणाम् ॥	१२.	कर्मों में

श्लोकार्थ –हे साधुश्रेष्ठ उद्धव ! देशकाल आदि भावात्मक वस्तुओं के गुण दोषों का विधान भी मेरे द्वारा कर्मों में नियन्त्रण के लिये ही किया गया है ।

अष्टमः श्लोकः

अकृष्णसारो देशानामब्रह्मण्योऽशुचिर्भवेत् ।
कृष्णसारोऽप्यसौवीरकीकटासंस्कृतेरिणम् ॥८॥

पदच्छेद—

अकृण्णसारः देशानाम अब्रह्मण्यः अशुचिः भवेत् ।
कृष्णसारः अपि असौ वीर कीकटः असंस्कृत ईरिणम् ॥

शब्दार्थ—

अकृष्णसारः	१. कृष्ण सार मृग से रहित	अपि	८.	भी
देशानाम	३. देश अपवित्र है	असौ	९.	इस
अब्रह्मण्यः	२. जहाँ के निवासी ब्राह्मण-भक्त न हों	वीर	७.	सन्तपुरुष युक्त स्थान को छोड़कर
अशुचिः	४. वह देश आपवित्र है	कीकट	१०.	कीकट देश अपवित्र हैं
भवेत्	५. होता है	असंस्कृत	११.	संस्कार रहित
कृष्णसारः ।	६. कृष्णसार मृग के होने पर	ईरिणम् ॥	१२.	ऊसर आदि स्थान अपवित्र होते हैं

श्लोकार्थ—कृष्णसार मृग से रहित देश अपवित्र है । जहाँ के निवासी ब्राह्मण भक्त न हों वह देश अपवित्र होता है । कृष्णसार मृग के होने पर भी इस सन्त पुरुष युक्त स्थान को छोड़कर कीकट देश अपवित्र है । संस्कार रहित ऊसर आदि स्थान अपिवत्र होते हैं ।

नवमः श्लोकः

कर्मण्यो गुणवान् कालो द्रव्यतः स्वत एव वा ।
यतो निवर्तते कर्म स दोषोऽकर्मकः स्मृतः ॥६॥

पदच्छेद—

कर्मण्यः गुणवान् कालः द्रव्यतः स्वत एव वा ।
यतः निवर्तते कर्म स दोषः अकर्मकः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

कर्मण्यः	१. कर्म करने योग्य	यतः	७. जिसमें
गुणवान्	३. पवित्र है जिसमें	निवर्तते	६. न हो सके
कालः	२. समय	कर्म	८. कर्म
द्रव्यतः	४. द्रव्य आदि के द्वारा	सः दोषः	१०. स्वभाविक दोष के कारण वह समय
स्वत	६. स्वयं कर्म न हो सके	अकर्मकः	११. कर्म करने के अयोग्य
एव वा ।	५. अथवा	स्मृतः ॥	१२. माना गया है

श्लोकार्थ—कर्म करने योग्य समय पवित्र है जिसमें द्रव्य आदि के द्वारा अथवा स्वयं कर्म हो सके। जिसमें कर्म न हो सके स्वभाविक दोष के कारण वह समय कर्म करने के अयोग्य माना गया है ॥

दशमः श्लोकः

द्रव्यस्य शुद्ध्यशुद्धी च द्रव्येण वचनेन च ।
संस्कारेणाथ कालेन महत्त्वाल्पतयाथवा ॥१०॥

पदच्छेद—

द्रव्यस्य शुद्धि अशुद्धि च द्रव्येण वचनेन च ।
संस्कारेण अथ कालेन महत्त्व अल्पतया अथवा ॥

शब्दार्थ—

द्रव्यस्य	१. पदार्थों की	संस्कारेण	११. संस्कार
शुद्धि	२. शुद्धि	अथ	१२. और
अशुद्धि	५. अशुद्धि	कालेन	६. काल
च	३. और	महत्त्व	१०. महत्त्व
द्रव्येण	४. द्रव्य	अल्पतया	७. अल्पत्व से भी होती है
वचनेन च ।	६. वचन तथा	अथवा ॥	८. अथवा

श्लोकार्थ—पदार्थों की शुद्धि और अशुद्धि द्रव्य, वचन तथा संस्कार और काल अथवा महत्त्व, अल्पत्व से भी होती है ॥

एकादशः श्लोकः

शक्तयाशक्तयाथवाबुद्ध्या समृद्ध्या च यदात्मने ।
अघं कुर्वन्ति हि यथा देशावस्थानुसारतः ॥११॥

पदच्छेद—

शक्तया अशक्तया अथवा बुद्धया समृद्धया च यत् आत्मने ।
अघम् कुर्वन्ति हि यथा देश अवस्था अनुसारतः ॥

शब्दार्थ—

शक्तया	३.	शक्ति	अघम्	९.	पाप या दोष
अशक्तया	४.	अशक्ति	कुर्वन्ति	१०.	करते हैं उसे
अथवा	६.	अथवा	हि यथा	८.	जिस प्रकार
बुद्धया	५.	बुद्धि	देश	१२.	स्थान और
समृद्धया च	७.	वैभव से	अवस्था	१२.	व्यवस्था के
यत्	१.	जिस	अनुसरतः ॥	१३.	अनुसार समझना चाहिये
आत्मने	२.	व्यक्ति के लिये			

श्लोकार्थ—जिस व्यक्ति के लिये शक्ति, अशक्ति, बुद्धि अथवा वैभव से जिस प्रकार पाप या दोष करते हैं, उसे स्थान और व्यवस्था के अनुसार समझना चाहिये ॥

द्वादशः श्लोकः

धान्यदार्वस्थितन्तूनां रसतैजसचर्मणाम् ।
कालवाय्वग्निमृत्तोयैः पार्थिवानां युतायुतैः ॥१२॥

पदच्छेद—

धान्यदारु अस्थि तन्तूनाम् रस तैजस चर्मणाम् ।
काल वायु अग्नि मृत् तोयैः पार्थिवानाम् युता युतैः ॥

शब्दार्थ—

धान्यदारु	१.	अनाज लकड़ी	काल वायु	८.	समय पर हवा लगने से
अस्थि	२.	हाथी दाँत	अग्नि	९.	आग में जलाने से
तन्तूनाम	३.	सूत	मृत्	१०.	मिट्टी लगाने से अथवा
रस	४.	मधु आदि	तोयैः	११.	जल में धोने से शुद्ध हो जाते हैं
तैजस	५.	पारा	पार्थिवानाम्	७.	पार्थिव पदार्थ
चर्मणाम्	६.	चमड़ा आदि	युता युतैः	१२.	कभी एक के द्वारा कभी अनेक के द्वारा शुद्ध किये जाते हैं

श्लोकार्थ—अनाज, लकड़ी, हाथी, दाँत, सूत, मधु आदि, पारा चमड़ा आदि पार्थिव पदार्थ समय पर हवा लगने से, आग में जलाने से, मिट्टी लगाने से अथवा जल में धोने से शुद्ध हो जाते हैं। कभी इनमें एक के द्वारा कभी अनेक के द्वारा शुद्ध किये जाते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अमेध्यलिप्तं यद् येन गन्धं लेपं व्यपोहति ।
भजते प्रकृतिं तस्य तच्छौचं तावदिष्यते ॥१३॥

पदच्छेद—

अमेध्य लिप्तम् यत् येन गन्धम् लेपम् व्यपोहति ।
भजते प्रकृतिम् तस्य तत् शौचत् तावत् इष्यते ॥

शब्दार्थ—

अमेध्य	२.	कोई अशुद्ध पदार्थ	भजते	१०.	प्राप्त कर ले
लिप्तम्	३.	लग गया हो	प्रकृतिम्	९.	स्वभाव को
यत्	१.	जिस वस्तु में	तस्य	८.	और वह वस्तु अपने पूर्व
येन्	४.	तो उसके	तत्	१२.	उस वस्तु को
गन्धम्	६.	जब उसकी गन्ध	शौचम्	१३.	पवित्र
लेपम्	५.	छीलने या मलने से	तावत्	११.	तब
व्यपोहति	७.	न रहे	इष्यते ॥	१४.	माना जाता है

श्लोकार्थ—जिस वस्तु में कोई अशुद्ध पदार्थ लग गया हो, तो उसके छीलने या मलने से जब उसकी गन्ध न रहे। और वह वस्तु अपने पूर्व स्वभाव को प्राप्त कर ले, तब उस वस्तु को पवित्र माना जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

स्नानदानतपोऽवस्थावीर्यसंस्कारकर्मभिः ।
मत्स्मृत्या चात्मनः शौचं शुद्धः कर्माचरेद् द्विजः ॥१४॥

पदच्छेद—

स्नान दान तपः अवस्था वीर्य संस्कार कर्मभिः ।
मत् स्मृत्या च आत्मनः शौचम् शुद्धः कर्म अचरेद्द्विजः ॥

शब्दार्थ—

स्नान	१.	स्नान	मत् स्मृत्या	७.	मेरे स्मरण से
दान-तपः	२.	दान-तपस्या	च आत्मनः	८.	चित्त की
अवस्था	३.	अवस्था	शौचम्	९.	शुद्धि होती है। इनसे
वीर्य	४.	सामर्थ्य	शुद्धः	१०.	शुद्ध होकर
संस्कार	५.	संस्कार	कर्म अचरेत्	१२.	विहित कर्मों का आचरण करना चाहिये
कर्मभिः।	६.	कर्म और	द्विजः ॥	११.	ब्राह्मण आदि को

श्लोकार्थ—स्नान, दान, तपस्या, अवस्था, सामर्थ्य, संस्कार-कर्म और मेरे स्मरण से चित्त की शुद्धि होती है। इनमें शुद्ध होकर ब्राह्मण आदि को विहित कर्मों का आचरण करना चाहिये।

पञ्चदशः श्लोकः

मन्त्रस्य च परिज्ञानं कर्मशुद्धिर्मदर्पणम् ।
धर्मः सम्पद्यते षड्भिरधर्मस्तु विपर्ययः ॥१५॥

पदच्छेद— मन्त्रस्य च परिज्ञानम् कर्म शुद्धिः मत् अर्पणम् ।
धर्मः सम्पद्यते षड्भिः अधर्मः तु विपर्ययः ॥

शब्दार्थ—

मन्त्रस्य च	२. मंत्र की और	धर्मः	८. शुद्ध होने पर धर्म और
परिज्ञानम्	१. गुरु मुख से सुनकर गम करने से	सम्पद्यते	११. होता है
कर्म	५. कर्म की	षड्भिः	७. देश, काल, पदार्थ, कर्ता, मन्त्र और कर्म से
शुद्धि	६. शुद्धि होती है	अधर्मः तु	१०. अधर्म
मत्	३. मुझे	विपर्ययः ॥	९. अशुद्ध होने पर
अर्पणम्	४. अर्पित कर देने से		

श्लोकार्थ—गुरु मुख से सुनकर हृदयंगम करने से मन्त्र की और मुझे अर्पित कर देने से कर्म की शुद्धि होती है। देश, काल, पदार्थ, कर्ता, मन्त्र और कर्म से शुद्ध होने पर धर्म और अशुद्ध होने पर अधर्म होता है ॥

षोडशः श्लोकः

क्वचिद् गुणोऽपि दोषः स्याद् दोषोऽपि विधिना गुणः ।
गुणदोषार्थनियमस्तद्भिदामेव बाधते ॥१६॥

पदच्छेद— क्वचिद् गुणः अपि दोषः स्यात् दोषः अपि विधिना गुणः ।
गुण दोषः अर्थ नियमः तत् भिदाम् एव बाधते ॥

शब्दार्थ—

क्वचिद्	२. कहीं कहीं	गुण दोषः	७. गुण और दोष का
गुणः अपि	४. गुण भी	अर्थ	८. वस्तु के विषय में
दोषः स्यात्	५. दोष हो जाता है	नियमः	९. विधान
दोषः अपि	६. और दोष भी	तत् भिदाम्	१०. गुण और दोषों की वास्तविकता
विधिना	१. शास्त्र विधि से	एव	११. का ही
गुणः ।	३. गुण हो जाता है	बाधते ॥	१२. खण्डन कर देता है

श्लोकार्थ—कहीं-कहीं गुण भी दोष हो जाता है। और दोष भी शास्त्र विधि से गुण हो जाता है। वस्तु के विषय में गुण और दोष का विधान गुण और दोषों की वास्तविकता का ही खण्डन कर देता है ।

सप्तदशः श्लोकः

समानकर्माचरणं पतितानां न पातकम् ।
औत्पत्तिको गुणः सङ्गो न शयानः पतत्यधः ॥१७॥

पदच्छेद—

समान कर्म आचरणम् पतितानाम् न पातकम् ।
औत्पत्तिकः गुणः सङ्गः न शयानः पतति अधः ॥

शब्दार्थ—

समान	१. पतितों के समान		औत्पत्तिकः	७.	जैसे स्वभाविकता
कर्म	२. कर्म का		गुणः	९.	पाप नहीं है
आचरणम्	३. आचरण करना		सङ्गः	८.	पत्नी का सङ्ग
पतितानाम्	४. पतितों के लिये		न शयानः	११.	सोया व्यक्ति कभी नहीं
न	६. नहीं है		पतति	१२.	गिरता है
पातकम् ।	५. पाप		अधः ॥	१०.	नीचे

श्लोकार्थ—पतितों के समान कर्म का आचरण करना पतितों के लिये पाप नहीं है । जैसे स्वभाविकता पत्नी का सङ्ग पाप नहीं है । और नीचे सोया व्यक्ति कभी नहीं गिरता है ॥

अष्टदशः श्लोकः

यतो यतो निवर्तेत विमुच्येत ततस्ततः ।
एष धर्मो नृणां क्षेमः शोकमोहभयापहः ॥१८॥

पदच्छेद—

यतः यतः निवर्तेत विमुच्येत ततः ततः ।
एषः धर्मः नृणाम् क्षेमः शोक-मोह-भयापहः ॥

शब्दार्थ—

यतः यतः	१. जिन-जिन वस्तुओं से	धर्मः	८.	निवृत्ति रूप धर्म ही
निवर्तेत	२. मनुष्य का चित्त उपरत होता है	नृणाम्	६.	मनुष्य के लिये
विमुच्येत	५. मुक्त हो जाता है	क्षेमः	९.	परम कल्याण का साधन है जो
ततः	३. उन्हीं वस्तुओं के	शोक	१०.	शोक
ततः	४. बन्धन से वह	मोह	११.	मोह और
एषः	७. यह	भयापहः ॥	१२.	भय को मिटाने वाला है

श्लोकार्थ—जिन-जिन वस्तुओं से मनुष्य का चित्त उपरत होता है । उन्हीं वस्तुओं के बन्धन से वह मुक्त हो जाता है । मनुष्य के लिये यह निवृत्ति रूप धर्म ही परम कल्याण का साधन है, जो शोक, मोह और भय को मिटाने वाला है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

विषयेषुगुणाध्यासात् पुंसः सङ्गस्ततो भवेत् ।
सङ्गात्तत्र भवेत् कामः कामादेव कलिर्नृणाम् ॥१९॥

पदच्छेद—

विषयेषु गुणा अध्यासात् पुंसः सङ्गः स्ततः भवेत् ।
सङ्गात् तत्र भवेत् कामः कामादेव कलि नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

विषयेषु	१.	विषयों में	सङ्गात्	७.	आसक्ति होने से
गुणा	२.	गुणों का	तत्र	८.	उनके प्रति
अध्यासात्	३.	आरोप करने से	भवेत् कामः	९.	कामना हो जाती है
पुंसः	४.	मनुष्य की	कामादेव	१०.	कामना की पूर्ति में बाधा होने से
सङ्गः ततः	५.	उनमें आसक्ति	कलिः	१२.	परस्पर कलह होने लगता है
भवत्	६.	हो जाती है	नृणाम् ॥	११.	मनुष्यों में

श्लोकार्थ—विषयों में गुणों का आरोप करने से मनुष्य की उनमें आसक्ति हो जाती है। आसक्ति होने से उनके प्रति कामना हो जाती है। कामना की पूर्ति में बाधा पड़ने से मनुष्यों में परस्पर कलह होने लगती है ॥

विंशः श्लोकः

कलेर्दुर्विषहः क्रोधस्तमस्तमनुवर्तते ।
तमसा ग्रस्यते पुंसश्चेतना व्यापिनी द्रुतम् ॥२०॥

पदच्छेद—

कलेः दुर्विषहः क्रोधः तमः तम् अनुवर्तते ।
तमसा ग्रस्यते पुंसः चेतना व्यापिनी द्रुतम् ॥

शब्दार्थ—

कलेः	१.	कलह से	तमसा	७.	इस अज्ञान से
दुर्विषहः	२	असह्य	ग्रस्यते	१२.	लुप्त हो जाती है
क्रोध	३.	क्रोध की उत्पत्ति होती है	पुंसः	९.	मनुष्य की
तमः	४.	फिर अज्ञान	चेतना	११.	चेतना शक्ति
तम्	५.	हो	व्यापिनी	१२.	व्यापक
अनुवर्तते ।	६.	जाता है	द्रुतम्॥	८.	शीघ्र ही

श्लोकार्थ—कलह से असह्य क्रोध की उत्पत्ति होती है। फिर अज्ञान हो जाता है। इस अज्ञान से शीघ्र ही मनुष्य की व्यापक चेतना शक्ति लुप्त हो जाती है ॥

एकविंशः श्लोकः

तया विरहितः साधो जन्तुः शून्याय कल्पते ।
ततोऽस्य स्वार्थविभ्रंशो मूर्च्छितस्य मृतस्य च ॥२१॥

पदच्छेद—

तया विरहितः साधो जन्तुः शून्याय कल्पते ।
ततः अस्य स्वार्थ विभ्रंशः मूर्च्छितस्य मृतस्य च ॥

शब्दार्थ—

तया	२.	उस चेतना शक्ति के	ततः	७.	ऐसी स्थिति में
विरहितः	३.	लुप्त हो जाने पर	अस्य	१०.	इस मनुष्य के
साधो	१.	हे साधु स्वभाव उद्धव !	स्वार्थ	११	स्वार्थ और परमार्थ दोनों
जन्तुः	४.	मनुष्य	विभ्रंशः	१२.	नष्ट हो जाते हैं
शून्याय	५.	शून्य के समान हीन	मूर्च्छितस्य	८.	मूर्च्छित या
कल्पते ।	६.	हो जाता है	मृतस्य च ॥	९.	मृत व्यक्ति के समान

श्लोकार्थ—हे साधु स्वभाव उद्धव ! उस चेतना शक्ति के लुप्त हो जाने पर मनुष्य शून्य के समान हीन हो जाता है । ऐसी स्थिति में मूर्च्छित या मृत व्यक्ति के समान इस मनष्य के स्वार्थ और परमार्थ दोनों नष्ट हो जाते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

विषयाभिनिवेशेन नात्मानं वेद नापरम् ।
वृक्षजीविकया जीवन् व्यर्थं भस्त्रेव यः श्वसन् ॥२२॥

पदच्छेद—

विषय अभिनिवेशेन न आत्मानम् वेद न अपरम् ।
वृक्ष जिविकाया जीवन व्यर्थम् भस्त्राइव यः श्वसन् ॥

शब्दार्थ—

विषय	१.	विषयों के साथ	वृक्ष	८.	वृक्षों के समान
अभिनिवेशेन	२.	अभिनिवेश होने से	जीविकया	९.	जड़ हो जाता है
न आत्मानम्	३.	वह न अपने को	जीवन	७.	उसका जीवन
वेद	४.	जानता है और	व्यर्थम्	११.	व्यर्थ
न	५.	न	भस्त्राइव	१०.	जो धौंकनी के समान
अपरम् ।	६.	दूसरे को जानता है	यः श्वसन् ॥	१२	सांस लेता रहता है

श्लोकार्थ—विषयों के साथ अभिनिवेश होने से वह अपने को जानता है और न दूसरे को जानता है । उसका जीवन वृक्षों के समान जड़ हो जाता है, जो धौंकनी के समान व्यर्थ सांस लेता रहता है ॥

त्रियविंशः श्लोकः

फलश्रुतिरियं नृणां न श्रेयो रोचनं परम् ।
श्रेयोविवक्षया प्रोक्तं यथा भैषज्यरोचनम् ॥२३॥

पदच्छेद—

फल श्रुतिः इयम् नृणम् न श्रेयः रोचनम् परम् ।
श्रेयः विवक्षया प्रोक्तम् यथा भैषज्य रोतनम् ॥

शब्दार्थ—

फल	१	फल का वर्णन करनेवाली	श्रेयः	८	कल्याण की
श्रुतिः इयम्	२.	यह श्रुति	विवक्षया	९.	अभिलषा के द्वारा
नृणाम्	३.	मनुष्यों के लिये	प्रोक्तम्	१२.	बालकों को रोचक वाक्य कहे जाते हैं
नश्रेयः	५.	कल्याणमय	यथा	७.	जैसी
रोचनम्	६.	रोचक वाक्य नहीं करती है	भैषज्य	१०.	औषध में
परम् ।	४.	वैसी परम्	रोचनम्	११.	रुचि उत्पन्न करने के लिये

श्लोकार्थ—फल का वर्णन करने वाली यह श्रुति मनुष्यों के लिये वैसी परम कल्याणमय रोचक वाक्य नहीं कहती है । जैसी कल्याण को अभिलाषा के द्वारा औषध में रुचि उत्पन्न करने के लिये बालकों को रोचक वाक्य कहे जाते हैं ।

चतुर्विंशः श्लोकः

उत्पत्त्यैव हि कामेषु प्राणेषु स्वजनेषु च ।
आसक्तमनसो मर्त्याः आत्मनोऽनर्थहेतुषु ॥२४॥

पदच्छेद—

उत्पत्त्या एव हि कामेषु प्राणेषु स्वजनेषु च ।
आसक्त मनसः मर्त्याः आत्मनः अनर्थ हेतुषु ॥

शब्दार्थ—

उत्पत्त्या	७.	जन्म से	आसक्त	९.	आसक्त होता है, जो
एव हि	८	ही	मनसः	६.	मन
कामेषु	१.	संसार के विषय भोगों में	मर्त्याः	५.	मनुष्यों का
प्राणेषु	२.	प्राणों में	आत्मनः	१०.	आत्मा के लिये
स्व	३.	सगे	अनर्थ	११.	अनर्थ का
जनेषु च ।	४.	सम्बन्धियों में	हेतुषु ॥	१२.	कारण है

श्लोकार्थ—संसार के विषय भोगों में प्राणों में सगे सम्बन्धियों में मनुष्यों का मन जन्म से ही आसक्त होता है । जो आत्मा के लिये अनर्थ का कारण है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

न तानविदुषः स्वार्थं भ्राम्यतो वृजिनाध्वनि।
कथं युञ्ज्यात् पुनस्तेषु तांस्तमो विशतो बुधः ॥२५॥

पदच्छेद—

न तान् विदुषः स्वार्थम् भ्राम्यतः वृजिन अध्वनि।
कथम् युञ्जयात् पुनः तेषु ताम् तमः विशते अबुधः ॥

शब्दार्थ—

न	३. नहीं		कथम्	१३. क्यों
तान्	१. वे अपने		युञ्जयात्	१४. रमेगा
विदुषः	४. जानते, अतः		पुनः तेषु	१२. फिर से उन्हीं विषयों में
स्वार्थम्	२ परम पुरुषार्थ को		तान्	८. फिर वृक्षादि
भ्राम्यतः	५. भटकते रहते हैं		तमः	९. योनियों के घोर अन्धकार में
वृजिन	१. देवादि योनियों के		विशतः	१०. आ पड़ते हैं
अध्वनि ।	६. मार्ग में		अबुधः ॥	११. ऐसी अवस्था में विद्वान

श्लोकार्थ—वे अपने परम पुरुषार्थ को नहीं जानते, अतः देवादि योनियों के मार्ग में भटकते रहते हैं। फिर वृक्षादि योनियों के घोर अन्धकार में आ पड़ते हैं। ऐसी अवस्था में विद्वान अथवा वे फिर से उन्हीं विषयों में क्यों रमेगा।

षट्विंशः श्लोकः

एवं व्यवसितं केचिदविज्ञाय कुबुद्धयः।
फलश्रुतिं कुसुमितां न वेदज्ञा वदन्ति हि ॥२६॥

पदच्छेद—

एवम् व्यवसितम् केचित् विज्ञाय कुबुद्धयः।
फल श्रुतिम् कुसुमिताम् न वेद् अज्ञाः वदन्ति हि ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार		श्रुतिम्	५. श्रुति को
व्यवसितम्	७. समझकर		कुसुमिताम्	६. पुष्पों के समान
केचित्	२. कुछ		न	१०. ऐसा नहीं
अविज्ञाय	८. उसी में भटक जाते हैं; परन्तु		वेद अज्ञाः	९. वेदवेत्ता जन
कुबुद्धयः	३. दुर्बुद्धि लोग		वदन्ति	११. मानते
फल ।	४. वेदों की फल		हि ॥	१२. हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार कुछ दुर्बुद्धि लोग वेदों की फल श्रुति को पुष्पों के समान समझकर उसी मे भटक जाते हैं। परन्तु वेदवेत्ता जन ऐसा नहीं मानते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

कामिनः कृपणा लुब्धाः पुष्पेषु फलबुद्धयः ।
अग्निमुग्धा धूमतान्ताः स्वं लोकं न विदन्ति ते ॥२७॥

पदच्छेद— कामिनः कृपणा लुब्धाः पुष्पेषु फल बुद्धयः ।
अग्निमुग्धाः धूमतान्ताः स्वम् लोकम् न विन्दन्ति ते ॥

शब्दार्थ—

कामिनः	१.	विषय वासना में फंसे	अग्नि	७.	अग्नि के द्वारा सिद्ध होने वाले-यज्ञादि
कृपणा	२.	दीन-हीन	मुग्धः	८.	कर्मों में ही मुग्ध हो जाते हैं
लुब्धाः	३	लोभी पुरुष	धूमतान्ताः	९	जिससे उन्हें देवलोकादि प्राप्त होते हैं
पुष्पेषु	४.	रंग बिरंगे पुष्पों के समान-स्वर्गादि में ही	स्वम् लोकम्	११.	निज धाम आत्मपद को
फल	५.	फल	न विन्दन्ति	१२.	नहीं जान पाते हैं
बुद्धयः ।	६.	बुद्धि करके	ते ॥	१०.	पर वे

श्लोकार्थ—विषय वासना में फंसे दीन-हीन लोभी मनुष्य रंग-बिरंगे पुष्पों के समान स्वर्गादि में ही फल बुद्धि करके अग्नि के द्वारा सिद्ध होने वाले यज्ञादि कर्मों में ही मुग्ध हो जाते हैं। जिससे उन्हें देवलोकादि प्राप्त होते हैं। पर वे निजधाम आत्मपद को नहीं जान पाते हैं ॥

अष्टविंशः श्लोकः

न ते मामङ्ग जानन्ति हृदिस्थं य इदं यतः ।
उक्थशस्त्रा ह्यसुतृपो यथा नीहारचक्षुषः ॥२८॥

पदच्छेद— न ते माम् अङ्ग जानन्ति हृदिस्थम् यः इदम् यतः ।
उक्थ शस्त्रा हि असुतृपः यथा नीहार चक्षुषः ॥

शब्दार्थ—

न	९.	यह नहीं	यः इमम् यतः	८.	यह जगत उत्पन्न हुआ है तथा जो
ते	४.	उनके	उक्थशस्त्राहि	२.	कर्म की साधना रूपशास्त्र वाले
माम्	१२.	मैं ही हूँ	असुतृपः	३.	और इन्द्रियों को तृप्त करने वाले हैं
अङ्ग	१.	प्यारे उद्धव !	यथा	७.	इसी से वे
जानन्ति	१०.	जानते हैं कि	नीहार	६.	धुंधले हो गये हैं
हृदिस्थम् ।	११.	उनके हृदय में स्थित वह वाला	चक्षुषः ॥	५.	नेत्र

श्लोकार्थ—प्यारे उद्धव ! कर्म की साधना रूप शस्त्र वाले और इन्द्रियों को तृप्त करने वाले हैं। उनके नेत्र धुंधले हो गये हैं । इसीसे वे ये नहीं जानते हैं कि जिससे यह जगत उत्पन्न हुआ है । तथा जो यह नही जानते हैं कि उनके हृदय में स्थित वह मैं ही हूँ ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

ते मे मतविज्ञाय परोक्षं विषयात्मकाः ।
हिंसायां यदि रागः स्याद् यज्ञ एव न चोदना ॥२६॥

पदच्छेद—

ते मे मतम् अविज्ञाय परोक्षम् विषय आत्मकाः ।
हिंसायाम् यदि रागः स्याद् यज्ञ एवन चोदना ॥

शब्दार्थ—

ते मे	७. इस प्रकार वे मेरे	हिंसायाम्	२.	हिंसा और उसके फल में
मतम्	६. अभिप्राय को	यदि	१.	यदि
अविज्ञाय	१०. नहीं जानते और	रागः	३.	राग
परोक्षम्	८. परोक्ष	स्याद्	४.	हो तो
विषय	११. विषयों में	यज्ञ एव	५.	वह यज्ञ में ही करे
आत्मकाः	१२. फंस जाते हैं	न चोदना ॥	६.	कर्म रूप में नहीं करे

श्लोकार्थ—यदि हिंसा और उसके फल में राग हो तो वह यज्ञ में ही करे । कर्मरूप में नहीं करे । इस प्रकार वे मेरे परोक्ष अभिप्राय को नहीं जानते और विषयों में फंस जाते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

हिंसाविहारा ह्यालब्धैः पशुभिः स्वसुखेच्छया ।
यजन्ते देवता यज्ञैः पितृभूतपतीन् खलाः ॥३०॥

पदच्छेद—

हिंसा विहारा हि आलब्धैः पशुभिः स्वसुख इच्छया ।
यजन्ते देवता यज्ञैः पितृ भूत पतीन् खलाः ॥

शब्दार्थ—

हिंसा	२. हिंसा का	यजन्ते	१२.	यजन का ढोंग करते हैं
विहारा	३. खिलवाड़ खेलते हैं	देवता	६.	देवता
हि आलब्धैः	६. बध किये हुये	यज्ञैः	८.	यज्ञ करके
पशुभिः	७. पशुओं के मांस से	पितृ-भूत	१०.	पितर तथा भूत
स्वसुख	४. अपने सुख की	पतीन्	११.	पतियों के
इच्छया ।	५. इच्छा से	खलाः ॥	१.	वे दुष्ट लोग

श्लोकार्थ—वे दुष्ट लोग ! हिंसा का खिलवाड़ खेलते हैं और अपने सुख की इच्छा से बध किये हुये पशुओं के मांस से यज्ञ करके देवता, पितर तथा भूत पतियों के यजन का ढोंग करते हैं ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

स्वप्नोपममम् लोकमसन्तं श्रवणप्रियम् ।
आशिषो हृदि सङ्कल्प्य त्यजन्त्यर्थान् यथा वणिक् ॥३१॥

पदच्छेद—

स्वप्न उपमम् अमुम् लोकम् सन्तम् श्रवण प्रियम् ।
आशिषः हृदि सङ्कल्प्य त्यजन्ति अर्थान् यथावणिक् ॥

शब्दार्थ—

स्वप्न उपमम्	३.	स्वप्नके समान ये	आशिषः	८.	वहाँ के भोगों की
अमुम्	१.	स्वर्गादि	हृदि	७.	सकाम पुरुष मन ही मन
लोकम्	२.	परलोक	सङ्कल्प्य	९.	कामना करके
सन्तम्	४.	मिथ्या हैं, वे	त्यजन्ति	१२.	खो बैठते हैं
श्रवण	५.	केवल सुनने में	अर्थान्	११.	अपना मूल धन भी
प्रियम् ।	६.	अच्छे लगते हैं	यथावणिक् ॥	१०.	व्यापारी के समान

श्लोकार्थ—ये स्वर्गादि परलोक स्वप्न के समान मिथ्या हैं, वे केवल सुनने में अच्छे लगते हैं । सकाम अच्छे लगते हैं । सकाम पुरुष मन ही मन वहाँ के भोगों की कामना करके व्यापारी के समान अपना मूल धन भी खो बैठते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

रजःसत्त्वतमोनिष्ठा रजःसत्त्वतमोजुषः ।
उपासत इन्द्रमुख्यान् देवादीन् न तथैव माम् ॥३२॥

पदच्छेद—

रजः सत्त्व तमः निष्ठा रजः सत्त्व तमः जुषः ।
उपासते इन्द्र मुख्यान् देवादीन न तथैव माम् ॥

शब्दार्थ—

रजः	१.	वे स्वयं रजोगुण	उपासते	१०.	उपासना करते हैं
सत्त्व	२.	सत्त्वगुण या	इन्द्र	७.	इन्द्रादि
तमः	३.	तमोगुण में	मुख्यान्	८.	प्रमुख
निष्ठा	४.	स्थित रहते हैं और	देवादीन्	९	देवताओं की जैसी
रजः सत्त्व	५.	रजोगुणी, सत्त्वगुण	न तथैव	११.	वैसी
तमः जुषः ।	६.	अथवा तमोगुणी	माम् ॥	१२.	मेरी उपासना नहीं करते हैं

श्लोकार्थ—वे स्वयं रजोगुण, सत्त्वगुण या तमोगुण में स्थित रहते हैं, और रजोगुणी, सत्त्वगुणी अथवा तमोगुणी इन्द्रादि प्रमुख देवताओं की जैसी उपासना करते हैं, वैसी मेरी उपासना नहीं करते हैं ॥

त्रियस्त्रिंशः श्लोकः

इष्ट्वेह देवता यज्ञैर्गत्वा रंस्यामहे दिवि ।
तस्यान्त इह भूयास्म महाशाला महाकुलाः ॥३३॥

पदच्छेद—

इष्ट्वा देवता यज्ञैः गत्वा रंस्यामहे दिवि ।
तस्यान्त इह भूयास्म महाशाला महा कुलाः ॥

शब्दार्थ—

इष्ट्वा ३. यजन करके		**तस्यान्त** ७. उसके बाद फिर	
इह १. वे सोचते हैं कि हम इस लोक में		**इह** ८. इसी लोक में	
देवताः यज्ञैः २. यज्ञों के द्वारा देवताओं का		**भूयास्म** १२. पैदा होंगे	
गत्वा ५. जाकर		**महाशाला** ११. बड़े-बड़े महलों वाले परिवार में	
रंस्यामहे ६. वहाँ का आनन्द भोगेंगे		**महा** ९. बड़े	
दिवि । ४. स्वर्गलोक में		**कुलाः ॥** १०. कुलीन और	

श्लोकार्थ—वे सोचते हैं कि हम इस लोक में यज्ञों के द्वारा देवताओं का यजन करके स्वर्गलोक में जाकर वहाँ का आनन्द भोगेंगे । उसके बाद फिर इसी लोक में बड़े-कुलीन और बड़े-बड़े महलों वाले परिवार में पैदा होंगे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

एवं पुष्पितया वाचा व्याक्षिप्तमनसां नृणाम् ।
मानिनां चातिस्तब्धानां मद्वार्तापि न रोचते ॥३४॥

पदच्छेद—

एवम् पुष्पितया वाचा व्याक्षिप्त मनसाम् नृणाम् ।
मानिनाम् च अति स्तब्धानाम् मत् वार्ता अपि न रोचते ॥

शब्दार्थ—

एवम् १. इस प्रकार	**मानिनाम्** ६. घमन्डी
पुष्पितया २. मीठी-मीठी	**च अति** ७. और अत्यन्त
वाचा ३. बातें सुनकर	**स्तब्धानाम्** ८. स्तब्ध
व्याक्षिप्त ४. क्षुब्ध	**मत् वार्ता** १०. मेरे सम्बन्ध की बातचीत
मनसाम् ५. मन वाले	**अपि न** ११. भी नहीं
नृणाम् । ९. लोगों को	**रोचते ॥** १२. अच्छी लगती है

श्लोकार्थ—इस प्रकार मीठी-मीठी बातें सुनकर क्षुब्ध मनवाले घमन्डी और अत्यन्त स्तब्ध लोगों को मेरे सम्बन्ध की बातचीत भी अच्छी नहीं लगती है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

वेदा ब्रह्मात्मविषयास्त्रिकाण्डविषया इमे ।
परोक्षवादा ऋषयः परोक्षं मम च प्रियम् ॥३५॥

पदच्छेद—

वेदाः ब्रह्म आत्म विषयाः त्रिकाण्ड विषया इमे ।
परोक्षवादा ऋषयः परोक्षम् मम च प्रियम् ॥

शब्दार्थ—

वेदाः	३.	वेदों के	परोक्षवादा	८.	खोलकर नहीं बताते हैं
ब्रह्म आत्म	१.	ब्रह्म और आत्मा की	ऋषयः	७.	ऋषी जन इनको
विषयाः	२.	एकता	परोक्षम्	१२.	गुप्तरूप से ही कहना
त्रिकाण्ड	४.	कर्म, उपासना और ज्ञान	मम	१०.	मुझे भी इसे पसन्द है
विषया	६.	विषय हैं	च	६.	और
इमे ।	५.	इन तीनों का	प्रियम् ॥	११.	अपने प्रिय भक्त को

श्लोकार्थ—ब्रह्म और आत्मा की एकता वेदों के कर्म, उपासना और ज्ञान इन तीनों का विषय है। ऋषीजन इनको खोलकर नहीं बताते हैं। और मुझे भी इसे अपने प्रिय भक्तजन को गुप्तरूप से कहना ही पसन्द है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

शब्दब्रह्म सुदुर्बोधं प्राणेन्द्रियमनोमयम् ।
अनन्तपारं गम्भीरं दुर्विगाह्यं समुद्रवत् ॥३६॥

पदच्छेद—

शब्द ब्रह्म सुदुर्बोधम् प्राण इन्द्रिय मनोमयम् ।
अनन्त पारम् गम्भीरम् दुर्विग्राह्य समुद्र वत् ॥

शब्दार्थ—

शब्द ब्रह्म	१.	शब्द ब्रह्म को	अनन्त पारम्	८.	सीमा रहित
सुदुर्बोधम्	२.	समझना कठिन है	गम्भीरम्	६.	गम्भीर और
प्राण	३.	वह प्राण	दुर्विग्राह्य	१०.	गहरा है
इन्द्रिय	४.	इन्द्रिय और	समुद्र	६.	समुद्र के
मनोमयम् ।	५.	मनोमय है	वत ॥	६.	समान

श्लोकार्थ—शब्द ब्रह्म को समझना कठिन है। वह प्राण, इन्द्रिय और मनोमय है। समुद्र के समान सीमा रहित गम्भीर और गहरा है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

मयोपबृंहितं भूम्ना ब्रह्मणानन्तशक्तिना ।
भूतेषु घोषरूपेण बिसेषूर्णेव लक्ष्यते ॥३७॥

पदच्छेद—

मया उपबृंहितम् भूम्ना ब्रह्मण अनन्त शक्तिना ।
भूतेषु घोष रूपेण त्रिसेषु ऊर्णा इव लक्ष्यते ॥

शब्दार्थ—

मया	३.	मुझ	भूतेषु	९.	प्राणियों के अन्तःकरण में
उपबृंहितम्	६.	वेदों का विस्तार किया है	घोष	१०.	अनाहत नादके
भूम्ना	४.	सर्वव्यापक	रूपेण	११.	रूप में
ब्रह्मण	५.	ब्रह्म ने ही	बिसेषु	७.	कमलनाल में
अनन्त	१.	अनन्त	ऊर्णा इव	८.	जैसे पतला सूत होता है
शक्तिना ।	२.	शक्ति सम्पन्न	लक्ष्यते ॥	१२.	प्रकट होती है

श्लोकार्थ—अनन्त शक्ति सम्पन्न मुझ सर्वव्यापक ब्रह्म ने ही वेदों का विस्तार किया है । कमलनाल में जैसे पतला सूत होता है । वैसे ही प्राणियों के हृदय में अनाहत नाद के रूप में प्रकट होती है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

यथोर्णनाभिर्हृदयादूर्णामुद्वमते मुखात् ।
आकाशाद् घोषवान् प्राणो मनसा स्पर्शरूपिणा ॥३८॥

पदच्छेद—

यथा ऊर्णनाभिः हृदयात् ऊर्णाम् उद्वमते मुखात् ।
आकाशात् घोषवान् प्राणः मनसा स्पर्श रूपिणा ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	आकाशात्	१०.	हृदयाकाश से
ऊर्णनाभिः	२.	मकड़ी	घोषवान्	११.	वैखरी रूप वेदवाणी को
हृदयात्	३.	अपने हृदय से	प्राणः	१२.	प्राण के रूप में प्रकट करते हैं
ऊर्णाम्	५.	जाला	मनसा	९.	मनरूप
उद्वमते	६.	उगलती और फिर निगल लेती है	स्पर्श	७.	वैसे ही स्पर्शादि वर्णों का
मुखात् ।	४.	मुख द्वारा	रूपिण ॥	८.	संकल्प करने वाले

श्लोकार्थ—जैसे मकड़ी अपने हृदय से मुख द्वारा जाला उगलती और फिर फिर निगल लेती है । वैसे ही स्पर्शादि वर्णों का संकल्प करने वाले मन रूप हृदयाकाश से वैखरीरूप वेदवाणी को प्राण के रूप में प्रकट करते हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

छन्दोमयोऽमृतमयः सहस्रपदवीं प्रभुः ।
ओङ्काराद् व्यञ्जितस्पर्शस्वरोष्मान्तःस्थभूषिताम् ॥३९॥

पदच्छेद—

छन्दोमयः अमृतमयः सहस्र पदवीम् प्रभुः ।
ओङ्कारात् व्यञ्जित स्पर्श स्वर ऊष्मान्तः स्थभूषिताम् ॥

शब्दार्थ—

छन्दोमयः	२.	स्वयं वेद मूर्ति	ओङ्कारात्	६.	वह वाणी सूक्ष्म ओङ्कार के द्वारा
अमृतमयः	३.	एवं अमृतमय है	व्यञ्जित स्पर्श	७.	अभिव्यक्तस्पर्श
सहस्र	५.	प्राण और स्वयं अनाहत स्वर शब्द		८.	स्वर
पदवीम्	४.	उनकी उपाधि है	ऊष्मान्तः स्थ	९.	ऊष्मा और अन्तस्थ
प्रभुः ।	१	भगवान् हिरण्यगर्भ	भूषिताम् ॥	१०.	इन चार वर्णों से विभूषित है

श्लोकार्थ—भगवान् हिरण्यगर्भ स्वयं वेदमूर्ति एवं अमृतमय है। उनकी उपाधि प्राण और स्वयं अनाहत शब्द है। वह वाणी सूक्ष्म ओंकार के द्वारा अभिव्यक्त स्पर्श स्वर ऊष्मा और अन्तस्थ इन चार वर्णों से विभूषित है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

विचित्रभाषावितता छन्दोभिश्चतुरुत्तरैः ।
अनन्तपारां बृहतीं सृजत्याक्षिपते स्वयम् ॥४०॥

पदच्छेद—

विचित्र भाषा विततम् छन्दोभिः चतुः उत्तरैः ।
अनन्त पाराम् बृहतीम् सृजति आक्षीपते स्वयम् ॥

शब्दार्थ—

विचित्र	४.	विचित्र	अनन्त	७	जो अनन्त
भाषा	५.	भाषा के रूप में	पाराम्	८.	अपार
विततम्	६	वह विस्तृत हुई है	बृहतीम्	९.	अनेकों मार्गवाली
छन्दोभिः	१.	उसमें ऐसे छन्द हैं	सृजति	१०.	वेदवाणी को स्वयं प्रकट करते हैं
चतुः	२.	जिनमें चार-चार वर्ण	आक्षीपते	१२.	अपने में लीन कर लेते हैं
उत्तरैः ।	३.	उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं	स्वयम् ।	११.	और फिर स्वयं ही

श्लोकार्थ—उनमें ऐसे छन्द हैं, जिनमें चार-चार वर्ण उत्तरोत्तर बढ़ते जाते हैं। विचित्र भाषा के रूप में वह विस्तृत है। जो अनन्त अपार अनेकों मार्ग वाली वेदवाणी को स्वयं प्रकट करते हैं। और फिर स्वयं ही अपने में लीन कर लेते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

गायत्र्युष्णिगनुष्टुप् च बृहती पङ्क्तिरेव च ।
त्रिष्टुब्जगत्यतिच्छन्दो ह्यत्यष्ट्यतिजगद् विराट् ॥४१॥

पदच्छेद—

गायत्री उष्णिक अनुष्णक् च बृहती पङ्क्तिः एव च ।
त्रिष्टुप् जगती अतिच्छन्दः हि अत्यष्टि अति जगत् विराट् ।।

शब्दार्थ —

गायत्री	१. गायत्री	त्रिष्टुप्	७ त्रिष्टुप्
उष्णिक्	२. उष्णिक्	जगती	८. जगती
अनुष्टुप्	३. अनुष्टुप्	अतिच्छन्दः	९. अतिच्छन्दः
च बृहती	४. बृहती	हि अत्यष्टि	१०. अत्यष्टि
षङ्क्ति	५. पंक्ति	अतिजगत्	११. अति जगती
एव च ।	६. और	विराट् ।।	१२. विराट्

श्लोकार्थ— गायत्री, उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, पंक्ति और, त्रिष्टुप् जगतो, अतिच्छन्दः अत्यष्टि, अति जगती, विराट् वर्ण वाले छन्दों में से कुछ ये हैं ।।

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

किं विधत्ते किमाचष्टे किमनूद्य विकल्पयेत् ।
इत्यस्या हृदयं लोके नान्यो मद् वेद कश्चन ॥४२॥

पदच्छेद—

किम् विधत्ते किम् आचष्टे किम् अनूद्य विकल्पयेत् ।
इति अस्याः हृदयम् लोकेन अन्यः मत् वेद कश्चन् ।।

शब्दार्थ—

किम्	१. वह कर्मकाण्ड में क्या	इति	७. इन बातों को और
विधत्ते	२. विधान करती है	अस्याः	८. इसके सम्बन्ध में
किम्	३. किन्	हृदयम्	९. श्रुति के रहस्य को
आचष्टे	४. देवताओं का वर्णन करती है	लोकेन	१०. इस लोक में
किम् अनूद्य	५. और किनका अनुवाद करके	अन्यः	११. मेरे अतिरिक्त अन्य
विकल्पयेत् ।	६. विकल्प करती है	मत् वेदकश्चन्।।	१२. कोई भी नहीं जानता है

श्लोकार्थ—वह कर्म-काण्ड में क्या विधान करती है, किन देवताओं का वर्णन करती है और किनका अनुवाद करके विकल्प करती है । इन बातों को और इसके सम्बन्ध में श्रुति के रहस्य को इस लोक में मेरे अतिरिक्त अन्य कोई नहीं जानता है ।।

त्रयचत्वारिंशः श्लोकः

मां विधत्तेऽभिधत्ते मां विकल्प्यापोह्यते त्वहम् ।
एतावान् सर्ववेदार्थः शब्द आस्थाय मां भिदाम् ।
मायामात्रमनूद्यान्ते प्रतिषिध्य प्रसीदति ॥४३॥

पदच्छेद—

माम विधत्ते अभिधत्ते माम् विकल्प्य अपोह्यते तु अहम् ।
एतावान् सर्व वेदार्थः शब्द आस्थाय माम् भिदाम् ।
माया मात्रम् अनूद्यान्ते प्रतिषिध्य प्रसीदति ॥

शब्दार्थ—

माम् विधत्ते	१.	सभी श्रुतियाँ मेरा ही आस्थाय विधान शब्द करती हैं		९.	आकाशादि रूप अन्य वस्तुओं का आरोप करके
अभिधत्ते माम्	२.	मेरा ही वर्णन करती हैं	माम्	८.	मुझमें ही
विकल्प्य	६.	मुझमें भेद का	भिदाम्	१०.	भेद करती है
अपोह्यते	७.	आरोप करती हैं	माया मात्रम्	११.	और माया मात्र कहकर
तु अहम् ।	५.	कि वे मेरा आश्रय लेकर	अनूद्यान्ते	१२.	उसका अनुवाद करती है
एतावान्	४.	इतना ही है	प्रतिषिध्य	१३.	तथा सबका निषेध करके
सर्व वेदार्थः	३.	सम्पूर्ण श्रुतियों का अर्थ भी	प्रसीदति ॥	१४.	शान्त हो जाती है

श्लोकार्थ—सभी श्रुतियाँ मेरा ही विधान करती हैं, मेरा ही वर्णन करती हैं। सम्पूर्ण श्रुतियों का अर्थ भी इतना ही है कि वे मेरा आश्रय लेकर मुझमें भेद का आरोप करती हैं। मुझमें ही आकाशादि रूप अन्य वस्तुओं का आरोप करके भेद करती है। और माया मात्र कहकर उसका अनुवाद करती है तथा अन्त में सबका निषेध करके शान्त हो जाती है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे एकविंशः अध्यायः ॥ २१ ॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

द्वाविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच—कति तत्त्वानि विश्वेश संख्यातान्यृषिभिः प्रभो ।
नवैकादश पञ्च त्रीण्यात्थ त्वमिह शुश्रुम ॥१॥

पदच्छेद—

कति तत्त्वानि विश्वेश संख्यातानि ऋषिभिः प्रभो ।
नव एकादश पञ्चत्रीणि आत्थ त्वम् इह शुश्रुम ॥

शब्दार्थ—

कति	६.	कितनी बतलाई है	नव एकादश	८.	नो, ग्यारह
तत्त्वानि	४.	तत्त्वों की	पञ्च	९.	पाँच और
विश्वेश	२.	विश्वेश्वर !	त्रीणि	१०.	तीन अर्थात् कुल अट्ठारह
संख्यातानि	५.	संख्या	आत्थ	११.	तत्त्व गिनाये हैं
ऋषिभिः	३.	ऋषियों ने	त्वम् इह	७.	आपने तो अभी
प्रभो ।	१.	हे प्रभो !	शुश्रुम ॥	१२.	यह तो हम सुन चुके हैं

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! विश्वेश्वर ! ऋषियों ने तत्त्वों की संख्या कितनी बतलाई है आपने तो अभी नो, ग्यारह, पांच और तीन अर्थात् कुल अठारह तत्त्व गिनाये हैं। यह तो हम सुन चुके हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

केचित् षड्विंशतिं प्राहुरपरे पञ्चविंशतिम् ।
सप्तैके नव षट् केचिच्चत्वार्येकादशापरे ॥२॥

पदच्छेद—

केचित षड् विंशतिम् प्राहुः अपरे पञ्चविंशतिम् ।
सप्त एके नव षट् केचित् चत्वारि एकादश अपरे ॥

शब्दार्थ—

केचित्	१.	कुछ लोग	सप्त एके	६.	कोई सात
षड् विंशतिम्	२	छब्बीस तत्त्व	नव षट्	७.	नो, अथवा छः स्वीकार करते है
प्राहुः	३.	बतलाते हैं	केचित्	८.	कोई
अपरे	४.	अन्य कुछ लोग	चत्वारि	९.	चार बतलाते हैं
पञ्चविंशतिम् ।	५.	पच्चीस तत्त्व और	एकादश अपरे ॥	१०.	तो अन्य कोई ग्यारह कहते है

श्लोकार्थ—कुछ लोग छब्बीस तत्त्व बतलाते हैं। अन्य कुछ लोग पच्चीस तत्त्व और कोई सात, नो अथवा छः स्वीकार करते हैं। कोई चार बतलाते हैं तो अन्य कोई ग्यारह कहते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

केचित् सप्तदश प्राहुः षोडशैके त्रयोदश ।
एतावत्त्वं हि संख्यानामृषयो यद्विवक्षया ।
गायन्ति पृथगायुष्मन्निदं नो वक्तुमर्हसि ॥३॥

पदच्छेद— केचित् सप्तदश प्राहुः षोडशैके त्रयोदशः ।
एतावत् त्वम् हि संख्यानाम् ऋषयः यत् विवक्षया ।
गायन्ति पृथक् आयुष्मत् इदम् नः वक्तुम् अर्हसि ॥

शब्दार्थ—

केचित्	१.	कोई-कोई ऋषि	ऋषयः	६.	ऋषि-मुनि
सप्तदश	२.	उनकी संख्या सत्रह	यत् विवक्षया ।	१०.	किस अभिप्राय से
प्राहुः	५.	बतलाते हैं	गायन्ति	११.	बतलाते हैं
षोडशैके	३.	कोई सोलह और कोई	पृथक्	८.	भिन्न
त्रयोदशः ।	४.	तेरह	आयुष्मत्	१२.	हे चिरंजीव !
एतावत्	७.	इतनी	इदम् नः	१४.	यह सब हमें
त्वम् हि	१३.	आप	वक्तुम्	१५.	बतलाने के
संख्यानाम्	९.	संख्यायें	अर्हसि ॥	१६.	योग्य हैं

श्लोकार्थ—कोई-कोई ऋषि उनकी संख्या सत्रह कोई सोलह और कोई तेरह बतलाते हैं । ऋषि-मुनि इतनी भिन्न संख्यायें किस अभिप्राय से बतलाते हैं । हे चिरंजीव ! आप यह सब हमें बतलाने योग्य हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—युक्तं च सन्ति सर्वत्र भाषन्ते ब्राह्मणा यथा ।
मायां मदीयामुद्गृह्य वदतां किं नु दुर्घटम् ॥४॥

पदच्छेद— युक्तम् च सन्ति सर्वत्र भाषन्ते ब्राह्मणा यथा ।
मायाम् मदीयाम् उद्गृह्य वदताम् किम् नु दुर्घटम् ॥

शब्दार्थ—

युक्तम् च	५.	ठीक ही	मायाम्	८.	माया को
सन्ति	६.	है	मदीयाम्	७.	मेरी
सर्वत्र	४.	वह सब	उद्गृह्य	९.	स्वीकार करके
भाषन्ते	३.	कहते हैं	वदताम्	११.	कहना
ब्राह्मणा	१.	वेदज्ञ ब्राह्मण	किम् नु	१०.	कुछ भी
यथा ।	२.	इस विषय में जो कुछ	दुर्घटम् ॥	१२.	असम्मत नहीं है

श्लोकार्थ—वेदज्ञ ब्राह्मण इस विषय में जो कुछ कहते हैं वह सब ठीक ही है । मेरी माया को स्वीकार करके कुछ भी कहना असम्मत नहीं है ॥

पञ्चमः श्लोकः

नैतदेवं यथाऽऽत्थ त्वं यदहं वच्मि तत्तथा ।
एवं विवदतां हेतुं शक्तयो मे दुरत्ययाः ॥५॥

पदच्छेद— न एतद् एवम् यथा आत्थ त्वम् यत् अहम् वच्मितत् तथा ।
एवम् विवदताम् हेतुम् शक्तयः मे दुरत्ययः ॥

शब्दार्थ—

न एतद्	४. ठीक नहीं है		एवम्	८. इस प्रकार के	
एवम्	३. वह इस प्रकार		विवदताम्	९. विवाद में जो	
यथा	१. जैसा		हेतुम्	१०. कारण है	
आत्यत्वम्	२. तुम कहते हो		शक्तयः	१२. शक्तियों का	
यत् अहम्	५. जो मैं		मे	११. मेरी उन	
वच्मि	६. कहता हूँ		दुरत्ययः ॥	१३. रहस्य समझना कठिन है	
तत् तथा ।	७. वही यथार्थ है				

श्लोकार्थ—जैसा तुम कहते हो वह इस प्रकार ठीक नहीं हैं। जो मैं कहता हूँ, वही यथार्थ है। इस प्रकार विवाद में जो कारण है, मेरी उन शक्तियों का रहस्य समझना कठिन है ॥

षष्ठः श्लोकः

यासां व्यतिकरादासीद् विकल्पो वदतां पदम् ।
प्राप्ते शमदमेऽप्येति वादस्तमनुशाम्यति ॥६॥

पदच्छेद— यासाम् व्यति करात् आसीत् विकल्पः वदताम् पदम् ।
प्राप्ते शम-दमे अपि इति वादः तम अनुशाम्यति ॥

शब्दार्थ—

यासाम्	१. सत्त्वादि गुणों के क्षोभ से ही	प्राप्ते	९. हो जाने पर और प्रपञ्च के होने से
व्यतिकरात्	२. विविध कल्पना रूप प्रपञ्च	शम-दमे	७. इन्द्रियों और चित्त के
आसीत्	३. होता है	अपि इति	८. शान्त
विकल्पः	५. विवाद का	वादः	११. वाद भी
वदताम्	४. यही वाद-विवाद करने वालों के	तम्	१०. उससे सम्बन्धित
पदम् ।	६. विषय है	अनुशाम्यति ॥	१२. मिट जाता है

श्लोकार्थ—सत्त्वादि गुणों के क्षोभ से ही विविध कल्पना रूप प्रपञ्च होता है। यही वाद-विवाद करने वालों के विवाद का विषय है। इन्द्रियों और चित्त के शान्त हो जाने पर और प्रपञ्च के होने से उससे सम्बन्धित वाद भी मिट जाता है ॥

सप्तमः श्लोकः

परस्परानुप्रवेशात् तत्त्वानां पुरुषर्षभ ।
पौर्वापर्यप्रसंख्यानं यथा वक्तुर्विवक्षितम् ॥७॥

पदच्छेद—

परस्पर अनु प्रवेशात् तत्त्वानाम् पुरुषषभ ।
पौर्वा पर्यप्रसंख्यानम् यथावक्तुः विवक्षितम् ॥

शब्दार्थ—

परस्पर	३.	एक दूसरे में	पर्य	९.	को कार्य में अथवा कार्य को कारण में मिलाकर
अनुप्रवेशात्	४.	अनुप्रवेश है	प्रसंख्यानम्	१०.	इच्छित संख्या सिद्ध कर लेता है
तत्त्वानाम्	२.	तत्त्वों का	यथा	६.	जितनी संख्या
पुरुषषभ	१.	पुरुष शिरोमणि !	वक्तुः	५.	इसलिये वक्ता
पौर्वा ।	८.	उसके अनुसार कारण	विवक्षितम् ॥	७.	बतलाना चाहता है

श्लोकार्थ—हे पुरुष शिरोमणि ! तत्त्वों का एक दूसरे में अनुप्रवेश है । इसलिये वक्ता जितनी संख्या बतलाना चाहता है । उसके अनुसार कारण को कार्य में अथवा कार्य को कारण में मिलाकर इच्छित संख्या सिद्ध कर लेता है ॥

अष्टमः श्लोकः

एकस्मिन्नपि दृश्यन्ते प्रविष्टानीतराणि च ।
पूर्वस्मिन् वा परस्मिन् वातत्त्वे तत्त्वानि सर्वशः ॥८॥

पदच्छेद—

एकस्मिन् अपि दृश्यन्ते प्रविष्टानि इतराणि च ।
पूर्वस्मिन् वा परस्मिन् वा तत्त्वे तत्त्वानि सर्वशः ॥

शब्दार्थ—

एकस्मिन्	१.	एक ही तत्त्व में	पूर्वस्मिन्	८.	कभी कारण में
अपि	४.	ही	वा	१०.	अथवा
दृश्यते	५.	देखा जाता है	परस्मिन् वा	११.	कभी कार्य में
प्रविष्टानि	३.	का अन्तर्भाव	तत्त्वे	१२.	कारण तत्त्व का अन्तर्भाव देखा जाता है
इतराणि	२.	बहुत से दूसरे तत्वों	तत्त्वानि	९.	कार्य नामक तत्त्व का
च ।	६.	और	सर्वशः ॥	७.	सब प्रकार से

श्लोकार्थ—एक ही तत्त्व में बहुत से दूसरे तत्वों का अन्तर्भाव ही देखा जाता है । और सब प्रकार से कभी कारण में कार्य नामक तत्त्व का अथवा कभी कार्य में कारण तत्त्व का अन्तर्भाव देखा जाता है ॥

नवमः श्लोकः

पौर्वापर्यमतोऽमीषां प्रसंख्यानमभीप्सताम् ।
यथा विविक्तं यद्वक्त्रं गृह्णीमो युक्तिसम्भवात् ॥९॥

पदच्छेद—

पौर्वा पर्यम् अतः अमीषाम् प्रसंख्यानम् अभीप्सताम् ।
यथा विविक्तम् यत् वक्त्रम् गृह्णीमो युक्ति सम्भवात् ॥

शब्दार्थ—

पौर्वा पर्यम्	३.	कारण और कार्य को	विविक्तम्	४.	अलग-अलग करके
अतः	१.	इसलिये	यत्	८.	जो
अमीषाम्	२.	इन वादी प्रतिवादियों ने	वक्त्रम्	९.	संख्यायें बताई हैं
प्रसंख्यानम्	६.	संख्यायें	गृह्णीमो	१२.	हम उन्हें स्वीकार करते हैं
अभीप्सताम्	७.	स्वीकार की हैं और	युक्ति	१०.	युक्ति संगत
यथा ।	५.	जितनी	सम्भवात् ॥	११.	होने के कारण

श्लोकार्थ—इसलिये इन वादी प्रतिवादियों ने कारण और कार्य को अलग-अलग करके जितनी संख्यायें स्वीकार की हैं । और जो संख्यायें बताई हैं, युक्ति संगत होने के कारण हम उन्हें स्वीकार करते हैं ॥

दशमः श्लोकः

अनाद्यविद्यायुक्तस्य पुरुषस्यात्मवेदनम् ।
स्वतो न सम्भवादन्यस्तत्त्वज्ञो ज्ञानदो भवेत् ॥१०॥

पदच्छेद—

अनादि अविद्या युक्तस्य पुरुषस्य आत्म वेदनम् ।
स्वतः न सम्भवात् अन्यः तत्त्वज्ञः ज्ञानदः अभवेत् ॥

शब्दार्थ—

अनादि	१.	मुझमें	स्वतः	५.	स्वयम्
अविद्या	२.	कुछ लोगों के अनुसार अनादि	न	७.	नहीं
युक्तस्य	३.	अविद्या से	सम्भवात्	११.	आवश्यकता
पुरुषस्य	४.	ग्रस्त पुरुष	अन्यः तत्त्वज्ञः	१०.	किसी अन्य तत्त्वज्ञ की
आत्म	६.	अपने आपको	ज्ञानदः	९.	अतः आत्मज्ञान कराने वाले
वेदनम् ।	८.	जान सकता है	अभवेत् ॥	१२.	होती है

श्लोकार्थ—कुछ लोगों के अनुसार अनादि-अविद्या से ग्रस्त पुरुष स्वयम् अपने आपको नहीं जान सकता है । अतः आत्मज्ञान कराने वाले किसी अन्य तत्त्वज्ञ की आवश्यकता होती है ॥

एकादशः श्लोकः

पुरुषेश्वरयोरत्र न वैलक्षण्यमण्वपि ।
तदन्यकल्पनापार्था ज्ञानं च प्रकृतेर्गुणः ॥११॥

पदच्छेद—

पुरुष ईश्वरयोः अत्र न वैलक्षण्यम् अणु अपि ।
तत् अन्य कल्पना अपार्था ज्ञानम् च प्रकृतेः गुणः ॥

शब्दार्थ—

पुरुष	२.	जीव और	तत् अन्य	७.	इसलिये उनमें भेद की
ईश्वरयोः	३.	ईश्वर का	कल्पना	८.	कल्पना
अत्र	१.	इस शरीर में	अपार्था	९.	व्यर्थ है
न	६.	नहीं है	ज्ञानम् च	१०.	और ज्ञान तो
वैलक्षण्यम्	५.	अन्तर या भेद	प्रकृतेः	११.	सत्त्वात्मिका प्रकृति का
अणुः अपि ।	४.	अणुमात्र भी	गुणः ॥	१२.	गुण है

श्लोकार्थ—इस शरीर में जीव और ईश्वर का अणु-मात्र भी अन्तर या भेद नहीं है। इसलिये उनमें भेद की कल्पना व्यर्थ है। और ज्ञान तो सत्त्वात्मिका प्रकृति का गुण है ॥

द्वादशः श्लोकः

प्रकृतिर्गुणसाम्यं वै प्रकृतेर्नात्मनो गुणाः ।
सत्त्वं रजस्तम इति स्थित्युत्पत्त्यन्तहेतवः ॥१२॥

पदच्छेद—

प्रकृतिः गुण साम्यम् वं प्रकृतेः न आत्मनः गुणाः ।
सत्त्वम् रजः तम इति स्थिति उत्पत्ति अन्त हेतवे ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतिः	३.	प्रकृति है	सत्त्वम्	७.	सत्त्वगुण
गुण	१.	तीनों गुणों को	रजः तम	८.	रजोगुण और तमोगुण
साम्यम् वै	२.	साम्यावस्था ही	इति	९.	ये तीनों क्रमशः
प्रकृतेः	५.	प्रकृति के हैं	स्थिति	११.	स्थिति और
न आत्मनः	६.	आत्मा के नहीं हैं	उत्पत्ति	१०.	उत्पत्ति
गुणाः ।	४.	इसलिये सत्त्वादि गुण	अन्त हेतवे ॥	१२.	प्रलय के हेतु होते हैं

श्लोकार्थ—तीनों गुणों की साम्यावस्था ही प्रकृति है। इसलिये सत्त्वादि गुण प्रकृति के हैं। आत्मा के नहीं हैं। सत्त्वगुण, रजोगुण और तमोगुण ये तीनों क्रमशः उत्पत्ति-स्थिति और प्रलय के हेतु होते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

सत्त्वं ज्ञानं रजः कर्म तमोऽज्ञानमिहोच्यते ।
गुणव्यतिकरः कालः स्वभावः सूत्रमेव च ॥१३॥

पदच्छेद—

सत्त्वम् ज्ञानम् रजः कर्म तमः अज्ञानम् इह उच्यते ।
गुणव्यतिकरः कालः स्वभावः सूत्रम् एव च ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम् ज्ञानम्	२.	सत्त्वगुण ही ज्ञान है	गुण व्यतिकरः	७.	गुणों में क्षोभ उत्पन्न करने वाला
रजः कर्मः	३.	रजोगुण कर्म है	कालः	८.	ईश्वर ही काल है
तमः	४.	तमोगुण ही	स्वभावः	१२.	स्वभाव है
अज्ञानम्	५.	अज्ञान	सूत्रम्	१०.	सूत्र अर्थात् महत्तत्त्व
इह	१.	इस प्रसङ्ग में	एव	११.	ही
उच्यते ।	६.	कहा गया है	च ॥	९.	और

श्लोकार्थ—इस प्रसङ्ग में सत्त्वगुण ही ज्ञान है । रजोगुण कर्म है, तमोगुण ही अज्ञान कहा गया है । गुणों में क्षोभ उत्पन्न करने वाला ईश्वर ही काल है । और सूत्र अर्थात् महत्तत्त्व ही स्वभाव है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

पुरुषः प्रकृतिर्व्यक्तमहङ्कारो नभोऽनिलः ।
ज्योतिरापः क्षितिरिति तत्त्वान्युक्तानि मे नव ॥१४॥

पदच्छेद—

पुरुषः प्रकृतिः व्यक्तम् अहङ्कारः नभः अनिलः ।
ज्योतिः आपः क्षितिः इति तत्त्वानि उक्तानि मे नव ॥

शब्दार्थ—

पुरुषः	५.	पुरुष	ज्योतिः	७.	तेज
प्रकृतिः	१.	प्रकृति	आपः	८.	जल और
व्यक्तम्	२.	महत्तत्त्व	क्षितिः इति	९.	पृथ्वी ये
अहंकारः	३.	अहंकार	तत्त्वानि	१०.	तत्त्व
नभः	४.	आकाश	उक्तानि	११.	पहले ही कहे जा चुके हैं
अनिलः ।	६.	वायु	मे नव ॥	१२.	नौ, मेरे द्वारा

श्लोकार्थ—पुरुष, प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, आकाश, वायु, तेज, जल और पृथ्वी ये नौ तत्त्व मेरे द्वारा पहले ही कहे जा चुके हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

श्रोत्रं त्वग्दर्शनं घ्राणो जिह्वेतिज्ञानशक्तयः ।
वाक्पाण्युपस्थपाय्वङ्घ्रिकर्माण्यङ्गोभय मनः ॥१५॥

पदच्छेद—

श्रोत्रम् त्वक् दर्शनम् घ्राणः जिह्वेति ज्ञान शक्तयः ।
वाक्पाणि उपस्थ पायु अङ्घ्रि कर्माणि अङ्ग उभयम् मनः ॥

शब्दार्थ—

श्रोत्रम्	२. श्रोत्र		वाक्पाणि	८.	वाणी-हाथ
त्वक्	३. त्वचा		उपस्थ पायु	९.	गुदा और
दर्शनम्	४. चक्षु		अङ्घ्रि	१०.	चरण
घ्राणः	५. नासिका और		कर्माणि	११.	ये कर्मेन्द्रियाँ हैं
जिह्वेति	६. रसना		अङ्ग	१.	उद्धव जी !
ज्ञान शक्तयः ।	७. ये पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं		उभयम् मनः ॥	१२.	मनज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रियाँ दोनों हैं

श्लोकार्थ—हे उद्धव जी ! श्रोत्र, त्वचा, चक्षु, नासिका और रसना ये पांच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं । वाणी, हाथ, गुदा और चरण ये कर्मेन्द्रिय हैं । मन ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रियाँ दोनों है ॥

षोडशः श्लोकः

शब्दः स्पर्शो रसो गन्धो रूपं चेत्यर्थजातयः ।
गत्युक्त्युत्सर्गशिल्पानि कर्मायतनसिद्धयः ॥१६॥

पदच्छेद—

शब्द स्पर्शः रसः गन्धः रूपम् च इति अर्थ जातयः ।
गति उक्ति उत्सर्ग शिल्पानि कर्मायतन सिद्धयः ॥

शब्दार्थ—

शब्द	१.	शब्द	गति	७.	चलना
स्पर्शः	२.	स्पर्श	उक्ति	८.	बोलना
रसः गन्धः	३.	रस-गन्ध	उत्सर्ग	९.	मल त्यागना
रूपम्	४.	रूप	शिल्पानि	१०.	पेशाब करना और
च इति	५.	ये ज्ञानेन्द्रियों के	कर्मायतन	११.	काम करना ये कर्मेन्द्रियों के
अर्थ जातयः ।	६.	विषय समूह हैं	सिद्धयः ।	१२.	स्वरूप हैं

श्लोकार्थ—शब्दः, स्पर्श, रस, गन्ध, रूप ये ज्ञानेन्द्रियों के विषय समूह हैं । चलना, बोलना, मल त्यागना, पेशाब करना और काम करना ये कर्मेन्द्रियों के स्वरूप है ।

सप्तदशः श्लोकः

सर्गादौ प्रकृतिर्ह्यस्य कार्यकारणरूपिणी ।
सत्त्वादिभिर्गुणैर्धत्ते पुरुषोऽव्यक्त ईक्षते ॥१७॥

पदच्छेद—

सर्ग आदौ प्रकृतिः हि अस्य कार्य कारण रूपिणी ।
सत्त्व आदिभिः गुणैः धत्ते पुरुषः अव्यक्तः ईक्षते ॥

शब्दार्थ—

सर्ग आदौ	१.	सृष्टि के आरम्भ में	सत्त्व आदिभिः	६.	वही सत्त्वादि
प्रकृतिः	५.	प्रकृति ही रहती है	गुणैः	७.	गुणों की सहायता से
हि अस्य	२.	इनके	धत्ते	८.	जगत् की स्थिति आदि
कार्य-कारण	३.	कार्य और कारण के	पुरुषः अव्यक्तः	९.	पुरुष तो केवल अव्यक्त
रूपिणी ।	४.	रूप में	ईक्षते ॥	१०.	साक्षी मात्र है

श्लोकार्थ—सृष्टि के आरम्भ में इनके कार्य और कारण के रूप में प्रकृति ही रहती है । वही सत्त्वादि गुणों की सहायता से जगत् की स्थिति आदि अवस्थायें धारण करता है । पुरुष केवल अव्यक्त साक्षीमात्र है ॥

अष्टदशः श्लोकः

व्यक्तादयो विकुर्वाणा धातवः पुरुषेक्षया ।
लब्धवीर्याः सृजन्त्यण्डं संहताः प्रकृतेर्बलात् ॥१८॥

पदच्छेद—

व्यक्त आदयः विकुर्वाणा धातवः पुरुष ईक्षया ।
लब्धवीर्याः सृजन्ति अण्डम् संहताः प्रकृतेः बलात् ॥

शब्दार्थ—

व्यक्त	१.	महत्तत्त्व	लब्धवीर्या	७.	शक्ति प्राप्त करके
आदयः	२.	आदि	सृजन्ति	१२.	सृष्टि करते हैं
विकुर्वाणा	४.	विकार को प्राप्त होते हुये	अण्डम्	११.	ब्रह्माण्ड को
धातवः	३.	कारण धातुयें	संहताः	८.	परस्पर मिल जाते हैं
पुरुष	५.	पुरुष के	प्रकृतेः	९.	प्रकृति का आश्रय लेकर
ईक्षया ।	६.	ईक्षण से	बलात् ॥	१०.	उसी के बल से

श्लोकार्थ—महत्तत्त्व आदि कारण धातुयें विकार को प्राप्त होते हुये पुरुष के ईक्षण से शक्ति प्राप्त करके परस्पर मिल जाते हैं । प्रकृति का आश्रय लेकर उसी के बल से ब्रह्माण्ड की सृष्टि करते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

सप्तैव धातव इति तत्रार्थाः पञ्च खादयः ।
ज्ञानमात्मोभयाधारस्ततो देहेन्द्रियासवः ॥१९॥

पदच्छेद— सप्तएव धातवः इति तत्र अर्थाः पञ्च खादयः ।
ज्ञानम् आत्मा उभया आधारः ततः देह इन्द्रिय आसवः ॥

शब्दार्थ—

सप्तएव	२.	सात ही है	ज्ञानम्	७.	छटा जीव और
धातवः	१.	जो लोग तत्त्वों की संख्या	आत्मा	८.	सातवां परमात्मा-जो
इति	३	ऐसा मानते हैं	उभया आधारः	९.	जीव और जगत दोनों का अधिष्ठान है
तत्र अर्थाः	४.	उनके मत में	ततः देह	१०.	उन पञ्च भूतों से ही देह
पञ्च	५.	ये पांच भूत	इन्द्रियः	११.	इन्द्रियां और
ख आदयः ।	६.	आकाश, वायु, तेज, जल, और पृथ्वी	आसवः ॥	१२.	प्राण आदि की उत्पत्ति हुई है

श्लोकार्थ—जो लोग तत्त्वों की संख्या ऐसा मानते हैं उनके मत मे ये पांच भूत आकाश, वायु, तेज-जल और पृथ्वी, छटाजीव और सातवां परमात्या, जो जीव और जगत दोनों का अधिष्ठान है । उन पञ्चभूतों से हो देह, इन्द्रियां और प्राण, आदि की उत्पत्ति हुई है ॥

विंशः श्लोकः

षडित्यत्रापि भूतानि पञ्च षष्ठः परः पुमान् ।
तैर्युक्त आत्मसम्भूतैः सृष्ट्वेदं समुपाविशत् ॥२०॥

पदच्छेद—

षड् इति अत्र अपि भूतानि पञ्च षष्ठः परः पुमान् ।
तैः युक्त आत्म सम्भूतैः सृष्ट्वा इदम् समुपाविशत् ॥

शब्दार्थ—

षड् इति	१.	जो लोग छः तत्त्व	तैः	७.	वही परमात्मा उन पञ्चभूतों से
अत्र अपि	२.	स्वीकार करते हैं	युक्त	८.	युक्त होकर
भूतानि पञ्च	३.	उनके मत में भी पांच भूत	आत्म सम्भूतैः	९.	स्वयम् हो
षष्ठः	४.	और छठाँ	सृष्ट्वा	११.	सृष्टि करते और
परः	५.	परम	इदम्	१०.	इस देहादि की
पुमान् ।	६.	पुरुष परमात्मा है !	समुपाविशत् ॥	१२.	उसमें जीव रूप से प्रवेश करता है

श्लोकार्थ—जो लोग छः तत्त्व स्वीकार करते हैं, उनके मत में भी पांच भूत और छठाँ परम पुरुष परमात्मा है । वही परमात्मा उन पञ्चभूतों से युक्त होकर स्वयम् ही देहादि की सृष्टि करके और उसमें जीव रूप से प्रवेश करता है ॥

एकविंशः श्लोकः

चत्वार्येवेति तत्रापि तेज आपोऽन्नमात्मनः ।
जातानि तैरिदं जातं जन्मावयविनः खलु ॥२१॥

पदच्छेद—

चत्वार्य एवेति तत्र अपि तेजः आपः अन्नम् आत्मनः ।
जातानि तैः इदम् जातम् जन्म अवयविनः खलु ॥

शब्दार्थ—

चत्वार्य	३.	चार तत्त्व मानते हैं	जातानि	८.	उत्पत्ति हुई है
एवेति	२.	जो लोग कारण के रूप में	तैः इदम्	१०.	सब इन्हीं से
तत्र अपि	४.	उनके मत में भी	जातम्	११.	उत्पन्न होते हैं
तेजः	६.	तेज	जन्म	१२.	वे सबका इन्हीं में समावेश करते है
आपः अन्नम्	७.	जल और पृथ्वी को	अवयविनः	९.	जगत में जितने पदार्थ हैं
आत्मनः ।	५.	आत्मा से	खलु ॥	१.	निश्चय ही

श्लोकार्थ—निश्चय ही जो लोग कारण के रूप में चार तत्त्व मानते हैं। उनके मत में भी आत्मा से तेज, जल और पृथ्वी की उत्पत्ति हुई है। जगत में जितने पदार्थ हैं। सब इन्हीं से उत्पन्न होते हैं। वे सबका इन्हीं में समावेश करते हैं।

द्वाविंशः श्लोकः

संख्याने सप्तदशके भूतमात्रेन्द्रियाणि च ।
पञ्च पञ्चैकमनसा आत्मा सप्तदशः स्मृतः ॥२२॥

पदच्छेद—

संख्याने सप्तदशके भूत मात्र इन्द्रियाणि च ।
पञ्च पञ्च एक मनसा आत्मा सप्तदशः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

संख्याने	१.	जो लोग तत्त्वों की संख्या	पञ्च-पञ्च	३.	पाँच पाँच
सप्तदशके	२.	सत्रह बतलाते हैं वे	एक	७.	एक
भूत	४.	भूत	मनसा	८.	मन
मात्र	६.	तन्मात्रायें	आत्मा	११.	एक आत्मा-इस प्रकार
इन्द्रियाणि	९.	पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ	सप्तदशः	१२.	सत्रह तत्त्व
च ।	१०.	और	स्मृतः ॥	५.	मानते हैं

श्लोकार्थ—जो लोग तत्त्वों की संख्या सत्रह बतलाते हैं। वे पाँच भूत-पाँच तन्मात्रायें एक मन, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, एक आत्मा, इस प्रकार सत्रह तत्त्व मानते हैं॥

त्रयोदशः श्लोकः

तद्वत् षोडशसंख्याने आत्मैव मन उच्यते ।
भूतेन्द्रियाणि पञ्चैव मन आत्मा त्रयोदश ॥२३॥

पदच्छेद—

तद्वत् षोडश संख्याने आत्मा एव मन उच्यते ।
भूत इन्द्रियाणि पञ्च एव मन आत्मा त्रयोदश ॥

शब्दार्थ—

तद्-वत्	१. इसी प्रकार	भूत	८.	आकाशादि पांच भूत
षोडश	२. तत्त्वों की संख्या सोलह है	इन्द्रियाणि	१०.	ज्ञानेन्द्रियां
संख्याने	३. संख्या मानने वाले	पञ्च एव	६.	पांच ही
आत्मा	४. आत्मा में	मनः	११.	एकमन
एवमनः	५. ही मन का	आत्मा	१२.	एक जीवात्मा और परमात्मा मानते हैं
उच्यते ।	६. अन्तर्भाव मानते हैं	त्रयोदशा ॥	७.	तेरह तत्त्व मानने वाले

श्लोकार्थ—इसी प्रकार तत्त्वों की संख्या सोलह है । संख्या मानने वाले आत्मा में ही मन का अन्तर्भाव मानते हैं । तेरह तत्त्व मानने वाले आकाशादि पाँच भूत पाँच ही ज्ञानेन्द्रिय, एक मन, एक जीवात्मा और परमात्मा मानते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

एकादशत्व आत्मासौ महाभूतेन्द्रियाणि च ।
अष्टौ प्रकृतयश्चैव पुरुषश्च नवेत्यथ ॥२४॥

पदच्छेद—

एकादशत्वे आत्मा असौ महाभूत इन्द्रियाणि च ।
अष्टौ प्रकृतयः च एव पुरुषः च नव इति अथ ॥

शब्दार्थ—

एकादशत्वे	१. ग्यारह संख्या मानने वालों में	अष्टौ	९.	आठ
आत्मा	६. आत्मा स्वीकार किया है	प्रकृतयः	१०.	प्रकृतियाँ अर्थात् पांचभूत-मन, बुद्धि, अहंकार आदि
असौ	५. एक	च एव	११.	और
महाभूत	२. पांचभूत	पुरुषः च	१२.	नवां पुरुष तत्त्व है
इन्द्रियाणि	३. पांच ज्ञानेन्द्रियां	नव	७.	नवतत्त्व मानने वाले
च ।	४. और	इति अथ ॥	८.	ऐसा मानते हैं कि

श्लोकार्थ—ग्यारह संख्या मानने वालों में पांचभूत, पांच ज्ञानेन्द्रियां, और एक आत्मा स्वीकार किया है । नवतत्त्व मानने वाले ऐसा मानते हैं कि आठ प्रकृतियाँ अर्थात् पांचभूत (मन, बुद्धि-अहंकारादि) और नवां पुरुष तत्त्व है ।

पञ्चविंशः श्लोकः

इति नानाप्रसंख्यानं तत्त्वानामृषिभिः कृतम् ।
सर्वं न्याय्यं युक्तिमत्त्वाद् विदुषां किमशोभनम् ॥२५॥

पदच्छेद—

इति नाना प्रसंख्यानम् तत्त्वानाम् ऋषिभिः कृतम् ।
सर्वम् न्याय्यम् युक्ति मत्त्वाद् विदुषाम् किम शोभनम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	सर्वम्	९.	उन सबकी संख्या
नाना	३.	भिन्न-भिन्न प्रकार से	नयाय्यम्	१०.	उचित ही है, क्योंकि
प्रसंख्यानम्	५.	गणना	युक्ति	७.	युक्ति
तत्त्वानाम्	४.	तत्त्वों की	मत्त्वाद्	८.	युक्त होने के कारण
ऋषिभिः	२.	ऋषि मुनियों ने	विदुषाम् किम्	११.	तत्त्वज्ञानियों को कहीं भी
कृतम् ।	६.	की है	शोभनम् ॥	१२.	बुराई नहीं दिखती है

श्लोकार्थ—इस प्रकार ऋषि-मुनियों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से तत्त्वों की गणना की है। युक्ति-युक्त होने के कारण उन सबकी संख्या उचित ही है, क्योंकि तत्त्वज्ञानियों को कहीं भी बुराई नहीं दीखती है ॥

षड्विंशः श्लोकः

प्रकृतिः पुरुषश्चोभौ यद्यप्यात्मविलक्षणौ ।
अन्योन्यापाश्रयात् कृष्ण दृश्यते न भिदा तयोः ॥२६॥

पदच्छेद—

प्रकृतिः पुरुषः च उभौ यद्यपि आत्म विलक्षणौ ।
अन्योन्यः अपआश्रयात् कृष्ण दृश्यते न भिदातयोः ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतिः	३.	प्रकृति और	अन्योन्यः	८.	तथापि आपस में
पुरुषः	४.	पुरुष	अपआश्रयात्	९.	घुल-मिल जाने के कारण
च उभौ	५.	दोनों	कृष्ण	१.	हे श्याम सुन्दर !
यद्यपि	२.	यद्यपि	दृश्यते न	१२.	नहीं जान पड़ता है
आत्म	६.	स्वरूपतः	भिदा	११.	भेद
विलक्षणौ ।	७.	एक दूसरे से भिन्न हैं	तयोः ॥	१०.	दोनों का

श्लोकार्थ—हे श्याम सुन्दर ! यद्यपि प्रकृति और पुरुष दोनों स्वरूपतः एक दूसरे से भिन्न हैं। तथापि आपस में घुल-मिल जाने के कारण दोनों का भेद नहीं जान पड़ता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

प्रकृतौ लक्ष्यते ह्यात्मा प्रकृतिश्च तथाऽऽत्मनि ।
एवं मे पुण्डरीकाक्ष महान्तं संशयं हृदि ।
छेत्तुमर्हसि सर्वज्ञ वचोभिर्नयनैपुणैः ॥२७॥

पदच्छेद—
प्रकृतौ लक्ष्यते ह्यात्मा प्रकृतिः च तथा आत्मनि ।
एवम् मे पुण्डरीकाक्ष महान्तम् संशयम् हृदि ।
छेत्तुम् अर्हसि सर्वज्ञ वचोभिः नयनै पुणैः ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतौ	६.	प्रकृति में	महान्तम्	४.	यह बहुत बड़ा
लक्ष्यते	८.	दर्शन होता है	संशयम्	५.	सन्देह है कि
हि आत्मा	७.	पुरुष का	हृदि	३.	हृदय में
प्रकृतिः	११.	प्रकृति का दर्शन होता है	छेत्तुम्	१५.	नष्ट करने में
च तथा	९.	या	अर्हसि	१६.	पूर्ण समर्थ हैं
आत्मनिः	१०.	पुरुष में	सर्वज्ञ	१२.	हे सर्वज्ञ ! आप
एवम् मे	२.	मेरे	वचोभिः	१४.	वाणी के द्वारा इससन्देह को
पुण्डरीकाक्ष ।	१.	हे कमल नयन श्रीकृष्ण !	नयनैपुणैः ॥	१३.	अपनी युक्ति-युक्त

श्लोकार्थ—हे कमलनयन श्रीकृष्ण ! मेरे हृदय में यह बहुत बड़ा सन्देह है कि प्रकृति में पुरुष का दर्शन होता है या पुरुष में प्रकृति का दर्शन होता है । हे सर्वज्ञ ! आप अपनी युक्ति-युक्त वाणी के द्वारा इस सन्देह को नष्ट करने में पूर्ण समर्थ हैं ।

अष्टविंशः श्लोकः

त्वत्तो ज्ञानं हि जीवानां प्रमोषस्तेऽत्र शक्तितः ।
त्वमेव ह्यात्ममायाया गतिं वेत्थ न चापरः ॥२८॥

पदच्छेद—
त्वत्तः ज्ञानम् हि जीवानाम् प्रमोषः ते अत्र शक्तितः ।
त्वमेव हि आत्म माया याः गतिम् वेत्थ न च अपरः ॥

शब्दार्थ—

त्वत्तः	१.	हे भगवन् ! आपकी कृपा से	त्वमेव	१०.	आप ही
ज्ञानम्	३.	ज्ञान होता है	हि आत्म	७.	अपनी आत्मस्वरूपिणी
हि जीवानाम्	२.	जीवों को	मायायाः	८.	माया की विचित्र
प्रमोषः	६.	नाश होता है	गतिम्	९.	गति
ते	४.	आपकी	वेत्थ	११.	जानते हैं
अत्र शक्तितः ।	५.	मायाशक्ति से ही उनके ज्ञान का	न च अपरः ॥	१२.	और कोई नहीं जानता है

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आपकी कृपा से ही जीवों को ज्ञान होता है । आपकी मायाशक्ति से ही उनके ज्ञान का नाश होता है । अपनी आत्म स्वरूपिणी माया की विचित्र गति आप ही जानते हैं, और कोई नहीं जानता है ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—प्रकृतिः पुरुषश्चेति विकल्पः पुरुषर्षभ ।
एष वैकारिकः सर्गो गुणव्यतिकारात्मकः ॥२६॥

पदच्छेद— प्रकृतिः पुरुषः च इति विकल्पः पुरुषर्षभ ।
एष वैकारिकः सर्गः गुण व्यतिकर आत्मकः ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतिः	२.	प्रकृति और	एष	६.	इस प्राकृत जगत् में
पुरुषः	३.	पुरुष	वैकारिकः	८.	विकार तो होते ही रहते हैं
च इति	४.	इन दोनों में	सर्गः	७.	जन्म-मरण, वृद्धि-ह्रासादि
विकल्पः	५.	अत्यन्त भेद हैं	गुणव्यतिकर	९.	यह गुणों के क्षोभ से ही
पुरुषर्षभ ।	१.	हे पुरुष श्रेष्ठ उद्धव !	आत्मकः ॥	१०.	बना है

श्लोकार्थ—हे पुरुष श्रेष्ठ उद्धव ! प्रकृति और पुरुष इन दोनों में अत्यन्त भेद है। इस प्राकृत जगत् में जन्म-मरण, वृद्धि-ह्रासादि विकार तो होते ही रहते हैं। यह गुणों के क्षोभ से ही बना है।

त्रिंशः श्लोकः

ममाङ्ग माया गुणमय्यनेकधा विकल्पबुद्धीश्च गुणैर्विधत्ते ।
वैकारिकस्त्रिविधोऽध्यात्ममेकमथाधिदैवमधिभूतमन्यत् ॥३०॥

पदच्छेद— मम् अङ्ग माया गुणमयी अनेकधा विकल्प बुद्धीः च गुणैः विधत्ते ।
वैकारिकः त्रिविधः अध्यात्म् एकम् अथ अधि दैवम् अधिभूतम् अन्यत् ॥

शब्दार्थ—

मम् अङ्ग	१.	प्रियमित्र उद्धव ! मेरी	वैकारिकः	९.	इस वैकारिक सृष्टि को
माया	२.	माया	त्रिविधः	१०.	हम तीन रूपों में बांट सकते हैं
गुणमयी	३.	त्रिर्गुणात्मिका है	अध्यात्म्	१२.	अध्यात्म
अनेकधा	५.	अनेकों प्रकार की	एकम्	११.	एक तो
विकल्प	६.	भेद	अथ	१३.	और दूसरा
बुद्धीः च	७.	वृत्तियाँ	अधिदैवम्	१४.	अधिदैव तथा
गुणैः	४.	वही अपने गुणों से	अधिभूतम्	१६.	अधिभूत है
विधत्ते ।	८.	पैदा कर देती है	अन्यत् ॥	१५.	अन्य तीसरा प्रकार

श्लोकार्थ—प्रियमित्र उद्धव ! मेरी माया त्रिगुणात्मिका है। वही अपने गुणों से अनेकों प्रकार की भेद वृत्तियाँ पैदाकर देती हैं। इस वैकारिक सृष्टि को हम तीन रूपों में बांट सकते हैं। एक तो अध्यात्म और दूसरा अधिदैव तथा अन्य तीसरा प्रकार अधिभूत है॥

एकत्रिंशः श्लोकः

दृग् रूपमार्कं वपुरत्र रन्ध्रे परस्परं सिध्यति यः स्वतः खे ।
आत्मा यदेषामपरो य आद्यः स्वयानुभूत्याखिलसिद्धसिद्धिः ।
एवं त्वगादि श्रवणादि चक्षुर्जिह्वादि नासादि च च चित्तयुक्तम् ॥३१॥

पदच्छेद—

दृक् रूपम् आर्कम् वपुः अत्र रन्ध्रे परस्परम् सिध्यति यः स्वतः खे ।
आत्मा यत् एषाम् अपरः यः आद्यः स्वया अनुभूत्या अखिल सिद्ध सिद्धिः ।
एवम् त्वक् आदि श्रवणादि चक्षुः जिह्वा आदि नासा आदि चचित्त युक्तम् ।।

शब्दार्थ—

दृक्	१. नेत्रेन्द्रिय अध्यात्म हैं	स्वया	१६. आत्मा के अपने स्वयं सिद्ध
रूपम्	२. उसका विषय रूप अधिभूत है	अनुभूत्या	१७. प्रकाश से
आर्कम्	५. सूर्य देवता का	अखिल	१८. समस्त
वपुः	६. अंश अधिदैव है	सिद्ध	१९. सिद्ध पदार्थों की
अत्र	३. और यहाँ	सिद्धिः	२०. मूल सिद्धि है
रन्ध्रे	४. नेत्र गोलक में स्थित	एवम्	२१. इसी प्रकार
परस्परम्	७. ये तीनों परस्पर एक दूसरे के आश्रय से	त्वक् ।।	२२. त्वचा
सिध्यति	८. सिद्ध होते हैं	आदि	२३. आदि
यः	१०. सूर्य मण्डल के समान	श्रवण आदि	२४. श्रोत्र आदि
स्वतः	१२. स्वयं सिद्ध	चक्षुः	२५. चक्षु
खे	९. आकाश मण्डल में स्थित	जिह्वा आदि	२६. जिह्वा आदि
आत्मा	११. यह आत्मा भी	नासा आदि	२१. नासिका आदि
यत् एषाम्	१३. उनका साक्षी और	च	१८. और
अपरः	१५. उनसे परे है	चित्त	२९. चित्त
यः आद्यः ।	१४. सबका मूल कारण	युक्तम् ।।	३०. आदि के भी तीन-तीन भेद है

श्लोकार्थ—नेत्रेन्द्रिय अध्यात्म है। उसका विषय रूप अधिभूत है। और यहाँ नेत्र गोलक में स्थित सूर्य देवता का अंश अधिदैव है। ये तीनों परस्पर एक दूसरे के आश्रय से सिद्ध होते हैं। आकाश मण्डल में स्थित सूर्य मण्डल के समान यह आत्मा भी स्वयं सिद्ध उनका साक्षी और सबका मूल कारण उनसे परे है। आत्मा के अपने स्वयं सिद्ध प्रकाश से समस्त सिद्ध पदार्थों की मूल सिद्धि है। इसी प्रकार त्वचा आदि, श्रोत्र आदि और नासिका आदि और चित्त आदि के भी तीन-तीन भेद हैं।।

द्वात्रिंशः श्लोकः

योऽसौ गुणक्षोभकृतो विकारः प्रधानमूलान्महतः प्रसूतः।
अहं त्रिवृन्मोहविकल्पहेतुर्वैकारिकस्तामस ऐन्द्रियश्च ॥३२॥

पदच्छेद — य: असौ गुण क्षोभकृतः विकारः प्रधान मूलान् महतः प्रसूतः।
अहम् त्रिवृत् मोह विकल्पः हेतुः वैकारिकः तामसः ऐन्द्रियः च ॥

शब्दार्थ—

य: असौ	५. इस प्रकार ये अहंकार	अहम्	४. अहंकार
गुण	६. गुणों के	त्रिवृत्	९. अहंकार के तीन भेद हैं
क्षोभकृतः	७. क्षोभ से उत्पन्न हुआ	मोह	१२. यह अहंकार ही अज्ञान और
विकारः प्रधान	८. प्रकृति का ही एक विकार है	विकल्पः	१३. सृष्टि की विविधता का
मूलान्	१. प्रकृति से	हेतुः	१४. मूल कारण है
महतः	२. महत्तत्त्व	वैकारिकः तामस	१०. सात्त्विक-तामस
प्रसूतः।	३. उत्पन्न होता है और महत्तत्त्व से	ऐन्द्रिय च ॥	११. और राजस

श्लोकार्थ—प्रकृति से महत्तत्त्व उत्पन्न होता है। और महत्तत्त्व से अहंकार, इस प्रकार ये अहंकार गुणों के क्षोभ से उत्पन्न हुआ प्रकृति का एक विकार है। अहंकार के तीन भेद हैं। सात्त्विक, तामस और राजस यह अहंकार हो अज्ञान और सृष्टि की विविधता का मूल कारण है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

आत्मा परिज्ञानमयो विवादो ह्यस्तीति नास्तीति भिदार्थनिष्ठः।
व्यर्थोऽपि नैवोपरमेत पुंसांमत्तः परावृत्तधियां स्वलोकात् ॥३३॥

पदच्छेद—आत्मा परिज्ञान मयः विवादः हि अस्ति इति न अस्ति इति भिदा अर्थ निष्ठः।
व्यर्थः अपिन एव उपरमेत पुंसाम् मत्तः परवृत्त धियाम् स्वलोकात् ॥

शब्दार्थ—

आत्मा	१. आत्मा	व्यर्थः अपि	८. यह विवाद व्यर्थ होने पर भी
परिज्ञानमयः	२. ज्ञान स्वरूप है	न एव उपरमेत	१४. उससे मुक्त नहीं हो सकता है
विवादः	७. कोई विवाद नहीं है	पुंसाम्	९. जो लोग
हि अस्ति इति	५. अस्ति और	मत्तः	१०. मुझसे अपने वास्तविक
न अस्ति इति	६. नास्ति के रूप का	परिवृत्तधियाम्	१३. विमुख हैं वे
भिदा अर्थ	३. इन पदार्थों के	स्व	११. स्वरूप के
निष्ठः।	४. सम्बन्ध में उसका	लोकात् ॥	१२. दर्शन से

श्लोकार्थ— आत्मा ज्ञान स्वरूप है। इन पदार्थों के सम्बन्ध में उसका अस्ति और नास्ति के रूप का कोई विवाद नहीं है। यह विवाद व्यर्थ होने पर भी जो लोग मुझसे अपने वास्तविक स्वरूप के दर्शन से विमुख हैं वे उससे मुक्त नहीं हो सकता है ॥

चतुस्त्रिंश: श्लोक:

उद्धव उवाच—त्वत्तः परावृत्तधियः स्वकृतैः कर्मभिः प्रभो ।
उच्चावचान् यथा देहान् गृह्णन्ति विसृजन्ति च ॥३४॥

पदच्छेद—

त्वत्तः परावृत्त धियः स्वकृतैः कर्मभिः प्रभो ।
उच्चावचान् यथा देहान् गृह्णन्ति विसृजन्ति च ॥

शब्दार्थ—

त्वत्तः	३. आपसे	उच्चावचान्	६. ऊँचे-नीचे-पाप पुण्य रूप
परावृत्त	४. विमुख है	यथा	८. अनुसार
धियः	२. जिसकी बुद्धि	देहान्	९. शरीर
स्वकृतैः	५. अपने द्वारा किये गये	गृह्णन्ति	१०. धारण करते हैं
कर्मभिः	७. कर्मों के	विसृजन्ति	१२. छोड़ते हैं
प्रभो ! ।	१. हे भगवन् !	च ॥	११. और

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! जिनकी बुद्धि आपसे विमुख है, वे अपने द्वारा किये गये ऊँचे-नीचे पाप-पुण्य रूप कर्मों के अनुसार शरीर धारण करते हैं । और छोड़ते हैं ॥

पञ्चत्रिंश: श्लोक:

तन्ममाख्याहि गोविन्द दुर्विभाव्यमनात्मभिः ।
न ह्येतत् प्रायशो लोके विद्वांसः सन्ति वञ्चिताः ॥३५॥

पदच्छेद—

तत् मम् आख्याहि गोविन्द दुर्विभाव्यम् अनात्मभिः ।
न हि एतत् प्रायशः लोके विद्वांसः सन्ति वञ्चिताः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१०. इसलिये आप	नहि	८. नहीं
मम्	११. मुझे	एतत् प्रायशः	६. अधिकतर लोग इस विषय के
आख्याहि	१२. समझा दें	लोके	४. संसार में
गोविन्द	१. हे गोविन्द !	विद्वांसः	७. विद्वान
दुर्विभाव्यम्	३. इस ज्ञान को नहीं जानते	सन्ति	९. हैं
अनात्मभिः ।	२. आत्म ज्ञान से रहित लोग	वञ्चिताः ॥	५. माया की भूल-भुलैया में पड़े होने के कारण

श्लोकार्थ—हे गोविन्द ! आत्म ज्ञान से रहित लोग इस ज्ञान को नही जानते हैं । संसार की भूल-भुलैया में पड़े होने के कारण अधिकतर लोग इस विषय के विद्वान नहीं हैं । इसलिये आप मुझे समझा दें ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—मनः कर्ममयं नृणामिन्द्रियैः पञ्चभिर्युतम् ।
लोकाल्लोकं प्रयात्यन्य आत्मा तदनुवर्तते ॥३६॥

पदच्छेद—

मनः कर्म मयम् नृणाम् इन्द्रियैः पञ्चभिः युतम् ।
लोकात् लोकम् प्रयान्ति अन्यः आत्मा तत् अनुवर्तते ॥

शब्दार्थ—

मनः	२.	मन	लोकात्	७.	वही एक लोक से
कर्ममयम्	३.	कर्म संस्कारों का पुञ्ज है	लोकम्	८.	दूसरे लोक में
नृणाम्	१.	मनुष्यों का	प्रयान्ति	९.	आता-जाता रहता है, और
इन्द्रियैः	५.	इन्द्रियाँ	अन्यः	१०.	अन्य
पञ्चभिः	४.	मन और पाँच	आत्मा	११.	आत्मा
युतम् ।	६.	मिलकर लिङ्ग शरीर कहलाते हैं	तत् अनुवर्तते ।	१२.	उसी का अनुशरण करता है

श्लोकार्थ—मनुष्यों का मन कर्म संस्कारों का पुञ्ज है । मन और पाँच इन्द्रियाँ मिलकर लिङ्ग शरीर कहलाते हैं । वही एक लोक से दूसरे लोक में आता-जाता रहता है । और अन्य आत्मा उसी का अनुसरण करता है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

ध्यायन् मनोऽनु विषयान् दृष्टान् वानुश्रुतानथ ।
उद्यत् सीदत् कर्मतन्त्रं स्मृतिस्तदनु शाम्यति ॥३७॥

पदच्छेद—

ध्यायन् मनः अनुविषयान् दृष्टान् वा अनुश्रुतान् अथ ।
उद्यत् सदित् कर्म तन्त्रम् स्मृतिः तत् अनु शाम्यति ॥

शब्दार्थ—

ध्यायन्	६.	चिन्तन करनेलगता है	उद्यत्	८.	उनमें तदाकार हो जाता है
मनः	१.	मन	सीदत्	९.	और उन्हीं में लीन हो जाता है
अनुविषयान्	६.	विषयों का	कर्मतन्त्रम्	२.	कर्मों के अधीन है
दृष्टान् वा	३.	देखे या	स्मृतिः	१०.	उसकी स्मृति भी
अनुश्रुतान्	४.	सुने हुये	तत् अनु	११.	तब धीरे-धीरे
अथ	८.	अथवा	शाम्यति ॥	१२.	नष्ट हो जाते है

श्लोकार्थ—मन कर्मों के अधीन है । देखे या अथवा सुने हुये विषयों का चिन्तन करने लगता है । उनमें तदाकार हो जाता है, और उन्हीं में लीन हो जाता है । उसकी स्मृति भी तब धीरे धीरे नष्ट हो जाते हैं ।

अष्टत्रिंशः श्लोकः

विषयाभिनिवेशेन नात्मानं यत् स्मरेत् पुनः ।
जन्तोर्वै कस्यचिद्धेतोर्मृत्युरत्यन्तविस्मृतिः ॥३८॥

पदच्छेद—

विषय अभिनिवेशेन न आत्मानम् यत् स्मरेत् पुनः ।
जन्तोः वै कस्यचित् हेतोः मृत्युः अत्यन्त विस्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

विषय	२.	उन देवादि शरीरों में	जन्तोः	६.	जीव का
अभिनिवेशेन	३.	अभिनिवेश होने पर	वै	८.	निश्चय ही
न	७.	नहीं करता	कस्यचित्	१०.	किसी भी
आत्मानम्	४.	वह अपना	हेतोः	११.	कारण से
यत्	५.	भी	मृत्युः	१४.	मृत्यु है
स्मरेत्	६.	स्मरण	अत्यन्त	१२.	शरीर को पूर्णरूप से
पुनः ।	१.	फिर	विस्मृतिः ।	१३	भूल जाना ही

श्लोकार्थ—फिर उन देवादि शरीरों में अभिनिवेश होने पर वह अपना भी स्मरण नहीं करता निश्चय ही जीव का किसी भी कारण से शरीर को पूर्ण रूप भूल जाना ही मृत्यु है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

जन्म त्वात्मतया पुंसः सर्वभावेन भूरिद ।
विषयस्वीकृतिं प्राहुर्यथा स्वप्नमनोरथः ॥३९॥

पदच्छेद—

जन्म तु आत्मतया पुंसः सर्वभावेन भूरिद ।
विषय स्वकृतिम् प्राहुः यथा स्वप्न मनोरथः ॥

शब्दार्थ—

जन्म	११.	इसका जन्म	विषय	६.	किसी शरीर को
तु आत्मतया	८.	अभेद भाव से	स्वकृतिम्	१०.	स्वीकार करना ही
पुंसः	५.	जीव का	प्राहुः	१२.	कहलाता है
सर्व	६.	पूर्ण	यथा	४.	समान
भावेन	७.	रूपेण	स्वप्न	२.	स्वप्नकालीन और
भूरिद ।	१.	हे उदार उद्धव !	मनोरथः ॥	३.	मनोरथकालीन शरीर के

श्लोकार्थ—हे उदार उद्धव ! स्वप्नकालीन और मनोरथकालीन शरीर के समान जीविका पूर्णरूपेण अभेदभाव से किसी शरीर को स्वीकार करना ही इसका जन्म कहलाता है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

स्वप्नं मनोरथं चेत्थं प्राक्तनं न स्मरत्यसौ ।
तत्र पूर्वमिवात्मानमपूर्वं चानुपश्यति ॥४०॥

पदच्छेद—

स्वप्नम् मनोरथम् चेत्थम् प्राक्तनम् नस्मरति असौ ।
तत्र पूर्वम् इव आत्मानम् अपूर्वम् च अनुपश्यति ॥

शब्दार्थ—

स्वप्नम्	५.	वैसे ही पहले के स्वप्न और	तत्र	७.	उस स्वप्न और मनोरथ में
मनोरथम्	६.	मनोरथ को स्मरण नहीं करता	पूर्वम्	८.	पूर्व सिद्ध होने पर भी
चेत्थम्	१.	इस प्रकार	इव	११.	जैसा ही
प्राक्तनम्	३.	पूर्व देह का	आत्मानम्	९.	अपने को
नस्मरति	४.	स्मरण नहीं करता	अपूर्वम् च	१०.	नया
असौ ।	२.	जैसे यह जीव	अनुपश्यति ॥	१२.	समझता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार जैसे यह जीव पूर्व देह का स्मरण नहीं करता है, उस स्वप्न और मनोरथ में पूर्व सिद्ध होने पर भी अपने को नया जैसा ही समझता है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

इन्द्रियायनसृष्ट्येदं त्रैविध्यं भाति वस्तुनि ।
बहिरन्तर्भिदाहेतुर्जनोऽसज्जनकृद् यथा ॥४१॥

पदच्छेद—

इन्द्रिय अयन सृष्टा इदम् त्रैविध्यम् भाति वस्तुनि ।
बहिः अन्तः भिदा हेतुः जनाः असज्जन कृत यथा ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रिय	१.	इन्द्रियों के	बहिः	११.	आत्मा ही बाहर और
अयन	२.	आश्रय मन की	अन्तः	१२.	अन्दर
सृष्टा	४.	सृष्टि से	भिदा	१३.	भेदों का
इदम्	३.	इस	हेतुः	१४.	हेतु मालुम पड़ने लगता है
त्रैविध्यम्	६.	उत्तम, मध्यम् और अधम की त्रिविधता	जनः	९.	पुत्र को
भाति	७.	भासती है । और	असज्जन कृत	८.	दुष्ट उत्पन्न करने वाले के
वस्तुनि	५.	आत्मवस्तु में	यथा ॥	१०.	समान

श्लोकार्थ—इन्द्रियों के आश्रय इस मन की सृष्टि से आत्मवस्तु से उत्तम, मध्यम और अधम की त्रिविधता भासती है । और दुष्ट पुत्र को उत्पन्न करने वाले के समान आत्मा ही बाहर और अन्दर भेदों का हेतु मालूम पड़ने लगता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

नित्यदा ह्यङ्ग भूतानि भवन्ति न भवन्ति च ।
कालेनालक्ष्यवेगेन सूक्ष्मत्वात्तन्न दृश्यते ॥४२॥

पदच्छेद—

नित्यदा हि अङ्ग भूतानि भवन्ति न भवन्ति च ।
कालेन अलक्ष्य वेगेन सूक्ष्मत्वात् तत् न दृश्यते ॥

शब्दार्थ—

नित्यदा	६.	प्रतिक्षण होने वाले	कालेन	२.	काल की
हि अङ्ग	१.	प्यारे उद्धव ! जैसे	अलक्ष्य	४.	दिखाई नहीं देती, वैसे ही
भूतानि	७.	शरीरों के	वेगेन	३.	गति
भवन्ति	८.	जनम	सूक्ष्मत्वात्	५.	सूक्ष्म होने के कारण
न भवन्ति	१०.	मरण भी	तत् न	११.	नहीं
च ।	९.	और	दृश्यते ॥	१२.	दिखाई देते हैं

श्लोकार्थ—प्यारे उद्धव ! जैसे काल की गति दिखाई नहीं देती, वैसे ही सूक्ष्म होने के कारण प्रतिक्षण होने वाले शरीरों के जनम और मरण भी नहीं दिखाई देते हैं ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

यथार्चिषां स्रोतसां च फलानां वा वनस्पतेः ।
तथैव सर्वभूतानां वयोऽवस्थादयः कृताः ॥४३॥

पदच्छेद—

यथा अर्चिषाम् स्रोतसाम् च फलानाम् वा वनस्पतेः ।
तथैव सर्वभूतानाम् वयः अवस्था आदयः कृताः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे काल के प्रभाव से	तथैव	७.	वैसे ही
अर्चिषाम्	२.	दिये की लौ	सर्वभूतानाम्	८.	समस्त प्राणियों के शरीरों की
स्रोतसाम्	४.	नदियों के प्रवाह	वयः	९.	आयु
च	३.	और	अवस्था	१०.	अवस्था
फलानाम्	६.	फलों की अवस्था बदलती रहती है	आदयः	११.	आदि भी
वा वनस्पतेः ।	५.	अथवा वृक्षों के	कृताः ॥	१२.	बदलती रहती है

श्लोकार्थ—जैसे काल के प्रभाव से दिये की लौ और नदियों के प्रवाह अथवा वृक्षों के फलों की अवस्था बदलती रहती है। वैसे ही समस्त प्राणियों के शरीरों की आयु अवस्था आदि भी बदलती रहती हैं।

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

सोऽयं दीपोऽर्चिषां यद्वत्स्रोतसां तदिदं जलम् ।
सोऽयं पुमानिति नृणां मृषा गीर्धीर्मृषायुषाम् ।।४४।।

पदच्छेद— सः अयम् दीपः अर्चिषाम् यत् वत् स्रोतसाम् तत् इदम् जलम् ।
सः अयम् पुमान् इति नृणाम् मृषा गीर्धीः मृषा आयुषाम् ।।

शब्दार्थ—

सः	४.	वहो	सः अयम् पुमान्	१३.	यह वही पुरुष है
अयम	२.	यह	इति	१२.	यह कहना कि
दीपः	५.	दीपक है	नृणाम्	११.	अविवेकी पुरुषों का
अर्चिषाम्	३.	उन्हीं ज्योतियों का	मृषा	६.	व्यर्थ ही
यत्-वत्	१.	जैसे	गीर्धीः	८.	विषय चिन्तन में
स्रोतसाम्	६.	प्रवाह का	मृषा	१४.	सर्वथा मिथ्या है
तत् इदम् जलम् ।	७.	यह-वही-जल है (यह समझना मिथ्या है)	आयुषाम् ।।	१०.	आयु बिताने वाले

श्लोकार्थ—जैसे यह उन्हीं ज्योतियों का वही दीपक है । प्रवाह का वही जल है । यह समझना मिथ्या है । विषयचिन्तन में व्यर्थ ही आयु बिताने वाले अविवेकी पुरुषों का यह कहना कि यह वही पुरुष है । सर्वथा मिथ्या है ।।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

मा स्वस्य कर्मबीजेन जायते सोऽप्ययं पुमान् ।
म्रियते वामरो भ्रान्त्या यथाग्निर्दारुसंयुतः ।।४५।।

पदच्छेद—

मा स्वस्य कर्म बीजे न जायते सः अप्ययम् पुमान् ।
म्रियते वामरः भ्रान्त्या यथा अग्निः दारु संयुतः ।।

शब्दार्थ—

मा	६.	न	म्रियते	८.	और न मरता है, वह भी
स्वस्यकर्म	४.	अपने कर्मों के	वामरः	६.	अजन्मा और अमर ही है
बीजेन	५.	बीज द्वारा	भ्रान्त्या	१०.	फिर भी वह
जायते	७.	पैदा होता है	यथा	१४.	समान (पैदा होता और नष्ट होता दिखाई देता है
सः	१.	यद्यपि वह	अग्निः	१३.	अग्नि के
अप्ययम्	३.	भी	दारु	११.	काष्ट से
पुमान्	२.	भटका हुआ पुरुष	संयुतः ।।	१२.	युक्त

श्लोकार्थ—यद्यपि वह भटका हुआ पुरुष भी अपने कर्मों के बीज द्वारा न पैदा होता है । और न मरता है, वह भी अजन्मा और अमर है । फिर भी वह कष्ट से युक्त अग्नि के समान पैदा होता है, और नष्ट होता दिखाई देता है ।।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

निषेकगर्भजन्मानि बाल्यकौमारयौवनम् ।
वयोमध्यं जरा मृत्युरित्यवस्थास्तनोर्नव ॥४६॥

पदच्छेद—

निषेकगर्भ जन्मानि बाल्यकौमार यौवनम् ।
वयः मध्यम् जरा मृत्यु इति अवस्थाः तनोः नव ॥

शब्दार्थ—

निषेक	२.	गर्भ वृद्धि	वयः	८.	अवस्था
गर्भ	१.	गर्भाधान	मध्यम्	७.	अधेड़
जन्मनि	३.	जन्म	जरा-मृत्यु	९.	बुढ़ापा और मृत्यु
बाल्य	४.	बाल्यावस्थ	इति	१०.	ये
कौमार	५.	कुमारावस्था	अवस्थाः	१२.	अवस्थायें होती हैं
यौवनम् ।	६.	जवानी	तनोः नव ॥	११.	शरीर की नौ

श्लोकार्थ—गर्भाधान-गर्भवृद्धि, जन्म, बाल्यावस्था, कुमारावस्था, जवानी, अधेड़-अवस्था, बुढ़ापा और मृत्यु ये शरीर की नौ अवस्थायें होती हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

एता मनोरथमयीर्ह्यन्यस्योच्चावचास्तनूः ।
गुणसङ्गादुपादत्ते क्वचित् कश्चिज्जहाति च ॥४७॥

पदच्छेद—

एताः मनोरथमयीः हि अन्यस्य उच्चा वचाः तनूः ।
गुण सङ्गात् उपादत्ते क्वचित् कश्चित् जहाति च ॥

शब्दार्थ—

एताः	३.	ये	गुण	७.	परन्तु वह गुणों के
मनोरथमयीः	६.	उसके मनोरथ के अनुसार ही हैं	सङ्गात्	८.	सङ्ग से
हि अन्यस्य	२.	जीव से भिन्न हैं और	उपादत्ते	९.	इन्हें अपना मानता है तथा
उच्चा	४.	ऊँची	क्वचित्	१०.	कभी
वचाः	५	नीची अवस्थायें	कश्चित्	११.	कभी विवेक हो जाने पर
तनूः ।	१.	यह शरीर	जहाति च ॥	१२.	छोड़ भी देता है

श्लोकार्थ—यह शरीर जीव से भिन्न है, और ये ऊँची-नीची अवस्थायें उसके मनोरथ के अनुसार ही हैं । परन्तु वह गुणों के सङ्ग से इन्हें अपना मानता है तथा कभी-कभी विवेक हो जाने पर उसे छोड़ भी देता है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

आत्मनः पितृपुत्राभ्यामनुमेयौ भवाप्ययौ ।
न भवाप्ययवस्तूनामभिज्ञो द्वयलक्षणः ॥४८॥

पदच्छेद—

आत्मनः पितृ पुत्राभ्याम् अनुमेयो भव अप्ययौ ।
न भव अप्यय वस्तुनाम् अभिज्ञः द्वय लक्षणः ॥

शब्दार्थ—

आत्मनः	५.	अपने-अपने-जन्म-मरण का	न	१२.	नहीं है
पितृ	१.	पिता और	भव अप्यय	७.	जन्म और मृत्यु से युक्त
पुत्राभ्याम्	२.	पुत्र को	वस्तुनाम्	८.	वस्तुओं का
अनुमेयो	६.	अनुमान कर लेना चाहिये	अभिज्ञः	६.	ज्ञाता
भव	३.	(एक दूसरे के) जन्म	द्वय	१०.	जन्म और मृत्यु रूप
अप्ययौ ।	४.	और मृत्यु से	लक्षणः ॥	११.	लक्षण वाला शरीर

श्लोकार्थ—पिता और पुत्र को एक दूसरे के जन्म और मृत्यु से अपने-अपने जन्म-मरण का अनुमान कर लेना चाहिये । जन्म और मृत्यु से युक्त वस्तुओं का ज्ञाता जन्म और मृत्युरूप लक्षण वाला शरीर नहीं है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

तरोर्बीजविपाकाभ्यां यो विद्वाञ्जन्मसंयमौ ।
तरोर्विलक्षणो द्रष्टा एवं द्रष्टा तनोः पृथक् ॥४६॥

पदच्छेद—

तरोः बीज विपाकाभ्याम् यः विद्वान् जन्म संयमौ ।
तरोः विलक्षणः द्रष्टा एवम् द्रष्टा तनोः पृथक् ॥

शब्दार्थ—

तरोः	१.	जो, गेहूँ आदि के	तरोः	६.	वह जो-गेहूँ आदि से
बीजि	२.	उगने और	विलक्षणः	७.	भिन्न उनका
वियाकाभ्याम्	३.	उनके पक जाने पर	द्रष्टा	८.	द्रष्टा होता है
यः	४.	जो पुरुष	एवम्	१०.	इसी प्रकार
विद्वान्	६.	साक्षी है	द्रष्टा	११.	शरीर और उसकी अवस्था का साक्षी
जन्म संयमौ ।	५.	उनके उगने-और पकने का	तनोः पृथक् ॥	१२.	शरीर से सर्वथा पृथक् होता है

श्लोकार्थ—जो, गेहूँ आदि के उगने और उनके पक जाने पर जो पुरुष उनके उगने और पकने का साक्षी है । वह जो, गेहूँ आदि से भिन्न उनका द्रष्टा है । इसी प्रकार शरीर और उसकी अवस्था का साक्षी शरीर से सर्वथा प्रथक् होता है ॥

पञ्चाशः श्लोकः

प्रकृतेरेवमात्मानमविविच्याबुधः पुमान् ।
तत्त्वेन स्पर्शसम्मूढः संसारं प्रतिपद्यते ॥५०॥

पदच्छेद— प्रकृतेः एवम् आत्मानम् अविविच्य अबुधः पुमान् ।
तत्त्वेन स्पर्श सम्मूढः संसारम् प्रति पद्यते ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतेः	४. प्रकृति और शरीर से	तत्त्वेन	७. और उनसे तत्त्वतः अलग समझ कर
एवम्	३. इस प्रकार	स्पर्श	८. विषय भोग में
आत्मानम्	५. आत्मा का	सम्मूढः	९. मोहित हो जाते हैं, तथा
अविविच्य	६. विवेचन नहीं करते	संसारम्	१०. जन्म-मृत्यु रूप संसार में
अबुधः	१. अज्ञानी	प्रतिपद्यते ॥	११. भटकते हैं
पुमान्	२. पुरुष		

श्लोकार्थ—अज्ञानी पुरुष इस प्रकार प्रकृति और शरीर से आत्मा का विवेचन नहीं करते, और उनसे तत्त्वतः अलग समझकर विषय भोग में मोहित हो जाते हैं। तथा जन्म-मृत्यु रूप संसार से भटकते रहते हैं ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

सत्त्वसङ्गादृषीन् देवान् रजसासुरमानुषान् ।
तमसा भूततिर्यक्त्वं भ्रामितो याति कर्मभिः ॥५१॥

पदच्छेद— सत्त्व सङ्गात् ऋषीन् देवान् रजसा असुर मानुषान् ।
तमसा भूत तिर्यक्त्वम् भ्रामितः याति कर्माणि ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वसङ्गात्	२. सात्त्विक कर्मों में आसक्ति होने पर	तमसा	८. तामसी कर्मों की आसक्ति से
ऋषीन्	३. ऋषीलोक में और	भूत	९. भूत-प्रेत और
देवान्	४. देवलोक में	तिर्यक्त्वम्	१०. पशु-पक्षी आदि योनियों में
रजसा	५. राजसिक कर्मों में	भ्रामितः	११. भटकता
असुर	७. असुर योनियों में तथा	याति	१२. फिरता है
मानुषान् ।	६. आसक्ति से मनुष्य और	कर्माणि ॥	१. कर्मों के अनुसार जीव

श्लोकार्थ—कर्मों के अनुसार जीव सात्त्विक कर्मों में आसक्ति होने पर ऋषीलोक में और देवलोक में राजसिक कर्मों में आसक्ति से मनुष्य और असुर योनि में तथा तामसी कर्मों की आसक्ति से भूत-प्रेत और पशु-पक्षी आदि योनियों में भटकता रहता है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

नृत्यतो गायतः पश्यन् यथैवानुकरोतितान् ।
एवं बुद्धिगुणान् पश्यन्ननीहोऽप्यनुकार्यते ॥५२॥

पदच्छेद —

नृत्यतः गायतः पश्यन् यथा एव अनुकरोतितान् ।
एवम् बुद्धि गुणान् पश्यत् अनीहः अपि अनुकार्यते ॥

शब्दार्थ—

नृत्यतः	२. नाचते	एवम्	८. वैसे ही जब जीव
गायतः	३. गाते	बुद्धि	९. बुद्धि के
पश्यन्	४. देखकर	गुणान्	१०. गुणों को
यथा	१. जैसे मनुष्य किसी को	पश्यत्	११. देखता है, तब स्वयं
एव	५. स्वयं भी	अनीहः	१२. निष्क्रिय होने पर
अनुकरोति	७. अनुकरण करने लगता है	अपि	१३. भी
तान् ।	६. उनका	अनुकार्यते ॥	१४. उसका अनुकरण करने लगता है

श्लोकार्थ—जैसे मनुष्य किसी को नाचते, गाते देखकर स्वयं भी उनका अनुकरण करने लगता है। वैसे ही जब जीव बुद्धि के गुणों को देखता है। तब स्वयं निष्क्रिय होने पर भी उसका अनुकरण करने लगता है।

त्रियपञ्चाशः श्लोकः

यथाम्भसा प्रचलता तरवोऽपि चला इव ।
चक्षुषा भ्राम्यमाणेन दृश्यते भ्रमतीव भूः ॥५३॥

पदच्छेद—

यथा अम्भसा प्रचलता तरवः अपि चला इव ।
चक्षुषा भ्राम्यमाणेन दृश्यते भ्रमती इव भूः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१. जैसे	चक्षुषा	८. नेत्रों के साथ-साथ
अम्भसा	२. जल के	भ्राम्यमाणेन	७. जैसे घुमाये जाने वाले
प्रचलता	३. हिलने पर	दृश्यते	१२. दिखाई देती है
तरवः अपि	४. उसमें प्रतिविम्बित वृक्ष भी	भ्रमती	१०. घूमती हुई
चला	५. हिलते-डोलते	इव	११. सी
इव ।	६. से जान पड़ते हैं अथवा	भूः ॥	९. पृथ्वी भी

श्लोकार्थ—जैसे जल के हिलने पर उसमें प्रतिबिम्ब वृक्ष भी हिलते-डोलते से जान पड़ते हैं। अथवा जैसे घुमाये जाने वाले नेत्रों के साथ-साथ पृथ्वी भी घूमती हुई सी दिखाई देती है।

चतुःपञ्चाशः श्लोक

यथा मनोरथधियो विषयानुभवो मृषा ।
स्वप्नदृष्टाश्च दाशार्ह तथा संसार आत्मनः ॥५४॥

पदच्छेद— यथा मनोरथ धियः विषयानुभवः मृषा ।
स्वप्न दृष्टाः च दाशार्ह तथा संसार आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	स्वप्नदृष्टाः च	४.	और स्वप्न में देखे गये
मनोरथ	२.	मन के द्वारा	दाशार्ह	८.	हे दाशार्ह !
धियः	३.	सोचे गये	तथा	७.	वैसे ही
विषयानुभवः	५.	भोग पदार्थ	संसार	१०.	विषयानुभव रूप संसार भी मिथ्या है
मृषा ।	६.	मिथ्या होते हैं	आत्मनः ॥	९.	आत्मा का

श्लोकार्थ—जैसे मन के द्वारा सोचे गये और स्वप्न में देखे गये भोग पदार्थ मिथ्या होते हैं वैसे ही हे दाशार्ह ! आत्मा का विषयानुभव रूप संसार भी मिथ्या है ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

अर्थे ह्यविद्यमानेऽपि संसृतिर्न निवर्तते ।
ध्यायतो विषयानस्य स्वप्नेऽनर्थागमो यथा ॥५५॥

पदच्छेद— अर्थे हि अविद्यमाने अपि संसृतिः न निवर्तते ।
ध्यायतः विषयानस्य स्वप्ने अनर्थ आगमः यथा ॥

शब्दार्थ—

अर्थे हि	१.	विषयों के	ध्यायतः	६.	चिन्तन करता है
अविद्यमाने	२.	सत्य न होने पर	विषयान्	५.	विषयों का ही
अपि	३.	भी	अस्य	४.	जो जीव
संसृतिः	७.	उसका संसार चक्र से	स्वप्ने	११.	स्वप्न में प्राप्त
न	९.	नहीं होता है	अनर्थ आगमः	१२.	अनर्थ परम्परा जागे बिना दूर नहीं होती
निवर्तते ।	८.	छुटकारा	यथा ॥	१०.	जैसे

श्लोकार्थ—विषयों के सत्य न होने पर भी जो जीव विषयों का ही चिन्तन करता है । उसका संसार चक्र से छुटकारा नहीं होता है । जैसे स्वप्न में प्राप्त अनर्थ परम्परा जागे बिना दूर नहीं होती ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

तस्मादुद्धव मा भुङ्क्ष्व विषयानसदिन्द्रियैः ।
आत्माग्रहणनिर्भातं पश्य वैकल्पिकं भ्रमम् ॥५६॥

पदच्छेद—

तस्मात् उद्धव मा भुङ्क्ष्व विषयान् असत् इन्द्रियैः ।
आत्माग्रहण निर्भातम् पश्य वैकल्पिकम् भ्रमम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	२.	इसलिये	आत्माग्रहण	७	आत्मा के अज्ञान से
उद्धव	१.	प्रिय उद्धव !	निर्भातम्	८.	प्रतीत होने वाला
मामुङ्क्ष्व	६.	मत भोगो	पश्य	११.	ऐसा समझें
विषयान्	५.	विषयों को	वैकल्पिकम्	९.	सांसारिक भेदभाव
असत्	३.	इन दुष्ट	भ्रमम् ॥	१०.	भ्रम मूलक ही है
इन्द्रियैः ।	४.	इन्द्रियों से			

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! इसलिये इन दुष्ट इन्द्रियों से विषयों को मत भोगो । आत्मा के अज्ञान से प्रतीत होने वाला सांसारिक भेदभाव भ्रम मूलक है ऐसा समझें ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

क्षिप्तोऽवमानितोऽसद्भिः प्रलब्धोऽसूयितोऽथवा ।
ताडितः सन्निबद्धो वा वृत्त्या वा परिहापितः ॥५७॥

पदच्छेद—

क्षिप्तः अवमानितः असद्भिः प्रलब्धः असूयितः अथवा ।
ताडितः सत् निबद्धः वा वृत्त्या वा परिहापिताः ॥

शब्दार्थ—

क्षिप्तः	२.	बाहर निकाल दें	ताडितः	७.	मारे-पीटे
अवमानितः	३.	अपमान करें	सत् निबद्धः	९.	बांधे
असद्भिः	१.	असाधु पुरुष	वा	१०.	अथवा
प्रलब्धः	६.	उपहास करे	वृत्त्या	११.	आजीविका
असूयितः	४.	निन्दा करें	वा	८.	या
अथवा ।	५.	अथवा	परिहापिताः ॥	१२.	छीन लें

श्लोकार्थ—असाधु पुरुष बाहर निकाल दें, अपमान करें, निन्दा करें अथवा उपहास करें, मारे-पीटे या बाँधें, अथवा आजीविका छीन लें ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

निष्ठितो मूत्रितो वाज्ञैर्बहुधैवं प्रकम्पितः ।
श्रेयस्कामः कृच्छ्रगत आत्मनाऽऽत्मानमुद्धरेत् ॥५८॥

पदच्छेद— निष्ठितः मूत्रितः वाअज्ञैः बहुधा एवम् प्रकम्पितः ।
श्रेयः कामः कृच्छगतः आत्मना आत्मानम् उद्धरेत् ॥

शब्दार्थ—

निष्ठितः	२.	ऊपर थूक दें	श्रेयः	७.	आत्म कल्याण का
मूत्रितः	३.	मूत्र कर दें	कामः	८.	इच्छुक व्यक्ति
वाअज्ञैः	१.	अज्ञानी पुरुष	कृच्छगतः	६.	कठिनाइयों से
बहुधा	५.	बहुत बार	आत्मना	१०.	विवेक बुद्धि के द्वारा
एवम्	४.	इसी प्रकार	आत्मानम्	११.	अपना
प्रकम्पितः ।	६.	निष्ठा से डिगाने की चेष्टा करें (परन्तु)	उद्धरेत् ॥	१२.	उद्धार करे

श्लोकार्थ—अज्ञानी पुरुष ऊपर थूक दें, मूत्र कर दें, इसी प्रकार बहुत बार निष्ठा से डिगाने की चेष्टा करे । परन्तु आत्म कल्याण का इच्छुक व्यक्ति कठिनाइयों से विवेक बुद्धि के द्वारा अपना उद्धार करे ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

उद्धव उवाच— यथैवमनुबुध्येयं वद नो वदतां वर ।
सुदुःसहमिमं मन्ये आत्मन्यसदतिक्रमम् ॥५६॥

पदच्छेद— यथा एव अनुबुद्धयेयम् वद नः वदताम् वर ।
सुदुः सहम् इमम् मन्ये आत्मनि असत् अतिक्रमम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१०.	जैसे मैं इसको	सुदुः सहम्	७.	अत्यन्त असह्य
एव	६.	अतः	इमम्	३.	मैं इस
अनुबुद्धयेयम्	११.	समझ सकूँ	मन्ये	८.	मानता हूँ
वद नः	१२.	वैसे हमें बताइये	आत्मनि	६.	अपने मन में
वदताम्	१.	भगवन् आप वक्ताओं के	असत्	४.	दुर्जनों के द्वारा किये गये
वर ।	२.	शिरोमणि हैं	अतिक्रमम् ॥	५.	तिरस्कार को

श्लोकार्थ—भगवन् आप वक्ताओं के शिरोमणि हैं । मैं इस दुर्जनों के द्वारा किये गये तिरस्कार को अपने मन में अत्यन्त असह्य मानता हूँ । अतः जैसे मैं इसको समझ सकूँ वैसे हमें बताइये ॥

षष्टितमः श्लोकः

विदुषामपि विश्वात्मन् प्रकृतिर्हि बलीयसी ।
ऋते त्वद्धर्मनिरतान् शान्तांस्ते चरणालयान् ॥६०॥

पदच्छेद—

विदुषाम् अपि विश्वात्मन् प्रकृतिः हि बलीयसी ।
ऋते त्वत् धर्म निरतान् शान्तान् ते चरण आलयान् ॥

शब्दार्थ—

विदुषाम्	८.	बड़े-बड़े विद्वानों के लिये	ऋते	७.	अतिरिक्त
अपि	९.	भी तिरस्कार सहना कठिन है	त्वत्	२.	जो आपके
विश्वात्मन्	१	हे विश्वात्मन् !	धर्म निरतान्	३.	भागवत धर्म में संलग्न हैं
प्रकृतिः	११.	प्रकृति	शान्तान्	६.	उन शान्त पुरुषों के
हि	१०.	क्योंकि	ते चरण	४.	जिन्होंने आपके चरणों
बलीयसी ।	१२.	अत्यन्त बलवती है	आलयन् ॥	५.	का आश्रय ले लिया है

श्लोकार्थ—हे विश्वात्मन् ! जो आपके भागवत धर्म में संलग्न हैं । जिन्होंने आपके चरणों का आश्रय ले लिया है । उन शान्त पुरुषों के अतिरिक्त बड़े-बड़े विद्वानों के लिये भी तिरस्कार सहना कठिन है । क्योंकि प्रकृति अत्यन्त बलवती है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशः स्कन्धे द्वाविंशः अध्यायः ॥२२॥

प्रथमः श्लोकः

वादरायणिरुवाच—स एवमाशंसित उद्धवेन भागवतमुख्येन दाशार्हमुख्यः ।
सभाजयन् भृत्यवचो मुकुन्दस्तमावभाषे श्रवणीयवीर्यः ॥१॥

पदच्छेद— सः एवम् आशंसित उद्धवेन भागवत मुख्येन् दाशार्ह मुख्यः ।
समाजयन् भृत्यवचः मुकुन्दः तम् आवभाषे श्रवणीय वीर्यः ॥

शब्दार्थ—

सः	६.	उन	समाजयन्	१२.	प्रशंसा करके
एवम्	५.	इस प्रकार	भृत्यवचः	११.	उनके प्रश्न को
आशंसित	६.	प्रार्थना करने पर	मुकुन्दः	१०.	श्रीकृष्ण ने
उद्धवेन्	४.	उद्धव जी के द्वारा	तम्	१३.	उनसे
भागवत मुख्येन्	३.	भक्तों में शिरोमणि	आवभाषे	१४.	इस प्रकार कहा
दाशार्ह	७.	यदुवंश	श्रवणीय	२.	श्रवण करने योग्य है
मुख्यः ।	८.	शिरोमणि	वीर्यः ॥	१.	भगवान् की लीला कथा

श्लोकार्थ—भगवान् की लीला कथा श्रवण करने योग्य है । भक्तों में शिरोमणि उद्धव जी के द्वारा इस प्रकार प्रार्थना करने पर यदुवंश शिरोमणि उन श्रीकृष्ण ने उनके प्रश्न की प्रशंसा करके उनसे इस प्रकार कहा ॥

द्वितीयः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच— बार्हस्पत्य स वै नात्र साधुर्वै दुर्जनेरितैः ।
दुरुक्तैर्भिन्नमात्मानं यः समाधातुमीश्वरः ॥२॥

पदच्छेद— बार्हस्पत्य सः वै नः अत्र साधुः वै दुर्जन ईरितैः ।
दुरुक्तैः भिन्नम् आत्मानम् यः समाधातुम् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

बार्हस्पत्य	१.	हे बृहस्पति के शिष्य उद्धव जो !	दुरुक्तैः	८.	कटु वचनों से
सः वै न	४.	नहीं मिलते हैं	भिन्नम्	९.	विंधे हुये
अत्र	२.	इस संसार में	आत्मानम्	१०.	अपने हृदय को
साधुः वै	३.	ऐसे संत पुरुष प्रायः	यः	५.	जो
दुर्जन	६.	दुर्जनों के	समाधातुम्	११.	संभालने में
ईरितैः ।	७.	कहे हुये	ईश्वरः ॥	१२.	समर्थ हों

श्लोकार्थ—हे बृहस्पति के शिष्य उद्धव जी ! इस संसार में ऐसे संत पुरुष प्रायः नहीं मिलते हैं । जो दुर्जनों के कहे हुये कटु वचनों से विंधे हुये अपने हृदय को संभालने में समर्थ हों ॥

तृतीयः श्लोकः

न तथा तप्यते विद्धः पुमान् बाणैः सुमर्मगैः ।
यथा तुदन्ति मर्मस्था ह्यसतां परुषेषवः ॥३॥

पदच्छेद—

न तथा तप्यते विद्धः पुमान् बाणैः सुमर्मगैः ।
यथा तुदन्ति मर्मस्था हि असताम् परुष इषवः ॥

शब्दार्थ—

न	६. नहीं करता है		यथा	७. जितनी कि
तथा तप्यते	५. उतनी पीडा का अनुभव		तुदन्ति	१२. पीडित करते हैं
विद्धः	४. विंधने पर भी		मर्मस्था हि	१०. मर्मान्तक एवम् कठोर
पुमान्	१. मनुष्य का हृदय		असताम्	८. दुष्ट जनों के
बाणैः	३. बाणों से		परुष	९. कठोर वचन रूपी
सुमर्मगैः ।	२. मर्म भेदी		इषवः ॥	११. बाण उसे

श्लोकार्थ—मनुष्य का हृदय मर्म भेदी बाणों से विंधने पर भी उतनी पीड़ा का अनुभव नहीं करता है। जितनी कि दुष्ट जनों के कठोर वचनरूपी मर्मान्तक एवम् कठोर वचनरूपी वाण उसे पीडित करते हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

कथयन्ति महत्पुण्यमितिहासमिहोद्धव ।
तमहं वर्णयिष्यामि निबोध सुसमाहितः ॥४॥

पदच्छेद—

कथयन्ति महत् पुण्यम् इतिहासम् इह उद्धव ।
तम् अहम् वर्ण यिष्यामि निबोध सु समाहितः ॥

शब्दार्थ—

कथयन्ति	६. कहा करते हैं		तम्	७. वह
महत्	३. महात्मा लोग		अहम्	८. मैं तुम्हें
पुण्यम्	४. एक बड़ा पवित्र		वर्णयिष्यामि	९. सुनाऊँगा
इतिहासम्	५. प्राचीन इतिहास		निबोध	१२. उसे सुनो
इह	२. इस विषय में		सु	१०. तुम भलीभांति
उद्धव ।	१. उद्धव जी !		समाहितः ॥	११. ध्यान लगाकर

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! इस विषय में महात्मा लोग एक बड़ा पवित्र प्राचीन इतिहास कहा करते हैं। वह मैं तुम्हें सुनाऊँगा। तुम भलीभांति ध्यान लगाकर उसे सुनो ॥

पञ्चमः श्लोकः

केनचिद् भिक्षुणा गीतं परिभूतेन दुर्जनैः ।
स्मरता धृतियुक्तेन विपाकं निजकर्मणाम् ॥५॥

पदच्छेद—

केनचित् भिक्षुणा गीतम् परिभूतेन दुर्जनैः ।
स्मरता धृति युक्तेन विपाकम् निज कर्मणाम् ॥

शब्दार्थ—

केनचित्	३.	किसी	स्मरता	९.	स्मरण करके यह वृत्तान्त
भिक्षुणा	४.	भिक्षुक ने उसे	धृति युक्तेन	८.	धैर्यपूर्वक
गीतम्	१०.	सुनाया	विपाकम्	७.	फल समझकर
परिभूतेन	२.	सताये जाने पर	निज	५.	अपने
दुर्जनैः ।	१.	दुष्टों के द्वारा	कर्मणाम् ॥	६.	कर्मों का

श्लोकार्थ—दुष्टों के द्वारा सताये जाने पर किसी भिक्षुक ने उसे अपने कर्मों का फल समझकर धैर्यपूर्वक स्मरण करके यह वृत्तान्त सुनाया ॥

षष्ठः श्लोकः

अवन्तिषु द्विजः कश्चिदासीदाढ्यतमः श्रिया ।
वार्तावृत्तिः कदर्यस्तु कामी लुब्धोऽतिकोपनः ॥६॥

पदच्छेद—

अवन्तिषु द्विजः कश्चित् आसीत् आढ्यतमः श्रिया ।
वार्तावृत्तिः कदर्यः तु कामी लुब्धः अति कोपनः ॥

शब्दार्थ—

अवन्तिषु	१.	उज्जैन में	वार्ता	७.	वह खेती
द्विज	३.	ब्राह्मण	वृत्तिः	८.	व्यापार आदि करता था
कश्चित्	२.	प्राचीनकाल में एक	कदर्यः तु	९.	कृपण
आसीत्	४.	रहता था	कामी	१०.	कामी और
आढ्यतमः	५.	उसके पास बहुत	लुब्धः	११.	लोभी तथा
श्रिया ।	६.	धन था	अति कोपनः ॥	१२.	बात-बात में क्रोध करने वाला था

श्लोकार्थ—उज्जैन में प्राचीनकाल में एक ब्राह्मण रहता था, उसके पास बहुत धन था। वह खेती व्यापार आदि करता था। कृपण, कामी और लोभी तथा बात-बात में क्रोध करने वाला था ॥

सप्तमः श्लोकः

ज्ञातयोऽतिथयस्तस्य वाङ्मात्रेणापि नार्चिताः ।
शून्यावसथ आत्मापि काले कामैरनर्चितः ॥७॥

पदच्छेद—

ज्ञातयः अतिथयः तस्य वाङ्मात्रेण अपि न अर्चिताः ।
शून्य अवसथे आत्मा अपि काले कामैः अनर्चितः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञातयः	२.	अपने जाति-बन्धु और	शून्य	७.	वह धर्म-कर्म से रीते
अतिथयः	३.	अतिथियों को	अवसथे	८.	घर में रहता था और
तस्य	१.	उसने	आत्मा	९.	स्वयं को
वाङ्	४.	कभी मीठी बात	अपिकाले	१०.	भी समय पर
मात्रेण	५.	से	कामैः	११.	अपनी धन-सम्पत्ति के द्वारा
अपि न अर्चिताः ।	६.	भी प्रसन्न नहीं किया	अनर्चितः ॥	१२.	सुखी नहीं करता था

श्लोकार्थ—उसने जाति बन्धु और अतिथियों को कभी मीठी बात से भी प्रसन्न नहीं किया। वह धर्म-कर्म से रीते घर में रहता था और स्वयं को भी समय पर अपनी धन-सम्पत्ति के द्वारा सुखी नहीं करता था ॥

अष्टमः श्लोकः

दुःशीलस्य कदर्यस्य द्रुह्यन्ते पुत्रबान्धवाः ।
दारा दुहितरो भृत्या विषण्णा नाचरन् प्रियम् ॥८॥

पदच्छेद—

दुःशीलस्य कदर्यस्य द्रुह्यन्ते पुत्र बान्धवाः ।
दाराः दुहितर भृत्याः विषण्णाः न आचरन् प्रियम् ॥

शब्दार्थ—

दुःशीलस्य	२.	बुरे स्वभाव के कारण	दाराः	७.	पत्नी आदि
कदर्यस्य	१.	उसकी कृपणता और	दुहितर	४.	बेटी
द्रुह्यन्ते	९.	उसका अनिष्ट चाहते थे	भृत्याः	६.	नौकर-चाकर
पुत्र	३.	उसके बेटे	विषण्णाः	८.	दुःखी रहते थे और
बान्धवाः ।	५.	भाई-बन्धु	न आचरन्	११.	व्यवहार नहीं करता था
			प्रियम् ॥	१०.	कोई भी उसे प्रिय लगने वाला

श्लोकार्थ—उसकी कृपणता और बुरे स्वभाव के कारण उसके बेटे, बेटी, भाई-बन्धु-नौकर-चाकर पत्नी आदि दुःखी रहते थे। और उसका अनिष्ट चाहते थे। कोई भी उसे प्रिय लगने वाला व्यवहार नहीं करता था ॥

नवमः श्लोकः

तस्यैवं यक्षवित्तस्य च्युतस्योभयलोकतः ।
धर्मकामविहीनस्य चुक्रुधुः पञ्चभागिनः ॥९॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् यक्ष वित्तस्य च्युतस्य उभयलोकतः ।
धर्म काम विहीनस्य चुक्रुधुः पञ्च भागिनः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	३. ऐसे	धर्म	७. धन से धर्म और
एवम्	४. ही	काम	८. भोग दोनों ही
यक्ष	५. यक्षों के समान	विहीनस्य	९. नहीं करता था, तब
वित्तस्य	६. धन की रखवाली करता था	चुक्रुधुः	१२. उस पर क्रोधित हो उठे
च्युतस्य	२. गिर गया था	पञ्च	१०. पञ्चमहायज्ञ के
उभयलोकतः	१. वह लोक-परलोक दोनों से	भागिनः ॥	११. भागी देवता

श्लोकार्थ—वह लोक-परलोक दोनों से गिर गया था। ऐसे ही यक्षों के समान धन की रखवाली करता था। धन से धर्म और भोग दोनों ही नहीं करता था, तब पञ्चमहायज्ञ के भागी देवता उस पर क्रोधित हो उठे ॥

दशमः श्लोकः

तदवध्यानविस्रस्त पुण्यस्कन्धस्य भूरिद ।
अर्थोऽप्यगच्छन्निधनं बह्वायासपरिश्रमः ॥१०॥

पदच्छेद—

तत् अवध्यान विस्रस्त पुण्य स्कन्धस्य भूरिद ।
अर्थः अपि अगच्छत् निधनम् बहुआयास परिश्रमः ॥

शब्दार्थ—

तत्	२. देवताओं के	अर्थः	९. उसका धन
अवध्यान	३. तिरस्कार से	अपि	१०. भी
विस्रस्त	६. जाता रहा, जिससे	अगच्छत्	१२. हो गया
पुण्य	४. उसके पूर्व पुण्यों का	निधनम्	११. नष्ट-भ्रष्ट
स्कन्धस्य	५. सहारा	बहुआयास	७. अत्यन्त उद्योग तथा
भूरिद	१. उदार उद्धव !	परिश्रमः	८. परिश्रम से इकट्ठा किया गया

श्लोकार्थ—उदार उद्धव ! देवताओं के तिरस्कार से उसके पूर्व पुण्यों का सहारा जाता रहा, जिससे अत्यन्त उद्योग तथा परिश्रम से इकट्ठा किया गया उसका धन भी नष्ट-भ्रष्ट हो गया ॥

एकादशः श्लोकः

ज्ञातयो जगृहुः किञ्चित् किञ्चिद् दस्यव उद्धव ।
दैवतः कालतः किञ्चिद् ब्रह्मबन्धोर्नृपार्थिवात् ॥११॥

पदच्छेद—

ज्ञातयः जगृहुः किञ्चित्-किञ्चित् दस्यवः उद्धव ।
दैवतः कालतः किञ्चित् ब्रह्मबन्धोः नृपार्थिवात् ॥

शब्दार्थ—

ज्ञातयः	३. उसके कुटुम्बियों ने		दैवतः	७. दैवी कोप से और कुछ
जगृहुः	४. छीन लिया और		कालतः	८. समय के फेर से नष्ट हो गया
किञ्चित्	२. उस ब्राह्मण का कुछ धन तो		किञ्चित्	१०. बचा-खुचा धन
किञ्चित्	५. कुछ		ब्रह्मबन्धोः	९. उस नाम-मात्र के ब्राह्मण का
दस्यवः	६. चोर चुराकर ले गये । कुछ		नृप	११. साधारण मनुष्यों ने ले लिया तथा
उद्धव ।	१. उद्धवजी !		पार्थिवात् ॥	१२. दण्ड के रूप में शासकों ने हड़प लिया

श्लोकार्थ—उद्धवजी ! उस ब्राह्मण का कुछ धन तो उसके कुटम्बियों ने छीन लिया और कुछ चोर चुराकर ले गये । कुछ दैवी कोप से और कुछ समय के फेर से नष्ट हो गया । उस नाम-मात्र के ब्राह्मण का बचा-खुचा धन साधारण मनुष्यों ने ले लिया । तथा दण्ड के रूप में शासकों ने हड़प लिया ।

द्वादशः श्लोकः

स एवं द्रविणे नष्टे धर्मकामविवर्जितः ।
उपेक्षितश्च स्वजनैश्चिन्तामाप दुरत्ययाम् ॥१२॥

पदच्छेद—

सः एवम् द्रविणे नष्टे धर्म-काम विवर्जितः ।
उपेक्षितः च स्वजनैः चिन्ताम् आप दुरत्ययाम् ॥

शब्दार्थ—

सः	१. उसकी		उपेक्षितः	९. तिरस्कार कर दिया
एवम्	२. इस प्रकार		च	८. उसका
द्रविणे	३. सारी सम्पत्ति		स्वजनैः	७. सगे सम्बन्धियों ने
नष्टे	४. नष्ट हो गई		चिन्ताम्	११. चिन्ता ने
धर्म-काम	५. वह धर्म और भोग		आप	१२. घेर लिया
विवर्जितः	६. दोनों से अलग रहा		दुरत्ययाम् ॥	१०. तब उसे भयानक

श्लोकार्थ—उसकी इस प्रकार सारी सम्पत्ति नष्ट हो गई । वह धर्म और भोग दोनों से अलग रहा । सगे सम्बन्धियों ने उसका तिरस्कार कर दिया । तब उसे भयानक चिन्ता ने घेर लिया ।

त्रयोदशः श्लोकः

तस्यैवं ध्यायतो दीर्घं नष्टरायस्तपस्विनः ।
खिद्यतो बाष्पकण्ठस्य निर्वेदः सुमहानभूत् ॥१३॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् ध्यायतः दीर्घम् नष्ट रायः तपस्विनः ।
खिद्यतः बाष्प कण्ठस्य निर्वेदः सुमहान् अभूत् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	९.	उसके मन में	खिद्यतः	४.	उसका मन खेद से भर गया
एवम्	७.	इस प्रकार	बाष्प	५.	आँसुओं के कारण
ध्यायतः	८.	चिन्ता करते-करते ही	कण्ठस्य	६.	गला रुँध गया
दीर्घम्	२.	उसके हृदय में बड़ी	निर्वेदः	११.	वैराग्य का
नष्ट रायः	१.	धन के नाश से	सुमहान्	१०.	संसार के प्रति महान
तपस्विनः ।	३.	जलन हुई	अभूत् ॥	१२.	उदय हो गया

श्लोकार्थ धन के नाश से उसके हृदय में बड़ी जलन हुई । उसका मन खेद से भर गया । आँसुओं के कारण गला रुँध गया । इस प्रकार चिन्ता करते-करते ही उसके मन में संसार के प्रति महान वैराग्य का उदय हो गया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

स चाहेदमहो कष्टं वृथाऽऽत्मा मेऽनुतापितः ।
न धर्माय न कामाय यस्यार्थायास ईदृशः ॥१४॥

पदच्छेद—

सः च साह इदम् अहो कष्टम् वृथा आत्मा मे अनुतापितः ।
न धर्माय न कामाय यस्य अर्थाय आयास ईदृशः ॥

शब्दार्थ—

सः च	१.	ब्राह्मण मन ही मन	न धर्माय	११.	न धर्म-कर्म में लगा और
आह इदम्	२.	ऐसा कहने लगा कि	न कामाय	१२.	न सुख भोग के काम आया
अहो कष्टम्	३.	हाय ! बड़े खेद की बात है	यस्य	७.	जिस
वृथा	५.	व्यर्थ ही	अर्थाय	८.	धन के लिये
आत्मा मे	४.	मैंने अपने को इतने दिनों तक	आयास	१०.	परिश्रम किया
अनुतापितः ।	६.	सताया	ईदृशः ॥	९.	मैंने इतना

श्लोकार्थ—वह ब्राह्मण मन ही मन ऐसा कहने लगा, कि हाय ! बड़े खेद की बात है । मैंने अपने को इतने दिनों तक व्यर्थ ही सताया । जिस धन के लिये मैंने इतना परिश्रम किया । वह न धर्म-कर्म में लगा न सुख भोगने के काम आया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

प्रायेणार्थाः कदर्याणां न सुखाय कदाचन ।
इह चात्मोपतापाय मृतस्य नरकाय च ॥१५॥

पदच्छेद—

प्रायेण अर्थाः कदर्याणाम् न सुखाय कदाचन ।
इह च आत्मा उपतापाय मृतस्य नरकाय च ॥

शब्दार्थ—

प्रायेण	१.	प्रायः देखा जाता है कि	इह च	७.	इस लोक में वे
अर्थाः	३.	धन से	आत्मा	८.	स्वयं चिन्ता से
कदर्याणाम्	२.	कृपण पुरुषों को	उपतापाय	९.	जलते रहते हैं
न	६.	नहीं मिलता है	मृतस्य	११.	मरने पर
सुखाय	५.	सुख	नरकाय	१२.	नरक में जाते हैं
कदाचन ।	४.	कभी	च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—प्रायः देखा जाता है कि कृपण पुरुषों को धन से कभी सुख नहीं मिलता है । इस लोक में वे स्वयं चिन्ता से जलते रहते हैं । और मरने पर नरक में जाते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

यशो यशस्विनां शुद्धं श्लाघ्या ये गुणिनां गुणाः ।
लोभः स्वल्पोऽपि तान् हन्ति श्वित्रो रूपमिवेप्सितम् ॥१६॥

पदच्छेद—

यशः यशस्विनाम् शुद्धम् श्लाघ्या ये गुणिनाम् गुणाः ।
लोभः स्वल्पः अपि तान् हन्तिश्वित्रः रूपम् इव ईप्सितम् ॥

शब्दार्थ—

यशः	८.	यश और	लोभः स्वल्पः अपि	५.	वैसे ही तनिक सा भी लोभ
यशस्विनाम्	६.	यशस्वियों के	तान् हन्ति	१२.	उन्हें नष्ट कर देता है
शुद्धम्	७	शुद्ध	श्वित्रः	२.	थोड़ा सा भी कोढ़
श्लाघ्या	१०.	प्रशंसनीय	रूपम्	४.	स्वरूप को बिगाड़ देता है
ये गुणिनाम्	९.	गुणियों के जो	इव	१.	जैसे
गुणाः ।	११.	गुण हैं	ईप्सितम् ॥	३.	सर्वाङ्ग सुन्दर

श्लोकार्थ—जैसे थोड़ा सा भी कोढ़ सर्वाङ्ग सुन्दर स्वरूप को बिगाड़ देता है । वैसे ही तनिक सा भी लोभ यशस्वियों के शुद्ध यश और गुणियों के जो गुण हैं उन्हें नष्ट कर देता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

अर्थस्य साधने सिद्धे उत्कर्षे रक्षणे व्यये।
नाशोपभोग आयासस्त्रासश्चिन्ता भ्रमो नृणाम् ॥१७॥

पदच्छेद—

अर्थस्य साधने सिद्धे उत्कर्षे रक्षणे व्यये।
नाशः उपभोग आयासः त्रासः चिन्ता भ्रमः नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

अर्थस्य	१. धन		नाशः	७. उससे नाश और
साधने	२. कमाने में		उपभोग	८. उपभोग में
सिद्धे	३. कमाने पर उसे		आयासः	१०. निरन्तर परिश्रम
उत्कर्षे	४. बढ़ाने		त्रासःचिन्ता	११. भय-चिन्ता और
रक्षणे	५. रखने एवम्		भ्रमः	१२. भ्रम का ही सामना करना पड़ता है
व्यये।	६. खर्च करने में		नृणाम् ॥	९. मनुष्यों को

श्लोकार्थ—धन-कमाने में, कमाने पर उसे बढ़ाने, रखने एवम् खर्च करने में उसके नाश और उपभोग में मनुष्यों को निरन्तर परिश्रम, भय, चिन्ता और भ्रम का ही सामना करना पड़ता है ॥

अष्टदशः श्लोकः

स्तेयं हिंसानृतं दम्भः कामः क्रोधः स्मयो मदः।
भेदो वैरमविश्वासः संस्पर्धा व्यसनानि च ॥१८॥

पदच्छेद—

स्तेयम् हिंसा अनृतम् दम्भः कामः क्रोधः स्मयः मदः।
भेदः वैरम् अविश्वासः संस्पर्धा व्यसनानि च ॥

शब्दार्थ—

स्तेयम्	१. चोरी		भेदः	७. भेद बुद्धि
हिंसा	२. हिंसा		वैरम्	८. वैर
अनृतम्	३. झूठ बोलना		अविश्वासः	९. अविश्वास
दम्भः	४. दम्भ		संस्पर्धा	१०. स्पर्धा
कामः क्रोधः	५. काम-क्रोध		व्यसनानि	१२. लम्पटता, जुआ तथा मद्यपान
स्मयः मदः।	६. गर्व-अहंकार		च ॥	११. और

श्लोकार्थ—चोरी, हिंसा, झूठ बोलना, दम्भ, काम-क्रोध, गर्व-अहंकार, भेद बुद्धि, वैर, अविश्वास, स्पर्धा और लम्पटता, जुआ तथा मद्यपान ये अनर्थ हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

एते पञ्चदशानर्था ह्यर्थमूला मता नृणाम् ।
तस्मादनर्थमर्थाख्यं श्रेयोऽर्थी दूरतस्त्यजेत् ॥१९॥

पदच्छेद—

एते पञ्चदश अनर्था हि अर्थमूलाः मताः नृणाम् ।
तस्मात् अनर्थं आरव्यम् श्रेयः अर्थी दूरतः त्यजेत् ॥

शब्दार्थ—

एते	१. ये	तस्मात्	७. इसलिये
पञ्चदश	२. पन्द्रह	अनर्थं	११. अनर्थ को
अनर्था	३. अनर्थ	आरव्यम्	१०. अर्थनामधारी
हि अर्थमूलाः	५. धन के कारण ही	श्रेयः	८. कल्याण
मताः	६. माने गये हैं	अर्थी	९. कामी पुरुष को चाहिये कि
नृणाम् ।	४. मनुष्यों में	दूरतः त्यजेत् ॥	१२. दूर से ही छोड़ दे

श्लोकार्थ—ये पन्द्रह अनर्थ मनुष्यों में धन के कारण ही माने गये हैं। इसलिये कल्याण कामी पुरुष को चाहिये कि अर्थ नामधारी अनर्थ को दूर से ही छोड़ दें॥

विंशः श्लोकः

भिद्यन्ते भ्रातरो दाराः पितरः सुहृदस्तथा ।
एकास्निग्धाः काकिणिना सद्यः सर्वेऽरयः कृताः ॥२०॥

पदच्छेद—

भिद्यन्ते भ्रातरः दाराः पितरः सुहृदः तथा ।
एकाः स्निग्धाः काकिणिना सद्यः सर्वे अरयः कृताः ॥

शब्दार्थ—

भिद्यन्ते	१०. इतने फट जाते हैं कि	एकाः	७. बिल्कुल एक हुये रहते हैं
भ्रातरः	१. भाई-बन्धु	स्निग्धाः	६. जो स्नेह बन्धन से बंधकर
दाराः	२. स्त्री-पुत्र	काकिणिना	९. कौड़ी के कारण
पितरः	३. माता-पिता	सद्यः	११. तुरन्त
सुहृदः	५. सगे-सम्बन्धी	सर्वे	८. सब
तथा ।	४. तथा	अरयः कृताः ॥	१२. एक दूसरे के शत्रु बन जाते हैं

श्लोकार्थ—भाई-बन्धु-स्त्री-पुत्र-माता-पिता तथा सगे सम्बन्धि जो स्नेह बन्धन में बँधकर बिल्कुल एक हुये रहते हैं, सब कौड़ो के कारण इतने फट जाते हैं कि तुरन्त एक दूसरे के शत्रु बन जाते हैं॥

एकविंशः श्लोकः

अर्थेनाल्पीयसा ह्येते संरब्धा दीप्तमन्यवः ।
त्यजन्त्याशु स्पृधोघ्नन्ति सहसोत्सृज्य सौहृदम् ॥२१॥

पदच्छेद—

अर्थेन अल्पीयसा हि ऐते संरब्धा दीप्त मन्यवः ।
त्यजन्ति आशु स्पृधः घ्नन्ति सहसा उत्सृज्य सौहृदम् ॥

शब्दार्थ—

अर्थेन	३. धन के लिये भी	त्यजन्ति	८.	छोड़ देते हैं
अल्पीयसा	२. थोड़े से	आशु स्पृधः	७.	बात की बात में सौहार्द सम्बन्ध
हि ऐते	१. ये लोग	घ्नन्ति	१२.	प्राण लेने पर उतारू हो जाते हैं
संरब्धा	४. क्षुब्ध और	सहसा	९.	और एकाएक
दीप्त	६. हो जाते हैं	उत्सृज्य	११.	छोड़कर
मन्यवः ।	५. क्रुद्ध	सौहृदम् ॥	१०.	सौहार्द

श्लोकार्थ—ये लोग थोड़े से धन के लिये भी क्षुब्ध और क्रुद्ध हो जाते हैं । बात की बात में सौहार्द सम्बन्ध छोड़ देते हैं । और एकाएक सौहार्द छोड़कर प्राण लेने पर उतारू हो जाते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

लब्ध्वा जन्मामरप्रार्थ्यं मानुष्यं तद् द्विजाग्र्यताम् ।
तदनादृत्य ये स्वार्थं घ्नन्ति यान्त्यशुभां गतिम् ॥२२॥

पदच्छेद—

लब्ध्वा जन्म अमर प्रार्थ्यम् मानुष्यम् तत् द्विज आग्र्यताम् ।
तत् अनादृत्य ये स्वार्थम् घ्नन्ति यान्ति अशुभाम् गतिम् ॥

शब्दार्थ—

लब्ध्वा	६. प्राप्त करके	तत् अनादृत्य	८ उसका अनादर करते हैं
जन्म	३. जन्म को और	ये	७. जो
अमर प्रार्थ्यम्	१. देवताओं के भी प्रार्थनीय	स्वार्थम्	९. वे अपने सच्चे स्वार्थ परमार्थ;को
मानुष्यम्	२. मनुष्य	घ्नन्ति	१०. नाश करते हैं और
तत्	४. उसमें भी	यान्ति	१२. प्राप्त करते हैं
द्विजअग्र्यताम् ।	५. श्रेष्ठ ब्राह्मण शरीर को	अशुभाम् गतिम् ॥	११. अशुभगति को

श्लोकार्थ—देवताओं के भी प्रार्थनीय मनुष्य जन्म को और उसमें भी श्रेष्ठ ब्राह्मण शरीर को प्राप्त करके जो उसका अनादर करते हैं । वे अपने सच्चे स्वार्थ-परमार्थ का नाश करते हैं । और अशुभ गति को प्राप्त करते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

स्वर्गापवर्गयोर्द्वारं प्राप्य लोकमिमं पुमान् ।
द्रविणे कोऽनुषज्जेत मर्त्योऽनर्थस्य धामनि ॥२३॥

पदच्छेद—

स्वर्ग अपवर्गयोः द्वारम् प्राप्य लोकम् इमम् पुमान् ।
द्रविणे कः अनुषज्जेत मर्त्यः अनर्थस्य धामनि ॥

शब्दार्थ—

स्वर्ग	३. स्वर्ग का	द्रविणे	११. धन के चक्कर में
अपवर्गयोः	२. मोक्ष और	कः	६. कौन
द्वारम्	४. द्वार है	अनुषज्जेत	१२. फंसा रहे ?
प्राप्य	५. इसको पाकर भी	मर्त्यः	७. मरणधर्मा
लोकम् इमम्	१. यह मनुष्य शरीर	अनर्थस्य	९. अनर्थों के
पुमान् ।	८. मनुष्य	धामनि ॥	१०. धाम

श्लोकार्थ—यह मनुष्य शरीर मोक्ष और स्वर्ग का द्वार है । इसको पाकर भी कौन मरणधर्मा मनुष्य अनर्थों के धाम धन के चक्कर में फंसा रहे ?

चतुर्विंशः श्लोकः

देवर्षिपितृभूतानि ज्ञातीन् बन्धूश्च भागिनः ।
असंविभज्य चात्मानं यक्षवित्तः पतत्यधः ॥२४॥

पदच्छेद—

देवर्षि पितृ भूतानि ज्ञातीन् बन्धुन् च भागिनः ।
असंविभज्य च आत्मानम् यक्ष वित्तः पतति अधः ॥

शब्दार्थ—

देवर्षि	१. जो मनुष्य देवता-ऋषि	असंविभज्य च	७. उनका भाग नहीं देता और
पितृ	२. पितर	आत्मानम्	८. स्वयं भी भोग नहीं करता
भूतानि	३. प्राणी	यक्ष	९. वह यक्ष के समान
ज्ञातीन्	४. जाति-भाई	वित्तः	१०. धन की रखवाली करने वाला
बन्धुन् च	५. कुटुम्बी और	पतति	१२. प्राप्त होता है
भागिनः ।	६. धन के दूसरे भागीदारों को	अधः ॥	११. अवश्य ही अधोगति को

श्लोकार्थ—जो मनुष्य देवता-ऋषि, पितर, प्राणी, जाति भाई, कुटुम्बी और धन के दूसरे भागीदारों को उसका भाग नहीं देता और स्वयं भी भोग नहीं करता, वह यक्ष के समान धन की रखवाली करने वाला अवश्य ही अधोगति को प्राप्त होता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

व्यर्थयार्थेहया वित्तं प्रमत्तस्य वयो बलम् ।
कुशला येन सिध्यन्ति जरठः किं नु साधये ॥२५॥

पदच्छेद— व्यर्थया अर्थ ईहया वित्तम् प्रमत्तस्य वयः बलम् ।
कुशलाः येन सिध्यन्ति जरठः किम् नु साधये ॥

शब्दार्थ—

व्यर्थया	८. व्यर्थ		कुशलाः	४.	विवेकी लोग
अर्थ	७. उन्हीं को मैंने धन इकट्ठा करने की		येन	५.	जिन साधनों से
ईहया	९. चेष्टा में खो दिया		सिध्यन्ति	६.	मोक्ष तक प्राप्त कर लेते हैं
वित्तम्	२. धन और		जरठः	१०.	अब बुढ़ापे में मैं
प्रमत्तस्य वयः	१. मैंने प्रमाद में अपनी आयु		किम् नु	११.	कौन सा
बलम् ।	३. बल पौरुष खो दिया		साधये ॥	१२.	साधन करूँगा

श्लोकार्थ—मैंने प्रमाद में अपनी आयु, धन और बल पौरुष खो दिया । विवेकी लोग जिन साधनों से मोक्ष तक प्राप्त कर लेते हैं । उन्हीं को मैंने धन इकट्ठा करने की व्यर्थ चेष्टा में खो दिया । अब बुढ़ापे में मैं कौन सा साधन करूँगा ॥

षड्विंशः श्लोकः

कस्मात् संक्लिश्यते विद्वान् व्यर्थयार्थेहयासकृत् ।
कस्यचिन्मायया नूनं लोकोऽयं सुविमोहितः ॥२६॥

पदच्छेद— कस्मात् संक्लिश्यते विद्वान् व्यर्थया अर्थ ईहया सकृत् ।
कस्य चिन्मायया नूनम् लोकः अयम् सुविमोहितः ॥

शब्दार्थ—

कस्मात्	५. क्यों	कस्यचित्	१०.	किसी की
संक्लिश्यते	६. दुःखी रहते हैं	मायया	११.	माया से
विद्वान्	१. बड़े-बड़े विद्वान भी	नूनम्	७.	हो न हो, अवश्य ही
व्यर्थया	२. व्यर्थ	लोकः	९.	संसार
अर्थ ईहया	३. धन की तृष्णा से	अयम्	८.	यह
सकृत् ।	४. निरन्तर	सुविमोहितः ॥	१२.	अत्यन्त मोहित हो रहा है

श्लोकार्थ—बड़े-बड़े विद्वान् भी व्यर्थ धन की तृष्णा से निरन्तर क्यों दुःखी रहते हैं हो न हो अवश्य हो यह संसार किसी की माया से अत्यन्त मोहित हो रहा है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

किं धनैर्धनदैर्वा किं कामैर्वा कामदैरुत।
मृत्युना ग्रस्यमानस्य कर्मभिर्वोत जन्मदैः ॥२७॥

पदच्छेद—

किम् धनैः धनदैः वा किम् कामैः वा कामदैः उत।
मृत्युना ग्रस्यमानस्य कर्मभि वा उत जन्मदैः ॥

शब्दार्थ—

किम्	४. क्या लाभ ?	कामदैः उत।	८. और उनको पूर्ण करने वालों से
धनैः	३. धन से	मृत्युना	१. काल के
धनदैः	५. धन देने वालों देवों से	ग्रस्यमानस्य	२. विकराल गाल में पड़े हुये मनुष्य को
वा	६. क्या प्रयोजन ?	कर्मभिः	१२. सकाम कर्मों से क्या लाभ ?
किम्	९. क्या लेना-देना ?	वा उत	१०. अथवा
कामैः वा	७. भोग वासनाओं	जन्मदैः ॥	११. जन्म-मृत्यु के चक्कर में डालने वाले

श्लोकार्थ—काल के विकराल गाल में पड़े हुये मनुष्य को धन से क्या लाभ ? धन देने वाले देवों से क्या प्रयोजन ? भोग वासनाओं और उनको पूर्ण करने वालों से क्या लेना-देना ? अथवा जन्म-मृत्यु के चक्कर में डालने वाले सकाम कर्मों से क्या लाभ ?

अष्टविंशः श्लोकः

नूनं मे भगवांस्तुष्टः सर्वदेवमयो हरिः।
येन नीतो दशामेतां निर्वेदश्चात्मनः प्लवः ॥२८॥

पदच्छेद—

नूनम् मे भगवान् तुष्टः सर्व देवमयः हरिः।
येन नीतः दशाम् एताम् निर्वेदः च आत्मनः प्लवः ॥

शब्दार्थ—

नूनम्	१. इसमें सन्देह नहीं कि	येन	७. जिन्होंने
मे	५. मुझ पर	नीतः	९. पहुँचा दिया है क्योंकि
भगवान्	३. भगवान्	दशाम एताम्	८. मुझे इस दशा में
तुष्टः	६. प्रसन्न हैं	निर्वेदः	११. वैराग्य
सर्व देवमयः	२. सर्व देव स्वरूप	च आत्मनः	१०. आत्मोद्धार के लिये
हरिः।	४. श्री हरि	प्लवः ॥	१२. नौका के समान है

श्लोकार्थ—इसमें सन्देह नहीं कि सर्व देव स्वरूप भगवान् श्री हरि मुझ पर प्रसन्न हैं। जिन्होंने मुझे इस दशा में पहुँचा दिया है, क्योंकि आत्मोद्धार के लिये वैराग्य नौका के समान है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

सोऽहं कालावशेषेण शोषयिष्येऽङ्गमात्मनः ।
अप्रमत्तोऽखिलस्वार्थे यदि स्यात् सिद्ध आत्मनि ॥२९॥

पदच्छेद—

सः अहम् काल अवशेषेण शोषयिष्ये अङ्गम् आत्मनः ।
अप्रमत्तः अखिलस्वार्थे यदि स्यात् सिद्धः आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

सः अहम्	१.	ऐसा मैं	अप्रमत्तः	९.	सावधान रह कर
काल	२.	समय	अखिल	७.	अपने सम्पूर्ण
अवशेषेण	३.	रहते	स्वार्थे	८.	स्वार्थ-परमार्थ के बारे में
शोषयिष्ये	१२.	तपस्या के द्वारा सुखा डालूंगा	यदि स्यात्	६.	यदि मेरी आयु शेष रही तो
अङ्गम्	११.	शरीर को	सिद्ध	५.	लाभ में सन्तुष्ट रह कर
आत्मनः ।	१०.	अपने	आत्मनि ॥	४.	आत्म

श्लोकार्थ—ऐसा मैं समय रहते आत्मलाभ में सन्तुष्ट रह कर यदि मेरी आयु शेष रही तो अपने सम्पूर्ण स्वार्थ-परमार्थ के बारे में सावधान रह कर अपने शरीर को तपस्या के द्वारा सुखा डालूंगा ॥

त्रिंशः श्लोकः

तत्र मामनुमोदेरन् देवास्त्रिभुवनेश्वराः ।
मुहूर्तेन ब्रह्मलोकं खट्वाङ्गः समसाधयत् ॥३०॥

पदच्छेद—

तत्र माम् अनुमोदेरन् देवाः त्रिभुवन ईश्वराः ।
मुहूर्तेन ब्रह्मलोकम् खटवाङ्गः समसाधयत् ॥

शब्दार्थ—

तत्र	५.	इस सङ्कल्प का	मुहूर्तेन	८.	दो घड़ी में ही
माम्	४.	मेरे	ब्रह्म	९.	भगवत्
अनुमोदेरन्	६.	अनुमोदन करें	लोकम्	१०.	धाम की
देवाः	३.	देवगण	खटवाङ्गः	७.	क्योंकि राजा खटवाङ्ग ने तो
त्रिभुवन	१.	तीनों लोकों के	समसाधयत् ॥	११.	प्राप्ति कर ली थी
ईश्वराः ।	२.	स्वामी			

श्लोकार्थ—तीनों लोकों के स्वामी देवगण मेरे इस सङ्कल्प का अनुमोदन करें । क्योंकि राजा खटवाङ्ग ने तो दो घड़ी में ही भगवत् धाम की प्राप्ति कर ली थी ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—इत्यभिप्रेत्य मनसा ह्यावन्त्यो द्विजसत्तमः ।
उन्मुच्य हृदयग्रन्थीन् शान्तो भिक्षुरभून्मुनिः ॥३१॥

पदच्छेद—

इति अभिप्रेत्य मनसा हि आवन्त्यो द्विजसत्तमः ।
उन्मुच्य हृदयग्रन्थीन् शान्तः भिक्षुः अभूत् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

इति	५.	इस प्रकार	उन्मुच्य	९.	खोल दी और
अभिप्रेत्य	६.	निश्चय करके	हृदय	७.	हृदय की
मनसा	४.	मन ही मन	ग्रन्थीन्	८.	गाँठ
हि आवन्त्यो	१.	उज्जैन निवासी	शान्तः	१०.	शान्त होकर
द्विज	३.	ब्राह्मण ने	भिक्षुः अभूत्	१२.	सन्यासी हो गया
सत्तमः ।	२.	श्रेष्ठ	मुनिः ॥	११.	मौनी

श्लोकार्थ—उज्जैन निवासी श्रेष्ठ ब्राह्मण ने मन ही मन इस प्रकार निश्चय करके हृदय की गाँठ खोल दी और शान्त होकर मौनी सन्यासी हो गया ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

स चचार महीमेतां संयतात्मेन्द्रियानिलः ।
भिक्षार्थं नगरग्रामानसङ्गोऽलक्षितोऽविशत् ॥३२॥

पदच्छेद—

स चचार महीम् एताम् संयत आत्म इन्द्रिय अनिलः ।
भिक्षा अर्थम् नगर ग्रामान् असङ्गः अलक्षितः अविशत् ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	भिक्षा	८.	भिक्षा के
चचार	७.	स्वच्छन्द रूप से विचरने लगा	अर्थम्	९.	लिये
महीम् एताम्	६.	इस पृथ्वी पर	नगर ग्रामान्	१०.	नगर गाँवों में इस प्रकार
संयत	५.	वश में करके	असङ्गः	२.	आसक्ति रहित होकर
आत्मइन्द्रियः	३.	मन इन्द्रियों और	अलक्षितः	१२.	कोई उसे पहचान न सके
अनिलः ।	४.	प्राणों को	अविशत् ॥	११.	जाता था कि

श्लोकार्थ—वह आसक्ति रहित होकर मन इन्द्रियों और प्राणों को वश में करके इस पृथ्वी पर स्वच्छन्द रूप से विचरने लगा । भिक्षा के लिये नगर गाँवों में इस प्रकार जाता था कि कोई उसे पहचान न सके ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तं वै प्रवयसं भिक्षुमवधूतमसज्जनाः ।
दृष्ट्वा पर्यभवन् भद्र बह्वीभिः परिभूतिभिः ॥३३॥

पदच्छेद—

तम् वै प्रवयसम् भिक्षुम् अवधूतम् असज्जनाः ।
दृष्ट्वा पर्यभवन् भद्र बह्वीभिः परिभूतिभिः ॥

शब्दार्थ—

तम् वै	६.	उसे	दृष्ट्वा	७.	देखकर
प्रवयसम्	४.	बहुत बूढा हो गया था	पर्यभवन्	१०.	तंग करते थे
भिक्षुम्	२.	वह भिक्षुक	भद्र	१.	उद्धव जी !
अवधूतम्	३.	अवधूत	बह्वीभिः	८.	अनेक प्रकार की
असज्जनाः ।	५.	दुष्ट लोग	परिभूतिभिः ॥	९.	अपमान जनक बातों से उसे

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! वह भिक्षुक अवधूत बहुत बूढा हो गया था । दुष्ट लोग उसे देखकर अनेक प्रकार की अपमान जनक बातों से उसे तंग करते थे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

केचित्त्रिवेणुं जगृहुरेके पात्रं कमण्डलुम् ।
पीठं चैकेऽक्षसूत्रं च कन्थां चीराणि केचन ॥३४॥

पदच्छेद—

केचित् त्रिवेणुम् जगृहुः एके पात्रम् कमण्डलुम् ।
पीठम् च एके अक्षसूत्रम् च कन्थाम् चीराणि केचन ॥

शब्दार्थ—

केचित्	१.	कोई उसका	पीठम् च	८.	आसन
त्रिवेणुम्	२.	दण्ड	एके	७.	कोई
जगृहुः	३.	छीन लेता	अक्षसूत्रम्	९.	रुद्राक्ष माला
एके	४.	कोई	च कन्थाम्	११.	कन्था तथा
पात्रम्	५.	भिक्षापात्र और	चीराणि	१२.	वस्त्र छीन लेता
कमण्डलुम् ।	६.	कमण्डलु छीन लेता	केचन ॥	१०	कोई

श्लोकार्थ—कोई उसका दण्ड छीन लेता, कोई भिक्षापात्र और कमण्डलु छीन लेता, कोई आसन, रुद्राक्ष माला, कोई कन्था तथा वस्त्र छीन लेता था ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

प्रदाय च पुनस्तानि दर्शितान्याददुर्मुनेः ।
अन्नं च भैक्ष्यसम्पन्नं भुञ्जानस्य सरित्तटे ।।३५।।

पदच्छेद—

प्रदाय च पुनः तानि दर्शितानि आददुः मुने ।
अन्नम् च भैक्ष्य सम्पन्नम् भुञ्जानस्य सरित् तटे ।।

शब्दार्थ—

प्रदाय च	३. देकर और	अन्नम्	९. अन्न को लेकर जब वे
पुनः	५. पुनः	च भैक्ष्य	७. और भिक्षा से
तानि	२ वे वस्तुयें	सम्पन्नम्	८. प्राप्त
दर्शितानि	४. दिखाकर	भुञ्जानस्य	१२. भोजन करने बैठते थे
आददुः	६. छीन लेते थे	सरित्	१०. नदी के
मुनेः ।	१. उस सन्यासी को	तटे ।।	११. तट पर

श्लोकार्थ—उस सन्यासी को वे वस्तुयें देकर और दिखा कर पुनः छीन लेते थे। और भिक्षा से प्राप्त अन्न को लेकर जब वे नदी के तट पर भोजन करने बैठते थे ।।

षट्त्रिंशः श्लोकः

मूत्रयन्ति च पापिष्ठाः ष्ठीवन्त्यस्य च मूर्धनि ।
यतवाचं वाचयन्ति ताडयन्ति न वक्ति चेत् ।।३६।।

पदच्छेद—

मूत्रयन्ति च पापिष्ठाः ष्ठीवन्ति अस्य च मूर्धनि ।
यत् वाचम् वाचयन्ति ताडयन्ति न वक्ति चेत् ।।

शब्दार्थ—

मूत्रयन्ति	४. मूत देते, कभी	यत् वाचम्	६. वाणी का संयम करने वाले उसे
च पापिष्ठाः	१. पापी लोग	वाचयन्ति	७ बोलने के लिये विवश करते
ष्ठीवन्ति	५. थूक देते	ताडयन्ति	१०. उसे मारते थे
अस्य	२. कभी उसके	न वक्ति	९. वह नहीं बोलता तो
च मूर्धनि ।	३. सिर पर	चेत् ।।	८. और यदि

श्लोकार्थ—पापी लोग कभी उसके सिर पर मूत देते, कभी थूक देते। वाणी का संयम करने वाले उसे बोलने के लिये विवश करते, और यदि वह नहीं बोलता तो उसे मारते थे ।।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तर्जयन्त्यपरे वाग्भिः स्तेनोऽयमिति वादिनः ।
बध्नन्ति रज्ज्वा तं केचिद् बध्यतां बध्यतामिति ॥३७॥

पदच्छेद—

तर्जयन्ति अपरे वाग्भिः स्तेन अयम् इति वादिनः ।
बध्नन्ति रज्ज्वातम् तम् केचित् बध्यताम् बध्यताम् इति ॥

शब्दार्थ—

तर्जयन्ति	६.	पीडित करते हैं	बध्नन्ति	१२.	बाँधने लगते हैं
अपरे	१.	कोई अन्य	रज्ज्वा तम्	११.	रस्सी से
वाग्भिः	५.	वाणी के द्वारा	केचित्	७.	और कोई
स्तेन	३.	चोर है	बध्यताम्	८.	इसे बांध लो
अयम्	२.	यह	बध्यताम्	९.	इसे बांध लो
इति वादिनः ।	४.	ऐसा कह कर	इति ॥	१०.	ऐसा कह कर

श्लोकार्थ—कोई अन्य यह चोर है, ऐसा कह कर वाणी के द्वारा पीडित करते हैं । और कोई इसे बांधलो, इसे बाँधलो, ऐसा कह कर रस्सी से बाँधने लगते हैं ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

क्षिपन्त्येकेऽवजानन्त एष धर्मध्वजः शठः ।
क्षीणवित्त इमां वृत्तिमग्रहीत् स्वजनोज्झितः ॥३८॥

पदच्छेद—

क्षिपन्ति एके अवजानन्तः एषः धर्मध्वजः शठः ।
क्षीणवित्त इमाम् वृत्तिम् अग्रहीत् स्वजन उज्झितः ॥

शब्दार्थ—

क्षिपन्ति एके	१.	कोई उसका तिरस्कार करके	क्षीणवित्तः	७.	धन सम्पत्ति के नष्ट होने पर
अवजानन्तः	२.	ताना कसते कि	इमाम्	१०.	इसने इस
एषः	३.	यह	वृत्तिम्	११.	भिक्षा वृत्ति को
धर्म	५.	धर्म का	अग्रहीत्	१२.	स्वीकार कर लिया है
ध्वजः	६.	ढोंग रच रहा है	स्वजन्	८.	स्वजनों के द्वारा
शठः ।	४.	कृपण	उज्झितः ॥	९.	तिरस्कृत होने पर

श्लोकार्थ—कोई उसका तिरस्कार करके ताना कसते कि यह कृपण धर्म का ढोंग रच रहा है । धन-सम्पत्ति के नष्ट होने पर स्वजनों के द्वारा तिरस्कृत होने पर इसने इस भिक्षावृत्ति को स्वीकार कर लिया है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

अहो एष महासारो धृतिमान् गिरिराडिव ।
मौनेन साधयत्यर्थं बकवद् दृढनिश्चयः ॥३९॥

पदच्छेद—

अहो एषः महासारः धृत्तिमान् गिरि राडिव ।
मौनेन साधयति अर्थम् बकवत् दृढनिश्चयः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१. ओहो !	मौनेन	६. यह मौन रह कर
एषः	२. यह	साधयति	८. पूर्ण करता है और
महासारः	४. बड़े भारी	अर्थम्	७. अपना प्रयोजन
धृतिमान्	३. धैर्य में	बकवत्	९. बगुले के समान
गिरिराडिव ।	५. पर्वत के समान है	दृढनिश्चयः ॥	१०. दृढ निश्चयी है

श्लोकार्थ—ओहो यह धैर्य में बड़े भारी पर्वत के समान है । यह मौन रह कर अपना प्रयोजन पूर्ण करता है और बगुले के समान दृढ निश्चयी है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

इत्येके विहसन्त्येनमेके दुर्वातयन्ति च ।
तं बबन्धुर्निरुरुधुर्यथा क्रीडनकं द्विजम् ॥४०॥

पदच्छेद—

इति एके विहसन्ति एनम् एके दुर्वातयन्ति च ।
तम् बबन्धुः निरुरुधुः यथा क्रीडनकम् द्विजम् ॥

शब्दार्थ—

इति एके	१. इस प्रकार कोई	तम्	७. उस
विहसन्ति	३. हंसी उड़ाता	बबन्धुः	११. लोग बांध देते और
एनम्	२. उसकी	निरुरुधुः	१२. घरो में बन्द कर देते थे
एके	५. कोई उस पर	यथा	१०. समान
दुर्वातयन्ति	६. अधो वायु छोड़ता	क्रीडनकम्	९. पालतू पक्षियों के
च ।	४. और	द्विजम् ॥	८. ब्राह्मण को

श्लोकार्थ—इस प्रकार कोई हंसी उड़ता और कोई उस पर अधो वायु छोड़ता था । उस ब्राह्मण को पालतू पक्षियों के समान लोग बांध देते और घरों में बन्द कर देते थे ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

एवं स भौतिकं दुःखं दैविकं दैहिकं च यत् ।
भोक्तव्यमात्मनो दिष्टं प्राप्तं प्राप्तम् बुध्यत ॥४१॥

पदच्छेद—

एवम् सः भौतिकम् दुःखम् दैविकम् दैहिकम् च यत् ।
भोक्तव्यम् आत्मनः दिष्टम् प्राप्तम् प्राप्तम् अबुध्यत ॥

शब्दार्थ—

एवम् सः	१.	इस प्रकार वह	भोक्तव्यम्	१२.	भोगना चाहिये
भौतिकम्	९.	भौतिक	आत्मनः	३.	अपने
दुःखम्	१०.	दुःख को	दिष्टम्	४.	पूर्व कर्मों से
दैविकम्	७.	दैविक	प्राप्तम्	५.	प्राप्त
दैहिकम्	६.	दैहिक	प्राप्तम्	११.	प्राप्त करके
च यत् ।	८.	और	अबुध्यत ॥	२.	ऐसा समझता था कि

श्लोकार्थ—इस प्रकार वह ऐसा समझता था कि अपने पूर्व कर्मों से प्राप्त दैहिक दैविक और भौतिक दुःख को प्राप्त करके भोगना चाहिये ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

परिभूत इमां गाथामगायत नराधमैः ।
पातयद्भिः स्वधर्मस्थो धृतिमास्थाय सात्त्विकीम् ॥४२॥

पदच्छेद—

परिभूत इमाम् गाथाम् अगायत नराधमैः ।
पातयद्भिः स्वधर्मस्थो धृतिम् आस्थाय सात्त्विकीम् ॥

शब्दार्थ—

परिभूत	२.	तिरस्कार करके	पातयद्भिः	३.	उसे धर्म से गिराने की चेष्टा करते
इमाम्	८.	तथा इन	स्वधर्मस्थो	७.	अपने धर्म में स्थिर रहता
गाथाम्	९.	विचारों को	धृतिम्	५.	धैर्य का
अगायत	१०.	प्रकट करता था	आस्थाय	६.	आश्रय लेकर
नराधमैः ।	१.	नीच मनुष्य	सात्त्विकीम् ॥	४.	और वह सात्त्विक

श्लोकार्थ—नीच मनुष्य तिरस्कार करके उसे धर्म से गिराने की चेष्टा करते । और वह सात्त्विक धैर्य का आश्रय लेकर अपने धर्म में स्थिर रहता । तथा इन विचारों को प्रकट करता था ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

द्विज उवाच—नायं जनो मे सुखदुःखहेतुर्न देवताऽऽत्मा ग्रहकर्मकालाः ।
मनः परं कारणमामनन्ति संसारचक्रं परिवर्तयेद् यत् ॥४३॥

पदच्छेद— न अयम् जनः मे सुख दुःख हेतुः न देवता आत्मा ग्रह कर्म कालाः ।
मनः परम् कारणम् आमनन्ति संसार चक्रम् परिवर्तयेद् यत् ॥

शब्दार्थ—

न अयम् जनः	३. न ये मनुष्य हैं	मनः परम्	८. महात्मा जन मन को ही इनका परम
मे सुख	१. मेरे सुख और	कारणम्	९. कारण
दुःख हेतुः	२. दुःख का कारण	आमनन्ति	१०. मानते हैं
न देवता	४. न देवता	संसार	१२. इस संसार
आत्मा ग्रह	५. न शरीर, ग्रह	चक्रम्	१३. चक्र को
कर्म	६. कर्म एवम्	परिवर्तयेद	१४. चला रहा है
कालाः ।	७. काल ही है	यत् ॥	११. क्योंकि मन ही

श्लोकार्थ—मेरे सुख और दुःख का कारण न ये मनुष्य हैं, न देवता, न शरीर, ग्रह कर्म एवम् काल ही है। महात्मा जन मन को ही इनका परम कारण मानते हैं। क्योंकि मन ही इस संसार चक्र को चला रहा है ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

मनो गुणान् वै सृजते बलीयस्ततश्च कर्माणि विलक्षणानि ।
शुक्लानि कृष्णान्यथ लोहितानि तेभ्यः सवर्णाः सृतयो भवन्ति ॥४४॥

पदच्छेद— मनः गुणान् वै सृजते बलीयः ततः च कर्माणि विलक्षणानि ।
शुक्लानि कृष्णानि अथ लोहितानि तेभ्यः सवर्णाः सृतयः भवन्ति ॥

शब्दार्थ—

मनः	१. सचमुच मन	शुक्लानि	६. सात्त्विक
गुणान्	३. वही गुणों की	कृष्णानि	८. तामस गुणों से
वै सृजते	४. सृष्टि करता है	अथ लोहितानि	७. राजस और
बलीयः	२. बड़ा बलवान है	तेभ्यः	११. और उन्हीं कर्मों के
ततः च	५. उन्हीं	सवर्णाः	१२. अनुसार
कर्माणि	१०. कर्म होते हैं	सृतयः	१३. जीव की विविधगतियाँ
विलक्षणानि ।	९. अनेकों प्रकार के	भवन्ति ॥	१४. होती हैं

श्लोकार्थ—सचमुच मन बड़ा बलवान है। वही गुणों की सृष्टि करता है। उन्हीं सात्त्विक, राजस और तामस गुणों से अनेकों प्रकार के कर्म होते हैं। और उन्हीं कर्मों के अनुसार जीव की विविधगतियाँ होती हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

अनीह आत्मा मनसा समीहता हिरण्मयो मत्सख उद्विचष्टे ।
मनः स्वलिङ्गं परिगृह्य कामान् जुषन् निबद्धो गुणसङ्गतोऽसौ ॥४५॥

पदच्छेद— अनीह आत्मा मनसा समीहता हिरण्मयः मत् सखः उद्विचष्टे ।
मनः स्वलिङ्गम् परिगृह्य कामान् जुषन् निबद्धः गुण सङ्गतः असौ ॥

शब्दार्थ—

अनीह	४.	निष्क्रिय ही है	मनः स्वलिङ्गम्	६.	भोगों के हेतुभूत मन को
आत्मा	३.	आत्मा	परिगृह्य	१०.	स्वीकार करके
मनसा	१.	मन ही	कामान्	१२.	भोगों को
समीहता	२.	समस्त चेष्टायें करता है	जुषन्	१३.	भोगता हुआ
हिरण्मयः	५.	वह ज्ञानशक्ति प्रधान है	निबद्धः	१४.	उससे बंध जाता है
मत्सखः	६	जीव का सनातन सखा है	गुणसङ्गतः	११.	कर्मों के साथ आसक्ति होने पर
उद्विचष्टे ।	७	अपने अलुप्त ज्ञान से सब कुछ देखता रहता है	असौ ॥	८.	वह

श्लोकार्थ—मन ही समस्त चेष्टायें करते है । आत्मा निष्क्रिय ही है । वह ज्ञान शक्ति प्रधान है । जीव का सनातन सखा है। अपने अलुप्त ज्ञान से सब-कुछ देखता रहता है । वह भोगों के हेतु भूत मन को स्वीकार करके कर्मों के साथ आसक्ति होने पर भोगों को भोगता हुआ उससे बँध जाता है ।।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

दानं स्वधर्मो नियमो यमश्च श्रुतं च कर्माणि च सद्व्रतानि ।
सर्वे मनोनिग्रहलक्षणान्ताः परो हि योगो मनसः समाधिः ॥४६॥

पदच्छेद— दानम् स्वधर्मः नियमः यमः च श्रुतम् च कर्माणि च सद् व्रतानि ।
सर्वे मनोनिग्रहलक्षणान्ताः परः हि योगः मनसः समाधिः ॥

शब्दार्थ—

दानम्	१.	दान	सर्वे	८.	इन सबका
स्वधर्मः	२.	अपने धर्म का पालन	मनोनिग्रह	१०.	मन की एकाग्रता ही है
नियमः	३.	नियम	लक्षणान्ताः	६.	अन्तिम् फल
यमः च	४.	यम	परः हि	१३.	परम
श्रुतम् च	५.	वेदाध्ययन	योगः	१४.	योग है
कर्माणि च	६.	सत्कर्म और	मनसः	११.	मन का
सद्व्रतानि ।	७.	ब्रह्मचर्यादि श्रेष्ठ व्रत	समाधिः ॥	१२.	समाहित हो जाना ही

श्लोकार्थ—दान, अपने धर्म का पालन, नियम, यम, वेदाध्ययन, सत्कर्म और ब्रह्मचर्यादि श्रेष्ठ व्रत इन सबका अन्तिम फल मन की एकाग्रता ही है । मन का समाहित हो जाना ही परम योग है ।।

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

समाहितं यस्य मनः प्रशान्तं दानादिभिः किं वद तस्य कृत्यम् ।
असंयतं यस्य मनो विनश्यद् दानादिभिश्चेदपरं किमेभिः ।४७॥

पदच्छेद—

समाहितम् यस्य मनः प्रशान्तम् दान आदिभिः किम् वत् तस्य कृत्यम् ।
असंयतम् यस्य मनः विनश्यत् दान आदिभिः चेत् अपरम् किमेभिः ॥

शब्दार्थ—

समाहितम्	३.	समाहित है	असंयतम्	११.	चञ्चल है
यस्य मनः	१.	जिसका मन	यस्य मनः	१०.	जिनका मन
प्रशान्तम्	२.	शान्त और	विनश्यत्	१४.	कोई लाभ नहीं हुआ
दान आदिभिः	५.	दान आदि सत्कर्म	दान आदिभिः	१२.	उसे दान आदि
किम्	७.	क्या आवश्यकता है	चेत्	९.	यदि
वत् तस्य	४.	भला बताओ उसे	अपरम्	८.	और दूसरे
कृत्यम् ।	६.	करने की	किमेभिः ॥	१३.	शुभ कर्मों से

श्लोकार्थ—जिसका मन शान्त और समाहित है । भला बताओ उसे दान आदि सत्कर्म करने की क्या आवश्यकता है । और दूसरे यदि जिनका मन चञ्चल है उसे दान आदि शुभ कर्मों से कोई लाभ नहीं है ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

मनोवशेऽन्ये ह्यभवन् स्म देवा मनश्च नान्यस्य वशं समेति ।
भीष्मो हि देवः सहसः सहीयान् युञ्ज्याद् वशे तं स हि देवदेवः ॥४८॥

पदच्छेद—

मनः वशे अन्ये हि अभवन् स्म देवाः मनः च न अन्यस्य वशम् समेति ।
भीष्मः हि देवः सहसः सहीयान् युञ्ज्यात् वशे तम् सः हि देवदेवः ॥

शब्दार्थ—

मनः वशे	१.	मन के वश में होने पर	भीष्मः हि	१०.	अत्यन्त भयंकर
अन्ये हि	२.	अन्य	देवः	११.	देव है
अभवन् स्म	४.	वश में हो जाती हैं	सहसः	८.	यह मन बलवान से
देवाः	३.	सभी इन्द्रियाँ	सहीयान्	९.	भी बलवान
मनः च न	५.	और मन	युञ्ज्यात् वशेतम्	१२.	जो इसे वश में कर लेता है
अन्यस्य	६.	किसी अन्य के	सः हि	१३.	वही
वशम् समेति ।	७.	वश में नहीं होता	देवदेवः ॥	१४.	इन्द्रियों का विजेता है

श्लोकार्थ— मन के वश में होने पर अन्य सभी इन्द्रियाँ वश में हो जाती हैं । और मन किसी अन्य के वश में नहीं होता । यह मन बलवान् से भी बलवान्, अत्यन्त भयंकर देव है । जो इसे वश में कर लेता है वही इन्द्रियों का विजेता है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

तं दुर्जयं शत्रुमसह्यवेगमरुन्तुदं तन्न विजित्य केचित्।
कुर्वन्त्यसद्विग्रहमत्र मर्त्यैर्मित्राण्युदासीनरिपून् विमूढाः ॥४९॥

पदच्छेद— तम् दुर्जयम् शत्रुम् असह्यवेगम अरुन्तुदम् तत् न विजित्य केचित्।
कुर्वन्ति असत् विग्रहम् अत्र मर्त्यैः मित्राणि उदासीन रिपून् विमूढाः ॥

शब्दार्थ—

तम्	८.	ऐसे	कुर्वन्ति	१४.	करते हैं
दुर्जयम्	१.	इसे जीतना कठिन है	असत् विग्रहम्	१३.	झूठ-मूठ लड़ाई झगड़ा
शत्रुम्	२.	यह बड़ा शत्रु है	अत्र मर्त्यैः	७.	मरणधर्मालोग इस लोक में
असह्यवेगम्	३.	इसका आक्रमण असह्य है	मित्राणि	११.	मित्र और
अरुन्तुदम्	४.	यह मर्म स्थानों को वेधता है	उदासीन	१२.	उदासीन समझकर
तत् न विजित्य	९.	मन को न जीतकर लोगों को ही	रिपून्	१०.	शत्रु
केचित्।	५.	कुछ	विमूढाः ॥	६.	मूर्ख

श्लोकार्थ—इसे जीतना कठिन है। यह बड़ा शत्रु है। इसका आक्रमण असह्य है। यह मर्म स्थानों को बेधता है। कुछ मूर्ख मरणधर्मा लोग इस लोक में ऐसे मन को न जीतकर लोगों को ही शत्रु-मित्र और उदासीन समझकर झूठ-मूठ लड़ाई-झगड़ा करते हैं।

पञ्चाशः श्लोकः

देहं मनोमात्रमिमं गृहीत्वा ममाहमित्यन्धधिया मनुष्याः।
एषोऽहमन्योऽयमिति भ्रमेण दुरन्तपारे तमसि भ्रमन्ति ॥५०॥

पदच्छेद— देहम् मनोमात्रम् इमम् गृहीत्वा मम अहम् इति अन्धधियाः मनुष्याः।
एषः अहम् अन्यो अयम् इति भ्रमेण दुरन्त पारे तमसि भ्रमन्ति ॥

शब्दार्थ—

देहम्	५.	शरीर को	एषः अहम्	११.	यह मैं हूँ और
मनोमात्रम्	४.	मनः कल्पित	अन्यो अयम्	१२.	यह दूसरा है
इमम्	३.	वे इस	इति	८.	फिर इस
गृहीत्वा	७.	मान बैठते हैं	भ्रमेण	९.	भ्रम के
मम अहम् इति	६.	मैं और मेरा ऐसा	दुरन्त पारे	१०.	फन्दे में फंस जाते हैं कि
अन्धधियाः	२.	बुद्धि अन्धी हो रही है	तमसि	१३.	इसी अज्ञानान्धकार में
मनुष्याः।	१.	साधारण मनुष्यों की	भ्रमन्ति ॥	१४.	भटकते रहते हैं

श्लोकार्थ—साधारण मनुष्य की बुद्धि अन्धी हो रही है। वे इस मनः कल्पित शरीर को मैं और मेरा ऐसा मान बैठते हैं। फिर इस भ्रम के फन्दे में फँस जाते हैं कि यह मैं हूँ और यह दूसरा है। इसी अज्ञानान्धकार में भटकते रहते हैं॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

जनस्तु हेतुः सुखदुःखयोश्चेत् किमात्मनश्चात्र ह भौमयोस्तत् ।
जिह्वां क्वचित संदशति स्वदद्भिस्तद्वेदनायां कतमाय कुप्येत् ॥५१॥

पदच्छेद— जनः तु हेतुः सुखदुःखयो चेम् किम् आत्मनः च अत्र ह भौमयोः तत् ।
जिह्वाम् क्वचित् संदशति स्वदद्भिः तत् वेदनायाम् कतमाय कुप्येत् ॥

शब्दार्थ—

जनः तु	२.	मनुष्य ही	जिह्वाम्	८.	जीभ
हेतुः	४.	कारण है तब	क्वचित्	६.	यदि कभी
सुखदुःखयोः	३.	सुख-दुःख का	संदशति	११.	दाँतों से कट जाये और
चेत्	१.	यदि मान लें कि	स्वदद्भिः	१०.	भोजन करते समय
किम् आत्मनः	६.	आत्मा का क्या सम्बन्ध	तत् वेदनायाम्	१२.	उससे पीड़ा होने लगे तो
च यत्र ह	५.	उससे	कतमाय	१३.	मनुष्य किस पर
भौमयोः तत् ।	७.	क्योंकि शरीर तो मिट्टी का है	कुप्येत् ॥	१४.	क्रोध करेगा

श्लोकार्थ—यदि मान लें कि मनुष्य ही सुख-दुःख का कारण है, तब उससे आत्मा का क्या सम्बन्ध क्योंकि शरीर मिट्टी का है । जीभ यदि कभी भोजन करते समय दाँतों से कट जाये और उससे पीड़ा होने लगे तो मनुष्य किस पर क्रोध करेगा ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

दुःखस्य हेतुर्यदि देवतास्तु किमात्मनस्तत्र विकारयोस्तत् ।
यदङ्गमङ्गेन निहन्यते क्वचित् क्रुध्येत कस्मै पुरुषः स्वदेहे ॥५२॥

पदच्छेद— दुःखस्य हेतुः यदि देवता अस्तु किम् आत्मानः तत्र विकारयोः तत् ।
यत् अङ्गम् अङ्गेन निहन्यते क्वचित् क्रुध्येत् कस्मै पुरुषः स्वदेहे ॥

शब्दार्थ—

दुःखस्य	२.	दुःख का	यत् अङ्गम्	९.	अपने शरीर के एक अङ्ग से
हेतुः	३.	कारण मानें तो	अङ्गेन	१०.	दूसरे अङ्ग में
यदि देवतास्तु	१.	यदि देवताओं को	निहन्यते	११.	चोट लग जाये तो
किम्	५.	क्या हानि ? क्योंकि	क्वचित्	८.	यदि कभी
आत्मनः	४.	इस दुःख से आत्मा की	क्रुद्धयेत्	१४.	क्रोध करेगा ?
तत्र	६.	उस शरीर में	कस्मै	१३.	किस अङ्ग पर
विकारयोः तत्	७.	भोक्ता भी तो वही देवता हैं	पुरुषः स्वदेहे ॥	१२.	मनुष्य अपने शरीर के

श्लोकार्थ– यदि देवताओं को दुःख का का कारण मानें तो इस दुःख से आत्मा की क्या हानि ? क्योंकि इस शरीर में भोक्ता भी तो वही देवता हैं । यदि कभी अपने शरीर के एक अङ्ग से दूसरे अङ्ग में चोट लग जाये तो मनुष्य अपने शरीर के किस अङ्ग पर क्रोध करेगा ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

आत्मा यदि स्यात् सुखदुःखहेतुः किमन्यतस्तत्र निजस्वभावः ।
न ह्यात्मनोऽन्यद् यदि तन्मृषा स्यात् क्रुध्येत कस्मान्न सुखं न दुःखम् ॥५३॥

पदच्छेद—आत्मा यदि स्यात् सुख दुःख हेतुः किमन्यतः तत्र निजः स्वभावः ।
नहि आत्मनः अन्यत् यदि तत् मृषा स्यात् क्रुध्येत कस्मात् न सुखम् न दुःखम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मा	२.	आत्मा को	न हि	९.	कोई है ही नहीं
यदि स्यात्	१.	यदि	आत्मनः अन्यत्	८.	क्योंकि आत्मा से भिन्न
सुख दुःख	३.	सुख-दुःख का	यदि तत् मृषा स्यात्	१०.	यदि है तो वह मिथ्या है
हेतुः	४.	कारण मानें तो	क्रुध्येत	१४.	क्रोध किया जाय
किमन्यतः	७.	कोई दूसरा नहीं है	कस्मात्	१३.	फिर किस पर
तत्र	५.	वह तो	न सुखम्	११.	इसलिये न सुख है
निजःस्वभावः ।	६.	अपना आप ही है	न दुःखम् ॥	१२.	न दुःख है

श्लोकार्थ—यदि आत्मा को सुख दुःख का कारण मानें तो वह तो अपना आप ही है । कोई दूसरा नहीं है । क्योंकि आत्मा से भिन्न कोई है ही नहीं यदि है तो वह मिथ्या है । इसलिये न सुख हे, दुःख है । फिर किस पर क्रोध किया जाय ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

ग्रहा निमित्तं सुखदुःखयोश्चेत् किमात्मनोऽजस्य जनस्य ते वै ।
ग्रहैर्ग्रहस्यैव वदन्ति पीडां क्रुध्येत कस्मै पुरुषस्ततोऽन्यः ॥५४।

पदच्छेद – ग्रहाःनिमित्तम् सुख दुःखयो चेत् किम् आत्मनः अजस्य जनस्य ते वै ।
ग्रहैः ग्रहस्य एव वदन्ति पीडाम् क्रुध्येत कस्मै पुरुषः ततः अन्यः ॥

शब्दार्थ—

ग्रहाः निमित्तम्	३.	कारण ग्रहों को मानें	ग्रहैः	८.	ग्रहों की
सुखदुःखयोः	२.	सुख-दुःख का	ग्रहस्य	१०.	ग्रहण करने वाले शरीर को
चेत्	१.	यदि	एव वदन्ति	११.	ही होती है
किम् आत्मनः	५.	आत्मा की क्या हानि ?	पीडाम्	९.	पीड़ा तो
अजस्य	४.	तो उससे अजन्मा	क्रुध्येत कस्मै	१४.	किस पर क्रोध करे
जनस्य	७.	शरीर पर ही होता है	पुरुषः	१३.	फिर मनुष्य
ते वै ।	६.	उनका प्रभाव तो	ततः अन्यः ॥	१२.	आत्मा तो उनसे भिन्न है

श्लोकार्थ—यदि सुखःदुःख का कारण ग्रहों को मानें तो उससे अजन्मा आत्मा की क्या हानि ? उनका प्रभाव तो शरीर पर ही होता है । ग्रहों की पीड़ा तो ग्रहण करने वाले शरीर को ही होती हैं । आत्मा तो उनसे भिन्न है । फिर मनुष्य किस पर क्रोध करे ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

कर्मास्तु हेतुः सुखदुःखयोश्चेत् किमात्मनस्तद्धि जडाजडत्वे ।
देहस्त्वचित् पुरुषोऽयं सुपर्णः क्रुध्येत कस्मै न हि कर्ममूलम् ॥५५॥

पदच्छेद— कर्म अस्तु हेतुः सुख दुःखयोः चेत् किम् आत्मनः तत् हि जड अजडत्वे ।
देहः तु अचित् पुरुषः अयम् सुपर्णः क्रुध्येत् कस्मै न हि कर्म मूलम् ॥

शब्दार्थ—

कर्म अस्तु	२.	कर्म को	देहः तु अचित्	८.	देह तो अचेतन है और
हेतुः	४.	कारण मानें तो	पुरुषः अयम्	१०.	यह आत्मा है
सुख दुःखयो	३.	सुख-दुःख का	सुपर्णः	९.	उसमें पक्षीरूप से रहने वाला
चेत्	१.	यदि	क्रुध्येत	१४.	क्रोध करे ?
किम् आत्मनः	५.	उससे आत्मा का क्या प्रयोजन	कस्मै	१३.	किस पर
तत् हि जड	६.	क्योंकि वह एक पदार्थ के जड़	न हि	१२.	सिद्ध नहीं होता तब
अजडत्वे ।	७.	और चेतन दोनों होने पर ही हो सकता है	कर्ममूलम् ॥	११.	फिर कर्म का तो कोई आधार

श्लोकार्थ—यदि कर्म को सुख-दुःख का कारण मानें तो उससे आत्मा का क्या प्रयोजन ? क्योंकि वह एक पदार्थ के जड और चेतन दोनों ही रूप होने पर हो सकता है। देह तो अचेतन है और उसमें पक्षीरूप से रहने वाला यह आत्मा है। फिर कर्म का तो कोई आधार सिद्ध नहीं होता, तब किस पर क्रोध करे ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

कालस्तु हेतुः सुखदुःखयोश्चेत् किमात्मनस्तत्र तदात्मकोऽसौ ।
नाग्नेर्हि तापो न हिमस्य तत् स्यात् क्रुध्येत कस्मै न परस्य द्वन्द्वम् ॥५६॥

पदच्छेद— कालः तु हेतुः सुख दुःखयोः चेत् किम् आत्मनः तत्र तत् आत्मकः असौ ।
न अग्नेः हि तापः न हिमस्य तत् स्यात् क्रुध्येत कस्मै न परस्य द्वन्द्वम् ॥

शब्दार्थ—

कालः तु	२.	काल को ही	न अग्नेः हि	९.	आग को नहीं जला सकती
हेतुः	४.	कारण मानें तो	तापः	८.	जैसे आग
सुख दुःखयोः	३.	सुख दुःख का	न हिमस्य	१०.	और बर्फ-बर्फ को नहीं
चेत्	१.	यदि	तत् स्यात्	११.	गला सकती है
किम् आत्मनः	५.	आत्मा पर उसका	क्रुध्येत् कस्मै	१२.	फिर किस पर क्रोध किया जाय
तत: आत्मकत्	७.	आत्म स्वरूप ही है	न परस्य	१४.	सर्वथा अतीत है
असौ ।	६.	काल तो	द्वन्द्वम् ॥	१३.	आत्मा तो शीतादि द्वन्द्वों से

श्लोकार्थ—यदि काल को ही सुख-दुःख का कारण मानें तो आत्मा पर उसका क्या प्रभाव ? काल तो आत्म स्वरूप ही है। जैसे आग-आग को नहीं जला सकती, और बर्फ-बर्फ को नहीं गला सकती है। फिर किस पर क्रोध किया जाय। (वैसे ही आत्मा-आत्मा को सुख दुःख नहीं पहुँचा सकता) वह तो शीत आदि द्वन्द्वों से सर्वथा अतीत है ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

न केनचित् क्वापि कथञ्चनास्य द्वन्द्वोपरागः परतः परस्य ।
यथाहमः संसृतिरूपिणः स्यादेवं प्रबुद्धो न बिभेति भूतैः ॥५७॥

पदच्छेद—

न केनचित् क्वापि कथञ्चन अस्य द्वन्द्व उपरागः परतः परस्य ।
यथा अहमः संसृति रूपिणः स्यात् एवम् प्रबुद्धः न बिभेति भूतैः ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं होता है	यथा अहमः	१०.	अहंकार को ही
केनचित्	५.	किसी के द्वारा	संसृति	८.	वह तो
क्वापि	४.	कहीं	रूपिणः	९.	जन्म-मृत्युरूप
कथञ्चन	३.	उसे कभी	स्यात् एवम्	११.	होता है इसे
अस्य	१.	आत्मा	प्रबुद्धः	१२.	जान लेने पर
द्वन्द्व उपरागः	६.	द्वन्द्व का स्पर्श	न बिभेतिः	१४.	भयभीत नहीं होता है
परतः परस्य ।	२.	प्रकृति से भी परे है	भूतैः ॥	१३.	किसी भय से

श्लोकार्थ—आत्मा प्रकृति से भी परे है। उसे कभी कहीं किसी के द्वारा द्वन्द्व का स्पर्श नहीं होता है। वह तो जन्म-मृत्यु रूप अहंकार को ही होता है इसे जान लेने पर किसी भय से भयभीत नहीं होता है ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

एतां स आस्थाय परात्मनिष्ठामध्यासितां पूर्वतमैर्महर्षिभिः ।
अहं तरिष्यामि दुरन्तपारं तमो मुकुन्दाङ्घ्रिनिषेवयैव ॥५८॥

पदच्छेद—

एताम् स आस्थाय परात्मनिष्ठाम् अध्यासिताम् पूर्वतमैः महर्षिभिः ।
अहम् तरिष्यामि दुरन्त पारम् तमः मुकुन्द अङ्घ्रि निषेवया एव ॥

शब्दार्थ—

एताम्	४.	इस	अहम्	८.	मैं भी इसका आश्रय लेकर
सः	१.	उन	तरिष्यामि	१४.	पार कर लुंगा
आस्थाय	६.	आश्रय	दुरन्तपारम्	१२.	कठिनाई से पार होने वाले
परात्मनिष्ठाम्	५.	परमात्मनिष्ठा का	तमः	१३.	अज्ञान सागर को
अध्यासिताम्	७.	ग्रहण किया है	मुकुन्द अङ्घ्रि	९.	भगवान् के चरण कमलों की
पूर्वतमैः	२.	बड़े-बड़े प्राचीन	निषेवया	१०.	सेवा के द्वारा
महर्षिभिः ।	३.	ऋषि-मुनियों ने	एव ॥	११.	ही

श्लोकार्थ—उन बड़े-बड़े प्राचीन ऋषि मुनियों ने इस परमात्म निष्ठा का आश्रय ग्रहण किया है। मैं भी इसका आश्रय लेकर भगवान् के चरण कमलों की सेवा के द्वारा ही कठिनाई से पार होने वाले अज्ञान सागर को पार कर लूंगा ॥

एकोनषष्टितमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—निर्विद्य नष्टद्रविणो गतक्लमः प्रव्रज्य गां पर्यटमान इत्थम् ।
निराकृतोऽसद्भिरपि स्वधर्मादकम्पितोऽमुं मुनिराह गाथाम् ५९

पदच्छेद—

निर्विद्य नष्ट द्रविणः गतक्लमः प्रव्रज्य गाम् पर्यटमानः इत्थम् ।
निराकृतः असद्भिः अपि स्वधर्मात् कम्पितः अमुम् मुनि आह गाथाम् ॥

शब्दार्थ—

निर्विद्य	४.	संसार से विरक्त होकर	निराकृतः	८.	तिरस्कृत होने पर
नष्ट	२.	नष्ट हुआ	असद्भिः	७.	दुष्टों के द्वारा
द्रविणः	१.	उसका धन क्या	अपि	९.	भी वह
गतक्लमः	३.	सारा क्लेश दूर हो गया वह	स्वधर्मात्	१०.	अपने धर्म में
प्रव्रज्य गाम्	५.	सन्यास लेकर पृथ्वी पर	कम्पितः	११.	स्थिर रहा
पर्यटमानः	६.	विचर रहा था	अमुम् मुनिः	१३.	वह मुनि इस
इत्थम् ।	१२.	इस प्रकार	आह गाथाम् ॥	१४.	गीत को गाया करता था

श्लोकार्थ—उसका धन क्या नष्ट हुआ, साराक्लेश दूर हो गया । वह संसार से विरक्त होकर सन्यास लेकर पृथ्वी पर विचर रहा था । दुष्टों के द्वारा तिरस्कृत होने पर भी वह अपने धर्म में स्थिर रहा । इस प्रकार वह मुनि इस गीत को गाया करता था ॥

षष्टितमः श्लोकः

सुखदुःखप्रदो नान्यः पुरुषस्यात्मविभ्रमः ।
मित्रोदासीनरिपवः संसारस्तमसः कृतः ॥६०॥

पदच्छेद—

सुख दुःख प्रदः न अन्यः पुरुषस्य आत्म विभ्रमः ।
मित्र उदासीन रिपवः संसार तमसः कृतः ॥

शब्दार्थ—

सुख दुःख	२.	सुख और दुःख	मित्र	८.	मित्र
प्रदः	३.	देने वाला	उदासीन	९.	उदासीन और
न अन्यः	४.	अन्य कोई नहीं है	रिपवः	१०.	शत्रु के भेद
पुरुषस्य	१.	मनुष्य को	संसार	७.	यह सारा संसार
आत्म	५.	यह तो उसके चित्त का	तमसः	११.	अज्ञान से
विभ्रमः ।	५.	भ्रम मात्र है	कृतः ॥	१२.	कल्पित है

श्लोकार्थ—मनुष्य को सुख और दुःख देने वाला अन्य कोई नहीं है । यह तो उसके चित्त का भ्रममात्र है । यह सारा संसार, मित्र, उदासीन और शत्रु के भेद अज्ञान से कल्पित है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

तस्मात् सर्वात्मना तात निगृहाण मनो धिया ।
मय्यावेशितया युक्त एतावान् योगसंग्रहः ॥६१॥

पदच्छेद—

तस्मात् सर्व आत्मना तात निगृहाण मनो धिया ।
मयि आवेशितया युक्तः एतावान् योग संग्रहः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	मयि	७.	मुझ में ही
सर्व आत्मना	६.	सर्वात्म भाव से	आवेशितया	८.	लगाकर
तात	२.	प्यारे उद्धव !	युक्तः	९.	नित्य मुक्त हो कर स्थिर हो जाओ
निगृहाण	५	वश में करके	एतावान्	१२.	इतना ही सार है
मनो	३.	अपने मन और	योग	१०.	सारे योग
धिया ।	४.	बुद्धि को	संग्रहः ॥	११.	साधन का

श्लोकार्थ—इसलिये प्यारे उद्धव अपने मन और बुद्धि को वश में करके सर्वात्म भाव से मुझमें ही मन लगा कर नित्य मुक्त होकर स्थिर हो जाओ । सारे योग साधन का इतना ही सार है ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

य एतां भिक्षुणा गीतां ब्रह्मनिष्ठां समाहितः ।
धारयञ्छ्रावयञ्छृण्वन् द्वन्द्वैर्नैवाभिभूयते ॥६२॥

पदच्छेद—

य एताम् भिक्षुणा गीताम् ब्रह्म निष्ठाम् समाहितः ।
धारयन् श्रावयन् शृण्वन् द्वन्द्वैः न एव अभिभूयते ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो मनुष्य	धारयन्	८.	धारण करता है, वह
एताम्	५.	यह	श्रावयन्	७.	सुनाता और सुनता है और
भिक्षुणा	४.	भिक्षुक का	शृण्वन् द्वन्द्वैः	९.	सुख दुःखादि द्वन्द्वों के
गीताम्	६.	गीत	न एव	११.	नहीं होता है
ब्रह्मनिष्ठाम्	३.	ब्रह्मनिष्ठा रूप	अभिभूयते ॥	१०.	वश में
समाहितः ।	२.	एकाग्रचित्त से			

श्लोकार्थ—जो मनुष्य एकाग्रचित्त से ब्रह्मनिष्ठा रूप भिक्षुक का यह गीत सुनता और धारण करता है । वह सुख-दुःखादि द्वन्द्वों के वश में नहीं होता है ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे त्रयोविंशः अध्यायः ॥ २३ ॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

चतुर्विंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—अथ ते संप्रवक्ष्यामि सांख्यं पूर्वैर्विनिश्चितम् ।
यद् विज्ञाय पुमान् सद्यो जह्याद् वैकल्पिकं भ्रमम् ॥१॥

पदच्छेद—

अथ ते संप्रवक्ष्यामि सांख्यम् पूर्वैः विनिश्चितम् ।
यद् विज्ञाय पुमान् सद्यो जह्याद् वैकल्पिकम् भ्रमम् ॥

शब्दार्थ—

अथ	१. अब मैं	यद्	७.	इसे
ते	२. तुम्हें	विज्ञाय	८.	समझकर
संप्रवक्ष्यामि	४. निर्णय सुनाता हूँ	पुमान्	९.	मनुष्य
सांख्यम्	३. सांख्यशास्त्र का	सद्यः	११.	तत्काल
पूर्वैः	५. प्राचीन ऋषियों ने	जह्याद्	१२.	त्याग देता है
विनिश्चितम् ।	६. इसका निश्चय किया है	वैकल्पिकम् भ्रमम् ॥	१०.	भेद बुद्धि मूलक भ्रम को

श्लोकार्थ—अब मैं तुम्हें सांख्यशास्त्र का निर्णय सुनाता हूँ । प्राचीन ऋषियों ने इसका निर्णय किया है । इसे समझकर मनुष्य तत्काल भेद बुद्धि मूलक भ्रम को तत्काल त्याग देता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

आसीज्ज्ञानमथो ह्यर्थ एकमेवाविकल्पितम् ।
यदा विवेकनिपुणा आदौ कृतयुगेऽयुगे ॥२॥

पदच्छेद—

आसीत् ज्ञानम् अथ हि अर्थः एकम् एव अविकल्पितम् ।
यदा विवेक निपुणाः आदौ कृत युगे अयुगे ॥

शब्दार्थ—

आसीत्	१२.	रहता है	यदा	४. जब कभी मनुष्य
ज्ञानम्	११.	ब्रह्मरूप	विवेक	५. विवेक से
अथ	७.	उन सभी अवस्थाओं में	निपुणाः	६. निपुण होते हैं तब
हि अर्थः	१०.	अर्थ	आदौ	२. आदि
एकम् एव	९.	एक ही	कृत युगे	३. सत्ययुग में और
अविकल्पितम् ।	८.	समस्त भेद-भाव रहित	अयुगे ॥	१. युगों से पूर्व प्रलयकाल में

श्लोकार्थ—युगों से पूर्व प्रलयकाल में आदि सत्ययुग में जब कभी मनुष्य विवेक से निपुण होते हैं, तब इन सभी अवस्थाओं में समस्त भेद-भाव रहित एक ही अर्थ ब्रह्मरूप रहता है ॥

तृतीयः श्लोकः

तन्मायाफलरूपेण केवलं निर्विकल्पितम् ।
वाङ्मनोऽगोचरं सत्यं द्विधा समभवद् बृहत् ॥३॥

पदच्छेद—

तत् माया फल रूपेण केवलम् निर्विकल्पितम् ।
वाङ्मनः अगोचरम् सत्यम् द्विधा समभवत् बृहत् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	वह ब्रह्म	वाङ्मनः	४.	मन और वाणी की
माया	८.	माया और उसमें	अगोचरम्	५.	उसमें गति नहीं है
फलरूपेण	९.	जीव के रूप में प्रतिबिम्बित	सत्यम्	६.	वह सत्य है । वही
केवलम्	२.	केवल	द्विधा	१०.	दो भागों में
निर्विकल्पितम् ।	३.	विकल्प रहित है	समभवत्	११.	विभक्तसा हो गया है
			बृहत् ॥	७.	ब्रह्म

श्लोकार्थ—वह ब्रह्म केवल, विकल्परहित है । मन और वाणी की उसमें गति नहीं है । वह सत्य है । वही ब्रह्म माया और उसमें जीव के रूप में प्रतिबिम्बित दो भागों में विभक्त हो गया है ॥

चतुर्थः श्लोकः

तयोरेकतरो ह्यर्थः प्रकृतिः सोभयात्मिका ।
ज्ञानं त्वन्यतमो भावः पुरुषः सोऽभिधीयते ॥४॥

पदच्छेद—

तयोः एकतरः हि अर्थः प्रकृतिः सा उभय आत्मिका ।
ज्ञानम् तु अन्यतमः भावः पुरुषः सः अभिधीयते ॥

शब्दार्थ—

तयोः	१.	उनमें से	ज्ञानम्	१०.	ज्ञानस्वरूप है
एकतरः	२.	एक	तु अन्यतमः	८.	दूसरी
हि अर्थः	३.	वस्तु को	भावः	९.	वस्तु जो
प्रकृतिः	४.	प्रकृति कहते हैं	पुरुषः	१२.	पुरुष
सा	५.	उसी ने जगत् में	सः	११.	उसे
उभय	६.	कार्य-कारण दोनों रूप	अभिधीयते ॥	१३.	कहते है
आत्मिका ।	७.	धारण किये हैं			

श्लोकार्थ—उनमें से एक वस्तु को प्रकृति कहते हैं । उसी ने जगत में कार्य-कारण दोनों रूप धारण किये हैं । दूसरी वस्तु जो ज्ञान स्वरूप है, उसे पुरुष कहते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

तमो रजः सत्त्वमिति प्रकृतेरभवन् गुणाः ।
मया प्रक्षोभ्यमाणायाः पुरुषानुमतेन च ॥५॥

पदच्छेद—

तमः रजः सत्त्वम् इति प्रकृतेः अभवन् गुणाः ।
मया प्रक्षोभ्यमाणायाः पुरुष अनुमतेन च ॥

शब्दार्थ—

तमः	८. तम		मया	१. मैंने ही
रजः	७. रज और		प्रक्षोभ्य माणायाः	४. प्रकृति के क्षुब्ध किया
सत्त्वम्	६. सत्त्व		पुरुष	२. जीवों के
इति	९. इस प्रकार		अनुमतेन	३. शुभाशुभ कर्मों को अनुसार
प्रकृतेः	१०. उस प्रकृति से		च ॥	५. और
अभवन् गुणाः ।	११. तीन गुण उत्पन्न हुये			

श्लोकार्थ—मैंने ही जीवों के शुभाशुभ कर्मों के अनुसार प्रकृति को क्षुब्ध किया। और सत्त्व रज और तम इस प्रकार उस प्रकृति से तीन गुण उत्पन्न हुये ॥

षष्ठः श्लोकः

तेभ्यः समभवत् सूत्रं महान् सूत्रेण संयुतः ।
ततो-विकुर्वतो जातोऽहङ्कारो यो विमोहनः ॥६॥

पदच्छेद—

तेभ्यः समभवत् सूत्रम् महान सूत्रेण संयुतः ।
ततः विकुर्वतः जातः अहङ्कारः यः विमोहनः ॥

शब्दार्थ—

तेभ्यः	१. उनसे	ततः	७. महत्तत्त्व में
समभवत्	५. प्रकट हुए	विकुर्वतः	८. विकार होने पर
सूत्रम्	२ क्रिया शक्ति प्रधान सूत्र	जातः	१०. उत्पन्न हुआ
महान्	४. महत्तत्त्व	अहङ्कारः	९. अहङ्कार
सूत्रेण	३. और ज्ञान शक्ति प्रधान	यः	११. जो
संयुतः ।	६. वे दोनों परस्पर मिले हुये है	विमोहनः ॥	१२. जीवों को मोह में डालने वाला है

श्लोकार्थ—उनसे क्रिया शक्ति प्रधान सूत्र और ज्ञान-शक्ति प्रधान महत्तत्त्व प्रकट हुए। वे दोनों परस्पर मिले हुये हैं। महत्तत्त्व में विकार होने पर अहङ्कार उत्पन्न हुआ, जो जीवों को मोह में डालने वाला है ॥

सप्तमः श्लोकः

वैकारिकस्तैजसश्च तामसश्चेत्यहं त्रिवृत् ।
तन्मात्रेन्द्रियमनसां कारणं चिदचिन्मयः ॥७॥

पदच्छेद—

वैकारिकः तैजसः च तामसः च इति अहम् त्रिवृत् ।
तत् मात्र इन्द्रिय मनसाम् कारणम् चित् अचिन्मयः ॥

शब्दार्थ—

वैकारिकः	३.	सात्त्विक	तत् मात्र	७.	अहङ्कार और पञ्चतन्मात्रा
तैजसः	४.	राजस	इन्द्रिय	८.	इन्द्रिय और
च	५.	और	मनसाम्	९.	मन का
तामसः च	६.	तामस (तथा)	कारणम्	१०.	कारण है
इति अहम्	१.	वह अहङ्कार	चित्	१२.	चेतन दोनों प्रकार का है
त्रिवृत् ।	२.	तीन प्रकार का है	अचिन्मयः ॥	११.	इसलिये वह जड और

श्लोकार्थ—वह अहङ्कार तीन प्रकार का है। सात्त्विक-राजस और तामस तथा अहङ्कार और पञ्चतन्मात्रा, इन्द्रिय और मन का कारण है। इसलिये वह जड और चेतन दोनों प्रकार का है ॥

अष्टमः श्लोकः

अर्थस्तन्मात्रिकाज्जज्ञे तामसादिन्द्रियाणि च ।
तैजसाद् देवता आसन्नेकादश च वैकृतात् ॥८॥

पदच्छेद—

अर्थः तन्मात्रिकात् जज्ञे तामसात् इन्द्रियाणि च ।
तैजसात् देवता आसन एकादश च वैकृतात् ॥

शब्दार्थ—

अर्थः	३.	पाँच भूतों की उत्पत्ति	तैजसात्	६.	राजस अहङ्कार से
तन्मात्रिकात्	२.	पञ्चतन्मात्रायें और उनसे	देवता	११.	देवता
जज्ञे	४.	हुई	आसन्	१२.	प्रकट हुए
तामसात्	१.	तामस अहङ्कार से	एकादश	१०.	इन्द्रियों को अधिष्ठाता ग्यारह
इन्द्रियाणि	७.	इन्द्रियाँ	च	८.	और
च ।	५.	और	वैकृतात् ॥	९.	सात्त्विक अहङ्कार से

श्लोकार्थ—तामस अहङ्कार से पञ्चतन्मात्रायें और उनसे पाँच भूतों की उत्पत्ति हुई। और राजस अहङ्कार से इन्द्रियाँ और सात्त्विक अहङ्कार से इन्द्रियों के अधिष्ठाता ग्यारह देवता प्रकट हुए ॥

नवमः श्लोकः

मया सञ्चोदिता भावाः सर्वे संहत्यकारिणः ।
अण्डमुत्पादयामासुर्ममायतनमुत्तमम् ॥९॥

पदच्छेद—

मया सञ्चोदिता भावाः सर्वे संहत्य कारिणः ।
अण्डम् उत्पादयामासुः मम आयतनम् उत्तमम् ॥

शब्दार्थ—

मया	२.	मेरी	अण्डम्	६.	इन्होंने यह ब्रह्माण्ड रूप अण्ड
सञ्चोदिता	३.	प्रेरणा से	उत्पादयामासुः	७.	उत्पन्न किया यह अण्ड
भावाः सर्वेः	१.	ये सभी पदार्थ	मम	८.	मेरा
संहत्य	४.	एकत्र होकर परस्पर	आयतनम्	१०.	निवास स्थान है
कारिणः ।	५.	मिल गये और	उत्तमम् ॥	९.	उत्तम

श्लोकार्थ—ये सभी पदार्थ मेरी प्रेरणा से एकत्र हो कर परस्पर मिल गये । और इन्होंने यह ब्रह्माण्ड अण्ड उत्पन्न किया । यह अण्ड मेरा उत्तम निवास स्थान है ॥

दशमः श्लोकः

तस्मिन्नहं समभवमण्डे सलिलसंस्थितौ ।
मम नाभ्यामभूत् पद्मं विश्वाख्यं तत्र चात्मभूः ॥१०॥

पदच्छेद—

तस्मिन् अहम् समभवम् अण्डे सलिल संस्थितौ ।
मम् नाभ्याम् अभूत् पद्मम् विश्वाख्यम् तत्र च आत्मभूः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	५.	उसमें	मम नाभ्याम्	७.	मेरी नाभि से
अहम्	४.	तब मैं नारायण रूप से	अभूत्	१०.	उत्पत्ति हुई
समभवम्	६.	विराजमान हो गया	पद्मम्	९.	कमल की
अण्डे	१.	जब वह अण्ड	विश्वाख्यम्	८.	विश्वरूप
सलिल	२.	जल में	तत्र च	११.	और उसी पर
संस्थितौ ।	३.	स्थित हो गया	आत्म भूः ॥	१२.	ब्रह्मा का आविर्भाव हुआ

श्लोकार्थ—जब वह अण्ड जल में स्थित हो गया, तब मैं नारायण रूप से उसमें विराजमान हो गया । मेरी नाभि से विश्वरूप कमल की उत्पत्ति हुई, और उसी पर ब्रह्मा का आविर्भाव हुआ ॥

एकादशः श्लोकः

सोऽसृजत्तपसा युक्तो रजसा मदनुग्रहात् ।
लोकान् सपालान् विश्वात्मा भूर्भुवः स्वरिति धिया ॥११॥

पदच्छेद— सः असृजत् तपसा युक्तः रजसा मद् अनुग्रहात् ।
लोकान् सपालान् विश्वात्मा भूर्भुवः स्वः इति त्रिधा ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	उन	लोकान्	१२.	लोकों की और
असृजत्	१४.	रचना की	सपालान्	१३.	लोकपालों की
तपसा	३.	तपस्या	विश्वात्मा	२.	विश्वात्मा ब्रह्मा ने
युक्तः	४.	करके	भूर्भुवः	८.	भूः भुवः
रजसा	७.	रजोगुण के द्वारा	स्वः	९.	स्वः
मद्	५.	उसके बाद मेरा	इति	१०.	इन
अनुग्रहात् ।	६.	कृपा प्रसाद प्राप्त करके	त्रिधा ॥	११.	तीनों

श्लोकार्थ—उन विश्वात्मा ब्रह्मा ने तपस्या करके उसके बाद मेरा कृपा प्रसाद प्राप्त करके रजोगुण के द्वारा भूः भुवः स्वः इन तीनों लोकों की और लोकपालों की रचना की ॥

द्वादशः श्लोकः

देवानामोक आसीत् स्वर्भूतानां च भुवः पदम् ।
मर्त्यादीनां च भूर्लोकः सिद्धानां त्रितयात् परम् ॥१२॥

पदच्छेद— देवानाम् ओकः आसीत् स्वः भूतानाम् च भुवः पदम् ।
मर्त्य आदीनाम् च भूः लोकः सिद्धानाम् त्रितयात् परम् ॥

शब्दार्थ—

देवानाम्	१.	देवताओं के	मर्त्य	७.	मनुष्यादि के
ओकः	२.	निवास के लिये	आदीनाम्	८.	के लिये
आसीत्	१०.	निश्चय किया	च भूः लोकः	९.	भूर्लोक का
स्वः	३.	स्वर्लोक	सिद्धानाम्	१३.	सिद्धों के निवास स्थान हुए
भूतानाम्	४.	भूत-प्रेतादि के लिये	त्रितयात्	११.	इन तीन लोकों से
च भुवः	५.	भुवः	परम् ॥	१२.	ऊपर महर्लोक आदि
पदम् ।	६	लोक और			

श्लोकार्थ—देवताओं के निवास के लिये स्वर्लोक, भूत प्रेतादि के लिये भुवः लोक और मनुष्यादि के लिये भूर्लोक का निश्चय किया । इन तीनों लोकों के ऊपर महर्लोक आदि सिद्धों के निवास स्थान हुये ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अधोऽसुराणां नागानां भूमेरोकोऽसृजत् प्रभुः ।
त्रिलोक्यां गतयः सर्वाः कर्मणां त्रिगुणात्मनाम् ॥१३॥

पदच्छेद—

अधः सुराणाम् नागानाम् भूमेः ओकः असृजत् प्रभुः ।
त्रिलोक्याम् गतयः सर्वाः कर्मणाम् त्रिगुण आत्मनाम् ॥

शब्दार्थ—

अधः	५. नीचे	त्रिलोक्याम्	८.	इन्हीं तीनों लोकों में
सुराणाम्	२. असुरों और	गतयः	१३.	विविध गतियाँ प्राप्त होती है
नागानाम्	३. नागों के लिये	सर्वाः	१२.	सबको
भूमेः	४. पृथ्वी के	कर्मणाम्	११.	कर्मों के अनुसार
ओकः	६. अतला आदि सात स्थान	त्रिगुण	९.	त्रिगुण
असृजत्	७. बनाये	आत्मनाम् ॥	१०.	रूप
प्रभुः ।	१. सृष्टि कार्य में समर्थ ब्रह्माजी ने			

श्लोकार्थ—सृष्टि कार्य में समर्थ ब्रह्माजी ने असुरों और नागों के लिये पृथ्वी के नीचे अतला आदि सात स्थान बनाये। इन्हीं तीनों लोकों में त्रिगुणरूप कर्मों के अनुसार सबको विविध गतियाँ प्राप्त होती हैं ॥

चतुर्दशः श्लोकः

योगस्य तपसश्चैव न्यासस्य गतयोऽमलाः ।
महर्जनस्तपः सत्यं भक्तियोगस्य मद्‌गतिम् ॥१४॥

पदच्छेद—

योगस्य तपसः च एव न्यासस्य गतयः अमलाः ।
महः जनः तपः सत्यम् भक्ति योगस्य मत् गतिम् ॥

शब्दार्थ—

योगस्य	१. योग	महः जनः	५.	महर्लोक-जनलोक
तपसः	२. तपस्या	तपः	६.	तपलोक और
च एव	३. और	सत्यम्	७.	सत्य लोकरूप
न्यासस्य	४. सन्यास के द्वारा	भक्ति	१०.	तथा भक्ति
गतयः	९. गति प्राप्त होती है	योगस्य	११.	योग से
अमलाः ।	८. उत्तम	मत् गतिम् ॥	१२.	मेरा परमधाम प्राप्त होता है

श्लोकार्थ—योग, तपस्या और सन्यास के द्वारा महर्लोक-जनलोक, तपलोक और सत्य लोकरूप उत्तम गति प्राप्त होती है। तथा भक्ति योग से मेरा परमधाम प्राप्त होता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

मया कालात्मना धात्रा कर्मयुक्तमिदं जगत्।
गुणप्रवाह एतस्मिन्नुन्मज्जति निमज्जति ॥१५॥

पदच्छेद—

मया काल आत्मना धात्रा कर्म युक्तम् इदम् जगत्।
गुण प्रवाह एतस्मिन् उन्मज्जति निमज्जति ॥

शब्दार्थ—

मया	५.	मैं ही	इदम्	१.	यह सारा
काल	६.	काल रूप से	जगत्	२.	जगत्
आत्मना	७.	कर्मों के अनुसार	प्रवाह	१०.	गुण प्रवाह में पड़कर जीव
धात्रा	८.	उनके फल को बनाता हूँ	एतस्मिन्	६.	इस
कर्म	३.	कर्म और उनके संस्कारों से	उन्मज्जति	१२.	कभी ऊपर उठ जाता है
युक्तम्।	४.	युक्त है	निमज्जति ॥	११.	कभी डूब जाता है और

श्लोकार्थ—यह सारा जगत् कर्म और उनके संस्कारों से युक्त है। मैं ही काल रूप से कर्मों के अनुसार उनके फल को बनाता हूँ। इस गुण प्रवाह में पड़कर जीव कभी डूब जाता है और कभी ऊपर उठ जाता है ॥

षोडशः श्लोकः

अणुर्बृहत् कृशः स्थूलो यो यो भावः प्रसिध्यति।
सर्वोऽप्युभयसंयुक्तः प्रकृत्या पुरुषेण च ॥१६॥

पदच्छेद—

अणुः बृहत् कृशः स्थूलः यः यः भावः प्रसिध्यति।
सर्वः अपि उभय संयुक्तः प्रकृत्या पुरुषेण च ॥

शब्दार्थ—

अणुः	१.	जगत् में छोटे	सर्वः	८.	सब
बृहत्	२.	बड़े	अपि	६.	ही
कृशः	३.	पतले	उभय	१३.	दोनों के
स्थूलः	४.	मोटे	सयुक्तः	१४.	संयोग से ही सिद्ध होते हैं
यः यः	५.	जितने भी	प्रकृत्या	१०.	प्रकृति
भावः	६.	पदार्थ	पुरुषेण	१२.	पुरुष
प्रसिध्यति।	७.	बनते हैं	च ॥	११.	और

श्लोकार्थ—जगत में छोटे-बड़े, पतले, मोटे जितने भी पदार्थ बनते हैं। सब ही प्रकृति और पुरुष दोनों के संयोग से ही सिद्ध होते हैं ॥

सप्तदशः श्लोकः

यस्तु यस्यादिरन्तश्च स वै मध्यं च तस्य सन् ।
विकारो व्यवहारार्थो यथा तैजसपार्थिवाः ॥१७॥

पदच्छेद— यः तु यस्य आदिः अन्तः च सः वै मध्यम् च तस्य सन् ।
विकारः व्यवहार अर्थः यथा तैजस पार्थिवाः ॥

शब्दार्थ—

यः तु	३. है	विकारः	७. विकार तो केवल
यस्य	१. जिसके	व्यवहार	८. व्यवहार के
आदिः अन्तः	२. आदि और अन्त ये	अर्थः	९. लिये की हुई कल्पना मात्र है
च सः वै	४. और वही	यथा	१०. जैसे
मध्यम् च	५. बीच में हैं और	तैजस	११. कंगन आदि सोने के विकार और
तस्य सन् ।	६. वही सत्य है	पार्थिवाः ॥	१२. घट आदि मिट्टी के विकार हैं

श्लोकार्थ—जिसके आदि और अन्त में जो है, और वही बीच में है, और वही सत्य है । विकार तो केवल व्यवहार के लिये की हुई कल्पना मात्र है । जैसे कंगन आदि सोने के विकार और घट आदि मिट्टी के विकार हैं ॥

अष्टादशः श्लोकः

यदुपादाय पूर्वस्तु भावो विकुरुतेऽपरम् ।
आदिरन्तो यदा यस्य तत् सत्यमभिधीयते ॥१८॥

पदच्छेद— यत् उपादाय पूर्वः तु भावः विकुरुते अपरम् ।
आदि अन्तः यदा यस्य तत् सत्यम् अभिधीयते ॥

शब्दार्थ—

यत्	२. जिस परम कारण को	आदि	८. आदि और
उपादाय	३. उपादान बनाकर	अन्तः	९. अन्त में विद्यमान रहता है
पूर्वः तु	१. पूर्ववर्ती कारण महत्तत्त्व आदि भी	यदा यस्य	७. जो जिसके
भावः	५. कार्य वर्ग की	तत्	१०. वही
विकुरुते	६. सृष्टि करते हैं	सत्यम्	११. सत्य
अपरम् ।	४. दूसरे (अहंकार आदि)	अभिधीयते ॥	१२. माना जाता है

श्लोकार्थ—पूर्ववर्ती कारण महत्तत्त्व आदि भी जिस परम कारण को उपादान बनाकर दूसरे अहंकार आदि कार्य वर्ग की सृष्टि करते हैं । जो जिसके आदि और अन्त में विद्यमान रहता है । वही सत्य माना जाता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

प्रकृतिर्ह्यस्योपादानमाधारः पुरुषः परः ।
सतोऽभिव्यञ्जकः कालो ब्रह्म तत्त्रितयं त्वहम् ॥१९॥

पदच्छेद—

प्रकृतिः हि अस्य उपादानम् आधारः पुरुषः परः ।
सतः अभिव्यञ्जकः कालः ब्रह्म तत् त्रितयम् तु अहम् ॥

शब्दार्थ—

प्रकृतिः	३.	प्रकृति है और	सतः	७.	इसको
हि अस्य	१.	इस प्रपञ्चका	अभिव्यञ्जकः	८.	प्रकट करने वाला
उपादानम्	२.	उपादान कारण तो	कालः	९.	काल है
आधारः	६.	अधिष्ठान है	ब्रह्म	११.	वस्तुतः ब्रह्मस्वरूप है
पुरुषः	५.	पुरुष परमात्मा	तत् त्रितयम्	१०.	काल की यह त्रिविधता
परः ।	४	परम	तु अहम् ॥	१२.	मैं वही शुद्ध ब्रह्म हूँ

श्लोकार्थ—इस प्रपञ्च का उपादान कारण तो प्रकृति है । और परम पुरुष परमात्मा अधिष्ठान है । इसको प्रकट करने वाला काल है । काल की यह त्रिविधता वस्तुत ब्रह्मस्वरूप है । मैं वही शुद्ध ब्रह्म हूँ ॥

विंशः श्लोकः

सर्गः प्रवर्तते तावत् पौर्वापर्येण नित्यशः ।
महान् गुणविसर्गार्थः स्थित्यन्तो यावदीक्षणम् ॥२०॥

पदच्छेद—

सर्गः प्रवर्तते तावत् पौर्वापर्यें नित्यशः ।
महान् गुण विसर्ग अर्थः स्थिति अन्त यावत् ईक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

सर्ग	१०.	यह सृष्टि चक्र	गुण	७.	कर्म
प्रवर्तते	१२.	चलता रहता है	विसर्ग अर्थ	८.	भोग के लिये
तावत्	५.	तब-तक	स्थिति	३.	जब तक उनको पालन
पौर्वापर्येण	९.	कार्य-कारणरूप	अन्त	४.	प्रवृत्ति बनी रहती है
नित्यशः	११.	निरन्तर	यावत्	१.	जब-तक परमात्मा की
महान् ।	६.	जीवों के	ईक्षणम्॥	२.	ईक्षण शक्ति कार्य करती है और

श्लोकार्थ—जब-तक परमात्मा की ईक्षण शक्ति कार्य करती है और जब तक उनकी पालन प्रवृत्ति बनी रहती है । तब-तक जीवों के कर्म भोग के लिये कार्य कारणरूप यह सृष्टि चक्र निरन्तर चलता रहता है ॥

एकविंशः श्लोकः

विराण्मयाऽऽसाद्यमानो लोककल्पविकल्पकः ।
पञ्चत्वाय विशेषाय कल्पते भुवनैः सह ॥२१॥

पदच्छेद—

विराट् मया आसाद्य मानः लोक कल्प विकल्पकः ।
पञ्चत्वाय विशेषाय कल्पते भुवनैः सह ॥

शब्दार्थ—

विराट्	१. यह विराट ही	पञ्चत्वाय	९. विनाशरूप
मया	५. जब मैं कालरूप से	विशेषाय	१०. विभाग के योग्य
आसाद्यमानः	६. इसमें व्याप्त होता हूँ	कल्पते	११. हो जाता है
लोक	२. विविध लोकों की	भुवनैः	७. तब-यह भुवनों के
कल्प	३. सृष्टि, स्थिति, संहार की	सह ॥	८. साथ
विकल्पकः ।	४. लीलाभूमि है		

श्लोकार्थ—यह विराट् ही विविध लोकों की सृष्टि, स्थिति, संहार की लीला भूमि है। जब मैं कालरूप से इसमें व्याप्त होता हूँ। तब यह भुवनों के साथ विनाश रूप विभाग के योग्य हो जाता है॥

द्वाविंशः श्लोकः

अन्ने प्रलीयते मर्त्यमन्नं धानासु लीयते ।
धाना भूमौ प्रलीयन्ते भूमिर्गन्धे प्रलीयते ॥२२॥

पदच्छेद—

अन्ने प्रलीयते मर्त्यम् अन्नम् धानासु लीयते ।
धाना भूमौ प्रलीयन्ते भूमिः गन्धे प्रलीयते ॥

शब्दार्थ—

अन्ने	२. अन्न में	धाना	७. बीज
प्रलीयन्ते	३. लीन होता है	भूमौ	८. भूमि में
मर्त्यम्	१. प्राणियों का शरीर	प्रलीयन्ते	९. लीन होता है
अन्नम्	४. अन्न	भूमिः	१०. भूमि
धानासु	५. बीज में	गन्धे	११. गन्धतन्मात्रा में
लीयते ।	६. लीन होता है	प्रलीयते ॥	१२. लीन हो जाती है

श्लोकार्थ—प्राणियों का शरीर अन्न में लीन होता है। अन्नबीज में लीन होता है। बीज भूमि में लीन होता है। भूमि गन्धतन्मात्रा में लीन हो जाती है॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अप्सु प्रलीयते गन्ध आपश्च स्वगुणे रसे ।
लीयते ज्योतिषि रसो ज्योती रूपे प्रलीयते ॥२३॥

पदच्छेद—

अप्सु प्रलीयते गन्धः आपः च स्वगुणे रसे ।
लीयते ज्योतिषि रसः ज्योतिः रूपे प्रलीयते ॥

शब्दार्थ—

अप्सु	१. जल में	लीयते	९. लीन होता है
प्रलीयते	३. लीन होता है	ज्योतिषि	८. तेज में
गन्धः	२. गन्ध	रसः	७. रस
आपः च	४. और जल	ज्योतिः	१०. तेज
स्वगुणे	५. अपने गुण	रूपे	११. रूप में
रसे	६. रस में लीन होता है	प्रलीयते ॥	१२. लीन होता है

श्लोकार्थ—जल में गन्ध लीन होता है । और जल अपने गुण रस में लीन होता है । रस तेज में लीन होता है । तेज रूप में लीन होता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

रूपं वायौ स च स्पर्शे लीयते सोऽपि चाम्बरे ।
अम्बरं शब्दतन्मात्र इन्द्रियाणि स्वयोनिषु ॥२४॥

पदच्छेद—

रूपम् वायौ सः च स्पर्शे लीयते सः अपि च अम्बरे ।
अम्बरम् शब्द तन्मात्र इन्द्रियाणि स्व योनिषु ॥

शब्दार्थ—

रूपम्	१. रूप	अम्बरम्	७. आकाश
वायौ	२. वायु में	शब्द	८. शब्द
सः च स्पर्शे	३. और वायु स्पर्श में	तन्मात्र	९. तन्मात्रा में तथा
लीयते	६. लीन हो जाता है	इन्द्रियाणि	१०. इन्द्रियाँ
सः अपि	४. स्पर्श भी	स्व	११. अपने
च अम्बरे ।	५. आकाश में	योनिषु ॥	१२. कारण देवताओं और रजिस

श्लोकार्थ—रूप वायु में और वायु स्पर्श भी आकाश में लीन हो जाता है । आकाश शब्द तन्मात्रा में तथा इन्द्रियाँ अपने कारण देवताओं और राजस अहंकार में समा जाती हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

योनिर्वैकारिके सौम्य लीयते मनसीश्वरे ।
शब्दो भूतादिमप्येति भूतादिर्महति प्रभुः ॥२५॥

पदच्छेद—

योनिः वैकारिके सौम्य लीयते मनसि ईश्वरे ।
शब्दः भूतादिम् अप्येति भूतादिः महति प्रभुः ॥

शब्दार्थ—

योनिः	२.	राजस अहंकार	शब्दः	७.	शब्द तन्मात्रा
वैकारिके	४.	सात्त्विक अहंकार रूप	भूतादिम्	८.	तामस अहंकार में और
सौम्य	१.	हे सौम्य !	अप्येति	१२.	लीन हो जाता है
लीयते	६.	लीन हो जाता है	भूतादिः	१०.	त्रिविध अहंकार
मनसि	५.	मन में	महति	११.	महत्तत्त्व में
ईश्वरे ।	३.	अपने नियन्ता	प्रभुः ॥	९.	सारे जगत को मोहित करने में समर्थ

श्लोकार्थ—हे सौम्य ! राजस अहंकार अपने नियन्ता सात्त्विक अहंकार रूप मन में लीन हो जाता है। शब्द तन्मात्रा तामस अहंकार में और सारे जगत को मोहित करने में समर्थ त्रिविध अहंकार में महत्तत्त्व में लीन हो जाता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

स लीयते महान् स्वेषु गुणेषु गुणवत्तमः ।
तेऽव्यक्ते संप्रलीयन्ते तत् काले लीयतेऽव्यये ॥२६॥

पदच्छेद—

सः लीयते महान् स्वेषु गुणेषु गुणवत्तमः ।
ते अव्यक्ते संप्रलीयन्ते तत् काले लीयते अव्यये ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	ते	७.	वे गुण
लीयते	६.	लीन हो जाता है	अव्यक्ते	८.	अव्यक्त प्रकृति में
महान्	३.	महत्तत्त्व	संप्रलीयते	९.	लीन हो जाते हैं और
स्वेषु	४.	अपने कारण	तत्	१०.	वह प्रकृति
गुणेषु	५.	गुणों में	काले लीयते	१२.	काल में लीन हो जाती है
गुणवत्तमः ।	२.	ज्ञान-शक्ति और क्रिया-शक्ति-प्रधान	अव्यये ॥	११.	अपने प्रेरक अविनाशी

श्लोकार्थ—वह ज्ञान शक्ति और क्रिया शक्ति प्रधान महत्तत्त्व अपने कारण गुणों में लीन हो जाता वे गुण अव्यक्त प्रकृति में लीन हो जाते हैं। और वह प्रकृति अपने प्रेरक अविनाशीकाल में लीन हो जाती है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

कालो मायामये जीवे जीव आत्मनि मय्यजे ।
आत्मा केवल आत्मस्थो विकल्पापायलक्षणः ॥२७॥

पदच्छेद—

काल: मायामये जीवे जीवः आत्मनि मयि अजे ।
आत्मा केवल आत्मस्थः विकल्पाआपायलक्षणे ॥

शब्दार्थ—

कालः	१. काल	आत्मा	७.	आत्मा
मायामये	२. मायामय	केवल	८.	उपाधि रहित है और
जीवे	३. जीव में और	आत्मस्थः	९.	अपने स्वरूप में स्थित रहता है
जीवः	४. जीव	विकल्प	१०.	वह जगत् की सृष्टि और
आत्मनि	६. आत्मा में लीन हो जाता है	अपाय	११.	लय का
मयि अजे ।	५. मुझ अजन्मा	लक्षणे ॥	१२.	अधिष्ठान है

श्लोकार्थ—काल मायामय जीव में और जीव मुझ अजन्मा आत्मा में लीन हो जाता है । आत्मा उपाधि रहित है । और अपने स्वरूप में स्थित रहता है । वह जगद् की सृष्टि और लय का अधिष्ठान है ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

एवमन्वीक्षमाणस्य कथं वैकल्पिको भ्रमः ।
मनसो हृदि तिष्ठेत व्योम्नीवार्कोदये तमः ॥२८॥

पदच्छेद—

एवम् अन्वीक्षमाणस्य कथम् वैकल्पिकः भ्रमः ।
मनसः हृदि तिष्ठेत व्योम्नि इव उदये तमः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	मनसः	६.	उसके मन और
अन्वीक्ष-	२. विवेक दृष्टि	हृदि	७.	हृदय में
माणस्य	३. रखने वाले को	तिष्ठेत	९.	हो सकता है
कथम्	८. कैसे	व्योम्नि इव	१०.	जैसे आकाश में
वैकल्पिकः	४. प्रपञ्च का	उदये	११.	सूर्योदय होने पर
भ्रमः ।	५. भ्रम	तमः ॥	१२.	अन्धकार नहीं ठहर सकता

श्लोकार्थ—इस प्रकार विवेक दृष्टि रखने वाले को प्रपञ्च का भ्रम उसके मन और हृदय में कैसे हो सकता है । जैसे आकश में सूर्योदय होने पर अन्धकार नहीं ठहर सकता ॥

—६९—

एकोनत्रिंशः श्लोकः

एष सांख्यविधिः प्रोक्तः संशयग्रन्थिभेदनः ।
प्रतिलोमानुलोमाभ्यां परावरदृश मया ॥२९॥

पदच्छेद—

एषः सांख्य विधिः प्रोक्तः संशय ग्रन्थि भेदनः ।
प्रतिलोम अनुलोमाभ्याम् पर अवर दृशा मया ॥

शब्दार्थ—

एषः	५.	मैंने यह	प्रतिलोम	७.	प्रलय से सृष्टि तक की
सांख्य	८.	सांख्य	अनुलोमाभ्याम्	६.	सृष्टि से प्रलय और
विधिः प्रोक्तः	९.	विधि-बतलादी, इससे	पर	२.	कार्य और
संशय	१०.	सन्देह की	अवर	३.	कारण दोनों का
ग्रन्थि	११.	गाँठ	दृशा	४.	साक्षी हूँ
भेदनः ।	१२.	कट जाती है	मया ॥	१.	मैं

श्लोकार्थ—मैं कार्य और कारण दोनों का साक्षी हूँ । मैंने यह सृष्टि से प्रलय और प्रलय से सृष्टि तक की सांख्य विधि बतला दी, इससे सन्देह की गाँठ कट जाती है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां एकादश स्कन्धे चतुर्विंशः अध्यायः ॥२४॥

एकादशः स्कन्धः

पञ्चविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—गुणानामसम्मिश्राणां पुमान् येन यथा भवेत् ।
तन्मे पुरुषवर्येदमुपधारय शंसतः ॥१॥

पदच्छेद— गुणानाम् असमिश्राणाम् पुमान् येन यथा भवेत् ।
तत मे पुरुषवर्य इदम् उपधारय शंसतः ॥

शब्दार्थ—

गुणानाम्	३.	गुणों में से	तत	१०.	तुम
असमिश्राणाम्	२.	अलग-अलग	मे	११.	मुझसे
पुमान्	५.	मनुष्य	पुरुषवर्य	१.	पुरुष श्रेष्ठ
येन	४.	जिसके प्रभाव से	इदम्	८.	वह
यथा	६	जैसा	उपधारय	१२.	सावधानतया सुनो
भवेत् ।	७.	हो जाता है	शंसतः ॥	९.	बताते हुये

श्लोकार्थ—पुरुष श्रेष्ठ ! अलग-अलग गुणों में से जिसके प्रभाव से मनुष्य जैसा हो जाता है । वह तुम बताते हुये तुम मुझसे सावधानतया सुनो ।

द्वितीयः श्लोकः

शमो दमस्तितिक्षेक्षा तपः सत्यं दया स्मृतिः ।
तुष्टिस्त्यागोऽस्पृहा श्रद्धा ह्रीर्दयादिः स्वनिर्वृतिः ॥२॥

पदच्छेद— शमः दमः तितिक्षा ईक्षाः तपः सत्यम् दया स्मृतिः ।
तुष्टिः त्यागः अस्पृहा श्रद्धा ह्री दया आदि स्वनिर्वृति ॥

शब्दार्थ—

शमः दमः	१.	शम-दम मन और इन्द्रियों का निग्रह	तुष्टिः	७.	सन्तोष
तितिक्षा	२.	तितिक्षा-सहिष्णुता	त्यागः	८.	त्याग
ईक्षा	३.	ईक्षा-विवेक	अस्पृहा	९.	विषयों के प्रति अनिच्छा
तपः सत्यम्	४.	तप-सत्य	श्रद्धा ह्री	१०.	श्रद्धा-लज्जा
दया	५.	दया और	दया आदि	११.	दया आदि और
स्मृतिः ।	६.	स्मृति	स्वनिर्वृति ॥	१२.	आत्मरति सत्व गुण की वृत्तियाँ हैं

श्लोकार्थ—शम-दम मन और इन्द्रियों का निग्रह है । तितिक्षा, ईक्षा, सहिष्णुता और विवेक हैं । तप, सत्य, दया और स्मृति, सन्तोष त्याग, विषयों के प्रति अनिच्छा श्रद्धा, लज्जा, दया आदि और आत्मरति सत्व गुण की वृत्तियाँ हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

काम ईहा मदस्तृष्णा स्तम्भ आशीर्भिदा सुखम् ।
मदोत्साहो यशःप्रीतिर्हास्यं वीर्यं बलोद्यमः ॥३॥

पदच्छेद—

काम ईहा मदः तृष्णा स्तम्भः आशीर्भिदा सुखम् ।
मद उत्साहः यशः प्रीतिः हास्यम् वीर्यम् बल उद्यमः ॥

शब्दार्थ—

काम	१.	इच्छा	मद	८.	मद जनित
ईहा	२	प्रयत्न	उत्साह	९.	उत्साह
मदः	३.	घमंड	यशः प्रीतिः	१०.	यश में, प्रेम करना
तृष्णा	४.	असन्तोष	हास्यम्	११.	हास्य
स्तम्भः	५.	अकड़	वीर्यम्	१२.	पराक्रम और
आशीर्भिदा	६.	भेद बुद्धि	बल	१३.	बलपूर्वक
सुखम् ।	७.	सुख और	उद्यमः ॥	१४.	उद्योग करना (रजोगुण की वृत्तियाँ है)

श्लोकार्थ—इच्छा, प्रयत्न, घमंड, असन्तोष, अकड़, भेद बुद्धि-सुख, मद जनित उत्साह यश में प्रेम करना, हास्य, पराक्रम और बल पूर्वक उद्योग करना। रजोगुण की वृत्तियाँ हैं।

चतुर्थः श्लोकः

क्रोधो लोभोऽनृतं हिंसा याच्ञा दम्भः क्लमः कलिः ।
शोकमोहौ विषादार्ती निद्राऽऽशा भीरनुद्यमः ॥४॥

पदच्छेद—

क्रोध लोभ अनृतम् हिंसा याच्ञा दम्भः क्लमः कलिः ।
शोक मोहौ विषाद आर्ती निद्रा आशा भीः अनुद्यमः ॥

शब्दार्थ—

क्रोध लोभ	१.	क्रोध-लोभ	शोकः	७.	शोक
अनृतम्	२.	झूठ	मोहौ	८.	मोह
हिंसा	३.	हिंसा	विषाद अर्ती	९.	विषाद दीनता
याच्ञा	४.	याचना	निद्रा	१०.	निद्रा
दम्भः	५.	पाखण्ड	आशाभीः	११.	आशा-भय और
क्लमः कलिः ।	६.	श्रम-कलह	अनुद्यमः ॥	१२.	अकर्मण्यता तमोगुण की वृत्तियाँ है

श्लोकार्थ—क्रोध-लोभ-झूठ-हिंसा-याचना-पाखण्ड-श्रम-कलह-शोक-मोह विषाद दीनता-निद्रा आशा-और अकर्मण्यता तमो गुण की वृत्तियाँ हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

सत्त्वस्य रजसश्चैतास्तमसश्चानुपूर्वशः ।
वृत्तयो वर्णितप्रायाः सन्निपातमथो शृणु ॥५॥

पदच्छेद—

सत्त्वस्य रजसः च एताः तमसः च अनुपूर्वशः ।
वृत्तयः वर्णित प्रायाः सन्निपातम् अथो शृणुः ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वस्य	१.	सत्त्वगुण	वृत्तयः	६	वृत्तियों का
रजसः	३.	रजोगुण	वर्णित-	६.	वर्णन कर दिया
च	२.	और	प्रायाः	८.	प्रायः
एताः	४.	तथा	सन्निपातम्	११.	उनके मेल से होने वाली
तमसः च	५.	तमोगुण की	अथो	१०.	अब
अनुपूर्वशः ।	७.	ठीक-ठीक	शृणुः ॥	१२.	वर्णन सुनो

श्लोकार्थ—सत्त्वगुण और रजोगुण तथा तमोगुण की वृत्तियों का प्रायः ठीक-ठीक वर्णन कर दिया अब उनके मेल से होने वाली वृत्तियों का वर्णन सुनो ॥

षष्ठः श्लोकः

सन्निपातस्त्वहमिति ममेत्युद्धव या मतिः ।
व्यवहारः सन्निपातो मनोमात्रेन्द्रियासुभिः ॥६॥

पदच्छेद—

सन्निपातः तु अहम् इति मम इति उद्धव या मतिः ।
व्यवहारः सन्निपातः मनोमात्रे इन्द्रिय असुभिः ॥

शब्दार्थ—

सन्निपातः तु	६.	तीनों गुणों का मिश्रण है	व्यवहारः	११.	व्यवहार उदय होता है
अहम्	२.	मैं हूँ	सन्निपातः	७.	तीनों गुणों का
इति	३.	और यह	मनोमात्र	८.	मन शब्दादि विषय
ममइति	४.	मेरा है	इन्द्रिय	६.	इन्द्रियों और
उद्धव	१.	उद्धव जी !	असुभि ॥	१०.	प्राणों के कारण पूर्वोक्त वृत्तियों का
या मति ।	५.	इस प्रकार की बुद्धि में			

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! मैं हूँ और यह मेरा है, इस प्रकार की बुद्धि में तीनों गुणों का मिश्रण है। तीनों गुणों का मन-शब्दादि वितय इन्द्रियों और प्राणों के कारण पूर्वोक्त वृत्तियों का व्यवहार उदय होता है ॥

सप्तमः श्लोकः

धर्मे चार्थे च कामे च यदासौ परिनिष्ठितः।
गुणानां सन्निकर्षोऽयं श्रद्धारतिधनावहः ॥७॥

पदच्छेद—

धर्मे च अर्थे च कामे च यदा असौ परिनिष्ठितः।
गुणानाम् सन्निकर्षः अयम् श्रद्धा रति धन आवहः ॥

शब्दार्थ—

धर्मे च	३. धर्म	गुणानाम्	७. तब उसे गुणों का
अर्थे च	४. अर्थ और	सन्निकर्षः	८. सामीप्य प्राप्त होता है
कामे च	५. काम में	अयम्	९. वह
यदा	१. जब	श्रद्धा	१०. सत्त्व गुण से श्रद्धा
असौ	२. मनुष्य	रतिधन	११. रजोगुण से रति और तमोगुण से धन
परिनिष्ठितः।	६. संलग्न रहता है	आवहः ॥	१२. प्राप्त करता है

श्लोकार्थ—जब मनुष्य धर्म, अर्थ, काम में संलग्न रहता है। तब उसे गुणों का सामीप्य प्राप्त होता है। और वह सत्त्व गुण से श्रद्धा, रजोगुण से रति और तमोगुण से धन प्राप्त करता है॥

अष्टमः श्लोकः

प्रवृत्तिलक्षणे निष्ठा पुमान् यर्हि गृहाश्रमे।
स्वधर्मे चानुतिष्ठेत गुणानां समितिर्हि सा ॥८॥

पदच्छेद—

प्रवृत्ति लक्षणे निष्ठा पुमान् यर्हि गृह आश्रमे।
स्वधर्मे च अनुतिष्ठेत गुणानाम् समितिः हि सा ॥

शब्दार्थ—

प्रवृत्ति	२. सकाम	स्वधर्मे	५. अपने धर्म के
लक्षणे	३. कर्म और	च अनुतिष्ठेत	६. अनुष्ठान में
निष्ठा	७. अधिक प्रीति रखता है	गुणानाम्	९. गुणों का
पुमान् यर्हि	१. जब मनुष्य	समितिः	१०. संमिश्रण ही समझना चाहिये
गृह आश्रमे।	४. गृहस्थ आश्रम में	हि सा ॥	८. उस समय उसमें

श्लोकार्थ—जब मनुष्य सकाम-कर्म और गृहस्थ आश्रम में अपने धर्म के अनुष्ठान में अधिक प्रीति रखता है। उस समय उसमें गुणों का संमिश्रण ही समझना चाहिये॥

नवमः श्लोकः

पुरुषं सत्त्वसंयुक्तमनुमीयाच्छमादिभिः ।
कामादिभी रजोयुक्तं क्रोधाद्यैस्तमसा युतम् ॥९॥

पदच्छेद—

पुरुषम् सत्त्व संयुक्तम् अनुमीयात् क्षमा आदिभिः ।
कामादिभिः रजो युक्तम् क्रोध आद्यैः तमसा युतम् ॥

शब्दार्थ—

पुरुषम्	१.	पुरुष को	कामादिभिः	६.	कामना आदि के द्वारा
सत्त्व	४.	सत्त्व गुण से	रजो	७.	रजोगुण से
संयुक्तम्	५.	युक्त	युक्तम्	८.	युक्त और
अनुमीयात्	१२.	अनुमान करना चाहिये	क्रोध आद्यैः	९.	क्रोध-आदि के द्वारा
क्षमा	२.	क्षमा	तमसा	१०.	तमोगुण से
आदिभिः ।	३.	आदि के द्वारा	युतम् ॥	११.	युक्त

श्लोकार्थ—पुरुष को क्षमा आदि के द्वारा सत्त्व गुण से युक्त कामना आदि के द्वारा रजोगुण से युक्त और क्रोध आदि के द्वारा तमोगुण से युक्त अनुमान करना चाहिये ॥

दशमः श्लोकः

यदा भजति मां भक्त्या निरपेक्षः स्वकर्मभिः ।
तं सत्त्वप्रकृतिं विद्यात् पुरुषं स्त्रियमेव वा ॥१०॥

पदच्छेद—

यदा भजति माम् भक्त्या निरपेक्षः स्वकर्मभिः ।
तम् सत्त्व प्रकृतिम् विद्यात् पुरुषम् स्त्रियम् एव वा ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब कोई	तम्	७.	उसे
भजति	६.	भजन करता है	सत्त्व प्रकृतिम्	८.	सत्त्व प्रकृति का व्यक्ति
माम्	५.	मेरा	विद्यात्	९.	समझना चाहिये
भक्त्या	४.	भक्ति-भाव से	पुरुषम्	१०.	वह पुरुष
निरपेक्षः	३.	अपेक्षा न करके	स्त्रियम्	१२.	स्त्री ही क्यों न हो
स्वकर्मभिः ।	२.	अपने कर्मों की	एव वा ॥	११.	या

श्लोकार्थ—जब कोई अपने कर्मों की अपेक्षा न करके भक्ति-भाव से मेरा भजन करता है । उसे सत्त्व प्रकृति का व्यक्ति समझना चाहिये । वह पुरुष या स्त्री ही क्यों न हो ॥

एकादशः श्लोकः

यदा आशिष आशास्य मां भजेत स्वकर्मभिः ।
तं रजःप्रकृतिं विद्याद्धिंसामाशास्य तामसम् ॥११॥

पदच्छेद—

यदा आशिष आशास्य माम् भजेत स्वकर्मभिः ।
तम् रजः प्रकृतिम् विद्यात् हिंसाम् आशास्य तामसम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	१. जब कोई	तम्	७.	उसे
आशिष	२. भोग की	रजः	८.	रजो
आशास्य	३. कामना करके	प्रकृतिम् विद्यात्	९.	गुणी समझना चाहिये और
माम्	५. मेरा	हिंसाम्	१०.	जो हिंसा को
भजेत	६. भजन करता है तो	आशास्य	११.	लक्ष्य करके मेरा भजन करता है
स्वकर्मभिः ।	४. अपने कर्मों द्वारा	तामसम् ॥	१२.	उसे तमोगुणी समझना चाहिये

श्लोकार्थ—जब कोई भोग की कामना करके अपने कर्मों द्वारा मेरा भजन करता है, तो उसे रजोगुणी समझना चाहिये। और जो हिंसा को लक्ष्य करके मेरा भजन करता है, उसे तमोगुणी समझना चाहिये ॥

द्वादशः श्लोकः

सत्त्व रजस्तम इति गुणा जीवस्य नैव मे ।
चित्तजा यैस्तु भूतानां सज्जमानो निबध्यते ॥१२॥

पदच्छेद—

सत्त्वम् रजः तम इति गुणा जीवस्य न एव मे ।
चित्तजा यैः तु भूतानाम् सज्जमानः निबध्यते ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	१. सत्त्व	चित्तजा	८.	चित्त से उत्पन्न होते है
रजः तमः	२. रज-तम	यैः तु	९.	इनमें
इतिगुणा	३. ये तीनों गुण	भूतानाम्	७.	प्राणियों के
जीवस्य	४. जीवके हैं	सज्जमानः	१०.	आसक्त होता हुआ जीव
न एव मे	६. मेरे नहीं हैं ये	निबध्यते ॥	११.	बन्धन में पड़ जाता है

श्लोकार्थ—सत्त्व-रज-तम ये तीनों गुण जीव के हैं, मेरे नहीं हैं, ये प्राणियों के चित्त से उत्पन्न होते हैं इनमें आसक्त होता हुआ जीव बन्धन में पड़ जाता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

यदेतरौ जयेत् सत्त्वं भास्वरं विशदं शिवम् ।
तदा सुखेन युज्येत धर्मज्ञानादिभिः पुमान् ॥१३॥

पदच्छेद—

यदा इतरौ जयेत् सत्त्वम् भास्वरम् विशदम् शिवम् ।
तदा सुखेन युज्येत धर्म ज्ञान आदिभिः पुमान् ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	तदा	७.	तब
इतरौ	५.	अन्य (रजोगुण-तमोगुण को)	सुखेन	९.	सुख
जयेत्	६.	दबाकर बढ़ता है	युज्येत	१२.	युक्त हो जाता है
सत्त्वम्	४.	सत्त्व गुण	धर्मज्ञान	१०.	धर्म और ज्ञान
भास्वरम्	२.	प्रकाशक	आदिभिः	११.	आदि से
विशदम् शिवम् ।	३.	निर्मल और शान्त	पुमान् ॥	८.	पुरुष

श्लोकार्थ—जब प्रकाशक निर्मल और शान्त सत्त्व गुण अन्य रजोगुण-तमोगुण को दबाकर बढ़ता है । तब पुरुष सुख, धर्म और ज्ञान आदि से युक्त हो जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

यदा जयेत्तमः सत्त्वं रजः सङ्गं भिदा चलम् ।
तदा दुःखेन युज्येत कर्मणा यशसा श्रिया ॥१४॥

पदच्छेद—

यदा जयेत् तमः सत्त्वम् रजः सङ्गम् भिदा चलम् ।
तदा दुःखेन युज्येत कर्मणा यशसा श्रिया ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जब	तदा	७.	तब मनुष्य
जयेत	६.	दबाकर बढ़ता है	दुःखेन	८.	दुःख
तमः	४.	तमोगुण एवम्	युज्येत	१२.	युक्त होता है
सत्त्वम्	५.	सत्त्व गुण को	कर्मणा	९.	कर्म
रजः सङ्गम्	३.	आसक्ति से युक्त-रजोगुण	यशसा	१०.	यश और
भिदा-चलम् ।	२.	चंचलता, भेद बुद्धि और	श्रिया ॥	११.	लक्ष्मी से

श्लोकार्थ—जब चंचलता-भेद-बुद्धि और आसक्ति से युक्त, रजोगुण, तमोगुण एवम् सत्त्व गुण को दबाकर बढ़ता है । मनुष्य दुःख, कर्म-यश और लक्ष्मी से युक्त होता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यदा जयेद् रजः सत्त्वं तमो मूढं लपं जडम्।
युज्येत शोकमोहाभ्यां निद्रया हिंसयाऽऽशया ॥१५॥

पदच्छेद—

यदा जयेत् रजः सत्त्वम् तमः मूढम् लयम् जडम्।
युज्येत् शोक मोहाभ्याम् निद्रया हिंसया आशया ॥

शब्दार्थ—

यदा	१. जब	युज्येत्	१२. युक्त होता है
जयेत्	६. विजय कर लेता है	शोक	७. (तब मनुष्य) शोक
रजः सत्त्वम्	५. रजोगुण और सत्त्व गुण पर	मोहाभ्याम्	८. मोह
तमः	४. तमोगुण	निद्रया	९ निद्रा
मूढम्	२. मूढता	हिंसया	१०. हिंसा और
लयम् जडम्।	३. जडता और आलस्य से युक्त	आशया ॥	११. आशा से

श्लोकार्थ—जब मूढता, जडता और आलस्य से युक्त तमोगुण, रजोगुण और सत्त्वगुण पर विजय कर लेता है, तब मनुष्य शोक, मोह, निद्रा, हिंसा और आशा से युक्त होता है।

षोडशः श्लोकः

यदा चित्तं प्रसीदेत इन्द्रियाणां च निर्वृतिः।
देहेऽभयं मनोऽसङ्गं तत् सत्त्वं विद्धि मत्पदम् ॥१६॥

पदच्छेद—

यदा चित्तम् प्रसीदेत इन्द्रियाणाम् च निवृत्तिः।
देहे अभयम् मनः असङ्गम् तत् सत्त्वम् विद्धि मत् पदम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	१. जब	देहे अभयम्	७. देह निर्भय हो और
चित्तम्	१. चित्त	मनः असङ्गम्	८. मन में आसक्ति न हो
प्रसीदेत	३. प्रसन्न हो	तत्	९. तब
इन्द्रियाणाम्	५. इन्द्रियाँ	सत्त्वम्	१०. सत्त्वगुण की वृद्धि
च	४. और	विद्धि	११. समझनी चाहिये
निवृत्तिः।	६. शान्त हों	मत् पदम् ॥	१२. वह मेरी प्राप्ति का साधन है

श्लोकार्थ—जब चित्त प्रसन्न हों और इन्द्रियाँ शान्त हों देह निर्भय और मन में आसक्ति न हो तब सत्त्व गुण की वृद्धि समझनी चाहिये वह मेरी प्राप्ति का साधन है ॥

सप्तदशः श्लोकः

विकुर्वन् क्रियया चाधीरनिवृत्तिश्च चेतसाम् ।
गात्रास्वास्थ्यं मनो भ्रान्तं रज एतैर्निशामय ॥१७॥

पदच्छेद—

विकुर्वन् क्रियया च अधीर निवृत्तिः च चेतसाम् ।
गात्र अस्वास्थ्यम् मनः भ्रान्तम् रजः एतैः निशामय ॥

शब्दार्थ—

विकुर्वन्	२.	विकार युक्त	गात्र	७.	शरीर
क्रियया	१.	जब कर्मेन्द्रियाँ	अस्वास्थ्यम्	८.	अस्वास्थ तथा
च	५.	एवम्	मनः	९.	मन
अधीर	४.	अधीर	भ्रान्तम्	१०.	भ्रान्त हो जाय तो
निवृत्तिः च	६.	अशान्त हो जाय, और	रजः एतैः	११.	इन लक्षणों से रजोगुण की वृद्धि
चेतसाम् ।	३.	चित्त	निशामय ॥	१२.	समझनी चाहिये

श्लोकार्थ—जब कर्मेन्द्रियाँ विकार युक्त, चित्त अधीर एवम् अशान्त हो जाय, और शरीर अस्वस्थ मन भ्रान्त हो जाय, तो इन लक्षणों से रजोगुण की वृद्धि समझनी चाहिये ॥

अष्टादशः श्लोकः

सीदच्चित्तं विलीयेत चेतसो ग्रहणेऽक्षमम् ।
मनो नष्टं तमो ग्लानिस्तमस्तदुपधारय ॥१८॥

पदच्छेद—

सीदत् चितम् विलीयेत चेतसः ग्रहणे अक्षमम् ।
मनः नष्टं तमः ग्लानिः तमः तत् उपधारय ॥

शब्दार्थ—

सीदत्	५.	खिन्न होकर	मनः नष्टं	७.	मन सूनसान हो जाय
चित्तम्	१.	जब चित्त	तमः	८.	अज्ञान और
विलीयेत	६.	लीन होने लगे	ग्लानिः	९.	विषाद बढ़ जाँय तो
चेतसः	२.	शब्दादि विषयों को	तमः	१०.	तमोगुण की
ग्रहणे	३	ग्रहण करने में	तत्	११.	वृद्धि
अक्षमम् ।	४.	असमर्थ हो जाय और	उपधारय ॥	१२.	समझनी चाहिये

श्लोकार्थ—जब चित्त शब्दादि विषयों को ग्रहण करने में असमर्थ हो जाय, और खिन्न होकर लीन होने लगे, मन सून-सान हो जाय, अज्ञान और विषाद बढ़ जाँय तो तमोगुण की वृद्धि समझनी चाहिये ॥

एकोनविंशः श्लोकः

एधमाने गुणे सत्त्वे देवानां बलमेधते ।
असुराणां च रजसि तमस्युद्धव रक्षसाम् ॥१६॥

पदच्छेद—

एधमाने गुणे सत्त्वे देवानाम् बलम् ऐधते ।
असुराणाम् च रजसि तमसि उद्धव रक्षसाम् ॥

शब्दार्थ—

एधमाने	४.	बढ़ने पर	असुराणाम्	९.	असुरों का
गुणे	३.	गुण के	च	१०.	और
सत्त्वे	२.	सत्त्व	रजसि	८.	रजोगुण की वृद्धि होने पर
देवानाम्	५.	देवताओं का	तमसि	११.	तमोगुण के बढ़ने पर
बलम्	६.	बल	उद्धव	१.	उद्धव !
ऐधते ।	७.	बढ़ जाता है	रक्षसाम् ॥	१२.	राक्षसों का बल बढ़ जाता है ।

श्लोकार्थ—उद्धव ! सत्त्व गुण के बढ़ने पर देवताओं का बल बढ़ जाता है । रजोगुण की वृद्धि होने पर असुरों का और तमोगुण की वृद्धि होने पर राक्षसों का बल बढ़ जाता है ॥

विंशः श्लोकः

सत्त्वाज्जागरणं विद्याद् रजसा स्वप्नमादिशेत् ।
प्रस्वापं तमसा जन्तोस्तुरीयं त्रिषु सन्ततम् ॥२०॥

पदच्छेद—

सत्त्वात् जागरणम् विद्यात् रजसा स्वप्नम् आदिशेत् ।
प्रस्वापम् तपसा जन्तोः तुरीयम् त्रिषु सन्ततम् ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वात्	१.	सत्त्व गुण से	प्रस्वापम्	९	सुषुप्ति या निद्रावस्था जानना चाहिये
जागरणम्	२.	जाग्रत अवस्था	तपसा	७.	तमोगुण से
विद्यात्	३.	जाने	जन्तोः	८.	प्राणियों की
रजसा	४.	रजोगुण से	तुरीयम्	१०.	तुरीय अवस्था
स्वप्नम्	५.	स्वप्नावस्था	त्रिषु	११.	इन तीनों में
आदिशेत् ।	६.	बताई गई है तथा	सन्ततम् ॥	१२.	एक सी व्याप्त रहती है

श्लोकार्थ—सत्त्व गुण से जाग्रत अवस्था जाने, रजोगुण से स्वप्नावस्था बताई गई है, तथा तमोगुण से प्राणियों को सुषुप्ति अवस्था यानिद्रा अवस्था जानना चाहिये । तुरीय अवस्था इन तीनों में एक सी व्याप्त रहती है ॥

एकविंशः श्लोकः

उपर्युपरि गच्छन्ति सत्त्वेन ब्राह्मणा जनाः ।
तमसाधोऽध आमुख्याद् रजसान्तरचारिणः ॥२१॥

पदच्छेद—

उपरिउपरि गच्छन्ति सत्त्वेन ब्राह्मणा जनाः ।
तमसाः अधः आमुख्याद् रजसा अन्तरचारिणः ॥

शब्दार्थ—

उपरिउपरि	४.	उत्तरोत्तर ऊपर के लोकों के	तमसा	६.	तमोगुण से जीव
गच्छन्ति	५.	जाते हैं	अधः	७.	नीचे से नीचे जाते हैं और
सत्त्वेन	३.	सत्त्व गुण के द्वारा	आमुख्याद्	९.	ऊपर से
ब्राह्मणा	१.	ब्रह्मवेत्ता	रजसा	८.	रजोगुण से लोग
जनाः ।	२.	लोग	अन्तरचारिणः ॥	१०.	नीचे के मध्य अर्थात् मनुष्य शरीर प्राप्त करते

श्लोकार्थ—ब्रह्मवेत्ता लोग सत्त्वगुण के द्वारा उत्तरोत्तर ऊपर के लोकों में जाते हैं। तमोगुण से जीव नीचे से नीचे जाते है, और रजोगुण से लोग ऊपर से नीचे के अर्थात् मध्य अर्थात् मनुष्य शरीर प्राप्त करते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

सत्त्वे प्रलीनाः स्वर्यान्ति नरलोकं रजोलयाः ।
तमोलयास्तु निरयं यान्ति मामेव निर्गुणाः ॥२२॥

पदच्छेद—

सत्त्वे प्रलीनाः स्वर्यान्ति नरलोकम् रजोलयाः ।
तमोलयाः तु निरयम् यान्ति माम् एव निर्गुणाः ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वे	१.	सत्त्व गुण की वृद्धि के समय	तमोलयाः	७.	तमोगुण की वृद्धि के समय
प्रलीनाः	२.	मृत्यु होने पर जीव	तु	८.	मृत्यु होने पर
स्वर्यान्ति	३.	स्वर्ग में जाते हैं	निरयम्	९.	नरक
नरलोकम्	६.	मनुष्य लोक की प्राप्ति होती है	यान्ति	१०.	जाना पड़ता है
रजो	४.	रजोगुण की वृद्धि के समय	माम् एव	१२.	मुझे ही प्राप्त होता है
लयाः ।	५	मृत्यु होने पर	निर्गुणाः ॥	११.	किन्तु त्रिगुणातीत होने पर पुरुष

श्लोकार्थ—सत्त्व गुण की वृद्धि के समय मृत्यु होने पर जीव स्वर्ग जाते हैं, रजोगुण की वृद्धि के समय मृत्यु होने पर मनुष्य लोक की प्राप्ति होती है। और तमोगुण की वृद्धि के समय मृत्यु होने पर नरक जाना पड़ता है। किन्तु त्रिगुणातीत होने पर पुरुष मुझे ही प्राप्त होता है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

मदर्पणं निष्फलं वा सात्त्विकं निजकर्म तत् ।
राजसं फलसङ्कल्पं हिंसाप्रायादि तामसम् ॥२३॥

पदच्छेद—

मद् अर्पणम् निष्फलम् वा सात्त्विकम् निजकर्म तत् ।
राजसं फल सङ्कल्पं हिंसा प्रायादि तामसम् ॥

शब्दार्थ—

मद्	१.	मुझे	राजसम्	९.	राजस कहलाता है और
अर्पणम्	२.	समर्पित करके	फल	६.	फल की
निष्फलम् वा	३.	निष्कामभाव से अथवा	सङ्कल्पं	७.	कामना वाला
सात्त्विकम्	५.	सात्त्विक होता है	हिंसा	१०.	हिंसा
निजकर्म	४.	अपना कर्म किया जाने वाला	प्रायादि	११.	बहुल कर्म
तत् ।	८.	वह कर्म	तामसम् ॥	१२.	तामस कहलाता है

श्लोकार्थ—मुझे समर्पित करके निष्काम भाव से किया जाने वाला अपना कर्म सात्त्विक होता है। फल की कामना वाला वह कर्म राजस कहलाता है, और हिंसा बहुल कर्म कहलाता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

कैवल्यं सात्त्विकं ज्ञानं रजो वैकल्पिकं च यत् ।
प्राकृतं तामसं ज्ञानं मन्निष्ठं निर्गुणं स्मृतम् ॥२४॥

पदच्छेद—

कैवल्यम् सात्त्विकम् ज्ञानम् रजः वैकल्पिकम् च यत् ।
प्राकृतम् तामसम् ज्ञानम् मत् निष्ठम् निर्गुणम् स्मृतम् ॥

शब्दार्थ—

कैवल्यम्	१.	शुद्ध आत्मा का	प्राकृतम्	७.	उसे शरीर समझना
सात्त्विकम्	३.	सात्त्विक है	तामसम्	८.	तामस
ज्ञानम्	२.	ज्ञान	ज्ञानम्	९.	ज्ञान है
रजः	६.	ज्ञान राजस है	मत् निष्ठम्	१२.	मेरे स्वरूप का वास्तविक ज्ञान
वैकल्पिकम्	४	उसको विकल्प से कर्ता-भोक्ता	निर्गुणम्	११.	निर्गुण
च यत् ।	५.	समझने का	स्मृतम् ॥	१२.	कहा गया है

श्लोकार्थ—शुद्ध आत्मा का ज्ञान सात्त्विक है, उसको विकल्प से कर्ता-भोक्ता समझने का ज्ञान राजस है। उसे शरीर समझना तामस ज्ञान है। मेरे स्वरूप का वास्तविक ज्ञान निर्गुण कहा गया है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

वनं तु सात्त्विको वासो ग्रामो राजस उच्यते ।
तामसं द्यूतसदनं मन्निकेतं तु निर्गुणम् ॥२५॥

पदच्छेद—

वनम् तु सात्त्विकः वासः ग्रामः राजस उच्यते ।
तामसम् द्यूत सदनम् मत् निकेतम् तु निर्गुणम् ॥

शब्दार्थ—

वनम् तु	१.	वन में रहना	तामसम्	९.	तामस है
सात्त्विकः	२.	सात्त्विक	द्यूत	७.	जुआ
वासः	४.	निवास करना	सदनम्	८.	घर में रहना
ग्रामः	३.	गाँव में	मत्	१०.	मेरे
राजस	५.	राजस	निकेतम् तु	११.	मन्दिर में निवास करना
उच्यते ।	६.	कहलाता है, और	निर्गुणम् ॥	१२.	निर्गुण है

श्लोकार्थ—वन में रहना सात्त्विक, गाँव में निवास करना राजस कहलाता है। और जुआ घर में रहना तामस है, मेरे मन्दिर में निवास करना निर्गुण है ॥

षट्विंशः श्लोकः

सात्त्विकः कारकोऽसङ्गी रागान्धो राजसः स्मृतः ।
तामसः स्मृतिविभ्रष्टो निर्गुणो मदपाश्रयः ॥२६॥

पदच्छेद—

सात्त्विक कारकः असङ्गी रागान्धः राजसः स्मृतः ।
तामसः स्मृतिः विभ्रष्टो निर्गुणो मद्पाश्रयः ॥

शब्दार्थ—

सात्त्विक	२.	सात्त्विक	तामसः	८.	तामसिक
कारकः	३.	कर्म करने वाला	स्मृतिः	६.	तथा स्मृति
असङ्गी	१.	अनासक्त होकर	विभ्रष्टः	७.	भ्रष्ट
रागान्धः	४.	रागान्ध होकर कर्म करने वाला	निर्गुणः	१२.	निर्गुण कर्ता है
राजसः	५.	राजसिक	मत्	१०.	मेरी
स्मृतः ।	९.	कहा गया है	अपाश्रयः ॥	११.	शरण में रह कर कर्म करने वाला

श्लोकार्थ—अनासक्त होकर सात्त्विक कर्म करने वाला रागान्ध होकर कर्म करने वाला राजसिक तथा स्मृति भ्रष्ट तामसिक कहा गया है। मेरी शरण में रह कर कर्म करने वाला निर्गुण कहलाता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सात्त्विक्याध्यात्मिकी श्रद्धा कर्मश्रद्धा तु राजसी ।
तामस्यधर्मे या श्रद्धा मत्सेवायां तु निर्गुणा ॥२७॥

पदच्छेद—

सात्त्विकया आध्यात्मिकी श्रद्धा कर्मश्रद्धा तु निर्गुणा ।
तामसी अधर्मे या श्रद्धा मत् सेवायाम् तु निर्गुणा ॥

शब्दार्थ—

सात्त्विकया	३. सात्त्विकी है		तामसी	८. वह तामसी है
अध्यात्मिकी	१. आत्मज्ञान सम्बन्धी		अधर्मे	६. और अधर्म में होने वाली
श्रद्धा	२. श्रद्धा		या श्रद्धा	७. जो श्रद्धा है
कर्म श्रद्धा तु	४. कर्म विषयक श्रद्धा		मत् सेवयाम्	९. किन्तु मेरी सेवा में जो श्रद्धा है
राजसी ।	५. राजस है		तु निर्गुणा ॥	१०. वह निर्गुण है

श्लोकार्थ—आत्मज्ञान सम्बन्धी श्रद्धा सात्त्विकी है, कर्म विषयक श्रद्धा राजस है । और अधर्म में होने वाली जो श्रद्धा है वह तामसी है । किन्तु मेरी सेवा में जो श्रद्धा है वह निर्गुण है ॥

अष्टविंशः श्लोकः

पथ्यं पूतमनायस्तमाहार्यं सात्त्विकं स्मृतम् ।
राजसं चेन्द्रियप्रेष्ठं तामसं चार्तिदाशुचि ॥२८॥

पदच्छेद—

पथ्यम् पूतम् अनायस्तम् आहार्यम् सात्त्विकम् स्मृतम् ।
राजसम् च इन्द्रिय प्रेष्ठम् तामसम् च आर्तिदं अशुचि ॥

शब्दार्थ—

पथ्यम्	१. आरोग्यदायक		राजसम्	९. राजस है
पूतम्	२. पवित्र		च इन्द्रिय	७. इन्द्रियों का
अनायस्तम्	३. अनायास प्राप्त		प्रेष्ठम्	८. अत्यन्त प्रिय भोजन
आहार्यम्	४. भोजन		तामसम्	१२. तामस है
सात्त्विकम्	५. सात्त्विक		च आर्तिदं	१०. और दुःखदायी
स्मृतम् ।	६. कहा गया है		अशुचि ॥	११. एवम् अपवित्र भोजन

श्लोकार्थ—आरोग्यदायक पवित्र आनायास प्राप्त भोजन सात्त्विक कहा गया है । इन्द्रियों का अत्यन्त प्रिय भोजन राजस है । और दुःखदायी एवम् अपवित्र भोजन तामस है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

सात्त्विकं सुखमात्मोत्थं विषयोत्थं तु राजसम् ।
तामसं मोहदैन्योत्थं निर्गुणं मदपाश्रयम् ॥२९॥

पदच्छेद—

सात्त्विकम् सुखम् आत्म उत्थम् विषय उत्थम् तुराजसम् ।
तामसम् मोह दैन्य उत्थम् निर्गुणम् मत् अपाश्रयम् ॥

शब्दार्थ—

सात्त्विकम्	३.	सात्त्विक है	तामसम्	९.	तामस है
सुखम्	२.	सुख	मोह दैन्यः	७.	अज्ञान और दीनता से
आत्म उत्थम्	१.	आत्म चिन्तन से प्राप्त होने वाला	उत्थम्	८	प्राप्त होने वाला सुख
विषय	४.	विषयों से	निर्गुणम्	१२.	गुणातीत एवम् आप्राकृत है
उत्थम्	५.	प्राप्त होने वाला सुख	मत्	१०.	और मुझसे
तुराजसम् ।	६.	राजस है	अपाश्रयम् ॥	११.	प्राप्त होने वाला सुख

श्लोकार्थ—आत्मचिन्तन से प्राप्त होने वाला सुख सात्त्विक है । विषयों से प्राप्त होने वाला सुख राजस है अज्ञान और दीनता से प्राप्त होने वाला सुख तामस है । और मुझसे प्राप्त होने वाला सुख गुणातीत एवम् आप्राकृत है ॥

त्रिंशः श्लोकः

द्रव्यं देशः फलं कालो ज्ञानं कर्म च कारकः ।
श्रद्धावस्थाऽऽकृतिर्निष्ठा त्रैगुण्यः सर्व एव हि ॥३०॥

पदच्छेद -

द्रव्यम् देशः फलम् कालः ज्ञानम् कर्म च कारकः ।
श्रद्धा अवस्था आकृतिः निष्ठा त्रैगुण्यः सर्वः एव हि ॥

शब्दार्थ—

द्रव्यम्	१.	द्रव्य (वस्तु)	श्रद्धा	७.	श्रद्धा
देशः	२.	देश (स्थान)	अवस्था	८.	अवस्था
फलम्	३.	फल	आकृतिः	९.	आकृतिः और
कालः	४.	काल	निष्ठा	१०.	निष्ठा
ज्ञानम् कर्म	५.	ज्ञान-कर्म	त्रैगुण्यः	१२.	त्रिगुणात्मक है
च कारकः ।	६.	कर्ता	सर्वं एवहिः ॥	११.	सब ही

श्लोकार्थ—द्रव्य, (वस्तु) देश (स्थान) फल, काल, ज्ञान-कर्म, कर्ता, श्रद्धा, अवस्था, आकृति और निष्ठा सब ही त्रिगुणात्मक है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

सर्वे गुणमया भावाः पुरुषाऽव्यक्ताधिष्ठिताः ।
दृष्टं श्रुतमनुध्यातं बुद्ध्या वा पुरुषर्षभ ॥३१॥

पदच्छेद— सर्वे गुणमया भावाः पुरुषा अव्यक्त अधिष्ठिताः ।
दृष्टं श्रुतम् अनुध्यातम् बुद्धया वा पुरुष ऋषभ ॥

शब्दार्थ—

सर्वे	५.	सभी	दृष्टम्	८.	वे चाहे देखे गये हैं
गुणमया	७.	गुणमय है	श्रुतम्	९.	सुने गये हैं
भावाः	६.	भाव	अनुध्यातम्	११.	सोचे विचारे गये हैं
पुरुष	२.	पुरुष और	बुद्धया वा	१०.	अथवा बुद्धि के द्वारा
अव्यक्त	३.	प्रकृति के	पुरुषर्षभ ॥	१.	हे पुरुष श्रेष्ठ !
अधिष्ठिताः ।	४.	आश्रित			

श्लोकार्थ—हे पुरुष श्रेष्ठ ! और प्रकृति के आश्रित सभी भाव गुणमय है । वे चाहे देखे गये हैं । सुने गये हैं अथवा बुद्धि के द्वारा सोचे-विचारे गये हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

एताः संसृतयः पुंसो गुणकर्मनिबन्धनाः ।
येनेमे निर्जिताः सौम्य गुणा जीवेन चित्तजाः ।
भक्तियोगेन मन्निष्ठो मद्भावाय प्रपद्यते ॥३२॥

पदच्छेद— एताः संसृतयः पुंसः गुणकर्म निबन्धनाः ।
येन इमे निर्जिताः सौम्य गुणाः जीवेन चित्तजाः ।
भक्ति योगेन मत् निष्ठः मत् भावाय प्रपद्यते ॥

शब्दार्थ—

एताः	२.	ये	गुणाः	१२.	गुणों पर
संसृतया	३.	संसार की योनियाँ अथवा	जीवेन	८.	जीव ने
पुंसः	४.	मनुष्य को	चित्तजाः	१०.	चित्त से उत्पन्न
गुणकर्म	५.	गुणों और कर्मों के	भक्ति योगेन	९.	भक्ति योग के द्वारा
निबन्धनाः ।	६.	अनुसार प्राप्त होती हैं	मत् निष्ठा	१४.	वह मुझमें निष्ठा रखकर
येन्	७.	जिस	मत्	१५.	मेरे
इमे	११.	इन	भावाय	१६.	भाव को
निर्जिता	१३.	विजय प्राप्त कर लिया है	प्रपद्यते ॥	१७.	प्राप्त कर लेता है
सौम्य ।	१.	हे सौम्य !			

श्लोकार्थ—हे सौम्य ! ये संसार की योनियाँ अथवा गतियाँ मनुष्य के गुणों और कर्मों के अनुसार प्राप्त होती हैं जिस जीव ने भक्ति योग के द्वारा चित्त से उत्पन्न इन पर गुणों पर विजय प्राप्त कर लिया है । वह मुझमें निष्ठा रख कर मेरे भाव को प्राप्त कर लेता है ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तस्माद् देहमिमं लब्ध्वा ज्ञानविज्ञानसम्भवम् ।
गुणसङ्गं विनिर्धूय मां भजन्तु विचक्षणाः ॥३३॥

पदच्छेद—

तस्मात् देहम् इमम् लब्ध्वा ज्ञान विज्ञान सम्भवम् ।
गुण सङ्गं विनिर्धूय माम् भजन्तु विचक्षणाः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	सम्भवम्	४.	उत्पत्ति स्थान
देहम्	६	शरीर को	गुण सङ्गं	९.	गुणों की आसक्ति
इमम्	५.	इस	विनिर्धूय	१०.	हटाकर
लब्ध्वा	७.	पाकर	माम्	११.	मेरा
ज्ञान	२.	ज्ञान और	भजन्तु	१२.	भजन करें
विज्ञान ।	३.	विज्ञान के	विचक्षणाः ॥	८.	बुद्धिमान पुरुष

श्लोकार्थ—इसलिये ज्ञान और विज्ञान के उत्पत्ति स्थान इस शरीर को पाकर बुद्धिमान पुरुष गुणों की आसक्ति हटाकर मेरा भजन करें ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

निःसङ्गो मां भजेद् विद्वानप्रमत्तो जितेन्द्रियः ।
रजस्तमश्चाभिजयेत् सत्त्वसंसेवया मुनिः ॥३४॥

पदच्छेद—

निःसङ्गो मां भजेद् विद्वान् अप्रमत्तः जितेन्द्रियः ।
रजः तमः च चाभिजयेत् सत्त्व संसेवया मुनिः ॥

शब्दार्थ—

निःसङ्गः	५.	एवम् आसक्ति रहित होकर	रजः	८.	रजोगुण और
माम्	११.	मेरा	तमः च	९.	तमोगुण को
भजेत्	१२.	भजन करे	अभिजयेत्	१०.	जीत ले तथा
विद्वान्	१.	विद्वान	सत्त्व	६.	सत्त्व गुण के
अप्रमत्तः	३.	सावधान	संसेवया	७.	सेवन से
जितेन्द्रियः ।	४.	जितेन्द्रिय	मुनिः ॥	२.	मुनि

श्लोकार्थ—विद्वान् मुनि सावधान जितेन्द्रिय एवम् आसक्ति रहित होकर सत्त्व गुण के सेवन से रजोगुण को जीत ले तथा मेरा भजन करे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

सत्त्वं चाभिजयेद् युक्तो नैरपेक्ष्येण शान्तधीः ।
सम्पद्यते गुणैर्मुक्तो जीवो जीवं विहाय माम् ॥३५॥

पदच्छेद—

सत्त्वम् च अभिजयेद् युक्तः नैरपेक्ष्येण शान्तधीः ।
सम्पद्यते गुणैः मुक्तः जीवः जीवम् विहाय माम् ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	५.	सत्त्व गुण को	सम्पद्यते	१२.	प्राप्त कर लेता है
च अभिजयेत्	६.	जीत ले	गुणैः	७.	इस प्रकार गुणों से
युक्तः	१.	योग-युक्ति से	मुक्तः	८.	मुक्त होकर
नैरपेक्ष्येण	४.	निरपेक्षता के द्वारा	जीवः जीवम्	९.	जीव अपने जीवभाव को
शान्त	३.	शान्त करके	विहाय	१०.	छोड़कर
धीः ।	२.	बुद्धि को	माम् ॥	११.	मुझे

श्लोकार्थ—योग-युक्ति से बुद्धि को शान्त करके निरपेक्षता के द्वारा सत्त्व गुण को जीत ले । इस प्रकार गुणों से मुक्त होकर जीव अपने जीव भाव को छोड़कर मुझे प्राप्त कर लेता है ।

षट्त्रिंशः श्लोकः

जीवो जीवविनिर्मुक्तो गुणैश्चाशयसम्भवैः ।
मयैव ब्रह्मणा पूर्णो न बहिर्नान्तरश्चरेत् ॥३६॥

पदच्छेद—

जीवः जीव विनिर्मुक्तः गुणैः च आशय सम्भवैः ।
मया एव ब्रह्मणा पूर्णः न बहिः न अन्तरः चरेत् ॥

शब्दार्थ—

जीवः	१.	जीव	मया एव	७.	मुझ में ही
जीव	२.	जीव भाव से तथा	ब्रह्मणा	८.	ब्रह्म-भाव से
विनिर्मुक्तः च	६.	मुक्त होकर	पूर्णः	९.	पूर्ण होकर
गुणैः च	५.	गुणों से	न बहिः	१०.	न तो बाह्य
आशय	३.	अन्तः करण में	न अन्तरः	११.	और न आन्तरिक विषयों में
सम्भवैः ।	४.	उत्पन्न होने वाले	चरेत् ॥	१२.	विचरण करता है

श्लोकार्थ—जीव-जीवभाव से तथा अन्तःकरण में उत्पन्न होने वाले गुणों से मुक्त होकर न मुझमें ही ब्रह्म भाव से पूर्ण होकर न तो बाह्य और न आन्तरिक विषयों में विचरण करता है ॥

श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां एकादश स्कन्धे पञ्चविंशोऽध्यायः ॥२५॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
एकादशः स्कन्धः
षड्विंशः अध्यायः
प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—मल्लक्षणमिमं कायं लब्ध्वा मद्धर्म आस्थितः ।
आनन्दं परमात्मानमात्मस्थं समुपैति माम् ॥१॥

पदच्छेद— मत् लक्षणम् इमम् कायम् लब्ध्वा मद्धर्म आस्थितः ।
आनन्दम् परमात्मानम् आत्मस्थम् सम् उपैति माम् ॥

शब्दार्थ—

मत्	१.	मेरे	आनन्दम्	१०.	आनन्द स्वरूप
लक्षणम्	२.	स्वरूप ज्ञान की प्राप्ति के साधन	परमात्मानम्	११.	परमात्मा को
इमम् कायम्	३.	इस शरीर को	आत्म	७.	वह अन्तःकरण में
लब्ध्वा	४.	पाकर	स्थम्	८.	स्थित
मद्धर्म	५.	जो मनुष्य मेरी भक्ति	समउपैति	१२.	प्राप्त हो जाता है
आस्थितः ।	६.	करता है	माम् ॥	९.	मुझ

श्लोकार्थ—मेरे स्वरूप ज्ञान की प्राप्ति के साधन इस शरीर को पाकर जो मनुष्य मेरी भक्ति करता है वह अन्तःकरण में स्थित मुझ आनन्द स्वरूप परमात्मा को प्राप्त हो जाता है ॥

द्वितीयः श्लोकः

गुणमय्या जीवयोन्या विमुक्तो ज्ञाननिष्ठया ।
गुणेषु मायामात्रेषु दृश्यमानेष्ववस्तुतः ।
वर्तमानोऽपि न पुमान् युज्यतेऽवस्तुभिर्गुणैः ॥२॥

पदच्छेद — गुणमय्या जीव योन्या विमुक्तः ज्ञान निष्ठया ।
गुणेषु मायामात्रेषु दृश्यमानेषु अवस्तुतः ॥
वर्तमानः अपि न पुमान् युज्यते अवस्तुभिः गुणैः ॥

शब्दार्थ—

गुणमय्या	२.	त्रिगुणमयी हैं	अवस्तुतः	८.	वे वास्तविक नहीं हैं
जीवयोन्या	१.	जीवों की सभी योनियाँ	वर्तमानः	९.	ज्ञान होने पर उनसे व्यवहार
विमुक्तः	४.	उनसे मुक्त हो सकता है	अपि	१०.	करने पर भी
ज्ञाननिष्ठया ।	३.	जीव ज्ञान निष्ठा के द्वारा	न पुमान्	१३.	पुरुष नहीं
गुणेषु	६.	सत्त्वादि गुण	युज्यते	१४.	बंधता है
मायामात्रेषु	७.	माया मात्र हैं	अवस्तुभिः	११.	उन वस्तुओं के
दृश्यमानेषु	५.	दिखाई देने वाले	गुणैः ॥	१२.	गुणों से

श्लोकार्थ—जीवों की सभी योनियाँ त्रिगुणमयी हैं । जीव ज्ञान निष्ठा के द्वारा उनसे मुक्त हो सकता है । दिखाई देने वाले सत्त्वादि गुण मायामात्र हैं । वे वास्तविक नहीं हैं । ज्ञान होने पर उनसे व्यवहार करने पर भी उन वस्तुओं के गुणों से पुरुष नहीं बंधता है ॥

तृतीयः श्लोकः

सङ्गं न कुर्यादसतां शिश्नोदरतृपां क्वचित् ।
तस्यानुगस्तमस्यन्धे पतत्यन्धानुगान्धवत् ॥३॥

पदच्छेद—

सङ्गम् न कुर्यात् असताम् शिश्नोदर तृपाम् क्वचित् ।
तस्य अनुगः तमसि अन्धे पतति अन्ध अनुग अन्धवत् ॥

शब्दार्थ—

सङ्गम्	५.	सङ्ग	**तस्य**	७.	क्योंकि उनका
न कुर्यात्	६.	नहीं करना चाहिये	**अनुगः**	८.	अनुगमन करने वाले पुरुष
असताम्	३.	असत् पुरुषों का	**तमसिअन्धे**	११.	घोर अन्धकार में
शिश्नोदर	१.	विषयों का सेवन और उदर	**पतति**	१२	भटकते हैं
तृपाम्	२	पोषण करने वाले	**अन्धअनुग**	९.	अन्धे के सहारे चलने वाले
क्वचित् ।	४.	कभी भी	**अन्धवत् ॥**	१०.	अन्धे के समान

श्लोकार्थ—विषयों का सेवन और उदर पोषण करने वाले असत् पुरुषों का कभी भी सङ्ग नहीं करना चाहिये । क्योंकि उनका अनुगमन करने वाले पुरुष अन्धे के सहारे चलने वाले अन्धे के समान घोर अन्धकार में भटकते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

ऐलः सम्राडिमां गाथामगायत बृहच्छ्रवाः ।
उर्वशीविरहान् मुह्यन् निर्विण्णः शोकसंयमे ॥४॥

पदच्छेद—

ऐलः सम्राडिमाम् गाथाम् गायत बृहच्छ्रवाः ।
उर्वशी विरहान् मुह्यन् निर्विण्णः शोक संयमे ॥

शब्दार्थ—

ऐलः	२.	इलानन्दन	**उर्वशी**	४.	उर्वशी के
सम्राडिमाम्	३.	सम्राट पुरुरवा ने	**विरहान्**	५.	विरह से
गाथाम्	९.	इस गाथा को	**मुह्यन्**	६.	बेसुध होने के बाद
गायत	१०.	गाया	**निर्विण्णः**	८.	वैराग्य हो जाने पर
बृहच्छ्रवाः ।	१.	परमयशस्वी	**शोकसंयमे ॥**	७.	पीछे शोक हट जाने और

श्लोकार्थ—परम यशस्वी इलानन्दन सम्राट पुरुरवा ने उर्वशी के विरह से बेसुध होने के बाद पीछे शोक हट जाने और वैराग्य हो जाने पर इस गाथा को गाया ॥

पञ्चमः श्लोकः

त्यक्त्वाऽऽत्मानं व्रजन्तीं तां नग्न उन्मत्तवन्नृपः ।
विलपन्नन्वगाज्जाये घोरे तिष्ठेति विक्लवः ॥५॥

पदच्छेद—

त्यक्त्वा आत्मानम् व्रजन्तीम् ताम् नग्न उन्मत्तवत् नृपः ।
विलपन्न अन्वगात् जाये घोरे तिष्ठेति विक्लवः ॥

शब्दार्थ—

त्यक्त्वा	५. छोड़कर	विलपन्न	६. रोते हुये
आत्मानम्	४. अपने को	अन्वगात्	१० दौड़ने और कहने लगा
व्रजन्तीम्	६. भागती हुई	जाये	११. देवि !
ताम्	७ उर्वशी के पीछे	घोरे	१२. निष्ठुर हृदये
नग्न	२. नग्न होकर	तिष्ठेति	१३. थोड़ी देर ठहर जा
उन्मत्तवत्	३. पागल के समान	विक्लवः ॥	८. अत्यन्त विह्वल होकर
नृपः ।	१. राजा पुरुवा		

श्लोकार्थ—राजा पुरुवा नग्न होकर पागल के समान अपने को छोड़कर भागती हुई उर्वशी के पीछे अत्यन्त विह्वल होकर रोते हुये दौड़ने और कहने लगा । देवि ! निष्ठुर हृदये थोड़ी देर ठहर जा ॥

षष्ठः श्लोकः

कामानतृप्तोऽनुजुषन् क्षुल्लकान् वर्षयामिनीः ।
न वेद यान्तीर्नायान्तीरुर्वश्याकृष्टचेतनः ॥६॥

पदच्छेद—

कामान् अतृप्तः अनुजुषन् क्षुल्लकान् वर्ष यामिनीः ।
न वेद यान्तीः नायान्तीः उर्वशी आकृष्ट चेतनः ॥

शब्दार्थ—

कामान्	४. उन्हें विषयों से	न	१०. न
अतृप्तः	५. तृप्ति नहीं हुई थी	वेदयान्तीः	११. जाती मालूम पड़ी और
अनुजुषन्	७. भोगों में डूब जाने से	नायान्तीः	१२. न आती
क्षुल्लकान्	६. क्षुद्र	उर्वशी	१. उर्वशी ने
वर्ष	८. वर्षों की	आकृष्ट	३. आकृष्ट कर लिया था
यामिनीः ।	९. रात्रियाँ	चेतनः ॥	२. उनका चित्त

श्लोकार्थ—उर्वशी ने उनका चित्त आकृष्ट कर लिया था । उन्हें विषयों के तृप्ति नहीं हुई थी । क्षुद्र भोगों में डूब जाने से वर्षों की रात्रियाँ न जाती मालूम पड़ी न आती ही मालूम पड़ी ॥

सप्तमः श्लोकः

ऐल उवाच— अहो मे मोहविस्तारः कामकश्मलचेतसः ।
देव्या गृहीतकण्ठस्य नायुःखण्डा इमे स्मृताः ॥७॥

पदच्छेद—

अहो मे मोहविस्तारः काम कश्मल चेतसः ।
देव्या गृहीत् कण्ठस्य न आयुः खण्डा इमे स्मृता ॥

शब्दार्थ—

अहो	१. हाय-हाय	देव्या	७.	उर्वशी ने अपनी बाहुओं से
मे	२. भला मेरी	गृहीत्	९.	ऐसा पकड़ा कि
मोहविस्तारः	३. मूढता तो देखो	कण्ठस्य	८.	मेरा गला
काम	४. काम वासना ने	न आयुः	१०.	मैंने आयु के न जाने
कश्मल	६. कलुषित कर दिया	खण्डाइमे	११.	कितने वर्ष खो दिये
चेतसः ।	५. मेरे चित्त को	स्मृता ॥	१२.	ओह ! विस्मृति की भी एक सीमा होती है

श्लोकार्थ—हाय-हाय भला मेरी मूढता तो देखो, काम वासना ने मेरे चित्त को कलुषित कर दिया । उर्वशी ने अपनी बाहुओं से मेरा गला ऐसा पकड़ा कि मैंने आयु के न जाने कितने दिन खो दिये । ओह विस्मृति की भी एक सीमा होती है ॥

अष्टमः श्लोकः

नाहं वेदाभिनिर्मुक्तः सूर्यो वाभ्युदितोऽमुया ।
मुषितो वर्षपूगानां बताहानि गतान्युत ॥८॥

पदच्छेद—

न अहम् वेद अभिनिर्मुक्तः सूर्यः वा अभ्युदितः अमुया ।
मुषितः वर्ष पूगानाम् बत अहानि गतानि उत ॥

शब्दार्थ—

न अहम्	७. यह मैं भी न	मुषितः	३.	लूट लिया
वेद	८. जान सका	वर्षपूगानाम्	१०.	बहुत से वर्षों के
अभिनिर्मुक्तः	५. अस्त हो गया या	बत	१.	हाय-हाय
सूर्यः वा	४. और सूर्य	अहानि	११.	दिन पर दिन
अभ्युदितः	६. उदित हुआ	गतानि	१२.	बीतते गये पर मुझे मालूम न हुआ
अमुया !	२. इसने मुझे	उत ॥	९.	अथवा

श्लोकार्थ—हाय-हाय इसने मुझे लूट लिया, और सूर्य अस्त हो गया या उदित हुआ यह मैं भी न जान सका । अथवा बहुत से वर्षों के दिन पर दिन बीतते गये पर मुझे मालूम न हुआ ॥

नवमः श्लोकः

अहो मे आत्मसम्मोहो येनात्मा योषितां कृतः ।
क्रीडामृगश्चक्रवर्ती नरदेवशिखामणिः ॥९॥

पदच्छेद—

अहो मे आत्म सम्मोहः येन आत्मा योषिताम् कृतः ।
क्रीडामृगः चक्रवर्ती नरदेव शिखा मणिः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१. अहो आश्चर्य है ! कि	कृतः ।	१०. बना दिया
मे आत्म	२. मेरे मन में इतना	क्रीडामृगः	९. खिलौना
सम्मोहः	३. मोह बढ़ गया	चक्रवर्ती	७. चक्रवर्ती सम्राट मुझे
येन	४. जिसने	नरदेव	५. नर देव
आत्मायोषिताम्	८. स्त्रियों का	शिखामणिः ॥	६. शिरोमणि

श्लोकार्थ—अहो आश्चर्य है कि मेरे मन में इतना मोह बढ़ गया, जिसने नरदेव शिरोमणि चक्रवर्ती सम्राट मुझे स्त्रियों का खिलौना बना दिया ॥

दशमः श्लोकः

सपरिच्छदमात्मानं हित्वा तृणमिवेश्वरम् ।
यान्तीं स्त्रियं चान्वगमं नग्न उन्मत्तवद् रुदन् ॥१०॥

पदच्छेद—

सपरिच्छदम् आत्मानम् हित्वा तृणम् इव ईश्वरम् ।
यान्तीम् स्त्रियम् च अन्वगमम् नग्नः उन्मत्तवत् रुदन् ॥

शब्दार्थ—

सपरिच्छदम्	३. मेरे राजपाट को	यान्तीम्	७. जाने लगी
आत्मानम्	१. वह मुझ	स्त्रियम् च	८. और मैं उस स्त्री के पीछे
हित्वा	६. छोड़कर	अन्वगमम्	१२. दौड़ पड़ा
तृणम्	४. तिनके के	नग्नः	१०. नंग धड़ंग
इव	५. समान	उन्मत्तवत्	९. पागल के समान
ईश्वरम् ।	२. सम्राट को और	रुदन् ॥	११. रोता-बिलखता

श्लोकार्थ—वह मुझ सम्राट को और मेरे राजपाट को तिनके के समान छोड़कर जाने लगी, और मैं उस स्त्री के पीछे पागल के समान नंग-धड़ंग रोता-बिलखता दौड़ पड़ा ॥

एकादशः श्लोकः

कुतस्तस्यानुभावः स्यात् तेज ईशत्वमेव वा ।
योऽन्वगच्छंस्त्रियं यान्तीं खरवत् पादताडितः ॥११॥

पदच्छेद—

कुतः तस्य अनुभावः स्यात् तेज ईशत्वम् एव वा ।
यः अन्वगच्छन् स्त्रियम् यान्तीम्:खरवत् पाद ताडितः ॥

शब्दार्थ—

कुतः	१३. भला कैसे	यः	१. जो मैं
तस्य	८. उस मुझमें	अन्वगच्छन्	७. पीछे दौड़ता रहा
अनुभावः	९. प्रभाव	स्त्रियम्	६. स्त्री के
स्यात्	१४. रह सकता है	यान्तीम्	५. जाती हुई
तेज	१०. तेज	खरवत्	२. गदहे की समान
ईशत्वम्	१२. स्वामित्व	पाद	३. पैरों के
एव वा ।	११. अथ वा	ताडितः ॥	४. प्रहार सहकर

श्लोकार्थ—जो मैं गदहे के समान पैरों के प्रहार सह कर जाती हुई स्त्री के पीछे दौड़ता रहा। उस मुझमें प्रभाव तेज अथवा स्वामित्व भला कैसे रह सकता है ॥

द्वादशः श्लोकः

किं विद्यया किं तपसा किं त्यागेन श्रुतेन वा ।
किं विविक्तेन मौनेन स्त्रीभिर्यस्य मनो हृतम् ॥१२॥

पदच्छेद—

किम् विद्यया किम् तपसा किम् त्यागेन श्रुतेन वा ।
किम् विविक्तेन मौनेन स्त्रीभिः यस्य मनः हृतम् ॥

शब्दार्थ—

किम्	१३. भला कैसे	किम्	१२. क्या लाभ ?
विद्यया	५. विद्या	विविक्तेन	१०. एकान्त से वन और
किम् तपसा	६. तपस्या	मौनेन	११. मौन व्रत से भी
किम्	९. क्या लाभ ?	स्त्रीभिः	१. स्त्री ने
त्यागेन	७. त्याग	यस्य	२. जिसका
श्रुतेन वा ।	८. अथवा शास्त्राभ्यास से	मनः हृतम् ॥	३. मन चुरा लिया है

श्लोकार्थ—स्त्री ने जिसका मन चुरा लिया है। उसको विद्या, तपस्या त्याग अथवा शास्त्राभ्यास से क्या लाभ ? एकान्त सेवन और मौन व्रत से भी क्या लाभ ॥

त्रयोदशः श्लोकः

स्वार्थस्याकोविदंधिङ् मां मूर्खं पण्डितमानिनम् ।
योऽहमीश्वरतां प्राप्य स्त्रीभिर्गोखरवज्जितः ॥१३॥

पदच्छेद—

स्वार्थस्य अकोविदम् धिक् माम् मूर्खम् पण्डित मानिनम् ।
यः अहम् ईश्वरताम् प्राप्यस्त्रीभिः गोखरवत् जितः ॥

शब्दार्थ—

स्वार्थस्य	१.	मुझे अपने ही हानि-लाभ का	यः अहम्	८.	जो मैं
अकोविदम्	२.	पता नहीं है, फिर भी	ईश्वरताम्	९.	चक्रवर्ती सम्राट
धिक्	७.	धिक्कार है	प्राप्य	१०.	होकर भी
माम्	५.	मुझ	स्त्रीभिः	१३.	स्त्री के
मूर्खम्	६.	मूर्ख को	गोखर	११.	गधे और बैल के
पण्डित	३.	अपने को बहुत बड़ा पण्डित	वत्	१२.	समान
मानिनम् ।	४.	मानता हूँ	जितः ॥	१४.	फन्दें में फँस गया

श्लोकार्थ—मुझे अपने ही हानि लाभ का पता नहीं है, फिर भी अपने को बहुत बड़ा पण्डित मानता हूँ । मुझ मूर्ख को धिक्कार है । जो मैं चक्रवर्ती सम्राट होकर भी गधे और बैल के समान स्त्री के फन्दे में फँस गया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

सेवतो वर्षपूगान् मे उर्वश्या अधरासवम् ।
न तृप्यत्यात्मभूः कामो वह्निराहुतिभिर्यथा ॥१४॥

पदच्छेद—

सेवतोः वर्षपूगान् मे उर्वश्या अधर आसवम् ।
न तृप्यति आत्मभूः कामः वह्नि आहुतिभिः यथा ॥

शब्दार्थ—

सेवतः	६.	पीता रहा	न तृप्यति	१२.	तृप्त नहीं हुई
वर्षपूगान्	२.	वर्षों तक	आत्मभूः	१०.	मन में उत्पन्न होने वाली
मे	१.	मैं	कामः	११.	मेरी काम वासना
उर्वश्या	३.	उर्वशी के	वह्नि	८.	न तृप्त होछ वाली अग्नि के
अधर	४.	होठों की	आहुतिभिः	७.	आहुतियों के द्वारा
आसवम् ।	५.	मादक मदिरा	यथा ॥	९.	समान

श्लोकार्थ—अग्नि के समान मैं वर्षों तक उर्वशी के होठों की मादक मदिरा पीता रहा । आहुतियों के द्वारा न तृप्त होने वाली मन में उत्पन्न होने वाली मेरी काम वासना तृप्त नहीं हुई ॥

पञ्चदशः श्लोकः

पुंश्चल्यापहृतं चित्तं को न्वन्यो मोचितुं प्रभुः ।
आत्मारामेश्वरमृते भगवन्तमधोक्षजम् ॥१५॥

पदच्छेद—

पुंश्चल्या अपहृतम् चित्तम् कः नु अन्यः मोचितुम् प्रभुः ।
आत्माराम ईश्वरम् ऋते भगवन्तम् अधोक्षजम् ॥

शब्दार्थ—

पुंश्चल्या	१. उस कुलटा ने	प्रभुः ।	१२. समर्थ हो सकता है
अपहृतम्	३. चुरा लिया	आत्माराम	४. आत्माराम जीवन मुक्तों के
चित्तम्	२. मेरा चित्त	ईश्वरस्य	५. स्वामी
कः नु	१०. कौन मुझे	ऋते	८. छोड़कर
अन्यः	९. और	भगवन्तम्	७. भगवान् को
मोचितुम ।	११. इस फन्दे से मुक्त करने में	अधोक्षजम् ॥	६. इन्द्रियातीत

श्लोकार्थ—उस कुलटा ने मेरा चित्त चुरा लिया । आत्माराम-जीवन मुक्तों के स्वामी, इन्द्रियातीत भगवान् को छोड़कर और कौन मुझे इस फन्दे से मुक्त करने में समर्थ हो सकता है ॥

षोडशः श्लोकः

बोधितस्यापि देव्या मे सूक्तवाक्येन दुर्मतेः ।
मनोगतो महामोहो नापयात्यजितात्मनः ॥१६॥

पदच्छेद—

बोधितस्य अपि देव्या मे सूक्त वाक्येन दुर्मतेः ।
मनः गतः महा मोहः न अपयाति अजित आत्मनः ॥

शब्दार्थ —

बोधितस्य	४. समझाया	मनः गतः	७. मन का
अपि	५. भी था पर	महा	८. वह भयंकर
देव्या	१. उर्वशी ने	मोह	९. मोह
मे सूक्त	२. मुझे वैदिक सूक्त के	न अपयाति	१०. नहीं मिटा, मैंने
वाक्येन	३. वचनों द्वारा	अजित	१२. वश में नहीं किया था
दुर्मतेः ।	६. मुझ दुर्बुद्धि के	आत्मनः ॥	११. अपनी इन्द्रियों को

श्लोकार्थ—उर्वशी ने मुझे वैदिक सूक्त के वचनों द्वारा समझाया भी था, पर मुझ दुर्बुद्धि के मन का वह भयंकर मोह नहीं मिटा, मैंने अपनी इन्द्रियों को वश में नहीं किया था ॥

सप्तविंशः श्लोकः

किमेतया नोऽपकृतं रज्ज्वा वा सर्पचेतसः ।
रज्जुस्वरूपाविदुषो योऽहं यदजितेन्द्रियः ॥२७॥

पदच्छेद— किम् एतया नः अपकृतम् रज्ज्वा वा सर्पचेतसः ।
रज्जु स्वरूपा अविदुषः यः अहम् यत् अजितेन्द्रियः ॥

शब्दार्थ—

किम्	३.	क्या	रज्जु	९.	जो रस्सी के
एतया	१.	इस उर्वशी ने	स्वरूपा	१०	स्वरूप को
नः	२.	हमारा	अविदुषः	११.	न जानकर उसमें
अपकृतम्	४.	बिगाड़ा है	यः अहम्	६.	मैं स्वयं ही
रज्ज्वा वा	८.	जैसे रस्सी ने उसका क्या-बिगाड़ा है	यत्	५.	क्योंकि
सर्पचेतसः ।	१२.	सर्प की कल्पना करते है	अजितेन्द्रियः ॥	७.	अजितेन्द्रिय होने के कारण अपराधी हूँ

श्लोकार्थ—इस उर्वशी ने हमारा क्या बिगाड़ा है। क्योंकि मैं स्वयं ही अजितेन्द्रिय होने के कारण अपराधी हूँ। जैसे रस्सी ने उसका क्या बिगाड़ा है, जो रस्सी के स्वरूप को न जानकर उसमें सर्प की कल्पना करते हैं ।।

अष्टविंशः श्लोकः

क्वायं मलीमसः कायो दौर्गन्ध्याद्यात्मकोऽशुचिः ।
क्वगुणाः सौमनस्याद्या ह्यध्यासोऽविद्यया कृतः ॥२८॥

पदच्छेद— क्वा अयम् मलीमसः कायः दौर्गन्ध्यः आदि आत्मकः अशुचिः ।
क्व गुणाः सौमनस्य आद्या हि अध्यासः अविद्यया कृतः ॥

शब्दार्थ—

क्व अयम्	४.	कहाँ तो यह	क्व	७.	और कहाँ
मलीमसः	५.	मैला-कुचैला	गुणाः	१०.	पुष्पो चित्त गुण
कायः	६.	शरीर	सौमनस्य	८.	सुकुमारता-पवित्रता
दौर्गन्ध्यः	१.	दुर्गन्ध	आद्या	९.	आदि
आदि आत्मकः	२.	आदि दोषों तथा	हि अध्यासः	१२.	असुन्दरता का
अशुचिः ।	३.	अपवित्रता से भरा	अविद्यया	११.	परन्तु मैं ने अज्ञान वश
कृतः ॥	१३.	आरोपकर लिया है			

श्लोकार्थ—दुर्गन्ध आदि दोषों तथा अपवित्रा से भरा कहाँ तो यह मैला-कुचैला शरीर और कहाँ सुकुमारता-पवित्रता आदि पुष्पोचित्त गुण, परन्तु मैंने अज्ञान वश असुन्दर में सुन्दर का आरोप कर लिया है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

पित्रोः किं स्वं नु भार्यायाः स्वामिनोऽग्नेः श्वगृध्रयोः ।
किमात्मनः किं सुहृदामिति यो नावसीयते ॥१६॥

पदच्छेद—

पित्रोः किम् स्वमनुभार्यायाः स्वामिनः अग्नेः श्वगृध्रयोः ।
किम् आत्मनः किम् सुहृदाम् इति यः नः अवसीयते ॥

शब्दार्थ—

पित्रोः	२.	माता-पिता का	किम्	८.	क्या यह
किम्	१.	यह शरीर क्या	आत्मनः	६.	अपना है अथवा
स्वम्	३.	सर्वस्व है या	किम्	१०.	क्या
अनुभार्यायाः	४.	पत्नी की सम्पत्ति ? या	सुहृदाम्	११.	सुहृद सम्बन्धियों का है ?
स्वामिनः	५.	स्वामी की वस्तु हैं	इति	१२.	इस प्रकार
अग्नेः	६.	आग का ईंधन है या	यः नः	१४.	नहीं हो पाता है
श्वगृध्रयोः ।	७.	कुत्ते-गीधों का भोजन है ?	अवसीयते ।	१३.	कुछ भी निश्चय

श्लोकार्थ—यह शरीर क्या माता-पिता का सर्वस्व है, या पत्नी की सम्पत्ति ? स्वामी की वस्तु है, या आग का ईंधन है या कुत्ते गीधों का भोजन है ? क्या यह अपना है, अथवा क्या सुहृद सम्बन्धियों का है ? इस प्रकार कुछ भी निश्चय नहीं हो पाता है ॥

विंशः श्लोकः

तस्मिन् कलेवरेऽमेध्ये तुच्छनिष्ठे विषज्जते ।
अहो सुभद्रं सुस्मितं च मुखं स्त्रियः ॥२०॥

पदच्छेद—

तस्मिन् कलेवरे अमेध्ये तुच्छ निष्ठे विषज्जते ।
अहो सुभद्रम् सुनसम् सुस्मितम् च मुखम् स्त्रियः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	३.	ऐसे	अहो	७.	अहो !
कलेवरे	५.	शरीर में	सुभद्रम्	६.	मुखड़ा कितना सुन्दर है
अमेध्ये	४.	अपवित्र	सुनसम्	१०.	नाक कितनी सुघड़ है
तुच्छ	१.	तुच्छ-कीड़े-राख आदि	सुस्मितम्	१२.	मुसकान कितनी मनोहर है
निष्ठे	२.	मे परिणाम जिसका है	च मुखम्	११.	इसके मुख की
विषज्जते ।	६.	आसक्त होकर कहते हैं	स्त्रियः ॥	८.	इस स्त्री का

श्लोकार्थ—तुच्छ-कीड़े-राख आदि में परिणाम जिसका है । ऐसे अपवित्र शरीर में आसक्त होकर कहते हैं । अहो इस स्त्री का मुखड़ा कितना सुन्दर है, नाक कितनी सुघड़ है । इसके मुख की मुसकान कितनी मनोहर है ॥

एकविंशः श्लोकः

त्वङ्मांसरुधिरस्नायुमेदोमज्जास्थिसंहतौ ।
विण्मूत्रपूये रमतां कृमीणां कियदन्तरम् ॥२१॥

पदच्छेद—

त्वङ् मांस रुधिर स्नायु मेदा मज्जा अस्थि संहतौ ।
विण्मूत्र पूये रमताम् कृमीणाम् कियत् अन्तरम् ॥

शब्दार्थ—

त्वङ्	१. यह शरीर त्वचा	विण्मूत्र	७. मलमूत्र तथा
मांस	२. मांस	पूये	८. पीव से भरा हुआ है
रुधिर	३. रुधिर	रमताम्	९. यदि मनुष्य इसमें रमता है तो
स्नायु-मेदा	४. स्नायु-मेदा	कृमीणाम्	१०. उसमें और कीड़ों में
मज्जा-अस्थि	५. मज्जा और हड्डियों का	कियत्	११. कितना
संहतौ ।	६. ढेर है और	अन्तरम् ॥	१२. अन्तरम् है

श्लोकार्थ—यह शरीर मांस, रुधिर, स्नायु, मेदा, मज्जा, और हड्डियों का ढेर है और मलमूत्र तथा पीव से भरा है । यदि मनुष्य इनमें रमता है तो उसमें और कीड़ों में कितना अन्तर है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अथापि नोपसज्जेत स्त्रीषु स्त्रैणेषु चार्थवित् ।
विषयेन्द्रियसंयोगान्मनः क्षुभ्यति नान्यथा ॥२२॥

पदच्छेद—

अथापि न उपसज्जेत स्त्रीषु स्त्रैणेषु च अर्थवित् ।
विषय इन्द्रिय संयोगात् मनः क्षुभ्यति न अन्यथा ॥

शब्दार्थ—

अथापि	१. इसलिये	विषय	८. विषय और
न उपसज्जेत	६. सङ्ग न करें	इन्द्रिय	९. इन्द्रियों के
स्त्रीषु	३. स्त्रियों	संयोगात्	१०. संयोग से ही
स्त्रैणेषु	५. स्त्री लम्पट पुरुषों का	मनः	७. क्योंकि मन
च	४. और	क्षुभ्यति	११. क्षुब्ध होता है
अर्थवित् ।	२. विवेकी मनुष्य	न अन्यथा ॥	१२. अन्यथा विकार का कोई अवसर ही नहीं है

श्लोकार्थ—इसलिये विवेकी मनुष्य स्त्रियों और स्त्री लम्पट पुरुषों का सङ्ग न करें । क्योंकि मन विषय और इन्द्रियों के संयोग से ही क्षुब्ध होता है । अन्यथा विकार का कोई अवसर ही नहीं है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अदृष्टादश्रुतान् भावान्न भाव उपजायते ।
असम्प्रयुञ्जतः प्राणान् शाम्यति स्तिमितं मनः ॥२३॥

पदच्छेद—

अदृष्टात् अश्रुतात् भावात् न भाव उपजायते ।
असम्प्रयुञ्जातः प्राणान् शाम्यति स्तिमितम् मनः ॥

शब्दार्थ—

अदृष्टात्	२.	कभी देखी और	असम्प्रयुञ्	८.	विषयों से संयोग नहीं
अश्रुतात्	३.	सुनी नहीं है उसके लिये	जातः	६.	होने देते
भावात्	१.	जो वस्तु	प्राणान्	७.	जो लोग इन्द्रियों का
न	५.	नहीं	शाम्यति	१२.	स्वयम् शान्त हो जाता है
भाव	४.	मन में विकार	स्तिमितम्	११.	निश्चल होकर
उपजायते ।	६.	उत्पन्न होता है	मनः ॥	१०.	उनका मन

श्लोकार्थ—जो वस्तु कभी देखी और सुनी नहीं है । उसके लिये मन में विकार उत्पन्न नहीं होता है । जो लोग इन्द्रियों का विषयों से संयोग नहीं होने देते उनका मन निश्चल होकर स्वयम् शान्त हो जाता है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तस्मात् सङ्गो न कर्तव्यः स्त्रीषु स्त्रैणेषु चेन्द्रियैः ।
विदुषां चाप्यविश्रब्धः षड्वर्गः किमु मादृशाम् ॥२४॥

पदच्छेद—

तस्मात् सङ्गः न कर्तव्यः स्त्रीषु स्त्रैणेषु च इन्द्रियैः ।
विदुषाम् च अपि अविश्रब्धः षड्वर्गः किमु मादृशाम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	विदुषाम्	६.	बड़े-बड़े विद्वानों के लिये
सङ्गः न	५.	सङ्ग कभी नहीं	च अपि	१०.	भी
कर्तव्यः	६.	करना चाहिये	अविश्रब्धः	१२.	विश्वसनीय नहीं है
स्त्रीषु	३.	स्त्रियों और	षड्वर्गः	११.	अपनी इन्द्रियों और मन
स्त्रैणेषु	४.	स्त्री लम्पटों का	किमु	८.	बात ही क्या है
इन्द्रियैः ।	२.	इन्द्रियों से	मादृशाम् ॥	७.	मेरे जैसे लोगों की तो

श्लोकार्थ—इसलिये इन्द्रियों से स्त्रियों और स्त्री लम्पटों का सङ्ग कभी नहीं करना चाहिये । मेरे जैसे लोगों की तो बात ही क्या है । बड़े-बड़े विद्वानों के लिये भी अपनी इन्द्रियों और मन विश्वसनीय नहीं है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—एवं प्रगायन् नृपदेवदेवः स उर्वशीलोकमथो विहाय।
आत्मानमात्मन्यवगम्य मां वै उपारमज्ज्ञानविधूतमोहः ॥२५॥

पदच्छेद— एवम् प्रगायन् नृप देवदेवः सः उर्वशीलोकम् अथो विहाय।
आत्मानम् आत्मनि अवगम्य माम् वै उपारमत् ज्ञान विधूतमोहः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	३.	इस प्रकार	आत्मानम्	११.	आत्मस्वरूप से
प्रगायन्	४.	गीत गाते हुये	आत्मनि	१०.	उसने अपने हृदय में
नृपदेवदेवः	२.	राजराजेश्वर राजा पुरुरवा ने	अवगम्य	१३.	साक्षात्कार कर लिया और
सः	१.	उन	माम् वै	१२.	मेरा
उर्वशी लोकम्	५.	उर्वशीलोक का	उपारमत्	१४.	शान्त-भाव में स्थित हो गया
अथो	७.	कर दिया	ज्ञान	८.	ज्ञान के कारण
विहाय।	६.	परित्याग	विधूतमोहः ॥	९.	उनका मोह जाता रहा और

श्लोकार्थ—उन राजराजेश्वर राजा पुरुरवा ने इस प्रकार गीत गाते हुये उर्वशी लोक का परित्याग कर दिया। ज्ञान के कारण उनका मोह जाता रहा और उसने अपने हृदय में आत्मस्वरूप से मेरा साक्षात्कार कर लिया और शान्त-भाव में स्थित हो गया ॥

षड्विंशः श्लोकः

ततो दुःसङ्गमुत्सृज्य सत्सु सज्जेत बुद्धिमान्।
सन्त एतस्य छिन्दन्ति मनोव्यासङ्गमुक्तिभिः ॥२६॥

पदच्छेद— ततः दुःसङ्गम् उत्सृज्य सत्सु सज्जेत बुद्धिमान्।
सन्त एतस्य छिन्दन्ति मनो व्यासङ्ग मुक्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इसलिये	सन्त	७.	सन्त पुरुष
दुःसङ्गम्	३.	कुसङ्ग को	एतस्य	९.	उसके
उत्सृज्य	४.	छोड़कर	छिन्दन्ति	१२.	नष्ट कर देंगे
सत्सु	५.	सत्पुरुषों का	मनो	१०.	मन की
सज्जेत	६.	सङ्ग करे	व्यासङ्ग	११.	आसक्ति को
बुद्धिमान्।	२.	बुद्धिमान पुरुष को चाहिये कि	मुक्तिभिः ॥	८.	अपने सदुपदेशों से

श्लोकार्थ—इसलिये बुद्धिमान पुरुष को चाहिये कि कुसङ्ग को छोड़कर सत्पुरुषों का सङ्ग करे, सन्त पुरुष अपने सदुपदेशों से उसके मन की आसक्ति को नष्ट कर देंगे ॥

सप्तविंशः श्लोक

सन्तोऽनपेक्षा मच्चित्ताः प्रशान्ताः समदर्शिनः ।
निर्ममा निरहङ्कारा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः ॥२७॥

पदच्छेद— सन्तः अनपेक्षा मत् चित्ताः प्रशान्ताः समदर्शिनः ।
निर्ममा निरहङ्कारा निर्द्वन्द्वा निष्परिग्रहाः ॥

शब्दार्थ—

सन्तः	१.	सन्तों को	समदर्शिनः ।	६	सबमें भगवान् को देखते हैं
अनपेक्षा	२.	किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं होती	निर्ममा	७.	ममता और
मत्	३.	मुझमें	निरहङ्कारा	८.	अहंकार से रहित होकर
चित्ताः	४.	चित्त लगाकर	निर्द्वन्द्वा	९.	शीत उष्णादि में एक रस रहते हैं
प्रशान्ताः	५.	शान्ति का अनुभव करते हैं	निष्परिग्रहाः ॥	१०.	किसी प्रकार का परिग्रह नहीं रखते

श्लोकार्थ—सन्तों को किसी वस्तु की अपेक्षा नहीं होती मुझमें चित्त लगाकर शान्ति का अनुभव करते हैं। सबमें भगवान् को देखते हैं। ममता और अहंकार से रहित होकर शीत-उष्णादि में एक रस रहते हैं। किसी प्रकार का परिग्रह नहीं रखते हैं ॥

अष्टविंशः श्लोक

तेषु नित्यं महाभाग महाभागेषु मत्कथाः ।
सम्भवन्ति हिता नृणां जुषतां प्रपुनन्त्यघम् ॥२८॥

पदच्छेद— तेषु नित्यम् महाभाग महाभागेषु मत् कथाः ।
सम्भवन्ति हिता नृणाम् जुषताम् प्रपुनन्ति अघम् ॥

शब्दार्थ—

तेषु	२.	उन	सम्भवन्ति	७.	हुआ करती हैं
नित्यम्	४.	सदा-सर्वदा	हिता	८.	मेरी कथायें उन
महाभाग	१.	परम भाग्यवान् उद्धवजी !	नृणाम्	९.	मनुष्यों के लिये हितकर हैं
महाभागेषु	३.	भाग्यशालियों के पास	जुषताम्	१२.	जो उनका सेवन करते हैं
मत्	५.	मेरी	प्रपुनन्ति	१२.	उन्हें पवित्र कर देती हैं
कथाः ।	६.	लीला कथायें	अघम् ॥	११.	वे उनके पाप-ताप धोकर

श्लोकार्थ—परम भाग्यवान उद्धवजी ! भाग्यशालियों के पास सदा-सर्वदा मेरी लीला कथायें हुआ करती हैं। मेरी कथायें उन मनुष्यों के लिये हितकर है। जो उनका सेवन करते हैं। वे उनके पाप-ताप धोकर उन्हें पवित्र कर देती हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

ता ये शृण्वन्ति गायन्ति ह्यनुमोदन्ति चादृताः ।
मत्परा श्रद्दधानाश्च भक्तिं विन्दन्ति ते मयि ॥२६॥

पदच्छेद—

ता ये शृण्वन्ति गायन्ति हि अनुमोदन्ति च आदृताः ।
मत् परा श्रद्दधानाः च भक्तिम् विन्दन्ति ते मति ॥

शब्दार्थ—

ता	४.	मेरी लीला कथाओं का	मत्	८.	वे मेरे
ये	३.	उन	परा	६.	परायण हो जाते हैं
शृण्वन्ति	५.	श्रवण	श्रद्दधानाः	२.	श्रद्धा से
गायन्ति	६.	गान और	च भक्तिम्	११.	अनन्य प्रेममयी भक्ति
हि अनुमोदन्ति	७	अनुमोदन करते हैं	विन्दन्ति	१२.	प्राप्त कर लेते हैं
च आदृताः ।	१.	जो लोग आदर और	ते मयि ॥	१०.	और वे,मेरी

श्लोकार्थ—जो लोग आदर और श्रद्धा से उन मेरी लीला कथाओं का श्रवण, गान और अनुमोदन करते हैं। वे मेरे परायण हो जाते हैं। और वे मेरी अनन्य प्रेममयी भक्ति प्राप्त कर लेते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

भक्तिं लब्धवतः साधोः किमन्यदवशिष्यते ।
मय्यनन्तगुणे ब्रह्मण्यानन्दानुभवात्मनि ॥३०॥

पदच्छेद—

भक्तिम् लब्धवतः साधोः किमन्यत् अवशिष्यते ।
मयि अनन्तगुणे ब्रह्मणि अनन्द अनुभव आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

भक्तिम्	८.	जिसे मेरी भक्ति	मयि	२.	मैं
लब्धवतः	६.	प्राप्त हो गयी	अनन्तगुणे	३.	अनन्त गुणों का आश्रय हूँ
साधोः	१.	उद्धव जी !	ब्रह्मणि	४.	मैं साक्षात् ब्रह्म हूँ
किमन्यत्	१०.	उसे और क्या	आनन्द	५.	केवल आनन्द
अवशिष्यते ।	११.	पाना शेष रहता है	अनुभव	६.	केवल अनुभव और
			आत्मनि ॥	७.	विशुद्ध आत्मा मेरा स्वरूप है

श्लोकार्थ—हे उद्धव जी ! मैं अनन्त गुणों का आश्रय हूँ। मैं साक्षात् ब्रह्म हूँ। केवल आनन्द केवल अनुभव और विशुद्ध आत्मा मेरा स्वरूप है। जिसे मेरी भक्ति प्राप्त हो गयी, उसे और क्या पाना शेष रहता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

यथोपश्रयमाणस्य भगवन्तं विभावसुम् ।
शीतं भयं तमोऽप्येति साधून् संसेवतस्तथा ॥३१॥

पदच्छेद—

यथा उपश्रय माणस्य भगवन्तम् विभावसुम् ।
शीतम् भयम् तमः अप्येति साधून् ससेवतः तथा ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	शीतम्भयम्	६.	शीत-भय अथवा
उपश्रय	४.	आश्रय	तमः अप्येति	७.	अन्धकार नष्ट हो जाते है
माणस्य	५.	लेने वाले के	साधून्	९.	सन्त पुरुषों की
भगवन्तम्	३.	भगवान् का	ससेवतः	१०.	सेवा करने पर दोष दूर हो जाते हैं
विभावसुम् ।	२.	अग्नि	तथा ॥	८.	उसी प्रकार

श्लोकार्थ—जिस प्रकार अग्नि भगवान् का आश्रय लेने वाले के शीत-भय अथवा अन्धकार नष्ट हो जाते हैं। उसी प्रकार सन्त पुरुषों की सेवा करने पर दोष दूर हो जाते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

निमज्ज्योन्मज्जतां घोरे भवाब्धौ परमायनम् ।
सन्तो ब्रह्मविदः शान्ता नौर्दृढेवाप्सु मज्जताम् ॥३२॥

पदच्छेद—

निमज्ज्य उनमज्जताम् घोरे भवाब्धौ परमायनम् ।
सन्तः ब्रह्मविदः शान्ताः नौः दृढ इव अप्सुमज्जताम् ॥

शब्दार्थ—

निमज्ज्य	३.	डूब	सन्तः	७.	सन्त ही
उन्मज्जताम्	४.	उतरा रहे हैं	ब्रह्मविदः	५.	उसके लिये ब्रह्मवेत्ता और
घोरे	१.	जो इस घोर	शान्ताः	६.	शान्त
भवाब्धौ	२.	संसार सागर में	नौर्दृढा इव	११.	दृढ़ नौका के समान है
परमायनम् ।	८.	एक मात्र उत्तम आश्रय हैं	अप्सु	९.	जल में
			मज्जताम् ॥	१०.	डूब रहे लोगों के लिये

श्लोकार्थ—जो इस घोर संसार-सागर में डूब उतरा रहे हैं, उसके लिये ब्रह्मवेत्ता और शान्त सन्त ही एक मात्र उत्तम आश्रय है। जल में डूब रहे लोगों के लिये दृढ़ नौका के समान हैं ॥

त्रयोत्रिंशः श्लोकः

अन्नं हि प्राणिनां प्राण आर्तानां शरणं त्वहम् ।
धर्मो वित्तं नृणां प्रेत्य सन्तोऽर्वाग् बिभ्यतोऽरणम् ॥३३॥

पदच्छेद— अन्नम् हि प्राणिनाम् प्राणः आर्तानाम् शरणम् तु अहम् ।
धर्मः वित्तम् नृणाम् प्रेत्य सन्तः अर्वाक् बिभ्यतः अरणम् ॥

शब्दार्थ—

अन्नम्	१.	जैसे अन्न से	धर्मः वित्तम्	९.	धर्म ही एक मात्र पूंजी है
हि प्राणिनाम्	२.	प्राणियों के	नृणाम्	७.	जैसे मनुष्यों के लिये
प्राणः	३.	प्राणों की रक्षा होती है	प्रेत्य	८.	परलोक में
आर्तानाम्	५.	दीन-दुखियों का	सन्तः अर्वाक्	११.	सन्तजन-तत्काल
शरणम्	६.	परम रक्षक हूँ	बिभ्यतः	१०.	वैसे ही संसार से भयभीत जनों के लिये
तु अहम् ।	४.	जैसे मैं	शरणम् ॥	१२.	शरण देने वाले होते हैं

श्लोकार्थ—जैसे अन्न से प्राणियों के प्राणों की रक्षा होती है । जैसे मैं दीन-दुखियों का परम रक्षक हूँ । जैसे मनुष्यों के लिये परलोक में धर्म ही एकमात्र पूंजी है । वैसे ही संसार से भयभीत जनों के लिये सन्तजन-तत्काल शरण देने वाले होते हैं ॥

चतुःत्रिंशः श्लोकः

सन्तो दिशन्ति चक्षूंषि बहिरर्कः समुत्थितः ।
देवता बान्धवाः सन्तः सन्त आत्माहमेव च ॥३४॥

पदच्छेद— सन्तः दिशन्ति चक्षूंषि बहिः अर्कः समुत्थितः ।
देवता बान्धवाः सन्तः सन्तः आत्मा अहम् एव च ॥

शब्दार्थ—

सन्तः	४.	वैसे ही सन्तजन	देवता	८.	अनुग्रहशील देवता और
दिशन्ति	६.	प्रदान करते हैं	बान्धवाः	९.	हितैषी सुहृद हैं
चक्षूंषि	५.	आत्मा-परमात्मा को देखने की दृष्टि	सन्तः	७.	सन्त
बहिः	३.	बाहर प्रकाश देते हैं	सन्तः आत्मा	१०.	सन्त अपने प्रियतम आत्मा हैं
अर्कः	१.	जैसे सूर्य	अहम्	११.	वे तो मेरा
समुत्थितः ।	२.	उदय होकर	एव च ॥	१२.	ही स्वरूप हैं

श्लोकार्थ—जैसे सूर्य उदय होकर बाहर प्रकाश देते हैं । वैसे हीं सन्तजन आत्मा-परमात्मा को देखने की दृष्टि प्रदान करते हैं । सन्त अनुग्रहशील देवता और हितैषी सुहृद हैं । सन्त अपने प्रियतम आत्मा हैं । वे तो मेरा ही स्वरूप हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

वैतसेनस्ततोऽप्येवमुर्वश्या लोकनिःस्पृहः ।
मुक्तसङ्गो महीमेतामात्मारामश्चचार ह ॥३५॥

पदच्छेद—

वैतसेनः ततः अपि एवम् उर्वश्या लोक निःस्पृहः ।
मुक्तसङ्गः महीम् एताम् आत्मारामः चचार ह ॥

शब्दार्थ—

वैतसेन	१.	इलानन्दन पुरुरवा को	निःस्पृहः ।	७.	स्पृहा न रही
ततः	२.	तब	मुक्त सङ्गः	८.	वे आसक्तियों से मुक्त तथा
अपि	३.	भी	महीम्	११.	पृथ्वी पर
एवम्	४.	इस प्रकार	एताम्	१०.	इस
उर्वश्या	५.	उर्वशी	आत्माराम	९.	आत्माराम होकर
लोक	६.	लोक की	चचारह ॥	१२.	विचरने लगे

श्लोकार्थ—इलानन्दन पुरुरवा को तब भी इस प्रकार उर्वशी लोक की स्पृहा न रही । वे आसक्तियों से मुक्त तथा आत्माराम होकर इस पृथ्वी पर विचरने लगे ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे षड्विंशः अध्यायः ॥२६॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

सप्तविंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच—क्रियायोगं समाचक्ष्व भवदाराधनं प्रभो।
यस्मात्त्वां ये यथार्चन्ति सात्वताः सात्वतर्षभ ॥१॥

पदच्छेद— क्रिया योगम् समाचक्ष्व भवद् आराधनम् प्रभो।
यस्मात् त्वाम् ये यथा अर्चन्ति सात्वताः सात्वतर्षभ ॥

शब्दार्थ—

क्रिया	१०.	क्रिया	यस्मात्	३.	जिस क्रिया योग का आश्रय लेकर
योगम्	११.	योग का	त्वाम्	५.	आपकी
समाचक्ष्व	१२.	वर्णन कीजिये	ये यथा	६.	जिस प्रकार से
भवद्	८.	आप अपने उस	अर्चन्ति	७.	अर्चना-पूजा करते हैं
आराधनम्	९.	आराधन रूप	सात्वताः	४.	जो भक्तजन
प्रभो।	२.	श्रीकृष्ण !	सात्वतर्षभ॥	१.	हे भक्तवत्सल

श्लोकार्थ—हे भक्तवत्सल श्रीकृष्ण ! जिस क्रिया योग का आश्रय लेकर जो भक्तजन आपको जिस प्रकार से अर्चना-पूजा करते हैं, आप अपने उस आराधन रूप क्रिया योग का वर्णन कीजिये।

द्वितीयः श्लोकः

एतद् वदन्ति मुनयो मुहुर्निःश्रेयसं नृणाम्।
नारदो भगवान् व्यास आचार्योऽङ्गिरसः सुतः ॥२॥

पदच्छेद— एतद् वदन्ति मुनयः मुहुः निः श्रेयसम् नृणान्।
नारदः भगवान् व्यासः आचार्यः अङ्गिरसः सुतः ॥

शब्दार्थ—

एतद्	९.	इस बात का	नारदः	१.	हे देवर्षिनारद
वदन्ति	११.	वर्णन करते हैं	भगवान्	२.	भगवान्
मुनयः	६.	ऋषि-मुनि	व्यास	३.	व्यास देव और
मुहुः	१०.	बार-बार	आचार्यः	४.	आचार्य
निःश्रेयसम्	८.	परम कल्याण की	अङ्गिरसः सुतः	५.	बृहस्पति आदि बड़े-बड़े
नृणाम्।	७.	मनुष्यों के			

श्लोकार्थ—हे देवर्षि नारद भगवान् व्यास देव और आचार्य बृहस्पति आदि बड़े-बड़े ऋषि-मुनि मनुष्यों के परम कल्याण की इस बात का बार-बार वर्णन करते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

निःसृतं ते मुखाम्भोजाद् यदाह भगवानजः ।
पुत्रेभ्यो भृगुमुख्येभ्यो देव्यै च भगवान् भवः ॥३॥

पदच्छेद—

निःसृतम् ते मुख अम्भोजात् यत् आह भगवान् अजः ।
पुत्रेभ्यः भृगु मुख्येभ्यः देव्यै च भगवान् भवः ॥

शब्दार्थ—

निःसृतम्	४.	निकला था	पुत्रेभ्यः	६.	अपने पुत्र
ते	१.	यह क्रिया योग पहले आपके	भृगुः	७.	भृगु आदि
मुख	२.	मुख	मुख्येभ्यः	८.	महर्षियों को
अम्भोजात्	३.	कमल से ही	देव्यै	११.	भगवती पार्वती जी को
यत् आह	१२.	जिसका उपदेश किया था	च भगवान्	९.	और भगवान्
भगवान् अजः ।	५.	भगवान् ब्रह्मा जी ने	भवः ॥	१०.	शङ्कर ने

श्लोकार्थ—यह क्रिया-योग पहले आपके मुख कमल से ही निकला था। भगवान् ब्रह्मा जी ने अपने पुत्र भृगु आदि महर्षियों को और भगवान् शङ्कर ने भगवती पार्वती को जिसका उपदेश किया था ॥

चतुर्थः श्लोकः

एतद् वै सर्ववर्णानामाश्रमाणां च सम्मतम् ।
श्रेयसामुत्तमं मन्ये स्त्रीशूद्राणां च मानद ॥४॥

पदच्छेद—

एतत् वै सर्व वर्णानाम् आश्रमाणाम् च सम्मतम् ।
श्रेयसामुत्तमम् मन्ये स्त्री शूद्राणाम् च मानद ॥

शब्दार्थ—

एतत्	२.	यह क्रिया योग	श्रेयसाम्	११.	कल्याण का साधन
वै सर्व	३.	सभी	उत्तमम्	१०.	इसे परम
वर्णानाम्	४.	वर्णों	मन्ये	१२.	मानता हूँ
आश्रमाणाम्	६.	सभी आश्रमों को	स्त्री	८.	मैं तो स्त्री
च	५.	और	शूद्राणाम्	९.	शूद्र आदि के लिये भी
सम्मतम् ।	७.	मान्य है	च मानद ॥	१.	मर्यादा रक्षक प्रभो !

श्लोकार्थ—मर्यादारक्षक प्रभो ! यह क्रिया योग सभी वर्णों और सभी आश्रमों को मान्य है। मैं तो स्त्री-शूद्रादि के लिये भी इसे परम कल्याण का साधन मानता हूँ ॥

पञ्चमः श्लोकः

एतत् कमलपत्राक्ष कर्मबन्धविमोचनम् ।
भक्ताय चानुरक्ताय ब्रूहि विश्वेश्वरेश्वर ॥५॥

पदच्छेद—

एतत् कमल पत्राक्ष कर्मबन्ध विमोचनम् ।
भक्ताय च अनुरक्ताय ब्रूहि विश्वेश्वर ईश्वर ॥

शब्दार्थ—

एतत्	७.	आप मुझे यह	भक्ताय	६.	भक्त हूँ
कमल	१.	कमल	च अनुरक्ताय	५.	और मैं आपका प्रेमी
पत्राक्ष	२.	नयन श्याम सुन्दर !	ब्रूहि	११.	विधि बताइये
कर्म	८.	मर्म	विश्वेश्वर	३.	आप शंकरादि जगदीश्वरों के भी
बन्ध	९.	बन्धन से	ईश्वर ॥	४.	ईश्वर हैं
विमोचनम् ।	१०.	मुक्त करने वाली			

श्लोकार्थ—कमल नयन श्याम सुन्दर ! आप शङ्करादि जगदीश्वरों के भी ईश्वर हैं । और मैं आपका प्रेमी भक्त हूँ । आपमुझे यह कर्म बन्धन से मुक्त करने वाली विधि बताइये ॥

षष्ठः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—न ह्यन्तोऽनन्तपारस्य कर्मकाण्डस्य चोद्धव ।
संक्षिप्तं वर्णयिष्यामि यथावदनुपूर्वशः ॥६॥

पदच्छेद—

नहि अन्तः अनन्त पारस्य कर्म काण्डस्य च उद्धव ।
संक्षिप्तम् वर्णयिष्यामि यथावत् अनुपूर्वशः ॥

शब्दार्थ—

न हि	६.	नहीं है	संक्षिप्तम्	१०.	थोड़े में ही
अन्तः	५.	कोई सीमा	वर्णयिष्यामि	११.	उसका वर्णन करता हूँ
अनन्त	२.	अनन्त एवम्	यथा	८.	यथा
पारस्य	३.	पार रहित	वत्	९.	विधि
कर्मकाण्डस्य च	४.	कर्म काण्ड की	अनुपूर्वशः ॥	७.	मैंक्रम से
उद्धव ।	१.	उद्धव जी :			

श्लोकार्थ—हे उद्धव जी । अनन्त एवम् पार रहित कर्मकाण्ड की कोई सीमा नहीं है । मैं क्रम से यथा विधि थोड़े में ही उसका वर्णन करता हूँ ॥

सप्तमः श्लोकः

वैदिकस्तान्त्रिको मिश्र इति मे त्रिविधो मखः ।
त्रयाणामीप्सितेनैव विधिना मां समर्चयेत् ॥७॥

पदच्छेद—

वैदिकः तान्त्रिकः मिश्र इति मे त्रिविधः मखः ।
त्रयाणाम् ईप्सितेन एव विधिना माम् समर्चयेत् ॥

शब्दार्थ—

वैदिकः	१. वैदिक	त्रयाणाम्	७. इनतीनों में
तान्त्रिकः	२. तान्त्रिक	ईप्सितेन	८. अपनी इच्छा के अनुसार
मिश्र	३. मिश्रित	एव	१०. ही
इति मे	४. ये मेरी	विधिना	९. विधि से
त्रिविधः	५. तीन प्रकार की	माम्	११. भक्त मेरी
मखः ।	६. पूजा की विधियाँ हैं	समर्चयेत् ॥	१२. पूजा करें

श्लोकार्थ—वैदिक तान्त्रिक मिश्रित ये मेरी तीन प्रकार की पूजा की विधियाँ है । इन तीनों में अपनी इच्छा के अनुसार विधि से ही भक्त मेरी पूजा करें ॥

अष्टमः श्लोकः

यदा स्वानिगमेनोक्तं द्विजत्वं प्राप्य पूरुषः ।
यथा यजेत मां भक्त्या श्रद्धया तन्निबोध मे ॥८॥

पदच्छेद—

तदा स्वनिगमेन उक्तम् द्विजत्वम् प्राप्य पूरुषः ।
यथा यजेत् माम् भक्त्या श्रद्धया तत् निबोध मे ॥

शब्दार्थ—

यदा	२. जब	यथा	७. जिस प्रकार
स्वनिगमेन	३. शास्त्रोक्त	यजेत माम्	१०. मेरी पूजा करे
उक्तम्	४. विधि से	भक्त्या	८. भक्ति और
द्विजत्वम्	५. द्विजत्व	श्रद्धया	९. श्रद्धा पूर्वक
प्राप्य	६. प्राप्त कर ले, तब फिर	तत्	११. उसे तुम
पूरुषः ।	१. मनुष्य	निबोध मे ॥	१२. मुझसे सुनो

श्लोकार्थ—मनुष्य जब शास्त्रोक्त विधि से द्विजत्व प्राप्त कर ले, तब फिर जिस प्रकार भक्ति और श्रद्धा पूर्वक मेरी पूजा करें उसे तुम मुझसे सुनो ॥

नवमः श्लोकः

अर्चायां स्थण्डिलेऽग्नौ वा सूर्ये वाप्सु हृदि द्विजे ।
द्रव्येण भक्तियुक्तोऽर्चेत् स्वगुरुं माममायया ॥९॥

पदच्छेद—

अर्चायाम् स्थण्डिले अग्नौ वा सूर्ये वा अप्सु हृदि द्विजे ।
द्रव्येण भक्ति युक्तः अर्चेत् स्वगुरुम् माम् अमायया ॥

शब्दार्थ—

अर्चायाम्	६.	मूर्ति में	द्रव्येण	५.	पूजा की सामग्रियों के द्वारा
स्थण्डिले	७.	वेदी में	भक्ति युक्तः	१.	भक्ति पूर्वक
अग्नौ वा	८.	अग्नि में अथवा	अर्चेत्	१२.	चाहे किसी में मेरी आराधना करे
सुर्ये वा	९.	सूर्ये में और	स्वगुरुम्	३.	अपने गुरुरूप
अप्सु	१०.	जल में	माम्	४.	मुझ परमात्मा की
हृदि द्विजे ।	११	हृदय में तथा ब्राह्मण में	अमायया ॥	२.	निष्कपट भाव से

श्लोकार्थ - भक्ति पूर्वक निष्कपट भाव से अपने गुरुरूप मुझ परमात्मा की पूजा की सामग्रियों के द्वारा मूर्ति में वेदी में अग्नि में अथवा सूर्ये में और जल में, हृदय में ब्राह्मण में चाहे किसी में मेरी आराधना करें ॥

दशमः श्लोकः

पूर्वं स्नानं प्रकुर्वीत धौतदन्तोऽङ्गशुद्धये ।
उभयैरपि च स्नानं मन्त्रैर्मृद्ग्रहणादिना ॥१०॥

पदच्छेद—

पूर्वम् स्नानम् प्रकुर्वीत धौतदन्तः अङ्ग शुद्धये ।
उभयैः अपि च स्नानम् मन्त्रैः मृद् ग्रहण आदिना ॥

शब्दार्थ—

पूर्वम्	४.	पहले	उभयैः	७.	वैदिक और तान्त्रिक दोनों प्रकार के
स्नानम्	५.	स्नान	अपि च	८.	ही
प्रकुर्वीत्	६.	करे, फिर	स्नानम्	१२.	पुनः स्नान करे ।
धौतदन्तः	१.	प्रातः दतुअन करके	मन्त्रैः	९.	मन्त्रों से
अङ्ग	२.	शरीर	मृद्	१०.	मिट्टी और
शुद्धये ।	३.	शुद्धि के लिये	ग्रहण आदिना ॥	११.	भस्म आदि का लेप करके

श्लोकार्थ—प्रातः दतुअन करके शरीर शुद्धि के लिये पहले स्नान करे, फिर वैदिक और तान्त्रिक दोनों प्रकार के ही मन्त्रों से मिली और भस्म आदि कालेप करके पुनः स्नान करे ॥

एकादशः श्लोकः

सन्ध्योपास्त्यादिकर्माणि वेदेनाचोदितानि मे ।
पूजां तैः कल्पयेत् सम्यक् सङ्कल्पः कर्मपावनीम् ॥११॥

पदच्छेद—

सन्ध्या उपास्ति आदि कर्माणि वेदेन आचोदितानि मे ।
पूजाम् तैः कल्पयेत सम्यक् सङ्कल्पः कर्म पावनीम् ॥

शब्दार्थ—

सन्ध्या	१.	फिर सन्ध्या	पूजाम्	१३.	आराधना
उपास्ति	२.	वन्दन	तैः	७.	उन्हीं के द्वारा
आदि	३.	आदि	कल्पयेत्	१४.	करे
कर्माणि	४.	नित्य कर्म	सम्यक्	८.	सुहढ
वेदेन	५.	जोवेद में	सङ्कल्पः	९.	संकल्प करके
आचोदितानि	६.	प्रतिपादित हैं	कर्म	१०.	कर्मबन्धनों से
मे ।	१२.	मेरी	पावनीम् ।।	११.	छुड़ाने वाली

श्लोकार्थ—फिर सन्ध्या वन्दन आदि नित्यकर्म जोवेद में प्रतिपादित हैं, उन्हीं के द्वारा सुहढ संङ्कल्प करके कर्म बन्धनों से छुड़ाने वालो मेरी आराधना करे ॥

द्वादशः श्लोकः

शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती ।
मनोमयी मणिमयी प्रतिमाष्टविधा स्मृता ॥१२॥

पदच्छेद—

शैली दारुमयी लौही लेप्या लेख्या च सैकती ।
मनोमयी मणिमयी प्रतिमा अष्ट विधा स्मृता ॥

शब्दार्थ—

शैली	४.	पत्थर की	च सैकती ।	९.	बालुकामयी और
दारुमयी	५.	लकड़ी की	मनोमयी मणिमयी	१०.	मनोमयी-मणिमयी
लौही	६.	धातु की	प्रतिमा	१.	मेरी मूर्ति
लेप्या	७.	मिट्टी चन्दनादि की	अष्ट विधा	२.	आठ प्रकार की
लेख्या	८.	चित्रमयी	स्मृता ॥	३.	होती हैं

श्लोकार्थ—मेरी मूर्ति आठ प्रकार की होती हैं । पत्थर की, लकड़ी की, धातु की मिट्टी चन्दनादि की चित्रमयी, बालुकामयी, मणिमयी. ये आठ मूर्तियां हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

चलाचलेति द्विविधा प्रतिष्ठा जीवमन्दिरम् ।
उद्वासावहने न स्तः स्थिरायामुद्धवार्चने ॥१३॥

पदच्छेद—

चल अचला इति द्विविधा प्रतिष्ठा जीवमन्दिरम् ।
उद्वास आवाहने न स्तः स्थिरायाम् उद्धव अर्चने ॥

शब्दार्थ—

चल	१. चल		उद्वास	११. विसर्जन
अचला	२. अचला		आवाहन	१०. आवाहन और
इति	३. भेद से		न स्तः	१२. नहीं करना चाहिये
द्विविधा	४. दो प्रकार की		स्थिरायाम्	८. अचल प्रतिमा के
प्रतिष्ठा	५. प्रतिमा ही		उद्धव	७. उद्धव जी ।
जीवमन्दिरम् ।	६. मुझ भगवान् का मन्दिर है		अर्चने ॥	९. पूजन में प्रतिदिन

श्लोकार्थ – चल और अचल भेद से दो प्रकार की प्रतिमा ही मुझ भगवान् का मन्दिर है । उद्धव जी ! अचल प्रतिमा के पूजन में प्रतिदिन आवाहन और विसर्जन नहीं करना चाहिये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

अस्थिरायां विकल्पः स्यात् स्थण्डिले तु भवेद् द्वयम् ।
स्नपनं त्वविलेप्यायामन्यत्र परिमार्जनम् ॥१४॥

पदच्छेद—

अस्थिरायाम् विकल्पः स्यात् स्थण्डिले तु भवेत् द्वयम् ।
स्नपनम् तु अविलेप्यायाम् अन्यत्र परि मार्जनम् ॥

शब्दार्थ—

अस्थिरायाम्	१. चल प्रतिमा के बारे में	द्वयम्	५. आवाहन-विसर्जन दोनों ही
विकल्पः	२. विकल्प	स्नपनम्	८. स्थान करादे
स्यात्	३. है, करें या न करें परन्तु	तुअलेप्यायाम्	७. जोलेप करने योग्य न होउसको
स्थण्डिले	४. बालुकामयी प्रतिमा में	अन्यत्र	९. अन्यत्र
तुभवेत्	६. करने चाहिये	परिमार्जनम् ॥	१०. केवल मार्जन कर दे

श्लोकार्थ—चल प्रतिमा के बारे में विकल्प है, करें न करें परन्तु बालुकामई प्रतिमा आवाहन विसर्जन दोनों ही में करने चाहिये । जो लेप करने योग्य न हो उसको स्नान करा दें, अन्यत्र केवल मार्जन कर दें ॥

पञ्चदशः श्लोकः

द्रव्यैः प्रसिद्धैर्मद्यागः प्रतिमादिष्वमायिनः ।
भक्तस्य च यथा लब्धैर्हृदि भावेन चैव हि ॥१५॥

पदच्छेद—

द्रव्यैः प्रसिद्धैः मद्यागः प्रतिमा आदि षु अमायिनः ।
भक्तस्य च यथा लब्धैः हृदि भावेन च एव हि ॥

शब्दार्थ—

द्रव्यैः	२. पदार्थों से	भक्तस्य	७.	भक्त है, वह
प्रसिद्धैः	१. प्रसिद्ध-प्रसिद्ध	च यथा	८.	अनायास
मद्यागः	५. मेरी पूजा की जाती है	लब्धैः	९.	प्राप्त पदार्थों से
प्रतिमा	३. प्रतिमा	हृदिः	१२.	हृदय में मेरी पूजा करले
आदिषु	४. आदि में	भावेन	१०.	और भावना मात्र
अमायिनः।	६. परन्तु जो निष्काम	च एव हि॥	११.	से ही

श्लोकार्थ—प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पदार्थों से प्रतिमा आदि में मेरी पूजा की जाती है। परन्तु जो निष्काम भक्त है, वह अनायास प्राप्त पदार्थों में और भावना मात्र से ही हृदय में मेरी पूजा कर लें ॥

षोडशः श्लोकः

स्नानालङ्करणं प्रेष्ठमर्चायामेव उद्धव ।
स्थण्डिले तत्त्वविन्यासो वह्नावाज्यप्लुतं हविः ॥१६॥

पदच्छेद—

स्नान अलङ्करणम् प्रेष्ठम् अर्चायाम् एव तु उद्धव ।
स्थण्डिले तत्त्व विन्यासः ह्नौ आज्य प्लुतम् हविः ॥

शब्दार्थ—

स्नान	२. स्नान, वस्त्र	स्थण्डिले	७.	बालु कामयी मूर्ति अथवा बेदी में
अलङ्करणम्	३. आभूषण	तत्त्व	८.	मन्त्रों के द्वारा अङ्ग और प्रधान-
प्रेष्ठम्	४. पाषाठा अथवा धातु-की प्रतिमा के	विन्यासः	९.	देवताओं को यथा स्थान पूजा करनी जाहिये
अर्चायाम्	५. पूजन में	व ह्नौ	१०.	अग्नी में पूजा करनी हो तो
एव तु	६. ही उपयोगी है	आज्यप्लुमम्	११.	घृत-मिश्रित हवन सामग्रियों से
उद्धव।	१. हे उद्धव।	हविः ॥	१२.	आहुति देनी चाहिये

श्लोकार्थ—हे उद्धव। स्नान, वस्त्र, आभूषण अथवा धातु की प्रतिमा के पूजन में ही उपयोगी है। बालुकामयी मूर्ति अथवा वेदी में मन्त्रों के द्वारा अङ्ग और प्रधान देवताओं की यथा-स्थान पूजा करनी चाहिये। अग्नी में पूजा करनी हो तो घृत मिश्रित हवन सामग्रियों से आहुति देनी चाहिये ॥

सप्तदशः श्लोकः

सूर्ये चाभ्यर्हणं प्रेष्ठं सलिले सलिलादिभिः ।
श्रद्धयोपाहृतं प्रेष्ठं भक्तेन मम वार्यपि ॥१७॥

पदच्छेद—

सूर्येच अभ्य र्हणम् प्रेष्ठम् सलिले सलिल आदिभिः ।
श्रद्धया उपाहृतम् प्रेष्ठम् भक्तेन मम वारि अपि ॥

शब्दार्थ—

सूर्ये	१.	सूर्य के प्रतीक की उपासना में	श्रद्धया	१०.	हार्दिक श्रद्धा से
च	३.	और	उपाहृतम्	११.	चढ़ाता है, तब मैं उसे बड़े
अभ्यर्हणम्	२.	अर्घ्यदान	प्रेष्ठम्	१२.	प्रेम सेस्वीकार करता हूँ
प्रेष्ठम्	४.	उपस्थान ही प्रिय है	भक्तेन	७.	जब कोई भक्त
सलिले	५.	जल में	मम	८.	मुझे
सलिल आदिभिः	६.	तर्पण आदि से मेरी उपासना करनी चाहिये	वारि अपि॥	९.	जल भी

श्लोकार्थ—सूर्य के प्रतीक की उपासना में अर्घ्यदान और उपस्थान ही प्रिय है । जल में तर्पण आदि से मेरी उपासना करनी चाहिये । जब कोई भक्त मुझे जल भी हार्दिक श्रद्धा से जढ़ाता है, तब मैं उसे प्रेम से स्वीकार करता हूँ ॥

अष्टादशः श्लोकः

भूर्यप्यभक्तोपहृतं न मे तोषाय कल्पते ।
गन्धो धूपः सुमनसो दीपोऽन्नाद्य च किं पुनः ॥१८॥

पदच्छेद—

भूरि अपि अभक्तः उपहृतम् न मे तोषाय कल्पते ।
गन्धः धूपः सुमनसः दीपः अन्न आद्यम् च किम् पुनः ॥

शब्दार्थ—

भूरि अपि	२.	बहुत सी सामग्री	गन्धः	८.	भक्त के द्वारा निवेदितगन्ध
अभक्तः	१.	यदि कोई अभक्त	धूपः	९.	धूप
उप हृतम्	३.	निवेदन करे	सुमनसः दीपः	१०.	पुष्प-दीप और
न मे	५.	नहीं	अन्न आद्यम्	११.	नैवेद्य आदि वस्तुओं के समर्पण
तोषाय	४.	तो भी मैं सन्तुष्ट	च किम्	१२.	से तो करना ही क्या है
कल्पते ।	६.	होता हूँ	पुनः ॥	७.	फिर

श्लोकार्थ—यदि कोई अभक्त बहुत सी सामग्री निवेदन करें. तो भी मैं सन्तुष्ट नहीं होता हूँ । फिर भक्त के द्वारा निवेदित गन्ध, धूप, पुष्प, दीप और नैवेद्य आदि वस्तुओं के समर्पण से तो करना ही क्या है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

शुचिः सम्भृतसम्भारः प्राग्दर्भैः कल्पितासनः ।
आसीनः प्रागुदग वार्चेदर्चायामथ सम्मुखः ॥१६॥

पदच्छेद—

शुचिः सम्भृत सम्भारः प्राग्दर्भैः कल्पित आसनः ।
आसीनः प्राक् उदक् वा अर्चेत् अर्चायाम् अथ सम्मुखः ॥

शब्दार्थ—

शुचिः	७.	पवित्रता से	आसीनः	८.	आसन पर बैठ जाये
सम्भृत	२.	इकठी कर ले	प्राक् उदक् वा	६.	फिर पूर्व-उत्तर को मुँहकरके
सम्भारः	१.	पहले पूजा की सामग्री	अर्चेत्	१२.	पूजन करे
प्राग्दर्भैः	५.	कुश का अगला भाग की ओर रहे	अर्चा याम्	१०.	पूजा में
कल्पित	३.	फिर ऐसा	अथ	६.	अथवा
आसनः ।	४.	आसन बनाये कि	सम्मुखः ॥	११.	मूर्ति के सम्मुख बैठकर

श्लोकार्थ—पहले पूजा की सामग्री इकठी कर ले फिर ऐसा आसन बनाए कि कुश का अगला भाग पूर्व की ओर रहे। फिर उत्तर मुँह करके पवित्रता से आसन पर बैठ जाये। अथवा पूजा में मूर्ति के सम्मुख बैठ कर पूजन करे ॥

विंशः श्लोकः

कृतन्यासः कृतन्यासां मदर्चां पाणिना मृजेत् ।
कलशं प्रोक्षणीयं च यथावदुपसाधयेत् ॥२०॥

पदच्छेद—

कृत न्यासः कृतःन्यासाम् मत् अर्चा पाणिना मृजेत् ।
कलशम् प्रोक्षणीयम् च यथा वत् उपसाध येत् ॥

शब्दार्थ—

कृतन्यासः	१.	अपले अङ्गन्यास और	कलशम्	८.	जल से भरे हुये कलश और
कृतन्यासाम्	२.	करन्यास कर ले । तथा	प्रोक्षणीयम्	६.	प्रोक्षण पात्र आदि को
मत्	४.	मेरी	च	७.	और तब
अर्चाम्	५.	प्रतिमा से पहले की	यथा	१०.	विधि
पाणिना	३.	अपना हाथ से	वत्	११.	पूर्वक् गन्ध पुष्पादि से
मृजेत् ।	६.	पूजन सामग्री हटा दे ।	उपसाधयेत् ॥	१२.	पूजा करे

श्लोकार्थ—पहले अङ्गन्यास और कर न्यास करले, तथा अपने हाथ से मेरी प्रतिमा से पहले की पूजा सामग्री हटा दे। और तब जल से भरे हुये कलश और प्रोक्षणपात्र आदि की विधि पूर्वक गन्ध पुष्पादि से पूजा करे ॥

एकविंशः श्लोकः

तदद्भिर्देवयजनं द्रव्याण्यात्मान मेव च ।
प्रोक्ष्य पात्राणि त्रीण्यद्भिस्तैर्द्रव्यैश्च साधयेत् ॥२१॥

पदच्छेद—

तत् अद्भिः देवयजनम् द्रव्याणि आत्मानम् एव च ।
प्रोक्ष्य पात्राणि त्रीणि अद्भिः तैः तैः द्रव्यैः च साधयेत् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	प्रोक्षणीयपात्र के	प्रोक्ष्य	६.	कलश में से
अद्भिः	२.	जल से	पात्राणि	८.	पात्रों में
देवयजनम्	६.	प्रोक्षण करे, फिर	त्रीणि	७.	तीनों
द्रव्याणि	३.	पूजा सामग्री	अद्भिः	१०.	जल भर कर रखले
आत्मानम्	५.	अपने शरीर का	तैः तैः	११.	और उसमें पूजा पद्धति केअनुसार
एव च ।	४.	और	द्रव्यैच	१२.	सामग्री
			साधयेत् ॥	१३.	डाले

श्लोकार्थ—प्रोक्षणीय पात्र के जल से पूजा सामग्री और अपने शरीर का प्रोक्षण करे, फिर तीनों पात्रों में कलश में से जल भर कर रखले, और उसमें पूजा पद्धति के अनुसार सामग्री डाले ॥

द्वाविंशः श्लोकः

पाद्यार्घ्याचमनीयार्थं त्रीणि पात्राणि दैशिकः ।
हृदाशीर्ष्णाथ शिखया गायत्र्या चाभिमन्त्रयेत् ॥२२॥

पदच्छेद—

पाद्य अर्घ्य आचमनीय अर्थम् त्रीणि पात्राणि दैशिकः ।
हृदा शीर्ष्णा अथ शिखया गायत्र्या च अभिमन्त्रयेत् ॥

शब्दार्थ—

पाद्य	२.	तदनन्तरपाद्य	हृदा	८.	हृदय मन्त्र
अर्घ्य	३.	अर्घ्य और	शीर्ष्णा	६.	शिरोमन्त्र
आचमनीय	४.	आचमनी	अथ	१३.	फिर अन्त में
अर्थम्	५.	के लिये	शिखया	११.	शिखामन्त्रसे
त्रीणि	६.	तीनों	गायत्र्या	१४.	गायत्रीमन्त्रसे अभिमन्त्रित करे
पात्राणि	७.	पात्रों को क्रमशः	च	१०.	और
दैशिकः ।	१.	पूजा करने वाला	अभिमन्त्रयेत् ॥	१२.	अभिमन्त्रित करके

श्लोकार्थ—पूजा करने वाला तदनन्तर पाद्य, अर्घ्य और आचमनी के लिये तीनों पात्रों को क्रमशः हृदयमन्त्र शिरोमन्त्र और शिखामन्त्र से अभिमन्त्रित करके फिर अन्त में गायत्री मन्त्र से अभिमन्त्रित करे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

पिण्डे वाय्वग्निसंशुद्धे हृत्पद्मस्थां परां मम ।
अण्वीं जीवकलां ध्यायेन्नादान्ते सिद्धभाविताम् ॥२३॥

पदच्छेद— पिण्डे वायु अग्नि संशुद्धे हृत्पद्मस्थाम् पराम् मम ।
अण्वीम् जीवकलाम् ध्यायेत् नादान्ते सिद्ध भाविताम् ॥

शब्दार्थ—

पिण्डे	२.	शरीर की	अण्वीम्	७.	सूक्ष्म और दीप शिखा के समान
वायु	१.	प्राणायाम से प्राण वायु और भावनाओं से	जीव	६.	जीव
अग्नि	३.	अग्नि के	कलाम्	१०.	कला का
संशुद्धे	४.	शुद्ध हो जाने पर	ध्यायेत्	११.	ध्यान करे
हृत्पद्मस्थाम्	५.	हृदय कमल में	नादान्ते	१३.	ऊँ के अ.उ.म. बिन्दु और नाद के अन्त में
पराम्	६.	परम	सिद्ध	१२.	बड़ेबड़े सिद्ध और ऋषि मुनि
मम ।	८.	मेरी	भाविताम् ॥	१४	उसी जीवकलाका ध्यान ,करते हैं

श्लोकार्थ—प्राणायाम से प्राण वायु और भावनाओं से शरीर की अग्नि के शुद्ध हो जाने पर हृदय-कमल में परम सुक्ष्म और दीप शिखा के समान मेरी जीवकला का ध्यान करे। बड़े-बड़े सिद्ध और ऋषि-मुनि ऊँ के अ उ म और नाद के अन्त में उसी जीव कला का ध्यान करते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

तयाऽऽत्मभूतया पिण्डे व्याप्ते सम्पूज्य तन्मयः ।
आवाह्यार्चादिषु स्थाप्य न्यस्ताङ्गं मां प्रपूजयेत् ॥२४॥

पदच्छेद— तया आत्मभूतया पिण्डे व्याप्ते सम्पूज्यः तन्मयः ।
आवाह्य अर्चादिषु स्थाप्य न्यस्त अङ्गम् माम् प्रपूजयेत् ॥

शब्दार्थ—

तया	१.	जब उस	आवाह्य	६.	मेरा आवाहन
आत्म	२.	आत्म स्वरूपिणी	अर्चादिषु	८.	फिर मन्त्रों के द्वारा
भूतया	३.	जीव कला के तेज से	स्थाप्य	१०.	स्थापन और न्यास
पिण्डे	४.	अन्तकरण और शरीर	न्यस्त	१२.	न्यास करके
व्याप्ते	५.	भर जाय, तब	अङ्गम्	११.	अङ्ग
सम्पूज्यः	७.	उसकी पूजा करनी चाहिये	माम्	१३.	मेरी
तन्मयः ।	६.	मन ही मन	प्रपूजयेत् ।	१४.	पूजा करे

श्लोकार्थ—जब उस आत्मस्वरूपिणी जीव कला के तेज से अन्तःकरण और शरीर भर जाय तब मन ही मन उसकी पूजा करनी चाहिये। फिर मन्त्रों के द्वारा मेरा आवाहन स्थापन और न्यास, अङ्ग न्यास करके मेरी पूजा करे ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

पाद्योपस्पर्शार्हणादीनुपचारान् प्रकल्पयेत् ।
धर्मादिभिश्च नवभिः कल्पयित्वाऽऽसनं मम ॥२५॥

पदच्छेद—

पाद्य उपस्पर्श अर्हण आदीन् उपचारान् प्रकल्पयेत् ।
धर्म आदिभिः च नवभिः कल्पयित्वा आसनम् मम ॥

शब्दार्थ—

पाद्य	७.	पाद्य	धर्म	३.	धर्म
उपस्पर्श	८.	आचमनीय तथा	आदिभिः	४	आदि
अर्हण	९.	अर्घ्य	च नवभिः	५.	नौगुणों की
आदीन्	१०.	आदि	कल्पयित्वा	६.	भावना करे और
उपचारान्	११.	उपचार	आसनम्	२.	आसन में
प्रकल्पयेत् ।	१२.	प्रस्तुत करे	मम ॥	१.	मेरे

श्लोकार्थ—मेरे आसन में धर्म आदि नौगुणों की भावना करे, और पाद्य आचमनीय तथा अर्घ्य आदि उपचार प्रस्तुत करे ॥

षड्विंशः श्लोकः

पद्ममष्टदलं तत्र कर्णिकाकेसरोज्ज्वलम् ।
उभाभ्यां वेदतन्त्राभ्यां मह्यं तूभयसिद्धये ॥२६॥

पदच्छेद—

पद्मम् अष्टदलम् तत्र कर्णिका केसर उज्ज्वलम् ।
उभाभ्याम् वेदतन्त्राभ्याम् मह्यम् तु उभय सिद्धये ॥

शब्दार्थ—

पद्मम्	३.	कमल है, उसकी	उभाभ्याम्	११.	दोनों विधियों से
अष्टदलम्	२.	अष्ट दल	वेद	९.	वैदिक और
तत्र	१.	उस आसन पर	तन्त्राभ्याम्	१०.	तान्त्रिक मन्त्रों से
कर्णिका	४.	कर्णिका और	मह्यम्	१२.	मेरी पूजा करे
केसर	५.	केसरों की छटा	तु उभय	७.	भोग और मोक्ष की
उज्ज्वलम् ।	६	निराली है	सिद्धये ॥	८.	सिद्धि के लिये

श्लोकार्थ—उह आसन पर अष्टदल कमल है, उसकी कर्णिका और केसरों की छटा निराली है । भोग और मोक्ष की सिद्धि के लिये वैदिक और तान्त्रिक मन्त्रों द्वारा दोनों विधियों से मेरी पूजा करे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सुदर्शनं पाञ्चजन्यं गदासीषुधनुर्हलान् ।
मुसलं कौस्तुभं मालां श्रीवत्सं चानुपूजयेत् ॥२७॥

पदच्छेद—

सुदर्शनम् पाञ्चजन्यम् गदा असि इषुधनुः हलान् ।
मुसलम् कौस्तुभम् मालाम् श्री वत्सम् च अनुपूजयेत् ॥

शब्दार्थ—

सुदर्शनम्	१.	सुदर्शन चक्र	मुसलम्	७.	मूसल
पाञ्च जन्यम्	२	पाञ्चजन्य शङ्ख	कौस्तुभम्	८.	कौस्तुभमणि
गदा असि	३.	कौमोद की गदा, तलवार	मालाम्	१०.	वैजयन्ती माला
इषु	४.	बाण	श्रीवत्सम्	११.	श्रीवत्स चिह्न की वक्ष स्थल पर
धनुः	५.	धनुष	च	९.	तथा
हलान् ।	६.	हल	अनुपूजयेत् ॥	१२.	यथास्थान पूजा करे

श्लोकार्थ—सुदर्शन चक्र, पाञ्चजन्य शङ्ख, कौमोद की गदा, तलवार, बाण, धनुष, हल, मूसल इन आठ आयुधों की पूजा आठ दिशाओं में करे। और कौस्तुभमणि, वैजयन्ती माला तथा श्रीवत्स चिह्न की वक्ष स्थल पर यथा-स्थान पूजा करे ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

नन्दं सुनन्दं गरुडं प्रचण्डं चण्डमेव च ।
महाबलं बलं चैव कुमुदं कुमुदेक्षणम् ॥२८॥

पदच्छेद—

नन्दम् सुनन्दम् गरुडम् प्रचण्डम् चण्डम् एव च ।
महाबलम् बलम् च एव कुमुदम् कुमुद ईक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

नन्दम्	१.	नन्द	महाबलम्	८.	महाबल
सुनन्दम्	२.	सुनन्द	बलम्	७.	बल
गरुडम्	३.	गरुड	च एव	१०.	और
प्रचण्डम्	६.	प्रचण्ड	कुमुदम्	९.	कुमुद
चण्डम्	४.	चण्ड	कुमुद	११.	कुमुद
एव च ।	५.	और	ईक्षणम् ॥	१२.	ईक्षण, इन आठ पार्षदों की आठ दिशाओं में पूज करें

श्लोकार्थ—नन्द-सुनन्द-गरुड-चण्ड और प्रचण्ड, बल, महाबल, कुमुद और कुमुद-ईक्षण, इन आठ पार्षदों की आठ दिशाओं में पूजा करे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

दुर्गां विनायकं व्यासं विष्वक्सेनं गुरून् सुरान् ।
स्वे स्वे स्थाने त्वभिमुखान् पूजयेत्प्रोक्षणादिभिः ॥२९॥

पदच्छेद—

दुर्गाम् विनायकम् व्यासम् विष्वक्सेनम् गुरून् सुरान् ।
स्वे-स्वे स्थाने तु अभिमुखान् पूजयेत् प्रोक्षण आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

दुर्गाम्	१.	दुर्गा	स्वे-स्वे	७.	यथा
विनायकम्	२.	विनायक	स्थाने	८.	स्थान अथवा
व्यासम्	३.	व्यास	तु अभिमुखान्	९.	सामने स्थापना करके
विष्वक्सेनम्	४.	विष्वक्सेन	पूजयेत्	१२.	उनकी पूजा करे
गुरुन्	५.	गुरु और	प्रोक्षण	१०.	प्रोक्षण
सुरान् ।	६.	देवताओं की	आदिभिः ॥	११.	अर्घ्यदान आदि के द्वारा

श्लोकार्थ—दुर्गा विनायक, व्यास विष्वकसेन, गुरु और देवताओं की यथा-स्थान अथवा साम स्थापना करके प्रोक्षण अर्घ्यदान आदि के द्वारा उनकी पूजा करे ॥

त्रिंशः श्लोकः

चन्दनोशीरकर्पूरकुङ्कुमागुरुवासितैः ।
सलिलैः स्नापयेन्मन्त्रैर्नित्यदा विभवे सति ॥३०॥

पदच्छेद—

चन्दन अशीर कर्पूर कुङ्कुम अगुरु वासितैः ।
सलिलैः स्नापयेत् मन्त्रैः नित्यदा विभवे सति ॥

शब्दार्थ—

चन्दन	४.	चन्दन	सलिलैः	१०.	जल से
उशीर	५.	स्वश	स्नापयेत्	१२.	स्नान कराये
कर्पूर	६.	कपूर	मन्त्रैः	११.	मन्त्रों के द्वारा
कुङ्कुम	७.	केशर और	नित्यदा	३.	प्रतिदिन
अगुरु	८.	अरगजा आदि से	विभवे	१.	यदि सामर्थ्य
वासितैः ।	९.	सुवासित	सति ॥	२.	हो तो

श्लोकार्थ—यदि सामर्थ्य हो तो प्रतिदिन चन्दन, खश, कपूर, केशर और अरगजा आदि सुवासित जल से मन्त्रों द्वारा स्नान कराये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

स्वर्णघर्मानुवाकेन महापुरुविद्यया ।
पौरुषेणापि सूक्तेन सामभी राजनादिभिः ॥३१॥

पदच्छेद—

स्वर्णघर्म अनुवाकेन महापुरुष विद्यया ।
पोरुषेठा अपि सुक्तेन शामभी राजन आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

स्वर्णघर्म	१. स्वर्णधर्म इत्यादि	अपि	१०. करता रहे
अनुवाकेन	२. स्वर्णघर्मानुवाक "जितंते पुण्डरीकाक्ष"	सुक्तेन	६. सुक्त और "इन्द्रंनरों" इत्यादि
महा पुरुष	३. महापुरुष	सामभी	९. सामगान का पाठ भी
विद्यया ।	४. विद्या "सहस्र शीर्षापुरुषः" इत्यादि	राजन	७. मन्त्रोक्त राजन
पौरुषेण	५. पुरुष	आदिभिः ॥	८. आदि

श्लोकार्थ—उस समय "सूवर्णधर्म" इत्यादि स्वर्णघर्मानुवाक्. 'जितं ते पुण्डरीकाक्षं' इत्यादि विद्या, 'ससस्रशीर्षा पुरुषः' इत्यादि पुरुष सूक्त और 'इन्द्रंनरो' इत्यादि मन्त्रोक्त राजनादि सामगान का पाठ भी करता रहे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

वस्त्रोपवीताभरण पत्रस्रग्गन्धलेपनैः ।
अलङ्कुर्वीत सप्रेम मद्भक्तो मां यथोचितम् ॥३२॥

पदच्छेद—

वस्त्र उपवीत आमरण पत्र स्त्रक् गन्धलेपनैः ।
अलङ्कुर्वीत सप्रेम मत् भक्तः माम् यथा उचितम् ॥

शब्दार्थ—

वस्त्र	३. वस्त्र	अलङ्कुर्वीत	१२. शृङ्गार करे
उपवीत	४. यज्ञोपवीत	सप्रेम	९. प्रेम पूर्वक
आभरण	५. आभूषण	मत्	१. मेरा
पत्र	६. पत्र	भक्तः	२. भक्त
स्त्रक्	७. माला	यथा माम्	१०. मेरा
गन्धलेपनैः ।	८. गन्ध और चन्दनादि से	उचितम् ॥	११. यथावत्

श्लोकार्थ—मेरा भक्त वस्त्र यज्ञोपवीत, आभूषण, पत्र, माला, गन्ध और चन्दनादि से प्रेम-पूर्वक मेरा यथावत् शृङ्गार करे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

पाद्यमाचमनीयं च गन्धं सुमनसोऽक्षतान् ।
धूपदीपोपहार्य्याणि दद्यान्मे श्रद्धयार्चकः ॥३३॥

पदच्छेद —

पाद्यम् आचमनीयम् च गन्धम् सुमनसः अक्षतान् ।
धूप दीप उपहार्य्याणि दद्यात् मे श्रद्धया अर्चकः ॥

शब्दार्थ—

पाद्यम्	३.	पाद्य	धूप-दीप	९.	धूप-दीप
आचमनीयम्	४.	आचमन	उपहार्य्याणि	१०.	आदि सामग्रियाँ
च	५.	ओर	दद्यात्	१२.	समर्पित करे
गन्धम्	६.	चन्दन	मे	११.	मुझे
सुमनसः	७.	पुष्प	श्रद्धया	२.	श्रद्धा के साथ
अक्षतान् ।	८.	अक्षत	अर्चकः ॥	१.	उपासक

श्लोकार्थ—उपासक श्रद्धा के साथ पाद्य, आचमन, ओर चन्दन, पुष्प, अक्षत् धूप-दीप आदि सामग्रि
मुझे समर्पित करे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

गुडपायससर्पींषि शष्कुल्यापूपमोदकान् ।
संयावदधिसूपाश्च नैवेद्यं सति कल्पयेत् ॥३४॥

पदच्छेद—

गुडपायस सर्पींषि शष्कुल्यः अपूप मोदकान् ।
संयाव दधि सूपान् च नैवेद्यम् सति कल्पयेत् ॥

शब्दार्थ—

गुड	२.	गुड़	संयाव	८.	हलुआ
पायस	३.	खीर	दधि	९.	दही
सर्पींषि	४.	घृत	सुपान् च	१०.	और सूप दाल आदि का
शष्कुल्याः	५.	पूड़ी	नैवेद्यम्	११.	नैवेद्य
अपूप	६.	पूए	सति	१.	यदि हो सके तो
मोदकान् ।	७.	लड्डू	कल्पयेत् ॥	१२.	भोग लगावे

श्लोकार्थ—यदि हो सके तो गुड़, खीर, घृत, पूड़ी, पूए, लड्डू हलुआ, दही और सूप दाल, आदि
का नैवेद्य भोग लगावे ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अभ्यङ्गोन्मर्दनादर्शदन्तधावाभिषेचनम् ।
अन्नाद्यगीतनृत्यादि पर्वणि स्युरुतान्वहम् ॥३५॥

पदच्छेद—

अभ्यङ्ग उन्मर्दन आदर्श दन्तधावा अभिषेचनम् ।
अन्न आद्य गीत नृत्य आदि पर्वणि स्युः उत अन्वहम् ॥

शब्दार्थ—

अभ्यङ्ग	४. सुगन्धित पदार्थों का लेपकरे	आद्य	७.	आदि भोग लगाये
उन्मर्दन	२. उबटन लगाये	गीत	१०.	गाने और
आदर्श	५. दर्पण दिखाये	नृत्यआदि	११.	नाचने आदि का भी
दन्तधाव	१. भगवान् को दतुअन कराये	पर्वणि	६.	पर्वों के अवसर पर
अभिषेचनम् ।	३. स्नान कराये	स्युः	१२.	प्रबन्ध करे
अन्न	६. अन्न	उत अन्वहम् ॥	८.	प्रतिदिन अथवा

श्लोकार्थ—भगवान को दतुअन कराये, उबटन लगाये, स्नान कराये, सुगन्धित पदार्थों का लेपकरे, दर्पण दिखाये, अन्न आदि का भोग लगाये, प्रतिदिन अथवा पर्वों के अवसर पर गाने नाचने आदि का भी प्रबन्ध करे ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

विधिना विहिते कुण्डे मेखलागर्तवेदिभिः ।
अग्निमाधाय परितः समूहेत् पाणिनोदितम् ॥३६॥

पदच्छेद—

विधिना विहिते कुण्डे मेखला गर्त वेदिभिः ।
अग्निम् आधाय परितः समूहेत् पाणिना उदितम् ॥

शब्दार्थ—

विधिना	१. शास्त्रोक्त विधि से	अग्निम्	४.	अग्नि की
विहिते	२. बने हुये	आधाय	५.	स्थापना करे
कुण्डे	३. कुण्ड में	परितः	११.	उसका परि
मेखला	६. वह कुण्ड मेखला	समूहेत्	१२.	समूहन् करे
गर्त	७. गर्त और	पाणिना	९.	उसमें हाथ की
वेदिभिः ।	८. वेदी से शोभायमान हो	उदितम् ॥	१०.	वायु से अग्नि स्थापित करके

श्लोकार्थ—शास्त्रोक्त विधि से बने हुये कुण्ड में अग्नि की स्थापना करे । वह कुण्ड मेखला गर्त और वेदी से शोभायमान हो । उसमें हाथ की वायु से अग्नि स्थापित करके उसका परिसमूहन करे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

परिस्तीर्याथ पर्युक्षेदन्वाधाय यथाविधि ।
प्रोक्षण्याऽऽसाद्य द्रव्याणि प्रोक्ष्याग्नौ भावयेत माम् ॥३७॥

पदच्छेद—

परिस्तीर्य अथ पर्युक्षेत् अन्वाधाय यथा विधि ।
प्रोक्षण्या आसाद्य द्रव्याणि प्रोक्ष्य अग्नौ भावयेत माम् ॥

शब्दार्थ—

परिस्तीर्य	१. वेदी के चारों ओर	प्रोक्षण्या	९. प्रोक्षणी पात्र के जल से
अथ	२. तब	आसाद्य	८. रखकर
पर्युक्षेत	३. उस पर जल छिड़के	द्रव्याणि	७. होम के उपयोग की सामग्री
अन्वाधाय	६. समिधाओं का आधान करे	प्रोक्ष्य	१०. प्रोक्षण करे फिर
यथा	५. पूर्वक	अग्नौ	११. अग्नि में
विधि ।	४. और विधि	भावयेत माम् ॥	१२. मेरा इस प्रकार ध्यान करे

श्लोकार्थ—वेदी के चारों ओर तब उस पर जल छिड़के और विधि-पूर्वक समिधाओं का आधान करे। होम के उपयोग की सामग्री रख कर प्रोक्षणी पात्र के जल से प्रोक्षण करे। फिर अग्नि में मेरा इस प्रकार ध्यान करे ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

तप्तजाम्बूनदप्रख्यं शङ्खचक्रगदाम्बुजैः ।
लसच्चतुर्भुजं शान्तं पद्म किञ्जल्कवाससम् ॥३८॥

पदच्छेद—

तप्त जाम्बूनद प्रख्यम् शङ्ख चक्र गदा अम्बुजैः ।
लसत् चतुर्भुजम् शान्तम् पद्म किञ्जल्क वाससम् ॥

शब्दार्थ—

तप्त	१. मेरी मूर्ति तपाये	लसत्	६. शोभायमान है
जाम्बुनद	२. सोने के समान	चतुर्भुजम्	५. चार भुजायें
प्रख्यम्	३. दमक रही है	शान्तम्	४. उससे शान्ति बरस रही है
शङ्ख	७. उनमें शङ्ख	पद्म	१०. कमल की
चक्र-गदा	८. चक्र-गदा और	किञ्जल्क	११. केशर के समान
पद्म अम्बुजैः ।	९ पद्म विराजमान है	वाससम् ॥	१२. पीला-वस्त्र फहरा रहा है

श्लोकार्थ—मेरी मूर्ति तपाये सोने के समान दमक रही है। उससे शान्ति बरस रही है। चार भुजाये शोभायमान हैं। उसमें शङ्ख, चक्र, गदा और पद्म विराजमान है। कमलों की केसर के समान पीला वस्त्र फहरा रहा है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

स्फुरत्किरीटकटककटिसूत्रवराङ्गदम् ।
श्रीवत्सवक्षसं भ्राजत्कौस्तुभं वनमालिनम् ॥३९॥

पदच्छेद—

स्फुरत् किरीट कटक कटि सूत्र वर अङ्गदम् ।
श्रीवत्स वक्षसम् भ्राजत् कौस्तुभम् वन मालिनम् ॥

शब्दार्थ—

स्फुरत्	२.	झिलमिला रहा है	श्रीवत्स	८.	श्रीवत्स का चिह्न है
किरीट	१.	सिर पर मुकुट	वक्षसम्	७.	वक्षःस्थल पर
कटक	३.	कलाइयों में कंगन	भ्राजत्	१०.	जगमगा रही है
कटि सूत्र	४.	कमर में करधनी	कौस्तुभम्	९	गले में कौस्तुभ मणि
वर	५.	बाहों में	वन मालिनम् ॥	११.	घुटनों तक वनलाला लटक रही है
अङ्गदम् ।	६.	बाजूबन्द			

श्लोकार्थ—सिर पर मुकुट झिलमिला रहा है, कलाइयों में कंगन, कमर में करधनी, बाँहों में बाजूबन्द, वक्षःस्थल पर श्रीवत्स का चिह्न है। गले में कौस्तुभ मणि जगमगा रही है ॥ घुटनों तक वनमाला लटक रही है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

ध्यायन्नभ्यर्च्य दारूणि हविषाभिघृतानि च ।
प्रास्याज्यभागावाघारौ दत्त्वा चाज्यप्लुतं हविः ॥४०॥

पदच्छेद—

ध्यायन् अभ्यर्च्य दारुणि हविशा अभिघृतानि च ।
प्रास्य आज्य भागौ आधारौ दत्त्वा च आज्यप्लुतम् हविः ॥

शब्दार्थ—

ध्यायन्	१.	मेराध्यान् करके	प्रास्य	९.	आहुतियाँ डालकर
अभ्यर्च्य	२.	पूजा करनी चाहिये	आज्यभागौ	७.	आज्य भाग
दारुणि	४.	समिधाओं को	आधारौ	८.	आधार नामक
हविषा	६.	आहुति दें	दत्त्वा च	१०.	दो-दो आहुतियों से हवन करे
अभिघृतानि	५.	घृत में डुबोकर	आज्यप्लुतम्	११.	फिर घी से भिगोकर
च ।	३.	और	हविः ॥	१२.	अन्य सामग्री से आहुति दे

श्लोकार्थ—मेरा ध्यान करके पूजा करनी चाहिये, और समिधाओं को घृत में डुबोकर आहुति दे। आज्य भाग आघारनामक आहुतियाँ डाल कर दो दो आहुतियों से हवन करे। फिर घी में भिगोकर अन्य साम्रग्री से आहुति दे ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

जुहुयान्मूलमन्त्रेण षोडशर्चावदानतः ।
धर्मादिभ्यो यथान्यायं मन्त्रैः स्विष्टकृतं बुधः ॥४१॥

पदच्छेद—

जुहुयात् मूलमन्त्रेण षोडश ऋचा अवदानतः ।
धर्मादिभ्यः यथा न्यायम् मन्त्रैः स्विष्टकृतम् बुधः ॥

शब्दार्थ—

जुहुयात्	५.	हवन करे	धर्मादिभ्यः	७.	धर्मादि देवताओं के लिये भी
मूल मन्त्रेण	१.	इष्ट मन्त्र से अथवा	यथा न्यायम्	८.	विधि पूर्वक
षोडश	२.	पुरुष सुक्त के सोलह	मन्त्रैः	९.	मन्त्रों से हवन करे और
ऋचा	३.	मन्त्रों से या	स्विष्ट कृतम्	१०.	स्विष्ट आहुति दे ।
अवदानतः ।	४.	अष्टाक्षर मन्त्र से	बुधः ॥	६.	बुद्धिमान पुरुष

श्लोकार्थ—इष्ट मन्त्र से अथवा पुरुष सुक्तके सोलह मन्त्रों से या अष्टाक्षर मन्त्र से हवन करे । बुद्धिमान पुरुष धर्मादि देवताओं के लिये भी विधि पूर्वक मन्त्रों से हवन करे और स्विष्टकृत आहुति दे ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

अभ्यर्च्याथ नमस्कृत्य पार्षदेभ्यो बलिं हरेत् ।
मूलमन्त्रं जपेद् ब्रह्म स्मरन्नारायणात्मकम् ॥४२॥

पदच्छेद—

अभ्यर्च्य अथ नमस्कृत्य पार्षदेभ्यः बलिम् हरेत् ।
मूलमन्त्रम् जपेद् ब्रह्म स्मरन् नारायण आत्मकम् ॥

शब्दार्थ—

अभ्यर्च्य	२.	पूजा करके उन्हें	मूलमन्त्रेण	९.	मूल मन्त्र (ॐ नमो नारायणय का)
अथ	१.	इसके बाद	जपेद्	१०.	जप करे
नमस्कृत्य	३.	नमस्कार करे और	ब्रह्म	११.	पर ब्रह्म स्वरूप नारायण का
पार्षदेभ्यः	४.	पार्षदों को	स्मरन्	१२.	स्मरण कर
बलिम्	५.	बलि	नारायण	७.	भगवत्
हरेत् ।	६.	दे	आत्मकम् ॥	८.	स्वरूप

श्लोकार्थ—इसके बाद पूजा करके उन्हें नमस्कार करे और पार्षदों को बलि दे । भगवत् स्वरूप मूलमन्त्र (ॐ नमो नारायणाय का) जपकरे । पर ब्रह्म स्वरूप नारायण का स्मरण करे ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

दत्त्वाऽऽचमनमुच्छेषं विष्वक्सेनाय कल्पयेत् ।
मुखवासं सुरभिमत् ताम्बूलाद्यमथार्हयेत् ॥४३॥

पदच्छेद—

दत्त्वा आचमनम् उच्छेषम् विष्वक् सेनाय कल्पयेत् ।
मुखवासम् सुरभिमत् ताम्बूल आद्यम् अथ अर्हयेत् ॥

शब्दार्थ—

दत्त्वा	२.	कराये	मुखवासम्	९.	मुखवास
आचमनम्	१.	भगवान् को आचमन	सुरभिमत्	७.	सुगन्धित
उच्छेषम्	३.	उनका प्रसाद	ताम्बूल आद्यम्	८.	ताम्बूल आदि
विष्वक् सेनाय	४.	विष्वक् सेन को	अथ	६.	इसके बाद
कल्पयेत् ।	५.	निवेदन करे	अर्हयेत् ॥	१०.	उपस्थित करे

श्लोकार्थ—भगवान को आचमन कराये उनका प्रसाद विष्वक्सेन को निवेदन करे । इसके बाद सुगन्धित ताम्बूल आदि मुखवास उपस्थित करे ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

उपगायन् गृणन् नृत्यन् कर्माण्यभिनयन् मम ।
मत्कथाः श्रावयञ्छृण्वन् मुहूर्तं क्षणिको भवेत् ॥४४॥

पदच्छेद—

उपगायन् गृणन् नृत्यन् कर्माणि अभिनयन् मम ।
मत्कथाः श्रावयन् शृण्वन् मुहूर्तम् क्षणिकः भवेत् ॥

शब्दार्थ—

उपगायन्	२.	लीलाओं को गाये	मत्कथाः	७.	मेरी लीला कथा में
गृणन्	३.	वर्णन करे	श्रावयन्	९.	दूसरों को सुनाये
नृत्यन्	४.	नृत्य करे	शृण्वन्	८.	स्वयं सुने और
कर्माणि	५.	लीलाओं का	मुहूर्तम्	१०.	कुछ समय तक
अभिनयन्	६.	अभिनय करे	क्षणिकः	११.	मुझमें तन्मय
मम ।	१.	मेरी	भवेत् ॥	१२.	हो जाये

श्लोकार्थ—मेरी लीलाओं को गाये, वर्णन करे, नृत्य करे, लीलाओं का अभिनय करे । मेरी लीला कथा में स्वयं सुने और दूसरों को सुनाये, कुछ समय तक मुझमें तन्मय हो जाये ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

स्तवैरुच्चावचैः स्तोत्रैः पौराणैः प्राकृतैरपि ।
स्तुत्वा प्रसीद भगवन्निति वन्देत दण्डवत् ॥४५॥

पदच्छेद—

स्तवैः उच्चावचैः स्तोत्रैः पौराणैः प्राकृतैः अपि ।
स्तुत्वा प्रसीद भगवन् इति वन्देत दण्डवत् ॥

शब्दार्थ—

स्तवैः	५.	स्तवों और	स्तुत्वा	७.	मेरी स्तुति करके प्रार्थना करे
उच्चावचैः	४.	बनाए हुए छोटे-बड़े	प्रसीद	६.	प्रसन्न होइये
स्तोत्रैः	६.	स्तोत्रों से	भगवन्	८.	भगवन् आप
पौराणैः	१.	प्राचीन ऋषियों द्वारा अथवा	इति	१०.	इस प्रकार
प्राकृतैः	२.	प्राकृत भक्तों द्वारा	वन्देत	१२.	वन्दना करे
अपि ।	३.	भी	दण्डवत् ॥	११.	दण्डवत् प्रणाम करके

श्लोकार्थ—प्राचीन ऋषियों द्वारा अथवा प्राकृत-भक्तों द्वारा भी बनाए हुये छोटे-बड़े स्तवों और स्तोत्रों से मेरी स्तुति करके प्रार्थना करे । भगवन् आप प्रसन्न होइये । इस प्रकार दण्डवत् प्रणाम करके वन्दना करे ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

शिरो मत्पादयोः कृत्वा बाहुभ्यां च परस्परम् ।
प्रपन्नं पाहि मामीश भीतं मृत्युग्रहार्णवात् ॥४६॥

पदच्छेद—

शिरः मत् पादयोः कृत्वा बाहुभ्याम् च परस्परम् ।
प्रपन्नम् पाहि माम् ईश भीतम् मृत्युग्रह अर्णवात् ॥

शब्दार्थ—

शिरः	१.	अपना सिर	प्रपन्नम्	११.	शरणागत की
मत्	२.	मेरे	पाहि	१२.	रक्षा कीजिए
पादयोः	३.	पैरों पर	माम्	१०.	मुझ
कृत्वा	४.	रख दे	ईश	७.	भगवन ! मैं
बाहुभ्याम् च	५.	और अपने दोनों हाथों से	भीतम्	८.	भयभीत हूँ अतः
परस्परम् ।	६.	परस्पर चरण पकड़कर कहे	मृत्यु ग्रह अर्णवात् ॥	९.	मृत्यु ग्रह रूपी समुद्र से

श्लोकार्थ—अपना सिर मेरे पैरों पर रख दे और दोनों से परस्पर चरण पकड़कर कहे । भगवन् । मैं भयभीत हूँ । अतः मृत्यु ग्रहरूपी समुद्र से मुझ शरणागत की रक्षा कीजिए ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

इति शेषां मया दत्तां शिरस्याधाय सादरम् ।
उद्वासयेच्चेदुद्वास्यं ज्योतिर्ज्योतिषि तत् पुनः ॥४७॥

पदच्छेद—

इति शेषां मया दत्तां शिरस्याधाय सादरम् ।
उद्वासयेत् चेत् उद्वास्यम् ज्योतिः ज्योतिषि तत् पुनः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	उद्वासयेत्	१४.	यह भावना करके विसर्ज कर दे
शेषाम्	४.	माला	चेत्	८.	यदि
मया	२.	मुझे	उद्वास्यम्	९.	विसर्जन करना हो
दत्ताम्	३.	समर्पित की हुई	ज्योतिः	१२.	ज्योति
शिरसि	६.	अपने सिर पर	ज्योतिषि	१३.	ज्योति में लीन हो रही है
आधाय	७.	रखबे उसे	तत्	१०.	तो
सादरम् ।	५.	आदर के साथ	पुनः ॥	११.	फिर

श्लोकार्थ—इस प्रकार मुझे समर्पित की हुई माला आदर के साथ अपने सिर पर रखबे । उसे यदि विसर्जन करना हो तो फिर ज्योति-ज्योति में लीन हो रही है । यह भावना करके विसर्जन कर दे ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

अर्चादिषु यदा यत्र श्रद्धा मां तत्र चार्चयेत् ।
सर्वभूतेष्वात्मनि च सर्वात्माहमवस्थितः ॥४८॥

पदच्छेद—

अर्चा आदिषु यदा यत्र श्रद्धा माम् तत्र च अर्चयेत् ।
सर्वभूतेषु आत्मनि च सर्वात्मा अहम् अवस्थितः ॥

शब्दार्थ—

अर्चा	१.	प्रतिमा	सर्व	९.	समस्त
आदिषु	२.	आदि में	भूतेषु	१०.	प्राणियों में और
यदा यत्र	३.	जब जहाँ	आत्मनिच	११.	अपने हृदय में
श्रद्धा	४.	श्रद्धा हो	सर्वात्मा	८.	सर्वात्मा
माम्तत्र	५.	वहाँ मेरी	अहम्	७.	मैं
च अर्चयेत् ।	६.	पूजाकरे क्योंकि	अवस्थितः ॥	१२.	स्थित हूँ

श्लोकार्थ—प्रतिमा आदि में जब जहाँ श्रद्धा हो वहाँ मेरी पूजा करे क्योंकि मैं सर्वात्मा समस्त प्राणियों में और अपने हृदय में स्थित हूँ ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

एवं क्रियायोगपथैः पुमान् वैदिकतान्त्रिकैः ।
अर्चन्नुभयतः सिद्धिं मत्तो विन्दत्यभीप्सिताम् ॥४९॥

पदच्छेद—

एवम् क्रिया योग पथैः पुमान् वैदिक तान्त्रिकैः ।
अर्चन् उभयतः सिद्धिम् मत्तः विन्दन्ति अभीप्सिताम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	अर्चन्	७.	मेरी पूजा करता है
क्रिया योग	५.	क्रिया योग के	उभयतः	८.	वह दोनों लोकों में
पथैः	६.	द्वारा	सिद्धिम्	११.	सिद्धि
पुमान्	१.	जो मनुष्य	मत्तः	९.	मुझसे
वैदिक	३.	वैदिक	विन्दन्ति	१२.	प्राप्त करता है
तान्त्रिकैः ।	४.	तान्त्रिक	अभीप्सिताम् ॥	१०.	अभीष्ठ

श्लोकार्थ—जो मनुष्य इस प्रकार वैदिक, तान्त्रिक क्रिया योग के द्वारा मेरी पूजा करता है । वह दोनों लोकों में मुझसे अभीष्ठ सिद्धि प्राप्त करता है ॥

पञ्चाशः श्लोकः

मदर्चां सम्प्रतिष्ठाप्य मन्दिरं कारयेद् दृढम् ।
पुष्पोद्यानानि रम्याणि पूजायात्रोत्सवाश्रितान् ॥५०॥

पदच्छेद—

मत् अर्चाम् सम्प्रतिष्ठाप्य मन्दिरम् कारयेत् दृढम् ।
पुष्प उद्यानानि रम्याणि पूजायात्रा उत्सव आश्रितान् ॥

शब्दार्थ—

मत्	४.	उसमें मेरी	पुष्प	८.	फूलों के
अर्चाम्	५.	प्रतिमा	उद्यानानि	९	बगीचे लगवाये
सम्प्रतिष्ठाप्य	६.	स्थापित करे	रम्याणि	७.	सुन्दर-सुन्दर
मन्दिरम्	२.	मन्दिर	पूजायात्रा	१०.	पूजा पर्व यात्रा
कारयेत्	३.	बनावाये	उत्सव	११.	और उत्सवों की
दृढम् ।	१.	उपासक सुदृढ	आश्रितान् ॥	१२.	व्यवस्था कर दे

श्लोकार्थ—उपासक सुदृढ मन्दिर बनवाये उसमें मेरी प्रतिमा स्थापित करे । सुन्दर-सुन्दर फूलों के बगीचे लगवाये । पूजा-पर्व-यात्रा और उत्सवों की व्यवस्था कर दे ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

पूजादीनां प्रवाहार्थं महापर्वस्वथान्वहम् ।
क्षेत्रापणपुरग्रामान् दत्त्वा मत्सार्ष्टितामियात् ॥५१॥

पदच्छेद—

पूजादीनां प्रवाहार्थं महा पर्वस्वथान्वहम् ।
क्षेत्र आपण पुर ग्रामान् दत्त्वा मत्सार्ष्टि ताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

पूजा	३. पूजा	क्षेत्र आपण	७. खेत बाजार
आदीनाम्	४. आदि	पुर	८. नगर अथवा
प्रवाह	५. लगातार	ग्रामान्	९. गांव
अर्थम्	६. चलने के लिये	दत्त्वा	१०. समर्पित करते हैं उन्हें
महापर्वसु	१. जो मनुष्यों के उत्सव	मत्सार्ष्टिताम्	११. मेरे समान ऐश्वर्य
अथअन्वहम् ।	२. और प्रतिदिन की	इयात् ॥	१२. प्राप्त होता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्यो के उत्सव और प्रतिदिन की पूजा लगातार चलने के लिये खेज-बाजार नगर अथवा गांव समर्पित करता है, उन्हें मेरे समान ऐश्वर्य प्राप्त होता है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

प्रतिष्ठया सार्वभौमं सद्मना भुवनत्रयम् ।
पूजादिना ब्रह्मलोकं त्रिभिर्मत्साम्यतामियात् ॥५२॥

पदच्छेद—

प्रतिष्ठया सार्व भौमम् सद्मना भुवन त्रयम् ।
पूजाआदिना ब्रह्मलोकम् त्रिभिः मत्साम्यताम् इयात् ॥

शब्दार्थ—

प्रतिष्ठया	१. मेरी मूर्ति की प्रतिष्ठाकरने से	आदिना	७. आदि की व्यवस्था से
सार्वभौमम्	२. पृथ्वी का एक क्षत्र राज्य	ब्रह्म	८. ब्रह्म
सद्मना	३. मन्दिर निर्माण से	लोकम्	९. लोक और
भुवन	५ लोकों का राज्य	त्रिभिः	१०. तीनों के द्वारा
त्रयम् ।	४. तीनों	मत्साम्यताम्	११. मेरी समानता
पूजा	६. पूजा	इयात् ॥	१२. प्राप्त होती है

श्लोकार्थ—मेरी मूर्ति की प्रतिष्ठा करने से पृथ्वी का एकछत्र राज्य, मन्दिर निर्माण से तीनों लोकों का राज्य, पूजा आदि की व्यवस्था से ब्रह्म लोक और तीनां के द्वारा मेरी समानता प्राप्त होती है ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

मामेव नैरपेक्ष्येण भक्तियोगेन विन्दति ।
भक्तियोगं स लभते एवं यः पूजयेत माम् ॥५३॥

पदच्छेद—

माम् एव नैः अपेक्ष्येण भक्ति योगेन विन्दति ।
भक्ति योगम् सः लभते एवम् यः पूजयेत् माम् ॥

शब्दार्थ—

माम्	१०.	वह स्वयं मुझे	भक्ति योगम्	५.	भक्ति योग
एव नैः	११.	ही	सः	४.	वह मेरा
अपेक्ष्येण	७.	इस प्रकार निरपेक्ष	लभते	६.	प्राप्त करता है
भक्ति	८.	भक्ति	एवम् यः	१.	जो इस प्रकार
योग	९.	योग के द्वारा	पूजयेत्	३.	पूजा करता है
विन्दति ।	१२.	प्राप्त कर लेता है	माम् ॥	२.	मेरी

श्लोकार्थ—जो इस प्रकार मेरी पूजा करता है, वह मेरा भक्ति योग प्राप्त करता है। इस प्रकार निरपेक्ष भक्ति योग के द्वारा वह स्वयं मुझे ही प्राप्त कर लेता है ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

यः स्वदत्तां परैर्दत्तां हरेत सुरविप्रयोः ।
वृत्तिं स जायते विड्भुग् वर्षाणामयुतायुतम् ॥५४॥

पदच्छेद—

यः स्वदत्ताम् परैः दत्ताम् हरेत् सुर विप्रयोः ।
वृत्तिम् स जायते विड्भुक् वर्षाणाम् अयुत अयुतम् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	वृत्तिम्	७.	जीविका
स्वदत्ताम्	२.	अपनी दी हुई	सः	९.	वह
परैः	३.	या दूसरों की	जायते	१४.	होता है
दत्ताम्	४.	दी हुई	विड्भुक्	१३.	विष्टा का कीड़ा
हरेत्	८.	हरण कर लेता है	वर्षाणाम्	१२.	वर्षों तक
सुर	५.	देवता और	अयुत-	१०.	करोड़ों
विप्रयोः ।	६.	ब्राह्मण की	अयुतम् ॥	११.	करोड़ों

श्लोकार्थ—जो अपनी दी हुई, या दूसरों की दी हुई देवता और ब्राह्मण की जीविका हरण कर लेता है। वह करोड़ों-करोड़ों वर्षों तक विष्टा का कीड़ा होता है ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

कर्तुश्च सारथेर्हेतोरनुमोदितुरेव च ।
कर्मणां भागिनः प्रेत्य भूयो भूयसि तत् फलम् ॥५५॥

पदच्छेद—

कुर्तुः च सारथेः हेतोः अनुमोदितुः एव च ।
कर्मणाम् भागिनः प्रेत्य भूयः भूयसि तत् फलम् ॥

शब्दार्थ—

कर्तुः	१.	जो लोग ऐसे कार्यों में	कर्मणाम्	८.	उस फल के
च	४.	और	भागिनः	९.	भागीदार होते हैं
सारथे	२.	सहायता	प्रेत्य	७.	मरने के बाद
हेतोः	३.	प्रेरणा	भूयः	१२.	अधिक मिलता है
अनुमोदितुः	५.	अनुमोदन करते हैं	भूयसि	१०.	सहायता आदि अधिक करने पर
एव च ।	६.	वे भी	तत् फलम् ॥	११	उसका फल भी

श्लोकार्थ—जो लोग ऐसे कार्यों में सहायता, प्रेरणा और अनुमोदन करते हैं। वे भी मरने के बाद उस फल के भागीदार होते हैं। सहायता आदि अधिक करने पर उसका फल भी अधिक होता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादशस्कन्धे सप्तविंशः अध्यायः ॥२७॥

प्रथमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—**परस्वभावकर्माणि न प्रशंसेन्न गर्हयेत्।
विश्वमेकात्मकं पश्यन् प्रकृत्या पुरुषेण च ॥१॥**

पदच्छेद—

पर स्वभाव कर्माणि न प्रशंसेत् न गर्हयेत्।
विश्वम् एक आत्मकम् पश्यन् प्रकृत्या पुरुषेण च ॥

शब्दार्थ—

पर	७.	किसी के	विश्वम्	३.	इस समस्त संसार को
स्वभाव	८.	स्वाभाव अथवा	एक	४.	एक
कर्माणि	९.	कर्मों की	आत्मकम्	५.	रूप
न	१०.	न	पश्यन्	६.	देखते हुये
प्रशंसेत्	११.	स्तुति और	प्रकृत्या	१.	प्रकृति
न गर्हयेत्।	१२.	न निन्दा करनी चाहिये	पुरुषेण च ॥	२.	और पुरुषरूप

श्लोकार्थ—प्रकृति और पुरुषरूप इस समस्त संसार को एक रूप देखते हुये, किसी के स्वभाव अथवा कर्मों की न स्तुति और न निन्दा करनी चाहिये ॥

द्वितीयः श्लोकः

**परस्वभावकर्माणि यः प्रशंसति निन्दति।
स आशु भ्रश्यते स्वार्थादसत्यभिनिवेशतः ॥२॥**

पदच्छेद—

पर स्वभाव कर्माणि यः प्रशंसति निन्दति।
सः आशुः भ्रश्यते स्वार्थात् असत्य अभिनिवेशतः ॥

शब्दार्थ—

पर	२.	दूसरों के	सः	७.	वह
स्वभाव	३.	स्वभाव और	आशुः	११.	शीघ्र ही
कर्माणि	४	कर्मों की	भ्रश्यते	१२.	गिर जाता है
यः	१.	जो व्यक्ति	स्वार्थात्	१०.	परमार्थ साधन से
प्रशंसति	५.	प्रशंसा अथवा	असत्य	८.	असत्य में
निन्दति।	६.	निन्दा करता है	अभिनिवेशतः ॥	९.	अभिनिवेश के कारण

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति दूसरों के स्वभाव और कर्मों की प्रशंसा अथवा निन्दा करता है। वह असत्य में अभिनिवेश के कारण परमार्थ साधन से शीघ्र ही गिर जाता है ॥

तृतीयः श्लोकः

तैजसे निद्रयाऽऽपन्ने पिण्डस्थो नष्टचेतनः ।
मायां प्राप्नोति मृत्युं वा तद्वन्नानार्थदृक् पुमान् ॥३॥

पदच्छेद—

तैजसे निद्रया आपन्ने पिण्डस्थः नष्ट चेतनः ।
मायाम् प्राप्नोति मृत्युम् वा तत् वत् नाना अर्थदृक् पुमान् ॥

शब्दार्थ—

तैजसे	१.	तेजस अहंकार के कार्य इन्द्रियों के	मायाम्	७.	वह या तो माया को
निद्रया	२.	निन्दित	प्राप्नोति	८.	प्राप्त होता है
आपन्ने	३.	हो जाने पर	मृत्युम् वा	९.	अथवा मृत्यु को
पिण्डस्थः	४.	शरीर का अभिमानी जीव	तत् वत्	१०.	ठीक उसी प्रकार
नष्ट	६.	शून्य हो जाता है	नाना अर्थ	११.	अनेक वस्तुओं के
चेतनः ।	५.	चेतना	दृक् पुमान् ॥	१२.	दर्शन करने वाले जीव की स्थिति होती है ॥

श्लोकार्थ—तेजस अहंकार के कार्य इन्द्रियों के निन्दित हो जाने पर शरीर का अभिमानी जीव, चेतना शून्य हो जाता है। वह या तो माया को प्राप्त होता है, अथवा मृत्यु को। ठीक उसी प्रकार अनेक वस्तुओं के दर्शन करने वाले जीव की स्थिति होती है ॥

चतुर्थः श्लोकः

किं भद्रं किमभद्रं वा द्वैतस्यावस्तुनः कियत् ।
वाचोदितं तदनृतं मनसा ध्यातमेव च ॥४॥

पदच्छेद—

किम् भद्रम् किम् भद्रम् वा द्वैतस्य अवस्तुनः कियत् ।
वाचः उदितम् तत् अनृतम् मनसा ध्यातम् एव च ॥

शब्दार्थ—

किम्	४.	क्या है	वाचः	८.	वाणी के द्वारा
भद्रम्	३.	भली वस्तु	उदितम्	९.	कही जा सकती है
किम् भद्रम् वा	५.	अथवा बुरी वस्तु क्या है	तत्	७.	वे तो केवल
द्वैतस्य	१.	जब द्वैत नाम की	अनृतम्	१२.	मिथ्या होती है
अवस्तुनः	२.	कोई वस्तु ही नहीं है तब	मनसाध्यातम्	१०.	मन से सोची हुई होने के
कियत् ।	६.	और कितनी है	एव च ॥	११.	कारण ही

श्लोकार्थ—जब द्वैत नाम की कोई वस्तु ही नहीं है, तब भली वस्तु क्या है। अथवा बुरी वस्तु क्या है। और कितनी है। वे तो केवल वाणी के द्वारा कही जा सकती है। मन से सोची हुई होने के कारण ही मिथ्या होती है ॥

पञ्चमः श्लोकः

छायाप्रत्याह्वयाभासा ह्यसन्तोऽप्यर्थकारिणः ।
एवं देहादयो भावा यच्छन्त्यामृत्युतो भयम् ॥५॥

पदच्छेद—

छाया प्रत्याह्वय आभासा हि असन्तः अपि अर्थ कारिणः ।
एवम् देह आदयः भावाः यच्छन्ति अमृत्युतः भयम् ॥

शब्दार्थ—

छाया	१.	परछाईं	एवम्	७.	उसी प्रकार
प्रत्याह्वय	२.	प्रतिध्वनि	देह आदयः	८.	देह आदि
आभासा	३.	और सीपी आदि के	भावाः	९.	सभी वस्तुयें
हि असन्तः	४.	न होने पर	यच्छन्ति	१२	करती रहती हैं
अपि अर्थ	५.	भी भय आदि	अमृत्युतः	१०.	अज्ञानियों को
कारिणः ।	६.	होते हैं	भयम् ॥	११.	भयभीत

श्लोकार्थ—परछाईं प्रतिध्वनि और सीपी आदि के न होने पर भी भय आदि होते हैं । उसी प्रकार देह आदि सभी वस्तुयें अज्ञानियों को भयभीत करती रहती हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

आत्मैव तदिदं विश्वं सृज्यते सृजति प्रभुः ।
त्रायते त्राति विश्वात्मा ह्रियते हरतीश्वरः ॥६॥

पदच्छेद—

आत्मा एव तत् इदम् विश्वम् सृज्यते सृजति प्रभुः ।
त्रायते त्राति विश्वात्मा ह्रियते हरति ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

आत्मा एव	३.	वह आत्मा ही है	त्रायते	८.	रक्षक हैं और
तत् इदम्	१.	जो कुछ प्रत्यक्ष व	त्राति	९.	वही रक्षित भी है
विश्वम्	२.	परोक्ष वस्तु है	विश्वात्मा	७.	वही सर्वात्मा
सृज्यते	५.	वही इसका निमित्त	ह्रियते	११.	इसका संहार करते हैं और
सृजति	६.	और उपादान कारण है	हरति	१२.	संहार होने वाले भी ही हैं
प्रभुः ।	४.	वही सर्व शक्तिमान् है	ईश्वरः ॥	१०.	वही भगवान्

श्लोकार्थ—जो कुछ प्रत्यक्ष व परोक्ष वस्तु है वह आत्मा ही है, वही सर्व शक्तिमान है । वही इसका निमित्त और उपादान कारण है । वही सर्वात्मा रक्षक हैं और वही रक्षित भी हैं । वही भगवान् इसका संहार करते हैं और संहार होने वाले भी वे ही हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

तस्मान्न ह्यात्मनोऽन्यस्मादन्यो भावो निरूपितः ।
निरूपितेयं त्रिविधा निर्मूला भातिरात्मनि ।
इदं गुणमयं विद्धि त्रिविधं मायया कृतम् ॥७॥

पदच्छेद — तस्मात् न हि आत्मनः अन्यस्मात् अन्यः भावः निरूपितः ।
निरूपितेयम् त्रिविधा निर्मूलाः भातिः आत्मनि ।
इदम् गुण मयम् विद्धि त्रिविधम् मायया कृतम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१.	इसलिये	त्रिविधा	९.	सृष्टि स्थिति संहार की प्रतीतियाँ
न हि	६.	नहीं है	निर्मूलाः	७.	सर्वथा निर्मूल
आत्मनः	४.	आत्मदृष्टि से	भातिः	१०.	प्रतीत होती है
अन्य स्मात्	५.	उसके अतिरिक्त कोई वस्तु	आत्मनि ।	८.	आत्मा में
अन्यः भावः	३.	आत्मा इस विश्व से भिन्न है	इदम् गुणमयम्	११.	इस सत्त्व रज तम की
निरूपितः ।	२.	व्यवहार दृष्टि से देखने पर	विद्धि	१४.	समझो
निरूपिता इयम्	७.	निरूपण करने पर	त्रिविधम् ॥	१२	त्रिविधता को
			मायया कृतम्	१३.	माया का खेल

श्लोकार्थ—इसलिये व्यवहार दृष्टि से देखने पर आत्मा इस विश्व से भिन्न है। पर आत्मदृष्टि से उसके अतिरिक्त कोई वस्तु नहीं है। निरूपण करने पर आत्मा में सृष्टि स्थिति संहार की प्रतीतियाँ सर्वथा निर्मूल प्रतीत होती हैं। इस सत्त्व, रज, तम को त्रिविधता को माया का खेल समझो ॥

अष्टमः श्लोकः

एतद् विद्वान् मदुदितं ज्ञानविज्ञाननैपुणम् ।
न निन्दति न च स्तौति लोके चरति सूर्यवत् ॥८॥

पदच्छेद— एतद् विद्वान् मत् उदितम् ज्ञान विज्ञान नैपुणम् ।
न निन्दति न च स्तौति लोके चरति सूर्यवत् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	५.	इसका	न निन्दति	७.	न तो किसी की निन्दा करता है
विद्वान्	६.	जानने वाला	न च स्तौति	८.	और न स्तुति करता है
मत्	३.	मैंने	लोके	९.	वह संसार में
उदितम्	४.	वर्णन किया है	चरति	१२.	विचरता है
ज्ञान विज्ञान	१.	ज्ञान विज्ञान की	सूर्य	१०.	सूर्य के
नैपुणम् ।	२.	उत्तम स्थिति का	वत् ॥	११.	समान

श्लोकार्थ—ज्ञान-विज्ञान की उत्तम स्थिति का मैंने वर्णन किया है। इसका जानने वाला न तो किसी की निन्दा करता है और न स्तुति करता है। वह संसार में सूर्य के समान विचरता है ॥

नवमः श्लोकः

प्रत्यक्षेणानुमानेन निगमेनात्मसंविदा ।
आद्यन्तवदसज्ज्ञात्वा निःसङ्गो विचरेदिह ॥९॥

पदच्छेद—

प्रत्यक्षेण अनुमानेन निगमेन आत्म संविदा ।
आद्यन्त वत् असत् ज्ञात्वा निःसङ्गः विचरेत् इह ॥

शब्दार्थ—

प्रत्यक्षेण	१.	प्रत्यक्ष	वत्	७.	विनाशशील
अनुमानेन	२.	अनुमान	असत्	८.	होने के कारण असत्
निगमेन	३.	शास्त्र और	ज्ञात्वा	९.	जान कर
आत्म	४.	आत्म	निःसङ्गः	११.	असङ्ग भाव से
संविदा ।	५.	अनुभूति आदि प्रमाणों से	विचरेत्	१२.	विचरना चाहिये
आद्यन्त	६.	जगत् की उत्पत्ति और	इह ॥	१०.	इस जगत में

श्लोकार्थ—प्रत्यक्ष अनुमान शास्त्र और आत्म अनुभूति आदि प्रमाणों से जगत की उत्पत्ति और विनाशशील होने के कारण असत् जानकर इस जगत में असङ्ग भाव से विचरना चाहिये ॥

दशमः श्लोकः

उद्धव उवाच— नैवात्मनो न देहस्य संसृतिर्द्रष्टृदृश्ययोः ।
अनात्मस्वदृशोरीश कस्य स्यादुपलभ्यते ॥१०॥

पदच्छेद—

न एव आत्मनः न देहस्य संसृतिः द्रष्टृ दृश्ययोः ।
अनात्म स्वदृशोः ईश कस्य स्यात् उपलभ्यते ॥

शब्दार्थ—

न एव	८.	और न ही	अनात्म	५.	देह जड़ है ऐसी स्थिति में
आत्मनः	९.	आत्मा का हो सकता है	स्वदृशोः	४.	आत्मा स्वयं प्रकाश है और
न देहस्य	७.	न शरीर का	ईश	१.	हे भगवन् !
संसृतिः	६.	जन्म मृत्युरूप संसार	कस्य	१०.	तब यह किसे
द्रष्टृ	२.	आत्मा है दृष्टा	स्यात्	१२.	होता है
दृश्ययोः	३.	और देह है दृश्य	उपलभ्यते ॥	११.	प्राप्त

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! आत्मा है दृष्टा और देह है दृश्य । आत्मा स्वयं प्रकाश है और देह जड़ है । ऐसी स्थिति में जन्म मृत्युरूप संसार न शरीर का और न आत्मा का हो सकता है । तब यह किसे प्राप्त होता है ॥

एकादशः श्लोकः

आत्माऽव्ययोऽगुणः शुद्धः स्वयंज्योतिरनावृतः ।
अग्निवद्दारुवदचिद्देहः कस्येह संसृतिः ॥११॥

पदच्छेद— आत्मा अव्ययः अगुणः शुद्धः स्वयम् ज्योतिः अनावृतः ।
अग्निवत् दारुवत् अचित् देहः कस्य इह संसृतिः ॥

शब्दार्थ—

आत्मा	१. आत्मा तो	अग्निवत्	७.	आत्म अग्नि के समान प्रकाशमान और
अव्ययः	२. अविनाशी	दारुवत्	९.	काठ के समान अचेतन है
अगुणः	३. गुणों से रहित	अचित् देहः	८.	शरीर
शुद्धः	४. शुद्ध	कस्य	१२.	किसका होता है
स्वयम् ज्योतिः	५. स्वयं प्रकाश और	इह	१०.	फिर
अनावृतः ।	६. सभी प्रकार के आवरणों से रहित है	संसृतिः ॥	११.	जन्म मृत्यु रूप संसार

श्लोकार्थ—आत्मा तो अविनाशी गुणों से रहित शुद्ध स्वयं प्रकाश और सभी प्रकार के आवरणों से रहित है । आत्मा अग्नि के समान प्रकाशमान और शरीर काठ के समान अचेतन है । फिर जन्म मृत्यु रूप संसार किसका होता है ॥

द्वादशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच— यावद् देहेन्द्रियप्राणैरात्मनः सन्निकर्षणम् ।
संसारः फलवांस्तावदपार्थोऽप्यविवेकिनः ॥१२॥

पदच्छेद— यावत् देह इन्द्रिय प्राणैः आत्मनः सन्निकर्षणम् ।
संसारः फलवान् तावत् अपार्थः अपि अविवेकिनः ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१. जब तक	संसारः	११.	संसार
देह	२. शरीर	फलवान्	१२.	सत्य प्रतीत होता है
इन्द्रिय	३. इन्द्रिय और	तावत्	७.	तब तक
प्राणैः	४. प्राणों के साथ	अपार्थः	८.	मिथ्या होने पर
आत्मनः	५. आत्मा की	अपि	९.	भी
सन्निकर्षणम् ।	६. सम्बन्ध भ्रान्ति है	अविवेकिनः ॥	१०.	अविवेकी पुरुष को

श्लोकार्थ—जब तक शरीर इन्द्रिय और प्राणों के साथ आत्मा का सम्बन्ध भ्रान्ति है तब तक मिथ्या होने पर भी अविवेकी पुरुष को संसार सत्य प्रतीत होता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अर्थे ह्यविद्यमानेऽपि संसृतिर्न निवर्तते ।
ध्यायतो विषयानस्य स्वप्नेऽनर्थागमो यथा ॥१३॥

पदच्छेद—

अर्थे हि विद्यमाने अपि संसृतिः न निवर्तते ।
ध्यायतः विषयान् अस्य स्वप्ने अनर्थ आगमः यथा ॥

शब्दार्थ—

अर्थे हि	१.	वस्तुओं के	ध्यायतः	९.	चिन्तन करते रहने से
विद्यमाने	२.	न रहने पर	विषयान्	८.	इस संसार के विषयों का
अपि	३.	भी	अस्य	१०.	व्यक्ति को
संसृतिः	४.	संसार की	स्वप्ने अनर्थ	११.	स्वप्न में विपत्ति का
न	६.	नहीं होती है	आगमः	१२.	आगम होता है
निवर्तते ।	५.	निवृत्ति	यथा ॥	७.	जैसे

श्लोकार्थ—वस्तुओं के न रहने पर भी संसार की निवृत्ति नहीं होती है । जैसे इस संसार के विषयों का चिन्तन करते रहने से व्यक्ति को स्वप्न में विपत्ति का आगम होता है ।

चतुर्दशः श्लोकः

यथा ह्यप्रतिबुद्धस्य प्रस्वापो बह्वनर्थभृत् ।
स एव प्रतिबुद्धस्य न वै मोहाय कल्पते ॥१४॥

पदच्छेद—

यथा हि प्रतिबुद्धस्य प्रस्वापः बहु अनर्थभृत् ।
सः एव प्रतिबुद्धस्य न वै मोहाय कल्पयते ॥

शब्दार्थ—

यथा हि	१.	जैसे	सः एव	६.	वैसे ही
प्रतिबुद्धस्य	२.	न जगने वाले व्यक्ति को	प्रतिबुद्धस्य	७.	जगे हुये व्यक्ति के लिये
प्रस्वापः	३.	स्वप्न	न वै	९.	नहीं
बहु	४.	अनेक	मोहाय	८.	वे मोहादि विकार
अनर्थभृत् ।	५.	अनर्थकारी होता है	कल्पयते ॥	१०.	होते हैं

श्लोकार्थ—जैसे न जगने वाले व्यक्ति को स्वप्न अनेक अनर्थकारी होता है । वैसे ही जगे हुये व्यक्ति के लिये वे मोहादि विकार नहीं होते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

शोकहर्षभयक्रोधलोभमोहस्पृहादयः ।
अहङ्कारस्य दृश्यन्ते जन्म मृत्युश्च नात्मनः ॥१५॥

पदच्छेद—

शोक हर्ष भय क्रोध लोभ मोह स्पृहा आदयः ।
अहङ्कारस्य दृश्यन्ते जन्म मृत्युः च न आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

शोक हर्ष	१.	शोक, हर्ष	अहङ्कारस्य	७.	अहङ्कार के
भय क्रोध	२.	भय, क्रोध	दृश्यन्ते	८.	देखे जाते हैं
लोभ	३.	लोभ	जन्म	९.	जन्म
मोह	४.	मोह	मृत्युः च	१०.	मृत्यु और
स्पृहा	५.	स्पृहा	न	१२.	नहीं देखे जाते हैं
आदयः ।	६.	आदि गुण	आत्मनः ॥	११.	आत्मा के

श्लोकार्थ—शोक, हर्ष, भय, क्रोध, लोभ, मोह, स्पृहा आदि गुण अहङ्कार के देखे जाते हैं । जन्म, मृत्यु और आत्मा के नहीं देखे जाते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

देहेन्द्रियप्राणमनोऽभिमानो जीवोऽन्तरात्मा गुणकर्ममूर्तिः ।
सूत्रं महानित्युरुधेव गीतः संसार आधावति काललन्त्रः ॥१६॥

पदच्छेद—

देह इन्द्रिय प्राण मनः अभिमानः जीवः अन्तर आत्मा गुण कर्म मूर्तिः ।
सूत्रम् महान् इति उरुधा इव गीतः संसार आधावति कालतन्त्रः ॥

शब्दार्थ—

देह इन्द्रिय	१.	देह इन्द्रिय	सूत्रम्	७.	उसे ही सूत्रात्मा और
प्राण मनः	२.	प्राण मन का	महान् इति	८.	महत्तत्त्व इन
अभिमानः	३.	अभिमान करने वाला	उरुधा इव	९.	अनेक नामों से
जीवः अन्तर	४.	जीव सूक्ष्माति सूक्ष्म	गीतः	१०.	कहा गया है
आत्मा गुण	५.	आत्मा की गुण और	संसार आधावति	१२.	जन्म मृत्यु रूप संसार में भटकता है
कर्म मूर्तिः ।	६.	कर्मों से बनी मूर्ति है	कालतन्त्रः ॥	११.	वही काल के अधीन होकर

श्लोकार्थ—देह-इन्द्रिय-प्राण-मन का अभिमान करने वाला जीव सूक्ष्माति सूक्ष्म आत्मा की गुण और कर्मों की बनी मूर्ति है । उसे ही सूत्रात्मा और महत्तत्त्व इन अनेक नामों से कहा गया है । वही काल के अधीन होकर जन्म-मृत्यु रूप संसार में भटकता है ।

सप्तदशः श्लोकः

अमूलमेतद् बहुरूपरूपितं मनोवचः प्राणशरीरकर्म ।
ज्ञानासिनोपासनया शितेनच्छित्त्वा मुनिर्गां विचरत्यतृष्णः ॥१७॥

पदच्छेद— अमूलम् एतत् बहुरूप रूपितम् मनो वचः प्राण शरीर कर्म ।
ज्ञानासिना उपासनया शितेन छित्त्वा मुनिःगाम् विचरति तृष्णः ॥

शब्दार्थ—

अमूलम्	४. निर्मूल होने पर भी	ज्ञानासिना	८.	ज्ञान की तलवार को
एतत्	५. इसकी	उपासनया	९.	उपासना के द्वारा
बहुरूप	६. अनेक रूपों में	शितेन	१०.	तीखी बनाकर
रूपितम्	७. प्रतीति होती है	छित्त्वा	११.	अभिमान को काटकर
मनो वचः	१. मन, वाणी	मुनिः गाम्	१३.	मुनि पृथ्वी पर
प्राण शरीर	२. प्राण, शरीर आदि	विचरति	१४.	विचरण करता है
कर्म ।	३. इसके कर्म हैं	तृष्णः ॥	१२.	आशा तृष्णा से रहित होकर

श्लोकार्थ—मन, वाणी, प्राण, शरीर आदि इसके कर्म हैं । निर्मूल होने पर भी इसकी अनेक रूपों में प्रतीति होती है । ज्ञान की तलवार को उपासना के द्वारा तीखी बनाकर अभिमान को काटकर आशा तृष्णा से रहित होकर मुनि पृथ्वी पर विचरण करता है ॥

अष्टादशः श्लोकः

ज्ञानं विवेको निगमस्तपश्च प्रत्यक्षमैतिह्यमथानुमानम् ।
आद्यन्तयोरस्य यदेव केवलं कालश्च हेतुश्च तदेव मध्ये ॥१८॥

पदच्छेद— ज्ञानम् विवेकः निगमः तपः च प्रत्यक्षम् ऐतिह्यम् अथ अनुमानम् ।
आद्यान्तयोः अस्य यदेव केवलम् कालः च हेतुः च तदेव मध्ये ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानम्	१. ज्ञान	आद्यान्तयोः	९.	आदि और अन्त में
विवेकः	२. विवेक	अस्य	८.	यही सिद्ध होता है कि इस संसार के
निगमः	३. वेदादि-शास्त्र	यदेव	१०.	जो
तपः च	४. तपस्या	केवलम्	११.	अद्वितीय परमात्मा है
प्रत्यक्षम्	५. प्रत्यक्ष प्रमाण	कालः च	१२.	काल रूप में
ऐतिह्यम् अथ	६. महापुरुषों के उपदेश	हेतुः च	१४.	भी है
अनुमानम् ।	७. और अनुमानादि से	तदेव मध्ये ॥	१३.	वही इसके बीच में

श्लोकार्थ—ज्ञान, विवेक, वेदादि शास्त्र, तपस्या, प्रत्यक्ष प्रमाण, महापुरुषों के उपदेश और अनुमान आदि से यही सिद्ध होता है कि इस संसार के आदि और अन्त में जो अद्वितीय परमात्मा है । कालरूप में वही (परमात्मा) इसके बीच में भी है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

यथा हिरण्यं स्वकृतं पुरस्तात् पश्चाच्च सर्वस्य हिरण्मयस्य ।
तदेव मध्ये व्यवहार्यमाणं नानापदेशैरहमस्य तद्वत् ॥१९॥

पदच्छेद—

यथा हिरण्यम् स्वकृतम् पुरस्तात् पश्चात् च सर्वस्य हिरण्ययस्य ।
तदेव मध्ये व्यवहार्य माणम् नाना अपदेशः अहमस्य तत् वत् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जिस प्रकार	तदेव	७.	वैसे ही
हिरण्यम्	२.	सोने से	मध्ये	८.	बीच में भी
स्वकृतम्	३.	बने गहने	व्यवहार्यमाणम्	१३.	व्यवहार होता हुआ
पुरस्तात्	६.	पहले सोना है	नाना	११.	नाना
पश्चात् च	५.	बाद में और	अपदेशैः	१२.	नामों से
सर्वस्ये	४.	सब	अहमस्य	१४.	मैं ही इस जगत में हूँ
हिरण्मयस्य ।	९.	स्वर्ण ही है	तत् वत् ॥	१०.	ठीक उसी प्रकार

श्लोकार्थ—जिस प्रकार सोने से बने गहने सब बाद में और पहले सोना है, वैसे ही बीच में भी स्वर्ण ही है । ठीक उसी प्रकार नाना नामों से व्यवहार होता हुआ मैं ही इस जगत में हूँ ॥

विंशः श्लोकः

विज्ञानमेतत्त्रियवस्थमङ्ग गुणत्रयं कारणकार्यकर्तु ।
समन्वयेन व्यतिरेकतश्च येनैव तुर्येण तदेव सत्यम् ॥२०॥

पदच्छेद—

विज्ञानम् एतत् त्रियवस्थम् अङ्ग गुण त्रयम् करण कार्यकृतं ।
समन्वयेन व्यतिरेकतः च येन एव तुर्येण तदेव सत्यम् ॥

शब्दार्थ—

विज्ञानम्	२.	जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति	समन्वयेन	१०.	इनमें अनुगत
एतत्	३.	ये	व्यतिरेकतः	८.	इन तीनों से परे
त्रियवस्थम्	४.	तीन अवस्थायें मन की हैं	च	९.	और
अङ्ग	१.	भाई उद्धव !	येन एव	११	जो सत्ता है
गुणत्रयम्	५.	सत्त्व, रज, तम	तुर्येण	१३.	तुरीयतत्त्व
कारण	६.	इन्द्रियाँ	तदेव	१२.	वही
कार्यवत् ।	७.	पृथिव्यादि और कर्ता	सत्यम् ॥	१४.	सत्य ब्रह्म है

श्लोकार्थ—भाई उद्धव ! जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति ये तीन अवस्थायें मन की हैं । सत्त्व-रज-तम इन्द्रियाँ, पृथिव्यादि और कर्ता इन तीनो से परे और उनमें अनुगत जो सत्ता है । वही तुरीय तत्त्व सत्य ब्रह्म है ॥

एकविंशः श्लोकः

न यत् पुरस्तादुत यन्न पश्चान्मध्ये च तन्न व्यपदेशमात्रम् ।
भूतं प्रसिद्धं च परेण यद् यत् तदेव तत् स्यादिति मे मनीषा ॥२१॥

पदच्छेद— न यत् पुरस्तात् उत यत् न पश्चात् मध्ये च तत् न व्यपदेश मात्रम् :
भूतम् प्रसिद्धम् च परेण यत् यत् तदेव तत् स्यात् इति मे मनीषा ॥

शब्दार्थ—

न यत्	२.	नहीं था	भूतम्	९.	जो पदार्थ
पुरस्तात्	१.	जो उत्पत्ति के पहले	प्रसिद्धम्	११.	प्रकाशित होता है
उत् यत्	३.	और जो	च परेण	८.	और
न पश्चात्	४.	बाद में नहीं रहेगा	यत् यत्	१०.	जिसके द्वारा
मध्ये च तत् न	५.	मध्य में भी वह नहीं है	तदेव	१२.	वही
व्यपदेश	७.	कथन मात्र हो रहा है	तत् स्यात्	१३.	उसकी परमार्थ सत्ता है
मात्रम् ।	६.	केवल उसका	इति मे मनीषा ॥	१४.	ऐसी मेरी मान्यता है

श्लोकार्थ—जो उत्पत्ति के पहले नहीं था । और जो बाद में नहीं रहेगा, मध्य में भी वह नहीं है । केवल उसका कथन मात्र हो रहा है । और जो पदार्थ जिसके द्वारा प्रकाशित होता है । वही उसकी परमार्थ सत्ता है । ऐसी मेरी मान्यता है ।

द्वाविंशः श्लोकः

अविद्यमानोऽप्यवभासते यो वैकारिको राजससर्ग एषः ।
ब्रह्म स्वयंज्योतिरतो विभाति ब्रह्मेन्द्रियार्थात्मविकारचित्रम् ॥२२॥

पदच्छेद— अविद्यमानः अपि अवभासते यः वैकारिकः राज ससर्गः एषः ।
ब्रह्म स्वयं ज्योतिः अतः विभाति ब्रह्म इन्द्रिय अर्थ आत्म विकार चित्रम् ॥

शब्दार्थ—

अविद्यमानः	५.	यह न होने पर	ब्रह्मस्वयंज्योति	८.	यह स्वयं प्रकाश ब्रह्म ही है
अपि	६.	भी	अतः	९.	इसलिये
अवभासते	७.	दीख रही है	विभाति ब्रह्म	१४.	ब्रह्म ही प्रतीत हो रहा है
यः	२.	जो	इन्द्रिय	१०.	इन्द्रिय
वैकारिकः	३.	विकार मई	अर्थ	१३.	पञ्चभूतादि विषयों के रूप में
राजससर्गः	४.	राजस सृष्टि है	आत्मविकार	११.	मन और
एषः ।	१.	यह	चित्रम् ॥	१२.	चित्र-विचित्र

श्लोकार्थ—यह जो विकारमई राजस सृष्टि है, यह न होने पर भी दीख रही है । यह स्वयं प्रकाश ब्रह्म ही है । इसलिये इन्द्रिय मन और चित्र-विचित्र पञ्चभूतादि विषयों के रूप में ब्रह्म ही प्रतीत हो रहा है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

एवं स्फुटं ब्रह्मविवेकहेतुभिः परापवादेन विशारदेन ।
छित्त्वाऽऽत्मसन्देहमुपारमेत स्वानन्दतुष्टोऽखिलकामुकेभ्यः ॥२३॥

पदच्छेद— एवम् स्फुटम् ब्रह्मविवेक हेतुभिः पर अपवादेन विशारदेन ।
छित्त्वा आत्मसन्देहम् उपारमेत् स्व आनन्द तुष्ट अखिल कामुकेभ्यः ॥

शब्दार्थ—					
एवम्	१.	इस प्रकार	आत्म	७.	आत्मविषयक
स्फुटम्	५.	स्पष्ट रूप से	सन्देहम्	८.	सन्देहों को
ब्रह्मविवेक	३.	ब्रह्म विचार के	उपारमेत	१४.	विरत हो जाय
हेतुभिः	४.	साधनों के द्वारा	स्वआनन्द	१०.	अपने आनन्द में
पर अपवादेन	६.	अनात्म पदार्थों का निषेध करके	तुष्ट	११.	मग्न होकर
विशारदेन ।	२.	निपुणतापूर्वक	अखिल	१२.	समस्त
छित्त्वा	९	छिन्न-भिन्न करके	कामुकेभ्यः ॥	१३.	वासनाओं से

श्लोकार्थ—इस प्रकार निपुणता पूर्वक ब्रह्म विचार के साधनों के द्वारा स्पष्ट रूप से अनात्म पदार्थों का निषेध करके आत्मविषयक सन्देहों को छिन्न-भिन्न करके अपने आनन्द में मग्न होकर समस्त वासनाओं से विरत हो जाय ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

नात्मा वपुः पार्थिवमिन्द्रियाणि देवा ह्यसुर्वायुर्जलं हुताशः ।
मनोऽन्नमात्रं धिषणा च सत्त्वमहङ्कृतिः खं क्षितिरर्थसाम्यम् ॥२४॥

पदच्छेद— न आत्मा वपुः पार्थिवम् इन्द्रियाणि देवाः हि असुः वायु जलम् हुताशः ।
मनः अन्न मात्रम् धिषणा च सत्त्वम् अहङ्कृति खम् क्षितिः अर्थ साम्यम् ॥

शब्दार्थ—					
न आत्मा	३.	आत्मा नहीं है	मनः	८.	मन भी आत्मा नहीं है क्योंकि
वपुः	२.	शरीर	अन्नमात्रम्	९.	इनका पोषण अन्न से होता है
पार्थिवम्	१.	पृथ्वी का विकार होने के कारण	धिषणा	१०.	बुद्धि
इन्द्रियाणि	४.	इन्द्रिय और	च सत्त्वम्	११.	चित्त
देवाः हि	५.	उनके अधिष्ठातृ देवता	अहंकृति	१२.	अहङ्कार
असुः वायुः	६.	प्राण-वायु	खम् क्षितिः	१३.	आकाश-पृथ्वी
जलम् हुताशः ।	७.	जल-अग्नि एवम्	अर्थसाम्यम् ॥	१४.	शब्दादिविषय और गुणों की साम्यावस्था प्रकृति भी आत्मा नहीं है

श्लोकार्थ—पृथ्वी का विकार होने के कारण शरीर आत्मा नहीं है। इन्द्रिय और उनके अधिष्ठातृ देवता प्राण-वायु-जल-अग्नि एवम् मन भी आत्मा नहीं है। क्योंकि इनका पोषण अन्न से होता है बुद्धि-चित्त अहङ्कार-आकाश-पृथ्वी शब्दादि विषय और गुणों की सामम्यावस्था प्रकृति भी आत्मा नहीं है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

समाहितैः कः करणैर्गुणात्मभिर्गुणो भवेन्मत्सुविविक्तधाम्नः ।
विक्षिप्यमाणैरुत किं नु दूषणं घनैरुपेतैर्विगतै रवेः किम् ॥२५॥

पदच्छेद— समाहितैः कः करणैः गुणात्मभिः गुणः भवेत् मत् सुविविक्त धाम्नः ।
विक्षिप्त माणैः उत किम् नु दूषणम् घनैः उपेतैः विगतै खैः किम् ॥

शब्दार्थ—

समाहितैः	५. यदि समाहित है	विक्षिप्त माणैः	६.	यदि इन्द्रियाँ विक्षिप्त रहती हैं
कः	६. तो उनसे क्या लाभ है	उत	८.	अथवा
करणैः	४. इन्द्रियाँ	किम् नु	१०.	तो क्या
गुणात्मभिः	३. उसकी वृत्तियाँ और	दूषणम्	११.	हानि है क्योंकि
गुणः भवेत्	७. अन्तःकरण आदि तो गुण गुणमय ही है	घनैः उपेतैः	१२.	आकाश में बादलों के छने
मत् सुविविक्त	२. जिसे भलीभाँति ज्ञान हो गया है	विगतै खैः	१३	या तितर-वितर होने से सूर्य पर
धाम्नः ।	१. मेरे स्वरूप का	किम् ॥	१४.	क्या असर पड़ता है

श्लोकार्थ—मेरे स्वरूप का जिसे भलीभाँति ज्ञान हो गया है । उसकी वृत्तियाँ और इन्द्रियाँ यदि समाहित रहती है । तो उनसे क्या लाभ है । अन्तःकरण आदि तो गुणमय ही है । अथवा यदि इन्द्रियाँ विक्षिप्त रहती हैं तो क्या हानि है । क्योंकि आकाश में बादलों के तितर वितर होने से सूर्य पर क्या असर पड़ता है ॥

षड्विंशः श्लोकः

यथा नभो वाय्वनलाम्बुभूगुणैर्गतागतैर्वर्तुगुणैर्न सज्जते ।
तथाक्षरं सत्त्वरजस्तमोमलैरहंमतेः संसृतिहेतुभिः परम् ॥२६॥

पदच्छेद— यथा नभः वायु अनल अम्बु भूः गुणैः गतागतैः ऋतुः गुणैः न सज्जते ।
तथा अक्षरम् सत्त्वरजः तमः मलैः अहंमतेः संसृति हेतुभिः परम् ॥

शब्दार्थ—यथा	१. जैसे	तथा	६.	उसी प्रकार
नभः	७. आकाश	अक्षरम्	१४.	ब्रह्म प्रभावित नहीं होता है
वायु अनल	२. वायु अग्नि	सत्त्व	१०.	सत्त्व गुण
अम्बु भूः	३. जल पृथ्वी	रजः तमः	११.	रजोगुण और तमोगुण के
गुणैः	४. के गुणों के	मलैः	१२.	मल से
गतागतैः	५. आने जाने या	अहंमते	१५.	इसमें अहङ्कार करना तो
ऋतु गुणैः	६. ऋतुओं के धर्म से	संसृति हेतुभिः	१६.	संसार का ही हेतु है
न सज्जते ।	८. प्रभावित नहीं होता है	परम् ॥	१३.	पर

श्लोकार्थ—जैसे वायु-अग्नि-जल-पृथ्वी के गुणों के आने जाने या ऋतुओं के धर्म से आकाश प्रभावित नहीं होता है । उसी प्रकार सत्त्व गुण, रजोगुण और तमोगुण के मल से पर ब्रह्म प्रभावित नहीं होता है । इसमें अहङ्कार करना तो संसार का ही हेतु है ॥

सप्तविंश श्लोकः

तथापि सङ्गः परिवर्जनीयो गुणेषु मायारचितेषु तावत्।
मद्भक्तियोगेन दृढेन यावद् रजो निरस्येत मनःकषायः ॥२७॥

पदच्छेद— तथापि सङ्गः परिवर्जनीयः गुणेषु माया रचितेषु तावत्।
मत् भक्ति योगेन दृढेन यावत् रजः निरस्येत् मनः कषायः ॥

शब्दार्थ—

तथापि	१.	ऐसा होने पर भर	मत् भक्ति	१०.	मेरे भक्ति
सङ्गः	६.	सङ्ग	योगेन	११.	योग के द्वारा
परिवर्जनीयः	७.	त्याग देना चाहिये	दृढेन	९.	सुदृढ
गुणेषु	५.	गुणों और उनके कार्यों का	यावत्	८.	जब-तक
माया	३.	इन माया	रजः	१२.	रजोगुण रूप
रचितेषु	४.	निर्मित	निरस्येत्	१४.	एकदम निकल न जाय
तावत्।	२.	तब-तक	मनः कषायः ॥	१३.	मन का मल

श्लोकार्थ—ऐसा होने पर भी तब-तक इन माया निर्मित गुणों और उनके कार्यों का सङ्ग त्याग देना चाहिये। जब-तक मेरे सुदृढ भक्ति योग के द्वारा रजोगुण रूप मन का मैल एकदम निकल न जाय ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

यथाऽऽमयोऽसाधुचिकित्सितो नृणां पुनः पुनः संतुदति प्ररोहन्।
एवं मनोऽपक्वकषायकम कुयोगिनं विध्यति सर्वसङ्गम् ॥२८॥

पदच्छेद— यथा आमयः असाधु चिकित्सतः नृणाम् पुनः पुनः संतदति प्ररोहन्।
एवम् मनः अपक्व कषाय कर्म कुयोगिनम् विध्यति सर्व सङ्गम् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	एवम्	९.	उसी प्रकार
आमयः	६.	रोग	मनः	१२.	मन की
असाधु	२.	गलत	अपक्व	१३.	अपूर्ण वासना और
चिकित्सतः	३.	चिकित्सा करने पर	कषायकर्म	१४.	कर्मों के संस्कार
नृणाम्	४.	मनुष्यों में	कुयोगिनम्	१५.	अधूरे योगी को
पुनः पुनः	५.	बार-बार	विध्यति	१६.	वेधता रहता है
संतदति	८.	उन्हें व्यथित करता है	सर्व	१०.	समस्त वस्तुओं में
प्ररोहन्।	७	उभर कर	सङ्गम् ॥	११.	आसक्ति के कारण

श्लोकार्थ— जैसे गलत चिकित्सा करने पर मनुष्यों में बार-बार रोग उभर कर उन्हें व्यथित करता है। उसी प्रकार समस्त वस्तुओं में आसक्ति के कारण मन की अपूर्ण वासना और कर्मों के संस्कार अधूरे रोगी को वेधता रहता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

कुयोगिनो ये विहितान्तरायैर्मनुष्यभूतैस्त्रिदशोपसृष्टैः ।
ते प्राक्तनाभ्यासबलेन भूयो युञ्जन्ति योगं न तु कर्मतन्त्रम् ॥२६॥

पदच्छेद— कुयोगिनः ये विहित अन्तरायैः मनुष्य भूतैः त्रिदशः उपसृष्टैः ।
ते प्राक्तन अभ्यास बलेन भूयः युञ्जन्ति योगम् न तु कर्मतन्त्रम् ॥

शब्दार्थ—

कुयोगिनः	७. अधूरा योगी मार्ग भ्रष्ट हो जाय	ते प्राक्तन	८.	तो भी वह अपने पूर्व जन्मों के
ये विहित	६. यदि	अभ्यास	६.	अभ्यास के
अन्तरायैः	५. विघ्नों से	बलेन भूयः	१०.	बल से पुनः
मनुष्य	३. शिष्य पुत्रादि के द्वारा	युञ्जन्ति	१२.	लग जाता है
भूतैः	४. किये गये	योगम्	११.	योगाभ्यास में
त्रिदश	१. देवताओं से	न तु	१४.	प्रवृत्ति नहीं होती है
उपसृष्टैः ।	२ प्रेरित	कर्मतन्त्रम् ॥	१३.	कर्म-आदि में उसकी

श्लोकार्थ—देवताओं से प्रेरित शिष्य पुत्रादि के द्वारा किये गये विघ्नों से यदि अधूरा योगी मार्ग भ्रष्ट हो जाय तो भी वह अपने पूर्व जन्मों के अभ्यास के बल से पुनः योगाभ्यास में लग जाता है । कर्म आदि में उसकी प्रवृत्ति नहीं होती है ॥

त्रिंशः श्लोकः

करोति कर्म क्रियते च जन्तुः केनाप्यसौ चोदित आनिपातात् ।
न तत्र विद्वान् प्रकृतौ स्थितोऽपि निवृत्ततृष्णः स्वसुखानुभूत्या ॥३०॥

पदच्छेद— करोति कर्म क्रियते च जन्तुः केन अपि असौ चोदितः आनिपातात् ।
न तत्र विद्वान् प्रकृतौ स्थितः अपि निवृत्त तृष्णः स्व सुख अनुभूत्या ॥

शब्दार्थ-करोति	७. लगा रहता है	न तत्र	११.	विकारों से युक्त नहीं होता क्योंकि
कर्म क्रियते	६. कर्म में ही	विद्वान्	८.	परन्तु आत्म साक्षात्कार करने वाला व्यक्ति
च जन्तुः	२. जीव	प्रकृतौ	६.	प्रकृति मे
केन अपि	३. संस्कार आदि से	स्थितः अपि	१०.	स्थित रहने पर भी
असौ	१. यह	निवृत्त तृष्णः	१४.	आशा-तृष्णा से,मुक्त हो जाता है
चोदितः	४. प्रेरित होकर	स्व सुख	११.	आत्मसुख की
आनिपातात् ।	५. मृत्यु पर्यन्त	अनुभूत्या ॥	१२.	अनुभूति हो जाने के कारण वह

श्लोकार्थ—यह जीव संस्कार आदि से प्रेरित होकर मृत्यु पर्यन्त कर्म में ही लगा रहता है । परन्तु आत्म साक्षात्कार करने वाला व्यक्ति प्रकृति में स्थित रहने पर भी विकारों से युक्त नहीं होता । क्योंकि आत्मसुख की अनुभूति हो जाने के कारण वह आशा-तृष्णा से मुक्त हो जाता है ।

एकत्रिंशः श्लोकः

तिष्ठन्तमासीनमुत व्रजन्तं शयानमुक्षन्तमदन्तमन्नम् ।
स्वभावमन्यत् किमपीहमानमात्मानमात्मस्थमतिर्न वेद ॥३१॥

पदच्छेद—

तिष्ठन्तम् आसीनम् उत व्रजन्तम् शयानम् उक्षन्तम् अदन्तम् अन्नम् ।
स्वभावम् अन्यत् किम् अपि ईह मानम् आत्मानम् आत्मस्थमतिः न वेदः ॥

शब्दार्थ—

तिष्ठन्तम्	३.	खड़े होने	स्वभावम्	११.	स्वाभाविक कर्म करने
आसीनम्	४.	बैठने	अन्यत्	१०.	और कोई
उत व्रजन्तम्	५.	अथवा चलने	किम् अपि	१२.	अथवा कुछ भी
शयानम्	६.	सोने	ईहमानम्	१३.	चाहने को भी
उक्षन्तम्	७.	मल-मूत्र त्यागने	आत्मानम्	२.	वह अपने
अदन्तम्	९.	भोजन करने	आत्मस्थमतिः	१.	जिसकी बुद्धि अपने में स्थित है
अन्नम् ।	८.	अन्न	न वेदः ॥	१४.	नहीं जानता है

श्लोकार्थ—जिसकी बुद्धि अपने में स्थित है, वह अपने खड़े होने, बैठने, अथवा चलने, सोने, मल मूत्र त्यागने, अन्न भोजन करने और कोई स्वाभाविक कर्म करने अथवा कुछ भी चाहने को भी नहीं जानता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यदि स्म पश्यत्यसदिन्द्रियार्थं नानानुमानेन विरुद्धमन्यत् ।
न मन्यते वस्तुतया मनीषी स्वाप्नं यथोत्थाय तिरोदधानम् ॥३२॥

पदच्छेद—

यदि स्म पश्यति असत् इन्द्रियार्थम् नाना अनुमानेन विरुद्धम् अन्यत् ।
न मन्यते वस्तुतया मनीषी स्वाप्नम् यथा उत्थाय तिरोदधानम् ॥

शब्दार्थ—

यदि	४.	यदि	न मन्यते	१०.	नहीं मानता है
स्म पश्यति	५.	देखता है तो	वस्तुतया	६.	वस्तुतः उन्हें
असत्	२.	असत्	मनीषी	१.	ज्ञानी पुरुष
इन्द्रियार्थम्	३.	इन्द्रियों के विषयों को	स्वाप्नम्	१२.	स्वप्न में देखे हुये विषयों को
नाना अनुमानेन	७.	नाना युक्तियों से	यथा	११.	जैसे
विरुद्धम्	९.	भिन्न	उत्थाय	१३.	जगा हुआ व्यक्ति
अन्यत् ।	८.	अपनी आत्मा से	तिरोदधानम् ॥	१४.	सत्य नहीं मानता है

श्लोकार्थ—ज्ञानी पुरुष असत् इन्द्रियों के विषयों को यदि देखता है तो वस्तुतः उन्हें नाना युक्तियों से अपनी आत्मा से भिन्न नहीं मानता है । जैसे स्वप्न में देखे हुये विषयों को जगा हुआ व्यक्ति सत्य नहीं मानता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

पूर्वं गृहीतं गुणकर्मचित्रमज्ञानमात्मन्यविविक्तमङ्ग ।
निवर्तते तत् पुनरीक्षयैव न गृह्यते नापि विसृज्य आत्मा ॥३३॥

पदच्छेद— पूर्वम् गृहीतम् गुण कर्म चित्रम् अज्ञानम् आत्मनि अविविक्तम् अङ्ग ।
निवर्तते तत् पुनः ईक्षयैव न गृह्यते न अपि विसृज्य आत्मा ॥

शब्दार्थ—

पूर्वम्	२.	पहले	निवर्तते	१०.	निवृत्त हो जाते हैं
गृहीतम्	३.	ग्रहण किये गये	तत् पुनः	८.	अब वही
गुण कर्म	४.	गुणों और कर्मों से	ईक्षयैव	९.	आत्म दृष्टि होने पर
चित्रम् अज्ञानम्	५.	युक्त पदार्थ अज्ञान के कारण	न गृह्यते	१२.	न ग्रहण हो सकता हैं
आत्मनि	६.	आत्मा से	न अपि	१३.	और न ही
अविवित्तम्	७.	अभिन्न मान लिये गये थे, पर	विसृज्य	१४.	त्याग किया जा सकता है
अङ्ग ।	१.	हे उद्धव !	आत्मा ॥	११.	वृत्तियों के द्वारा आत्मा का

श्लोकार्थ— हे उद्धव ! पहले ग्रहण किये गये गुणों और कर्मों से युक्त पदार्थ अज्ञान के कारण आत्मा से अभिन्न मान लिये गये थे, पर अब वही आत्मदृष्टि होने पर निवृत्त हो जाते हैं। वृत्तियों के द्वारा आत्मा का न ग्रहण हो सकता है, और न ही त्याग किया जा सकता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

यथा हि भानोरुदयो नृचक्षुषां तमो निहन्यान्न तु सद् विधत्ते ।
एवं समीक्षा निपुणा सती मे हन्यात्तमिस्रं पुरुषस्य बुद्धेः ॥३४॥

पदच्छेद— यथाहि भानोः उदयः नृ चक्षुषाम् तमः निहन्यात् न तु सत् विधत्ते ।
एवन् समीक्षा निपुणा सती मे हन्यात् तमिस्रम् पुरुषस्य बुद्धेः ॥

शब्दार्थ—

यथा हि	१.	जैसे	एवम्	८.	उसी प्रकार
भानोः उदयः	२.	सूर्य का उदय	समीक्षा	११.	ज्ञान
नृ चक्षुषाम्	३.	मनुष्यों के नेत्रों के सामने से	निपुणा सती	१०.	दृढ अपरोक्ष
तमः	४.	अन्धकार को	मे	९.	मेरे स्वरूप का
निहन्यात्	५.	हटा देता है	हन्यात्	१४.	नष्ट कर देता है
न तु	६.	न कि	तमिस्रम्	१३.	अज्ञान
सत् विधत्ते ।	७.	किसी सद् वस्तु का निर्माण करता है	पुरुषस्य बुद्धेः ॥	१२.	मनुष्य की बुद्धि का

श्लोकार्थ—जैसे सूर्य का उदय मनुष्यों के नेत्रों के सामने से अन्धकार को हटा देता है। न कि किसी सद् वस्तु का निर्माण करता है। उसी प्रकार मेरे स्वरूप का दृढ अपरोक्ष ज्ञान मनुष्य की बुद्धि का अज्ञान नष्ट कर देता है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एष स्वयंज्योतिरजोऽप्रमेयो महानुभूतिः सकलानुभूतिः ।
एकोऽद्वितीयो वचसां विरामे येनेषिता वागसवश्चरन्ति ॥३५॥

पदच्छेद—

एषः स्वयं ज्योतिः अजः अप्रमेयो महानुभूतिः सकल अनुभूतिः ।
एकः अद्वितीयः वचसाम् विरामे येन ईषिता वागसवः चरन्ति ॥

शब्दार्थ—

एषः	१.	यह आत्मा	एकः	८.	एक
स्वयं ज्योति	२.	स्वयं प्रकाश	अद्वितीयः	९.	अद्वितीय आत्मा
अजः	३.	जन्म रहित	वचसाम्	१०.	वाणी का
अप्रमेयो	४.	वस्तुतः न जानने योग्य	विरामे	११.	अविषय है
महानुभूति	५.	महान अनुभूति	येन ईषिता	१२.	उसी से प्रेरित होकर
सकल	६.	समस्त	वागसवः	१३.	ये वाणी और प्राण
अनुभूतिः ।	७.	अनुभूतियों का स्वरूप है	चरन्ति ॥	१४.	व्यवहार करते हैं

श्लोकार्थ—यह आत्मा स्वयं प्रकाश जन्म रहित वस्तुतः न जानने योग्य महान अनुभूति समस्त अनुभूतियों का स्वरूप है । एक अद्वितीय आत्मा वाणी का अविषय है उसी से प्रेरित होकर ये वाणी और प्राण व्यवहार करते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

एतावानात्मसंमोहो यद् विकल्पस्तु केवले ।
आत्मन्नृते स्वमात्मानमवलम्बो न यस्य हि ॥३६॥

पदच्छेद—

एतावान आत्म सम्मोह यद् विकल्पः तु केवले ।
आत्मन् ऋते स्वम् आत्मनम् अवलम्बः न यस्य हि ॥

शब्दार्थ—

एतावान	५.	यही	आत्मन्	१.	हे अंग उद्धव जी !
आत्म	६.	आत्ममोह	ऋते	१२.	छोड़कर
सम्मोह	७.	बहुत बड़ा भ्रम है	स्वम्	८.	अपने
यद्	३.	जो	आत्मनम्	९.	आत्मा को
विकल्पः तु	४.	विविधता मानना है	अवलम्बः न	१२.	कोई अवलम्ब नहीं है
केवले ।	२.	अद्वितीय आत्मा में	यस्य हि ॥	११.	उस भ्रम का

श्लोकार्थ—हे अङ्ग उद्धव जी ! अद्वितीय आत्मा में जो विविधता मानना है । यही आत्ममोह बहुत बड़ा भ्रम है । अपने आत्मा को छोड़कर उस भ्रम का कोई अवलम्ब नहीं है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

यन्नामाकृतिभिर्ग्राह्यं पञ्चवर्णमबाधितम् ।
व्यर्थेनाप्यर्थवादोऽयं द्वयं पण्डितमानिनाम् ॥३७॥

पदच्छेद—

यत् नाम् आकृतिभिः ग्राह्यम् पञ्चवर्णम् अबाधितम् ।
व्यर्थेन अपि अर्थवादः अयम् द्वयम् पण्डित मानिनाम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	६.	जो	व्यर्थेन अपि	११.	पर यह तो अर्थहीन
नाम	७.	विभिन्न नामों और	अर्थवादः	१२.	वाणी का आडम्बर मात्र हैं
आकृतिभिः	८.	रूपों के रूप में	अयम्	४.	यह
ग्राह्यम्	९.	इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण किया जाता है	द्वयम्	५.	द्वैत प्रपञ्च
पञ्चवर्णम्	३.	पाञ्चभौतिक	पण्डित	१.	अपने को पण्डित
अबाधितम् ।	१०.	इसलिये सत्य है	मानिनाम् ॥	२.	मानने वाले बहुत से लोग कहते हैं कि

श्लोकार्थ—अपने को पण्डित मानने वाले बहुत से लोग कहते हैं कि पाञ्चभौतिक यह द्वैत प्रपञ्च जो विभिन्न नामों और रूपों के रूप में इन्द्रियों के द्वारा ग्रहण किया जाता है। पर यह तो अर्थहीन वाणी का आडम्बर मात्र है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

योगिनोऽपक्वयोगस्य युञ्जतः काय उत्थितैः ।
उपसर्गैर्विहन्येत तत्रायं विहितो विधिः ॥३८॥

पदच्छेद—

योगिनः अपक्व योगस्य युञ्जतः काय उत्थितैः ।
उपसर्गैः विहन्येत् तत्र अयम् विहितः विधिः ॥

शब्दार्थ—

योगिनः	४.	किसी योगी का	उपसर्गैः	७.	रोगादि उपद्रवों से
अपक्व	२.	पूर्ण होने के पहले	विहन्येत्	८.	पीडित हो तो
योगस्य	१.	योग साधना	तत्र	९.	उसे
युञ्जतः	३.	साधना करने वाले	अयम्	१०.	इन
काय	५.	शरीर यदि	विहितः	१२.	आश्रय लेना चाहिये
उत्थितैः ।	६.	उत्पन्न हुये	विधिः ॥	११.	उपायों का

श्लोकार्थ—योग साधना करने वाले किसी योगी का शरीर यदि उत्पन्न हुये रोगादि उपद्रवों से पीड़ित हो तो उसे इन उपायों का आश्रय लेना चाहिये ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

योगधारणया कांश्चिदासनैर्धारणान्वितैः ।
तपोमन्त्रौषधैः कांश्चिदुपसर्गान् विनिर्दहेत् ॥३९॥

पदच्छेद—

योग धारणता कांश्चित् आसनैः धारणा अन्वितैः ।
तपः मन्त्रः औषधैः कांश्चित् उपसर्गान् विनिर्वहेत् ॥

शब्दार्थ—

योग	२.	योग	तपः	९.	तप
धारणया	३.	धारणा के द्वारा	मन्त्र	१०.	मन्त्र और
कांश्चित्	१.	कीन्हीं उपद्रवों को	औषधैः	११.	औषधि के द्वारा
आसनैः	६.	आसनों के द्वारा	कांश्चित्	७.	और किन्हीं
धारणा	४.	किन्हीं को धारण	उपसर्गान्	८	उपद्रवों को
अन्वितैः ।	५.	युक्त	विनिर्दहेत् ॥	१२.	नष्ट कर देना चाहिये

श्लोकार्थ—किन्हीं उपद्रवों को योग धारण के द्वारा, किन्हीं को योग युक्त आसनों के द्वारा और किन्हीं उपद्रवों को तप-मन्त्र और औषधि के द्वारा नष्ट कर देना चाहिये ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

कांश्चिन्ममानुध्यानेन नामसङ्कीर्तनादिभिः ।
योगेश्वरानुवृत्त्या वा हन्यादशुभदाञ्छनैः ॥४०॥

पदच्छेद—

कांश्चित् तम अनुध्यानेन नाम सङ्कीर्तन आदिभिः ।
योगेश्वरा अनुवृत्त्या वा हन्यात् अशुभदान् शनैः ॥

शब्दार्थ—

कांश्चित्	१.	किन्हीं विघ्नों को	योगेश्वर	१०.	महापुरुषों की
मम्	२.	मेरे	अनुवृत्त्या	११.	सेवा के द्वारा
अनुध्यानेन	३.	चिन्तन और	वा	७.	अथवा
नाम	४.	नाम	हन्यात्	१२.	नष्ट करना चाहिये
सङ्कीर्तन	५.	सङ्कीतन	अशुभदान्	८.	पतन की ओर ले जाने वाले दोषों को
आदिभिः ।	६.	आदि से	शनैः ॥	९.	धीरे-धीरे

श्लोकार्थ—किन्हीं विघ्नों को मेरे चिन्तन और नाम सङ्कीर्तन आदि से अथवा पतन की ओर ले जाने वाले दोषों को धीरे-धीरे महापुरुषों की सेवा के द्वारा नष्ट करना चाहिये ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

केचिद् देहमिमं धीराः सुकल्पं वयसि स्थिरम् ।
विधाय विविधोपायैरथ युञ्जन्ति सिद्धये ॥४१॥

पदच्छेद—

केचित् देहम् इमम् धीराः सुकल्पम् वयसि स्थिरम् ।
विधाय विविधः उपायैः अथ युञ्जन्ति सिद्धये ॥

शब्दार्थ—

केचित्	१.	कोई-कोई	विधाय	५.	द्वारा
देहम्	७.	शरीर को	विविधः	३.	विविध
इमम्	६.	इस	उपायैः	४.	उपायों के
धीराः	२.	मनस्वी योगी	अथ	१०.	और
सुकल्पम्	८.	सुदृढ़ और	युञ्जन्ति	१२.	योग साधना करते हैं
वयसिस्थिरम् ॥	९.	युवावस्था में स्थिर करके	सिद्धये ॥	११	सिद्धियों के लिये

श्लोकार्थ—कोई-कोई मनस्वी योग विविध उपायों के द्वारा इस शरीर को सुदृढ़ और युवावस्था में स्थिर करके और सिद्धियों के लिये योग साधना करते हैं ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

न हि तत् कुशलाहृत्यं तदायासो ह्यपार्थकः ।
अन्तवत्त्वाच्छरीरस्य फलस्येव वनस्पतेः ॥४२॥

पदच्छेद—

न हि तत् कुशलाआहृत्यम् तत् आयासः हि पार्थकः ।
अन्तवत्वात् शरीरस्य फलस्य एव वनस्पतेः ॥

शब्दार्थ—

न हि	४.	नहीं करते क्योंकि	अन्तवत्वात्	११	नाश तो अवश्य ही होना है
तत्	२.	ऐसे विचार का	शरीरस्य	१०.	शरीर का
कुशल	१.	बुद्धिमान पुरुष	फलस्य	८.	फल के
आहृत्यम्	३.	आदर	एव	९.	समान
तत् आयासः	५.	वह प्रयास तो	वनस्पतेः ॥	७.	वृक्ष में लगे हुये
हि पार्थकः ।	६.	व्यर्थ ही है			

श्लोकार्थ—बुद्धिमान पुरुष ऐसे विचार का आदर नहीं करते हैं । क्योंकि यह प्रयास तो व्यर्थ हो है । वृक्ष में लगे हुये फल के समान शरीर का नाश तो अवश्य ही होना है ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

योगं निषेवतो नित्यं कायश्चेत् कल्पतामियात् ।
तच्छ्रद्दध्यान्न मतिमान् योगमुत्सृज्य मत्परः ॥४३॥

पदच्छेद— योगम् निषेवतः नित्यम् कायः चेत् कल्पताम् इयात् ।
तत् श्रद्दध्याम् मतिमान् योगम् उत्सृज्य मत् परः ॥

शब्दार्थ—

योगम्	३. योग	तत्	७. तो
निषेवतः	४. साधना करते रहने पर	श्रद्दध्यात्	११. सन्तोष नहीं करना चाहिये
नित्यम्	२. नित्य	मतिमान्	८. बुद्धिमान पुरुष को
कायः चेत्	१. यदि शरीर	योगम्	९. अपनी साधना
कल्पताम्	६. हो जाय	उत्सृज्य	१०. छोड़कर (उतने में ही)
इयात् ।	५. सुदृढ़ भी	मत् परः ॥	१२. मेरी प्राप्ति के लिये प्रयास करते रहना चाहिये

श्लोकार्थ—यदि शरीर नित्य साधना करते रहने पर सुदृढ़ हो जाय तो बुद्धिमान पुरुष को अपनी साधना छोड़कर उतने में ही सन्तोष नहीं करना चाहिये । मेरी प्राप्ति के लिये प्रयास करते रहना चाहिये ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

योगचर्यामिमां योगी विचरन् मदपाश्रयः ।
नान्तरायैर्विहन्येत निःस्पृहः स्वसुखानुभूः ॥४४॥

पदच्छेद— योग चर्याम् इमाम् योगी विचरन् मत् पाश्रयः ।
न अन्तरायैः विहन्येत निःस्पृहः स्वसुख अनुभूः ॥

शब्दार्थ—

योगचर्याम्	५. योग साधना में	न	९. नहीं सकती है
इमाम्	४. इस	अन्तरायैः	७. उसे कोई विघ्न बाधा
योगी	१. जो साधक	विहन्येत	८. डिगा
विचरन्	६. संलग्न रहता है	निःस्पृहः	१०. क्योंकि उसकी सारी कामनायें नष्ट हने पर
मत्	२. मेरा	स्वसुख	११. वह आत्मानन्द की
अपाश्रयः ।	३. आश्रय लेकर	अनुभूः ॥	१२. अनुभूति में मग्न हो जाता है

श्लोकार्थ—जो साधक मेरा आश्रय लेकर इस योग साधना में संलग्न रहता है । उसे कोई विघ्नबाधा डिगा नहीं सकती है । क्योंकि उसकी सारी कामनायें नष्ट होने पर वह आत्मानन्द की अनुभूति में मग्न हों जाता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां सहितायां
एकादशस्कन्धे अष्टाविंशः अध्यायः ॥२८॥

एकादशः स्कन्धः

एकोनत्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

उद्धव उवाच— सुदुश्चरामिमां मन्ये योगचर्यामनात्मनः ।
यथाञ्जसा पुमान् सिद्ध्येत् तन्मे ब्रूह्यञ्जसाच्युत ॥१॥

पदच्छेद— सुदुश्चराम् इमाम् मन्ये योगचर्याम् अनात्मनः ।
यथा अञ्जसा पुमान् सिद्धये तत् मे ब्रूहि अञ्जसा अच्युत ॥

शब्दार्थ—

सुदुश्चराम्	५.	बहुत ही कठिन	अञ्जसा	१०.	अनायास ही
इमाम्	२.	उसके लिये मैं इस	पुमान्	९.	मनुष्य
मन्ये	६.	समझता हूँ अतः	सिद्धये	११.	परम पद प्राप्त कर ले
योग	३.	योग	तत् ते	१२.	मुझे ऐसा कोई
चर्याम्	४.	साधना को	ब्रूहि	१४.	बतलाइये
अनात्मनः ।	१.	जो अपना मन वश में नहीं कर सकता है	अञ्जसा	१३.	सरल साधन
यथा	८.	जिस प्रकार	अच्युत ॥	७.	हे अच्युत !

श्लोकार्थ—जो अपना मन वश में नहीं कर सकता है । उसके लिये मैं इस योग साधना को बहुत ही कठिन समझता हूँ । अतः हे अच्युत ! जिस प्रकार मनुष्य अनायास ही परम पद प्राप्त कर ले, मुझे ऐसा कोई साधन बतलाइये ॥

द्वितीयः श्लोकः

प्रायशः पुण्डरीकाक्ष युञ्जन्तो योगिनो मनः ।
विषीदन्त्यसमाधानान्मनोनिग्रहकर्शिताः ॥२॥

पदच्छेद— प्रायशः पुण्डरीकाक्ष युञ्जन्तः योगिनः मनः ।
विषीदन्ति असमाधानात् मनः निग्रह कर्शिताः ॥

शब्दार्थ—

प्रायशः	४.	अधिकांश	विषीदन्ति	१०.	दुःखी हो जाते हैं
पुण्डरीकाक्ष	१.	हे कमल नयन !	असमाधानात्	६.	एकाग्र न होने पर
युञ्जन्तः	३.	एकाग्र करते हुये	मनः	७.	मन को
योगिनः	५.	योगी (उसके)	निग्रह	८.	वशीकरण की क्रिया से
मनः ।	२.	मन को	कर्शिताः ॥	९.	थक कर

श्लोकार्थ—हे कमल नयन ! मन को एकाग्र करते हुये अधिकांश योगी उसके एकाग्र न होने पर मन के वशीकरण की क्रिया से थक कर दुःखी हो जाते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

अथात आनन्ददुघं पदाम्बुजं हंसाः श्रयेरन्नरविन्दलोचन।
सुखं नु विश्वेश्वर योगकर्मभिस्त्वन्माययामी विहता न मानिनः ॥३॥

पदच्छेद— अथ अतः आनन्द दुघम् पदाम्बुजम् हंसाः श्रयेरन् अरविन्द लोचन।
सुखम् नु विश्वेश्वर योग कर्मभिः त्वत् मायया अमी विहताः न मानिनः ॥

शब्दार्थ—

अथ अतः	३.	इसी कारण	सुखम् नु	१२.	अतः वे सुखी रहते हैं
आनन्द दुघम्	५.	आपके आनन्द वर्षी	विश्वेश्वर	२.	आप विश्वेश्वर हैं!
पदाम्बुजम्	६.	चरण कमलों की	योगकर्मभिः	८.	उन्हें योग साधन का
हंसाः	४.	सारासार विचार में निपुण मनुष्य	त्वत् मायया अमी	१०.	उन्हें आपकी माया भी
श्रयेरन्	७.	शरण लेते हैं	विहताः	११.	नष्ट नहीं कर पाती
अरविन्दलोचन।	१.	हे पद्मलोचन!	न मानिनः ॥	९.	अभिमान नहीं होता और

श्लोकार्थ—हे पद्मलोचन! आप विश्वेश्वर हैं। इसी कारण सारासार विचार में निपुण मनुष्य आपके आनन्द वर्षी चरण कमलों की शरण लेते हैं। उन्हें योग साधन का अभिमान नहीं होता है। और उन्हें आपकी माया भी नष्ट नहीं कर पाती, अतः वे सुखी रहते हैं ॥

चतुर्थः श्लोकः

किं चित्रमच्युत तवैतदशेषबन्धोदासेष्वनन्यशरणेषु यदात्मसात्त्वम्।
योऽरोचयत् सह मृगैः स्वयमीश्वराणां श्रीमत्किरीटतटपीडितपादपीठः ॥४॥

पदच्छेद—किम् चित्रम् अच्युत तव एतत् अशेष बन्धोदासेषु अनन्य शरणेषु यत् आत्मसात्वम्।
यः अरोचयत् सह मृगैः स्वयम् ईश्वराणाम् श्रीमत् किरीट तट पीडित पादपीठः ॥

शब्दार्थ—

किम् चित्रम्	७.	कोई आश्चर्य की बात नहीं है	यः	८.	क्योंकि आपने रामावतार में
अच्युत	१.	हे प्रभो!	अरोचयत्	१०.	मित्रता का व्यवहार किया
तव एतत्	६.	यह आपके लिये	सहमृगैःस्वयम्	९.	स्वयं ही वानरों के साथ
अशेषबन्धो	२.	आप सबके हितैषी सिद्ध बन्धु है	ईश्वराणाम्	११.	ब्रह्मा आदि लोकेश्वर भी
दासेषु	४.	सेवकों के	श्रीमत् किरीट तट	१२.	अपने दिव्य किरीटों को आपके
अनन्यशरणेषु	३.	आप अपने अनन्य शरणागत	पीडित	१४.	रगड़ते रहते हैं
यत् आत्म सात्वम्।	५.	जो अधीन हो जाते हैं	पादपीठः ॥	१३.	चरण रखने की चौकी पर

श्लोकार्थ—हे प्रभो! आप सबके हितैषी सुहृद बन्धु हैं। आप अपने अनन्य शरणागत सेवकों के जो अधीन हो जाते हैं, यह आपके लिये कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्योंकि आपने रामावतार में स्वयं ही बानरों के साथ मित्रता का व्यवहार किया, ब्रह्मा आदि लोकेश्वर भी अपने दिव्य किरीटों को आपके चरण रखने की चौकी पर रगड़ते रहते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

तं त्वाखिलात्मदयितेश्वरमाश्रितानां सर्वार्थदं स्वकृतविद् विसृजेत को नु ।
को वा भजेत् किमपि विस्मृतयेऽनु भूत्यै किं वा भवेन्न तव पादरजोजुषां नः ॥५॥

पदच्छेद—तत् तु अखिल आत्मदयित ईश्वरम् आश्रितानां सर्वअर्थ दम् स्वकृत् विद् विसृजेत् कः नु ।
कः वा भजेत् किमपि विस्मृतये अनुभूत्यै किम् वा भवेत् न तव पाद रजः जुषाम् नः ॥

शब्दार्थ—

तम् तु अखिल	१.	ऐसे आप सम्पूर्ण जनों के	कः वा भजेत्	१२.	क्यों चाहेगा
आत्मदयित	२.	परम प्रियतम	किमपि	११.	तुच्छ विषयों को कोई विचार वान्
ईश्वरम्	३.	स्वामी और आत्मा है	विस्मृतये	९.	भला विस्मृति में डालने वाला
आश्रितानाम्	४.	अनन्य शरणागतों को	अनुभूत्यै	१०.	इन्द्रिय भोगरूप
सर्वअर्थदम्	५.	आप सब कुछ दे देते हैं	किम् वा	१५.	क्या वस्तु
स्वकृतविद्	६.	आपके कार्यों को जानकर	भवेत् न	१६.	नहीं प्राप्त होती है
विसृजेद्	८.	आपको छोड़ सकता है	तव पादरजः	१३.	आपके चरण कमलों की रजका
कः नु ।	७	भला कौन व्यक्ति	जुषाम् नः ॥	१४.	सेवन करने वाले हम भक्तों को

श्लोकार्थ—ऐसे आप सम्पूर्णजनों के परम प्रियतम स्वामी और आत्मा हैं। अनन्य शरणागतों को आप सब कुछ दे देते हैं। आपके कार्यों को जानकर भला कौन व्यक्ति आपको छोड़ सकता है। भला विस्मृति में डालने वाला इन्द्रिय भोगरूप तुच्छ विषयों को कोई विचारवान् क्यों चाहेगा। आपके चरण कमलों की रज का सेवन करने वाले हम भक्तों को क्या वस्तु नहीं प्राप्त होती है ॥

षष्ठः श्लोकः

नैवोपयन्त्यपचितिं कवयस्तवेश ब्रह्मायुषापि कृतमृद्धमुदः स्मरन्तः ।
योऽन्तर्बहिस्तनुभृतामशुभंविधुन्वन्नाचार्यचैत्यवपुषा स्वगतिं व्यनक्ति ॥६॥

पदच्छेद—न एव उपयन्ति अपचित्तिम् कवयः तव ईश ब्रह्मा आयुषा अपिकृतम् ऋद्धमुदः स्मरन्त ।
यः अन्तः बहिः तनु भृताम् शुभम् विधुन्वन् आचार्य चैत्य वपुषा स्वगतिम् व्यनक्ति ॥

शब्दार्थ—न एव	१३.	नहीं चुका	यः	१.	आप
उपयन्ति	१४.	सकते हैं	अन्तः बहिः	३.	अन्दर-बाहर
अपचित्तिम्	१२.	आपका उपकार	तनु भृताम्	२.	समस्त प्राणियों के शरीर में
कवयः तव	९.	ब्रह्मज्ञानी भी	शुभम्	५.	उनके पाप-ताप
ईश ब्रह्म	१०.	हे प्रभो ! ब्रह्मा के समान	विधुन्वन्	६.	मिटाते हैं और
आयुषा अपि	११.	लम्बी-आयु पाकर भी	आचार्यचैत्य	४.	गुरु रूप से स्थित होकर
कृतम्	१५.	वे आपके उपकारो का	वपुषा स्वगतिम्	७.	अपना वास्तविक स्वरूप
ऋद्धमुदः	१७.	अत्यन्त आनन्द का अनुभव करते हैं	व्यनक्ति ॥	८.	प्रकट करते हैं
स्मरन्त ।	१६.	स्मरण करके			

श्लोकार्थ—आप समस्त प्राणियों के शरीर में अन्दर-बाहर गुप्तरूप से स्थित होकर उनके पाप-ताप मिटाते हैं। और अपना वास्तविक स्वरूप प्रकट करते हैं। ब्रह्म ज्ञानी भी, हे प्रभो ! ब्रह्मा के समान लम्बी आयु पाकर भी अपका उपकार नहीं चुका सकते हैं। वे आपके उपकारों का स्मरण करके अत्यन्त आनन्द का अनुभव करते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—इत्युद्धवेनात्यनुरक्तचेतसा पृष्टो जगत्क्रीडनकः स्वशक्तिभिः ।
गृहीतमूर्तित्रय ईश्वरेश्वरो जगाद सप्रेममनोहरस्मितः ॥७॥

पदच्छेद—

इति उद्धवेन अति अनुरक्त चेतसाः पृष्ट जगत् क्रीडनकः स्वशक्तिभिः ।
गृहीत मूर्तित्रयः ईश्वर ईश्वरः जगाद् सप्रेम मनोहर स्मितः ॥

शब्दार्थ—

इति उद्धवेन	८. जब उद्धव जी ने	गृहीत	५. धारण करके
अति	६. अत्यन्त	मूर्तित्रयः	४. ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र का रूप
अनुरक्त चेतसा	१०. अनुराग भरे चित्त से	ईश्वर	१. श्रीकृष्ण तो ब्रह्मादि ईश्वर के भी
पृष्टः	११. उनसे यह प्रश्न किया	ईश्वरः	२. ईश्वर हैं वे ही
जगत्	६. जगत् की उत्पत्ति आदि	जगाद्	१४. कहना प्रारम्भ किया
क्रीडनकः	७. का खेल-खेला करते हैं	सप्रेम	१३. प्रेम से
स्वशक्तिभिः ।	३. अपनी शक्ति सत्त्व, रजादि	मनोहर स्मितः ॥	१२. तो उन्होंने मधुर मुसकराकर

श्लोकार्थ—श्रीकृष्ण तो ब्रह्मादि ईश्वरों के भी ईश्वर हैं। वे ही अपनी शक्ति सत्त्व, रजादि गुणों के द्वारा ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र का रूप धारण करके जगत की उत्पत्ति आदि का खेल खेला करते हैं। जब उद्धव जी ने अत्यन्त अनुराग भरे चित्त से उनसे यह प्रश्न किया तो उन्होंने मधुर मुसकरा कर प्रेम से कहना प्रारम्भ किया ॥

अष्टमः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—हन्त ते कथयिष्यामि मम धर्मान् सुमङ्गलान् ।
यान्छ्रद्धयाऽऽचरन् मर्त्यो मृत्युं जयति दुर्जयम् ॥८॥

पदच्छेद—

हन्त ते कथयिष्यामि मम धर्मान् सुमङ्गलम् ।
यान् श्रद्धया आचरन् मर्त्यः मृत्युम् जयति दुर्जयम् ॥

शब्दार्थ—

हन्त ते	१. प्रिय उद्धव ! आपसे	यान् श्रद्धया	६. जिनका श्रद्धापूर्वक
कथयिष्यामि	५. उपदेश करता हूँ	आचरन्	७. आचरण करने से
मम	२. मैं अपने	मर्त्यः	८. मनुष्य
धर्मान्	४. भागवत धर्मों का	मृत्युम्	१०. मृत्यु को
सुःमङ्गलान् ।	३. उन मङ्गलमय	जयति	११. अनायास ही जीत लेता है
		दुर्जयम् ॥	६. दुर्जय

श्लोकार्थ—प्रिय उद्धव ! आपसे मैं अपने उन मङ्गलमय भागवतधर्मों का उपदेश करता हूँ। जिनका श्रद्धापूर्वक आचरण करने से मनुष्य दुर्जय मृत्यु को अनायास ही जीत लेता है ॥

नवमः श्लोकः

कुर्यात् सर्वाणि कर्माणि मदर्थं शनकैः स्मरन् ।
मय्यर्पितमनश्चित्तो मद्धर्मात्ममनोरतिः ॥९॥

पदच्छेद—

कुर्यात् सर्वाणि कर्माणि मदर्थम् शनकैः स्मरन् ।
मयि अर्पित मत् चित्तः मत् धर्म आत्म मनः रतिः ॥

शब्दार्थ—

कुर्यात्	४.	करे और	मयि अर्पित	८.	मुझमें अर्पित करके
सर्वाणि	१.	अपने सारे	मत् चित्तः	७.	अपना मन और चित्त
कर्माणि	२.	कर्म	मत् धर्म	११.	मेरे धर्म और
मदर्थम्	३.	मेरे लिये ही	आत्म	९.	अपनी बुद्धि और
शनकैः	५.	धीरे-धीरे उन्हें करते समय	मनः	१०.	मन को
स्मरन् ।	६.	मेरे स्मरण का अभ्यास करे	रतिः ॥	१२.	मेरे प्रेम में सराबोर कर दे

श्लोकार्थ—अपने सारे कर्म मेरे लिये ही करे, और धीरे-धीरे उन्हें करते समय मेरे स्मरण का अभ्यास करे। अपना मन और चित्त मुझमें अर्पित करके अपनी बुद्धि और मन को मेरे धर्म और मेरे प्रेम में सराबोर कर दे ॥

दशमः श्लोकः

देशान् पुण्यानाश्रयेत मद्भक्तैः साधुभिः श्रितान् ।
देवासुरमनुष्येषु मद्भक्ताचरितानि च ॥१०॥

पदच्छेद—

देशान् पुण्याना आश्रयेत मत् भक्तैः साधुभिः श्रितान् ।
देवासुर मनुष्येषु मत् भक्तैः आचरितानि च ॥

शब्दार्थ—

देशान्	५.	स्थानों में	देव असुर	८.	देवता-असुर और
पुण्यान्	४.	पवित्र	मनुष्येषु	९.	मनुष्यों में जो
आश्रयेत्	६.	रहे	मत्	१०.	मेरे
मत् भक्तैः	१.	मेरे भक्तों और	भक्तैः	११.	अनन्य भक्त हों उनके
साधुभिः	२.	साधुजनों के	आचरितानि	१२.	आचरण का अनुसरण करे
श्रितान् ।	३.	आश्रय स्थल रूप	च ॥	७.	और

श्लोकार्थ—मेरे भक्तों और साधुजनों के आश्रय स्थल रूप पवित्र स्थानों में रहे। और देवता-असुर और मनुष्यों में जो मेरे अनन्य भक्त हों उनके आचरण का अनुसरण करे ॥

एकादशः श्लोकः

पृथक् सत्रेण वा मह्यं पर्वयात्रामहोत्सवान् ।
कारयेद् गीतनृत्याद्यैर्महाराजविभूतिभिः ॥११॥

पदच्छेद—

पृथक् सत्रेण वा मह्यम् पर्वयात्रा महोत्सवान् ।
कारयेद् गीत नृत्याद्यैः महाराज विभूतिभिः ॥

शब्दार्थ—

पृथक्	४.	अकेले ही	कारयेद्	१२.	मनाये
सत्रेण	२.	सबके साथ मिलकर	गीत	५.	गीत
वा	३.	अथवा	नृत्य	६.	नृत्यवाद्य
मह्यम्	१०.	मेरे	आदि	७.	आदि
पर्वयात्रा	१.	पर्व के अवसरों पर	महाराज	८.	महाराजोचित्त
महोत्सवान् ।	११.	महोत्सव को	विभूतिभिः ॥	९.	ठाट-बाट से

श्लोकार्थ—पर्व के अवसरों पर सबके साथ मिलकर अथवा अकेले ही गीत-नृत्य-पद्य आदि महारोजोचित्त ठाट-बाट से मेरे महोत्सव को मनाये ॥

द्वादशः श्लोकः

मामेव सर्वभूतेषु बहिरन्तरपावृतम् ।
ईक्षेतात्मनि चात्मानं यथा खममलाशयः ॥१२॥

पदच्छेद—

माम् एव सर्वभूतेषु बहिः अन्तः अपावृतम् ।
ईक्षेत् आत्मनि च आत्मनम् यथा खम् अमलशयः ॥

शब्दार्थ—

माम्	७.	मुझ परमात्मा को	ईक्षेत्	१२.	देखे
एव	८.	ही	आत्मनि च	१०.	हृदय में स्थित
सर्वभूतेषु	९.	समस्त प्राणियों और	आत्मनम्	११.	आत्मा को
बहिः	४.	बाहर और	यथा	३.	समान
अन्तः	५.	भीतर	खम्	२.	आकाश के
अपावृतम् ।	६.	आवरण शून्य	अमलाशयः ॥	१.	शुद्धान्तः करण पुरुष

श्लोकार्थ—शुद्धान्तः करण पुरुष आकाश के समान बाहर और भीतर आवरण शून्य मुझ परमात्मा को ही समस्त प्राणियों और आत्मा को हृदय में स्थित देखे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इति सर्वाणि भूतानि मद्भावेन महाद्युते ।
सभाजयन् मन्यमानो ज्ञानं केवलमाश्रितः ॥१३॥

पदच्छेद—

इति सर्वाणि भूतानि मत् भावेन महाद्युते ।
समाजयन् मन्यमानः ज्ञानम् केवलम् आश्रितः ॥

शब्दार्थ—

इति	२. इस प्रकार	समाजयन्	११.	सम्मान्ति करे
सर्वाणि	६. सम्पूर्ण	मन्यमानः	१०.	मानता हुआ
भूतानि	७. प्राणियों और पदार्थों को	ज्ञानम्	४.	ज्ञान का
मत्	८. मेरे	केवलम्	३.	केवल
भावेन	९. भाव से	आश्रितः ॥	५.	आश्रित मनुष्य
महाद्युते ।	१. हे महाकान्ति ! उद्धव			

श्लोकार्थ—हे महाकान्ति ! उद्धव केवल ज्ञान का आश्रित मनुष्य सम्पूर्ण प्राणियों और पदार्थों को मेरे भाव से मानता हुआ सम्मान्ति करे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

ब्राह्मणे पुल्कसे स्तेने ब्रह्मण्येऽर्के स्फुलिङ्गके ।
अक्रूरे क्रूरके चैव समदृक् पण्डितो मतः ॥१४॥

पदच्छेद—

ब्राह्मणे पुल्कसे स्तेने ब्रह्मण्ये अर्के स्फुलिङ्गके ।
अक्रूरे क्रूरके च एव समदृक् पण्डितः मतः ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मणे	१. ब्राह्मण और	अक्रूरे	७.	तथा कृपालु और
पुल्कसे	२. चाण्डाल	क्रूरके	८.	क्रूर में
स्तेने	३. चोर और	च एव	९.	भी
ब्रह्मण्ये	४. ब्राह्मण भक्त	समदृक्	१०.	समान दृष्टि रखने वाला जन
अर्के	५. सूर्य और	पण्डितः	११.	पण्डित
स्फुलिङ्गके ।	६. चिनगारी	मतः ॥	१२.	कहा गया है

श्लोकार्थ—ब्राह्मण और चाण्डाल, चोर और ब्राह्मण भक्त, सूर्य और चिनगारी तथा कृपालु और क्रूर में भी समान दृष्टि रखने वाला जन पण्डित कहा गया है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नरेष्वभीक्ष्णं मद्भावं पुंसो भावयतोऽचिरात् ।
स्पर्धासूयातिरस्काराः साहङ्कारा वियन्ति हि ॥१५॥

पदच्छेद—

नरेषु अभीक्ष्णम् मत्भावम् पुंसः भावयतः अचिरात् ।
स्पर्धा असूया तिरस्काराः स अहङ्कारा वियन्ति हि ॥

शब्दार्थ—

नरेषु	१. सभी नर नारियों में	स्पर्धा	६. स्पर्धा
अभीक्ष्णम्	२. निरन्तर	असूया	७. ईर्ष्या
मत् भावम्	३. मेरी ही	तिरस्काराः	८. तिरस्कार और
पुंसः	५. पुरुष के	स	११. सभी
भावयतः	४. भावना करने वाले	अहङ्कारा	९. अहंकार आदि दोष
अचिरात् ।	१०. शीघ्र	वियन्ति हि ॥	१२. दूर हो जाते हैं

श्लोकार्थ—सभी नर-नारियों में निरन्तर मेरी ही भावना करने वाले पुरुष के स्पर्धा, ईर्ष्या, तिरस्कार और अहङ्कार आदि दोष शीघ्र सभी दूर हो जाते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

विसृज्य स्मयमानान् स्वान् दृशं व्रीडां च दैहिकीम् ।
प्रणमेद् दण्डवद् भूमावाश्वचाण्डालगोखरम् ॥१६॥

पदच्छेद—

विसृज्य स्मयमानान् स्वान् दृशम् व्रीडाम् चदैहिकीम् ।
प्रणमेद् दण्डवत् भूमौआश्व चाण्डाल गोखरम् ॥

शब्दार्थ—

विसृज्य	३. ध्यान दें	प्रणमेद्	१२. प्रणाम करे
स्मयमानान्	२. हंसी करने वालों पर	दण्डवत्	११. गिर कर साष्टाङ्ग
स्वान्	१. अपनी	भूमौ	१०. पृथ्वी पर
दृशम्	५. दृष्टि तथा	आश्व	७. कुत्ते
व्रीडाम्	६. लज्जा को छोड़ दें और	चाण्डाल	८. चाण्डाल
चदैहिकीम् ।	४. और देह	गोखरम् ॥	९. गौ एवं गधे को भी

श्लोकार्थ—अपनी हंसी करने वालों पर ध्यान न दें और देह दृष्टि तथा लज्जा को छोड़ दे, कुत्ते, चाण्डाल, गौ एवं गधे को भी पृथ्वी पर गिर कर साष्टाङ्ग प्रणाण करे ॥

सप्तदशः श्लोकः

यावत् सर्वेषु भूतेषु मद्भावो नोपजायते ।
तावदेवमुपासीत वाङ्मनःकायवृत्तिभिः ॥१७॥

पदच्छेद—

यावत् सर्वेषु भूतेषु मत् भावः न उपजायते ।
तावत् एवम् उपासीत् वाङ्मनः काय वृत्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१. जब-तक	तावत्	७. तब-तक
सर्वेषु	२. समस्त	एवम्	११. इसी प्रकार
भूतेषु	३. प्राणियों में	उपासीत्	१२. मेरा उपासना करता रहे
मत्	४. मेरी	वाङ्मनः	८. मन-वाणी और
भावः	५. भावना	काय	९. शरीर के
न उपजायते ।	६. न होने लगे	वृत्तिभिः ॥	१०. सभी सङ्कल्पों और कर्मों से

श्लोकार्थ—जब-तक समस्त प्राणियों में मेरी भावना न होने लगे, तब-तक मन-वाणी और शरीर के सभी सङ्कल्पों और कर्मों से इसी प्रकार मेरी उपासना करता रहे ॥

अष्टादशः श्लोकः

सर्वं ब्रह्मात्मकं तस्य विद्ययाऽऽत्ममनीषया ।
परिपश्यन्नुपरमेत् सर्वतो मुक्तसंशयः ॥१८॥

पदच्छेद—

सर्वम् ब्रह्म आत्मकम् तस्य विद्यया आत्म मनीषया ।
परिपश्यन् उपरमेत् सर्वतः मुक्त संशयः ॥

शब्दार्थ—

सर्वम्	१. जब इस प्रकार सर्वत्र	मनीषया ।	३. बुद्धि-ब्रह्म बुद्धि का
ब्रह्म	७. ब्रह्म	परिपश्यन्	४. अभ्यास किया जाता है तब
आत्मकम्	८. स्वरूप का ज्ञान हो जाता है	उपरमेत्	१२. संसार से उपरत हो जाता है
तस्य	५. उसे थोड़े ही दिनों में	सर्वतः	९. और वह सब ओर से
विद्यया	६. ब्रह्म विद्या	मुक्त	११. मुक्त होकर
आत्म	२. आत्म	संशयः ॥	१०. संशय

श्लोकार्थ—जब इस प्रकार सर्वत्र आत्म बुद्धि-ब्रह्म बुद्धि का अभ्यास किया जाता है तब उसे थोड़े ही दिनों में ब्रह्मविद्या ब्रह्म स्वरूप का ज्ञान हो जाता है। और वह सब ओर से संशय मुक्त होकर संसार से उपरत हो जाता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अयं हि सर्वकल्पानां सध्रीचीनो मतो मम।
मद्भावः सर्वभूतेषु मनोवाक्कायवृत्तिभिः ॥१९॥

पदच्छेद—

अयम् हि सर्व कल्पानाम् सध्रीचीनः मतः मम ।
मत् भावः सर्व भूतेषु मनः वाक्काय वृत्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

अयम् हि	५. यह सब से	मत्	११. मेरी ही
सर्व	३. मेरी प्राप्ति के समस्त	भावः	१२. भावना की जाय
कल्पानाम्	४. साधनों में	सर्व	७. समस्त
सध्रीचीनः	६. श्रेष्ठ साधन है कि	भूतेषु	८. प्राणियों और पदार्थों में
मतः	२. विचार से	मनः वाक्काय	९. मन, वाणी और शरीर की
मम ।	१. मेरे	वृत्तिभिः ॥	१०. वृत्तियों से

श्लोकार्थ—मेरे विचार से मेरी प्राप्ति के समस्त साधनों में यह सब से श्रेष्ठ साधन है कि समस्त प्राणियों और पदार्थों में मन, वाणी और शरीर की वृत्तियों से मेरी ही भावना की जाय ॥

विंशः श्लोकः

न ह्यङ्गोपक्रमे ध्वंसो मद्धर्मस्योद्धवाण्वपि ।
मया व्यवसितः सम्यङ्निर्गुणत्वादनाशिषः ॥२०॥

पदच्छेद—

न हि अङ्ग उपक्रमे ध्वंसः मत् धर्मस्य उद्धव अणु अपि ।
मया व्यवसितः सम्यक् निर्गुणत्वात् अनाशिषः ॥

शब्दार्थ—

न हि	६. नहीं है	अणु-अपि ।	४. रत्तीभर भी
अङ्ग	१. उद्धव जी !	मया	८. मुझ
उपक्रमे	३. इसका आरम्भ कर देने पर	व्यवसितः	११. निश्चित होने से
ध्वंसः	५. नष्ट होने की सम्भावना	सम्यक्	१०. सम्यक् रूप से
मत् धर्मस्य	२. यही मेरा भागवत धर्म है	निर्गुणत्वात्	९. निर्गुण के द्वारा
उद्धव	७. हे उद्धव जी !	अनाशिषः ॥	१२. यह निष्काम भाव देने वाला है

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! यही मेरा भागवत धर्म है। इसका आरम्भ कर देने पर रत्तीभर भी नष्ट होने की सम्भावना नहीं है। हे उद्धव जी ! मुझ निर्गुण के द्वारा सम्यक् रूप से निश्चित होने से यह निष्काम भाव देने वाला है ॥

एकविंशः श्लोकः

यो यो मयि परे धर्मः कल्प्यते निष्फलाय चेत् ।
तदायासो निरर्थः स्याद् भयादेरिव सत्तम ॥२१॥

पदच्छेद—

यः यः मयि परे धर्मः कल्प्यते निष्फलाय चेत् ।
तदा आयासः निरर्थः स्याद् भय आदेः इव सत्तम ॥

शब्दार्थ—

यः यः	२.	जो जो	तदा आयासः	१०.	वे प्रयास भी
मयि परे	७.	मेरे परायण होकर	निरर्थः	९.	व्यर्थ कहे जाने वाले
धर्मः	११.	धर्म	स्याद्	१२.	बन जाते हैं
कल्प्यते	८.	निष्काम भाव से मुझे समर्पित कर दें तो	भय आदेः	३.	भय शोक आदि के अवसर पर
निष्फलाय	५.	निरर्थक कर्म है वे	इव	४.	होने वाले भावना आदि
चेत् ।	६.	यदि	सत्तम ॥	१.	हे उद्धव जी !

श्लोकार्थ—हे उद्धव जी ! जो-जो भय, शोक आदि के अवसर पर होने वाले भावना आदि निरर्थक कर्म हैं। वे यदि मेरे परायण होकर निष्कामभाव से मुझे समर्पित कर दें तो व्यर्थ कहे जाने वाले वे प्रयास भी धर्म बन जाते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

एषा बुद्धिमतां बुद्धिर्मनीषा च मनीषिणाम् ।
यत् सत्यमनृतेनेह मर्त्येनाप्नोति माऽमृतम् ॥२२॥

पदच्छेद—

एषा बुद्धिमतां बुद्धिः मनीषा च मनीषिणाम् ।
यत् सत्यम् अनृतेन इह मर्त्येन आप्नोतिमा अमृतम् ॥

शब्दार्थ—

एषा	५.	यही है	यत्	६.	कि
बुद्धिमताम्	१.	विवेकियों का	सत्यम्	१०.	सत्य तत्त्व को
बुद्धिः च	२.	विवेक और	अनृतेन इह	८.	असत्य शरीर के द्वारा
मनीषा	४.	चतुराई	मर्त्येन	७.	वे इस विनाशी और
मनीषिणाम् ।	३.	चतुरों की	आप्नोति	११.	प्राप्त कर लें
			माअमृतम् ॥	९.	मुझ अविनाशी एवं

श्लोकार्थ—विवेकियों का विवेक और चतुरों की चतुराई यही है। कि वे इस विनाशी एवं असत्य शरीर के द्वारा मुझ अविनाशी एवं सत्य तत्त्व को प्राप्त कर लें ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

एष तेऽभिहितः कृत्स्नो ब्रह्मवादस्य सङ्ग्रहः ।
समासव्यासविधिना देवानामपि दुर्गमः ॥२३॥

पदच्छेद—

एषः ते अभिहितः कृत्स्नः ब्रह्मवादस्य सङ्ग्रहः ।
समास व्यास विधिना देवानाम् अपि दुर्गमः ॥

शब्दार्थ—

एषः	१. यह	समास	५. संक्षेप और
ते	७. तुम्हें	व्यास	६. विस्तार से
अभिहितः	८. बता दिया	विधिना	९. इसके विधिपूर्वक समझना
कृत्स्नः	२. सम्पूर्ण	देवानाम्	१०. देवताओं के लिये
ब्रह्मवादस्य	३. ब्रह्म विद्या का	अपि	११. भी
सङ्ग्रहः ।	४. रहस्य मैंने	दुर्गमः ॥	१२. कठिन है

श्लोकार्थ—यह सम्पूर्ण ब्रह्म विद्या का रहस्य मैंने संक्षेप और विस्तार से तुम्हें बता दिया । इसको विधिपूर्वक समझना देवताओं के लिये भी कठिन है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

अभीक्ष्णशस्ते गदितं ज्ञानं विस्पष्टयुक्तिमत् ।
एतद् विज्ञाय मुच्येत पुरुषो नष्ट संशयः ॥२४॥

पदच्छेद—

अभीक्ष्णशः ते गदितम् ज्ञानम् विस्पष्ट युक्तिमत् ।
एतद् विज्ञाय मुच्यते पुरुषः नष्ट संशयः ॥

शब्दार्थ—

अभीक्ष्णशः	५. बार-बार	एतद्	७. जो इसके रहस्य को
ते	४. तुमसे	विज्ञाय	८. ज्ञान लेता है
गदितम्	६. वर्णन किया है	मुच्यते	१२. मुक्त हो जाता है
ज्ञानम्	३. ज्ञान का	पुरुषः	९. उस मनुष्य के
विस्पष्ट	१. मैंने जिस सुस्पष्ट	नष्ट	११. छिन्न-भिन्न हो जाते हैं और वह
युक्ति मत् ।	२. युक्ति-युक्त	संशयः ॥	१०. संशय

श्लोकार्थ—मैंने जिस सुस्पष्ट युक्ति-युक्त ज्ञान का तुमसे बार-बार वर्णन किया है । जो इसके रहस्य को जान लेता है । उस मनुष्य के संशय छिन्न-भिन्न हो जाते हैं, और वह मुक्त हो जाता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

सुविविक्तं तव प्रश्नं मयैतदपि धारयेत् ।
सनातनं ब्रह्मगुह्यं परं ब्रह्माधिगच्छति ॥२५॥

पदच्छेद—

सुविविक्तम् तव प्रश्नम् मया एतत् अपि धारयेत् ।
सनातनम् ब्रह्म गुह्यम् परम् ब्रह्म अधिगच्छति ॥

शब्दार्थ—

सुविविक्तम्	४.	भली-भाँति स्पष्ट हो गया	सनातनम्	८.	सनातन
तव	२.	तुम्हारे	ब्रह्मगुह्यम्	७.	वह वेदों के परम रहस्य
प्रश्नम्	३.	प्रश्न का	परम्	९.	पर
मया	१.	मेरे द्वारा	ब्रह्म	१०.	ब्रह्म को
एतत् अपि	५.	जो इसे	अधिगच्छति ॥	११.	प्राप्त कर लेगा
धारयेत् ।	६.	धारण करेगा			

श्लोकार्थ—मेरे द्वारा तुम्हारे प्रश्न का भली-भाँति स्पष्ट हो गया । जो इसे धारण करेगा वह वेदों के परम रहस्य सनातन पर ब्रह्म को प्राप्त कर लेगा ॥

षड्विंशः श्लोकः

य एतन्मम भक्तेषु सम्प्रदद्यात् सुपुष्कलम् ।
तस्याहं ब्रह्मदायस्य ददाम्यात्मानमात्मना ॥२६॥

पदच्छेद—

यः एतत् मम भक्तेषु सम्प्रदद्यात् सुपुष्कलम् ।
तस्य अहम् ब्रह्म दायस्य ददामि आत्मानम् आत्मना ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो पुरुष	तस्य	७.	उस ज्ञानदाता को
एतत्	४.	इसे	अहम्	८.	मैं
मम	२.	मेरे	ब्रह्मदायस्य	१२.	आत्मज्ञान करा दूंगा
भक्तेषु	३.	भक्तों को	ददामि	११.	दे डालूंगा (और उसे)
सम्प्रदद्यात्	६.	समझायेगा	आत्मानम्	९.	अपना
सुपुष्कलम् ।	५.	भली-भाँति	आत्मना ॥	१०.	स्वरूप तक

श्लोकार्थ—जो पुरुष मेरे भक्तों को इसे भली-भाँति समझायेगा, उस ज्ञानदाता को मैं अपना स्वरूप तक दे डालूंगा, और उसे आत्मज्ञान करा दूंगा ॥

सप्तविंशः श्लोकः

य एतत् समधीयीत पवित्रं परमं शुचि ।
स पूयेताहरहर्मां ज्ञानदीपेन दर्शयन् ॥२७॥

पदच्छेद—

यः एतत समधीयीत पवित्रम् परमम् शुचि ।
सः पूयेत अहरहः माम् ज्ञानदीपेन दर्शयन् ॥

शब्दार्थ—

यः	५	जो	सः	७.	वह
एतत्	४.	इस ज्ञान को	पूयेत	१२.	पवित्र हो जायेगा
समधीयीत्	६.	प्रतिदिन पढ़ेगा	अहरहः	६.	प्रतिदिन
पवित्रम्	२.	पवित्र और	माम	१०.	मेरा
परमम्	१.	परम	ज्ञानदीपेन	८.	ज्ञानदीप के द्वारा
शुचि ।	३.	दूसरों को पवित्र करने वाले	दर्शयन् ॥	११.	दर्शन करने के कारण

श्लोकार्थ—परम 'पवित्र और दूसरों को पवित्र करने वाले इस ज्ञान को जो प्रतिदिन पढ़ेगा । वह ज्ञान दीप के द्वारा प्रतिदिन मेरा दर्शन कराने के कारण पवित्र हो जायेगा ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

य एतच्छ्रद्धया नित्यमव्यग्रः शृणुयान्नरः ।
मयि भक्तिं परां कुर्वन् कर्मभिर्न स बध्यते ॥२८॥

पदच्छेद—

यः एतत् श्रद्धया नित्यम् अव्यग्रः शृणुयात् नरः ।
मयि भक्तिम् पराम् कुर्वन् कर्मभिः न सः बध्यते ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो कोई	मयि	८.	उसे मेरी
एतत्	५.	इसे	भक्तिम्	१०.	भक्ति
श्रद्धया	३.	श्रद्धापूर्वक	पराम्	६.	परा
नित्यम्	६.	नित्य	कुर्वन्	११.	प्राप्त होगी और
अव्यग्रः	४.	एकाग्रचित्त से	कर्मभिः न	१३.	कर्म-बन्धन में नहीं
शृणुयात्	७.	सुनेगा	सः	१२.	वह
नरः ।	२.	मनुष्य	बध्यते ॥	१४.	बंधेगा

श्लोकार्थ—जो कोई मनुष्य श्रद्धापूर्वक एकाग्रचित्त से इसे नित्य सुनेगा । उसे मेरा भक्ति प्राप्त होगी, और वह कर्म-बन्धन में नहीं बंधेगा ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

अप्युद्धव त्वया ब्रह्म सखे समवधारितम् ।
अपि ते विगतो मोहः शोकश्चासौ मनोभवः ॥२९॥

पदच्छेद—

अपि उद्धव त्वया ब्रह्म सखे समवधारितम् ।
अपि ते विगतः मोहः शोकः च असौ मनोभवः ॥

शब्दार्थ—

अपि	४.	भी	अपि ते	७.	क्या तुम्हारे
उद्धव	२.	उद्धव !	विगतः	१२.	दूर हो गया है ?
त्वया	३.	तुमने	मोहः	११.	मोह
ब्रह्म	५.	ब्रह्म का स्वरूप	शोकः	१०.	शोक और
सखे	१.	प्रिय सखे	च असौ	९.	वह
समवधारितम् ।	६.	समझ लिया है न ?	मनोभवः ॥	८.	चित्त में उत्पन्न

श्लोकार्थ—प्रिय सखे उद्धव ! तुमने भी ब्रह्म का स्वरूप समझ लिया है न ? क्या तुम्हारे चित्त में उत्पन्न वह शोक और मोह दूर हो गया है ?

त्रिंशः श्लोकः

नैतत्त्वया दाम्भिकाय नास्तिकाय शठाय च ।
अशुश्रूषोरभक्ताय दुर्विनीताय दीयताम् ॥३०॥

पदच्छेद—

न एतत् त्वया दाम्भिकाय नास्तिकाय शठाय च ।
अशुश्रूषोः अभक्ताय दुर्विनीताय दीयताम् ॥

शब्दार्थ—

न	१०.	कभी न	च ।	६.	और
एतत्	२.	इसे	अशुश्रूषोः	७.	अश्रद्धालु
त्वया	१.	तुम	अभक्ताय	८.	भक्तिहीन तथा
दाम्भिकाय	३.	दाम्भिक	दुर्विनीताय	९.	उद्धत पुरुष को
नास्तिकाय	४.	नास्तिक	दीयताम् ॥	११.	देना
शठाय	५.	शठ			

श्लोकार्थ—तुम इसे दाम्भिक, नास्तिक, शठ और अश्रद्धालु, भक्तहीन तथा उद्धत पुरुष को कभी न देना ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एतैर्दोषैर्विहीनाय ब्रह्मण्याय प्रियाय च ।
साधवे शुचये ब्रूयाद् भक्तिः स्याच्छूद्रयोषिताम् ॥३१॥

पदच्छेद—

एतैः दोषैः विहीनाय ब्रह्मण्याय प्रियाय च ।
साधवे शुचये ब्रूयात् भक्तिः स्यात् शूद्र योषिताम् ॥

शब्दार्थ—

एतैः	१. इन	साधवे	७. सन्तों
दोषैः	२. दोषों से	शुचये	८. पवित्रचरित्र वालों को तथा
विहीनाय	३. रहित पुरुषों	ब्रूयात्	१२. सुनाना चाहिये
ब्रह्मण्याय	४. ब्राह्मण-भक्तों	भक्तिः	९. भक्ति
प्रियाय	६. प्रेमी जनों	स्यात्	१०. हो तो
च ।	५. और	शूद्र योषिताम् ॥	११. शूद्र और स्त्रियों को भी

श्लोकार्थ—इन दोषों से रहित पुरुषों को ब्राह्मण-भक्तों और प्रेमी जनों, सन्तों, पवित्र चरित्र वालों को तथा भक्ति हो तो शूद्र और स्त्रियों को भी सुनाना चाहिये ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

नैतद् विज्ञाय जिज्ञासोर्ज्ञातव्यमवशिष्यते ।
पीत्वा पीयूषममृतं पातव्यं नावशिष्यते ॥३२॥

पदच्छेद—

न एतद् विज्ञाय जिज्ञासोः ज्ञात व्यम् अवशिष्यते ।
पीत्वा पीयूषम् अमृतम् पातव्यम् न अवशिष्यते ॥

शब्दार्थ—

न	१२. नहीं रहता है !	पीत्वा	३. पान कर लेने पर
एतद्	७. यह ज्ञान	पीयूषम्	१. जैसे दिव्य
विज्ञाय	८. जान लेने पर	अमृतम्	२. अमृत
जिज्ञासोः	९. जिज्ञासु के लिये	पातव्यम्	४. कुछ भी पीना
ज्ञातव्यम्	१०. और कुछ भी जानना	न	५. नहीं
अवशिष्यते ।	११. शेष	अवशिष्यते ॥	६. शेष रहता, वैसे ही

श्लोकार्थ—जैसे दिव्य अमृत पान कर लेने पर कुछ भी पीना नहीं शेष रहता, वैसे ही यह ज्ञान जान लेने पर जिज्ञासु के लिये और कुछ भी जानना शेष नहीं रहता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

ज्ञाने कर्मणि योगे च वार्तायां दण्डधारणे।
यावानर्थो नृणां तात तावांस्तेऽहं चतुर्विधः ॥३३॥

पदच्छेद—

ज्ञाने कर्मणि योगे च वार्तायाम् दण्डधारिणे।
यावान् अर्थः नृणाम् तात् तावान् ते अहम् चतुर्विधः ॥

शब्दार्थ—

ज्ञाने	३.	ज्ञान	अर्थः	९.	फल प्राप्त होता है
कर्मणि	४.	कर्म	नृणाम्	२.	मनुष्यों को
योगे च	५.	योग	तात्	१.	प्यारे उद्धव !
वार्तायाम्	६.	वाणिज्य और	तावान्	१०.	उतना
दण्डधारिणे।	७.	राजदण्डादि से	ते अहम्	१२.	तुम्हारे लिये मैं हूँ
यावान्	८.	जितना	चतुर्विधः ॥	११.	चारों प्रकार का फल

श्लोकार्थ—प्यारे उद्धव ! मनुष्यों को ज्ञान, कर्म, योग, वाणिज्य और राजदण्डादि से जितना फल प्राप्त होता है। उतना चारों प्रकार का फल (मोक्ष-धर्म-काम-अर्थ) तुम्हारे लिये मैं हूँ। अर्थात् मेरे द्वारा सब मिल जायेगा ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

मर्त्यो यदा त्यक्तसमस्तकर्मा निवेदितात्मा विचिकीर्षितो मे।
तदामृतत्वं प्रतिपद्यमानो मयाऽऽत्मभूयाय च कल्पते वै ॥३४॥

पदच्छेद—

मर्त्यः यदा त्यक्त समस्त कर्मा निवेदित आत्मा विचिकीर्षितः मे।
तदा अमृतत्वम् प्रतिपद्यमानः मया आत्मभूयाय च कल्पते वै ॥

शब्दार्थ—

मर्त्यः यदा	१.	जिस समय मनुष्य	तदा	६.	तब वह
त्यक्त	३.	परित्याग करके	अमृतत्वम्	९.	और अमृत स्वरूप मोक्ष को
समस्तकर्मा	२.	समस्त कर्मों का	प्रतिपद्यमानः	१०.	पाकर (तथा)
निवेदित	५.	समर्पण कर देता है	मया	११.	मुझसे
आत्मा	४.	मुझे आत्म	आत्मभूयाय	१२.	मिलकर मेरा स्वरूप
विचिकीर्षितः	८.	विशेष माननीय हो जाता है	च कल्पते	१३.	हो जाता
मे।	७.	मेरा	वै ॥	१४.	है

श्लोकार्थ—जिस समय मनुष्य समस्त कर्मों का परित्याग करके मुझे आत्म समर्पण कर देता है। तब वह मेरा विशेष माननीय हो जाता है। और अमृत स्वरूप मोक्ष को पाकर तथा मुझसे मिलकर मेरा स्वरूप हो जाता है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—स एवमादर्शितयोगमार्गस्तदोत्तमश्लोकवचो निशम्य ।
बद्धाञ्जलिः प्रीत्युपरुद्धकण्ठो न किञ्चिदूचेऽश्रुपरिप्लुताक्षः ॥३५॥

पदच्छेद—

सः एवम् आदर्शित योगमार्गः तदा उत्तमश्लोक वचः निशम्य ।
बद्धाञ्जलिः प्रीति उपरुद्ध कण्ठः न किञ्चित् ऊचे अश्रुपरिप्लुताक्षः ॥

शब्दार्थ—

सः एवम्	१. उद्धवजी ! इस प्रकार	बद्धाञ्जलिः	८. हाथ जोड़े
आदर्शित	३. उपदेश प्राप्त कर चुके	प्रीति	११. प्रेम के कारण
योगमार्गः	२. योगमार्ग का	उपरुद्ध कण्ठः	१२. गला रुँध जाने से
तदा	४. तब	न किञ्चित्	१३. कुछ भी न
उत्तमश्लोक	५. श्रीकृष्ण की	ऊचे	१४. बोल सके
वचः	६. वाणी को	अश्रु	६. आँसू से
निशम्य ।	७. सुनकर	परिप्लुताक्षः ॥	१०. आँखें भर जाने और

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! इस प्रकार योगमार्ग का उपदेश प्राप्त कर चुके तब श्रीकृष्ण की वाणी को सुनकर हाथ जोड़े आँसू से आँखें भर जाने और प्रेम के कारण गला रुँध जाने से कुछ भी न बोल सके ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

विष्टभ्य चित्तं प्रणयावघूर्णं धैर्येण राजन् बहु मन्यमानः ।
कृताञ्जलिः प्राह यदुप्रवीरं शीर्ष्णा स्पृशंस्तच्चरणारविन्दम् ॥३६॥

पदच्छेद—

विष्टभ्य चित्तम् प्रणय अवघूर्णम् धैर्येण राजन् बहु मन्यमानः ।
कृत अञ्जलिः प्राह यदु प्रवीरम् शीर्ष्णा स्पृशन् तत् चरणारविन्दम् ॥

शब्दार्थ—

विष्टभ्य	४. विह्वल हो रहा था	कृत अञ्जलिः	१३. हाथ जोड़कर
चित्तम्	१. उसका चित्त	प्राह	१४. उनसे प्रार्थना की
प्रणय	२. प्रेम के	यदु प्रवीरम्	६. यदुवंशशिरोमणि
अवघूर्णम्	३. आवेश से	शीर्ष्णा	८. सिर से
धैर्येण	६. उन्होंने धैर्यपूर्वक	स्पृशन्	१२. स्पर्श किया और
राजन्	५. हे राजन् !	तत्	१०. भगवान् श्रीकृष्ण के
बहुमन्यमानः ।	७. उसे बहुत रोका और	चरणारविन्दम् ॥	११. चरणों का

श्लोकार्थ—उनका चित्त प्रेम के आवेश से विह्वल हो रहा था । हे राजन् ! उन्होंने धैर्यपूर्वक उसे बहुत रोका और सिर से यदुवंशशिरोमणि भगवान् श्रीकृष्ण के चरणों का स्पर्श किया और हाथ जोड़कर उनसे प्रार्थना की ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

उद्धव उवाच—विद्रावितो मोहमहान्धकारो य आश्रितो मे तव सन्निधानात् ।
विभावसोः किं नु समीपगस्य शीतं तमो भीः प्रभवन्त्यजाद्य ॥३७॥

पदच्छेद—

विद्रावितः मोह महान्धकारः यः आश्रितः मे तव सन्निधानात् ।
विभावसोः किम् नु समीपगस्य शीतम् तमो भीः प्रभवन्ति अज आद्य ॥

शब्दार्थ—

विद्रावितः	८.	दूर हो गया है	विभावसोः	१०.	अग्नि के
मोह	३.	मोह के	किम् नु	९.	भला कहीं
महान्धकारः	५.	महान अन्धकार ने	समीपगस्य	११.	पास जाने पर
यः	४.	जिस	शीतम्	१२.	शीत
आश्रितः	६.	स्थान बना लिया था वह	तमो भीः	१३.	अन्धकार और ताप जनित भय
मे	२.	मुझमें	प्रभवन्ति	१४.	रह सकता है
तवसन्निधानात् ।	७.	आपके सत्सङ्ग से	अज आद्य ॥	१.	माया और ब्रह्मा के भी मूल कारण

श्लोकार्थ—माया और ब्रह्मा के भी मूल-कारण मुझमें मोह के जिस महान अन्धकार ने स्थान बना लिया था, वह आपके सत्सङ्ग से दूर हो गया है। भला कहीं अग्नि के पास जाने पर शीत, अन्धकार और ताप जनित भय रह सकता है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

प्रत्यर्पितो मे भवतानुकम्पिना भृत्याय विज्ञानमयः प्रदीपः ।
हित्वा कृतज्ञस्तव पादमूलं कोऽन्यत् समीयाच्छरणं त्वदीयम् ॥३८॥

पदच्छेद—

प्रत्यर्पितः मे भवता अनुकम्पिना भृत्याय विज्ञानमयः प्रदीपः ।
हित्वा कृतज्ञः तव पादमूलम् कः अन्यत् समीयात् शरणम् त्वदीयम् ॥

शब्दार्थ—

प्रत्यर्पितः	७.	लौटा दिया है (अब)	हित्वा	११.	छोड़कर
मे	३.	मुझ	कृतज्ञः तव	८.	आपका कृतज्ञ होकर
भवता	२.	आपने	पाद मूलम्	१०.	चरण कमलों को
अनुकम्पिना	१.	कृपा करने वाले भगवान् !	कः अन्यत्	१२.	कौन दूसरे की
भृत्याय	४.	सेवक का	समीयात्	१४.	जाये
विज्ञानमयः	५.	ज्ञानरूपी	शरणम्	१३.	शरण में
प्रदीपः ।	६.	दीपक	त्वदीयम् ॥	९.	आपके

श्लोकार्थ—कृपा करने वाले भगवन् ! आपने मुझ सेवक का ज्ञान रूपी दीपक लौटा दिया है। अब आपका कृतज्ञ होकर आपके चरण कमलों को छोड़कर कौन दूसरे की शरण में जाये ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

वृक्णश्च मे सुदृढः स्नेहपाशो दाशार्हवृष्ण्यन्धकसात्वतेषु ।
प्रसारितः सृष्टिविवृद्धये त्वया स्वमायया ह्यात्मसुबोधहेतिना ॥३९॥

पदच्छेद—

वृक्णश्च मे सुदृढः स्नेहपाशः दाशार्ह वृष्ण्य अन्धक सात्वतेषु ।
प्रसारितः सृष्टि विवृद्धये त्वया स्वमायया हि आत्मसुबोध हेतिना ॥

शब्दार्थ—

वृक्णश्च	१४.	काट डाला है	प्रसारितः	८.	फैलाये हुये
मे	९.	मेरे	सृष्टि	३.	सृष्टि की
सुदृढः	१०.	सुदृढ	विवृद्धये	४.	वृद्धि के लिये
स्नेहपाशः	११.	स्नेहपाश को	त्वया	१.	आपने
दाशार्ह वृष्ण्य	५.	दाशार्ह वृष्णि	स्वमायया	२.	अपनी माया से
अन्धक	६.	अन्धक और	हि आत्मसुबोध	१२.	आत्मबोध के
सात्वतेषु ।	७.	सात्वतवंशी यादवों में	हेतिना ॥	१३.	शस्त्र से

श्लोकार्थ—आपने अपनी माया से सृष्टि की वृद्धि के लिये दाशार्ह-वृष्णि, अन्धक और सात्वतवंशी यादवों में फैलाये हुये ये मेरे सुदृढ स्नेहपाश को आत्मबोध के शस्त्र से काट डाला है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

नमोऽस्तु ते महायोगिन् प्रपन्नमनुशाधि माम् ।
यथा त्वच्चरणाम्भोजे रतिः स्यादनपायिनी ॥४०॥

पदच्छेद—

नमः अस्तु ते महायोगिन् प्रपन्नम् अनुशाधि माम् ।
यथा त्वत् चरण अम्भोज रतिः स्यात् अनपायिनी ॥

शब्दार्थ

नमः अस्तु	३.	नमस्कार है	यथा	७.	जिससे
ते	२.	आपको	त्वत्	८.	आपके
महायोगिन्	१.	हे महायोगी !	चरण अम्भोज	९.	चरण कमलों में
प्रपन्नम्	५.	शरणागत को	रतिः	११.	भक्ति
अनुशाधि	६.	आज्ञा दें	स्यात्	१२.	बनी रहे
माम् ।	४.	आप मुझ	अनपायिनी ॥	१०.	मेरी अनन्य

श्लोकार्थ—हे महायोगी ! आपको नमस्कार है । आप मुझ शरणागत को आज्ञा दें । जिससे आपके चरण कमलों में मेरी अनन्य भक्ति बनी रहे ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—गच्छोद्धव मयाऽऽदिष्टो बदर्याख्यं ममाश्रमम् ।
तत्र मत्पादतीर्थोदे स्नानोपस्पर्शनैः शुचिः ॥४१॥

पदच्छेद—

गच्छ उद्धव मया आदिष्टः बदर्याख्यम् मम आश्रमम् ।
तत्र मत् पाद तीर्थो दे स्नान उपस्पर्शनैः शुचिः ॥

शब्दार्थ—

गच्छ	५. चले जाओ	तत्र	७. वहाँ
उद्धव	१. उद्धव जो !	मत् पाद	८. मेरे चरण कमलों के
मया	२. तुम मेरी	तीर्थो दे	९. धोवन गङ्गाजल का
आदिष्टः	३. आज्ञा से	स्नान	१०. स्नान
बदर्याख्यम्	४. बदरीवन में	उपस्पर्शनैः	११. पान करने से
मम आश्रमम् ।	६. वह मेरा आश्रम है	शुचिः॥	१२. तुम पवित्र हो जाओगे

श्लोकार्थ—उद्धव जी ! तुम मेरी आज्ञा से बदरीवन में चले जाओ । वह मेरा आश्रम है । वहाँ मेरे चरण कमलों के धोवन, गंगा जल का स्नान-पान करने से तुम पवित्र हो जाओगे ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

ईक्षयालकनन्दाया विधूताशेषकल्मषः ।
वसानो वल्कलान्यङ्ग वन्यभुक् सुखनिःस्पृहः ॥४२॥

पदच्छेद—

ईक्षया अलकनन्दाया विधूत अशेष कल्मषः ।
वसानः वल्कलानि अङ्ग वन्यभुक् सुख निःस्पृहः ॥

शब्दार्थ—

ईक्षया	२. दर्शनमात्र से	वसानः	८. पहनना
अलकनन्दाया	१. अलकनन्दा के	वल्कलानि	७. तुम वहाँ वृक्षों की छाल
विधूत	५. नष्ट हो जायेंगे	अङ्ग	६. प्रिय उद्धव !
अशेष	३. तुम्हारे सारे	वन्यभुक्	९. कन्द मूल खाना और
कल्मषः ।	४. पाप-ताप	सुख निःस्पृहः।।	१०. सुख की इच्छा से दूर रहना

श्लोकार्थ—अलकनन्दा के दर्शन मात्र से तुम्हारे सारे पाप-ताप नष्ट हो जायेंगे । प्रिय उद्धव ! तुम वहाँ वृक्षों की छाल पहनना, कन्द-मूल खाना और सुख की इच्छा से दूर रहना ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

तितिक्षुर्द्वन्द्वमात्राणां सुशीलः संयतेन्द्रियः ।
शान्तः समाहितधिया ज्ञानविज्ञानसंयुतः ॥४३॥

पदच्छेद— तितिक्षुः द्वन्द्व मात्रानाम् सुशीलः संयत इन्द्रियः ।
शान्तः समाहित धिया ज्ञान विज्ञान संयुतः ॥

शब्दार्थ—

तितिक्षुः	३. सहन करना	शान्तः	७.	चित्त शान्त और
द्वन्द्व	१. सर्दी-गर्मी आदि	समाहित	९.	समाहित रखकर
मात्राणाम्	२. सभी द्वन्द्वों को	धिया	८.	बुद्धि
सुशीलः	४. स्वभाव सौम्य रखना	ज्ञान	१०.	तुम मेरे ज्ञान और
संयत	६. वश में रखना	विज्ञान	११.	अनुभव में
इन्द्रियः ।	५. इन्द्रियों को	संयुतः ॥	१२.	डूबे रहना

श्लोकार्थ—सर्दी-गर्मी आदि सभी द्वन्द्वों को सहन करना, स्वभाव सौम्य रखना, इन्द्रियों को वश में रखना। चित्त शान्त और बुद्धि समाहित रखकर तुम मेरे ज्ञान और अनुभव में डूबे रहना ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

मत्तोऽनुशिक्षितं यत्ते विविक्तमनुभावयन् ।
मय्यावेशितवाक्चित्तो मद्धर्मनिरतो भव ।
अतिव्रज्य गतीस्तिस्रो मामेष्यसि ततः परम् ॥४४॥

पदच्छेद— मत्तः अनुशिक्षितम् यत्ते विविक्तम् अनुभावयन् ।
मयि आवेशित् वाक् चित्तः मत् धर्म निरतः भव ।
अतिव्रज्य गतीः तिस्रः माम् एष्यसि ततः परम् ॥

शब्दार्थ—

मत्तः	१. मुझसे	मत् धर्मः	९.	मेरे भागवत धर्म में
अनुशिक्षितम्	३. सीखा है	निरतः	१०.	ही लगे
यत्ते	२. तुमने जो कुछ	भव ।	११.	रहना
विविक्तम्	४. एकान्त में	अतिव्रज्य	१५.	पार करके
अनुभावयन्	५. उसका अनुभव करना	गतीः	१४.	सम्बन्धित गतियों को
मयि	६. मुझमें ही	तिस्रः	१३.	त्रिगुण और उनसे
आवेशित	८. लगाना	माम् एष्यसि	१६.	मेरे स्वरूप में मिल जाओगे
वाक्चित्तः	७. अपनी वाणी और चित्त	ततः परम् ॥	१२.	अन्त में

श्लोकार्थ—मुझसे तुमने जो कुछ सीखा है, एकान्त में उसका अनुभव करना, मुझमें ही अपनी वाणी और चित्त लगाना। मेरे भागवत धर्म में ही लगे रहना। अन्त में त्रिगुण और उनसे सम्बन्धित गतियों को पार करके मेरे स्वरूप में मिल जाओगे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—स एवमुक्तो हरिमेधसोद्धवः प्रदक्षिणं तं परिसृत्य पादयोः
शिरो निधायाश्रुकलाभिरार्द्रधीर्न्यषिञ्चदद्वन्द्वपरोऽप्यपक्रमे ॥४५

पदच्छेद— सः एवम् उक्तः हरिमेधसा उद्धवः प्रदक्षिणम् तम् परिसृत्य पादयोः।
शिरः निधाय अश्रुकलाभिः आर्द्रधीः न्यषिञ्चत् अद्वन्द्व परः अपि अपक्रमे ॥

शब्दार्थ—

सः एवम्	१.	इस प्रकार उन	शिरः	९.	सिर
उक्तः	३.	उपदेश करने पर	निधाय	१०	रख दिया और
हरिमेधसा	२.	श्री कृष्ण के द्वारा	अश्रुकलाभिः	१५.	अश्रु बिन्दुओं से
उद्धवः	४.	उद्धव जी ने	आर्द्रधीः	१४.	छलकते हुये
प्रदक्षिणम्	६.	प्रदक्षिणा करके	न्यषिञ्चत्	१६.	उनके चरणों को धो दिया
तम्	५.	उनको	अद्वन्द्वपरः	१२.	द्वन्द्व रहित होने पर
परिसृत्य	७.	पास जाकर	अपि	१३.	भी
पादयोः।	८.	उनके चरणों में	अपक्रमे ॥	११.	प्रस्थान के समय

श्लोकार्थ—इस प्रकार उन श्रीकृष्ण के द्वारा उपदेश करने पर उद्धव जी ने उनकी प्रदक्षिणा करके पास जाकर उनके चरणों में सिर रख दिया, और प्रस्थान के समय द्वन्द्व रहित होने पर भी छलकते हुये अश्रुविन्दुओं से उनके चरणों को धो दिया ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

सुदुस्त्यजस्नेहवियोगकातरो न शक्नुवंस्तं परिहातुमातुरः।
कृच्छ्रं ययौ मूर्धनि भर्तृपादुके बिभ्रन्नमस्कृत्य ययौ पुनः पुनः ॥४६॥

पदच्छेद— सुदुस्त्यज स्नेह वियोग कातरः न शक्नु वन् तम् परिहातुम् आतुरः।
कृच्छ्रम् ययौ मूर्धनिभृर्तृ पादुके विभ्रत् नमस्कृत्य ययौ पुनः पुनः ॥

शब्दार्थ—

सुदुस्त्यज	१.	अत्यन्त कठिनाई से त्यागने योग्य	कृच्छ्रम्	१३.	कष्ट का
स्नेह	२.	स्नेह के	ययौ	१४.	अनुभव किया, फिर
वियोग	३.	वियोग से	मूर्धनि	११.	अपने मस्तक पर
कातरः	४.	भीत वे	भृर्तृ	९.	उन्होंने स्वामी के
न शक्नु वन्	७.	असमर्थ होते हुये	पादुके	१०.	खड़ाऊँ को
तम्	५.	उन्हें	विभ्रत्	१२.	रखा और
परिहातुम्	६.	छोड़ने में	नमस्कृत्य	१६.	प्रणाम करके
आतुरः।	८.	व्याकुल हो गये	ययौ पुनः पुनः ॥	१५-१७.	बारम्बार प्रस्थान किया

श्लोकार्थ—अत्यन्त कठिनाई से त्यागने योग्य स्नेह के वियोग से भीत वे उन्हें छोड़ने में असमर्थ होते हुये व्याकुल हो गये। उन्होने स्वामी के खड़ाऊँ को अपने मस्तक पर रखा। और कष्ट का अनुभव किया, फिर बारम्बार प्रणाम करके प्रस्थान किया ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

ततस्तमन्तर्हृदि संनिवेश्य गतो महाभागवतो विशालाम् ।
यथोपदिष्टां जगदेकबन्धुना तपः समास्थाय हरेरगाद् गतिम् ॥४७॥

पदच्छेद— ततः तम् अन्तः हृदि संनिवेश्य गतः महाभागवतः विशालाम् ।
यथाः उपदिष्टाम् जगदेक बन्धुना तपः समास्थाय हरेः अगात् गतिम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	इसके बाद	यथा	११.	अनुसार
तम्	३.	श्रीकृष्ण की छवि को	उपदिष्टाम्	१०.	आज्ञा के
अन्तः हृदि	२.	अपने हृदय में	जगदेक	८.	जगत् के एकमात्र
संनिवेश्य	४.	रखकर	बन्धुना	९.	हितैषी श्रीकृष्ण की
गतः	७.	पहुँचे	तपः समास्थाय	१२.	तपस्या करके
महाभागवतः	५.	भगवान् के प्रेमी उद्धव जी	हरेः अगात्	१३.	भगवान् की स्वरूप भूत
विशालाम् ।	६.	बदरिकाश्रम	गतिम् ॥	१४.	परम गति को प्राप्त किया

श्लोकार्थ—इसके बाद अपने हृदय में श्रीकृष्ण की छवि को रखकर भगवान् के प्रेमी उद्धव बदरिकाश्रम पहुँचे । जगत् के एकमात्र हितैषी श्रीकृष्ण की आज्ञा के अनुसार तपस्या करके भगवान् की स्वरूप भूत परम् गति को प्राप्त किया ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

य एतदानन्दसमुद्रसम्भृतं ज्ञानामृतं भागवताय भाषितम् ।
कृष्णेन योगेश्वरसेविताङ्घ्रिणा सच्छ्रद्धयाऽऽसेव्य जगद् विमुच्यते ॥४८॥

पदच्छेद— यः एतत् आनन्द समुद्र सम्भृतम् ज्ञान अमृतम् भागवताय भाषितम् ।
कृष्णेन योगेश्वर सेवित अङ्घ्रिणा सत् श्रद्धया आसेव्य जगत् विमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

यः एतत्	१.	जो मनुष्य	कृष्णेन योगेश्वर	२.	योगेश्वर श्रीकृष्ण के द्वारा
आनन्द	५.	आनन्द	सेवित	९.	पान करता है और
समुद्र	६.	समुद्र रूप	अङ्घ्रिणा	११.	उनके चरण कमलों की
सम्भृतम्	७.	इस	सत् श्रद्धया	१०.	सच्ची श्रद्धा से
ज्ञान अमृतम्	८.	ज्ञानामृत का	आसेव्य	१२.	सेवा करता है वह
भगवताय	३.	उद्धव जी के लिये	जगत्	१३.	इस संसार से
भाषितम् ।	४.	बताये गये	विमुच्यते ॥	१४.	मुक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य योगेश्वर श्रीकृष्ण के द्वारा उद्धव जी के लिये बताये गये आनन्द समुद्ररूप इस ज्ञानामृत का पान करता है । और सच्ची श्रद्धा से उनके चरण कमलों की सेवा करता है । वह इस संसार से मुक्त हो जाता है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

भवभयमपहन्तुं ज्ञानविज्ञानसारं निगमकृदुपजह्रे भृङ्गवद् वेदसारम् ।
अमृतमुदधितश्चापाययद् भृत्यवर्गान् पुरुषमृषभमाद्यं कृष्णसंज्ञं नतोऽस्मि ।४९।

पदच्छेद—

भवभयम् अपहन्तुम् ज्ञानविज्ञान सारम् निगमकृत् उपजह्रे भृङ्गवत् वेदसारम् ।
अमृतम् उदधितः च अपाययत् भृत्यवर्गान् पुरुषम् ऋषभम् आद्यम् कृष्ण संज्ञम् नतः अस्मि ।।

शब्दार्थ—

भवभयम्	३.	भवभय को	अमृतम्	११.	ज्ञानामृत निकालकर
अपहन्तुम्	४.	दूर करने के लिये	उदधितः च	१०.	वेदरूपी समुद्र से
ज्ञानविज्ञान	६.	ज्ञानविज्ञान का	अपाययत्	१२.	पिलाया
सारम्	७.	मूलतत्व	भृत्यवर्गान्	९.	अपने भक्तों को
निगमकृत्	१.	वेदों को प्रकाशित करने वाले प्रभु ने	पुरुषम्ऋषभम्	१४.	पुरुष पुरुषोत्तम
उपजह्रे	८.	निकाला है (और)	आद्यम्	१३.	ऐसे आदि
भृङ्गवत्	२.	भौंरों के समान	कृष्ण संज्ञम्	१५.	श्रीकृष्ण को
वेदसारम् ।	५.	वेदों का सार तत्त्व लेकर	नतः अस्मि ।।	१६.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—वेदों को प्रकाशित करने वाले प्रभु ने भौरों के समान भवभय को दूर करने के लिये वेदो का सार तत्त्व लेकर ज्ञान-विज्ञान का मूल तत्त्व निकाला है । और अपने भक्तों को वेदरूपो समुद्र से ज्ञानामृत निकालकर पिलाया । ऐसे आदि पुरुष पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण को नमस्कार है ।।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
एकादश स्कन्धे एकोनत्रिंशः अध्यायः ।।२९।।

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

त्रिंशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच— ततो महाभागवत उद्धवे निर्गते वनम्।
द्वारवत्यां किमकरोद् भगवान् भूतभावनः ॥१॥

पदच्छेद—

ततः महा भागवत उद्धवे निर्गते वनम्।
द्वारवत्याम् किम् करोद् भगवान् भूत भावनः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तत्पश्चात्	द्वारवत्याम्	१०.	द्वारका में
महा	२.	महा	किम्	११.	क्या
भागवत	३.	भागवत	करोद्	१२.	किया
उद्धवे	४.	उद्धव जी के	भगवान्	९.	भगवान श्रीकृष्ण ने
निर्गते	६.	चले जाने पर	भूत	७.	भूत
वनम्।	५.	बदरीवन में	भावनः ॥	८.	भावन

श्लोकार्थ—तत्पश्चात् महाभागवत उद्धव जी के बदरीवन में चले जाने पर भूत-भावन भगवान श्रीकृष्णने द्वारका में क्या किया ॥

द्वितीयः श्लोकः

ब्रह्मशापोपसंसृष्टे स्वकुले यादवर्षभः।
प्रेयसीं सर्वनेत्राणां तनुं स कथमत्यजत् ॥२॥

पदच्छेद—

ब्रह्म शापः उपसंसृष्टे स्वकुले यादवर्षभः।
प्रेयसीम् सर्वनेत्राणाम् तनुम् सकथम् अत्यजत् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्म	४.	ब्राह्मण के	प्रेयसीम्	९.	प्रिय
शाप	५.	शाप से	सर्व	७.	सबके
उपसंसृष्टे	६.	ग्रस्त होने पर	नेत्राणाम्	८.	नेत्रों के
स्वकुले	३.	अपने कुल के	तनुम्	१०.	श्री विग्रह की लीला को
यादव	२.	श्रीकृष्ण ने	सकथम्	१२.	कैसे किया
ऋषभः।	१.	हे प्रभो ! यदुवंशशिरोमणि	अत्यजत् ॥	११.	संवरण

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! यदुवंशशिरोमणि श्रीकृष्ण ने अपने कुल के ब्राह्मण के शाप से ग्रस्त होने पर सबके नेत्रों के प्रिय श्री विग्रह की लीला को संवरण कैसे किया ॥

तृतीयः श्लोकः

प्रत्याक्रष्टुं नयनमबला यत्र लग्नं न शेकुः
र्णाविष्टं न सरति ततो यत् सतामात्मलग्नम् ।
यच्छ्रीर्वाचरं जनयति रति किं नु मानं कवीनां
दृष्ट्वा जिष्णोर्युधि रथगतं यच्च तत्साम्यमीयुः ॥३॥

पदच्छेद— प्रत्याक्रष्टुम नयनम् अबला यत्र लग्नम् न शेकुः
कर्णाआविष्टम् न सरति ततः यत् सताम आत्मलग्नम् ।
यत् श्री वाचाम् जनयतिरतिमकिम् नु मानम् कवीनाम्
दृष्ट्वाजिष्णोर्युधि रथगतम् यत् चतत् साम्यमीयुः ॥

शब्दार्थ—					
प्रत्याक्रष्टुम्	३.	हटाने मे	यत् श्रीवाचाम्	१०.	उसको शोभा कवियों की वाणी में
नयनम् अबला	२.	स्त्रियाँ अपने नेत्रों को	जनयतिरतिम्	११.	अनुराग का रंग भर देती है
यत्रलग्नम्	१.	जिनके श्रीविग्रह में लग जाने पर	किम् नु मानम्	१२	और उन्हें ,कुछ अलौकिक
नशेकुः	४.	असमर्थ हो जाती थीं	कवीनाम् दृष्ट्वा	१३.	सम्मान देती है
कर्णआविष्टम्	६.	वर्णन सुनकर	जिष्णोः युधि	१४.	उन्हें जीतने की इच्छा वालों ने युद्ध में दर्शन किया वे मोक्ष को प्राप्त हो कर
न सरति	९.	वहाँ से नहीं हटता था	रथ गतम्	१५.	रथ पर बैठे हुये
ततः यत्	५.	जिनकी रूप माधुरीका	यत् चतत्	१६.	जिन श्रीकृष्ण का
सताम्	७.	सन्तजनों का	साम्यमीयुः ॥	१७.	किस प्रकार अन्तर्ध्यान हुये
आत्मलग्नम् ।	८.	हृदय अनुविद्ध होकर			

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! जिनके श्री विग्रह में लग जाने पर स्त्रियाँ अपने नेत्रों को हटाने में असमर्थ हो जाती थीं जिनकी रूप माधुरीका वर्णन सुन कर सन्त जनों का हृदय अनुविद्ध होकर वहाँ से नहीं हटता था । उसको शोभा कवियों की वाणी में अनुराग का रंग भर देती हैं । और उन्हें कुछ अलौकिक सम्मान देती है । उन्हें जीतने की इच्छा वालों ने युद्ध में रथ पर बैठे हुये जिन श्रीकृष्ण का दर्शन किया, वे मोक्ष को प्राप्त होकर किस प्रकार अन्तर्ध्यान हुये ॥

चतुर्थः श्लोकः

ऋषिरुवाच— दिवि भुव्यन्तरिक्षे च महोत्पातान् समुत्थितान् ।
दृष्ट्वाऽऽसीनान् सुधर्मायां कृष्णः प्राह यदूनिदम् ॥४॥

पदच्छेद— दिवि भुवि अन्तरिक्षे च महोत्पातान् समुत्थितान् ।
दृष्ट्वा आसीनान् सुधर्मायाम् कृष्णः प्राह यदूनिदम् ॥

शब्दार्थ—					
दिवि	१.	आकाश	दृष्ट्वा	६.	देखकर
भुवि	२.	पृथ्वी और	आसीनान्	८.	उपस्थित
अन्तरिक्षे	३.	अन्तरिक्ष में	सुधर्मायाम्	७.	सुधर्मा सभा में
च महोत्पातान्	४.	बड़े-बड़े उत्पात	कृष्णः प्राह	१०.	श्रीकृष्ण ने कहा
समुत्थितान् ।	५.	होते हुये	यदूनिदम् ॥	९.	सभी यदुवंसियों से

श्लोकार्थ—आकाश, पृथ्वी, और अन्तरिक्ष में बड़े-बड़े उत्पात होते हुये देखकर सुधर्मा सभा में उपस्थित सभी यदुवंशियों से श्रीकृष्ण ने कहा ॥

पञ्चमः श्लोकः

एते घोरा महोत्पाता द्वार्वत्यां यमकेतवः ।
मुहूर्त्तमपि न स्थेयमत्र नो यदुपुङ्गवाः ॥५॥

पदच्छेद—

एते घोराः महोत्पाताः द्वार्वत्याम् यम केतवः ।
मुहूर्त्तम् अपि न स्थेयम् अत्र नः यदुपुङ्गवः ॥

शब्दार्थ—

एते	३. ये	मुहूर्त्तम्	१०.	थोड़ी देर के लिये
घोराः	४. भयङ्कर और	अपि	११.	भी
महोत्पाताः	५. बड़े-बड़े उत्पात हो रहे हैं	न स्थेयम्	१२.	नहीं रहना चाहिये
द्वार्वत्याम्	२. द्वारकापुरी में	अत्र	८.	अतः यहाँ
यम	६. जो यमराज की	नः	९.	हम लोगों को
केतवः ।	६. ध्वजा के समान अनिष्ट सूचक हैं	यदुकुलम् ॥	१.	श्रेष्ठ यदुवंशियों !

श्लोकार्थ—श्रेष्ठ यदुवंशियों ! द्वारकापुरी में ये भयङ्कर और बड़े-बड़े उत्पात हो रहे हैं । जो यमराज की ध्वजा के समान अनिष्ट सूचक हैं । अतः यहाँ हम लोगों को थोड़ी देर के लिये भी नहीं रहना चाहिये ॥

षष्ठः श्लोकः

स्त्रियो बालाश्च वृद्धाश्च शङ्खोद्धारं व्रजन्त्वितः ।
वयं प्रभासं यास्यामो यत्र प्रत्यक् सरस्वती ॥६॥

पदच्छेद—

स्त्रियः बालाः च वृद्धाः च शङ्खोद्धारम् व्रजन्ति इतः ।
वयम् प्रभासम् यस्यामः यत्र प्रत्यक् सरस्वती ॥

शब्दार्थ—

स्त्रियः	१. स्त्रियाँ	वयम्	७.	और हम लोग
बालाः च	२. बच्चे और	प्रभासम्	८.	प्रभास क्षेत्र में
वृद्धा च	३. बूढ़े	यस्यामः	९.	चलें
शङ्खोद्धारम्	५. शङ्खद्वार क्षेत्र में	यत्र	१०.	जहाँ
व्रजन्ति	६. चले जाँय	प्रत्यक्	१२.	पश्चिम की ओर बहती है
इतः ।	४. यहाँ से	सरस्वती ॥	११.	सरस्वती

श्लोकार्थ—स्त्रियाँ, बच्चे और बूढ़े यहाँ से शङ्खद्वार क्षेत्र में चले जाँय, और हम लोग प्रभास क्षेत्र में चलें, जहाँ सरस्वती पश्चिम की ओर बहती है ॥

सप्तमः श्लोकः

तत्राभिषिच्य शुच्य उपोष्य सुसमाहिताः ।
देवताः पूजयिष्यामः स्नपनालेपनार्हणैः ॥७॥

पदच्छेद—

तत्र अभिषिच्य शुचय उपोष्य सुसमाहिताः ।
देवताः पूजयिष्यामः स्नपन आलेपना अर्हणैः ॥

शब्दार्थ—

तत्र	१.	वहाँ हम	देवताः	९.	देवताओं की
अभिषिच्य	२.	स्नान करके	पूजयिष्यामः	१०.	पूजा करेंगे
शुचय	३.	पवित्र होंगे	स्नपन	६.	स्नान एवं
उपोष्य	४.	उपवास करेंगे और	आलेपना	७.	चन्दन आदि
सुसमाहिताः ।	५.	एकाग्रचित्त से	अर्हणैः ॥	८.	सामग्रियों से

श्लोकार्थ—वहाँ हम स्नान करके पवित्र होंगे, उपवास करेंगे और एकाग्रचित्त से स्नान एवं चन्दन आदि सामग्रियों से देवताओं की पूजा करेंगे ॥

अष्टमः श्लोकः

ब्राह्मणांस्तु महाभागान् कृतस्वस्त्ययना वयम् ।
गोभूहिरण्यवासोभिर्गजाश्वरथवेश्मभिः ॥८॥

पदच्छेद—

ब्राह्मणान् तु महाभागान् कृत स्वस्त्ययनाः वयम् ।
गो भू हिरण्य वासोभिः गज अश्व रथ वेश्मभिः ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मणान्	१२.	ब्राह्मणों का सत्कार करेंगे	गो भू	५.	गौ-भूमि
तु	१.	वहाँ	हिरण्य	६.	सोना
महाभागान्	११.	महात्मा	वासोभिः	७.	वस्त्र
कृत	४.	करके	गज	८.	हाथी
स्वस्त्ययनाः	३.	स्वस्तिवाचन	अश्व रथ	९.	घोड़े-रथ और
वयम् ।	२.	हम लोग	वेश्मभिः ॥	१०.	घर आदि के द्वारा

श्लोकार्थ—वहाँ हम लोग स्वस्तिवाचन करके गौ-भूमि-सोना-वस्त्र-हाथी-घोड़े-रथ और घर आदि के द्वारा महात्मा, ब्राह्मणों का सत्कार करेंगे ॥

नवमः श्लोकः

विधिरेष ह्यरिष्टघ्नो मङ्गलायनमुत्तमम् ।
देवद्विजगवां पूजा भूतेषु परमो भवः ॥९॥

पदच्छेद—

विधिः एषः हि अरिष्टघ्नः मङ्गलायनम् उत्तमम् ।
देवद्विज गवाम् पूजा भूतेषु परमः भवः ॥

शब्दार्थ—

विधिः	३.	विधि	देवद्विज	६.	देवता-ब्राह्मण और
एषः हि	१.	यह	गवाम्	७.	गौओं की
अरिष्टघ्नः	२.	अमङ्गलों का नाश करने वाली	पूजाभूतेषु	८.	पूजा ही प्राणियों के
मङ्गलायनम्	५.	मङ्गल की जननी	परमः	१०.	परम लाभ है
उत्तमम् ।	४.	और परम	भवः ॥	९.	जन्म का

श्लोकार्थ—यह विधि अमङ्गलों का नाश करने वाली और परम मङ्गल की जननी, देवता, ब्राह्मण और गौओं की पूजा ही प्राणियों के जन्म का परम लाभ है ॥

दशमः श्लोकः

इति सर्वे समाकर्ण्य यदुवृद्धा मधुद्विषः ।
तथेति नौभिरुत्तीर्य प्रभासं प्रययू रथैः ॥१०॥

पदच्छेद—

इति सर्वे समाकर्ण्य यदुवृद्धाः मधु द्विषः ।
तथा इति नौभिः उत्तीर्य प्रभासम् प्रययु रथैः ॥

शब्दार्थ—

इति	४.	यह बात	तथा इति	६.	तथास्तु कह कर
सर्वे	१.	सभी	नौभिः उत्तीर्य	७.	नौकाओं से समुद्र पार करके
समाकर्ण्य	५.	सुनकर	प्रभासम्	९.	प्रभास क्षेत्र को
यदुवृद्धाः	२.	वृद्ध यदुवंशियों ने	प्रययु	१०.	यात्रा की
मधु द्विषः ।	३.	भगवान् श्रीकृष्ण की	रथैः ॥	८.	रथों के द्वारा

श्लोकार्थ—सभी वृद्ध यदुवंशियों ने भगवान् श्रीकृष्ण की यह बात सुन कर तथास्तु कह कर नौकाओं से समुद्र पार करके रथों के द्वारा प्रभास क्षेत्र की यात्रा की ॥

एकादशः श्लोकः

तस्मिन् भगवताऽऽदिष्टं यदुदेवेन यादवाः ।
चक्रुः परमया भक्त्या सर्वश्रेयोपबृंहितम् ॥११॥

पदच्छेद—

तस्मिन् भगवता आदिष्टम् यदुदेवेन यादवाः ।
चक्रुः परमया भक्त्या सर्वश्रेय उपबृंहितम् ।।

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१. वहाँ पहुँच कर	चक्रुः	१०.	किये
भगवता	४. भगवान् श्रीकृष्ण के	परमया	६.	बड़ी
आदिष्टम्	५. आदेशनुसार	भक्त्या	७.	भक्ति और श्रद्धा से
यदुदेवेन	३. यदुवंश शिरोमणि	सर्वश्रेय	८.	सब प्रकार के कल्याणकारी
यादवाः ।	२. यादवों ने	उपबृंहितम् ।।	९.	कृत्य सम्पन्न

श्लोकार्थ—वहाँ पहुँच कर यादवों ने यदुवंशशिरोमणि भगवान् श्रीकृष्ण के आदेशानुसार बड़ी भक्ति और श्रद्धा से सब प्रकार के कल्याणकारी कृत्य सम्पन्न किये ।।

द्वादशः श्लोकः

ततस्तस्मिन् महापानं पपुर्मैरेयकं मधु ।
दिष्टविभ्रंशितधियो यद्द्रवैर्भ्रश्यते मतिः ॥१२॥

पदच्छेद—

ततः तस्मिन् महापानम् पपुः मैरेयकम् मधु ।
दिष्ट विभ्रंशितधियः यद् द्रवैः भ्रश्यते मतिः ।।

शब्दार्थ—

ततः	३. उन्होंने	दिष्ट	७.	दैव ने
तस्मिन्	१. उस	विभ्रंशितधियः	८.	उनकी बुद्धि हर ली थी
महापानम्	२. महापान के बाद	यद्	९.	अतः
पपुः	६. पान किया	द्रवैः	१०.	उस मदिरा के नशे से
मैरेयकम्	४. मैरेयक नामक	भ्रश्यते	१२.	सर्वनाश हो गया
मधु ।	५. मदिरा का	मतिः ।।	११.	उनकी बुद्धि का

श्लोकार्थ—उस महापान के बाद उन्होंने मैरेयक नामक मदिरा का पान किया, दैवने उनकी बुद्धि हर ली थी । अतः उस मदिरा के नशे से उनकी बुद्धि का सर्वनाश हो गया ।।

त्रयोदशः श्लोकः

महापानाभिमत्तानां वीराणां दृप्तचेतसाम् ।
कृष्णमायाविमूढानां सङ्घर्षः सुमहानभूत् ॥१३॥

पदच्छेद—

महापान अभिमत्तानाम् वीराणाम् दृप्त चेतसाम् ।
कृष्णमाया विमूढानाम् सङ्घर्षः सुमहान् अभूत् ॥

शब्दार्थ—

महापान	१.	तीव्र मदिरा के पान से	कृष्णमाया	६.	श्रीकृष्ण की माया से
अभिमत्तानाम्	२.	उन्मत्त	विमूढानाम्	७.	मूढ़ होकर
वीराणाम्	५.	वे वीर	सङ्घर्षः	९.	सङ्घर्ष
दृप्त	३.	घमण्डी	सुमहान्	८.	अत्यधिक
चेतसाम् ।	४.	चित्त वाले	अभूत् ॥	१०.	करने लगे

श्लोकार्थ—तीव्र मदिरा के पान से उन्मत्त घमण्डी चित्त वाले वे वीर श्रीकृष्ण की माया से मूढ़ होकर अत्यधिक सङ्घर्ष करने लगे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

युयुधुः क्रोधसंरब्धा वेलायामाततायिनः ।
धनुर्भिरसिभिर्भल्लैर्गदाभिस्तोमरर्ष्टिभिः ॥१४॥

पदच्छेद—

युयुधुः क्रोध संरब्धा वेलायाम् आततायिनः ।
धनुर्भिः असिभिः भल्लैः गदाभिः तोमर ऋष्टिभिः ॥

शब्दार्थ—

युयुधुः	१०.	युद्ध करने लगे	धनुर्भिः	५.	धनुष-वाण
क्रोध	२.	क्रोध में	असिभिः	६.	तलवार
संरब्धा	३.	भर कर	भल्लैः	७.	भाले
वेलायाम्	४.	समुद्र के तट पर हो	गदाभिः तोमर	८.	गदा-तोमर और
आततायिनः ।	१.	वे आततायी	ऋष्टिभिः ॥	९.	ऋष्टि आदि से

श्लोकार्थ—वे आततायी क्रोध में भर कर समुद्र के तट पर ही धनुष, वाण, तलवार, भाले, गदा तोमर और ऋष्टि आदि से युद्ध करने लगे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

पतत्पताकै रथकुञ्जरादिभिः खरोष्ट्रगोभिर्महिषैर्नरैरपि ।
मिथः समेत्याश्वतरैः सुदुर्मदा न्यहञ्छरैर्दद्भिरिव द्विपा वने ॥१५॥

पदच्छेद— पतत् पताकैः रथ कुञ्जर आदिभिः खर उष्ट्र गोभिः महिषैः नरैः अपि ।
मिथः समेत्य अश्वतरैः सुदुर्मदा न्यहन् शरैः दद्भिः इव द्विपाः वने ॥

शब्दार्थ—

पतत् पताकैः	२. फहराती पताकाओं वाले	मिथः	१०. आपस में
रथकुञ्जर	३. रथों, हाथियों	समेत्य	११. मिलकर
आदिभिः	६. आदि पर सवार होकर	अश्वतरैः	६. घोड़ों
खर उष्ट्र	४. गधों, ऊँटों	सुदुर्मदा	१. मतवाले यदुवंशी
गोभिः	५. खच्चरों, बैलों	न्यहन् शरैः	१२. बाणों के द्वारा ऐसे प्रहार करने लगे
महिषैः	७ भैंसों और	दद्भिः	१४. दाँतों से चोट कर रहे हों
नरैः अपि ।	८. मनुष्यों	इव द्विपाः वने ॥	१३. जैसे जङ्गली हाथी

श्लोकार्थ—मतवाले यदुवंशी फहराती पताकाओं वाले रथों, हाथियों, गधों, ऊँटों, खच्चरों, बैलों, घोड़ों, भैंसों और मनुष्यों आदि पर सवार होकर आपस में मिलकर बाणों के द्वारा ऐसे प्रहार करने लगे, जैसे जङ्गली हाथी दाँतों से चोट कर रहे हों ॥

षोडशः श्लोकः

प्रद्युम्नसाम्बौ युधि रूढमत्सरावक्रूरभोजावनिरुद्धसात्यकी ।
सुभद्रसङ्ग्रामजितौ सुदारुणौ गदौ सुमित्रासुरथौ समीयतुः ॥१६॥

पदच्छेद— प्रद्युम्न साम्बौ युधि रूढ मत्सरौ अक्रूर भोजौ अनुरुद्ध सात्यकी ।
सुभद्र सङ्ग्रामजितौ सुदारुणौ गदौ सुमित्रा सुरथौ समीयतुः ॥

शब्दार्थ—

प्रद्युम्न	३. प्रद्युम्न	सुभद्र	८. सुभद्र
साम्बौ	४. साम्ब से	सङ्ग्रामजितौ	९. संग्रामजित से
युधि	१. युद्ध में	सुदारुणौ	१३. भयङ्कर
रूढ मत्सरौ	२. अक्रूर भोज से	गदौ	१०. गद, गद से और
अक्रूरभोजौ	५. अक्रूर भोज से	सुमित्रा	११. सुमित्र
अनुरुद्ध	६. अनिरुद्ध	सुरथौ	१२. सुरथ से
सात्यकी ।	७. सात्यकि से	समीयतुः ॥	१४. युद्ध करने लगे

श्लोकार्थ—युद्ध में क्रोध से भरकर प्रद्युम्न, साम्ब से, अक्रूर-भोज से, अनिरुद्ध सात्यकि से, सुभद्र, संग्रामजित से गद-गद से और सुमित्र, सुरथ से भयङ्कर युद्ध करने लगे ॥

सप्तदश श्लोकः

अन्ये च ये वै निशठोल्मुकादयः सहस्रजिच्छतजिद्भानुमुख्याः ।
अन्योन्यमासाद्य मदान्धकारिता जघ्नुर्मुकुन्देन विमोहिता भृशम् ॥१७॥

पदच्छेद—

अन्ये च ये वै निशठ उल्मुक आदयः सहस्रजित् शतजित् भानु मुख्याः ।
अन्योन्यम् आसाद्य मदान्धकारिता जघ्नुः मुकुन्देन विमोहिताः भृशम् ॥

शब्दार्थ—

अन्ये च	१. इसके अतिरिक्त	अन्योन्यम्	८. एक दूसरे से
ये वै	२. जो	आसाद्य	९. मिलकर
निशठ	३. निशठ	मदान्धकारिता	१२. मदिरा के नशे से अन्धे
उल्मुक	४. उल्मुक	जघ्नुः	१०. लड़ने लगे
आदयः	७. आदि यादव थे वे भी	मुकुन्देन	१३. श्रीकृष्ण की
सहस्रजित शतजित्	५. सहस्रजित शतजित्	विमोहिताः	१४. माया से मोहित हो रहे थे
भानु मुख्याः ।	६. भानु	भृशम् ॥	११. अत्यधिक

श्लोकार्थ—इसके अतिरिक्त जो निशठ, उल्मुक, सहस्रजित, शतजित भानु आदि यादव थे, वे भी एक दूसरे से मिलकर लड़ने लगे । अत्यधिक मदिरा के नशे से अन्धे श्रीकृष्ण की माया से मोहित हो रहे थे ॥

अष्टदशः श्लोकः

दाशार्हवृष्ण्यन्धकभोजसात्वता मध्वर्बुदा माथुरशूरसेनाः ।
विसर्जनाः कुकुराः कुन्तयश्च मिथस्ततस्तेऽथ विसृज्य सौहृदम् ॥१८॥

पदच्छेद—

दाशार्ह वृष्णि अन्धक भोज सात्वताः मधु अर्बुदा माथुर शूरसेनाः ।
विसर्जनाः कुकुराः कुन्तयः च मिथः ततः ते अथ विसृज्य सौहृदम् ॥

शब्दार्थ—

दाशार्ह	१. दाशार्ह	विसर्जनाः	७. विसर्जन
वृष्णि अन्धक	२. वृष्णि अन्धक	कुकुराः	८. कुकुर
भोज सात्वताः	३. भोज-सात्वत	कुन्तयः च	९. और कुन्ति आदि वंशों के लोग
मधु अर्बुद ।	४. मधु-अर्बुद	मिथः ततः ते अथ	१२. आपस में मार-काट करने लगे
माथुर	५. माथुर	विसृज्य	११. भुलाकर
शूरसेनाः ।	६. शूरसेन	सौहृदम् ॥	१०. सौहार्द और प्रेम को

श्लोकार्थ—दाशार्ह, वृष्णि, अन्धक, भोज, सात्वत, मधु, अबुर्द, माथुर, शूरसेन, विसर्जन, कुकुर, और कुन्ति आदि वंशों के लोग सोहार्द और प्रेम को भुलाकर आपस में मार-काट करने लगे ।

एकोनविंशः श्लोकः

पुत्रा अयुध्यन् पितृभिर्भ्रातृभिश्च स्वस्त्रीयदौहित्रपितृव्यमातुलैः ।
मित्राणि मित्रैः सुहृदः सुहृद्भिर्ज्ञातींस्त्वहन्ज्ञातय एव मूढाः ॥१९॥

पदच्छेद—

पुत्रा अयुध्यन् पितृभिर्भ्रातृभिश्च स्वस्त्रीय दौहित्र पितृव्य मातुलैः ।
मित्राणि मित्रैः सुहृदः सुहृद्भिः ज्ञातीन् तु अहन् ज्ञातय एव मूढाः ॥

शब्दार्थ—

पुत्रा	३.	पुत्र	मित्राणि	१०.	मित्र
अयुध्यन्	२.	युद्ध करते हुये	मित्रैः	११.	मित्र का
पितृभिः	४.	पिता का	सुहृदः	१२.	सहृद
भ्रातृभिः च	५.	भाई-भाई का	सुहृद्भिः	१३	सुहृद का और
स्वस्त्रीय	८.	नाती	ज्ञातीन्	१४.	सम्बन्धि
दौहित्र	६.	भान्जा	तु अहन्	१६.	करने लगे
पितृव्य	९.	नाना का और	ज्ञातयः एव	१५.	सम्बन्धियों की
मातुलैः ।	७.	मामा का	मूढाः ॥	१.	मूढ़तावश

श्लोकार्थ—मूढतावश युद्ध करते हुये पुत्र पिता का, भाई-भाई का भान्जा-मामा का-नाती-नाना का और मित्र-मित्र का, सुहृद्-सुहृद् का और सम्बन्धि-सम्बन्धियों की हत्या करने लगे ॥

विंशः श्लोकः

शरेषु क्षीयमाणेषु भज्यमानेषु धन्वसु ।
शस्त्रेषु क्षीयमाणेषु मुष्टिभिर्जहुरेरकाः ॥२०॥

पदच्छेद—

शरेषु क्षीयमाणेषु भज्यमानेषु धन्वसु ।
शस्त्रेषु क्षीयमाणेषु मुष्टिभिः जहुः एरकाः ॥

शब्दार्थ—

शरेषु	१.	वाणों के	शस्त्रेषु	५.	शस्त्रास्त्रों के
क्षीयमाणेषु	२.	समाप्त हो जाने पर	क्षीयमाणेषु	६.	नष्ट-भ्रष्ट हो जाने पर
भज्यमानेषु	४.	टूट जाने पर और	मुष्टिभिः	७.	उन्होंने हाथों से
धन्वसु ।	३.	धनुष के	जहुः	९.	उखाड़नी शुरू कर दी
			एरकाः ॥	८.	एरका नाम की घास

श्लोकार्थ—वाणों के समाप्त हो जाने पर धनुष के टूट जाने पर और शस्त्रास्त्रों के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने पर उन्होंने हाथों से एरका नाम की घास उखाड़नी शुरू कर दी ॥

एकविंश श्लोकः

ता वज्रकल्पा ह्यभवन् परिघा मुष्टिना भृताः ।
जघ्नुर्द्विषस्तैः कृष्णेन वार्यमाणास्तु तं च ते ॥२१॥

पदच्छेद—

ताः वज्रकल्पाः हि अभवन् परिघा मुष्टिना भृताः ।
जघ्नुः द्विषः तैः कृष्णेन वार्यमाणास्तु तम् च ते ॥

शब्दार्थ—

ताः	१. उनके	जघ्नुः	१२. प्रहार करने लगे
वज्रकल्पाः	४. वज्र के समान कठोर	द्विषः तैः	९. रोष में भर कर
हि अभवन्	६. परिणत हो गयी	कृष्णेन	७. श्रीकृष्ण के द्वारा
परिघा	५. मुद्गरों के रूप में	वार्यमाणास्तु	८. रोके जाने पर भी
मुष्टिना	२. हाथों में	तम्	११. विपक्षियों पर
भृताः ।	३. आते ही वह घास	च तेः ॥	१०. वे अपने

श्लोकार्थ—उनके हाथों में आते ही वह घास वज्र के समान मुदगरों के रूप में परिणत हो गयी। श्रीकृष्ण के द्वारा रोके जाने पर भी रोष में भरकर वे अपने विपक्षियों पर प्रहार करने लगे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

प्रत्यनीकं मन्यमाना बलभद्रं च मोहिताः ।
हन्तुं कृतधियो राजन्नापन्ना आततायिनः ॥२२॥

पदच्छेद—

प्रति अनीकम् मन्यमाना बलभद्रम् च मोहिताः ।
हन्तुम् कृतधियः राजन् आपन्ना आततायिनः ॥

शब्दार्थ—

प्रति अनीकम्	४. अपना शत्रु	हन्तुम्	९. वे उन्हें मारने के लिये
मन्यमाना	५. समझने लगे	कृतधियः	८. बुद्धि ऐसी मूढ हो रही थी कि
बलभद्रम्	३. बलराम जी को भी	राजन्	१. हे राजन् !
च	६. और	आपन्ना	१०. उनकी ओर दौड़े
मोहिताः ।	२. अज्ञानवश वे	आततायिनः ॥	७. उन आततायियों की

श्लोकार्थ—हे राजन् ! अज्ञानवश वे बलराम जी को भी अपना शत्रु समझने लगे। और उन आततायियों की बुद्धि ऐसी मूढ हो रही थी कि वे उन्हें मारने के लिये उनकी ओर दौड़ पड़े ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अथ तावपि सङ्क्रुद्धावुद्यम्य कुरुनन्दन !
एरकामुष्टिपरिघौ चरन्तौ जघ्नतुर्युधि ॥२३॥

पदच्छेद—

अथ तौ अपि सङ्क्रुद्धौ उद्यम्य कुरुनन्दन ।
एरका मुष्टि परिघौ चरन्तौ जघ्नतुः युधि ॥

शब्दार्थ—

अथ तौ	२. फिर तो श्रीकृष्ण और बलराम जी	एरका	६	एरका नामक घास
अपि	३. भी	मुष्टि	८.	कठोर
सङ्क्रुद्धौ	४. क्रोध में भर कर	परिघौ	७.	मुद्गर के समान
उद्यम्य	१०. उखाड़ कर	चरन्तौ	६.	विचरने लगे और
कुरुनन्दन ।	१. कुरुनन्दन !	जघ्नतुः	११.	उन्हें मारने लगे
		युधि ॥	५.	युद्ध भूमि में

श्लोकार्थ—कुरुनन्दन ! फिर तो श्रीकृष्ण और बलरामजी भी क्रोध में भर कर युद्ध भूमि में विचरने लगे और मुद्गर के समान कठोर एरका नामक घास उखाड़कर उन्हें मारने लगे ।

चतुर्विंशः श्लोकः

ब्रह्मशापोपसृष्टानां कृष्णमायावृतात्मनाम् ।
स्पर्धाक्रोधः क्षयं निन्ये वैणवोऽग्निर्यथा वनम् ॥२४॥

पदच्छेद—

ब्रह्म शापः उपसृष्टानाम् कृष्णमाया आवृत आत्मनाम् ।
स्पर्धा क्रोधः क्षयम् निन्ये वैणवः अग्निः यथा वनम् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्म	३. वैसे ही ब्रह्म	स्पर्धा	६.	स्पर्धा मूलक
शापः	४. शाप से	क्रोधः	१०.	क्रोध ने
उपसृष्टानाम्	५. ग्रस्त और	क्षयम्	११.	उनका ही ध्वंस
कृष्णमाया	६. श्रीकृष्ण की माया से	निन्ये	१२.	कर दिया
आवृत	७. आवृत	वैणवः अग्नि	१.	बाँसों की अग्नि
आत्मनाम् ।	८. यदुवंशियों के	यथा वनम् ॥	२.	जैसे वन को भस्म कर देती है

श्लोकार्थ—जैसे बाँसों की अग्नि वन को भस्म कर देती है वैसे ही ब्रह्म शाप से ग्रस्त और श्रीकृष्ण की माया से आवृत यदुवंशियों के स्पर्धा मूलक क्रोध ने उनका ही ध्वंस कर दिया ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

एवं नष्टेषु सर्वेषु कलेषु स्वेषु केशवः ।
अवतारितो भुवो भार इति मेनेऽवशेषितः ॥२५॥

पदच्छेद—

एवम् नष्टेषु सर्वेषु कुलेषु स्वेषु केशवः ।
अवतारितो भुवः भारः इति मेने अवशेषितः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	अवतारितः	१२. उतर गया
नष्टेषु	५. नाश हो जाने पर	भुवः	९. पृथ्वी का
सर्वेषु	३. सम्पूर्ण	भारः	११. भार भी
कुलेषु	४. कुल का	इति	७. ऐसा
स्वेषु	२. अपने	मेने	८. माना कि अब
केशवः ।	६. श्रीकृष्ण ने	अवशेषितः ॥	१०. बचा खुचा

श्लोकार्थ—इस प्रकार अपने सम्पूर्ण कुल का नाश हो जाने पर श्रीकृष्ण ने ऐसा माना कि अब पृथ्वी का बचा खुचा भार भी उतर गया है ॥

षड्विंशः श्लोकः

रामः समुद्रवेलायां योगमास्थाय पौरुषम् ।
तत्याज लोकं मानुष्यं संयोज्यात्मानमात्मनि ॥२६॥

पदच्छेद—

रामः समुद्र बेलायाम् योगम् आस्थाय पौरुषम् ।
तत्याज लोकम् मानुष्यम् संयोज्य आत्मानम् आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

रामः	१. बल राम जी ने	तत्याज	१२. छोड़ दिया
समुद्र	२. समुद्र के	लोकम्	११. शरीर
बेलायाम्	३. तट पर	मानुष्यम्	१०. मनुष्य
योगम्	५. योग मुद्रा में	संयोज्य	९. स्थिर करके
आस्थाय	६. स्थित होकर	आत्मानम्	७. आत्मा को
पौरुषम् ।	४. परम पुरुष के ध्यान रूप	आत्मनि ॥	८. आत्म स्वरूप में

श्लोकार्थ—बलराम जी ने समुद्र के तट पर परम पुरुष के ध्यानरूप योगमुद्रा में स्थित होकर आत्मा को आत्मस्वरूप में स्थिर करके मनुष्य शरीर छोड़ दिया ॥

सप्तविंशः श्लोकः

राममिर्याणमालोक्य भगवान् देवकीसुतः ।
निषसाद धरोपस्थे तूष्णीमासाद्य पिप्पलम् ॥२७॥

पदच्छेद—

रामनिर्याणम् आलोक्य भगवान् देवकी सुतः ।
निषसाद धरा उपस्थे तूष्णीम् आसाद्य पिप्पलम् ॥

शब्दार्थ—

राम	४. बड़े भाई बलराम जी को	निषसाद	१२. बैठ गये
निर्याणम्	५. परमपद में लीन होते	धरा	१०. धरती
आलोक्य	६. देखा तो	उपस्थे	११. पर ही
भगवान्	३. भगवान श्रीकृष्ण ने	तूष्णीम्	९. चुपचाप
देवकी	१. देवकी	आसाद्य	८. नीचे जाकर
सुतः ।	२. पुत्र	पिप्पलम् ॥	७. वे एक पीपल के पेड़ के

श्लोकार्थ—देवकी पुत्र भगवान् श्रीकृष्ण ने बड़े भाई बलराम जी को परम पद में लीन देखा तो, वे एक पीपल के पेड़ के नीचे जाकर धरती पर ही बैठ गये ॥

अष्टविंशः श्लोकः

बिभ्रच्चतुर्भुजं रूपं भ्राजिष्णु प्रभया स्वया ।
दिशो वितिमिराः कुर्वन् विधूम इव पावकः ॥२८॥

पदच्छेद—

बिभ्रत् चतुर्भुजम् रूपम् भ्राजिष्णु प्रभया स्वया ।
दिशः वितिमिराः कुर्वन् विधूम इव पावकः ॥

शब्दार्थ—

बिभ्रत्	६. धारण किये हुये थे	दिशः	१०. दिशाओं को
चतुर्भुजम्	४. चतुर्भुज	वितिमिराः	११. अन्धकार रहित
रूपम्	५. रूप	कुर्वन्	१२. बना रहे थे
भ्राजिष्णु	३. देदीप्यमान	विधूम	७. धूम से रहित
प्रभया	२. अङ्ग कान्ति से	इव	९. समान
स्वया ।	१. वे अपनी	पावकः ॥	८. अग्नि के

श्लोकार्थ—वे अपनी अङ्ग कान्ति से देदीप्यमान चतुर्भुज रूप धारण किये हुये थे । धूम रहित अग्नि के समान दिशाओं को अन्धकार रहित बना रहे थे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

श्रीवत्साङ्कं घनश्यामं तप्तहाटकवर्चसम् ।
कौशेयाम्बरयुग्मेन परिवीतं सुमङ्गलम् ॥२६॥

पदच्छेद—

श्रीवत्स अङ्कम् घनश्यामम् तप्त हाटक वर्चसम् ।
कौशेय अम्बर युग्मेन परिवीतम् सुमङ्गलम् ॥

शब्दार्थ—

श्रीवत्स	६.	श्रीवत्स का चिह्न था	कौशेय	७.	वे रेशमी
अङ्कम्	५.	वक्षः स्थल पर	अम्बर	८.	पीताम्बर
घनश्यामम्	१.	घनश्याम शरीर से	युग्मेन	६.	धोती और दुपट्टा
तप्त	२.	तपे हुये	परिवीतम्	१०.	धारण किये हुये थे
हाटक	३.	सोने के समान	सु	११.	बड़ा ही
वर्चसम् ।	४.	ज्योति निकल रही थी	मङ्गलम् ॥	१२.	मङ्गलमय रूप था

श्लोकार्थ—मेघ के समान घनश्याम शरीर से तपे हुये सोने के समान ज्योति निकल रही थी । वक्षः स्थल पर श्रीवत्स का चिह्न था । वे रेशमी पीताम्बर की धोती और दुपट्टा धारण किये हुये थे । बड़ा ही मङ्गलमय रूप था ॥

त्रिंशः श्लोकः

सुन्दरस्मितवक्त्राब्जं नीलकुन्तलमण्डितम् ।
पुण्डरीकाभिरामाक्षं स्फुरन्मकरकुण्डलम् ॥३०॥

पदच्छेद—

सुन्दर स्मित वक्त्र अब्जम् नीलकुन्तल मण्डितम् ।
पुण्डरीक अभिराम अक्षम् स्फुरन् मकर कुण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

सुन्दर	३.	सुन्दर	पुण्डरीक	७.	कमल के समान
स्मित	४.	मुसकान और	अभिराम	८.	सुन्दर और सुकुमार
वक्त्र	१.	मुख	अक्षम्	९.	नेत्र थे
अब्जम्	२.	कमल पर	स्फुरन्	१२.	झिलमिला रहे थे
नीलकुन्तल	५.	काला-काली अलकें	मकर	१०.	कानों में मकराकृत
मण्डितम् ।	६.	सुशोभित हो रही थीं	कुण्डलम् ॥	११.	कुण्डल

श्लोकार्थ—मुख कमल पर सुन्दर मुसकान और काली-काली अलकें सुशोभित हो रही थीं । कमल के समान सुन्दर और सुकुमार नेत्र थे । कानों में मकराकृत कुण्डल झिलमिला रहे थे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

कटिसूत्रब्रह्मसूत्रकिरीटकटकाङ्गदैः ।
हारनूपुरमुद्राभिः कौस्तुभेन विराजितम् ॥३१॥

पदच्छेद—

कटिसूत्र ब्रह्मसूत्र किरीट कटक अङ्गदैः ।
हारनूपुर मुद्राभिः कौस्तुभेन विराजितम् ॥

शब्दार्थ—

कटिसूत्र	१.	कमर में करधनी	हार	६.	वक्षः स्थल पर हार
ब्रह्मसूत्र	२.	कन्धे पर यज्ञोपवीत	नूपुर	७.	चरणों में नूपुर
किरीट	३.	माथे पर मुकुट	मुद्राभिः	८.	उँगलियों में अंगूठियाँ और
कटक	४.	कलाइयों में कङ्कन	कौस्तुभेन	९.	गले में कौस्तुभमणि
अङ्गदैः ।	५.	बाहों में बाजूबन्द	विराजितम् ॥	१०.	शोभायमान हो रही थी

श्लोकार्थ—कमर में करधनी, कन्धे पर यज्ञोपवीत, माथे पर मुकुट, कलाइयों में कङ्कन, बाहों में बाजूबन्द, वक्षः स्थल पर हार, चरणों में नूपुर, उँगलियों में अंगूठियाँ और गले में कौस्तुभमणि शोभायमान हो रही थी ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

वनमालापरीताङ्गं मूर्तिमद्भिर्निजायुधैः ।
कृत्वोरौ दक्षिणे पादमासीनं पङ्कजारुणम् ॥३२॥

पदच्छेद—

वनमाला परीताङ्गम् मूर्तिमद्भिः निज आयुधैः ।
कृत ऊरौ दक्षिणे पदम् आसीनम् पङ्कज अरुणम् ॥

शब्दार्थ—

वनमाला	२.	वनमाला लटक रही थी	कृत	११.	रखकर
परीताङ्गम्	१.	घुटनों तक	ऊरौ	८.	जांघ पर
मूर्ति	५.	मूर्ति	दक्षिणे	७.	वे दाहिनी
मद्भिः	६.	मान होकर सेवा कर रहे थे	पदम्	१०.	बाँया चरण
निज	३.	उनके अपने	आसीनम्	१२.	बैठे हुये थे
आयुधैः ।	४.	आयुध, शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म	पङ्कज अरुणम् ।	९.	लाल कमल के समान

श्लोकार्थ—घुटनों तक वनमाला लटक रही थी, उनके अपने आयुध शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म मूर्तिमान होकर सेवा कर रहे थे । वे दाहिनी जांघ पर लाल कमल के समान बाँया चरण रखकर बैठे हुये थे ॥

—०—

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

मुसलावशेषायःखण्डकृतेषुर्लुब्धको जरा ।
मृगास्याकारं तच्चरणं विव्याध मृगशङ्कया ॥३३॥

पदच्छेद—

मुसल अवशेषअयः खण्ड कृतेषुः लुब्धकः जरा ।
मृगास्य आकारम् तत् चरणम् विव्याध मृगशङ्कया ॥

शब्दार्थ—

मुसल	३. उसने मूसल के	मृगास्य	८. हरिण के मुख के
अवशेष	४. बचे हुये	आकारम्	९. आकार जैसे
अयःखण्ड	५. लोहे के टुकड़े से	तत्	१०. श्रीकृष्ण के
कृतेषुः	६. बाण की नोक बना ली थी	चरणम्	११. चरण को
लुब्धकः	२. एक बहेलिया था	विव्याध	१२. बींध दिया
जरा ।	१. जरानाम का	मृगशङ्कया ॥	७. हरिण समझकर

श्लोकार्थ—जरानाम का एक बहेलिया था, उसने मूसल के बचे हुये लोहे के टुकड़े से बाण की नोक बना ली थी। फिर हरिण समझ कर हरिण के मुख के आकार जैसे श्रीकृष्ण के चरण को बींध दिया ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

चतुर्भुजं तं पुरुषं दृष्ट्वा स कृतकिल्बिषः ।
भीतः पपात शिरसा पादयोरसुरद्विषः ॥३४॥

पदच्छेद—

चतुर्भुजम् तम् पुरुषम् दृष्ट्वा सः कृत किल्बिषः ।
भीतः पपात शिरसा पादयोः असुर द्विषः ॥

शब्दार्थ—

चतुर्भुजम्	१. पास जाकर चतुर्भुज	भीतः	७. भयभीत होकर
तम्	२. रूपधारी उन	पपात	१२. (धरती पर) गिर पड़ा ।
पुरुषम्	३. परम पुरुष को	शिरसा	११. सिर रखकर
दृष्ट्वा सः	४. देखा तो उसने सोचा	पादयोः	१०. चरणों पर
कृत	६. हो गया ।	असुर	८. वह दैत्य
किल्बिषः ।	५. कि यह तो बड़ा पाप	द्विषः ॥	९. दलन श्रीकृष्ण के

श्लोकार्थ—पास जाकर चतुर्भुज रूपधारी उन परम पुरुष को देखा तो उसने सोचा कि बड़ा पाप हो गया । वह दैत्य दलन श्रीकृष्ण के चरणों पर सिर रखकर धरती पर गिर पड़ा ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

अज्ञानता कृतमिदं पापेन मधुसूदन ।
क्षन्तुमर्हसि पापस्य उत्तमश्लोक मेऽनघ ॥३५॥

पदच्छेद—

अजानता कृतम् इदम् पापेन मधुसूदन ।
क्षन्तुम् अर्हसि पापस्य उत्तम श्लोक मे अनघ ॥

शब्दार्थ—

अजानता	३.	अनजान में	क्षन्तुम्	६.	क्षमा
कृतम्	५.	किया है	अर्हसि	१०.	कीजिये
इदम्	४.	यह अपराध	पापस्य	८.	अपराध को
पापेन	२.	मुझ पापी ने	उत्तम श्लोक	६	हे परम यशस्वी !
मधुसूदन ।	१.	हे मधुसूदन	मे अनघ ॥	७.	निष्पाप प्रभो ! आप मेरे

श्लोकार्थ—हे मधुसूदन ! मुझ पापी ने अनजान में यह अपराध किया है। हे परमयशस्वी। निष्पाप प्रभो ! आप मेरे अपराध को क्षमा कीजिये ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

यस्यानुस्मरणं नृणामज्ञानध्वान्तनाशनम् ।
वदन्ति तस्य ते विष्णो मयाऽसाधु कृतं प्रभो ॥३६॥

पदच्छेद—

यस्य अनुस्मरणम् नृणाम् अज्ञान ध्वान्त नाशनम् ।
वदन्ति तस्य ते विष्णो मया असाधु कृतम् प्रभो ॥

शब्दार्थ—

यस्य	३.	आपके	वदन्ति	२.	साधुजन कहते हैं कि जिन
अनुस्मरण	४.	स्मरण मात्र से	तस्य	६.	उन
नृणाम्	५.	मनुष्यों का	ते विष्णो	१०.	आपका
अज्ञान	६.	अज्ञान रूपी	मया असाधु	११.	मैंने अनिष्ट
ध्वान्त	७.	अन्धकार	कृतम्	१२.	कर दिया
नाशनम् ।	८.	नष्ट हो जाता है	प्रभो ॥	१.	हे प्रभो !

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! साधुजन कहते हैं कि जिन आपके स्मरण मात्र से मनुष्यों का अज्ञानरूपी अन्धकार नष्ट हो जाता है। उन आपका मैंने अनिष्ट कर दिया ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

तन्माऽऽशु जहि वैकुण्ठ पाप्मानं मृगलुब्धकम् ।
यथा पुनरहं त्वेवं न कुर्यां सदतिक्रमम् ॥३७॥

पदच्छेद— तत् मा आशु जहि वैकुण्ठ पाप्मानम् मृग लुब्धकम् ।
यथा पुनः अहम् तु एवम् न कुर्याम् सत् अतिक्रमम् ॥

शब्दार्थ—

तत् मा	५.	इसलिये मुझे	यथा	८.	जिससे
आशु	६.	आप तत्काल	पुनः	१०.	फिर कभी
जहि	७.	मार डालिये	अहम्	९.	मैं
वैकुण्ठ	१.	हे वैकुण्ठनाथ !	तु एवम्	११.	इस प्रकार
पाप्मानम्	४.	महापापी हूँ	न कुर्याम्	१४.	न कर सकूँ
मृग	२.	मैं हरिणों को	सत्	१२.	महापुरुषों का
लुब्धकम् ।	३.	मारने वाला	अतिक्रमम् ॥	१३.	अपराध

श्लोकार्थ—हे वैकुण्ठनाथ ! हरिणों को मारने वाला महापापी हूँ । इसलिये मुझे आपतत्काल मार डालिये । जिससे मैं फिर कभी इस प्रकार महापुरुषों का अपराध न कर सकूँ ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

यस्यात्मयोगरचितं न विदुर्विरिञ्चो रुद्रादयोऽस्य तनयाः पतयो गिरां ये ।
त्वन्मायया पिहितदृष्टय एतदञ्जः किं तस्य ते वयमसद्गतयो गृणीमः ३८

पदच्छेद—

यस्य आत्मयोग रचितम् न विदुः विरिञ्चः रुद्र आदयः अस्य तनयाः पतयः गिराम् ये ।
तत् माययापिहित दृष्टय एतद् अञ्जः किम् तस्य ते वयम् असद् गतयः गृणीमः ॥

शब्दार्थ—

यस्य	५. आपकी	त्वत् मायया	९. क्योंकि आपकी माया से
आत्मयोग	६. योगमाया का	पिहितदृष्टयः	१०. उनकी दृष्टि आवृत है
रचितम्	७. विलास	एतद् अञ्जः	११. ऐसी अवस्था में साधारणतया
न विदुः	८. नहीं समझ पाते	किम् तस्य	१५. उसके विषय में क्या
विरिञ्चः	२. ब्रह्मा जी और	ते वयम्	१२. हमारे जैसे
रुद्र आदयः	४. रुद्र आदि भी	असद्	१३. पाप
अस्यतनयाः	३. उनके पुत्र	गतयः	१४. योनि लोग
पतयः गिराम् ये ।	१. सम्पूर्ण विद्याओं के पारदर्शी	गृणीमः ॥	१६. कह सकते हैं

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण विद्याओं के पारदर्शी ब्रह्मा जी और उनके पुत्र रुद्र आदि भी आपकी योगमाया का विलास नहीं समझ पाते, क्योंकि आपकी माया से उनकी दृष्टि आवृत है । ऐसी अवस्था में साधारणतया हमारे जैसे पाप योनि लोग उसके विषय मे क्या कह सकते हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच— मा भैर्जरे त्वमुत्तिष्ठ काम एष कृतो हि मे ।
याहि त्वं मदनुज्ञातः स्वर्गं सुकृतिनां पदम् ॥३९॥

पदच्छेद—

मा भैः जरे त्वम् उत्तिष्ठ काम एषः कृतः हि मे ।
याहि त्वम् मत् अनुज्ञातः स्वर्गम् सुकृतिनाम् पदम् ॥

शब्दार्थ—

मा भैः	२. तू डर मत	याहि त्वम्	१२. तुम जाओ
जरे	१. हे जरे !	मत्	७. मेरी
त्वम् उत्तिष्ठ	३. तू उठ	अनुज्ञातः	८. आज्ञा से
काम एषः	४. यह काम तो	स्वर्गम्	११. स्वर्ग में
कृतः हि	६. मन का किया है	सुकृतिनाम्	९. पुण्यवानों को
मे ।	५. तूने मेरे	पदम् ॥	१०. प्राप्त होने वाले

श्लोकार्थ—हे जरे ! तू डर मत, तू उठ, यह काम तो तूने मेरे मन का किया है। मेरी आज्ञा से पुण्यवानों को प्राप्त होने वाले स्वर्ग में तुम जाओ ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

इत्यादिष्टो भगवता कृष्णेनेच्छाशरीरिणा ।
त्रिः परिक्रम्य तं नत्वा विमानेन दिवं ययौ ॥४०॥

पदच्छेद—

इति आदिष्टः भगवता कृष्णेन इच्छा शरीरिणा ।
त्रिः परिक्रम्य तम् नत्वा विमानेन दिवम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

इति	५. इस प्रकार	त्रिः	७. उनकी तीनवार
आदिष्टः	६. आज्ञा पाकर उसने	परिक्रम्य	८. परिक्रमा की ओर
भगवता	३. भगवान्	तम्	९. उन्हें
कृष्णेन	४. श्रीकृष्ण के द्वारा	नत्वा	१०. प्रणाम करके
इच्छा	१. स्वेच्छा से	विमानेन	११. विमान पर बैठकर
शरीरिणा ।	२. शरीर धारण करने वाले	दिवम् ययौ ॥	१२. स्वर्ग को चला गया

श्लोकार्थ—स्वेच्छा से शरीर धारण करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा इस प्रकार आज्ञा पाकर उसने उनकी तीन बार परिक्रमा की और उन्हें प्रणाम करके विमान पर बैठकर स्वर्ग को चला गया ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

दारुकः कृष्णपदवीमन्विच्छन्नधिगम्य ताम् ।
वायुं तुलसिकामोदमाघ्रायाभिमुखं ययौ ॥४१॥

पदच्छेद—

दारुकः कृष्ण पदवीम् अन्विच्छन् अधिगम्य ताम् ।
वायुम् तुलसिका मोदम् आघ्राय अभिमुखम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

दारुकः	१. सारथी दारुक	वायुम्	७. वायु को
कृष्ण	२. श्रीकृष्ण के	तुलसिका	५. तुलसी की
पदवीम्	३. स्थान का	मोदम्	६. गन्ध से युक्त
अन्विच्छन्	४. पता लगाते हुये	आघ्राय	८. सूँघता हुआ
अधिगम्य	१०. अनुमान लगा कर	अभिमुखम्	११. सामने की ओर
ताम् ।	९. उनके होने का	ययौ ॥	१२. गया

श्लोकार्थ—सारथी दारुक श्रीकृष्ण के स्थान का पता लगाते हुये तुलसी की गन्ध से युक्त वायु को सूँघता हुआ उनके होने का अनुमान लगाकर सामने की ओर गया ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तं तत्र तिग्मद्युभिरायुधैर्वृतं ह्यश्वत्थमूले कृतकेतनं पतिम् ।
स्नेहप्लुतात्मा निपपात पादयो रथादवप्लुत्य सबाष्पलोचनः ॥४२॥

पदच्छेद—

तम् तत्र तिग्मद्युभिः आयुधैः वृतम् हि अश्वत्थमूले कृतकेतनम् पतिम् ।
स्नेहप्लुतआत्मा निपपात पादयोः रथात् अवप्लुत्य सबाष्पलोचनः ॥

शब्दार्थ—

तम् तत्र	४. वहाँ वे	स्नेहप्लुत	९. प्रेम की बाढ़ आ गयी
तिग्मद्युभिः	५. असह्य तेज वाले	आत्मा	८. उन्हें देखकर उसके हृदय में
आयुधैः	६. आयुधों से	निपपात	१४. गिर पड़ा
वृतम् हि	७. युक्त थे	पादयोः	१३. उनके चरणों पर
अश्वत्थमूले	२. पीपल के नीचे	रथात्	१०. और वह रथ से
कृतकेतनम्	३. आसन लगाये देखा	अवप्लुत्य	११. कूद कर
पतिम् ।	१. दारुक ने श्रीकृष्ण को	सबाष्पलोचनः ॥	१२. अश्रुपूरित नेत्रों से

श्लोकार्थ—दारुक ने श्रीकृष्ण को पीपल के नीचे आसन लगाये देखा । वहाँ वे असह्य तेज वाले आयुधों से युक्त थे । उन्हें देखकर उसके हृदय में प्रेम की बाढ़ आ गयी । और वह रथ से कूद कर अश्रुपूरित नेत्रों से उनके चरणों पर गिर पड़ा ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

अपश्यतस्त्वच्चरणाम्बुजं प्रभो दृष्टिः प्रणष्टा तमसि प्रविष्टा ।
दिशो न जाने न लभे च शान्तिं यथा निशायामुडुपे प्रणष्टे ॥४३॥

पदच्छेद— अपश्यतः त्वत् चरणाम्बुजम् प्रभो दृष्टिः प्रणष्टा तमसि प्रविष्टा ।
दिशो न जाने न लभे च शान्तिम् यथा निशायाम् उडुपे प्रणष्टे ॥

शब्दार्थ—

अपश्यतः	८.	दर्शन न पाकर (मेरी हो गयी है	दिशो न जाने	१२.	न मुझे दिशाओं का ज्ञान है
त्वत्	६.	आपके	न लभे	१४.	प्राप्त हो रही है
चरणाम्बुजम्	७.	चरण कमलों का	च शान्तिम्	१३.	और न शान्ति ही
प्रभो	१.	हे प्रभो !	यथा	५.	जैसी दशा हो जाती है वैसे ही.
दृष्टिः	९.	मेरी दृष्टि	निशायाम्	२.	रात्रि के समय
प्रणष्टा	१०.	नष्ट हो गयी है और	उडुपे	३.	चन्द्रमा के
तमसि प्रविष्टा ।	११.	अन्धकार सा छा गया है	प्रणष्टे ॥	४.	अस्त हो जाने पर

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! रात्रि के समय चन्द्रमा के अस्त हो जाने पर जैसी दशा हो जाती है वैसे ही आप के चरण कमलों का दर्शन न पाकर मेरी हो गयी है । मेरी दृष्टि नष्ट हो गयी है । और अन्धकार सा छा गया है । न मुझे दिशाओं का ज्ञान है और न शान्ति ही प्राप्त हो रही है ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

इति ब्रुवति सूते वै रथो गरुडलाञ्छनः ।
खमुत्पपात राजेन्द्र साश्वध्वज उदीक्षतः ॥४४॥

पदच्छेद— इति ब्रुवति सूते वै रथः गरुडलाञ्छनः ।
खम् उत्पपात राजेन्द्र साश्वध्वज उदीक्षतः ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	खम्	९.	आकाश में
ब्रुवति	४.	कह ही रहा था कि	उत्पपात	१०.	उड़ गया
सूते वै	२.	दारुक अभी	राजेन्द्र	१.	हे परीक्षित !
रथः	६.	रथ	साश्वध्वज	७.	पताका और घोड़ों के साथ
गरुडलाञ्छनः ।	५.	भगवान् का गरुड़ चिह्नित	उदीक्षतः ॥	८.	देखते-देखते

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! दारुक अभी इस प्रकार कह ही रहा था कि भगवान् का गरुड़ चिह्नित रथ पताका और घोड़ों के सहित देखते-देखते आकाश में उड़ गया ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

तमन्वगच्छन् दिव्यानि विष्णुप्रहरणानि च ।
तेनातिविस्मितात्मानं सूतमाह जनार्दनः ॥४४॥

पदच्छेद—

तम् अन्वगच्छन् दिव्यानि विष्णु प्रहरणानि च ।
तेन अति विस्मित आत्मानम् सूतम् आह जनार्दनः ॥

शब्दार्थ—

तम्	५.	उसके	तेन	७.	उससे
अन्वगच्छन्	६.	पीछे-पीछे चले गये	अतिविस्मित	१०.	आश्चर्य की सीमा न रही ।
दिव्यानि	३.	दिव्य	आत्मानम्	९.	मन में
विष्णु	२.	भगवान् के	सूतम्	७.	दारुक के
प्रहरणानि	४.	आयुध भी	आह	१२.	उससे कहा
च ।	१.	और	जनार्दनः ॥	११.	भगवान् ने

श्लोकार्थ और भगवान् के दिव्य आयुध भी उसके पीछे-पीछे चले गये । उससे दारुक के मन में आश्चर्य की सीमा न रही । भगवान् ने उससे कहा ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

गच्छ द्वारवतीं सूत ज्ञातीनां निधनं मिथः ।
सङ्कर्षणस्य निर्याणं बन्धुभ्यो ब्रूहि मद्दशाम् ॥४६॥

पदच्छेद—

गच्छ द्वारवतीम् सूत ज्ञातीनाम् निधनम् मिथः ।
सङ्कर्षणस्य निर्याणम् बन्धुभ्यः ब्रूहि मत् दशाम् ॥

शब्दार्थ—

गच्छ	३.	चले जाओ	संङ्कर्षणस्य	७.	बलराम जी की
द्वारवतीम्	२	द्वारका	निर्याणम्	८.	परम गति और
सूत	१.	दारुक अब तुम	बन्धुभ्यः	११.	बन्धु-बान्धवों से
ज्ञातीनाम्	४.	वहाँ यदुवंशियों के	ब्रूहि	१२.	कहो
निधनम्	६.	संहार	मत्	९.	मेरे
मिथः ।	५.	पारस्परिक	दशाम् ॥	१०.	स्वधाम गमन की बात

श्लोकार्थ—दारुक ! अब तुम द्वारका चले जाओ वहाँ यदुवंशियों के पारस्परिक संहार बलराम जी की परम गति और मेरे स्वधाम गमन की बातबान्धवों से कहो ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

द्वारकायां च न स्थेयं भवद्भिश्च स्वबन्धुभिः ।
मया त्यक्तां यदुपुरीं समुद्रः प्लावयिष्यति ॥४७॥

पदच्छेद—

द्वारकायाम् च न स्थेयम् भवद्भिः च स्वबन्धुभिः ।
मया त्यक्ताम् यदुपुरीम् समुद्रः प्लावयिष्यति ॥

शब्दार्थ—

द्वारकायाम्	४. द्वारका में	मया	७.	मेरे द्वारा
च न	५. नहीं	त्यक्ताम्	८.	त्याग देने पर
स्थेयम्	६. रहना चाहिये	यदुपुरीम्	६.	द्वारका को
भवद्भिः	२. उनसे कहना कि तुम्हें अब	समुद्रः	१०.	समुद्र
च	१. और	प्लावयिष्यामि ॥	११.	डुबो देगा
स्व-बन्धुभिः ।	३. अपने परिवार वालों के साथ			

श्लोकार्थ—और उनसे कहना कि तुम्हें अब अपने परिवार वालों के साथ द्वारका में नहीं रहना चाहिये । मेरे द्वारा द्वारका को त्याग देने पर समुद्र डुबो देगा ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

स्वं स्वं परिग्रहं सर्वे आदाय पितरौ च नः ।
अर्जुनेनाविताः सर्वे इन्द्रप्रस्थं गमिष्यथ ॥४८॥

पदच्छेद—

स्वम् स्वम् परिग्रहम् सर्वे आदाय पितरौ च नः ।
अर्जुनेन आविताः सर्वे इन्द्र प्रस्थम् गमिष्यथ ॥

शब्दार्थ—

स्वम्-स्वम्	२. अपनी-अपनी	अर्जुनेन	७.	अर्जुन के
परिग्रहम्	३. धन-सम्पत्ति कुटुम्ब	आविताः	८.	संरक्षण में
सर्वे	१. सब लोग	सर्वे	६.	सभी
आदाय	६. लेकर	इन्द्र प्रस्थम्	१०.	इन्द्र प्रस्थ
पितरौ	५. माता-पिता को	गमिष्यथ	११.	चले जांय
च नः ।	४. और मेरे			

श्लोकार्थ—सब लोग अपनी-अपनी धन सम्पत्ति कुटुम्ब और मेरे माता-पिता को लेकर अर्जुन के संरक्षण में सभी इन्द्र प्रस्थ चले जांय ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

त्वं तु मद्धर्ममास्थाय ज्ञाननिष्ठ उपेक्षकः।
मन्मायारचनामेतां विज्ञायोपशमं व्रज ॥४९॥

पदच्छेद—

त्वम् तुमत् धर्मम् आस्थाय ज्ञाननिष्ठ उपेक्षकः।
मत् माया रचनाम् एताम् विज्ञाय उपशमम् व्रजः॥

शब्दार्थ—

त्वम् तु	१.	दारुक! तुम	मत् माया	८.	मेरीमाया की
मत्	२.	मेरे	रचनाम्	९.	रचना
धर्मम्	३.	भागवत धर्म का	एताम्	७.	इस दृश्य को
आस्थाय	४.	आश्रय लेकर और	विज्ञाय	१०.	समझकर
ज्ञाननिष्ठ	५.	ज्ञाननिष्ठ होकर	उपशमम्	११.	शान्त
उपेक्षकः	६.	सब की उपेक्षा कर दो	व्रजः॥	१२.	हो जाओ

श्लोकार्थ—दारुक! तुम मेरे भागवत धर्म का आश्रय लेकर और ज्ञाननिष्ठ होकर सब की उपेक्षा कर दो, इस दृश्य को मेरी माया की रचना समझकर शान्त हो जाओ॥

पञ्चाशः श्लोकः

इत्युक्तस्तं परिक्रम्य नमस्कृत्य पुनः पुनः।
तत्पादौ शीर्ष्ण्युपाधाय दुर्मनाः प्रययौ पुरीम् ॥५०॥

पदच्छेद—

इति उक्तः तम् परिक्रम्य नमस्कृत्य पुनः पुनः।
तत् पादौ शीर्ष्णि उपाधाय दुर्मनाः प्रययौ पुरीम्॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	तत् पादौ	५.	उनके चरण कमल
उक्तः	२.	आदेश पाकर दारुक ने	शीर्ष्णि	६.	अपने सिर पर
तम्	३.	उनकी	उपाधाय	७.	रख कर
परिक्रम्य	४.	परिक्रमा की और	दुर्मनाः	१०.	उदास मन से
नमस्कृत्य	९.	प्रणाम किया तथा	प्रययौ	१२.	चल पड़ा
पुनः-पुनः।	८.	बार-बार	पुरीम्॥	११.	द्वारका के लिये

श्लोकार्थ—इस प्रकार आदेश पाकर दारुक ने उनकी परिक्रमा की, और उनके चरण कमल अपने सिर पर रखकर बार-बार प्रणाम किया। तथा उदास मन से द्वारका के लिये चल पड़ा॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायाम
एकादश स्कन्धे त्रिंशः अध्यायः ॥३०॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

एकादशः स्कन्धः

एकत्रिंशोऽध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अथ तत्रागमद् ब्रह्मा भवान्या च समं भवः ।
महेन्द्र प्रमुखा देवा मुनयः सप्रजेश्वराः ॥१॥

पदच्छेद—

अथ तत्र अगमद ब्रह्मा भवान्या च समम् भवः ।
महेन्द्र प्रमुखाः देवाः मुनयः स प्रजेश्वराः ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	दारुक के जाने पर	महेन्द्र	६.	इन्द्रादि
तत्रआगमद्	१२.	वहाँ पर आये	प्रमुखाः	७.	मुख्य
ब्रह्मा	२.	ब्रह्मा जी	देवाः	८.	देवता
भवान्या	३.	पार्वती जी	मुनयः	९.	बड़े-बड़े ऋषि मुनियों के
च समम्	४.	के साथ	स	१०.	साथ
भवः ।	५.	शङ्कर जी	प्रजेश्वराः ॥	११.	मरीचि आदि प्रजापति

श्लोकार्थ—दारुक के चले जाने पर ब्रह्माजी और पार्वती के साथ शङ्कर जी, इन्द्रादि मुख्य देवता बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों के साथ मरीचि आदि वहाँ पर आये ॥

द्वितीयः श्लोकः

पितरः सिद्धगन्धर्वा विद्याधरमहोरगाः ।
चारणा यक्षरक्षांसि किन्नराप्सरसो द्विजाः ॥२॥

पदच्छेद—

पितर सिद्ध गन्धर्वा विद्याधर महाउरगाः ।
चारणाः यक्ष रक्षांसि किन्नर अप्सरसः द्विजाः ॥

शब्दार्थ—

पितर	१.	पितर	चारणाः	७.	चारण
सिद्ध	२.	सिद्ध	यक्ष	८.	यक्ष
गन्धर्वा	३.	गन्धर्व	रक्षांसि	९.	राक्षस
विद्याधर	४.	विद्याधर	किन्नर	१०.	किन्नर
महा	५.	महा	अप्सरसः	११.	अप्सरायें तथा
उरगाः।	६.	उरगाः	द्विजाः ॥	१२.	गरुडलोक के पक्षी तथा ब्राह्मण वहाँ आये

श्लोकार्थ – पितर, सिद्ध, गन्धर्व, विद्याधर, महा उरग, चारण, यक्ष, राक्षस, किन्नर, अप्सरायें तथा गरुडलोक के पक्षी और ब्राह्मण वहाँ पर आये ॥

तृतीयः श्लोकः

द्रष्टुकामा भगवतो निर्याणं परमोत्सुकाः ।
गायन्तश्च गृणन्तश्च शौरेः कर्माणि जन्म च ॥३॥

पदच्छेद—

द्रष्टु कामाः भगवतः निर्याणम् परम उत्सुकाः ।
गायन्तः च गृणन्तः च शौरेः कर्माणि जन्म च ॥

शब्दार्थ—

द्रष्टु कामाः	४.	देखने की इच्छा से	गायन्तः च	६.	गान और
भगवतः	१.	श्रीकृष्ण के	गृणन्तः च	१०.	वर्णन कर रहे थे ।
निर्याणम्	३.	प्रस्थान को	शौरेः	६.	वे सभी श्रीकृष्ण के
परम	२.	परम धाम	कर्माणि	८.	लीलाओं का
उत्सुकाः ।	५.	बड़ी उत्सुकतावश आये	जन्म च ॥	७.	जन्म और

श्लोकार्थ—श्रीकृष्ण के परमधाम प्रस्थान को देखने की इच्छा से बड़ी उत्सुकता वश आये । वे सभी श्रीकृष्ण के जन्म और लीलाओं का गान और वर्णन कर रहे थे ॥

चतुर्थः श्लोकः

ववृषुः पुष्पवर्षाणि विमानावलिभिर्नभः ।
कुर्वन्तः सङ्कुलं राजन् भक्त्या परमया युताः ॥४॥

पदच्छेद—

ववृषुः पुष्प वर्षाणि विमाना अवलिभिः नभः ।
कुर्वन्तः सङ्कुलम् राजन् भक्त्या परमया युताः ॥

शब्दार्थ—

ववृषुः	१२.	कर रहे थे	कुर्वन्तः	५.	रहा था
पुष्प	१०.	पुष्पों की	सङ्कुलम्	४.	भर सा
वर्षाणि	११.	वर्षा	राजन्	६.	हे राजन् !
विमान	१.	उनके विमानों की	भक्त्या	८.	भक्ति से
अवलिभिः	२.	पक्तियों से	परमया	७.	वे बड़ी
नभः ।	३.	सारा आकाश	युताः	६.	युक्त होकर

श्लोकार्थ—उनके विमानों की पक्तियों से सारा आकाश भर सा रहा था । हे राजन्! वे बड़ी शक्ति से युक्त होकर पुष्पों की वर्षा कर रहे थे ॥

पञ्चमः श्लोकः

भगवान् पितामहं वीक्ष्य विभूतीरात्मनो विभुः ।
संयोज्यात्मनि चात्मानं पद्मनेत्रे न्यमीलयत् ॥५॥

पदच्छेद—

भगवान् पितामहम् वीक्ष्य विभूतीः आत्मनः विभुः ।
संयोज्य आत्मनि च आत्मानम् पद्मनेत्रे न्यमीलयत् ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	२.	भगवान् श्रीकृष्ण ने	संयोज्य	९.	स्थित किया और
पितामहम्	३.	ब्रह्मा जी और	आत्मनि	८.	स्वरूप में
वीक्ष्य	६.	देखकर	च आत्मानम्	७.	अपने आत्मा को
विभूतीः	५.	विभूति स्वरूप देवों को	पद्म	१०.	कमल के समान
आत्मनः	४.	अपने	नेत्रे	११.	नेत्रों को
विभुः	१.	सर्व व्यापक	न्यमीलयत् ॥	१२.	बन्दकर लिया

श्लोकार्थ—सर्वव्यापक भगवान् श्रीकृष्ण ने ब्रह्माजी और अपने विभूति स्वरूप देवों को देखकर अपने आत्मा को स्वरूप में स्थित किया और कमल के समान नेत्रों को बन्द कर लिया ॥

षष्ठः श्लोकः

लोकाभिरामां स्वतनुं धारणाध्यानमङ्गलम् ।
योगधारणयाऽऽग्नेय्यादग्ध्वा धामाविशत् स्वकम् ॥६॥

पदच्छेद—

लोकाभिरामाम् स्वतनुम् धारणा ध्यान मङ्गलम् ।
योगधारणया आग्नेय्या अदग्ध्वाधाम आविशत् स्वकम् ॥

शब्दार्थ—

लोकाभिरामाम्	२.	लोकों के लिये परमरमणीय	योगधारणया	७.	योगधारणा के द्वारा
स्व तनुम्	१.	भगवान् का श्रीविग्रह	आग्नेय्या	६.	उसे अग्नि देवता सम्बन्धित
धारणा	४.	धारणा का	अदग्ध्वा	८.	बिना जलाये ही
ध्यान	३.	ध्यान एवं	धामआविशत	१०.	धाम को चले गये
मङ्गलम्	५.	मङ्गलमय आधार है	स्वकम् ॥	९.	वे अपने

श्लोकार्थ—भगवान् का श्रीविग्रह लोकों के लिये परम रमणीय ध्यान एवं धारणा का मङ्गलमय आधार है । उसे अग्नि देवता सम्बन्धित योग धारणा के द्वारा विना जलाये ही वे अपने धाम को चले गये ॥

सप्तमः श्लोकः

दिवि दुन्दुभयो नेदुः पेतुः सुमनसश्च खात् ।
सत्यं धर्मो धृतिर्भूमेः कीर्तिः श्रीश्चानु तं ययुः ॥७॥

पदच्छेद—

दिवि दुन्दुभयः नेदुः पेतुः सुमनसः च खात् ।
सत्यम् धर्मः धृतिः भूमेः कीर्तिः श्रीः च अनुतम् ययुः ॥

शब्दार्थ—

दिवि	१.	(उस समय) स्वर्ग में	सत्यम्	७.	सत्य
दुन्दुभयः	२.	नगारे	धर्मः	८.	धर्म
नेदुः	३.	बजने लगे	धृतिः	९.	धैर्य
पेतुः	६.	वर्षा होने लगी	भूमेः	११.	पृथ्वी से
सुमनसः च	५.	पुष्पों की	कीर्तिः श्रीःच	१०.	कीर्ति और श्रीदेवी भी
च खात् ।	४.	और आकाश से	अनुतम्ययुः॥	१२.	उनके पीछे-पीछे चली गयी

श्लोकार्थ—उस समय स्वर्ग में नगारे बजने लगे, और आकाश से पुष्पों की वर्षा होने लगी। सत्य, धर्म, धैर्य, कीर्ति और श्रीदेवी भी उनके पीछे-पीछे चली गयीं ॥

अष्टमः श्लोकः

देवादयो ब्रह्ममुख्या न विशन्तं स्वधामनि ।
अविज्ञातगतिं कृष्णं ददृशुश्चातिविस्मिताः ॥८॥

पदच्छेद—

देव आदयः ब्रह्ममुख्याः न विशन्तम् स्वधामनि ।
अविज्ञात गतिम् कृष्णम् ददृशुः च अति विस्मिताः ॥

शब्दार्थ—

देव आदयः	८.	देवता भी	अविज्ञात	३.	मन और वाणी से परे है, तभी तो
ब्रह्म मुख्याः	७.	ब्रह्मा आदि	गतिम्	२.	गति
न	९.	उन्हें न	कृष्णम्	१.	भगवान् श्रीकृष्ण की
विशन्तम्	६.	प्रवेश करने लगे, तब	ददृशुः	१०.	देख सके
स्व	४.	जब भगवान् अपने	च अति	११.	और उन्हें बड़ा ही
धामनि	५.	धाम में	विस्मिताः॥	१२.	विस्मय हुआ

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण की गति मन और वाणी से परे है, तभी तो जब भगवान् अपने धाम में प्रवेश करने लगे। तब ब्रह्मा आदि देवता भी उन्हें न देख सके, और उन्हें बड़ा ही विस्मय हुआ ॥

नवमः श्लोकः

सौदामन्या यथाऽऽकाशे यान्त्या हित्वाभ्रमण्डलम् ।
गतिर्न लक्ष्यते मर्त्यैस्तथा कृष्णस्य दैवतैः ॥९॥

पदच्छेद—

सौदामिन्या यथा आकाशे यान्त्या हित्वा अभ्रमण्डलम् ।
गतिः न लक्ष्यते मर्त्यैः तथा कृष्णस्य दैव तैः ॥

शब्दार्थ—

सौदामिन्या	२.	बिजली	गतिः न	९.	उसकी चाल नहीं
यथा	१.	जैसे	लक्ष्यते	१०.	समझ पाते, वैसे ही
आकाशे	५.	जब आकाश में	मर्त्यैः	८.	मनुष्य
यान्त्या	६.	प्रवेश करती है	तथा	७.	तब
हित्वा	४.	छोड़कर	कृष्णस्य	१२.	श्री कृष्ण की गति नहीं जान पाते हैं
अभ्रमण्डलम् ।	३.	मेघ मण्डल को	दैवतैः ॥	११.	बड़े-बड़े देवता भी

श्लोकार्थ—जैसे बिजली मेघ मण्डल को छोड़कर जब आकाश में प्रवेश करती है, तब मनुष्य उसकी चाल नहीं समझ पाते, वैसे ही बड़े-बड़े देवता भी श्री कृष्ण की गति नहीं जान पाते हैं।

दशमः श्लोकः

ब्रह्मरुद्रादयस्ते तु दृष्ट्वा योगगतिं हरेः ।
विस्मितास्तां प्रशंसन्तः स्वं स्वं लोकं ययुस्तदा ॥१०॥

पदच्छेद—

ब्रह्मरुद्र आदयः ते तु दृष्ट्वा योगगतिम् हरेः ।
विस्मिताः ताम् प्रशंसन्तः स्वम् स्वम् लोकम् ययुःतदा ॥

शब्दार्थ —

ब्रह्म	२.	ब्रह्मा जी और	विस्मिताः	९.	विस्मय के साथ
रुद्र	३.	भगवान शङ्कर	ताम्	१०.	उस गति की
आदयः	४.	आदि देवता	प्रशंशन्तः	११.	प्रशंसा करते
ते तु	१.	वे	स्वम् स्वम्	१२.	अपने-अपने
दृष्ट्वा	७.	देखकर	लोकम्	१३.	लोक में
योग गतिम्	६.	यह परम योगमयी गति	ययुः	१४.	चले गये
हरेः ।	५.	भगवान् की	तदा ॥	८.	तब

श्लोकार्थ—वे ब्रह्माजी और भगवान् शङ्कर आदि देवता भगवान् की यह परम योग मयी गति देखकर तब विस्मय के साथ उस गति की प्रशंसा करते अपने-अपने लोक में चले गये ॥

एकादशः श्लोकः

राजन् परस्य तनुभृज्जननाप्ययेहा मायाविडम्बनमवेहि यथा नटस्य।
सृष्ट्वाऽऽत्मनेदमनुविश्य विहृत्य चान्ते संहृत्य चात्ममहिमोपरतः स आस्ते॥११॥

पदच्छेद— राजन् परस्य तनुभृत् जनन अप्ययेहा मायाविडम्बनम् अवे हि यथा नटस्य।
सृष्ट्वा आत्मना इदम् अनुविश्य विहृत्य च अन्ते संहृत्य च आत्ममहिमा उपरतः सः आस्ते॥

शब्दार्थ—

राजन्	१. हे परीक्षित्!	सृष्ट्वा आत्मनाइदम्	८. वे स्वयं ही इस जगत् की सृष्टि करके
परस्य	३. भगवान् का	अनुविश्य	९. इसमें प्रवेश करके
तनुभृत्	४. मनुष्यों की तरह	विहृत्य	१०. बिहार करते हैं
जनन अप्यये हो	५. जन्म लेना लीला करना फिर समेठ लेना	च अन्ते	११. और अन्त में
माया विडम्बनम्	६. माया का विलासमात्र	संहृत्य च	१२. संहार लीला करके
अवेहि	७. समझें	आत्म महिमा	१३. अपने महिमामय स्वरूप में
यथा नटस्य	२. नट के समान	उपरतः सः आस्ते	१४. स्थित हो जाते हैं

श्लोकार्थ— हे परीक्षित! नट के समान भगवान् का मनुष्यों की तरह जन्म लेना, लीला करना फिर समेट लेना माया का विलास मात्र समझें। वे स्वयं ही इस जगत की सृष्टि करके इसमें प्रवेश करके विहार करते हैं। और अन्त में संहार लीला करके अपने महिमा मय स्वरूप में स्थित हो जाते हैं॥

द्वादशः श्लोकः

मर्त्येन यो गुरुसुतं यमलोकनीतं त्वां चानयच्छरणदः परमास्त्रदग्धम्।
जिग्येऽन्तकान्तकमपीशमसावनीशः किं स्वावने स्वरनयन्मृगयुं सदेहम्॥१२॥

पदच्छेद— मर्त्येन यः गुरु सुतम् यम लोक नीतम् त्वाम् च अनयत् शरणदः परम अस्त्र दग्धम्।
जिग्ये अन्तक अन्तकम् अपीशम् असौ अनीशः किम् स्वावनेस्वरनयत् मृगयुम् सदेहम्॥

शब्दार्थ—

मर्त्येनयः	६. जो मनुष्य शरीर के साथ	जिग्ये	११. जिन्होंने जीत लिया, और
गुरुसुतम्	१. सान्दीपनि गुरु का पुत्र	अन्तक अन्तकम्	९. कालों के महाकाल
यमलोक	२. यमलोक	अपीशम्	१०. भगवान् शङ्कर को भी
नीतम्	३. चला गया था, उसे और	असौ	१४. ऐसे भगवान् श्री कृष्ण
त्वाम्	५. ऐसे तुम्हें	अनीशः	१६. असमर्थ हो सकते हैं
च अनयत्	७. (यम पुरी से) ले आये	किम् स्वावने	१५. क्या अपने शरीर के रक्षणमें
शरणदः	८. उनकी शरणागत वत्सलता ऐसी ही है	स्वर नयत्	१३. स्वर्ग भेज दिया
परम अस्त	४. ब्रह्मास्त्र से जिसका शरीर	मृगयुम्	१२. जिन्होंने व्याध को भी सदेह
दग्धम्।	जल चुका था	सदेहम्॥	

श्लोकार्थ—सान्दीपनि गुरु का पुत्र यम लोक चला गया था, उसे और ब्रह्मास्त्र से जिसका शरीर जल चुका था। ऐसे तुम्हें जो मनुष्य शरीर के साथ यमपुरी से ले आये, उनकी शरणगत वत्सलता ऐसी ही है। कालों के भी महाकाल भगवान् शङ्कर को भी जिन्होंने जीत लिया और जिन्होंने व्याध को सदेह स्वर्ग भेज दिया। ऐसे भगवान् श्रीकृष्ण क्या अपने शरीर के रक्षण में असमर्थ हो सकते हैं॥

त्रयोदशः श्लोकः

तथाप्यशेषस्थितिसम्भवाप्ययेष्वनन्यहेतुर्यदशेषशक्तिधृक् ।
नैच्छत् प्रणेतुं वपुरत्र शेषितं मर्त्येन किं स्वस्थगतिं प्रदर्शयन् ।१३।

पदच्छेद—

तथापि अशेषस्थिति सम्भव अप्ययेषु अनन्य हेतुः यत् अशेषशक्ति धृक ।
नैच्छत् प्रणेतुम् वपुः अत्रशेषितम् मर्त्येन किम् स्वस्थ गतिम् प्रदर्शयन् ।।

शब्दार्थ—

तथापि	७.	तो भी	नैच्छत्	११.	इच्छा नहीं की
अशेष	१.	यद्यपि श्रीकृष्ण सम्पूर्ण जगत् की	प्रणेतुम्	१०.	और कुछ करने की
स्थिति सम्भव	२.	स्थिति उत्पत्ति और	वपुः अत्र	८.	उन्होंने अपने शरीर को
अप्यये षुअनन्य	३.	संहार के निरपेक्ष	शेषितम	९.	संसार में बचा रखने की
हेतुः	४.	कारण हैं	मर्त्येनकिम्	१४.	मुझे इस मनुष्य शरीर से क्या काम है
यत अशेष	५.	क्योंकि वे सम्पूर्ण	स्वस्थ	१२.	उन्होंने आत्मनिष्ठ पुरुषों को
शक्ति धृक् ।	६.	शक्तियों को धारण करते हैं	गतिम् प्रदर्शयन् ।।	१३.	दिव्य आदर्श दिखाया कि

श्लोकार्थ—यद्यपि श्रीकृष्ण सम्पूर्ण जगत की स्थिति उत्पत्ति और संहार के निरपेक्ष कारण हैं। क्यों कि वे सम्पूर्ण शक्तियों को धारण करते हैं। तो भी उन्होने अपने शरीर को संसार में बचा रखने की और कुछ करने की इच्छा नहीं की। उन्होंने आत्मनिष्ठ पुरुषों को दिव्य आदर्श दिखाया कि मुझे इस मनुष्य शरीर से क्या काम है ।।

चतुर्दशः श्लोकः

य एतां प्रातरुत्थाय कृष्णस्य पदवीं पराम् ।
प्रयतः कीर्तयेद् भक्तया तामेवाप्नोत्यनुत्तमाम् ॥१४॥

पदच्छेद—

यः एताम् प्रातः उत्थाय कृष्णस्य पदवीम पराम् ।
प्रयतः कीर्तयेद् भक्तया ताम् एव आप्नोति अनुत्तमाम् ।।

शब्दार्थ—

यः	१.	जो पुरुष	प्रयतः	७	एकाग्रता से
एताम्	६.	इस कथा का	कीर्तयेद	९.	कीर्तन करेगा
प्रातः	२.	प्रातः काल	भक्तया	८.	भक्ति के साथ
उत्थाय	३.	उठकर	ताम् एव	१०.	उसे भगवान् का वही
कृष्णस्य	४.	भगवान् श्रीकृष्ण के	आप्नोति	१२.	प्राप्त होगा।
पदवीम् पराम्	५.	परम धाम गमन की	अनुत्तमाम् ।।	११.	सर्व श्रेष्ठ परम पद

श्लोकार्थ—जो पुरुष प्रातः काल उठकर भगवान् श्री कृष्ण के परमधाम गमन की इस कथा का एकाग्रता से भक्ति के साथ कीर्तन करेगा। उसे भगवान् का वही सर्वश्रेष्ठ परमपद प्राप्त होगा ।।

—८७—

पञ्चदशः श्लोकः

दारुको द्वारकामेत्य वसुदेवोग्रसेनयोः ।
पतित्वा चरणावस्त्रैः न्यषिञ्चत् कृष्णविच्युतः ॥१५॥

पदच्छेद—

दारुकः द्वारकाम् एत्य वसुदेवः उग्रसेन्योः ।
पतित्वा चरणौ अस्त्रैः न्यषिञ्चत् कृष्ण विच्युतः ॥

शब्दार्थ—

दारुकः	१.	इधर दारुक	पतित्वा	८.	गिरकर
द्वारकाम्	३.	द्वारका	चरणौ	७.	चरणो पर
एत्य	४.	आया और	अस्त्रैः	९.	आँसुओं से
वसुदेवः	५.	वसुदेव जी तथा	न्यषिञ्चत्	१०.	भिगोने लगा
उग्रसेनयोः ।	६.	उग्रसेन के	कृष्ण विच्युतः ॥	२.	श्रीकृष्ण के विरह से व्याकुल होकर

श्लोकार्थ—इधर दारुक श्रीकृष्ण के विरह से व्याकुल होकर द्वारका आया और वसुदेव जी तथा उग्रसेन के चरणों पर गिरकर आंसुओं से भिगोने लगा ॥

षोडशः श्लोकः

कथयामास निधनं वृष्णीनां कृत्स्नशो नृप ।
तच्छ्रुत्वोद्विग्नहृदनाजनाः शोकविमूर्च्छिताः ॥१६॥

पदच्छेद—

कथयामास निधनम् वृष्णीनाम् कृत्स्नशः नृप ।
तत् श्रुत्वा उद्विग्न हृदया जनाः शोक विमूर्च्छिताः ॥

शब्दार्थ—

कथयामास	५.	कह सुनाया	तत्	६.	उसे
निधनम्	३.	विनाश का	श्रुत्वा	७.	सुनकर
वृष्णीनाम्	२.	उसने यदुवंशियों के	उद्विग्नहृदया	९.	बहुत ही दुःखी हुये और
कृत्स्नशः	४.	पूरा-पूरा हाल	जनाः	८.	लोग
नृप ।	१.	हे परीक्षित ।	शोक विमूर्च्छिताः ॥	१०.	मारे शोक के मूर्च्छित हो गये

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! उनने यदुवंशियों के विनाश का पूरा-पूरा हाल कह सुनाया उसे सुनकर लोग बहुत ही दुःखी हुये और मारे शोक के मूर्च्छित हो गये ॥

सप्तदशः श्लोकः

तत्र स्म त्वरिता जग्मुः कृष्णविश्लेषविह्वलाः ।
व्यसवः शेरते यत्र ज्ञातयोघ्नन्त आननम् ॥१७॥

पदच्छेद—

तत्र स्म त्वरिता जग्मुः कृष्ण विश्लेषविह्वलाः ।
व्यसवः शेरते यत्र ज्ञातयोघ्नन्त आननम् ॥

शब्दार्थ—

तत्र स्म	६. वहाँ	व्यसवः	११. निष्प्राण होकर
त्वरिता	७. तुरन्त	शेरते	१२. पड़े हुये थे
जग्मुः	८. पहुँचे	यत्र	९. जहाँ उनके
कृष्ण	१ भगवान् श्रीकृष्ण के	ज्ञातयः	१०. भाई-बन्धु
विश्लेष	२. वियोग से	घ्नन्त	५. पीटते हुये
विह्वला।	३. व्याकुल होकर	आननम् ॥	४. वेलोग मुँह

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण के वियोग से व्याकुल होकर वेलोग मुँह पीटते हुये वहाँ तुरन्त पहुँचे, जहाँ उनके भाई-बन्धु निष्प्राण होकर पड़े हुये थे ॥

अष्टदशः श्लोकः

देवकी रोहिणी चैव वसुदेवस्तथा सुतौ ।
कृष्णरामावपश्यन्तः शोकार्ता विजहुः स्मृतिम् ॥१८॥

पदच्छेद—

देवकी रोहिणी च एव वसुदेवः तथा सुतौ ।
कृष्ण रामौ अपश्यन्तः शोकार्ताः विजहुः स्मृतिम् ॥

शब्दार्थ—

देवकी	१. देवकी	कृष्ण	६. श्रीकृष्ण
रोहिणी	२. रोहिणी	रामौ	८. बलराम जी को
च एव	३. और	अपश्यन्तः	९. न देखकर
वसुदेवः	४. वसुदेव जी	शोकार्ताः	१०. शोक के कारण
तथा	७. तथा	विजहुः	१२. खो बैठे
सुतौ।	५. अपने दोनों पुत्र	स्मृतिम् ॥	११. अपनी स्मृति

श्लोकार्थ—देवकी, रोहिणी और वसुदेव जी अपने दोनों पुत्र श्रीकृष्ण तथा बलराम को न देखकर शोक के कारण अपनी स्मृति खो बैठे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

प्राणांश्च विजहुस्तत्र भगवद्विरहातुराः ।
उपगुह्य पतींस्तता चितामारुरुहुः स्त्रियः ॥१९॥

पदच्छेद— प्राणान् च विजहुः तत्र भगवत् विरह आतुराः ।
उपगुह्य पतीन् तात चिताम् आरुरुहुः स्त्रियः ॥

शब्दार्थ—

प्राणान् च	६.	अपने प्राण	उपगुह्य	१०.	शव पहचान कर उन्हें हृदय से लगा लिया
विजहुः	७.	छोड़ दिये	पतीन्	९.	अपने-अपने पतियों के
तत्र	५.	वहीं	तात	१.	हे परीक्षित !
भगवत्	२.	उन्होंने भगवत्	चिताम्	११.	उनके साथ चिता पर
विरह	३.	विरह से	आरुरुहुः	१२.	बैठकर भस्म हो गयीं
आतुराः ।	४.	व्याकुल होकर	स्त्रियः ॥	८.	उन स्त्रियों ने

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! उन्होंने भगवत् विरह से व्याकुल होकर वहीं अपने प्राण त्याग दिये । उन स्त्रियों ने अपने-अपने पतियों के शव पहचान कर उन्हें हृदय से लगा लिया, और उनके साथ चिता पर बैठकर भस्म हो गयीं ॥

विंशः श्लोकः

रामपत्न्यश्च तद्देहमुपगुह्याग्निमाविशन् ।
वसुदेवपत्न्यस्तद्गात्रं प्रद्युम्नादीन् हरेः स्नुषाः ।
कृष्णपत्न्योऽविशन्नग्निं रुक्मिण्याद्यास्तदात्मिकाः ॥२०॥

पदच्छेद— राम पत्नयः चतत् देहम् उपगुह्य अग्निम् आविशन् ।
वसुदेव पत्न्यः तत् गात्रम् प्रद्युम्न आदीन् हरेः स्नुषाः ।
कृष्ण पत्न्यः आविशत् अग्निम् रुक्मिणी आद्याःतत् आत्मिकाः

शब्दार्थ—

राम पत्न्यः	१.	बलराम जी की पत्नियाँ	प्रद्युम्न	६.	प्रद्युम्न
च तत्देहम्	२.	उनके शरीर को और	आदीन्	७.	आदि अपने पतियों के शव को
उपगुह्य	८.	लेकर	हरेः स्नुषाः ।	५	भगवान् की पुत्र बधुयें
अग्निम्	९.	अग्नि में	कृष्ण पत्न्यः	११.	भगवान् श्रीकृष्ण की पत्नियाँ
आविशन्	१०.	प्रवेश कर गईं	आविशत् अग्निम्	१४.	अग्नि में प्रविष्ट हो गयीं
वसुदेव पत्न्यः	३.	वसुदेव जी की पत्नियाँ	रुकमणिआद्याः	१२.	रुकमणि आदि
तत् गात्रम्	४.	उनके शव को और	तत्आत्मिकाः ॥	१३.	उनके ध्यान में मग्न होकर

श्लोकार्थ—बलराम जी की पत्नियाँ उनके शरीर को और, वसुदेव जी की पत्नियाँ उनके शव को और भगवान् की पुत्रबधुयें प्रद्युम्न आदि अपने पतियों के शव को लेकर अग्नि में प्रवेश कर गईं । भगवान् श्रीकृष्ण की पत्नियां रुकमणि आदि उनके ध्यान में मग्न होकर अग्नि में प्रविष्ट हो गईं ॥

एकविंशः श्लोकः

अर्जुनः प्रेयसः सख्युः कृष्णस्य विरहातुरः ।
आत्मानं सान्त्वयामास कृष्णगीतैः सदुक्तिभिः ॥२१॥

पदच्छेद—

अर्जुनः प्रेयसः सख्युः कृष्णस्य विरह आतुरः ।
आत्मानम् सान्त्वयामास कृष्ण गीतैः सत् उक्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

अर्जुनः	१. अर्जुन	आत्मानम्	११. अपने
प्रेयसः	२. अपने प्रियतम	सान्त्वयामास	१२. मन को संभाला
सख्युः	३. और सखा	कृष्ण	७. कृष्ण द्वारा कही
कृष्णस्य	४. श्रीकृष्ण के	गीतैः	८ गीता के
विरह	५. विरह से पहले तो	सत्	९. सद्
आतुरः ॥	६. व्याकुल हो गये, फिर उन्होंने	उक्तिभिः ॥	१०. उपदेशों का स्मरण करके

श्लोकार्थ—अर्जुन अपने प्रियतम और सखा श्रीकृष्ण के विरह से पहले तो व्याकुल हो गये, फिर उन्होंने कृष्ण द्वारा कही गीता के सद् उपदेशों का स्मरण करके अपने मन को संभाला ॥

द्वाविंशः श्लोकः

बन्धूनां नष्टगोत्राणामार्जुनः साम्परायिकम् ।
हतानां कारयामास यथावदनुपूर्वशः ॥२२॥

पदच्छेद—

बन्धूनाम् नष्ट गोत्राणाम् अर्जुनः साम्परायिकम् ।
हतानाम् कारयामास यथावत् पूर्वशः ॥

शब्दार्थ—

बन्धूनाम्	२. बन्धुओं का	हतानाम्	१. यदुवंश के जिन मृत
नष्ट	४. कोई नहीं था	कारयामास	९. करवाया
गोत्राणाम्	३. पुत्र आदि	यथावत्	७. क्रमशः
अर्जुनः	६ अर्जुन ने	अनुपूर्वशः ॥	८. विधि पूर्वक
साम्परायिकम् ।	५. उनका श्राद्ध		

श्लोकार्थ—यदुवंश के जिन मृत बन्धुओं का पुत्र आदि कोई नहीं था उनका श्राद्ध अर्जुन ने क्रमशः विधि पूर्वक करवाया ॥

त्रयविंशः श्लोकः

द्वारिकां हरिणा त्यक्तां समुद्रोऽप्लावयत् क्षणात् ।
वर्जयित्वा महाराज श्रीमद्भागवदालयम् ॥२३॥

पदच्छेद—

द्वारिकाम् हरिणा त्यक्ताम् समुद्रः अप्लावयत क्षणात् ।
वर्जयित्वा महाराज श्रीमद्भागवत् आलयम् ॥

शब्दार्थ—

द्वारिकाम्	७. द्वारका को	क्षणात् ।	९. एकक्षण में
हरिणा	५. भगवान् के द्वारा	वर्जयित्वा	४. छोड़कर
त्यक्ताम्	६. छोड़ी गई	महाराज	१. महाराज !
समुद्रः	८. समुद्र में	श्रीमद्भागवत्	२. भगवान् श्रीकृष्ण के
अप्लावयत	१०. डुबा दिया	आलयम् ॥	३. निवास स्थान को

श्लोकार्थ—महाराज भगवान् श्री कृष्ण के निवास स्थान को छोड़कर भगवान् के द्वारा छोड़ी गई द्वारका को समुद्र में एक क्षण में डुबो दिया ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

नित्यं सन्निहितस्तत्र भगवान् मधुसूदनः ।
स्मृत्याशेषाशुभहरं सर्वमङ्गलमङ्गलम् ॥२४॥

पदच्छेद—

नित्यम् सन्निहितः तत्र भगवान् मधुसूदनः ।
स्मृत्या अशेष अशुभ हरम् सर्वमङ्गल मङ्गलम् ॥

शब्दार्थ—

नित्यम्	४. अब भी सदा-सर्वदा	स्मृत्या	६. वह स्थान स्मरण मात्र से
सन्निहितः	५. निवास करते हैं	अशेष	७. सारे
तत्र	३. वहाँ	अशुभहरम्	८. पाप-तापों का नाशक ही
भगवान्	१. भगवान्	सर्व मङ्गल	९. और सर्वमङ्गलों को भी
मधुसूदनः ।	२. श्रीकृष्ण	मङ्गलम् ॥	१०. मङ्गल बनाने वाला है

श्लोकार्थ—भगवान् श्रीकृष्ण वहाँ अब भी सदा-सर्वदा निवास करते हैं । वह स्थान स्मरण मात्र से ही सारे पाप-तापों का नाशक और सब मङ्गलों को भी मङ्गल बनाने वाला है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

स्त्रीबालवृद्धानादाय हतशेषान् धनञ्जयः ।
इन्द्रप्रस्थं समावेश्य वज्रं तत्राभ्यषेचयत् ॥२५॥

पदच्छेद—

स्त्री बाल वृद्धान् आदाय हत शेषान् धनञ्जयः ।
इन्द्र प्रस्थम् समावेश्य वज्रम् तत्र अभ्यषेचयत् ॥

शब्दार्थ—

स्त्री	२.	स्त्रियों	इन्द्र प्रस्थम्	७.	इन्द्रप्रस्थ
बाल	३.	बालकों और	समावेश्य	८.	आये (और)
वृद्धान्	४.	वृद्धों को	वज्रम्	१०.	वज्र का
आदाय	५.	लेकर	तत्र	९.	वहाँ अनिरुद्ध के पुत्र
हत शेषान्	१.	मरने से बचे हुये	अभ्यषेचयत् ॥	११.	अभिषेक कर दिया
धनञ्जयः ।	६.	अर्जुन			

श्लोकार्थ—मरने से बचे हुये, स्त्रियों बालकों और वृद्धों को लेकर अर्जुन इन्द्रप्रस्थ आये । और वहाँ अनिरुद्ध के पुत्र वज्र का अभिषेक कर दिया ॥

षड्विंशः श्लोकः

श्रुत्वासुहृद्वधं राजन्नर्जुनात्ते पितामहाः ।
त्वां तु वंशधरं कृत्वा जग्मुः सर्वे महापथम् ॥२६॥

पदच्छेद—

श्रुत्वा सुहृद् वधम् राजन् अर्जुनात् ते पितामहाः ।
त्वाम् तु वंशधरम् कृत्वा जग्मुः सर्वे महापथम् ॥

शब्दार्थ—

श्रुत्वा	६.	सुनी तब	त्वाम् तु	८.	तुम्हें
सुहृद	४.	जब यदुवंशियों के	वंशधरम्	७.	उन्होंने अपने वंशधर
वधम्	५.	संहार की बात	कृत्वा	९.	राज्य पद पर अभिषिक्त करके
राजन्	१.	हे राजन् !	जग्मुः	१२.	की
अर्जुनात्	३.	अर्जुन से	सर्वे	१०.	युधिष्ठिर आदि पाण्डवों ने
तेपितामहम् ।	२.	तुम्हारे दादा	महापथम् ॥	११.	हिमालय की यात्रा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तुम्हारे दादा ने जब यदुवंशियों के संहार की बात सुनी तब उन्होंने अपने वंशधर तुम्हें राज्य पद पर अभिषिक्त करके युधिष्ठिर आदि पाण्डवों ने हिमालय की यात्रा की ॥

सप्तविंशः श्लोकः

य एतद् देवदेवस्य विष्णोः कर्माणि जन्म च ।
कीर्तयेच्छ्रद्धयामर्त्यः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥२७॥

पदच्छेद— यः एतद् देव देवस्य विष्णोः कर्माणि जन्म च ।
कीर्तयेत् श्रद्धयामर्त्यः सर्व पापैः प्रमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

यः एतद्	१. जो भी	कीर्तयेत्	९. कीर्तन करता है
देव	३. देवताओं के भी	श्रद्धया	८. श्रद्धा वूर्वक
देवस्य	४. आराध्य देव	मर्त्यः	२. मनुष्य
विष्णोः	५. श्रीकृष्ण की	सर्व	१०. वह समस्त
कर्माणि	७. कर्म लीला का	पापैः	११. पापों से
जन्म च ।	६. जन्म लीला और	प्रमुच्यते ॥	१२. मुक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—जो मनुष्य देवताओं के भी आराध्य देव श्रीकृष्ण की जन्म लीला और कर्मलीला का श्रद्धा पूर्वक कीर्तन करता है। वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है ॥

अष्टविंशः श्लोकः

इत्थं हरेर्भगवतो रुचिरावतार वीर्याणि बालचरितानि च शन्तमानि ।
अन्यत्र चेह च श्रुतानि गृणन् मनुष्यो भक्तिं परां परमहंसगतौ लभेत् २८।

पदच्छेद—इत्थम् हरेः भगवतः रुचिरा अवतार वीर्याणि बालचरितानि च शन्तमानि ।
अन्यत्र च इह चश्रुतानि गृणन् मनुष्यः भक्तिम् पराम् परमहंस गतौलभेत् ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१. हे परीक्षित ! इस प्रकार	च इह च	७. और इस श्रीमद्भागवत में तथा
हरेः भगवतः	३. भगवान् श्रीकृष्ण के	श्रुतानि	९. वर्णित
रुचिर	४. रुचिर	गृणम्	१२. संकीर्तन करता है
अवतार	५. अवतार सम्बन्धी	मनुष्ये	२. जो मनुष्य
वीर्याणि	६. पराक्रम	भक्तिम् पराम्	१५. चरणों की परमभक्ति
बाल चरितानि	११. बाल लीलायें (और) किशोर लीला का	परमहंस	१३. वह परमहंस मुनियों के
च शन्तमानि	१०. परम मङ्गलमयी	गतौ	१४. अन्तिम प्राप्तव्य श्रीकृष्ण के
अन्यत्र	८. दूसरों पुराणों में	लभेत् ॥	१६. प्राप्त करता है !

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! इस प्रकार जो मनुष्य भगवान् श्रीकृष्ण के रुचिर अवतार सम्बन्धी पराक्रम और इस श्रीमद भागवत में तथा दूसरे पुराणों में वर्णित परम मङ्गलमयी बाललीलायें और किशोर लीला को संकीर्तन करता है। वह परमहंस मुनियों के अन्तिम प्राप्तव्य श्रीकृष्ण के चरणों की परम भक्ति प्राप्त करता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे वैयासिक्यामष्टादशसाहस्त्रयां पारमहंस्यां
संहितायां एकादश स्कन्धे एकोनत्रिंशः अध्यायः ॥३१॥
॥ श्रीकृष्णार्पणमस्तुः ॥

श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीमद्भागवतमहापुराणस्य

द्वादशः स्कन्धः

सगुणो निर्गुणो भावः शून्याशून्यात्मकस्तथा ।
लीलाविलासो यस्यैव तं वन्दे बालवत्सपम् ॥

—१—
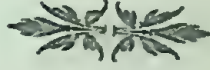
श्रीमद्भागवत महापुराणम्

द्वादशः स्कन्धः

प्रथमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

राजोवाच— स्वधानुगते कृष्णे यदुवंशविभूषणे ।
कस्य वंशोऽभवत् पृथ्व्यामेतदाचक्ष्व मे मुने ॥१॥

पदच्छेद— स्वधाम अनुगते कृष्णे यदुवंश विभूषणे ।
कस्य वंशः अभवत् पृथ्व्याम् एतद्‌आचक्ष्वमेमुने ॥

शब्दार्थ—

स्वधाम	५.	अपने धाम में	अभवत्	९.	हुआ
अनुगते	६.	चले जाने पर	पृथ्व्याम्	८.	पृथ्वी पर
कृष्णे	४.	श्री कृष्ण के	एतद्	११.	यह
यदुवंश	२.	यदुवंश	आचक्ष्व	१२.	बताइये
विभूषणे ।	३.	शिरोमणि	मे	१०.	मुझे
कस्यवंशः	७.	किसका वंश	मुने ॥	१.	हे मुने !

श्लोकार्थ—हे मुने ! यदुवंश शिरोमणि श्री कृष्ण के अपने धाम में चले जाने पर किसका वंश पृथ्वी पर हुआ । मुझे यह बताइये ॥

द्वितीयः श्लोकः

योऽन्त्यः पुरञ्जयो नाम भाव्यो बार्हद्रथो नृप ।
तस्यामात्यस्तु शुनको हत्वा स्वामिनमात्मजम् ॥२॥

पदच्छेद— यः अन्त्यः पुरञ्जयः नामभाव्यः बार्हद्रथ नृप ।
तस्य अमात्यः तु शुनक हत्वा स्वामिनम् आत्मजम् ॥

शब्दार्थ—

यः अन्त्यः	३.	जो अन्तिम	तस्य	७.	उसका
पुरञ्जयः	४.	पुरञ्जयः	अमात्यः	८.	मन्त्री
नाम	५.	नाम का (राजा)	शुनकः	९.	शुनक
भाव्य	६.	होने वाला है	हत्वा	११.	मार कर
बार्हद्रथ	२.	जरासन्ध का पिता बृहद्रथ का वंशज	स्वामिनम्	१२.	अपने स्वामी को
नृप ।	१.	हे राजन् !	आत्मजम् ॥	१०.	अपने पुत्र को राज सिंहासन पर बैठा देगा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जरासन्ध का पिता बृहद्रथ का वंशज जो अन्तिम पुरञ्जय नाम का राजा होने वाला है । उसका मन्त्री शुनक अपने स्वामी को मार कर अपने पुत्र को राज-सिंहासन पर बैठा देगा ॥

तृतीयः श्लोकः

प्रद्योतसंज्ञं राजानं कर्ता यत् पालकः सुतः ।
विशाखयूपस्तत्पुत्रो भविता राजकस्ततः ॥३॥

पदच्छेद—

प्रद्योत संज्ञम् राजानम् कर्ता यत् पालकः सुतः ।
विशाख यूपः तत् पुत्रः भविता राजकः ततः ॥

शब्दार्थ—

प्रद्योत्	१. प्रद्योत		विशाखयूपः	१०.	विशाख यूप और
संज्ञम्	२. नामक पुत्र को		तत्	७.	उस पालक का
राजानम्	३. राजा		पुत्रः	८.	पुत्र
कर्ता	४. बना देगा		भविताः	९.	होगा।
यत्	५. प्रद्योत का		राजकः	१२.	राजक का जन्म होगा
पालकःसुतः ।	६. पुत्र पालक होगा और		ततः ॥	११.	उससे

शब्दार्थ—प्रद्योत नामक पुत्र को राजा बना देगा प्रद्योत का पुत्र पालक होगा और उस बालक का पुत्र होगा विशाख यूप और उससे राजक का जन्म होगा ।

चतुर्थः श्लोकः

नन्दिवर्धनस्तत्पुत्रः पञ्च प्रद्योतना इमे ।
अष्टत्रिंशोत्तरशतं भोक्ष्यन्ति पृथिवीं नृपाः ॥४॥

पदच्छेद—

नन्दिवर्धनः तत् पुत्रः पञ्च प्रद्योतना इमे ।
अष्टत्रिंशोत्तर शतम् भोक्ष्यन्ति पृथिवीम् नृपाः ॥

शब्दार्थ—

नन्दिवर्धनः	२. नन्दिवर्धन होगा	अष्टत्रिंशोत्तर	८.	अड़तीस वर्षों तक
तत् पुत्रः	१. उसका पुत्र	शतम्	७.	एक सौ
पञ्च	५. पांच राजा होंगे	भोक्ष्यन्ति	१०.	उपभोग करेंगे
प्रद्योत्तना	३. प्रद्योत नाम वाले	पृथिवीम्	९.	पृथ्वी का
इमे ।	४. ये ही	नृपाः ॥	६.	ये राजा

शब्दार्थ—उसका पुत्र नन्दिवर्धन होगा, प्रद्योत नाम वाले ये ही पांच राजा होंगे । ये राजा एक सौ अड़तीस वर्षों तक पृथ्वी का उपभोग करेंगे ॥

पञ्चमः श्लोक

शिशुनागस्ततो भाव्यः काकवर्णस्तु तत्सुतः ।
क्षेमधर्मा तस्य सुतः क्षेत्रज्ञः क्षेमधर्मजः ॥५॥

पदच्छेद—

शिशुनागः ततः भाव्यः काक वर्णः तु तत् सुतः ।
क्षेमधर्मा तस्य सुतः क्षेत्रज्ञः क्षेमधर्मजः ॥

शब्दार्थ—

शिशुनागः	२. शिशु नाग राजा होगा	क्षेमधर्मा	६. क्षेमधर्मा होगा और
ततः	१. इसके बाद	तस्य	७. उसका
भाव्यः	६. होगा ।	सुतः	८. पुत्र
काकवर्णः तु	५. काक वर्ण	क्षेत्रज्ञः	११. क्षेत्रज्ञ होगा
तत्	३. उसका	क्षेमधर्मजः ॥	१०. क्षेमधर्मा का पुत्र
सुतः ।	४. पुत्र		

श्लोकार्थ—इसके बाद शिशुनाग राजा होगा, उसका पुत्र काकवर्ण होगा। उसका पुत्र क्षेमधर्मा होगा और क्षेमधर्मा का पुत्र क्षेत्रज्ञ होगा ॥

षष्ठः श्लोक

विधिसारः सुतस्तस्याजातशत्रुर्भविष्यति ।
दर्भकस्तत्सुतो भावी दर्भकस्याजयः स्मृतः ॥६॥

पदच्छेद—

विधिसारा सुतः तस्य अजातशत्रुः भविष्यति ।
दर्भकः तत् सुतः भावी दर्भकस्य अजय स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

विधिसारः	१. क्षेत्रज्ञ का पुत्र विधिसार	दर्भकः	७. दर्भक
सुतः	३. पुत्र	तत् सुतः	६. उसका पुत्र
तस्य	२. और उसका	भावी	८. होगा और
अजात शत्रु	४. आज्ञात शत्रु	दर्भकस्य	६. दर्भक का पुत्र
भविष्यति	५. होगा	अजयस्मृतः ॥	१०. अजय होगा

श्लोकार्थ—क्षेत्रज्ञ का पुत्र विधिसार और उसका पुत्र अजात शत्रु होगा। उसका पुत्र दर्भक होगा और दर्भक का पुत्र अजय होगा ॥

सप्तमः श्लोक

नन्दिवर्धन आजेयो महानन्दिः सुतस्ततः ।
शिशुनागा दशैवैते षष्ट्युत्तरशतत्रयम् ।।७।।

पदच्छेद—

नन्दिवर्धन आजेयः महानन्दिः सुतः ततः ।
शिशुनागा दश एव एतेषष्टि उत्तर शतत्रयम् ।।

शब्दार्थ—

नन्दिवर्धनः	२.	नन्दिवर्धन	शिशुनागः	६.	शिशु नाग वंश में
आजेयः	१.	अजय का पुत्र	दश एव एते	७.	ये ही दश राजा
महानन्दिः	५.	महानन्दि होगा	षष्टि उत्तर	१०.	साठ वर्ष (राज्य करेंगे)
सुतः	४.	उसका पुत्र	शत	९.	सौ
ततः	३.	और	त्रयम् ।।	८.	जो तीन

श्लोकार्थ—अजय का पुत्र नन्दिवर्धन और उसका पुत्र महानन्दि होगा । शिशु नागवंश में ये ही दश राजा होंगे जो तीन सौ साठ वर्ष तक राज्य करेंगे ।।

अष्टमः श्लोक

समा भोक्ष्यन्ति पृथिवीं कुरुश्रेष्ठ कलौ नृपाः ।
महानन्दिसुतो राजन् शूद्रीगर्भोद्भवो बली ।।८।।

पदच्छेद—

समाः भोक्षयन्ति पृथिवीम् कुरुश्रेष्ठ कलौ नृपाः ।
महानन्दि सुतः राजन् शूद्री गर्भः ऊद्भुवः बली ।।

शब्दार्थ—

समाः	४.	तीन सौ साठ वर्ष तक	महानन्दि	८.	महानन्दि का
भोक्ष्यन्ति	६.	उपभोग करेंगे	सुतः	९.	पुत्र
पृथिवीम्	५.	पृथिवी का	राजन्	७.	हे राजन् !
कुरु श्रेष्ठ	१.	कुरुवंशियों में श्रेष्ठ	शूद्री	१०.	शूद्रा के
कलौ	२.	कलियुग में	गर्भःउद्भवः	११.	गर्भ से उत्पन्न
नृपाः ।	३.	यह राजा लोग	बली ।।	१२.	बलवान् नन्द होगा

श्लोकार्थ—कुरुवंशियों में श्रेष्ठ कलियुग में यह राजा लोग तीन सौ साठ वर्ष तक पृथिवी का उपभोग करेंगे । हे राजन ! महानन्दि का पुत्र शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न बलवान् नन्द होगा ।।

नवमः श्लोकः

महापद्मपतिः कश्चिन्नन्दः क्षत्रविनाशकृत् ।
ततो नृपा भविष्यन्ति शूद्रप्रायास्त्वधार्मिकाः ॥९॥

पदच्छेद—

महापद्म पतिः कश्चित् नन्दः क्षत्र विनाशकृत् ।
ततः नृपा भविष्यन्ति शूद्र प्रायाः तु अधार्मिकाः ॥

शब्दार्थ—

महापद्म	१.	महापद्म नामक निधि का	ततः	७.	तभी से
पतिः	२.	अधिपति	नृपा	८.	राजा लोग
कश्चित् नन्दः	३.	कोई नन्द	भविष्यन्ति	१२.	हो जायेंगे
क्षत्र	४.	क्षत्रियों का	शूद्र प्रायः	९.	प्रायः शूद्र
विनाश	५.	विनाश	तु	१०.	और
कृत ।	६.	कारी होगा	अधार्मिकाः ॥	११.	अधार्मिक

श्लोकार्थ—महापद्म नामक विधि का अधिपति कोई नन्द क्षत्रियों का विनाशकारी होगा । तभी से राजा लोग प्रायः शूद्र और अधार्मिक हो जायेंगे ॥

दशमः श्लोकः

स एकच्छत्रां पृथिवीमनुल्लङ्घितशासनः ।
शासिष्यति महापद्मो द्वितीय इव भार्गवः ॥१०॥

पदच्छेद—

सः एकच्छत्राम् पृथिवीम् अनुल्लङ्घित शासनः ।
शासिष्यति महा पद्मः द्वितीय इव भार्गवः ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वह	शासिष्यति	७.	शासन करेगा
एकच्छत्राम्	६.	एकछत्र	महापद्मः	२.	महापद्म
पृथिवीम्	५.	पृथ्वी पर	द्वितीय	८.	दूसरे
अनुल्लङ्घित	४.	उल्लङ्घन कोई नहीं करेगा	इव	१०.	समान (वह क्षत्रिय विनाश का हेतु होगा
शासनः	३.	जिसके शासन का	भार्गवः ॥	९.	परशुराम के

श्लोकार्थ—वह महापद्म जिसके शासन का उलङ्घन कोई नहीं करेगा, पृथ्वी पर एकछत्र शासन करेगा, दूसरे परशुराम के समान क्षत्रिय विनाश का हेतु होगा ॥

एकादशः श्लोकः

तस्य चाष्टौ भविष्यन्ति सुमाल्यप्रमुखाः सुताः ।
य इमां भोक्ष्यन्ति महीं राजानः स्म शतं समाः ॥११॥

पदच्छेद—

तस्य च अष्टौ भविष्यति सुमाल्य प्रमुखाः सुताः ।
ये इमाम् भोक्ष्यन्ति महीम् राजानः स्म शतम् समाः ॥

शब्दार्थ—

तस्य च	१.	और उसके	ये इमाम्	७.	जो इस
अष्टौ	४.	आठ	भोक्ष्यन्ति	१२.	उपभोग करेंगे
भविष्यति	६.	होंगे	महीम्	११.	पृथ्वी का
सुमाल्य	२.	सुमाल्य	राजानः	८.	वे राजा
प्रमुखाः	३.	आदि	स्म शतम्	९.	सौ
सुताः ।	५.	पुत्र	समाः ॥	१०.	वर्षों तक

श्लोकार्थ—और उसके सुमाल्य आदि आठ पुत्र होंगे । वे राजा सौ वर्षों तक इस पृथ्वी का उपभोग करेंगे ॥

द्वादशः श्लकः

नवनन्दान् द्विजः कश्चित् प्रपन्नानुद्धरिष्यति ।
तेषामभावे जगतीं मौर्या भोक्ष्यन्ति वै कलौ ॥१२॥

पदच्छेद—

नव नन्दान् द्विजः कश्चित् प्रपन्नान् उद्धरिष्यति ।
तेषाम् अभावे जगतीम् मौर्याः भोक्ष्यन्ति वै कलौ ॥

शब्दार्थ—

नव	४.	नौ	तेषाम्	७.	उनके
नन्दान्	५.	नन्दों को	अभावे	८.	न रहने पर
द्विजः	२.	ब्राह्मण (चाणक्य)	जगतीम्	११.	पृथ्वी का
कश्चित्	१.	कोई	मौर्या	९.	मौर्य वंशी (राजा)
प्रपन्नान	३.	विरुद्ध होने पर	भोक्ष्यन्ति	१२.	उपभोग करेंगे
उद्धरिष्यति ।	६.	विनष्ट कर देगा	वै कलौ ॥	१०.	निश्चित रूप से कलियुग में

श्लोकार्थ—कोई ब्राह्मण चाणक्य विरुद्ध होने पर नौ नन्दों को विनष्ट कर देगा । उनके न रहने पर मौर्यवंशी राजा निश्चित रूप से कलियुग में पृथ्वी का उपभोग करेंगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

स एव चन्द्रगुप्तं वै द्विजो राज्येऽभिषेक्ष्यति ।
ततसुतो वारिसारस्तु ततश्चाशोकवर्धनः ॥१३॥

पदच्छेद—

स एव चन्द्रगुप्तम् वै द्विजः राज्ये अभिषेक्ष्यति ।
तत् सुतः वारिसारः तु ततः च अशोकवर्धनः ॥

शब्दार्थ—

स एव	१. वही	ततः	७. उसका
चन्द्रगुप्तम्	४. चन्द्रगुप्त को	सुतः	८. पुत्र
वै	३. निश्चित रूप से	वारिसारः तु	९. वारिसार होगा
द्विजः	२. ब्राह्मण	ततः	११. उससे
राज्ये	५. राजा के पद पर	च	१०. और
अभिषेक्ष्यति ।	६. अभिषिक्त करेगा	अशोकवर्धनः ॥	१२. अशोकवर्धन का जन्म होगा

श्लोकार्थ—वही ब्राह्मण निश्चित रूप से चन्द्रगुप्त को राजा के पद पर अभिषिक्त करेगा। उसका पुत्र वारिसार होगा, और उससे अशोकवर्धन का जन्म होगा ॥

चतुर्दशः श्लोकः

सुयशा भविता तस्य सङ्गता सुयशःसुताः ।
शालिशूकस्ततस्तस्य सोमशर्मा भविष्यति ॥१४॥

पदच्छेद—

सुयशा भविता तस्य सङ्गता सुयश सुताः ।
शालिशूकः ततः तस्य सोम शर्मा भविष्यति ॥

शब्दार्थ—

सुयशा	२. सुयश	शालिशूकः	८. शालिशूक
भविता	३. होगा	ततः	७. उससे
तस्य	१. उसका पुत्र	तस्य	९. और उसका पुत्र
सङ्गता	६. संगत	सोमशर्मा	१०. सोम शर्मा
सुयश	४. सुयश का	भविष्यति ॥	११. होगा
सुताः ।	५. पुत्र		

श्लोकार्थ—उसका पुत्र सुयश होगा, सुयश का पुत्र संगत, उससे शालिशूक और उसका पुत्र सोम शर्मा होगा ॥

पञ्चदशः श्लोकः

शतधन्वा ततस्तस्य भविता तद् बृहद्रथः ।
मौर्या ह्येते दश नृपाः सप्तत्रिंशच्छतोत्तरम् ॥१५॥

पदच्छेद— शतधन्वा ततः स्तस्य भविता तद् बृहद्रथः ।
मौर्या ह्येते दश नृपाः सप्तत्रिंशत् शत उत्तरम् ॥

शब्दार्थ—

शतधन्वा	३.	शतधन्वा	मौर्याः	८.	मौर्य वंशो
ततः	१.	तदनन्तर	हि एते	७.	ये सब
स्तस्य	२.	उसका पुत्र	दश	९.	दश
भविता	४.	होगा और	नृपाः	१०.	राजा
तत्	५.	उसका पुत्र	सप्तत्रिंशत्	१२.	सैंतोस वर्ष तक राज्य करेंगे
बृह द्रथः ।	६.	बृह द्रथ होगा	शत्तउत्तरम् ॥	११.	एक सौ

श्लोकार्थ—तदनन्तर उसका पुत्र शतधन्वा होगा, और उसका पुत्र बृहद्रथ होगा । ये सब मौर्यवंशो दश राजा एक सौ सैंतोस वर्ष तक राज्य करेंगे ॥

षोडशः श्लोकः

समा भोक्ष्यन्ति पृथिवीं कलौ कुरुकलोद्वह ।
हत्वा बृहद्रथं मौर्यं तस्य सेनापतिः कलौ ।
पुष्पमित्रस्तु शुङ्गाह्वः स्वयं राज्यं करिष्यति ।
अग्निमित्रस्ततस्तस्मात् सुज्येष्ठोऽथ भविष्यति ॥१६॥

पदच्छेद—

समाः भोक्ष्यन्ति पृथिवीम् कलौ कुरुकुल उद्वह हत्वा बृहद्रथम् मौर्यम् तस्यसेनापतिः कलौ । पुष्पमित्रः तु शुङ्गाह्वः स्वयम् राज्यम् करिष्यति अग्निमित्रः ततः तस्मात् सुज्येष्ठः अथ भविष्यति

शब्दार्थ—

समाः	३.	ये सब नरेश	पुष्पयित्रः तु	१०.	पुष्प मित्र
भोक्ष्यन्ति पृथिवीम्	४.	पृथ्वी का पालन करेंगे	शुङ्गाह्व	९.	शुङ्गनाम वाला
कलौ	२.	कलियुग में	स्वयम् राज्यम्	१०.	स्वयम् राज्य
कुरुकुलउद्वह	१.	कुरुवंश विभूषण परीक्षित !	करिष्यसि	१२.	करेगा
हत्वाबृहद्रथम्	७.	बृहद्रथ को मारकर	अग्निमित्रःततः	१३.	उससे अग्नि मित्र होगा
मौर्यम्	६.	मौर्यवंशी	तस्यात् सुज्येष्ठः	१५.	उससे सुज्येष्ठ
तस्यसेनापतिः	८.	उसका सेनापति	अथ	१४.	और
कलौ ।	५.	कलियुग में	भविष्यति ॥	१६.	होगा

श्लोकार्थ—कुरुवंश विभूषण परीक्षित ! कलियुग में ये सब नरेश पृथ्वी का पालन करेंगे । कलियुग में मौर्यवंशी ब्रहद्रथ को मारकर उसका सेनापाति शुङ्गनाम वाला पुष्पमित्र स्वयम् राज्य करेगा । उससे अग्निमित्र होगा और उससे सुज्येष्ठ होगा ॥

सप्तदशः श्लोकः

वसुमित्रो भद्रकश्च पुलिन्दो भविता ततः।
ततो घोषः सुतस्तस्माद् वज्रमित्रो भविष्यति ॥१७॥

पदच्छेद—

वसुमित्रः भद्रकः च पुलिन्दः भविता ततः ।
ततः घोषः सुतः तस्मात् वज्र मित्रः भविष्यति ॥

शब्दार्थ—

वसुमित्रः	१. (सुज्येष्ठ का पुत्र) वसुमित्र	ततः	७. उससे
भद्रकः	३. भद्रक	घोषः	८. घोष और
च	२. और (उसका)	सुतः	११. पुत्र
पुलिन्दः	५. पुलिन्द	तस्मात्	९. उससे
भविता	६. होगा	वज्रमित्रः	१०. वज्रमित्र
ततः।	४. उससे	भविष्यति ॥	१२. होगा

श्लोकार्थ—सुज्येष्ठ का पुत्र वसुमित्र और उसका भद्रक, उससे पुलिन्द होगा। उससे घोष और उससे वज्रमित्र पुत्र होगा ॥

अष्टदशः श्लोक

ततो भागवतस्तस्माद् देवभूतिरिति श्रुतः।
शुङ्गा दशैते भोक्ष्यन्ति भूमिं वर्षशताधिकम् ॥१८॥

पदच्छेद—

ततः भागवतः तस्मात् देवभूतिः इति श्रुतः ।
शुङ्गा दश एते भोक्ष्यन्ति भूमिम् वर्ष शतअधिकम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१. उससे	शुङ्गा	७. शुङ्गवंश के
भागवतः	२. भागवत उत्पन्न होगा	दशएते	८. ये दश नरपति
तस्मात्	३. उससे	भोक्ष्यन्ति	१२. उपभोग करेंगे
देवभूतिः	४. देवभूति	भूमिम्	११. पृथ्वी का
इति	५. इस नाम का	वर्षशत	९. सौ वर्षों से
श्रुतः।	६. प्रसिद्ध पुत्र होगा	अधिकम्॥	१०. अधिक समय तक

श्लोकार्थ—उससे भागवत उत्पन्न होगा, उससे देवभूति इस नाम का प्रसिद्ध पुत्र होगा। शुङ्गवंश के ये दश नरपति सौ वर्षों से अधिक समय तक पृथ्वी का उपभोग करेंगे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

ततः कण्वानियं भूमिर्यास्यत्यल्पगुणान् नृप ।
शुङ्गं हत्वा देवभूतिं कण्वोऽमात्यस्तु कामिनम् ॥१६॥

पदच्छेद —

ततः कण्वान् इयम् भूमिः यास्यति अल्प गुणान् नृप ।
शुङ्गम् हत्वा देव भूतिम् कण्वः अमात्यः तु कामिनम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	२.	तदनन्तर	शुङ्गम्	१०.	शुङ्गवंश के अन्तिम राजाको
कण्वान्	५.	कण्ववंशि राजाओं के हाथ में	हत्वा	१२.	मारकर (स्वयं राजा बनेगा
इयम् भूमिः	३.	यह पृथ्वी	देवभूतिम्	११.	देव भूति को
यास्यति	६.	चली जायेगी ।	कण्वः	७.	कण्ववंश का
अल्प गुणान्	४.	अल्प-गुणवाले (अपने पूर्वजों की अपेक्षा)	अमात्यःतु	८.	मन्त्री
नृप ।	१.	हे राजन् !	कामिनम् ॥	९.	लम्पट

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तदनन्तर यह पृथ्वी अल्प गुणवाले अपने पूर्वजों की अपेक्षा कण्ववंशि राजाओं के हाथ में चली जायेगी । कण्ववंश का मन्त्री लम्पट शुङ्गवंश के अन्तिम राजा को मार कर स्वयं राजा बनेगा ॥

विंशः श्लोकः

स्वयं करिष्यते राज्यं वसुदेवो महामतिः ।
तस्य पुत्रस्तु भूमित्रस्तस्य नारायणः सुतः ।
नारायणस्य भविता सुशर्मा नाम विश्रुतः ॥२०॥

पदच्छेद—

स्वयम् करिष्यते राज्यम् वसुदेवः महामतिः ।
तस्य पुत्रः तु भूमित्रः तस्य नारायणः सुतः ।
नारायणस्य भविता सुशर्मा नाम विश्रुतः ॥

शब्दार्थ—

स्वयम्	३.	स्वयम्	तस्य	८.	उसका
करिष्यते	५.	करेगा	नारायणः सुतः ।	९.	पुत्र नारायण
राज्यम्	४.	राज्य	नारायणस्य	१०.	नारायण का पुत्र
वसुदेवः	२.	वसुदेव देवभूतिको मारकर	भविता	१४.	होगा
महामतिः	१.	महा बुद्धिमान	सुशर्मा	११.	सुशर्मा
तस्य पुत्र	६.	उसका पुत्र	नाम	१२.	नाम से
तु भूमित्रः	७.	भूमित्र होगा ।	विश्रुतः ॥	१३.	प्रसिद्ध

श्लोकार्थ—महा बुद्धिमान वसुदेव देवभूति को मार कर स्वयं राज्य करेगा । उसका पुत्र भूमित्र होगा । उसका पुत्र नारायण, नारायण का पुत्र सुशर्मा नाम से प्रसिद्ध होगा ॥

एकविंशः श्लोकः

काण्वायना इमे भूमिं चत्वारिंशच्च पञ्च च ।
शतानि त्रीणि भोक्ष्यन्ति वर्षाणां च कलौ युगे ॥२१॥

पदच्छेद—

काण्वायना इमे भूमिम् चात्वारिंशत् च पञ्च च ।
शतानि त्रीणि भोक्ष्यन्ति वर्षाणाम् च कलौ युगे ॥

शब्दार्थ—

काण्वायन	२.	कण्व वंशी राजा	शतानि	४.	सौ
इमे	१.	ये	त्रीणि	३.	तीन
भूमिम्	११.	पृथ्वी का	भोक्ष्यन्ति	१२.	उपभोग करेंगे
चत्वारिंशत्	५.	चालीस	वर्षाणाम् च	८.	वर्षों तक
च पञ्च	७.	पांच (पैंतालीस)	कलौ	९.	कलि
च ।	६.	और	युग ॥	१०.	युग में

श्लोकार्थ—ये कण्व वंशी राजा तीन सौ चालीस और पांच (पैंतालीस) वर्षों तक कलियुग में पृथ्वी का उपभोग करेंगे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

हत्वा काण्वं सुशर्माणं तद्भृत्यो वृषलो बली ।
गां भोक्ष्यत्यन्ध्रजातीयः कश्चित् कालमसत्तमः ॥२२॥

पदच्छेद—

हत्वा काण्वम् सुशर्माणम् तत् भृत्यः बृषलः बली ।
गाम् भोक्ष्यति अन्ध्र जातीयः कश्चित् कालम् सत्तमः ॥

शब्दार्थ—

हत्वा	३.	मार कर	गाम्	११.	पृथ्वी का
काण्वम्	१.	कण्ववंशी	भोक्ष्यति	१२.	उपभोग करेगा
सुशर्माणम्	२.	सुशर्मा को	अन्ध्र जातीयः	५.	अन्ध्र जाति का
तद् भृत्य	४.	उसका सेवक	कश्चित्	६.	कोई,
बृषल	९.	शूद्र	कालम्	१०.	कुछ समय तक
बली ।	८.	बलवान्	सत्तमः ॥	७.	दुष्ट एवं

श्लोकार्थ—कण्ववंशी सुशर्मा को मारकर उसका सेवक आन्ध्र जाति का कोई दुष्ट एवं बलवान् शूद्र कुछ समय तक पृथ्वी का उपभोग करेगा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

कृष्णनामाथ तद्भ्राता भविता पृथिवीपतिः ।
श्रीशान्तकर्णस्तत्पुत्रः पौर्णमासस्तु तत्सुतः ॥२३॥

पदच्छेद—

कृष्ण नामा अथ तत् भ्राता भविता पृथिवी पतिः ।
श्रीशान्त कर्णः तत् पुत्रः पौर्णमासः तु तत् सुतः ॥

शब्दार्थ—

कृष्णनामा	२.	कृष्णानाम का	श्री शान्त कर्ण	६.	श्रीशान्त कर्ण
अथ	१.	तदनन्तर	तत्	७.	उसका
तत् भ्राता	३.	उसका भाई	पुत्रः	८.	पुत्र
भविताः	६.	होगा	पौर्णमासः	१२.	पौर्णमास होगा
पृथिवी	४.	पृथिवी का	तु तत्	१०.	और उसका
पतिः ।	५.	राजा	सुतः ॥	११.	पुत्र

श्लोकार्थ—तदनन्तर कृष्णनाम का उसका भाई पृथ्वी का राजा होगा। उसका पुत्र श्री शान्तकर्ण, और उसका पुत्र पौर्णमास होगा ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

लम्बोदरस्तु तत्पुत्रस्तस्माच्चिबिलको नृपः ।
मेघस्वातिश्चिबिलकादटमानस्तु तस्य च ॥२४॥

पदच्छेद—

लम्बोदरः तु तत् पुत्र तस्मात् चिबिलकः नृपः ।
मेघस्वातिः चिबिलकात् अटमानः तु तस्य च ॥

शब्दार्थ—

लम्बोदरः	३.	लम्बोदर	मेघस्वातिः	८.	मेघस्वाति
तु तत्	१.	उसका	चिबिलकात्	७.	चिबिलक से
पुत्रः	२.	पुत्र	अटमानः	११.	अटमान
तस्मात्	४.	और उससे	तु	१२.	होगा
चिबिलकः	६.	चिबिलक उत्पन्न होगा	तस्य	१०.	उसका पुत्र
नृपः ।	५.	राजा ।	च ॥	९.	और

श्लोकार्थ—उसका पुत्र लम्बोदर और उससे राजा चिबिलक उत्पन्न होगा। चिबिलक से मेघस्वाति और उसका पुत्र अटमान होगा ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

अनिष्टकर्मा ह्यालेयस्तलकस्तस्य चात्मजः ।
पुरीषभीरुस्तत्पुत्रस्ततो राजा सुनन्दनः ॥२५॥

पदच्छेद—

अनिष्टकर्मा हालेयः तलकः तस्य च आत्मजः ।
पुरीषभरुः तत् पुत्रः ततः राजा सुनन्दनः ॥

शब्दार्थ—

अनिष्टकर्मा	१. उस अटमान का (अनिष्ट कर्मा)	पुरीषभीरुः	९. पुरीषभीरु
हालेयः	२. उसका हालेय	तत्	७. उसका
तलकः	६. तलक होगा ।	पुत्रः	८ पुत्र
तस्य	४. उसका	तत्	१०. और उससे
च	३. और	राजा	११. राजा
आत्मजः ।	५. पुत्र	सुनन्दनः ॥	१२. सुनन्दन जन्म लेगा

श्लोकार्थ—उस अटमान का अनिष्ट कर्मा और उसका पुत्र हालेय और उसका पुत्र तलक होगा । उसका पुत्र पुरीषभीरु और उससे राजा सुनन्दन जन्म लेगा ॥

षट्विंशः श्लोकः

चकोरो बह्वो यत्र शिवस्वातिररिन्दमः ।
तस्यापि गोमतीपुत्र पुरीमान् भविता ततः ॥२६॥

पदच्छेद—

चकोरः बह्वो यत्र शिवस्वाति अरिन्दमः ।
तस्य अपि गोमती पुत्र पुरीमान् भविता ततः ॥

शब्दार्थ—

चकोरः	१. सुनन्द का पुत्र चकोर होगा	तस्यअपि	६. उसका भी
बह्वः	२. चकोर के आठ पुत्र होंगे (जो बहु कहलायेंगे)	गोमती पुत्र	७. गोमती पुत्र होगा
यत्र	३. जिनमें	पुरीमान्	९. पुरीमान्
शिवस्वाति	५. शिव स्वाति सबसे छोटा होगा	भविता	१०. होगा
अरिन्दमः ।	४. शत्रुदमनकारी	ततः ॥	८. उससे

श्लोकार्थ—सुनन्द का पुत्र चकोर होगा, चकोर के आठ पुत्र होंगे जो बहु कहलायेंगे, जिनमें शत्रु दमन कारी शिव स्वाति सबसे छोटा होगा । उसका भी गोमती नामक पुत्र होगा, उससे पुरीमान् होगा ॥

सप्तविंशः श्लोकः

मेदःशिराः शिवस्कन्दो यज्ञश्रीस्तत्सुतस्ततः ।
विजयस्तत्सुतो भाव्यश्चन्द्रविज्ञः सलोमधिः ॥२७॥

पदच्छेद—

मेदः शिराः शिवस्कन्दः यज्ञ श्रीःतत् सुतः ततः ।
विजयः तत् सुतः भाव्यः चन्द्र विज्ञः सलोमधिः ॥

शब्दार्थ—

मेदशिराः	१. पुरीमान का मेदशिरा	विजयः	६. विजय
शिवस्कन्दः	२. उसका शिवस्कन्द	तत्	७. उसका
यज्ञ श्रीः	६. यज्ञ श्रीः	सुतः	८. पुत्र
तत्	४. उसका	भाव्यः	१०. होगा (उसके पुत्र)
सुतः	५ पुत्र	चन्द्र विज्ञः	११. चन्द्र विज्ञ और
ततः ।	३. और	सलोमधिः ॥	१२. लोमधि होंगे

श्लोकार्थ—पुरीमान का मेदशिरा, उसका शिवस्कन् और उसका पुत्र यज्ञ श्री, उसका पुत्र विजय होगा । उसके पुत्र चन्द्र विज्ञ और लोसधि होंगे ॥

अष्टविंशः श्लोकः

एते त्रिंशन्नृपतयश्चत्वार्यब्दशतानि च ।
षट्पञ्चशच्च पृथिवीं भोक्ष्यन्ति कुरुनन्दन ॥२८॥

पदच्छेद—

एते त्रिशत् नृपतयः चत्वारि अब्द शतानि च ।
षट् पञ्चाशत् च पृथिवीम् भोक्ष्यन्ति कुरु नन्दन ॥

शब्दार्थ—

एते	३. ये	षट्	८. छः
त्रिंशत्	४. तोस	पञ्चाशत	६. (छप्पन)
नृपतयः	५. राजा	च	१. और
चत्वारि	६. चार	पृथिवीम्	११. पृथिवो का
अब्द	७. छप्पन वर्ष तक	भोक्ष्यन्ति	१२. उपभोग करेंगे
शतानि च ।	१०. सो	कुरुनन्दन ॥	२. हे परीक्षित !

श्लोकार्थ—और हे परीक्षित ! ये तीस राजा चार सो छप्पन वर्ष तक पृथिवी का उपभोग करेंगे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

सप्ताभीरा आवभृत्या दश गर्दभिनो नृपाः ।
कङ्का षोडश भूपाला भविष्यन्त्यतिलोलुपाः ॥२९॥

पदच्छेद—

सप्त आभीराः आवभृत्या दश गर्दभिनः नृपाः ।
कङ्का षोडश भूपालाः भविष्यन्ति अतिलोलुपाः ॥

शब्दार्थ—

सप्त	२.	सात	कङ्का	८.	कङ्क
आभीराः	३.	आभीर	षोडश	७.	सोलह
आवभृत्या	१.	अवभृति नगरी के	भूपालाः	१०.	राजा
दश	४.	दश	भविष्यन्ति	११.	होंगे
गर्दभिनः	५.	गर्दभी	अतिलोलुपाः ॥	९.	अत्यन्त लोभी
नृपाः ।	६.	राजा होंगे और			

श्लोकार्थ—अवभृति नगरी के सात आभीर दस गर्दभी राजा होंगे, और सोलह कङ्क अत्यन्त लोभी राजा होंगे ॥

त्रिंशः श्लोकः

ततोऽष्टौ यवना भाव्याश्चतुर्दश तुरुष्ककाः ।
भूयो दश गुरुण्डाश्च मौना एकादशैव तु ॥३०॥

पदच्छेद—

ततः अष्टौ यवनाः भाव्या चतुर्दशः तुरुष्ककाः ।
भूयः दश गुरुण्डाः च मौनाः एकादश एव तु ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	भूयः	७.	फिर
अष्टौ	२.	आठ	दश	८.	दस
यवनाः	३.	यवन	गुरुण्डाः	९.	गुरुण्ड
भाव्याः	६.	होंगे	च	१०.	और
चतुर्दशः	४.	और चौदह	मौनाः	१२.	मौन होंगे
तुरुष्ककाः ।	५.	तुरुष्क	एकादशएवतु ॥	११.	ग्यारह राजा

श्लोकार्थ—तदनन्तर आठ यवन और चौदह तुरुष्क होंगे, फिर दस गुरुण्ड और ग्यारह राजा मौन होंगे ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

एते भोक्ष्यन्ति पृथिवीं दशवर्षशतानि च ।
नवाधिकां च नवतिं मौना एकादश क्षितिम् ॥३१॥

पदच्छेद—

एते भोक्ष्यन्ति पृथिवीम् दश वर्ष शतानि च ।
नव अधिकाम् च नवतिम् मौना एकादशः क्षितिम् ॥

शब्दार्थ—

एते	१.	ये राजा	नव अधिकाम्	५.	नौ अधिक
भोक्ष्यन्ति	८.	उपभोग करेंगे	च नवतिम्	६.	नब्बे (निन्यान्वे) वर्षों तक
पृथ्वीम्	७.	पृथ्वी का	मौनाः	१०.	मौन नरेश (तीन सौ वर्षों तक)
दश	२.	दस	एकादश	९.	ग्यारह
वर्ष शतानि	३.	सौ वर्षों (१००) तक	क्षितिम् ॥	११.	पृथ्वी का उपभोग करेंगे
च ।	४.	और			

श्लोकार्थ—ये राजा दस सौ वर्षों तक अथवा एक हजार निन्यानवे वर्षों तक पृथ्वी का उपभोग करेंगे । ग्यारह मौन नरेश तीन सौ वर्षों तक पृथ्वी का उपभोग करेंगे ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

भोक्ष्यन्त्यब्दशतान्यङ्ग त्रीणि तैः संस्थिते ततः ।
किलकिलायां नृपतयो भूतनन्दोऽथ वङ्गिरिः ॥३२॥

पदच्छेद—

भोक्ष्यन्ति अब्द शतानि अङ्ग त्रीणि तैः संस्थिते ततः ।
किल किलायाम् नृपतयः भूत नन्दः अथ वङ्गिरिः ॥

शब्दार्थ

भोक्ष्यन्ति	४.	उपभोग करेंगे	किलकिलायाम	७	किल-किला नगरी में
अब्द शतानि	३.	सौ वर्षों तक पृथ्वी का	नृप	११.	राजा
अङ्ग	१.	हे परीक्षित ! (११ मौन राजा)	तयः	१२.	होंगे
			भूतनन्दः	८.	भूत नन्द
त्रीणि	२.	तीन			
तैःसंस्थिते	५.	उनके समाप्त हो जाने के	अथ	९.	और उससे
ततः ।	६.	पश्चात्	वङ्गिरि ॥	१०.	वङ्गिरि

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! तीन सौ वर्षों तक पृथ्वी का ग्यारह मौन राजा उपभोग करेंगे । उसके समाप्त हो जाने के पश्चात् किल-किलानगरी में भूतनन्द और उससे वङ्गिरि राजा होंगे ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

शिशुनन्दिश्च तद्भ्राता यशोनन्दिः प्रवीरकाः ।
इत्येते वै वर्षशतं भविष्यन्त्यधिकानि षट् ॥३३॥

पदच्छेद—

शिशुनन्दिः च तत् भ्राता यशोनन्दिः प्रवीरकाः ।
इति एते वै वर्षशतम् भविष्यन्ति अधिकानि षट् ॥

शब्दार्थ—

शिशुनन्दिः	२.	शिशुनन्दि	इति	८.	इस प्रकार
च	३.	और	एते वै	७.	ये सब
तत्	१.	उस (वंगिरि का)	वर्ष शतम्	९.	एक सौ वर्ष
भ्राता	४.	भाई	भविष्यन्ति	१२.	करेंगे
यशोनन्दिः	५.	यशोनन्दि और	अधिकानि	११.	वर्षों तक राज्य
प्रवीरकाः ।	६.	प्रवीरक	षट् ॥	१०.	छः

श्लोकार्थ—उस वंगिरि का शिशुनन्दि और भाई यशोनन्दि और प्रवीरक ये सब इस प्रकार एक सौ छः वर्षों तक राज्य करेंगे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

तेषां त्रयोदश सुता भवितारश्च वाह्लिकाः ।
पुष्पमित्रोऽथ राजन्यो दुर्मित्रोऽस्य तथैव च ॥३४॥

पदच्छेद—

तेषाम् त्रयोदश सुता भवितारः च वाह्लिकाः ।
पुष्य मित्रः अथ राजन्यः दुर्मित्र अस्य तथा एव च ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	२.	उनके	पुष्पमित्रः	८.	पुष्पमित्र नामक
त्रयोदश	३.	तेरह	अथ	७.	उसके बाद
सुताः	४.	पुत्र	राजन्यः	९.	क्षत्रिय
भवितारः	५.	होंगे	दुर्मित्र	१२.	दुर्मित्र (राजा होगा)
च	१.	और	अस्य	११.	उसका पुत्र
वाह्लिकाः ।	६.	वे वाहिलक कहलायेंगे	तथा एव च ॥	१०.	और

श्लोकार्थ—और उनके तेरह पुत्र होंगे, वे वाहिलक कहलायेंगे । उसके बाद पुष्पमित्र नामक क्षत्रिय और उसका पुत्र दुर्मित्र राजा होगा ।

—९०—

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

एककाला इमे भूपाः सप्तान्ध्राः सप्त कोसलाः ।
विदूरपतयो भाव्याः निषधास्तत एव हि ॥३५॥

पदच्छेद—

एक कालाः इमे भूपाः सप्त अन्ध्राः सप्त कोसलाः ।
विदूर पतयः भाव्याः निषधाः ततः एव हि ॥

शब्दार्थ—

एक कालाः	२.	एक ही समय राज्य करेंगे	विदूर	७.	कुछ विदूर देश के तथा
इमे भूपाः	१.	ये नरपति गण	पतयः	११.	अधिपति
सप्त	३.	सात	भाव्याः	१२.	होंगे
आन्ध्राः	४.	आन्ध्र देश के	निषधाः	१०.	निषध देश के
सप्त	५.	सात	ततः	८.	उनमें से
कोसलाः ।	६.	कोसल देश के और	एव हि ॥	९.	कुछ

श्लोकार्थ—ये नरपति गण एक ही समय राज्य करेंगे, सात आन्ध्र देश के सात कोसल देश के और कुछ विदूर देश के तथा उनमें से कुछ निषध देश के अधिपति होंगे ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

मागधानां तु भविता विश्वस्फूर्जिः पुरञ्जयः ।
करिष्यत्यपरो वर्णान् पुलिन्दयदुमद्रकान् ॥३६॥

पदच्छेद—

मागधानाम् तु भविता विश्वस्फूर्जिः पुरञ्जयः ।
करिष्यति अपरः वर्णान् पुलिन्द यदु भद्रकान् ॥

शब्दार्थ—

मागधानाम्	१.	मगधवासियों का राजा	अपर	४.	दूसरा
तु भविता	३.	होगा जो	वर्णान्	६.	वह (ब्राह्मणादि) वर्णों को
विश्वर फूर्जिः	२.	विश्वर्फूर्जि	पुलिन्द	९.	पुलिन्द जाति का मलेच्छ
पुरञ्जयः	५.	पुरञ्जय (कहलायेगा)	यदु	७.	यदु
करिष्यति	१०.	कर देगा	भद्रकान् ॥	८.	भद्र

श्लोकार्थ—मगधवासियों का राजा विश्वर्फूर्जि दूसरा पुरञ्जय कहलायेगा । वह ब्राह्मणादि उच्च वर्णों को यदु-भद्र-पुलिन्द जाति का मलेच्छ कर देगा ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

प्रजाश्चाब्रह्मभूयिष्ठाः स्थापयिष्यति दुर्मतिः ।
वीर्यवान् क्षत्रमुत्साद्य पद्मवत्यां स वै पुरि ।
अनुगङ्गामाप्रयागं गुप्तां भोक्ष्यति मेदिनीम् ॥३७॥

पदच्छेद—
प्रजाः च अब्रह्म भूयिष्ठाः स्थापयिष्यति दुर्मति ।
वीर्यवान् क्षत्रम् उत्साद्य पद्मवत्याम् स वै पुरि ॥
अनुगङ्गाम् अप्रयागम् गुप्तान् भोक्ष्यति मेदिनीम् ॥

शब्दार्थ—

प्रजाः च	८. जनता की		उत्साद्य	५. उजाड़कर	
अब्रह्म	७. शूद्र		पद्मवत्याम्	१०. पद्मावती नामक	
भूपिष्ठाः	६. प्रायः		स:वै	१. वह	
स्थापयिष्यति	९ स्थापना करेगा (और)		पुरि ।	११. पुरी को राजधानी बनाकर	
दुर्मतिः ।	३. दुष्ट बुद्धि (पुरञ्जय)		अनुगङ्गाम्	१२. हरिद्वार से लेकर	
वीर्यवान्	२. बली एवम्		अप्रयागम्	१३. प्रयाग तक	
क्षत्रम्	४. छत्रियों को		गुप्तान्	१४. सुरक्षित	
			भोक्ष्यति	१५. पृथ्वी का उपभोग करेगा	
			मेदिनीम् ॥		

श्लोकार्थ—वह बली एवं दुष्ट बुद्धि पुरञ्जय क्षत्रियों को उजाड़कर प्रायः शूद्र जनता की स्थापना करेगा । और पद्मावती नामक पुरी को राजधानी बनाकर हरिद्वार से लेकर प्रयाग तक सुरक्षित पृथ्वी का उपभोग करेगा ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

सौराष्ट्रावन्त्याभीराश्च शूरा अर्बुदमालवाः ।
व्रात्या द्विजा भविष्यन्ति शूद्रप्राया जनाधिपाः ॥३८॥

पदच्छेद –
सौराष्ट्र आवन्त्य आभीराः च शूरा अर्बुद मालवाः ।
व्रात्याः द्विजाः भविष्यति शूद्र प्रायाः जना धिपाः ॥

शब्दार्थ—

सौराष्ट्र	१. सौराष्ट्र	व्रात्या	९. संस्कार शून्य
आवन्त्य	२. अवन्ती	द्विजाः	८. ब्राह्मण
आभीराः	३. आभीर	भविष्यन्ति	१०. हो जायेंगे (तथा)
च	६, और	शूद्र	१३. शूद्र
शूराः	४. शूर	प्रायाः	१४. तुल्य (हो जायेंगे)
अर्बुद	५. अर्बुद	जन	१२. लोग भी
मालवाः ।	७. मालव देश के	आधिपाः ॥	११. राजा

श्लोकार्थ—सौराष्ट्र, अवन्ती, आभीर, शूर, अर्बुद और मालव देश के ब्राह्मण संस्कार शून्य हो जायेंगे । तथा राजालोग भी शूद्र तुल्य हो जायेंगे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

सिन्धोस्तटं चन्द्रभागां कौन्तीं काश्मीरमण्डलम् ।
भोक्ष्यन्ति शूद्रा व्रात्याद्या म्लेच्छाश्चाब्रह्मवर्चसः ॥३९॥

पदच्छेद—

सिन्धोः तटम् चन्द्र भागाम् कौन्तीम् काश्मीर मण्डलम् ।
भोक्ष्यन्ति शूद्रा व्रात्य आद्याः मलेच्छाः च अब्रह्म वर्चसः ॥

शब्दार्थ—

सिन्धोः	१.	सिन्धु	भोक्ष्यन्ति	१२.	शासन हो जायेगा
तटम्	४.	तट	शूद्रा	७.	शूद्रों तथा
चन्द्र भागाम्	२.	चन्द्र भागा	व्रात्याआद्याः	१०.	व्रात्यादि ब्राह्मणों और
कौन्तीम्	३.	कौन्ती पुरी का	मलेच्छाः च	११.	मलेच्छों का
काश्मीर	५.	और काश्मीर	अब्रह्म	८.	ब्रह्म
मण्डलम् ।	६.	मण्डल पर	वर्चसः ॥	९.	तेज से हीन

श्लोकार्थ—सिन्धु, चन्द्रभागा, कौन्ती पुरी का तट और काश्मीर मण्डल पर शूद्रों तथा ब्रह्म तेज से हीन व्रात्यादि ब्राह्मणों और मलेच्छों का शासन हो जायेगा ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

तुल्यकाला इमे राजन् म्लेच्छप्रायाश्च भूभृतः ।
एतेऽधर्मानृतपराः फल्गुदास्तीव्रमन्यवः ॥४०॥

पदच्छेद—

तुल्य कालाः इमे राजन् मलेच्छ प्रायाः च भूभृतः ।
एते अधर्म अनृतपराः फल्गुदाः तीव्र मन्यवः ॥

शब्दार्थ—

तुल्य कालाः	६.	एक ही समय राज्य करेंगे	एते	७.	ये सब
इमे	२.	ये सब	अधर्म	८.	अधर्मी और
राजन्	१.	हे राजन् ।	अनृतपराः	९.	असत्यपरायण
मलेच्छ	४.	मलेच्छ	फल्गुदाः	१०.	स्वल्पदानी और
प्रायाः च	३.	प्रायः	तीव्र	११.	अत्यन्त
भूभृतः ।	५.	राजा लोग	मन्यवः ॥	१२.	क्रोधी होंगे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! ये सब प्रायः मलेच्छ राजा लोग एक ही समय राज्य करेंगे । ये सब अधर्मी और असत्य परायण स्वल्पदानी और अत्यन्त क्रोधी होंगे ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

स्त्रीबालगोद्विजघ्नाश्च परदारधनाहृताः ।
उदितास्तमितप्राया अल्पसत्त्वाल्पकायुषः ॥४१॥

पदच्छेद—

स्त्रीबालगो द्विजघ्नाः च परदार धना आहृताः ।
उदित अस्तमित प्राया अल्प सत्त्व अल्पक आयुषः ॥

शब्दार्थ—

स्त्री	१.	ये लोग स्त्रियों	उदित	७.	क्षण में बढ़ने वाले तथा क्षण में
बालगो	२.	बच्चों-गौओं	अस्तमितप्राया:	८.	घटने वाले
द्विजघ्ना:	४.	ब्राह्मणों को मारने वाले	अल्प	९.	थोड़ी
च	३.	और	सत्त्व	१०.	शक्ति वाले
परदारधन	५.	दूसरे की स्त्री और धन	अल्पक	११.	तथा कम
आहृता: ।	६.	हरने के लिये उत्सुक	आयुषः ॥	१२.	आयु वाले होंगे

श्लोकार्थ—ये लोग स्त्रियों, बच्चों गौओं और ब्राह्मणों को मारने वाले, दूसरे की स्त्री और धन हरने के लिये उत्सुक क्षण में बढ़ने वाले तथा क्षण में घटने वाले, थोड़ी शक्ति वाले, तथा कम आयु वाले होंगे ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

असंस्कृताः क्रियाहीना रजसा तमसाऽऽवृताः ।
प्राजास्ते भक्षयिष्यन्ति म्लेच्छाः राजन्यरूपिणः ॥४२॥

पदच्छेद—

असंस्कृताः क्रियाहीना रजसा तमसा आवृताः ।
प्रजाः ते भक्षयिष्यन्ति मलेच्छाः राजन्य रूपिणः ॥

शब्दार्थ—

असंस्कृता	१.	संस्कार हीन	प्रजा	११.	प्रजाओं का
क्रिया	२.	कर्तव्य	ते	१०.	वे लोग
हीना	३.	शून्य	भक्षयिष्यन्ति	१२.	शोषण करेंगे
रजसा	४.	रजोगुण और	मलेच्छाः	९.	मलेच्छ
तमसा	५.	तमोगुण से	राजन्य	७.	राजा के
आवृताः ।	६.	आवृत (तथा)	रूपिणः ॥	८.	वेश में

श्लोकार्थ—संस्कार हीन कर्तव्य शून्य रजोगुण और तमोगुण से आवृत तथा राजा के वेश में मलेच्छ वे लोग राजाओं का शोषण करेंगे ॥

त्रयचत्वारिंशः श्लोकः

तन्नाथास्ते जनपदास्तच्छीलाचारवादिनः ।
अन्योन्यतो राजभिश्च क्षयं यास्यन्ति पीडिताः ॥४३॥

पदच्छेद—

तत् नाथाः ते जनपदाः तत् शीला आचार वादिनः ।
अन्यो अन्यतः राजभिः च क्षयम् यास्यन्ति पीडिताः ॥

शब्दार्थ—

तत्	१. वे ही जिनके	अन्यो-	८. परस्पर
नाथाः	२. स्वामी होंगे	अन्यतः	९. परस्पर
तेजनपदाः	३. जनपदवासी लोग	राजभिः च	७. वे राजाओं के द्वारा तथा
तत्	४. उन्हीं की तरह	क्षयम्	११. क्षय को
शील आचार	५. स्वभाव आचरण और	यास्यन्ति	१२. प्राप्त हो जायेंगे
वादिनः ।	६. भाषण करने वाले हो जायेंगे	पीडिताः ॥	१०. पीड़ित होकर

श्लोकार्थ—वे ही जिनके स्वामी होंगे, जनपद वासी लोग उन्हीं की तरह स्वभाव-आचरण और भाषण करने वाले हो जायेंगे । वे राजाओं के द्वारा तथा परस्पर पीड़ित होकर क्षय को प्राप्त हो जायेंगे ।

श्रीमद्भागवत महापुराणम् पारमहंस्यां संहितायां
द्वादश स्कन्धे प्रथमः अध्यायः ॥१॥

द्वादशः स्कन्धः
द्वितीयः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्री शुक उवाच—ततश्चानुदिनं धर्मः सत्यं शौचं क्षमा दया ।
कालेन बलिना राजन् नङ्क्ष्यत्यायुर्बलं स्मृतिः ॥१॥

पदच्छेद—

ततः च अनुदिनम् धर्मः सत्यम् शौचम् क्षमा दया ।
कालेन बलिना राजन् नङ्क्ष्यन्ति आयुः बलम् स्मृतिः ॥

शब्दार्थ—

ततः च	१.	तदनन्तर	कालेन	४.	समय के कारण
अनुदिनम्	५.	दिन अनुदिन प्रजा का	बलिना	३.	बलवान्
धर्मः	६.	धर्म	राजन्	२.	हे राजन् !
सत्यम्	७.	सत्य	नङ्क्ष्यन्ति	१२.	नष्ट होती जायेगी
शौचम्	८.	पवित्रता	आयुः बलम्	१०.	आयु शक्ति
क्षमा दया ।	९	क्षमा-दया	स्मृतिः ॥	११.	और स्मृति

श्लोकार्थ—तदनन्तर हे राजन् ! बलवान् समय के कारण दिन अनुदिन प्रजा का धर्म सत्य, पवित्रता, क्षमा, दया, आयु, शक्ति ओ स्मृति नष्ट होती जायेगी ॥

द्वितीयः श्लोकः

वित्तमेव कलौ नृणां जन्माचारगुणोदयः ।
धर्मन्यायव्यवस्थायां कारणं बलमेव हि ॥२॥

पदच्छेद—

वित्तम् एव कलौ नृणाम् जन्म आचार गुण आदयः ।
धर्म न्याय व्यवस्थायाम् कारणम् बलम् एव हि ॥

शब्दार्थ—

वित्तम्	२.	धन	धर्म न्याय	७.	धर्म और न्याय की
एव	३.	ही	व्यवस्थायाम	८.	व्यवस्था में
कलौ	१.	कलियुग में	कारणम्	१२.	कारण है
नृणाम्	४.	मनुष्यों की	बलम्	१०.	बल
जन्म आचर	५.	कुलीनता आचरण और	एव	११.	ही
गुण आदयः ।	६.	गुणों के उदय का प्रमाण होगा	हि ॥	९.	निश्चित रूप से

श्लोकार्थ—कलियुग में धन ही मनुष्यों को कुलीनता-आचरण और गुणों के उदय का प्रमाण होगा । धर्म और न्याय की व्यवस्था में निश्चित रूप से बल ही कारण है ॥

तृतीयः श्लोकः

दाम्पत्येऽभिरुचिर्हेतुर्मायैव व्यावहारिके ।
स्त्रीत्वे पुंस्त्वे च हि रतिर्विप्रत्वे सूत्रमेव हि ॥३॥

पदच्छेद—

दाम्पत्ये अभिरुचिः हेतु माया एव व्यावहारिके ।
स्त्रीत्वे पुंस्त्वे च हि रतिः विप्रत्वे सूत्रम् एव हि ॥

शब्दार्थ—

दाम्पत्ये	१. विवाह सम्बन्ध में	स्त्रीत्वे	७. स्त्री और
अभिरुचि,	२. (वर-कन्या की) पसन्द ही	पुंस्त्वे	८. पुरुष की श्रेष्ठता
हेतुः	३. कारण होगी	च हिरतिः	९. रति ही होगी
माया	५. छल-कपट	विप्रत्वे	१०. ब्राह्मण का चिह्न
एव	६. ही कारण होगा	सूत्रम्	११. यज्ञोपवीत
व्यावहारिके ।	४. व्यवहार की निपुणता में	एवहि ॥	१२. मात्र होगा

श्लोकार्थ—विवाह सम्बन्ध में वर-कन्या की पसन्द ही कारण होगी । व्यवहार की निपुणता छल-कपट ही कारण होगा । स्त्री और पुरुष को श्रेष्ठता रति ही होगी । ब्राह्मण का चिह्न यज्ञोपवीत मात्र होगा ॥

चतुर्थः श्लोकः

लिङ्गमेवाश्रमख्यातावन्योन्यापत्तिकारणम् ।
अवृत्या न्यायदौर्बल्यं पाण्डित्ये चापलं वचः ॥४॥

पदच्छेद—

लिङ्गम् एव आश्रम ख्यातौ अन्योन्य आपत्ति कारणम् ।
आवृत्या न्याय दौर्बल्यम् पाण्डित्ये चापलम् वचः ॥

शब्दार्थ—

लिङ्गम्	१. वस्त्र-दण्ड-कमण्डल आदि	आवृत्या	८. धन खर्च न करने से
एव	२. ही	न्याय	९. न्याय
आश्रम	३. आश्रम की	दौर्बल्यम्	१०. नहीं मिल सकेगा
ख्यातौ	४. पहिचान होगी	पाण्डित्ये	१३. पाण्डित्य का बोधक होगा
अन्योन्य	५. एक दूसरे का चिह्न	चापलम्	११. चपलः
आपत्ति	६. स्वीकार करना ही	वचः ॥	१२. वचन बोलना ही
कारणम् ।	७. आश्रम का स्वरूप होगा		

श्लोकार्थ—वस्त्र-दण्ड-कमण्डल आदि चिह्न ही आश्रम की पहिचान होगी । एक दूसरे का चिह्न स्वीकार करना ही आश्रम का स्वरूप होगा । धन-खर्च न करने से न्याय नहीं मिल सकेगा । चपल वचन बोलना ही पाण्डित्य का बोधक होगा ॥

पञ्चमः श्लोकः

अनाढ्यतैवासाधुत्वे साधुत्वे दम्भ एव तु ।
स्वीकार एव चोद्वाहे स्नानमेव प्रसाधनम् ॥५॥

पदच्छेद—

अनाढ्यता एव असाधुत्वे साधुत्वे दम्भ एव तु ।
स्वीकार एव च उद्वाहे स्नानम् एव प्रसाधनम् ॥

शब्दार्थ—

अनाढ्यता	१. निर्धनता	स्वीकार	८. पारस्परिक स्वीकृति
एव	२. ही	एव च	९. ही पर्याप्त होगी
असाधुत्वे	३. असाधु होने की पहिचान होगी	उद्वाहे	७. विवाह में
साधुत्वे	४. साधु होने में	स्नानम्	१२. स्नान समझा जायेगा
दम्भः	५. दम्भ	एव	११. ही
एव ते ।	६. ही कारण होगा	प्रसाधनम् ॥	१०. शृङ्गार कर लेना

श्लोकार्थ—निर्धनता ही असाधु होने की पहिचान होगी, साधु होने में दम्भ ही कारण होगा। विवाह में पारस्परिक स्वीकृति ही पर्याप्त होगी। शृङ्गार कर लेना ही स्नान समझा जायेगा॥

षष्ठः श्लोकः

दूरे वार्ययनं तीर्थं लावण्यं केशधारणम् ।
उदरम्भरता स्वार्थः सत्यत्वे धार्ष्ट्यमेव हि ॥६॥

पदच्छेद—

दूरे वारि अयनम् तीर्थम् लावण्यम् केशधारणम् ।
उदरम्भरता स्वार्थः सत्यत्वेधार्ष्ट्यम् एव ही ॥

शब्दार्थ—

दूरे	१. दूर में स्थित	उदरम्भरता	७. अपना पेट भर लेना
वारि अयनम्	२. जल संस्थान (तालाबादि)	स्वार्थः	८. पुरुषार्थ कह लायेगा
तीर्थम्	३. तीर्थ कहलायेगा	सत्यत्वे	११. सत्यता होगी
लावण्यम्	६. सौन्दर्य (समझा जायेगा)	धार्ष्ट्यम्	९. ढिठाई से बोलना
केश	४. बाल	एव ही ॥	१०. ही
धारणम् ।	५. धारण करना		

श्लोकार्थ—दूर में स्थित जल संस्थान तालाबादि तीर्थ कहलायेगा, बाल धारण करना सौन्दर्य समझा जायेगा। अपना पेट भर लेना पुरुषार्थ कहलायेगा। ढिठाई से बोलना ही सत्यता होगी॥

सप्तमः श्लोकः

दाक्ष्यं कुटुम्बभरणं यशोऽर्थे धर्मसेवनम् ।
एवं प्रजाभिर्दुष्टाभिराकीर्णे क्षितिमण्डले ॥७॥

पदच्छेद—

दाक्ष्यम् कुटुम्बभरणम् यशः अर्थेधर्म सेवनम् ।
एवम् प्रजाभिः दुष्टाभिः आकीर्णे क्षितिमण्डले ॥

शब्दार्थ—

दाक्ष्यम्	३.	दक्षता का लक्षण होगा	एवम्	७.	इस प्रकार
कुटुम्ब	१.	कुटुम्ब का	प्रजाभिः	११.	प्रजाओं से
भरणम्	२.	भरण-पोषण कर लेना	दुष्टाभिः	१०.	दुष्ट
यशः	४.	यश के	आकीर्णे	१२.	व्याप्त हो जायेगा
अर्थे	५.	लिये	क्षिति	८.	पृथ्वी
धर्मसेवनम् ।	६.	धर्म का सेवन किया जायेगा	मण्डले ॥	९.	मण्डल

श्लोकार्थ—कुटुम्ब का भरण-पोषण कर लेना दक्षता का लक्षण होगा। यश के लिये धर्म का सेवन किया जायेगा। इस प्रकार पृथ्वी मण्डल दुष्ट प्रजाओं से व्याप्त हो जायेगा ॥

अष्टमः श्लोकः

ब्रह्मविट्क्षत्रशूद्राणां यो बली भविता नृपः ।
प्रजा हि लुब्धैः राजन्यैर्निर्घृणैर्दस्युधर्मभिः ॥८॥

पदच्छेद—

ब्रह्मविट् क्षत्र, शूद्राणाम् यः बली भविता नृपः ।
प्रजा हि लुब्धैः राजन्यैः निर्घृणैः दस्यु धर्मभिः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मविट्	१.	ब्राह्मण, वैश्य	प्रजा हि	७.	प्रजायें
क्षत्र	२.	क्षत्रिय और	लुब्धैः	८.	लोभी
शूद्राणाम्	३.	शूद्रों में	राजन्यैः	१२.	राजाओं से त्रस्त होगी
यः बली	४.	जो बलवान होगा	निर्घृणैः	९.	निर्दय और
भविता	६.	हो जायेगा	दस्यु	१०.	लुटेरों के
नृपः ।	५.	वही राजा	धर्मभिः ॥	११.	धर्म वाले

श्लोकार्थ—ब्राह्मण, वैश्य, क्षत्रिय और शूद्रों में जो बलवान होगा वही राजा हो जायेगा। प्रजायें, लोभी, निर्दय और लुटेरों के धर्म वाले राजाओं से त्रस्त होगी ॥

नवमः श्लोकः

आच्छिन्नदारद्रविणा यास्यन्ति गिरिकाननम् ।
शाकमूलामिषक्षौद्रफलपुष्पाष्टिभोजनाः ॥६॥

पदच्छेद—

आच्छिन्न दार द्रविणाः यास्यन्ति गिरि काननम् ।
शाकमूल आमिष क्षौद्र फल पुष्प अष्टि भोजनाः ॥

शब्दार्थ—

आच्छिन्न	३.	छिन जाने पर	शाक	७.	शाक-कन्द
दार	१.	पत्नी और	मूल	८.	मूल
द्रविणाः	२.	धन के	आमिष	६.	मांस
यास्यन्ति	६.	चली जायेंगी और	क्षौद्रफल	१०.	मधु-फल
गिरि	४.	प्रजायें पहाड़ों और	पुष्पअष्टि	११.	फूल-बीज-गुठली का
काननम् ।	५.	जङ्गलों में	भोजनाः ॥	१२.	भोजन करेगी

श्लोकार्थ—पत्नी और धन के छिन जाने पर प्रजायें पहाड़ों और जङ्गलों में चली जायेगी । और शाक-कन्द-मूल-मांस-मधु-फल-फूल-बीज और गुठली का भोजन करेगी ।

दशमः श्लोकः

अनावृष्टया विनङ्क्ष्यन्ति दुर्भिक्षकरपीडिताः ।
शीतवातातपप्रावृड्हिमैरन्योन्यतः प्रजाः ॥१०॥

पदच्छेद—

अनावृष्टया विनङ्क्षयन्ति दुर्भिक्षकर पीड़िताः ।
शीत वातातप प्रावृड् हि मैंः अन्योन्यतः प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

अनावृष्टया	१.	वर्षा का अभाव	शीत	४.	सर्दी
विनङ्क्षयन्ति	१०.	नष्ट हो जायेंगी	वातातप	५.	आंधी-लू
दुर्भिक्ष	२.	दुर्भिक्ष	प्रावृड्हिमैः	६.	वर्षा-पाला
कर	३.	कर भार	अन्योन्यतः	७.	तथा आपस के संघर्ष से
पीड़िताः ।	६.	पीडित होकर	प्रजाः ॥	८.	प्रजायें

श्लोकार्थ—वर्षा का अभाव कर भार दुर्भिक्ष कर भार, सर्दी, आंधी, लू, वर्षा-पाला तथा आपस के संघर्ष से प्रजायें पीडित होकर नष्ट हो जायेंगी ॥

एकादशः श्लोकः

क्षुत्तृड्भ्यां व्याधिभिश्चैव सन्तप्स्यन्ते च चिन्तया ।
त्रिंशद्विंशतिवर्षाणि परमायुः कलौ नृणाम् ॥११॥

पदच्छेद—

क्षुत्तृड्भ्याम् व्याधिभिः च एव सन्तप्स्यन्ते च चिन्तया ।
त्रिंशत् विंशति वर्षाणि परमाणुः कलौ नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

क्षुत्तृड्भ्याम्	१.	लोग भूख-प्यास	त्रिंशत्	११.	तीस
व्याधिभिः	२.	रोग	विंशति	१०.	बीस या
च एव	५.	भी	वर्षाणि	१२.	वर्षों की होगी
सन्तप्स्यन्ते	६.	दुःखी होंगे	परमायुः	९.	परमायु
च	३.	और	कलौ	७.	कलियुग में
चिन्तया ।	४.	चिन्ता से	नृणाम् ।	८.	मनुष्यों को

श्लोकार्थ—लोग भूख-प्यास-रोग और चिन्ता से भी दुःखी होंगें । कलियुग में मनुष्यों की परमायु बीस या तीस वर्षो की होगी ।।

द्वाविंशः श्लोकः

क्षीयमाणेषु देहेषु देहिना कलिदोषतः ।
वर्णाश्रमवतां धर्मे नष्टे वेदपथे नृणाम् ॥१२॥

पदच्छेद—

क्षीयमाणेषु देहेषु देहिनाम् कलिदोषतः ।
वर्णाश्रमवताम् धर्मे नष्टे वेदपथे नृणाम् ॥

शब्दार्थ—

क्षीयमाणेषु	५.	क्षीण होने लगेंगे	वर्णाश्रमवताम्	६.	वर्ण और आश्रम वासी
देहेषु	४.	शरीर	धर्मे	८.	धर्म तथा
तेहिनाम्	३.	प्राणियों के	नष्टे	१०.	नष्ट हो जायेंगे
कलि	१.	कलिकाल के	वेदपथे	९.	वेद मार्ग
दोषतः ।	२.	दोष से	नृणाम् ।।	७.	मनुष्यों का

श्लोकार्थ—कलिकाल के दाष से प्राणियों के शरीर क्षीण होने लगेंगे । वर्ण और आश्रम वासी मनुष्यों का धर्म तथा वेद मार्ग नष्ट हो जायेंगे ।।

त्रयोदशः श्लोकः

पाखण्डप्रचुरे धर्मे दस्युप्रायेषु राजसु ।
चौर्यानृतवृथाहिंसानानावृत्तिषु वै नृषु ॥१३॥

पदच्छेद—

पाखण्ड प्रचुरे धर्मे दस्यु प्रायेषु राजसु ।
चौर्य अनृत वृथा हिंसा नाना वृत्तिषु वैनृषु ॥

शब्दार्थ—

पाखण्ड	२.	पाखण्ड की	चौर्यअनृत	८.	चोरी, झूठ
प्रचुरे	३.	प्रचुरता होगी	वृथा	९.	निरपराध
धर्मे	१.	धर्म में	हिंसा	१०.	हिंसा और
दस्यु	५.	चोर डाकू के	नाना	११.	नाना प्रकार के
प्रायेषु	६.	समान हो जायेंगे	वृत्तिषु	१२.	कुकर्मों से जीविका चलायेंगे
राजसु ।	४.	राजा लोग	वैनृषु ॥	७.	मनुष्य

श्लोकार्थ—धर्म में पाखण्ड की प्रचुरता होगी, राजा लोग चोर डाकू के समान हो जायेंगे मनुष्य चोरी-झूठ-निरपराध, हिंसा और नाना प्रकार के कुकर्मों से जीविका चलायेंगे ।

चतुर्दशः श्लोकः

शूद्रप्रायेषु वर्णेषुच्छागप्रायासु धेनुषु ।
गृहप्रायेष्वाश्रमेषु यौनप्रायेषु बन्धुषु ॥१४॥

पदच्छेद—

शूद्र प्रायेषु वर्णेषु छाग प्रायाशु धेनुषु ।
गृह प्रायेषु आश्रमेषु यौन प्रायेषु बन्धुषु ॥

शब्दार्थ—

शूद्र	२.	शूद्र के	गृह	८.	गृहस्थ आश्रम के
प्रायेषु	३.	समान (तथा)	प्रायेषु	९.	समान हो जायेंगे (और)
वर्णेषु	१.	चारों वर्ण	आश्रमेषु	७.	सभी आश्रम
छाग	५.	बकरियों के	यौन	११.	यौन सम्बन्धी वाले ही
प्रायासु	६.	समान (और)	प्रायेषु	१०.	केवल
धेनुषु ।	४.	गोएँ	बन्धुषु ॥	१२.	बन्धु कहलायेंगे

श्लोकार्थ—चारों वर्ण शूद्र के समान तथा गोएँ बकरियों के समान और सभी आश्राम गृहस्थ आश्रम के समान हो जायेंगे । और केवल यौन सम्बन्ध वाले ही बन्धु कहलायेंगे ॥

पञ्चदशः श्लोकः

अणुप्रायास्वोषधीषु शमीप्रायेषु स्थास्नुषु ।
विद्युत्प्रायेषु मेघेषु शून्यप्रायेषु सद्मसु ॥१५॥

पदच्छेद—

अणु प्रायासु ओषधीषु शमी प्रायेषु स्थास्नुषु ।
विद्युत् प्रायेषु मेघेषु शून्य प्रायेषु सद्मसु ॥

शब्दार्थ—

अणु	३.	छोटी-छोटी हो जायेंगी	विद्युत्	९.	बिजलियाँ होंगी जल नहीं होगा
प्रायासु	२.	प्रायः	प्रायेषु	८.	प्रायः
ओषधीषु	१.	ओषधियाँ	मेघेषु	७.	बादलों में
शमी	६	शमी वृक्ष के समान हो जायेंगे	शून्य	१२.	सूने-सूने हो जायेंगे
प्रायेषु	५.	अधिकतर	प्रायेषु	११.	अधिकतर
स्थास्नुषु ।	४.	वृक्ष	सद्मसु ॥	१०.	गृहस्थों के (घर)

श्लोकार्थ—ओषधियाँ प्रायः छोटी-छोटी हो जायेंगी, वृक्ष अधिकतर शमी वृक्ष के समान हो जायेंगे। बादलों में बिजलियाँ होंगी, जल नहीं होगा। गृहस्थों के घर अधिकतर सूने-सूने हो जायेंगे ॥

षोडशः श्लोकः

इत्थंकलौ गतप्राये जने तु खरधर्मिणि ।
धर्मत्राणाय सत्त्वेन भगवानवतरिष्यति ॥१६॥

पदच्छेद—

इत्थम् कलौ गत प्राये जने तु खर धर्मिणि ।
धर्म त्राणाय सत्त्वेन भगवान् अवतरिष्यति ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	इस प्रकार	धर्म	७.	(तब) धर्म की
कलौ	२.	कलियुग का	त्राणाय	८.	रक्षा करने के लिये
गतप्राये	३.	अन्त होते-होते	सत्त्वेन	१०.	सत्व गुण स्वीकार करके
जनेतु	४.	मनुष्य का	भगवान्	९.	भगवान्
खर	६.	गधे जैसा हो जायेगा	अवतरिष्यति ॥	११.	अवतार ग्रहण करेंगे
धर्मिणि ।	५.	स्वभाव			

श्लोकार्थ—इस प्रकार कलियुग का अन्त होते-होते मनुष्य का स्वभाव गधे जैसा हो जायेगा। तब धर्म की रक्षा करने के लिये भगवान् सत्त्वगुण स्वीकार करके अवतार ग्रहण करेंगे ॥

सप्तदशः श्लोकः

चराचरगुरोर्विष्णोरीश्वरस्याखिलात्मनः ।
धर्मत्राणाय साधूनां जन्म कर्मापनुत्तये ॥१७॥

पदच्छेद—

चराचर गुरोः विष्णोः ईश्वरस्य अखिल आत्मनः ।
धर्म त्राणाय साधूनाम् जन्म कर्म अपनुत्तये ॥

शब्दार्थ—

चराचर	४.	चर-अचर जगत् के	धर्म	८.	धर्म की
गुरोः	५.	गुरु	त्राणाय	९.	रक्षा करने के लिये (तथा)
विष्णोः	६.	विष्णु को	साधूनाम्	७.	सज्जन पुरुषों के
ईश्वरस्य	३.	ईश्वर तथा	जन्म	१०.	जन्म और
अखिल	१.	सबके	कर्म	११.	कर्म का बन्धन
आत्मनः ।	२.	आत्मा	अपनुत्तये ॥	१२.	काटने के लिये (अवतार लेते हैं)

श्लोकार्थ—सबके आत्मा ईश्वर तथा चर-अचर जगत् के गुरु विष्णु सज्जन पुरुषों के धर्म की रक्षा करने के लिये तथा जन्म और कर्म का बन्धन काटने के लिये अवतार लेते हैं ॥

अष्टदशः श्लोकः

शम्भलग्राममुख्यस्य ब्राह्मणस्य महात्मनः ।
भवने विष्णुयशसः कल्किः प्रादुर्भविष्यति ॥१८॥

पदच्छेद—

शम्भलग्राम मुख्यस्त ब्राह्मणस्य महात्मनः ।
भवने विष्णु यशसः कल्किः प्रादुः भविष्यति ॥

शब्दार्थ—

शम्भल	१.	शम्भल	भवने	८.	भवन में
ग्राम के	२.	ग्राम के	विष्णु	६.	विष्णु
मुख्यस्य	३.	प्रधान	यशसः	७.	यश के
ब्राह्मणस्य	४.	ब्राह्मण	कल्कि	९.	कल्कि भगवान् का
महात्मनः ।	५.	महात्मा	प्रादुर्भविष्यति ॥	१०.	प्रादुर्भाव होगा

श्लोकार्थ—शम्भल ग्राम के प्रधान ब्राह्मण महात्मा विष्णु यश के भवन में कल्कि भगवान् का प्रादुर्भाव होगा ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अश्वमाशुगमारुह्य देवदत्तं जगत्पतिः ।
असिनासाधुदमनमष्टैश्वर्यगुणान्वितम् ॥१९॥

पदच्छेद—

अश्वम् आशुगम आरुह्य देवदत्तम् जगत्पतिः ।
असिना असाधु दमनम् अष्ट ऐश्वर्य गुणान्वितम् ॥

शब्दार्थ—

अश्वम्	६. अश्व पर		असिना	८. तलवार से
आशुगम	५. शीघ्रगामी		असाधु	९. दुष्टों का
आरुह्य	७. चढ़कर		दमनम्	१०. दमन करेंगे
देवदत्तम्	४. देवदत्त नामक		अष्ट ऐश्वर्य	१. अष्ट सिद्धियों और
जगत्पतिः ।	३. जगत्पति भगवान्		गुणान्वितम् ॥	२. गुणों से युक्त

श्लोकार्थ—अष्ट सिद्धियों और गुणों से युक्त जगत्पति भगवान् देवदत्त नामक शीघ्रगामी अश्व पर चढ़कर तलवार से दुष्टों का दमन करेंगे ॥

विंशः श्लोकः

विचरन्नाशुना क्षोण्यां हयेनाप्रतिमद्युतिः ।
नृपलिङ्गच्छदो दस्यून् कोटिशो निहनिष्यति ॥२०॥

पदच्छेद—

विचरन् आशुना क्षोण्याम् हयेना अप्रतिम द्युतिः ।
नृप लिङ्गच्छदः दस्यून कोटिशः निह निष्यति ॥

शब्दार्थ—

विचरन्	६. विचरण करते हुये (वे)		नृप	७. राजा के
आशुना	३. शीघ्रगामी		लिङ्गच्छदः	८. वेश में रहने वाले
क्षोण्याम्	५. पृथ्वी पर		दस्यून	१०. डाकुओं को
हयेना	४. घोड़े से		कोटिशः	९. करोड़ों
अप्रतिम	१. अतुलनीय		निह निष्यति ॥	११. मार डालेगे
द्युतिः ।	२ कान्ति वाले			

श्लोकार्थ—अतुलनीय कान्ति वाले शीघ्र गामी घोड़े से पृथ्वी पर विचरण करते हुये वे राजा के वेश में रहने वाले करोड़ों डाकुओं को मार डालेंगे ॥

एकविंशः श्लोकः

अथ तेषां भविष्यन्ति मनांसि विशदानि वै ।
वासुदेवाङ्गरागातिपुण्यगन्धानिलस्पृशाम् ।
पौरजानपदानां वै हतेष्वखिलदस्युषु ॥२१॥

पदच्छेद—

अथ तेषाम् भविष्यन्ति मनांसि विशदानि वै ।
वासुदेव अङ्ग राग अति पुण्य गन्ध अनिल स्पृशाम् ।
पौरजानपदानाम् वै हतेषु अखिल दस्युषु ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	पुण्यगन्ध	८.	पवित्र गन्ध वाले
तेषाम्	११.	उन	अनिल	९.	वायु के
भविष्यन्ति	१६.	हो जायेंगे	स्पृशाम् ।	१०.	स्पर्श से
मनांसि	१४.	हृदय	पौरजान	१२.	नगर और
विशदानि वै ।	१५.	पवित्र	पदानाम	१३.	देश की प्रजाओं के
वासुदेव	५.	भगवान् कल्कि के	वै हतेषु	४.	संहार हो जाने पर
अङ्गराग	६.	शरीर में लगे अङ्गराग के	अखिल	२.	सभी
अति	७.	अत्यन्त	दस्युषु ॥	३.	डाकुओं का

श्लोकार्थ—तदनन्तर सभी डाकुओं का संहार हो जाने पर भगवान् कल्कि के शरीर में लगे अङ्गराग के अत्यन्त पवित्र गन्ध वाले वायु के स्पर्श से उन नगर और देश की प्रजाओं के हृदय पवित्र हो जायेंगे ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तेषां प्रजाविसर्गश्च स्थविष्ठः सम्भविष्यति ।
वासुदेवे भगवति सत्त्वमूर्तौ हृदि स्थिते ॥२२॥

पदच्छेद—

तेषाम् प्रजा विसर्गश्च स्थविष्ठः सम्भविष्यति ।
वासुदेवे भगवति सत्त्वमूर्ते हृदि स्थिते ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	६.	उनकी	वासुदेवे	४.	वासुदेवे के
प्रजा	७.	सन्तान	भगवति	३.	भगवान्
विसर्गश्च	८.	पहले के समान	सत्त्वमूर्ते	२.	सत्त्वमूर्ति
स्थविष्ठः	९.	हृष्ट-पुष्ट	हृदि	१.	हृदय में
सम्भविष्यति ।	१०.	होने लगेगी	स्थिते ॥	५.	विराजमान होने से

श्लोकार्थ—हृदय में सत्त्वमूर्ति भगवान् वासुदेव के विराज मान होने से उनकी सन्तान पहले के समान हृष्ट-पुष्ट होने लगेगी ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यदावतीर्णो भगवान् कल्किर्धर्मपतिर्हरिः ।
कृतं भविष्यति तदा प्रजासूतिश्च सात्त्विकी ॥२३॥

पदच्छेद—

यदा अवतीर्णः भगवान् कल्किः धर्मपतिः हरिः ।
कृतम् भविष्यति तदा प्रजा सूतिः च सात्त्विकी ॥

शब्दार्थ—

यदा	१. जब	कृतम्	८. सत्ययुग
अवतीर्णः	६. अवतार लेंगे	भविष्यति	९. हो जायेगा
भगवान्	४. भगवान	तदा	७. तब
कल्किः	५. कल्कि के रूप में	प्रजा सूतिः	११. प्रजा की सन्तान परम्परा
धर्म पतिः	२. धर्म रक्षक	च	१०. और
हरिः ।	३. श्री हरि	सात्त्विकी ॥	१२. सत्व युग से युक्त हो जायेगी

श्लोकार्थ—जब धर्म रक्षक श्री हरि भगवान् कल्कि के रूप में अवतार लेंगे, तब सत्य युग हो जायेगा और प्रजा की सन्तान परम्परा सत्व युग से युक्त हो जायेगी ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

यदा चन्द्रश्च सूर्यश्च तथा तिष्यबृहस्पती ।
एकराशौ समेष्यन्ति तदा भवति तत् कृतम् ॥२४॥

पदच्छेद—

यदा चन्द्रः च सूर्यः च तथा तिष्य बृहस्पती ।
एकराशौ समेष्यन्ति तदा भवति तत् कृतम् ॥

शब्दार्थ—

यदा	१. जब	एकराशौ	७. एकराशिपर
चन्द्रः च	२. चन्द्रमा	समेष्यन्ति	८. आ जाते हैं
सूर्यः च	३. और सूर्य	तदा	९. तब
तथा	४. तथा	भवति	१२. होता है
तिष्य	५. पुष्य नक्षत्र	तत्	१०. वह समय
बृहस्पतीन् ।	६. और बृहस्पति	कृतम् ॥	११. सत्ययुग

श्लोकार्थ—जब चन्द्रमा और सूर्य तथा पुष्यनक्षत्र और बृहस्पति एक राशि पर आ जाते हैं । तब उस समय सत्य युग होता है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

येऽतीतावर्तमाना ये भविष्यन्ति च पार्थिवाः ।
ते ते उद्देशतः प्रोक्ता वंशीयाः सोमसूर्ययोः ॥२५॥

पदच्छेद—

ये अतीता वर्तमानाः ये भविष्यन्ति च पार्थिवाः ।
ते ते उद्देशतः प्रोक्ता वंशीयाः सोमा सूर्ययोः ॥

शब्दार्थ—

ये	४. जो	ते ते	१०. वे सब
अतीता	६. हो गये हैं	उद्देशतः	११. संक्षेप में
वर्तमाना	८. वर्तमान हैं	प्रोक्ता	१२. बता दिये
ये	७. जो	वंशीयाः	३. वंश के
भविष्यन्ति च	६. और जो होंगे	सोम	१. चन्द्र और
पार्थिवा ।	५. राजा	सूर्ययोः ॥	२. सूर्य

श्लोकार्थ—चन्द्र और सूर्य वंश के जो राजा हो गये हैं, जो वर्तमान हैं, और जो होंगे, वे सब संक्षेप में बता दिये ॥

षट्विंशः श्लोकः

आरभ्य भवतो जन्म यावन्नन्दभिषेचनम् ।
एतद् वर्षसहस्रं तु शतं पञ्चदशोत्तरम् ॥२६॥

पदच्छेद—

आरभ्य भवतः जन्म यावत् नन्द अभिषेचनम् ।
एतत वर्ष सहस्रं तु शतम् पञ्चदश उत्तरम् ॥

शब्दार्थ—

आरभ्य	३. प्रारम्भ करके	एतत्	७. यह
भवतः	१. आपके	वर्ष	१२. वर्ष का समय होगा
जन्म	२. जन्म से	सहस्रं तु	८. एक हजार से
यावत्	६. तक	शतम्	१०. एक सौ
नन्द	४. नन्द के	पञ्चदश	११. पन्द्रह
अभिषेचनम् ।	५. अभिषेक	उत्तरम् ॥	६. अधिक

श्लोकार्थ—आपके जन्म से प्रारम्भ करके नन्द के अभिषेक तक यह एक हजार से अधिक एक सौ पन्द्रह वर्ष का समय होगा ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सप्तर्षीणां तु यौ पूर्वौ दृश्येते उदितौ दिवि ।
तयोस्तु मध्ये नक्षत्रं दृश्यते यत् समं निशि ॥२७॥

पदच्छेद—

सप्तर्षीणाम् तु यौ पूर्वौ दृश्येते उदितौ दिवि ।
तयोः तु मध्ये नक्षत्रम् दृश्यते यत् समम् निशि ॥

शब्दार्थ—

सप्तर्षीणाम् तु	२.	सप्तर्षियों में	तयोः तु	७.	उन दोनों के
यौः	३.	जो दो तारे	मध्ये	८.	बीच में
पूर्वौ	४.	पहले	नक्षत्रम्	११.	एक नक्षत्र
दृश्यते	६.	दिखाई पड़ते हैं	दृश्यते	१२	दिखाई पड़ता है
उदितौ	५.	उदित हुये	यत्	१०.	जो
निशि ।	१.	आकाश में	समम् निशि ॥	९.	सम भाग में रात्रि में

श्लोकार्थ—आकाश में सप्तर्षियों में जो दो तारे पहले उदित हुये दिखाई पड़ते हैं उन दोनों के बीच में सम भाग में रात्रि में जो एक नक्षत्र दिखाई पड़ता है ।

अष्टविंशः श्लोकः

तेनैत ऋषयो युक्तास्तिष्ठन्त्यब्दशतं नृणाम् ।
ते त्वदीये द्विजाः काले अधुना चाश्रिता मघाः ॥२८॥

पदच्छेद—

तेन एते ऋषयः युक्ताः तिष्ठन्ति अब्द शतम् नृणाम् ।
ते त्वदीये द्विजाः काले अधुना च आश्रिताः मघाः ॥

शब्दार्थ—

तेन एते	१.	उस नक्षत्र के	ते	७.	वे
ऋषयः	३.	ये सप्तऋषिगण	त्वदीयेद्विजाः	८.	सप्त ऋषिगण तुम्हारे
युक्ताः	२.	साथ	काले	९	जन्म के समय
तिष्ठन्ति	६.	रहते हैं	अधुना	१०.	और इस समय भी
अब्द शतम्	५.	सौ वर्ष तक	च आश्रिताः	१२.	स्थित हैं
नृणाम् ।	४.	मनुष्यों की गणना से	मघाः ॥	११.	मघा नक्षत्र पर

श्लोकार्थ—उस नक्षत्र के साथ ये सप्तऋषिगण मनुष्यों की गणना से सौ वर्ष तक रहते हैं । वे सप्त ऋषिगण तुम्हारे जन्म के समय और इस समय भी मघा नक्षत्र पर स्थित हैं ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

विष्णोर्भगवतो भानुः कृष्णाख्योऽसौ दिवंगतः ।
तदाविशत् कलिर्लोकं पापे यद् रमते जनः ॥२९॥

पदच्छेद—

विष्णोः भगवतः भानुः कृष्ण आख्यः असौ दिवम् गतः ।
तदा आविशत् कलिः लोकम् पापे यत् रमते जनः ॥

शब्दार्थ—

विष्णोः	२.	विष्णु के	तदा	८.	तब
भगवतः	१.	भगवान्	आविशत्	१०.	प्रवेश किया
भानुः	४.	अवतार स्वरूप	कलिः लोकम्	९.	कलियुग ने संसार में
कृष्ण आख्याः	३.	कृष्ण नामक	पापे	१३.	पाप में
असौ	५.	वह	यत्	११.	जिस कारण
दिवम्	६.	स्वर्ग को	रमते	१४.	रमण करने लगे
गतः ।	७.	पधार गये	जनः ॥	१२.	लोग

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु के कृष्ण नामक अवतार स्वरूप वह स्वर्ग को सिधार गये तब कलियुग ने संसार में प्रवेश किया । जिस कारण लोग पाप में रमण करने लगे ॥

त्रिंशः श्लोकः

यावत् स पादपद्माभ्यां स्पृशन्नास्ते रमापतिः ।
तावत् कलिर्वै पृथिवीं पराक्रान्तुं न चाशकत् ॥३०॥

पदच्छेद—

यावत् सः पाद पद्माभ्याम् स्पृशन् आस्ते रमापतिः ।
तावत् कलिः वै पृथिवीम् पराक्रान्तुम् न च अशकत् ॥

शब्दार्थ—

यावत्	१.	जब-तक	तावत्	७.	तब-तक
सः	३.	वे श्रीकृष्ण अपने	कलिः	८.	कलियुग
पादपद्माभ्याम्	४.	चरण कमलों से	वैपृथिवीम्	९.	पृथ्वी को
स्पृशन्	५.	पृथ्वी का स्पर्श	पराक्रान्तुम्	१०.	आक्रान्त
आस्ते	६.	करते रहे	न च	११.	न
रमापतिः ।	२.	लक्ष्मी पति	अशकत् ॥	१२.	कर सका

श्लोकार्थ—जब-तक लक्ष्मीपति वे श्रीकृष्ण अपने चरण कमलों से पृथ्वी का स्पर्श करते रहे, तब-तक कलियुग पृथ्वी को आक्रान्त न कर सका ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

यदा देवर्षयः सप्त मघासु विचरन्ति हि ।
तदा प्रवृत्तस्तु कलिर्द्वादशाब्दशतात्मकः ॥३१॥

पदच्छेद—

यदा देवर्षयः सप्त मघासु विचरन्ति हि ।
तदा प्रवृत्तः तु कलिः द्वादश अब्द शत आत्मक : ॥

शब्दार्थ—

यदा	१. जब	तदा	७. उस समय
देवर्षयः	३. देवर्षि (सप्तर्षि)	प्रवृत्तः तु	८. प्रारम्भ हुआ
सप्त	२. सात	कलिः	९. कलियुग
मघासु	४. मघानक्षत्र पर	द्वादश अब्द	१०. देव वर्ष से बारह
विचरन्ति	६. विचरण करते हैं	शत	११. सो वर्षों मनुष्य वर्ष से
हि ।	५. निश्चित रूप से	आत्मकः ॥	१२. ४३२००० वर्षों तक रहता है

श्लोकार्थ—जब सात (देवर्षि) मघा नक्षत्र पर निश्चित रूप से विचरण करते हैं । उस समय प्रारम्भ हुआ कलियुग देव वर्ष से बारह सो वर्षों तक रहता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यदा मघाभ्यो यास्यन्ति पूर्वाषाढां महर्षयः ।
तदा नन्दात् प्रभृत्येष कलिर्वृद्धिं गमिष्यति ॥३२॥

पदच्छेद—

यदा मघाभ्यः यास्यन्ति पूर्वाषाढाम् महर्षयः ।
तदा नन्दात् प्रभृति एष कलिः वृद्धिम् गमिष्यति ॥

शब्दार्थ—

यदा	१. जब	नन्दात्	७. नन्द के समय से
मघाभ्यां	३. मघा से चलकर	प्रभृति	८. लेकर
यास्यन्ति	५. पहुँचेंगे	एषः	९. यह
पूर्वाषाढाम्	४. पूर्वा षाढ़ नक्षत्र में	कलिः	१०. कलियुग
महर्षयः ।	२. सप्तर्षि	वृद्धिम्	११. वृद्धि को
तदा	६. तब	गमिष्याति ॥	१२. प्राप्त करेगा

श्लोकार्थ—जब सप्तर्षि मघा से चलकर पूर्वाषाढ़ नक्षत्र में पहुँचेगे, तब नन्द के समय से लेकर यह कलियुग वृद्धि को प्राप्त करेगा ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

यस्मिन् कृष्णो दिवं यातस्तस्मिन्नेव तदाहनि ।
प्रतिपन्नं कलियुगमिति प्राहुः पुराविदः ॥३३॥

पदच्छेद—

यस्मिन् कृष्णो दिवम् यातः तस्मिन् एव तदा अहनि ।
प्रतिपन्नम् कलियुगम् इति प्राहुः पुराविदः ।।

शब्दार्थ—

यस्मिन्	१.	जिस दिन	प्रतिपन्नम्	८.	आरम्भ हो गया
कृष्णो	२.	श्री कृष्ण	कलियुगम्	७.	कलियुग का
दिवम्	३.	अपने धाम को	इति	९.	ऐसा
यातः	४.	सिधारे	प्राहुः	१२.	कहा है
अस्मिन् एव	५.	उसी समय	पुरा	१०.	पुरातत्त्व
तदा अहनि ।	६.	उसी दिन	विदः ।।	११.	वेत्ताओं ने

श्लोकार्थ—जिस दिन श्री कृष्ण अपने धाम को सिधारे उसी समय उसी दिन कलियुग का आरम्भ हो गया । ऐसा पुरातत्त्व वेत्ताओं ने कहा है ।।

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

दिव्याब्दानां सहस्रान्ते चतुर्थे तु पुनः कृतम् ।
भविष्यन्ति यदा नृणां मन आत्मप्रकाशकम् ॥३४॥

पदच्छेद—

दिव्य अब्दानाम् सहस्रान्ते चतुर्थे तु पुनः कृतम् ।
भविष्यन्ति यदा नृणाम् मन आत्म प्रकाशकम् ।।

शब्दार्थ—

दिव्य	१.	देव	भविष्यन्ति	१०.	होगा
अब्दानाम्	२.	वर्ष के हिसाब से	यदा	५.	जब
सहस्रान्ते	३.	एक हजार वर्षों के अन्त में	नृणाम्	६.	मनुष्यों का
चतुर्थे तु	४.	कलियुग के चौथे चरण में	मन	७.	मन
पुनः	११.	तब फिर	आत्मा	८.	आत्मा को
कृतम् ।	१२.	सत्युग का प्रारम्भ होगा	प्रकाशकम् ।	९.	प्रकाशित करने वाला

श्लोकार्थ—देव वर्षों के हिसाब से एक हजार वर्षों के अन्त में कलियुग के चौथे चरण में जब मनुष्यों का मन आत्मा को प्रकाशित करने वाला होगा । तब फिर सतयुग का प्रारम्भ होगा ।।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

इत्येष मानवो वंशो यथा संख्यायते भुवि ।
तथा विट्शूद्रविप्राणां तास्ता ज्ञेया युगे युगे ॥३५॥

पदच्छेद—

इति एष मानवः वंशः यथा संख्यायते भुविः ।
तथा विट् शूद्र विप्राणाम् ताः ताः ज्ञेयाः युगे-युगे ॥

शब्दार्थ—

इति एषः	२. यह	तथा	७. वैसे ही
मानवः	४. मनु	विट् शूद्र	९. वैश्य-शूद्र और
वंशः	५. वंश की	विप्राणाम्	१०. ब्राह्मणों की भी
यथा	३. जैसे	ताः ताः	११. वंश परम्परा
संख्यायते	६. गणना होती है	ज्ञेयाः	१२. समझनी चाहिये
भुविः ।	१. पृथ्वी पर	युगे-युगे ॥	८. प्रत्येक युग में

श्लोकार्थ—पृथ्वी पर यह जैसे मनु वंश की गणना होती है वैसे ही प्रत्येक युग में वैश्य शूद्र और ब्राह्मणों की भी वंश परम्परा समझनी चाहिये ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

एतेषां नामलिङ्गानां पुरुषाणां महात्मनाम् ।
कथामात्रावशिष्ठानां कीर्तिरेव स्थिता भुवि ॥३६॥

पदच्छेद—

एतेषाम् नाम लिङ्गानाम् पुरुषाणाम् महात्मनाम् ।
कथामात्र अवशिष्टा नाम् कीर्तिः एव स्थिता भुवि ॥

शब्दार्थ—

एतेषाम्	३. इन	कथा मात्र	१. कथा मात्र से
नाम	४. नाम रूप	अवशिष्टानाम्	२. बचे हुये
लिङ्गानाम्	५. चिह्नधारी	कीर्ति एव	८. कीर्ति ही
पुरुषाणाम्	७. पुरुषों की	स्थिता	१०. अवस्थित है
महात्मनाम् ।	६. महात्मा	भुवि ॥	९. पृथ्वी पर

श्लोकार्थ—कथा मात्र से बचे हुये इन नाम रूप चिह्नधारी महात्मा पुरुषों की कीर्ति ही पृथ्वी पर अविस्थित है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

देवापिः शान्तनोर्भ्राता मरुश्चेक्ष्वाकुवंशजः ।
कलापग्राम आसाते महायोगबलान्वितौ ॥३७॥

पदच्छेद—

देवापिः शान्तनोः भ्राता मरु च इक्ष्वाकु वंशजः ।
कलाप ग्राम आसाते महायोग बल अन्वितौ ॥

शब्दार्थ—

देवापिः	३. देवापि	कलापग्राम	७. कलापग्राम में
शान्तनोः	१. शान्तनु के	आसाते	८. स्थित हैं वे
भ्राता	२. भाई	महायोग	९. बहुत बड़े योग
मरु	६. मरु	बल	१०. बल से
च इक्ष्वाकु	४. और इक्ष्वाकु	अन्वितौ ॥	११. युक्त हैं
वंशजः ।	५. वंशी		

श्लोकार्थ—शान्तनु के भाई देवापि और इक्ष्वाकुवंशी मरु कलापग्राम में स्थित हैं। वे बहुत बड़े योग बल से युक्त हैं ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

ताविहैत्य कलेरन्ते वासुदेवानुशिक्षितौ ।
वर्णाश्रमयुतं धर्मं पूर्ववत् प्रथयिष्यतः ॥३८॥

पदच्छेद—

तौ इह एत्य कलेः अन्ते वासुदेव अनुशिक्षितौ ।
वर्णाश्रम युतम् धर्मम् पूर्ववत् प्रथयिष्यतः ॥

शब्दार्थ—

तौ इह एत्य	३. वे दोनों यहाँ आकर	वर्णाश्रम	६. वर्णाश्रम से
कलेः	१. कलियुग के	युतम्	७. युक्त
अन्ते	२. अन्त में	धर्मम्	८. धर्म का
वासुदेव	४. कल्कि भगवान से	पूर्ववत्	९. पूर्ववत्
अनुशिक्षितौ ।	५. शिक्षा पाकर	प्रथयिष्यतः ॥	१०. विस्तार करेंगे

श्लोकार्थ—कलियुग के अन्त में वे दोनों यहाँ आकर कल्कि भगवान् से शिक्षा पाकर वर्णाश्रम धर्म का पूर्ववत् विस्तार करेंगे ॥

—९३—

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

कृतं त्रेता द्वापरं च कलिश्चेति चतुर्युगम् ।
अनेन क्रमयोगेन भुवि प्राणिषु वर्तते ॥३६॥

पदच्छेद—

कृतम् त्रेता द्वापरम् च कलिः च इति चतुर्युगम् ।
अनेन क्रम योगेन भुवि प्राणिषु वर्तते ॥

शब्दार्थ—

कृतम्	१.	सत्ययुग	अनेन	७.	ये
त्रेता	२.	त्रेता	क्रम	८.	क्रम के
द्वापरम् च	३.	द्वापर और	योगेन	९.	अनुसार
कलिः च	४.	कलियुग	भुवि	१०.	पृथ्वी के
इति	५.	ये	प्राणिषु	११.	प्राणियों पर
चतुर्युगम् ।	६.	चार युग हैं	वर्तते ॥	१२.	अपना प्रभाव डालते हैं

श्लोकार्थ—सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग ये चार युग हैं । ये क्रम के अनुसार पृथ्वी के प्राणियों पर अपना प्रभाव डालते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

राजन्नेते मया प्रोक्ता नरदेवास्तथापरे ।
भूमौ ममत्वं कृत्वान्ते हित्वेमां निधनं गताः ॥४०॥

पदच्छेद—

राजन् एते मया प्रोक्ताः नरदेवाः तथा अपरे ।
भूमौ ममत्वम् कृत्वा अन्ते हित्वा इमाम् निधनम् गता ॥

शब्दार्थ—

राजन्	१.	राजन्	भूमौ	७.	पृथ्वी पर
एते	४.	ये	ममत्वम्	८.	ममता
मया	२.	मेरे द्वारा	कृत्वा अन्ते	९.	करके अन्त में
प्रोक्ताः	३.	कहे गये	हित्वा इमाम्	१०.	इसे त्याग कर
नरदेवाः	५.	राजा लोग	निधनम्	११.	मृत्यु को
तथा अपरे ।	६.	तथा दूसरे राजा भी	गताः ॥	१२.	प्राप्त हो गये

श्लोकार्थ—राजन् ! मेरे द्वारा कहे गये ये राजा लोग तथा दूसरे राजा भी पृथ्वी पर ममता करके अन्त में इसे त्याग कर मृत्यु को प्राप्त हो गये ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

कृमिविड्भस्मसंज्ञान्ते राजनाम्नोऽपि यस्य च।
भूतध्रुक् तत्कृते स्वार्थं किं वेद निरयो यतः ॥४१॥

पदच्छेद—

कृमिविट् भस्म संज्ञा अन्ते राजानाम्नाः अपि यस्य च ।
भूतध्रुक् तत् कृते स्वार्थम् किम् वेद निरयः यतः ॥

शब्दार्थ—

कृमिविट्	४.	कीड़े, विष्ठा या	भूतध्रुक्	८.	प्राणियों को सताने वाला पुरुष
भस्म	५.	राख	तत्कृते	७.	उसके लिये
संज्ञा अन्ते	६.	नाम पड़ जाता है अन्त में	स्वार्थम् किम्	६	क्या स्वार्थ
राजानाम्नाः	१.	राजा नाम वाले	वेद	१०.	जाने
अपि	२.	भी	निरयः	१२.	नरक होता है
यस्य च।	३.	जिस शरीर का	यतः ॥	११.	क्योंकि प्राणियों को (सताने से)

श्लोकार्थ—राजानाम वाले भी जिस शरीर का अन्त में कीड़े, विष्ठा या राख नाम पड़ जाता है, उसके लिये प्राणियों को सताने वाला पुरुष स्वार्थ क्या जाने। क्योंकि प्राणियों को सताने से नरक होता है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

कथं सेयमखण्डा भूः पूर्वैर्मे पुरुषैर्धृता ।
मत्पुत्रस्य च पौत्रस्य मत्पूर्वा वंशजस्य वा ॥४२॥

पदच्छेद—

कथम् सेयम् अखण्डा भूः पूर्वैः मे पुरुषैः धृता ।
मत् पुत्रस्य च पौत्रस्य मत् पूर्वा वंशजस्य वा ॥

शब्दार्थ—

कथम्	६.	कैसे	मत् पुत्रस्य	७.	मेरे पुत्र
सेयम्	४.	यह	च	८	और
अखण्डा भूः	५.	अखण्ड पृथ्वी	पौत्रस्य	६.	पौत्र
पूर्वैः मे	१.	मेरे पूर्व	मत् पूर्वा	११.	मेरे बाद के
पुरुषैः	२.	पुरुषों के द्वारा	वंशजस्य	१२.	वंशजों की बनी रहेगी
धृता।	३.	धारण की गई	वा ॥	१०.	अथवा

श्लोकार्थ—मेरे पूर्व पुरुषों के द्वारा धारण की गई यह अखण्ड पृथ्वी कैसे मेरे पुत्र और पौत्र अथवा वंशजों की बनी रहेगी ॥

त्रिचत्वारिंशः श्लोकः

तेजोऽबन्नमयं कायं गृहीत्वाऽऽत्मतयाबुधाः ।
महीं ममतया चोभौ हित्वान्तेऽदर्शनं गताः ।।४३।।

पदच्छेद—

तेजः अप् अन्न मयम् कायम् गृहीत्वा आत्मतया अबुधाः ।
महीम् ममतया च उभौ हित्वा अन्ते अदर्शनम् गताः ।।

शब्दार्थ—

तेजः	२.	अग्नि	महीम्	८.	पृथ्वी को
अप् अन्न	३.	जल तथा अन्न	ममतया च	९.	यह मेरी है ऐसा मानते हैं
मयम्	४.	मय	उभौ	११.	दोनों को
कायम्	५.	शरीर को	हित्वा	१२.	छोड़कर
गृहीत्वा	७.	मानकर और	अन्ते	१०.	अन्त में
आत्मतया	६.	अपना	अदर्शनम्	१३.	अदृश्य
अबुधाः ।	१.	मूर्ख लोग	गताः ।।	१४.	हो जाते हैं

श्लोकार्थ—मूर्ख लोग अग्नि, जल तथा अन्नमय शरीर को अपना मानकर और पृथ्वी को यह मेरी है ऐसा मानते हैं । तथा अन्त में दोनों को छोड़कर अदृश्य हो जाते हैं ।।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

ये ये भूपतयो राजन् भुञ्जन्ति भुवमोजसा ।
कालेन ते कृताः सर्वे कथामात्राः कथासु च ।।४४।।

पदच्छेद—

ये ये भूपतयः राजन् भुञ्जन्ति भुवम् ओजसा ।
कालेन ते कृताः सर्वे कथा मात्राः कथासु च ।।

शब्दार्थ—

ये ये	२.	जो-जो	कालेन	९.	काल ने (अपने)
भूपतयः	३.	राजा अपने	ते	७.	उन
राजन्	१.	हे राजन् !	कृताः	१०.	विकराल गाल में धर दबाया है अब
भुञ्जन्ति	६.	उपभोग करते रहे हैं	सर्वे	८.	सब को
भुवम्	५.	पृथ्वी का	कथामात्राः	१२.	कथा ही रह गयी है
ओजसा ।	४.	पराक्रम से	कथासु च ।।	११.	इतिहास में उनकी

श्लोकार्थ—हे राजन् । जो-जो राजा अपने पराक्रम से पृथ्वी का उपभोग करते रहे हैं । उन सबको काल ने अपने विकराल गाल में धर दबाया है । अब इतिहास में उनकी कथा ही रह गई है ।।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
द्वादश स्कन्धे द्वितीयो अध्यायः ।।२।।

द्वादशः स्कन्धः

तृतीयोऽध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—दृष्ट्वाऽऽत्मनि जये व्यग्रान् नृपान् हसति भूरियम्
अहो मा विजिगीषन्ति मृत्योः क्रीडनका नृपाः ॥१॥

पदच्छेद—

दृष्ट्वा आत्मनि जये व्यग्रान् नृपान् हसति भूरियम् ।
अहो मा विजि गीषयन्ति मृत्योः क्रीडनका नृपाः ॥

शब्दार्थ—

दृष्ट्वा	५.	देखकर	अहो	७.	आश्चर्य की बात है कि
आत्मनि	१.	अपने को	मा	११.	मुझे
जये	२.	जीतने में	विजिगीषयन्ति	१२.	जीतना चाहते हैं
व्यग्रान्	३.	उतावले हो रहे	मृत्योः	८.	मृत्यु के
नृपान्	४.	राजाओं को	क्रीडनका	९.	खिलौने
हसति भूरियम् ।	६.	यह पृथ्वी हंसती है कि	नृपाः ॥	१०.	राजा लोग

श्लोकार्थ—अपने को जीतने में उतावले हो रहे राजाओं को देखकर यह पृथ्वी हँसती है कि मृत्यु के खिलौने राजा लोग मुझे जीतना चाहते हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

काम एष नरेन्द्राणां मोघः स्याद् विदुषामपि ।
येन फेनोपमे पिण्डे येऽतिविश्रम्भिता नृपाः ॥२॥

पदच्छेद—

कामः एषः नरेन्द्राणाम् मोघः स्यात् विदुषाम् अपि ।
येन फेन उपमे पिण्डे ये अति विश्रम्भिता नृपाः ॥

शब्दार्थ—

कामः एषः	४.	यह कामना	येन	७.	जिससे
नरेन्द्राणाम्	२.	राजाओं की	फेन उपमे	१०.	फेन के समान (निस्सार)
मोघः	५.	व्यर्थ की	पिण्डे	११.	शरीर पर
स्यात्	६.	होती है	ये	८.	वे
विदुषाम्	१.	विद्वान	अतिविश्रम्भिता	१२.	अत्यन्त विश्वास कर बैठते हैं
अपि ।	३.	भी	नृपाः ॥	९.	राजा लोग

श्लोकार्थ—विद्वान राजाओं की भी यह कामना व्यर्थ की होती है । जिससे वे राजा लोग फ़ेन के समान निस्सार शरीर पर अत्यन्त विश्वास कर बैठते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

पूर्वं निर्जित्य षड्वर्गं जेष्यामो राजमन्त्रिणः ।
ततः सचिवपौराप्तकरीन्द्रानस्य कण्टकान् ॥३॥

पदच्छेद—

पूर्वम् निर्जित्य षड् वर्गम् जेष्यामो राज मन्त्रिणः ।
ततः सचिव पौराप्त करीन्द्रान् अस्य कण्टकान् ॥

शब्दार्थ—

पूर्वम्	१.	पहले	ततः	७.	तदनन्तर
निर्जित्य	३.	जीतकर	सचिव	८	सचिवों
षड्वर्गम्	२.	मन के सहित पांचों इन्द्रियों को	पौराप्त	९.	पुरवासियों और
जेष्यामः	६.	जीतेंगे	करीन्द्रान्	१२.	मित्रों ओ जीत लेंगे
राज	४.	राजा के	अस्य	१०.	उसके
मन्त्रिणः ।	५.	मन्त्रियों को	कण्टकान्॥	११.	कण्टक बने हुये

श्लोकार्थ—पहले मन के सहित पांचों इन्द्रियों को जीतकर राजा के मन्त्रियों को जीतेंगे। तदनन्तर सचिवों, पुरवासियों और उसके कण्टक बने हुये मित्रों को जीत लेंगे॥

चतुर्थः श्लोकः

एवं क्रमेण जेष्यामः पृथ्वीं सागरमेखलाम् ।
इत्याशाबद्धहृदया न पश्यन्त्यन्तिकेऽन्तकम् ॥४॥

पदच्छेद—

एवम् क्रमेण जेष्यामः पृथ्वीम् सागर मेखलाम् ।
इति आशाबद्ध हृदया न पश्यन्ति अन्तिके अन्तकम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	इति	७.	ऐसी
क्रमेण	२.	क्रमशः	आशाबद्ध	८.	आशा में बंधे हुये
जेष्यामः	६.	हम जीत लेंगे	हृदया	९.	चित्त वाले राजा लोग
पृथ्वीम्	५.	पृथ्वी को	न पश्यन्ति	१२.	नहीं देखते हैं
सागर	३.	समुद्ररूपी	अन्तिके	१०.	समीप में स्थित
मेखलाम् ।	४.	करधनी वाली	अन्तकम् ॥	११.	मृत्यु को

श्लोकार्थ—इस प्रकार क्रमशः समुद्ररूपी करधनी वाली पृथ्वी को हम जीत लेंगे। ऐसी आशा में बंधे हुये चित्तवाले राजा लोग समीप में स्थित मृत्यु को नहीं देखते है।

पञ्चमः श्लोकः

समुद्रावरणां जित्वा मां विशन्त्यब्धिमोजसा ।
कियदात्मजयस्यैतन्मुक्तिरात्मजये फलम् ॥५॥

पदच्छेद—

समुद्र आवरणाम् जित्वा माम् विशन्ति अब्धिम् ओजसा ।
कियत् आत्म जयस्य एतत् मुक्तिः आत्मजये फलम् ॥

शब्दार्थ—

समुद्र	१.	समुद्र रूपी	कियत्	१२.	तुच्छ फल मिलता है
आवरणाम्	२.	आवरण वाली	आत्म जयस्य	१०.	किन्तु इन राजाओं को आत्म संयम का
जित्वा माम्	३.	मुझे जीतकर	एतत्	११.	इतना ही भूभागरूप
विशन्ति	६.	प्रवेश करते हैं	मुक्तिः	८.	मोक्षरूप
अब्धिम्	५	समुद्र में	आत्मजये	७	मन को जीतने से मनुष्यको
ओजसा ।	४.	दर्प से	फलम् ॥	९.	फल मिलता है

श्लोकार्थ—समुद्र रूपी आवरण वाली मुझे जीतकर दर्प से समुद्र में प्रवेश करते हैं। मन को जीत लेने में मनुष्य को मोक्षरूप फल मिलता है। किन्तु इन राजाओं को आत्म संयम का इतना ही तुच्छ फल मिलता है ॥

षष्ठः श्लोकः

यां विसृज्यैव मनवस्तत्सुताश्च कुरूद्वह ।
गता यथागतं युद्धे तां मां जेष्यन्त्यबुद्धयः ॥६॥

पदच्छेद—

याम् विसृज्यैव मनवः तत् सुताः च कुरूद्वहः ॥
गताः यथा आगतम् युद्धेताम् माम् जेष्यन्ति अबुद्धयः ॥

शब्दार्थ—

याम्	२.	पृथ्वी कहती है कि जिसे	गताः	८.	चले गये
विसृज्यैव	६.	छोड़कर	यथा आगतम्	७.	जैसे आये थे वैसे ही
मनवः	४.	मनु और	युद्धे	११.	युद्ध में
तत्	४.	उनके	ताम् माम्	९.	उस-मुझको
सुताः च	५.	पुत्र	जेष्यन्ति	१२.	जीत लेंगे
कुरूद्वह ।	१.	हे परीक्षित !	अबुद्धयः ॥	१०.	मूर्ख राजा लोग

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! पृथ्वी कहती है कि जिसे मनु और उनके पुत्र छोड़कर जैसे आये थे वैसे ही चले गये। उस मुझ को मूर्ख राजा लोग युद्ध में जीत लेंगे ॥

सप्तमः श्लोकः

मत्कृते पितृपुत्राणां भ्रातृणां चापि विग्रहः।
जायते ह्यसतां राज्ये ममताबद्धचेतसाम् ॥७॥

पदच्छेद—

मत् कृते पितृ पुत्राणाम् भ्रातृणाम् च अपि विग्रहः।
जायते हि असताम् राज्ये ममता बद्ध चेतसाम् ॥

शब्दार्थ—

मत् कृते	६.	मेरे लिये	जायते	१२.	हो जाता है
पितृ	७.	पिता	हि असताम्	४.	दुष्ट पुरुषों के
पुत्राणाम्	८.	पत्र	राज्ये	५.	राज्य में
भ्रातृणाम् च	९.	और भाई-भाई में	ममता	१.	ममता से
अपि	१०.	भी	बद्ध	२.	बँधे हुए
विग्रहः।	११	युद्ध	चेतसाम् ॥	३.	चित्तवाले

श्लोकार्थ—ममता से बँधे हुए चित्तवाले दुष्ट पुरुषों के राज्य में मेरे लिये पिता, पुत्र और भाई-भाई में युद्ध हो जाता है ॥

अष्टमः श्लोकः

ममैवेयं मही कृत्स्ना न ते मूढेति वादिनः।
स्पर्धमाना मिथो घ्नन्ति म्रियन्ते मत्कृते नृपाः ॥८॥

पदच्छेद—

मम एव इयम् महीकृत्स्ना न ते मूढ इति वादिनः।
स्पर्धमानाः मिथः घ्नन्ति म्रियन्ते मत्कृते नृपाः ॥

शब्दार्थ—

मम एव	५.	मेरी ही है	स्पर्धमानाः	९.	स्पर्धा करते हुए
इयम्	२.	यह	मिथः	८.	एक दूसरे से
मही	४.	पृथ्वी	घ्नन्ति	१२.	एक दूसरे को मारते हैं और
कृत्स्ना	३.	सम्पूर्ण	म्रियन्ते	१३.	मर मिटते हैं
न ते	६.	तेरी नहीं है	मत्कृते	११.	मेरे लिये
मूढ	१.	मूर्ख	नृपाः ॥	१०.	राजा लोग
इति वादिनः।	७.	ऐसा कहते हुए तथा			

श्लोकार्थ—मूर्ख ! यह सम्पूर्ण पृथ्वी मेरी ही तेरी नहीं है, ऐसा कहते हुये, तथा एक दूसरे से स्पर्धा करते हुये राजा लोग मेरे लिये एक दूसरे को मारते हैं और मर मिटते हैं ॥

नवमः श्लोकः

पृथुः पुरूरवा गाधिर्नहुषो भरतोऽर्जुनः ।
मान्धाता सगरो रामः खट्वाङ्गोधुन्धुहा रघुः ॥९॥

पदच्छेद—

पृथुः पुरूरवा गाधिः नहुषः भरतः अर्जुनः ।
मान्धाता सगरः रामः खट्वाङ्गः धुन्धुहा रघुः ॥

शब्दार्थ—

पृथुः	१. पृथुः	मान्धाता	७. मान्धाता
पुरूरवा	२. पुरूरवा	सगरः	८. सगर
गाधिः	३. गाधि	रामः	९. राम
न हुषः	४. नहुषः	खटवाङ्गः	१०. खटवाङ्ग
भरतः	५. भरतः	धुन्धुहा	११. धुन्धुमार और
अर्जुनः ।	६. अर्जुन (सहस्रबाहु)	रघुः ॥	१२. रघु (राजा हो गये हैं)

श्लोकार्थ—इस पृथ्वी पर पृथु, पुरूरवा, गाधि, नहुष, भरत, सहस्रबाहु अर्जुन, मान्धाता, सगर राम, खटवाङ्ग, धुन्धुमार और रघु राजा हो गये हैं ॥

दशमः श्लोकः

तृणबिन्दुर्ययातिश्च शर्यातिः शन्तनुर्गयः ।
भगीरथः कुवलयाश्वः ककुत्स्थो नैषधो नृगः ॥१०॥

पदच्छेद—

तृणबिन्दुः ययातिः च शर्यातिः शान्तनुः गयः ।
भगीरथः कुवलयाश्वः ककुत्स्थः नैषधः नृगः ॥

शब्दार्थ—

तृण बिन्दुः	१. तृणबिन्दु	भगीरथः	७. भगीरथ
ययातिः	२. ययाति	कुवलयाश्व	८. कुवलयाश्व
च	५. और	ककुत्स्थः	९. ककुत्स्थ
शर्यातिः	३. शर्याति	नैषधः	१०. नैषध और
शान्तनुः	४. शान्तनु	नृगः	११. नृग (राजा हो गये हैं)
गयः ।	६. गय		

श्लोकार्थ—तृणबिन्दु, ययाति, शर्याति, शान्तनु और गय तथा भगीरथ, कुवलयाश्व, ककुत्स्थथ नैषध और नृग राजा हो गये हैं ॥

एकादशः श्लोकः

हिरण्यकशिपुर्वृत्रो रावणो लोकरावणः ।
नमुचिः शम्बरो भौमो हिरण्याक्षोऽथ तारकः ॥११॥

पदच्छेद—

हिरण्यकशिपुः वृत्रः रावणः लोकरावणः ।
नमुचिः शम्बरः भौमः हिरण्याक्षः अथ तारकः ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यकशिपुः	१. हिरण्यकशिपु	शम्बरः	६. शम्बर
वृत्रः	२. वृत्रासुर	भौमः	७. भौमासुर
रावणः	४. रावणः	हिरण्याक्षः	८. हिरण्याक्ष
लोक रावण ।	३. लोकों को रुलाने वाला	अथ	९. और
नमुचि	५. नमुचि	तारकः ॥	१०. तारकासुर (राजा हुआ

श्लोकार्थ—हिरण्यकशिपु, वृत्रासुर, लोको को रुलाने वाला रावज, नमुचि, शम्बर भौमासुर, हिरण्याक्ष, और तारकासुर राजा हुआ ॥

द्वादशः श्लोकः

अन्ये च बहवो दैत्या राजानो ये महेश्वराः ।
सर्वे सर्वविदः शूराः सर्वे सर्वजितोऽजिताः ॥१२॥

पदच्छेद—

अन्ये च बहवः दैत्या राजानः ये महेश्वराः ।
सर्वे सर्वविदः शूराः सर्वे सर्वजितः अजिताः ॥

शब्दार्थ—

अन्ये च	१. और दूसरे	सर्वे	७. वे सब
बहवः	२. बहुत से	सर्वविदः	८. सब कुछ जानते थे और
दैत्याः	३. दैत्य एवं	शूराः	९. वीर थे तथा
राजानः	४. राजा हुये	सर्वे	१०. वे
ये	५. जो	सर्वजितः	११. सब को जीतने वाले थे
महेश्वराः ।	६. शक्तिशाली थे	अजिताः ॥	१२. तथा किसी से पराजित नहीं हुए

श्लोकार्थ—और दूसरे बहुत से दैत्य एवं राजा हुये, जो शक्तिशाली थे । वे सब सब कुछ जानते थे और वीर थे, तथा वे सब को जीतने वाले थे । तथा किसी से पराजित नहीं हुरे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

ममतां मय्यवर्तन्त कृत्वोच्चैर्मर्त्यधर्मिणः ।
कथावशेषाः कालेन ह्यकृतार्थाः कृता विभो ॥१३॥

पदच्छेद—

ममताम् मयि अवर्तन्त कृत्वा उच्चैः मर्त्यधर्मिणः ।
कथा अवशेषाः कालेन हि कृतार्थाः कृताः विभो ॥

शब्दार्थ—

ममताम्	५.	ममता	कथा	१०.	कथा मात्र
मयि	३.	मुझसे	अवशेषाः	११	अवशेष
अवर्तन्त	७.	अवस्थित थे	काशेनहि	८.	किन्तु काल ने
कृत्वा	६.	करके	अकृतार्थाः	९.	उन्हें (विनामनोरथ पूर्ण किये ही मार डाला
उच्चैः	४.	बड़ी	कृताः	१२.	रह गई
मर्त्यधर्मिणः ।	२.	वे मरणधर्मा प्राणी	विभो ॥	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हें राजन् ! वे मरण धर्मा पाणी मुझसे बड़ी ममता करके अवस्थित थे । किन्तु काल ने उन्हें विना मनोरथ पूर्णकिये ही मार डाला कथा मात्र अव शेष रह गई है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

कथा इमास्ते कथिता महीयसां विताय लोकेषु यशः परेयुषाम् ।
विज्ञानवैराग्यविवक्षया विभो वचोविभूतीः न तु पारमार्थ्यम् ॥१४॥

पदच्छेद—

कथा इमाः ते कथिता महीयसाम् विताय लोकेपु यशः परेयुषाम् ।
विज्ञान वैराग्य विवक्षया विभो वचो विभूतीः न तु पारमार्थ्यम् ॥

शब्दार्थ—

कथाइमाः	७.	ये कथायें	विज्ञान	९.	विशिष्ट ज्ञान और
तेकथिता	८.	तुमसे कही हैं	वैराग्य	१०.	वैराग्य का
महीयसाम्	६.	महापुरुषों की	विवक्षया	११.	उपदेश करने के लिये
विताय	४.	विस्तार करके	विभो	१.	हे राजन्
लोकेषु	२.	संसार में	वचो	१२.	ये वाणी के
यशः	३.	यश का	विभूतीःनतु	१३.	विलास हैं न कि
परेयुषाम् ।	५.	परलोक को गये हुये	परमार्थ्यम् ॥	१४.	पारमार्थिक सत्य हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! संसार में यश का विस्तार करके परलोक को गये हुये महा पुरुषों की ये कथायें तुमसे कही हैं । विशिष्ट ज्ञान और वैराग्य का उपदेश करने के लिये ये वाणी के विलास हैं । न कि पारमार्थिक सत्य है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

यस्तूत्तमश्लोकगुणानुवादः संगीयतेऽभीक्ष्णममङ्गलघ्नः ।
तमेव नित्यं शृणुयादभीक्ष्णं कृष्णेऽमलां भक्तिमभीप्समानः ॥१५॥

पदच्छेद—

यः तु उत्तमश्लोकगुणानुवादः संगीयते अभीक्ष्णम् अमङ्गलघ्नः ।
तम् एवनित्यं शृणुयाद् अभीक्ष्णम् कृष्णे अमलाम् भक्तिम् अभीप्समानः ॥

शब्दार्थ—

यः	२.	ये	तम् एव	८.	उसी गुणानुवाद का
तु	३.	जो	नित्यम्	१२.	नित्य
उत्तम श्लोक	४.	भगवान् श्रीकृष्ण का	शृणुयाद्	१४.	श्रवण करना चाहिये
गुणानुवादः	५.	गुणानुवाद (महात्माओं केद्वारा)	अभीक्षणम्	१३.	निरन्तर
संगीयते	७.	गाया जाता हैं	कृष्णे अमलाम्	९.	श्रीकृष्ण में निर्मल
अभीक्षणम्	६.	निरन्तर	भक्तिम्	१०.	भक्ति
अमङ्गलघ्नः ।	१.	अमङ्गलों का नाशक	अभीप्समानः ॥	११	चाहने वाले को

श्लोकार्थ—अमङ्गलों का नाशक ये जो भगवान् श्रीकृष्ण का गुणानुवाद महात्माओं के द्वारा निरन्तर गाया जाता है। उसी गुणानुवाद का श्रीकृष्ण मे निर्मल भक्ति चाहने वाले को नित्य-निरन्तर श्रवण करना चाहिये ॥

षोडशः श्लोकः

केनोपायेन भगवन् कलेर्दोषान् कलौ जनाः ।
विधमिष्यन्त्युपचितांस्तन्मे ब्रूहि यथा मुने ॥१६॥

पदच्छेद—

केन उपायेन भगवन् कलेः दोषान् कलौ जनाः ।
विधमिष्यन्ति उपचितान् तत् मे ब्रूहि यथा मुने ॥

शब्दार्थ—

केन	७.	किस	विधमिष्यन्ति	९.	नष्ट करेंगे
उपायेन	८.	उपाय से	उपचित्तान्	५.	बढ़े हुये
भगवन्	१.	हे भगवन् !	तत् मे	१०.	वह मुझे
कलेः	४.	कलियुग के	ब्रूहि	१२.	बतलाइये
दोषान्	६.	दोषों को	यथा	११.	ठीक-ठीक
कलौजनाः	३.	कलियुग में लोग	मुने ॥	२.	हे मुने !

श्लोकार्थ—हे भगवन् ! हे मुने ! कलियुग में लोग कलियुग के बढ़े हुये दोषों को किस उपाय से नष्ट करेंगे। वह मुझे ठीक-ठीक बतलाइये ॥

सप्तदशः श्लोकः

युगानि युगधर्माश्च मानं प्रलयकल्पयोः ।
कालस्येश्वररूपस्य गतिं विष्णोर्महात्मनः ॥१७॥

पदच्छेद—

युगानि युग धर्माम् च मानम् प्रलय कल्पयोः ।
कालस्य ईश्वर रूपस्य गतिम् विष्णोः महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

युगानि	१. युगों तथा	कालस्य	७. कालरूप और
युग	२. युग के	ईश्वर	८. ईश्वर
धर्माम् च	३. धर्म और	रूपस्य	९. स्वरूप
मानम्	६. मान एवं	गतिम्	१२. चेष्टा को बताइये
प्रलय	४. प्रलय तथा	विष्णोः	११. विष्णु की
कल्पयोः ।	५. कल्प के	महात्मनः ॥	१०. महात्मा

श्लोकार्थ—युगों तथा युग के धर्म और प्रलय तथा कल्प के मान एवं काल रूप और ईश्वर स्वरूप महात्मा विष्णु की चेष्टा को बताइये ॥

अष्टदशः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—कृते प्रवर्तते धर्मश्चतुष्पात्तज्जनैर्धृतः ।
सत्यं दया तपो दानमिति पादा विभोर्नृप ॥१८॥

पदच्छेद—

कृते प्रवर्तते धर्मः चतुष्पात् तत् जनैः धृतः ।
सत्यम् दया तपः दानम् इति पादाः विभोः नृप ॥

शब्दार्थ—

कृते	२. सत्य युग में	सत्यम्दया	८. सत्य, दया
प्रवर्तते	५. होते हैं	तपः	९. तप, और
धर्मः	३. धर्म के	दानम्	१०. दान
चतुष्पात्	४. चार चरण	इतिपादाः	११. ये चरण हैं
तत् जनैः	६. उसे लोग	विभोः	१२. व्यापक धर्म भगवान का रूप है ।
धृतः ।	७. धारण करते हैं	नृप ॥	१. राजन्

श्लोकार्थ—राजन् ! सत्य युग में धर्म के चार चरण होते हैं, उसे लोग धारण करते हैं । सत्य, दया, तप और दान ये चरण हैं । व्यापक धर्म भगवान् का रूप है ।

एकोनविंशः श्लोकः

सन्तुष्टाः करुणा मैत्राः शान्ता दान्तास्तितिक्षवः।
आत्मारामाः समदृशः प्रायशः श्रमणा जनाः ॥१९॥

पदच्छेद—

सन्तुष्टाः करुणा मैत्रा शान्ताः दान्ताः तितिक्षवः।
आत्मारामाः समदृशः प्रायशः श्रमणा जनाः ॥

शब्दार्थ—

सन्तुष्टाः	१.	सत्य युगी लोग सन्तोषी	आत्मा	७.	आत्मा
करुणाः	२.	दयालु	रामाः	८.	राम
मैत्राः	३.	सबसे मित्रता रखने वाले	समदृशः	९.	समदर्शी (तथा)
शान्ताः	४.	चित्त को वश में रखने वाले	प्रायशः	१०.	अधिकांश
दान्ताः	५.	इन्द्रियों का दमन करने वाले	श्रमणा	१२.	अभ्यास में तत्पर रहते हैं
तितिक्षवः।	६.	सहन शील	जनाः	११.	लोग

श्लोकार्थ—सत्ययुगी, दयालु सबसे मित्रता रखने वाले चित्तको वश में रखने वाले इन्द्रियों का दमन करने वाले सहनशील, आत्माराम, समदर्शी तथा अधिकांश लोग अभ्यास में तत्पर रहते हैं ॥

विंशः श्लोकः

त्रेतायां धर्मपादानां तुर्यांशो हीयते शनैः।
अधर्मपादैरनृतहिंसासन्तोषविग्रहैः ॥२०॥

पदच्छेद—

त्रेतायाम् धर्म पादानाम् तुर्यांशः हीयते शनैः।
अधर्म पादैः अनृत हिंसा असन्तोष विग्रहैः ।

शब्दार्थ—

त्रेतायाम्	१.	त्रेतायुग में	अधर्म	६.	अधर्म के
धर्म	८.	धर्म के	पादैः	७.	चरणों के (प्रभाव से)
पादानाम्	९.	चरणों का	अनृत	२.	असत्य
तुर्यांशः	१०.	चतुर्थांश	हिंसा	३.	हिंसा
हीयते	१२.	क्षीण हो जाता है	असन्तोष	४.	असन्तोष
शनैः।	११.	धीरे-धीरे	विग्रहैः ॥	५.	और कलह रूप

श्लोकार्थ—त्रेता युग में असत्य, हिंसा, असन्तोष और कलह रूप अधर्म के चरणों के प्रभाव से धर्म के चरणों का चतुर्थांश धीरे-धीरे क्षीण हो जाता है।

एकविंशः श्लोकः

तदा क्रियातपोनिष्ठा नातिहिंस्रा न लम्पटाः ।
त्रैवर्गिकास्त्रयीवृद्धा वर्णा ब्रह्मोत्तरा नृप ॥२१॥

पदच्छेद—

तदा क्रिया तपः निष्ठा न अति हिंस्रा न लम्पटाः ।
त्रैवर्गिकाः त्रयी वृद्धा वर्णाः ब्रह्म उत्तराः नृप ॥

शब्दार्थ—

तदा	१.	उस समय	त्रैवर्गिकाः	१०.	अर्थ धर्म काम रूप त्रिवर्ग का सवेन करते हैं
क्रियातपः	५.	वे कर्मकाण्ड और तपस्या में	त्रयी	११.	तथा वे दों के
निष्ठाः	६.	निष्ठा रखते हैं	वृद्धा	१२.	पारदर्शी विद्वान होते हैं
न अति	७.	वेन अत्यन्त	वर्णाः	३.	चारों वर्णों में
हिंस्रा	८.	हिंसक और	ब्रह्म उत्तरा	४.	ब्राह्मणों की श्रेष्ठता रहतीहै
नलम्पटाः ।	९.	न लम्पट होते हैं	नृप ॥	२.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! उस समय चारों वर्णों में ब्राह्मणों की श्रेष्ठता रहती है । वे कर्म काण्ड और तपस्या मे निष्ठा रखते हैं वे न अत्यन्त हिंसक और न लम्पट होते हैं । अर्थ, धर्म, काम रूप त्रिवर्ग का सेवन करते हैं । तथा वेदों के पारदर्शी विद्वान होते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

तपः सत्यदयादानेष्वर्धं ह्रसति द्वापरे ।
हिंसातुष्ट्यनृतद्वेषैर्धर्मस्याधर्मलक्षणैः ॥२२॥

पदच्छेद—

तपः सत्य दया दानेषु अधर्म ह्रसति द्वापरे ।
हिंसा अतुष्टि अनृत द्वेषैः धर्मस्य अधर्मलक्षणैः ॥

शब्दार्थ—

तपः	२.	तपस्या	हिंसा	८.	और हिंसा
सत्य	३.	सत्य	अतष्टि	९.	असन्तोष
दयादानेषु	४.	दया और दान में	अनृत	१०.	झूठ एवम्
अधर्म	६.	आधा-आध भाग	द्वेषैः	११.	द्वेष
ह्रसति	७.	क्षीण हो जाता है	धर्मस्य	५.	धर्म का
द्वापरे ।	१.	द्वापर युग में	अधर्मलक्षणैः ॥	१२.	इन चरणों की वृद्धि हो जाती है

श्लोकार्थ—द्वापर युग में तपस्या, सत्य, दया और दान में धर्म का आधा-आधा भाग क्षीण हो जाता है । और हिंसा, असन्तोष झूठ एवं द्वेष इन चरणों की वृद्धि हो जाती है ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

यशस्विनो महाशालाः स्वाध्यायाध्ययने रताः ।
आढ्याः कुटुम्बिनो हृष्टा वर्णाः क्षत्रद्विजोत्तराः ॥२३॥

पदच्छेद—

यशस्विनो महाशालाः स्वाध्याय अध्ययने रताः ।
आढ्याः कुटुम्बिनो हृष्टाः वर्णाः क्षत्र द्विज उत्तराः ॥

शब्दार्थ—

यशस्विनो	२.	यशस्वी	कुटुम्बिनः	८.	कुटुम्बों से युक्त
महाशालाः	३.	कर्म काण्डी	हृष्टाः	९.	और सुखी होते हैं
स्वाध्याय	४.	वेदों से	वर्णाः	१.	उस समय के लोग
अध्ययने	५.	अध्ययन में	क्षत्र	११.	क्षत्रियों की
रताः	६.	तत्पर	द्विज	१०.	वर्णों में ब्राह्मण और
आढ्याः ।	७.	सम्पन्न	उत्तराः ॥	१२.	प्रधानता रहती है

श्लोकार्थ—उस समय के लोग यशस्वी कर्मकाण्डी वेदों के अध्ययन में तत्पर सम्पन्न कुटुम्बों से युक्त और सुखी होते हैं । वर्णों में ब्राह्मण और क्षत्रियों की प्रधानता रहती है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

कलौ तु धर्महेतूनां तुर्यांशोऽधर्महेतुभिः ।
एधमानैः क्षीयमाणो ह्यन्ते सोऽपि विनङ्क्ष्यति ॥२४॥

पदच्छेद—

कलौ तु धर्म हेतूनाम् तुर्यांशः अधर्म हेतुभिः ।
एधमानैः क्षीयमाणः हिअन्ते सः अपि विनङ्क्ष्यति ॥

शब्दार्थ—

कलौ तु	१.	कलियुग में तो	एधमानैः	४.	बढ़ जाने से
अधर्म	५.	धर्म के	क्षीयमाणैः	८.	क्षीण होने लगता है और
हेतूनाम्	६.	कारणों का	हि अन्ते	९.	अन्तु में
तुर्यांशः	७.	चतुर्थांश	सः	१०.	वह
अधर्म	२.	अधर्म के	अपि	११.	भी
हेतुभिः ।	३.	कारणों के	विनङ्क्ष्यति ॥	१२.	नष्ट हो जाता है

श्लोकार्थ—कलियुग में तो अधर्म के कारणों के बढ़ जाने से धर्म के कारणों का चतुर्थांश क्षीण होने लगता है । और अन्त में वह भी नष्ट हो जाता है ।

पञ्चविंशः श्लोकः

तस्मिँल्लुब्धा दुराचारा निर्दयाः शुष्कवैरिणः ।
दुर्भगा भूरितर्षाश्च शूद्रदाशोत्तराः प्रजाः ॥२५॥

पदच्छेद—

तस्मिन् लुब्धा दुराचारा निर्दया शुष्कवैरिणः ।
दुर्भगाः भूरि तर्षाः च शूद्र दाश उत्तराः प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१.	उस कलियुग में	दुर्भगाः	८.	अभागे
लुब्धा	३.	लोभी	भूरि	९.	विशाल
दुराचारा	४.	दुराचारी	तर्षाः च	१०.	तृष्णा वाले तथा
निर्दया	५.	दया शून्य	शूद्रदाश	११.	शूद्र और केवट की
शुष्क	६.	झूठ-मुठ के	उत्तराः	१२.	प्रधानता वाले होंगे
वैरिणः ।	७.	वैर करने वाले	प्रजाः ॥	२.	प्रजाजन

श्लोकार्थ—उस कलियुग में प्रजाजन लोभी, दुराचारी, दयाशून्य, झूठ-मूठ के वैर करने वाले अभागे, विशाल तृष्णा वाले तथा शूद्र और केवट की प्रधानता वाले होंगे ॥

षट्विंशः श्लोकः

सत्वं रजस्तम इति दृश्यन्ते पुरुषे गुणाः ।
कालसञ्चोदितास्ते वै परिवर्तन्त आत्मनि ॥२६॥

पदच्छेद—

सत्वम् रजस्तम इति दृश्यन्ते पुरुषे गुणाः ।
काल सञ्चोदिताः ते वै परिवर्तन्त आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

सत्वम्	२.	सत्त्व	काल	७.	काल की
रजः तम	३.	रज और तम	सञ्चोदिताः	८.	प्रेरणा से
इति	४.	ये	ते वै	९.	वे
दृश्यन्ते	६.	दिखाई देते हैं	परिवर्तन्त	११.	परिवर्तित होते रहते हैं
पुरुषे	१.	पुरुष में	आत्मनि ॥	१०.	आत्मा में
गुणाः ।	५.	गुण			

श्लोकार्थ—पुरुष में सत्त्व, रज और तम ये गुण दिखाई देते हैं। काल की प्रेरणा से वे आत्मा में परिवर्तित होते हैं ॥

सप्तविंशः श्लोकः

प्रभवन्ति यदा सत्त्वे मनोबुद्धीन्द्रियाणि च ।
तदा कृतयुगं विद्याज्ज्ञाने तपसि यद् रुचिः ॥२७॥

पदच्छेद—

प्रभवन्ति यदा सत्त्वे मनो बुद्धिइन्द्रियाणि च ।
तदा कृतयुगम् विद्यात् ज्ञाने तपसि यत् रुचिः ॥

शब्दार्थ—

प्रभवन्ति	६.	स्थित होकर कार्य करती है	तदा	७.	उस समय
यदा	१.	जिस समय	कृतयुगम्	८.	सत्य युग
सत्त्वे	५.	सत्त्व गुण में	विद्यात्	९.	समझना चाहिये
मनः बुद्धि	२.	मन-बुद्धि	ज्ञानेतपसि	११.	ज्ञान और तपस्या में
इन्द्रियाणि	४.	इन्द्रियां	यत्	१०.	क्योंकि उस समय
च ।	३.	और	रुचि ॥	१२.	रुचि होती है

श्लोकार्थ—जिस समय मन-बुद्धि और इन्द्रियाँ सत्त्वगुण में स्थित होकर कार्य करती हैं उस समय सत्ययुग समझना चाहिये, क्योंकि उस समय ज्ञान और तपस्या में रुचि होती है ॥

अष्टविंशः श्लोकः

यदा धर्मार्थकामेषु भक्तिर्भवति देहिनाम् ।
तदा त्रेता रजोवृत्तिरिति जानीहि बुद्धिमन् ॥२८॥

पदच्छेद—

यदा धर्मार्थ कामेषु भक्तिः भवति देहिनाम् ।
तदा त्रेता, रजो वृत्तिः इति जानी हि बुद्धिमन् ॥

शब्दार्थ—

यदा	२.	जिस समय	तदा	८.	उस समय
धर्मार्थ	३.	धर्म, अर्थ और	त्रेता	१०.	त्रेता युग है
कामेषु	४.	काम में	रजोवृत्तिः	९.	रजोगुण की वृत्ति वाला
भक्तिः	६.	भक्ति	इति	१०.	ऐसा
भवति	७.	होती है	जानीहि	१२.	समझना चाहिये
देहिनाम् ।	५.	मनुष्यों की	बुद्धिमन् ॥	१.	बुद्धिमान् परीक्षित् ।

श्लोकार्थ—हे बुद्धिमान परीक्षित् ! जिस समय धर्म, अर्थ और काम में मनुष्यों की भक्ति होती है। उस समय रजोगुण की वृत्ति वाला त्रेता युग है ऐसा समझना चाहिये ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

यदा लोभस्त्वसन्तोषो मानो दम्भोऽथ मत्सरः ।
कर्मणां चापि काम्यानां द्वापरं तद् रजस्तमः ॥२९॥

पदच्छेद—

यदा लोभः तु असन्तोषः मानः दम्भः अथ मत्सरः ।
कर्मणाम् च अपि काम्यानाम् द्वापरम् तद्रजः तमः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जिस समय	कर्मणाम्	९.	कर्मों की प्रबलता होती है
लोभः तु	२.	लोभ	च अपि	७.	और
असन्तोषः	३.	असन्तोष	काम्यानाम्	८.	काम्य
मानः दम्भः	४.	मान दम्भ	द्वापरम्	१२.	द्वापर युग समझना चाहिये
अथ	५.	तथा	तद	१०.	उस समय
मत्सरः ।	६.	मत्सर होता है	रजःतमः ॥	११.	रजोगुण, तमोगुण से मिला हुआ

श्लोकार्थ—जिस समय लोभ, असन्तोष, मान-दम्भ तथा मत्सर होता है। और काम्य कर्मों की प्रबलता होती है, उस समय रजोगुण, तमो गुण से मिला हुआ द्वापर युग समझना चाहिये ॥

त्रिंशः श्लोकः

यदा मायानृतं तन्द्रा निद्रा हिंसा विषादनम् ।
शोको मोहो भयं दैन्यं स कलिस्तामसः स्मृतः ॥३०॥

पदच्छेद—

यदा माया नृतम् अतन्द्रा निद्रा हिंसा विषादनम् ।
शोकः मोहः भयम् दैन्यम् सः कलिः तामसः स्मृतः ॥

शब्दार्थ—

यदा	१.	जिस समय	शोकः	८.	शोक
माया	२.	माया	मोहः	९.	मोह
अनृतम्	३.	झूठ	भयम्	१०.	भय और
तन्द्रा	४.	तन्द्रा	दैन्यम्	११.	दैन्य (दीनता) होती है
निद्रा	५.	निद्रा	सःकलि	१२.	वह कलि युग है
हिसाः	६.	हिंसा	तामसः	१३.	तमोगुण प्रधान
विषादनम् ।	७.	विषाद	स्मृतः ॥	१४.	कहा गया है

श्लोकार्थ—जिस समय माया, झूठ, तन्द्रा, निद्रा, हिंसा, विषाद, शोक, मोह, भय और दीनता होती है। वह कलियुग है, जो तमो गुण प्रधान कहा गया है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

यस्मात् क्षुद्रदृशो मर्त्याः क्षुद्रभाग्या महाशनाः ।
कामिनो वित्तहीनाश्च स्वैरिण्यश्च स्त्रियोऽसतीः ॥३१॥

पदच्छेद—

तस्मात् क्षुद्र दृशो मर्त्याः क्षुद्र भाग्याः महाशनाः ।
कामिनः वित्तहीनाः च स्वैरिण्यः च स्त्रिय असतीः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	१. जिस कलियुग में	कामिनः	७. कामी
क्षुद्र	३. क्षुद्र	वित्तहीनाः च	८. और वित्त हीन होते हैं
दृशः	४. दृष्टि वाले	स्वैरिण्यः	१२. स्वेच्छा चारिणी होती हैं
मर्त्याः	२. मनुष्य	च	९. तथा
क्षुद्रभाग्याः	५. मन्द भाग्य वाले	स्त्रियां	१०. स्त्रियां
महाशनाः ।	६. बहुत खाने वाले	असतीः ॥	११. कुलटा एवं

श्लोकार्थ—जिस कलियुग में मनुष्य क्षुद्र दृष्टि वाले मन्द भाग्य वाले बहुत खाने वाले, कामी और वित्त हीन होते हैं। तथा स्त्रियां कुलटा एवम् स्वेच्छाचारिणी होती हैं ।

द्वात्रिंशः श्लोकः

दस्यूत्कृष्टा जनपदा वेदाः पाखण्डदूषिताः ।
राजानश्च प्रजाभक्षाः शिश्नोदरपरा द्विजाः ॥३२॥

पदच्छेद—

दस्यु उत्कृष्टाः जनपदाः वेदः पाखण्ड दूषिता ।
राजानः च प्रजा भक्षाः शिश्नोदर परा द्विजाः ॥

शब्दार्थ—

दस्यु	३. अधिकता हो जाती है	राजानः च	७. राजा लोग
उत्कृष्टा	२. लुटेरों की	प्रजा	८. प्रजाओं को
जनपदाः	१. जनपदों, गांव और देशों में	भक्षाः	९. भक्षण करके
वेदाः	५. वेदों का (मनमाना अर्थ करके)	शिश्नोदर	११. पेट भरने में और इन्द्रियों को तृप्त करने में
पाखण्ड	४. पाखण्डी लोग	पराः	१२. लगे रहते हैं ॥
दूषिताः ।	६. दूषित करते हैं	द्विजाः ॥	१०. ब्राह्मण लोग

श्लोकार्थ—जनपदों, गावों और देशों में लुटेरों की अधिकता हो जाती है। पाखण्डी लोग वेदों का मनमाना अर्थ करके दूषित करते हैं। राजालोग प्रजाओं का भक्षण करने में ब्राह्मण लोग पेट भरने में और इन्द्रियों को तृप्त करने में लगे रहते हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

अव्रता वटवोऽशौचा भिक्षवश्च कुटुम्बिनः ।
तपस्विनो ग्रामवासा न्यासिनोऽत्यर्थलोलुपाः ॥३३॥

पदच्छेद—

अव्रताः वटवः अशौचाः भिक्षवः च कुटुम्बिनः ।
तपस्विनः ग्राम वासा न्यासिनः अतिअर्थ लोलुपाः ॥

शब्दार्थ—

अव्रताः	२.	व्रत से रहित और	तपस्विनः	७.	वान प्रस्थी
वटवः	१.	ब्रह्मचारी लोग	ग्राम वासा	८.	गाँवों में बसने लगते हैं
अशौचाः	३.	अपवित्र रहने लगते हैं	न्यासिनः	९.	संन्यासी
भिक्षवः	६.	भीख मांगने लगते हैं	अति	११.	अत्यन्त
च	४.	और	अर्थ	१०.	धन के
कुटुम्बिनः ।	५.	गृहस्थ	लोलुपाः ॥	१२.	लोभी हो जाते हैं

शब्दार्थ—ब्रह्मचारी लोग व्रत से रहित और अपवित्र रहने लगते हैं। और गृहस्थ भीख मांगने लगते हैं। वानप्रस्थी गाँवों में बसने लगते हैं। संन्यासी धन के अत्यन्त लोभी हो जाते हैं॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

ह्रस्वकाया महाहारा भूर्यपत्या गतह्रियः ।
शश्वत्कटुकभाषिण्यःशौर्यमायोरुसाहसाः ॥३४॥

पदच्छेद—

ह्रस्वकाया महाहाराः भूर्यपत्याः गतह्रियः ।
शश्वत् कटुकभाषिण्यः शौर्य मायाः उरु साहसाः ॥

शब्दार्थ—

ह्रस्वकायाः	१.	स्त्रियाँ छोटे आकार की	कटुक	७.	कठुवचन
महाहाराः	२.	बहुत खाने वाली	भाषिण्य.	८.	बोलने वाली
भूर्यपत्याः	३.	बहुत सन्तान वाली	शौर्य	९.	वीरता
गत	५.	रहित	मायाः	१०.	माया और
ह्रियः ।	४.	लज्जा से	उरु	११.	अधिक
शश्वत्	६.	सर्वदा	साहसाः ॥	१२.	साहसी होती हैं

श्लोकार्थ—स्त्रियाँ छोटे आकार की बहुत खाने वाली, बहुत सन्तान वाली, लज्जा से रहित सर्वदा कटु वचन बोलने वाली, वीरता, माया और अधिक साहसी होती हैं॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

पणयिष्यन्ति वै क्षुद्राः किराटाः कूटकारिणः ।
अनापद्यपि मंस्यन्ते वार्तां साधुजुगुप्सिताम् ॥३५॥

पदच्छेद—

पणयिष्यन्ति वै क्षुद्राः किराटाः कूट कारिणः ।
अनापद्यपि मंस्यन्ते वार्ताम् साधु जुगुप्सिताम् ॥

शब्दार्थ—

पणयिष्यन्ति	५. व्यापार करेंगे	अनापद्यपि	६. आपत्ति काल न होने परभी वे
वै क्षुद्राः	४. क्षुद्र हृदय लोग	मंस्यन्ते	१०. अच्छा मानेंगे
किराताः	१. म्लेच्छ एवम्	वार्ताम्	९. निम्न कोटिके व्यापार को
कूट	२. धोका धड़ी	साधु	७. सज्जनों द्वारा
कारिणः ।	३. करने वाले	जुगुप्सिताम् ॥	८. निन्दित और

श्लोकार्थ—म्लेच्छ एवम् धोका धड़ी करने वाले क्षुद्र हृदय लोग व्यापार करेंगे । आपत्ति काल न होने पर भी सज्जनों द्वारा निन्दित और निम्न कोटि के व्यापार को अच्छा मानेंगे ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

पतिं त्यक्ष्यन्ति निर्द्रव्यं भृत्या अप्यखिलोत्तमम् ।
भृत्यं विपन्नं पतयः कौलं गाश्चापयस्विनीः ॥३६॥

पदच्छेद—

पतिम् त्यक्ष्यन्ति निर्द्रव्यं भृत्या अपि अखिल उत्तमम् ।
भृत्यम् विपन्नम् पतयः कौलम् गाःच अपयस्विनीः ॥

शब्दार्थ—

पतिम्	३. स्वामी को	भृत्यम्	८. सेवक को
त्यक्ष्यन्ति	६. त्याग देंगे	विपन्नम्	९. विपत्तिग्रस्त होने पर तथा
निर्द्रव्यम्	१. द्रव्य हीन हो जाने पर	पतयः	१२. स्वामी त्याग देंगे
भृत्याः	५. सेवक लोग	कौलम्	७. कुलपरम्परा से आये हुये
अपि	४. भी	गाःच	१०. गौओं को
अखिल उत्तमम् ।	२. सर्व श्रेष्ठ	अपयस्विनी ॥	११. दूध न देने पर

श्लोकार्थः—द्रव्य हीन हो जाने पर सर्व श्रेष्ठ स्वामी को भी सेवक लोग त्याग देंगे । कुल परम्परा से आये हुये सेवक को विपत्ति ग्रस्त होने पर तथा गौओं को दूध न देने पर स्वामी त्याग देंगे ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

पितृभ्रातृसुहृज्ज्ञातीन् हित्वा सौरतसौहृदाः ।
ननान्दृश्यालसंवादा दीनाः स्त्रैणाः कलौ नराः ॥३७॥

पदच्छेद—

पितृभ्रातृ सुहृत् ज्ञातीन् हित्वा सौरत सौहृदाः ।
ननान्दृ श्याल संवादा दीनाः स्त्रैणाः कलौ नराः ॥

शब्दार्थ—

पितृ भ्रातृ	६. पिता-भाई	ननान्दृ	१०. साली और
सुहृत्	७. मित्र और	श्याल	११. सालों से
ज्ञातीन्	८. बन्धुओं को	संवादा	१२. सलाह लेने वाले होंगे
हित्वा	९. त्याग कर	दीनाःस्त्रैणाः	३. स्त्रैण दीन और
सौरत	१. वासना की तृप्ति के लिये	कलौ	४. कलियुगी
सौहृदाः ।	२. मित्रता करने वाले	नराः ॥	५. नर

श्लोकार्थ—वासना की तृप्ति के लिये मित्रता करने वाले स्त्रैण, दीन और कलियुगी नर पिता-भाई, मित्र और बन्धुओं को त्यागकर साली और सालों से सलाह लेने वाले होंगे ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

शूद्राः प्रतिग्रहीष्यन्ति तपोवेषोपजीविनः ।
धर्मं वक्ष्यन्त्यधर्मज्ञा अधिरुह्योत्तमासनम् ॥३८॥

पदच्छेद—

शूद्राः प्रतिग्रहीष्यन्ति तपः वेषः उपजीविनः ।
धर्मम् वक्ष्यन्ति अधर्मज्ञाः अधिरुह्य उत्तम आसनम् ॥

शब्दार्थ—

शूद्राः	४. शूद्र	धर्मम्	९. धर्म का
प्रतिग्रहीष्यन्ति	५. दान लेंगे	वक्ष्यन्ति	१०. उपदेश करेंगे
तपः	१. तपस्वियों का	अधर्मज्ञाः	६. धर्मज्ञान से रहित लोग
वेषः	२. वेष बनाकर	अधिरुह्य	८. बैठकर
उपजीविनः ।	३. पेट भरने वाले	उत्तम आसनम् ॥	७. उत्तम आसन पर

श्लोकार्थ—तपस्वियों का वेष बनाकर पेट भरने वाले शूद्र दान लेंगे। धर्मज्ञान से रहित लोग उत्तम आसन पर बैठकर धर्म का उपदेश करेंगे ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

नित्यमुद्विग्नमनसो दुर्भिक्षकरकर्शिताः ।
निरन्ने भूतले राजन्ननावृष्टिभयातुराः ॥३९॥

पदच्छेद—

नित्यम् उद्विग्न मनसः दुर्भिक्ष कर कर्शिताः ।
निरन्ने भूतले राजन् अनावृष्टि भय आतुराः ॥

शब्दार्थ—

नित्यम्	२.	नित्य	निरन्ने	८.	और अन्नरहित
उद्विग्न	३.	उद्विग्न	भूतले	९.	भूतल पर
मनसः	४.	मन वाले	राजन्	१.	हे राजन् !
दुर्भिक्षः	५.	दुर्भिक्ष और	अनावृष्टि	१०.	कलियुगी लोग वर्षा के अभाव
कर	६.	कर से	भय	११.	के भय से
कर्शिताः ।	७.	पीडित रहने वाले	आतुराः ॥	१२.	आतुर होंगे

श्लोकार्थ—हे राजन् ! नित्य उद्विग्न मन वाले दुर्भिक्ष और कर से पीड़ित रहने वाले और अन्नरहित, भूतल पर वर्षा के अभाव के भय से आतुर होंगे ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

वासोऽन्नपानशयनव्यवायस्नानभूषणैः ।
हीना पिशाचसन्दर्शा भविष्यन्ति कलौ प्रजाः ॥४०॥

पदच्छेद—

वासः अन्न पान शयन व्यवाय स्नान भूषणैः ।
हीनाः पिशाच सन्दर्शाः भविष्यन्ति कलौ प्रजाः ॥

शब्दार्थ—

वासः	३.	वस्त्र	हीनाः	९.	हीन
अन्न पान	४.	अन्न-पान	पिशाच	११.	पिशाच के समान
शयन	५.	शयन	सन्दर्शाः	१२.	दिखाई देंगी
व्यवाय	६.	दाम्पत्य सुख	भविष्यति	१०.	होंगी और
स्नान	७.	स्नान और	कलौ	१.	कलियुग में
भूषणैः ।	८.	आभूषण से	प्रजाः ।	२.	प्रजायें

श्लोकार्थ— कलियुग में प्रजायें वस्त्र, अन्न, पान, शयन, दाम्पत्य सुख, स्नान और आभूषण से हीन होंगी और पिशाच के समान दिखाई देंगी ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

कलौकाकिणिकेऽप्यर्थे विगृह्य त्यक्तसौहृदाः ।
त्यक्ष्यन्ति च प्रियान् प्राणान् हनिष्यन्ति स्वकानपि ॥४१॥

पदच्छेद—

कलौ काकिणिके अपि अर्थे विगृह्य त्यक्तसौहृदाः ।
त्यक्ष्यन्ति च प्रियान् प्राणान् हनिष्यन्ति स्वकान् अपि ॥

शब्दार्थ—

कलौ	१. कलियुग में लोग	त्यक्ष्यन्ति	१२. त्याग देंगे
काकिणिके	२. कौड़ियों के	च प्रियान्	१०. और प्रिया
अपि अर्थे	४. लिये भी	प्राणान्	११. प्राणों को भी
विगृह्य	४. वैर विरोध करके	हनिष्यन्ति	९. मार डालेंगे
त्यक्त	६. त्याग कर	स्वकान्	७. अपने बन्धुओं को
सौहृदाः ।	५. मित्रता को	अपि ॥	८. भी

श्लोकार्थ—कलियुग के लोग कौड़ियों के लिये भो वैरविरोध करके मित्रता को त्यागकर अपने बन्धुओ को भी मार डालेंगे । और प्रिय प्राणों को भी त्याग देंगे ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

न रक्षिष्यन्ति मनुजाः स्थविरौ पितरावपि ।
पुत्रान् सर्वार्थकुशलान् क्षुद्राः शिश्नोदरम्भराः ॥४२॥

पदच्छेद—

नरक्षिष्यन्ति मनुजाः स्थविरौ पितरौ अपि ।
पुत्रान् सर्वार्थ कुशलान् क्षुद्राः शिश्नोदरम्भराः ॥

शब्दार्थ—

नरक्षिष्यन्ति	११. रक्षा पालन नहीं करेंगे	पुत्रान्	९. पुत्रों की
मनुजाः	४. मनुष्य	सर्वार्थ	७. सब कामों में
स्थविरौ	५. बूढ़े	कुशलान्	८. निपुण
पितरौ	६. माता-पिता की तथा	क्षुद्राः	३. क्षुद्र
अपि ।	१०. भी	शिश्नोदर	१. काम वासना में तथा उदर
		म्भराः ॥	२. भरने में लगे हुये

श्लोकार्थ—काम वासना में तथा उदर भरने में लगे हुये क्षुद्र मनुष्य बूढ़े माता-पिता की तथा सब कामों में निपुण पुत्रों की भी रक्षा पालन नहीं करेंगे ॥

त्रयश्चत्वरिंशः श्लोकः

कलौ न राजञ्जगतां परं गुरुं त्रिलोकनाथाननपादपङ्कजम् ।
प्रायेण मर्त्या भगवन्तमच्युतं यक्ष्यन्ति पाखण्डविभिन्नचेतसः ॥४३॥

पदच्छेद—

कलौ न राजन् जगताम् परम् गुरुम् त्रिलोकनाथ आनत पादपङ्कजमम् ।
प्रायेण मर्त्याः भगवन्तम् अच्युतम् यक्ष्यन्ति पाखण्ड विभिन्न चेतसः ॥

शब्दार्थ—

कलौ	२.	कलियुग में	प्रायेण	१४.	प्रायः
न	१५.	नहीं	मर्त्याः	६.	मनुष्य
राजन्	१.	हे राजन् !	भगवन्तम्	१२.	भगवान्
जगताम्	७.	संसार के	अच्युतम्	१३.	विष्णु की
परम गुरुम्	८.	परम गुरु तथा	यक्ष्यन्ति	१६.	पूजा करते
त्रिलोकनाथ	९.	तीनों लोक के अधिपतियों द्वारा	पाखण्ड	३.	पाखण्डियों द्वारा
आनत	१०.	प्रणाम किये जाते हुये	विभिन्न	४.	भटकाये गये
पाद पङ्कजम् ।	११.	चरणों में	चेतसः ॥	५.	चित्त वाले

श्लोकार्थ—हे राजन् ! पाखण्डिओं द्वारा भटकाये गये चित्तवाले मनुष्य संसार के परम गुरु तथा तीनों लोकों के अधिपतियों द्वारा चरणों में प्रणाम किये जाते हुये भगवान् विष्णु की प्रायः पूजा नहीं करते हैं ॥

चतुःश्चत्वारिंश श्लोकः

यन्नामधेयं म्रियमाण आतुरः पतन् स्खलन् वा विवशः गृणन् पुमान् ।
विमुक्तकर्मार्गल उत्तमां गतिं प्राप्नोति यक्ष्यन्ति न तं कलौ जनाः ॥४४॥

पदच्छेद—

यत् नामधेयम् म्रियमाण आतुरः पतन् स्खलन् वा विवशः गृणन् पुमान् ।
विमुक्त कर्म अर्गलः उत्तमाम् गतिम् प्राप्नोति यक्ष्यन्ति न तम् कलौ जनाः ॥

शब्दार्थ—

यत्	५.	जिनके	विमुक्त	९.	छुटकारा पाकर
नामधेयम्	६.	नाम का	कर्म अर्गल	८.	कर्म बन्धन से
म्रियमाण	३.	मरते	उत्तमाम् गतिम्	१०.	उत्तम गति को
आतुरः	१.	आतुरता की स्थिति में	प्राप्नोति	११.	प्राप्त करता है
पतन् स्खलन्	२.	गिरते फिसलते	यक्ष्यन्ति	१४.	पूजा नहीं करेंगे
वा विवशः	४.	या विवश होकर	न तम्	१२.	उन भगवान् की
गृणन् पुमान् ।	७.	उच्चारण करने वाला मनुष्य	कलौ जनः ॥	१३.	कलियुग में लोग

श्लोकार्थ—आतुरता की स्थिति में गिरते, फिसलते, मरते या विवश होकर जिनके नाम का उच्चारण करने वाला मनुष्य कर्म बन्धन से छुटकारा पाकर उत्तम गति को प्राप्त करता है । उन भगवान् की कलियुग में लोग पूजा नहीं करेंगे ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

पुंसा कलिकृतान् दोषान् द्रव्यदेशात्मसम्भवान् ।
सर्वान् हरति चित्तस्थो भगवान् पुरुषोत्तमः ॥४५॥

पदच्छेद--

पुंसाम् कलि कृतान् दोषान् द्रव्य देश आत्म सम्भवान् ।
सर्वान् हरति चित्त स्थः भगवान् पुरुषोत्तमः ॥

शब्दार्थ—

पुंसाम्	१.	मनुष्यों के	सर्वान्	१०.	सभी
कलिकृतान्	६.	कलियुग के किये हुये	हरित	१२.	नष्ट कर देते हैं
दोषान्	११.	दोषों को	चित्त	२.	हृदय में
द्रव्य	६.	वस्तु	स्थः	३.	स्थित
देश आत्म	७.	स्थान तथा मनमें	भगवान्	४.	भगवान्
सम्भवान् ।	८	उत्पन्न	पुरुषोत्तमम् ॥	५.	पुरुषोत्तम।

श्लोकार्थ—मनुष्यों के हृदय में स्थित भगवान् पुरुषोत्तम वस्तु-स्थान तथा मन में उत्पन्न कलियुग के किये हुये सभी दोषों को नष्ट कर देते हैं ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

श्रुतः सङ्कीर्तितो ध्यातः पूजितश्चादृतोऽपि वा ।
नृणां धुनोति भगवान् हृत्स्थो जन्मायुताशुभम् ॥४६॥

पदच्छेद—

श्रुतः सङ्कीर्तितः ध्यातः पूजितः च आदृतः अपि वा ।
नृणां धुनोति भगवान् हृत्स्थः जन्म अयुत अशुभम् ॥

शब्दार्थ—

श्रुतः	१.	भगवन्नामादि के श्रावण	नृणाम्	७.	मनुष्यों के
सङ्कीर्तितः	२.	संङ्कीर्तन	धुनोति	१२.	भस्म कर हेते हैं
ध्यातः	३.	ध्यान	भगवान्	६.	भगवान्
पूजितः च	४.	पूजन और	हृत्स्थः	८.	हृदय में स्थित
आदृतः	५.	आदर करने पर	जन्म अयुत	१०.	दश हजार जन्मों के
अपि वा ।	६.	भी	अशुभम् ॥	११.	पाप को

श्लोकार्थ—भगवन्नामादि के श्रवण संङ्कीर्तन, ध्यान, पूजन और आदर करने पर भी मनुष्यों के हृदय में स्थित भगवान् दशहजार जन्मों के पाप को भस्म कर देते हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

यथा हेम्नि स्थितो वह्निर्दुर्वर्णं हन्ति धातुजम् ।
एवमात्मगतो विष्णुर्योगिनामशुभाशयम् ॥४७॥

पदच्छेद —

यथा हेम्निस्थितः वह्निः दुर्वर्णम् हन्ति धातुजम् ।
एवम् आत्म गतः विष्णुः योगिनाम् अशुभ आशयम् ॥

शब्दार्थ —

यथा	१. जैसे	एवम्	७.	वैसे ही
हेम्नि	२. सुवर्ण में	आत्मगतः	८.	हृदय में स्थित
स्थितः	३. स्थित	विष्णुः	९.	विष्णु
वह्निः	४. अग्नि	योगिनाम्	१०.	योगियों के
दुर्वर्णम् हन्ति	६. मलिनता को नष्ट कर देता है	अशुभ	११.	अशुभ
धातुजम् ।	५. उसके धातु सम्बन्धी	आशयम् ॥	१२.	संस्कार को नष्ट कर देते हैं

श्लोकार्थ—जैसे सुवर्ण में स्थित अग्नि उसके धातु सम्बन्धी मलिनता को नष्ट कर देता है । वैसे ही हृदय में स्थित विष्णु योगियों के अशुभ संस्कार को नष्ट कर देते हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

विद्यातपःप्राणनिरोधमैत्री तीर्थाभिषेकव्रतदानजप्यैः ।
नात्यन्तशुद्धिं लभतेऽन्तरात्मा यथा हृदिस्थे भगवत्यनन्ते ॥४८॥

पदच्छेद—

विद्यातपः प्राण निरोध मैत्री तीर्थ अभिषेक व्रत दान जप्यैः ।
न त्यन्त शुद्धिम् लभतेऽन्तरात्मा यथा हृदिस्थे भगवति अनन्ते ॥

शब्दार्थ—

विद्यातपः	१. विद्या, तपस्या	अत्यन्त	८.	अत्यन्त
प्राण निरोध	२. प्राणायाम	शुद्धिम्	९.	शुद्धि को
मैत्री	३. मित्रता	लभते	११.	प्राप्त करता है
तीर्थ अभिषेक	४. तीर्थ स्नान	अन्तरात्मा	७.	अन्तःकरण उस प्रकार
व्रत-दान	५. व्रत दान तथा	यथा	१२.	जिस प्रकार
जप्यैः ।	६. जप से	हृदिस्थे	१४.	हृदय में विराजने पर होती है
न	१०. नहीं	भगवति अनन्ते॥	१३.	भगवान् अनन्त के

श्लोकार्थ—विद्या, तपस्या, प्राणायाम, मित्रता, तीर्थस्नान, व्रत, दान तथा जप से अन्तः करण उस प्रकार अत्यन्त शुद्धि को नहीं प्राप्त करता है। जिस प्रकार भगवान् अनन्त के हृदय में विराजने पर होती है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

तस्मात् सर्वात्मना राजन् हृदिस्थं कुरु केशवम् ।
म्रियमाणो ह्यवहितस्ततो यासि परां गतिम् ॥४९॥

पदच्छेद—

तस्मात् सर्व आत्मना राजन् हृदिस्थम् कुरु केशवम् ।
म्रियमाणः हि अवहितः ततः यासि पराम् गतिम् ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	२. इसलिये	म्रियमाणः	३. मरते हुये
सर्वआत्मना	६. सब प्रकार से	हि अवहितः	४. सावधान हो जाओ और
राजन्	१. हे राजन् !	ततः	९. तब तुम
हृदिस्थम्	७. हृदय में स्थित	यासि	१२. प्राप्त करोगे
कुरु	८. करलो	पराम्	१०. परम
केशवम् ।	५. श्रीकृष्ण को	गतिम् ॥	११. गति को

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इसलिये मरते हुये सावधान हो जाओ, और श्रीकृष्ण को सब प्रकार से हृदय में स्थित करलो । तब तुम परमगति को प्राप्त करोगे ॥

पञ्चाशः श्लोकः

म्रियमाणैरभिध्येयो भगवान् परमेश्वरः ।
आत्मभावं नयत्यङ्ग सर्वात्मा सर्वसंश्रयः ॥५०॥

पदच्छेद—

म्रियमाणैः अभिध्येयः भगवान् परमेश्वरः ।
आत्मभावम् नयति अङ्ग सर्वात्मा सर्व संश्रयः ॥

शब्दार्थ—

म्रियमाणैः	२. मरने वालों को	नयति	१०. लीनकर लेते हैं
अभिध्येयः	५. ध्यान करना चाहिये	अङ्ग	१. हे परीक्षित !
भगवान्	३. भगवान्	सर्वात्मा	८. सर्वात्मा भगवान्
परमेश्वरः ।	४. परमपिता का	सर्व	६. सबके
आत्मभावम्	९. अपने स्वरूप में उनको	संश्रयः ॥	७. परम आश्रय

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! मरने वालों को भगवान् परमपिता का ध्यान करना चाहिये । सबके परम आश्रय सर्वात्मा भगवान् अपने स्वरूप में उन सब को लीन कर लेते हैं ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

कलेर्दोषनिधे राजन्नस्ति ह्येको महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्गः परं व्रजेत् ॥५१॥

पदच्छेद—

कलेः दोषनिधे राजन् अस्ति हि एकः महान् गुणः ।
कीर्तनादेव कृष्णस्य मुक्तसङ्ग: परम् व्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

कलेः	३.	कलियुग में	कीर्तनादेव	८.	संकीर्तन करने मात्र से
दोषनिधे	२.	दोषों के खजाने	कृष्णस्य	७.	श्रीकृष्ण के
राजन्	१.	हे राजन् !	मुक्त	९.	मनुष्य आसक्ति रहित होकर
अस्ति हि	६.	निश्चित रूप से विद्यमान है	परम्	१०.	परमात्मा को
एकः	४.	एक	व्रजेत् ॥	११.	प्राप्त कर लेता है
महान् गुणः ।	५.	महानगुण			

श्लोकार्थ—हे राजन् ! दोषों के खजाने कलियुग में एक महान गुण निश्चित रूप से विद्यमान है श्रीकृष्ण के संकीर्तन करने मात्र से मनुष्य आसक्ति से रहित होकर परमात्म को प्राप्त कर लेता है ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात् ॥५२॥

पदच्छेद—

कृते यत्ध्यायतः विष्णुम् त्रेतायाम् यजतः मखैः ।
द्वापरे परिचर्यायाम् कलौ तत् हरि कीर्तनात् ॥

शब्दार्थ—

कृते	१.	सतयुग में	द्वापरे	७.	द्वापर में
यत्	६.	जो फल मिलता है	परिचर्यायाम्	८.	सेवा करने से
ध्यायतः	३.	ध्यान करने से	कलौ	११.	कलियुग में
विष्णुम्	२.	विष्णु का	तत्	१०.	वह फल
त्रेतायाम्	४.	त्रेता में	हरि	१२.	श्रीकृष्ण के
यजतः	६.	आराधना करने से	कीर्तनात् ॥	१३.	कीर्तन करने से प्राप्त हो जाता है
मखैः ।	५.	यज्ञों द्वारा			

श्लोकार्थ—सतयुग में विष्णु का ध्यान करने से त्रेता में यज्ञों द्वारा आराधना करने से द्वापर में सेवा करने से जो फल मिलता है। वह फल कलियुग में श्रीकृष्ण के कीर्तन करने से प्राप्त हो जाता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादश स्कन्धे
तृतीयः अध्यायः ॥३॥

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

द्वादशः स्कन्धः
चतुर्थ : अध्यायः

प्रथम श्लोकः

श्री शुक उवाच—कालस्ते परमाण्वादि द्विपरार्धावधिर्नृप ।
कथितो युगमानं च शृणु कल्पलयावपि ॥१॥

पदच्छेद—

काल: ते परमाणु आदि द्विपरार्द्ध अवधिः नृप ।
कथितः युगमानम् च श्रृणु कल्प लयौ अपि ॥

शब्दार्थ—

काल:	४.	काल की	कथितः	६.	बतला चुका हूँ
ते	८.	तुम्हें	युगमानम्	७.	काल का मान
परमाणु आदि	२.	परमाणु से लेकर	च	६.	और
द्विपरार्ध	३.	दो परार्ध पर्यन्त	श्रृणु	१२.	सुन लो
अवधि	५.	अवधि	कल्प	१०.	अब कल्प और
नृप ।	१.	हे राजन् !	लयौअपि ॥	११.	लय को भी

श्लोकार्थ—हे राजन् ! परमाणु से लेकर दो परार्ध पर्यन्त काल की अवधि और काल का मान तुम्हें बतला चुका हूँ । अब कल्प और लय को भी सुनलो ॥

द्वितीयः श्लोकः

चतुर्युगसहस्रं च ब्रह्मणो दिनमुच्यते ।
सकल्पो यत्र मनवश्चतुर्दश विशाम्पते ॥२॥

पदच्छेद—

चतुर्युग सहस्रम् च ब्रह्मणः दिनम् उच्यते ।
सः कल्पः यत्र मनवः जतुर्दश विशाम्पते ॥

शब्दार्थ—

चतुर्युग	३.	चतुर्युगी का	सः	८.	उसी को
सहस्रम्	२.	एक हजार	कल्पः	९.	कल्प कहते हैं
च	७.	और	यत्र	१०.	जिसमें
ब्रह्मणः	४.	ब्रह्मा का	मनवः	१२.	मनुहोते हैं
दिनम्	५.	एक दिन	चतुर्दश	११.	चौदह
उच्चते ।	६.	कहा गया है	विशाम्पते ॥	१.	हे राजन् !

श्लोकार्थ—हे राजन् ! एक हजार चतुर्युगी का ब्रह्मा का एक दिन कहा गया है और उसी को कल्प कहते हैं । जिसमें चौदह मनु होते हैं ॥

तृतीयः श्लोकः

तदन्ते प्रलयस्तावान् ब्राह्मी रात्रिरुदाहृता ।
त्रयो लोका इमे तत्र कल्पन्ते प्रलयाय हि ॥३॥

पदच्छेद—

तदन्ते प्रलयः तावान् ब्राह्मी रात्रिः उदाहृता ।
त्रयः लोकाः इमे तत्र कल्पन्ते प्रलयाय हि ॥

शब्दार्थ—

तदन्ते	१. कल्प के अन्त में	त्रयः	९. तीनों
प्रलयः	३. प्रलय रहता है	लोकाः	१०. लोक
तावान्	२. उतने ही समय तक	इमे	८. ये
ब्राह्मी	४. प्रलय को ब्रह्मा की	तत्र	७. उसमें
रात्रि	५. रात्रि	कल्पन्ते	१२. हो जाते हैं
उदाहृताः ।	६. कहते हैं	प्रलयायहि ॥	११. लीन

श्लोकार्थ—कल्प के अन्त में उतने ही समय तक प्रलय रहता है। प्रलय को ब्रह्मा की रात्रि कहते है। उसमें ये तीनों लोक लीन हो जाते है ॥

चतुर्थः श्लोकः

एष नैमित्तिकः प्रोक्तः प्रलयः यत्र विश्वसृक् ।
शेतेऽनन्तासनो विश्वमात्मसात्कृत्य चात्मभूः ॥४॥

पदच्छेद—

एष नैमित्तिकः प्रोक्तः प्रलयः यत्र विश्वसृक् ।
शेते अनन्त आसनः विश्वम् आत्मसात् कृत्य च आत्मभूः ॥

शब्दार्थ—

एष	१. यह	शेते	११. सो जाते हैं
नैमित्तिकः	२. नैमित्तिक	अनन्त	११. अनन्त (शेषनाग) की
प्रोक्तः	४. कहा गया है	आसनः	१२. शय्या पर विष्णु
प्रलयः	३. प्रलय	विश्वम्	६. विश्व को
यत्र	५. जिसमें	आत्मसात्	७. अपने अन्दर
विश्वसृक् ।	९. विश्वसृष्टा	कृत्य च	८. समेट कर
		आत्मभूः ॥	१०. ब्रह्मा तथा

श्लोकार्थ—यह नैमित्तिक प्रलय कहा गया है, जिसमें विश्व को अपने अन्दर समेट कर विश्व सृष्टा ब्रह्मा तथा अनन्त (शेषनाग) की शय्या पर विष्णु सो जाते हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

द्विपरार्धे त्वतिक्रान्ते ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
तदा प्रकृतयः सप्त कल्पन्ते प्रलयाय वै ॥५॥

पदच्छेद—

द्विपरार्धे तु अति क्रान्ते ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
तदा प्रकृतयः सप्त कल्पन्ते प्रलयाय वै ॥

शब्दार्थ—

द्विपरार्धे तु	३. दो परार्धकाल (मानव वर्ष के हिसाब से)	तदा	५.	तब
अतिक्रान्ते	४. बीत जाने पर	प्रकृतयः	७.	प्रकृतियाँ
ब्रह्मणः	२. ब्रह्मा के	सप्त	६.	महत्तत्त्व अहंकार पञ्चतत्त्व ये सातों
परमेष्ठिनः ।	१. परमेष्ठी	कल्पन्ते	९.	उत्पन्न कर देती हैं
		प्रलयाय वै ॥	८.	मूल प्रकृति में लीन होकर प्रलय

श्लोकार्थ—परमेष्ठी ब्रह्मा के दो परार्धकाल (मानव वर्ष के हिसाब से) बीत जाने पर तब महत्तत्त्व अहंकार और पञ्चतत्त्व ये सातों मूल प्रकृति में लीन होकर प्रलय उत्पन्न कर देती हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

एष प्राकृतिको राजन् प्रलयो यत्र लीयते ।
आण्डकोशस्तु सङ्घातो विघात उपसादिते ॥६॥

पदच्छेद—

एष प्राकृतिकः राजन् प्रलयः यत्र लीयते ।
आण्डकोशः तु सङ्घात् विघात उपसादिते ॥

शब्दार्थ—

एष	२. यह	लीयते ।	१०.	लीन हो जाता है
प्राकृतिकः	३. प्राकृतिक	आण्डकोशः तु	७.	ब्रह्माण्ड
राजन्	१. हे राजन् !	सङ्घात	६.	पञ्च भूतों के मिश्रण से निर्मित
प्रलयः	४. प्रलय है	विघात	८.	प्रलय का कारण
यत्र	५. जिसमें	उपसादिते ॥	९.	उपस्थित होने पर

श्लोकार्थ—हे राजन् ! यह प्राकृतिक प्रलय है । जिसमें पञ्चभूतों के मिश्रण से निर्मित ब्रह्माण्ड प्रलय का कारण उपस्थित होने पर लीन हो जाता है ॥

—९७—

सप्तमः श्लोकः

पर्जन्यः शतवर्षाणि भूमौ राजन् न वर्षति।
तदा निरन्ने ह्यन्योन्यं भक्षमाणाः क्षुधार्दिताः ॥७॥

पदच्छेद—

पर्जन्यः शत वर्षाणि भूमौ राजन् न वर्षति।
तदा निरन्ने हि अन्योन्यम् भक्षमाणाः क्षुधाअर्दिताः ॥

शब्दार्थ—

पर्जन्यः	२. मेघ	तदा	७. उस समय प्रजायें
शतवर्षाणि	४. सौ वर्षों तक	निरन्ने हि	८. अन्न के न मिलने पर
भूमौ	३. पृथ्वी पर	अन्योन्यम्	९. एक दूसरे को
राजन्	१. राजन्	भक्षमाणा	१०. खाती हुई
न	५. नहीं	क्षुधा	११. भूख से
वर्षति।	६. वर्षा करता है	अर्दिताः ॥	१२. पीड़ित रहती है

श्लोकार्थ—राजन्! मेघ पृथ्वी पर सौ वर्षों तक नहीं वर्षा करता है। उस समय प्रजायें अन्न के न मिलने पर एक दूसरे को खाती हुई भूख से पीड़ित रहती है॥

अष्टमः श्लोकः

क्षयं यास्यन्ति शनकैः कालेनोपद्रुताः प्रजाः।
सामुद्रं दैहिकं भौमं रसं सांवर्तको रविः ॥८॥

पदच्छेद—

क्षयम् यास्यन्ति शनकैः कालेन उपद्रुता प्रजाः।
सामुद्रं दैहिकम् भौमं रसम् सांवर्तकः रविः ॥

शब्दार्थ—

क्षयम्	५. क्षीण	सामुद्र	९. समुद्र
यास्यन्ति	६. हो जाती हैं	दैहिकम्	१०. प्राणियों के शरीर और
शनकैः	४. धीरे-धीरे	भौमं	११. पृथ्वी का
कालेन	१. काल के	रसम्	१२. रस (सोख जाते हैं)
उपद्रुता	२. उपद्रव से पीड़ित होकर	सांवर्तकः	७. प्रलय कालीन
प्रजाः	३. प्रजायें	रविः ॥	८. सूर्य

श्लोकार्थ—काल के उपद्रव से पीड़ित होकर प्रजायें धीरे-धीरे क्षीण हो जाती हैं प्रलय कालीन सूर्य समुद्र प्राणियों के शरीर और पृथ्वी का रस सोख जाते हैं॥

नवमः श्लोकः

रश्मिभिः पिबते घोरैः सर्वं नैव विमुञ्चति ।
ततः संवर्तको वह्निः सङ्कर्षणमुखोत्थितः ॥९॥

पदच्छेद—

रश्मिभिः पिबते घोरैः सर्वम् न एव विमुञ्चति ।
ततः संवर्तकः वह्निः सङ्कर्षण मुख उत्थितः ॥

शब्दार्थ—

रश्मिभिः	२.	किरणों से	ततः	७.	तदनन्तर
पिबते	४.	सोख लेते हैं	संवर्तकः	८	प्रलय कालीन
घोरैः	१.	भगवान सूर्य प्रचण्ड	वह्निः	९.	अग्नि
सर्वम्	३.	सब	सङ्कर्षण	१०.	सङ्कर्षण भगवान् के
न एव	६.	नहीं हैं	मुख	११.	मुख से
विमुञ्चति ।	५.	उन्हें बरसाते	उत्थितः ॥	१२.	प्रकट होती है

श्लोकार्थ—भगवान् सूर्य प्रचण्ड किरणों से सब रस सोख लेते हैं । उन्हें बरसाते नहीं हैं । तदनन्तर प्रलय कालीन अग्नि सङ्कर्षण भगवान् के मुख से प्रकट होती है ॥

दशमः श्लोकः

दहत्यनिलवेगोत्थः शून्यान् भूविवरानथ ।
उपर्यधः समन्ताच्च शिखाभिर्वह्निसूर्ययोः ॥१०॥

पदच्छेद—

दहति अनिल वेग उत्थः शून्यान् भूविवरान् अथ ।
उपर्यधः समन्तात् च शिखाभिः वह्नि सूर्ययोः ॥

शब्दार्थ—

दहति	५.	जला डालता है	उपर्यधः	११.	ऊपर-नीचे
अनिल	१.	वायु के	समन्तात्	१२.	चारों ओर ब्रह्माण्ड जलने लगता है)
वेगउत्थः	२.	वेग स उठा (हुआ अग्नि)	च	८.	और
शून्यान्	३.	शून्य	शिखाभिः	१०.	लपटों से
भूविवरान्	४.	पातालों को	वह्नि	७.	अग्नि
अथ	६.	तदनन्तर	सूर्ययोः ॥	९.	सूर्य की

श्लोकार्थ—वायु के वेग से उठा हुआ अग्नि शून्य पातालों को जला डालता है । तदनन्तर अग्नि और सूर्य की लपटों से ऊपर-नीचे चारों ओर ब्रह्माण्ड जलने लगता है ॥

एकादशः श्लोकः

दह्यमानं विभात्यण्डं दग्धगोमयपिण्डवत् ।
ततः प्रचण्डपवनो वर्षाणामधिकं शतम् ॥११॥

पदच्छेद—

दह्यमाने विभाति अण्डम् दग्ध गोमय पिण्डवत् ।
ततः प्रचण्डपवनः वर्षाणाम् अधिकम् शतम् ॥

शब्दार्थ—

दह्यमाने	१. जलता हुआ	ततः	७. तदनन्तर
विभाति	६. जान पड़ता है	प्रचण्ड	८. प्रचण्ड
अण्डम्	२. ब्रह्माण्ड	पवनः	९. वायुः
दग्ध	३. जले हुये	वर्षाणाम्	१२. चलता रहता है
गोमय	४. गोबर के	अधिकम्	११. अधिक वर्षों तक
पिण्डवत् ।	५. उपले की भांति	शतम् ॥	१०. सौ से

श्लोकार्थ—हे राजन् ! जलता हुआ ब्रह्माण्ड जले हुये गोबर के उपले के समान जान पड़ता है। तदनन्तर प्रचण्ड वायु सौ से अधिक वर्षों तक चलता रहता है।

द्वादशः श्लोकः

परः सांवर्तको वाति धूम्रं खं रजसाऽऽवृतम् ।
ततो मेघकुलान्यङ्ग चित्रवर्णान्यनेकशः ॥१२॥

पदच्छेद—

परः सांवर्तकः वाति धूम्रम् खम् रजसा आवृतम् ।
ततः मेघ कुलानि अङ्ग चित्र वर्णानि अनेकशः ॥

शब्दार्थ—

परः	३. महान् वायु	ततः	९. तत्पश्चात्
सांवर्तकः	२. प्रलय कालीन	मेघ	१२. मेघ
वाति	४. बहने लगता है	कुलानि	१३. समूह मँडराने लगते हैं
धूम्रम्	८. धुधँला हो जाता है	अङ्ग	१. हे राजन् !
खम्	७. आकाश	चित्रवर्णानि	१०. रंग-बिरंगे
रजसा	५. धूल से	अनेकशः ॥	११. अनेकों
आवृतम् ।	६. ढका हुआ		

श्लोकार्थ—हे राजन् ! प्रलय कालीन महान् वायु बहने लगता है। धूल से ढकाहुआ आकाश धुँधला हो जाता है। तत्पश्चात् रंग-बिरंगे अनेकों मेघसमूह मँडराने लगते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

शतं वर्षाणि वर्षन्ति नदन्ति रभसस्वनैः ।
तत एकोदकं विश्वं ब्रह्माण्डविवरान्तरम् ॥१३॥

पदच्छेद—

शतम् वर्षाणि वर्षन्ति नदन्ति रभस स्वनैः ।
ततः एकोदकम् विश्वम् ब्रह्माण्डविवरान्तरम् ॥

शब्दार्थ—

शतम्	१. सैंकड़ों	ततः	७. तदनन्तर
वर्षाणि	२. वर्षों तक	एकोदकम्	११. एक समुद्र हो जाता है
वर्षन्ति	६. बरसते रहते हैं	विश्वम्	१०. सारा संसार
नदन्ति	५. गरजते और	ब्रह्माण्ड	८. ब्रह्माण्ड के
रभस	३. भयंकर	विवरान्तरम् ॥	९. विवर के भीतर का
स्वनैः ।	४. शब्दों से (बादल)		

श्लोकार्थ—उस समय सैंकड़ों वर्षों तक भयंकर शब्दों से बादल गरजते और बरसते रहते हैं। तदनन्तर ब्रह्माण्ड के विवर के भीतर का सारा संसार एक समुद्र हो जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तदा भूमेर्गन्धगुणं ग्रसन्त्याप उदप्लवे ।
ग्रस्तगन्धा तु पृथिवी प्रलयत्वाय कल्पते ॥१४॥

पदच्छेद—

तदा भूमेः गन्ध गुणम् ग्रसन्ति आपः उदप्लवे ।
ग्रस्त गन्धा तु पृथिवी प्रलयत्वाय कल्पते ॥

शब्दार्थ—

तदा	१. तब	ग्रस्त	८. ग्रस्त हो जाने पर
भूमेः	३. पृथ्वी के	गन्धा	७. गन्ध से
गन्ध	५. गन्ध	तु	९. तो
गुणम्	४. गुण को	पृथिवी	१०. पृथ्वी का
ग्रसन्ति	६. ग्रस लेता है	प्रलयत्वाय	११. प्रलय
आपःउदप्लवे ।	२. जल प्रलय हो जाने पर	कल्पते ॥	१२. हो जाता है

श्लोकार्थ—तब जल प्रलय हो जाने पर पृथ्वी के गुण गन्ध को ग्रस लेता है गन्ध के ग्रस्त हो जाने पर तो पृथ्वी का प्रलय हो जाता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

अपां रसमथो तेजस्ता लीयन्तेऽथ नीरसाः ।
ग्रसते तेजसो रूपं वायुस्तद्रहितं तदा ।१५॥

पदच्छेद—
अपाम् रसम् अथो तेजः ताः लीयन्ते अथ नीरसाः ।
ग्रसते तेजसः रूपम् वायुः तत् रहितम् तदा ॥

शब्दार्थ—

अपाम्	२.	जल के (गुण)	ग्रसते	११.	ग्रस लेता है
रसम	३.	रस को	तेजसः	८.	तेज के गुण
अथो	१.	अनन्तर	रूपम्	९	रूप को
तेजः ताः	४.	तेज तत्त्व (ग्रस लेता है) वह जल	वायुः	१०.	वायु
लीयन्ते	६.	तेज में समा जाता है	तत्	१३.	उस रूप से
अथ	७.	तत्पश्चात्	रहितम्	१४.	रहित हो जाता है
नीरसाः ।	५.	नीरस होकर	तदा ॥	१२.	तब तेज

श्लोकार्थ—अनन्तर जल के गुण रस को तेज तत्त्व ग्रस लेता है, वह जल नीरस होकर तेज में समा जाता है ।तत्पश्चात् तेज के गुण रूप को वायु ग्रस लेता है । तब तेज उस रूप से रहित हो जाता है ॥

षोडशः श्लोकः

लीयते चानिले तेजो वायोः खं ग्रसते गुणम् ।
स वै विशति खं राजंस्ततश्च नभसो गुणम् ॥१६॥

पदच्छेद—
लीयते च अनिले तेजः वायोः खम् ग्रसते गुणम् ।
सः वै विशति खम् राजन् ततः च नभसः गुणम् ॥

शब्दार्थ—

लीयते	३.	लीन हो जाता है और	सः वै	८.	वह वायु
अनिले	२.	वायु में	विशति	१०.	समा जाता है
तेजः	१.	तेज	खम्	९.	आकाश में
वायोः	५.	वायु के	राजन्	११.	हे राजन् ।
खम्	४.	आकाश	ततः च	१२.	तदन्तर
ग्रसते	७.	ग्रस लेता है	नभसः	१३.	आकाश के
गुणम् ।	६.	गुण को	गुणम् ॥	१४.	गुण शब्द को अहंकार ग्रस लेता है

श्लोकार्थ—तेज वायु में लीन हो जाता है । और आकाश वायु के गुण को ग्रस लेता है । वह वायु आकाश में समा जाता है । हे राजन् ! तदनन्तर आकाश के गुण शब्द को अहंकार ग्रस लेता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

शब्दं ग्रसति भूतादिर्नभस्तमनुलीयते ।
तैजसश्चेन्द्रियाण्यङ्ग देवान् वैकारिको गुणैः ॥१७॥

पदच्छेद—

शब्दम् ग्रसति भूतादिः नभः तम् अनुलीयते ।
तैजसः च इन्द्रियाणि अङ्ग देवान् वैकारिकः गुणैः ॥

शब्दार्थ—

शब्दम्	२. शब्द को	तैजसः च	८.	और तैजस अहंकार
ग्रसति	३. ग्रस लेता है	इन्द्रियाणि	९.	इन्द्रियों को
भूतादिः	१. तामस अहंकार	अङ्ग	७	हे राजन् !
नभः	४. आकाश	देवान्	११.	इन्द्रियाधिष्ठ देवताओं को
तम्	५. तामस अहंकार में	वैकारिकः	१०.	तथा वैकारिक (सात्त्विक अहंकार)
अनुलीयते ।	६. लीन हो जाता है	गुणैः ॥	१२.	गुणों द्वारा ग्रस लेता है

श्लोकार्थ—तामस अहंकार शब्द को ग्रस लेता है । आकाश तामस अहंकार में लीन हो जाता है । हे राजन् ! और तैजस अहंकार इन्द्रियों को तथा वैकारिक सात्त्विक अहंकार इन्द्रयाधिष्ठ देवताओं को गुणों द्वारा ग्रस लेता है ॥

अष्टदशः श्लोकः

महान् ग्रसत्यहङ्कारं गुणाः सत्वादयश्च तम् ।
ग्रसतेऽव्याकृतं राजन् गुणान् कालेन चोदितम् ॥१८॥

पदच्छेद—

महान् ग्रसति अहङ्कारम् गुणाः सत्त्व आदयः च तम् ।
ग्रसते अव्याकृतम् राजन् गुणान् कालेन चोदितम् ॥

शब्दार्थ—

महान्	१. तदनन्तर महत्तत्व	ग्रसते	१३.	ग्रस लेती है
ग्रसति	७. ग्रस लेते हैं	अव्याकृतम्	११.	अव्यक्त प्रकृति
अहङ्कारम्	२. अहंकार को और	राजन्	८.	हे राजन् !
गुणाः	५. गुण	गुणान्	१२.	गुणों को
सत्त्व	३. सत्त्व	कालेन	९.	काल से
आदयः च	४. आदि	चोदितम् ॥	१०.	प्रेरित होकर
तम् ।	६. उस महत्तत्त्व को			

श्लोकार्थ—तदनन्तर महत्तत्व अहंकार को और सत्वादि गुण उस महत्तत्व को ग्रस लेते हैं । हे राजन् ! काल से प्रेरित होकर अव्यक्त प्रकृति गुणों को ग्रस लेती है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

न तस्य कालावयवैः परिणामादयो गुणाः ।
अनाद्यनन्तमव्यक्तं नित्यं कारणमव्ययम् ॥१९॥

पदच्छेद—

न तस्य काल अवयवैः परिणाम आदयः गुणाः ।
अनादि अनन्तम् अव्यक्तम् नित्यम् कारणम् अव्ययम् ॥

शब्दार्थ—

न	१३. नहीं होते		अनादि	२. अनादि
तस्य	९. उसमें		अनन्तम्	३. अनन्त
काल	७. काल के		अव्यक्तम्	१. वह अव्यक्त
अवयवैः	८. अवयवों (वर्ष, मास, आदिसे		नित्यम्	४. नित्य
परिणाम	१०. परिणाम (क्षय, वृद्धि)		कारणम्	६. जगत् का कारण है
आदयः	११. आदि		अव्यक्तम् ॥	५. अविनाशी और
गुणाः	१२. गुण (विकार)			

श्लोकार्थ—वह अव्यक्त. अनादि, अनन्त, नित्य, अविनाशी और जगत का कारण है । काल के अवयवों, वर्ष, मास आदि से उसमें परिणाम क्षय-वृद्धि आदि गुण विकार नहीं होते हैं ।

विंशः श्लोकः

न यत्र वाचो न मनो न सत्वं तमो रजो वा महदादयोऽमी ।
न प्राणबुद्धीन्द्रियदेवता वा न सन्निवेशः खलु लोककल्पः ॥२०॥

पदच्छेद—

न यत्र वाचः न मनः न सत्त्वम् तमः रजः वा महत् आदयः अमी ।
न प्राण बुद्धि इन्द्रिय देवता वा न सन्निवेशः खलु लोक कल्पः ॥

शब्दार्थ—

न यत्र	१. उस समय प्रकृति में न	न प्राण	८. न प्राण
वाचः	२. वाणी	बुद्धि	९. बुद्धि
नमनः	३. न मन	इन्द्रिय	१०. इन्द्रिय
न सत्त्वम्	४. न सत्त्व गुण	देवता वा	११. या उनके देवता और
तमः रजः वा	५. तमोगुण रजोगुण अथवा	नसन्निवेशः	१४. कुछ नहीं रहते हैं
महत् आदयः	६. महत्तत्व आदि	खलु	१३. भी
अमी ।	७. ये विकार	लोक कल्पः ॥	१२. लोकों की कल्पना आदि

श्लोकार्थ—उस समय प्रकृति में न वाणी, न मन, न सत्त्वगुण रजोगुण अथवा महत्तत्त्व आदि ये विकार न प्राण, बुद्धि, इन्द्रियाँ, या उनके देवता और लोकों की कल्पना आदि भी कुछ नहीं रहते हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

न स्वप्नजाग्रन्न च तत् सुषुप्तं न खं जलं भूरनिलोऽग्निरर्कः ।
संसुप्तवच्छून्यवदप्रतर्क्यं तन्मूलभूतं पदमामनन्ति ॥२१॥

पदच्छेद—

न स्वप्न जाग्रन्न न च तत् सुषुप्तम् न खम् जलम् भूः अनिल अग्नि अर्कः ।
संसुप्तवत् शून्यवत् अप्रतर्क्यम् तत् मूल भूतम् पदम् आमनन्ति ॥

शब्दार्थ—

न स्वप्न	१.	उस समय न स्वप्न	अग्नि-अर्कः ।	८	न अग्नि और न सूर्य रहते हैं
जाग्रन्न	२.	न जाग्रत	संसुप्तवत्	९.	सब कुछ सोये हुये के समान
न च तत्	३.	और न	शून्यवत्	१०.	शून्य सा रहता है
सुषुप्तम्	४.	सुषुप्ति (अवस्थायें रहती हैं)	अप्रतर्क्यम्	११.	वह तर्क से परे है
न खम्	५.	न आकाश	तत्मूलभूतम्	१२.	उस अव्यक्त को जगत् का मूल
जलम्	६	न जल	पदम्	१३.	तत्त्व
भूः अनिल	७.	न पृथिवी न वायु	आमनन्ति	१४.	कहते हैं

श्लोकार्थ—उस समय न स्वप्न, न जाग्रत और न सुषुप्ति अवस्थायें रहती हैं। न आकाश, न जल न पृथिवी, न वायु, न अग्नि और न सूर्य रहते हैं। सब कुछ सोये हुये के समान शून्य सा रहता है वह तर्क से परे है। उस अव्यक्त को जगत् का मूल तत्त्व कहते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

लयः प्राकृतिको ह्येष पुरुषाव्यक्तयोर्यदा ।
शक्तयः सम्प्रलीयन्ते विवशाः कालविद्रुताः ॥२२॥

पदच्छेद—

लयः प्राकृतिकः हि एष पुरुष अव्यक्तयोः यदा ।
शक्तयः सम्प्रली यन्ते विवशाः काल विद्रुतः ॥

शब्दार्थ—

लयः	३.	प्रलय है	शक्तयः	७.	शक्तियाँ
प्राकृतिकः	२.	प्राकृतिक	सम्प्रलीयन्ते	११.	मूल रूप में लीन हो जाती हैं
हि एष	१.	यह	विवशाः	१०.	विवश हो
पुरुष	५.	पुरुष और	काल	८.	काल के प्रभाव से
अव्यक्तयोः	६.	प्रकृति की	विद्रुतः ॥	९.	क्षीण होकर
यदा ।	४.	उस समय			

श्लोकार्थ—यह प्राकृतिक प्रलय है। उस समय पुरुष और प्रकृति की शक्तियाँ काल के प्रभाव से क्षीण होकर विवश हो मूल रूप में लीन हो जाती हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

बुद्धीन्द्रियार्थरूपेण ज्ञानं भाति तदाश्रयम् ।
दृश्यत्वाव्यतिरेकाभ्यामाद्यन्तवदवस्तु यत् ॥२३॥

पदच्छेद—

बुद्धि इन्द्रिय अर्थ रूपेण ज्ञानम् भाति तत् आश्रयम् ।
दृश्यत्व अव्यतिरेकाभ्याम् आद्यन्त वत् अवस्तु यत् ॥

शब्दार्थ—

बुद्धि इन्द्रिय	१. बुद्धि-इन्द्रिय और	दृश्यत्व	७. वे दृश्य हैं और
अर्थ रूपेण	२. उनके विषयों के रूप में	अव्यति रेकाभ्याम्	८. अपने से भिन्न उनकी सत्ता नहीं है
ज्ञानम्	५. ज्ञान स्वरूप वस्तु ही	आद्यन्त	९. उनका आदि भी है
भाति	६. भासित हो रही है	वत्	१०. और अन्त भी है
तत्	३. उनका	अवस्तु	१२. सर्वथा मिथ्या है
आश्रयम् ।	४. अधिष्ठान	यत् ॥	११. इस लिये वे

श्लोकार्थ—बुद्धि-इन्द्रिय और उनके विषयों के रूप में उनका अधिष्ठान ज्ञान-स्वरूप वस्तु ही भासित हो रही है। वे दृश्य हैं और अपने से भिन्न उनकी सत्ता नहीं है। उनका आदि भी है और अन्त भी है। इसलिये वे सर्वथा मिथ्या हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

दीपश्चक्षुश्च रूपं च ज्योतिषो न पृथग् भवेत् ।
एवं धीः खानिमात्राश्च न स्युरन्यतमादृतात् ॥२४॥

पदच्छेद—

दीपः चक्षुः च रूपम् च ज्योतिषः न पृथक् भवेत् ।
एवम् धीः खानि मात्राः च न स्युः अन्यतम् आहृतात् ॥

शब्दार्थ—

दीपः	१. जैसे दीपक	एवम् धीः	७. वैसे ही बुद्धि
चक्षुः च	२. नेत्र और	खानि	८. इन्द्रिय और
रूपम् च	३. रूप यथा	मात्राः च	९. इनके विषय तन्मात्रायें भी
ज्योतिषः	४. तेज से	न स्युः	१२. नहीं हैं
न पृथक्	५. भिन्न नहीं	अन्यतम्	१०. अधिष्ठान स्वरूप
भवेत् ।	६. हैं।	आहृतात् ॥	११. ब्रह्म से भिन्न

श्लोकार्थ—जैसे दीपक नेत्र और रूप तथा तेज से भिन्न नहीं हैं। वैसे ही बुद्धि-इन्द्रिय और इनके विषय तन्मात्रायें भी ब्रह्म से भिन्न नहीं हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

बुद्धेर्जागरणं स्वप्नः सुषुप्तिरिति चोच्यते ।
मायामात्रमिदं राजन् नानात्वं प्रत्यगात्मनि ॥२५॥

पदच्छेद—

बुद्धेः जागरणम् स्वप्नः सुषुप्तिः इति च उच्यते ।
माया मात्रम् इदम् राजन् नानात्वम् प्रत्यक् आत्मनि ॥

शब्दार्थ—

बुद्धेः	६.	बुद्धि की	माया	११.	माया
जागरणम्	२.	जाग्रत	मात्रम्	१२.	मात्र है
स्वप्नः	३.	स्वप्न	इदम्	१०.	वह केवल
सुषुप्तिः	५.	सुषुप्ति (ये तीनों अवस्थायें)	राजन्	१.	परीक्षित !
इति च	४.	और	नानात्वम्	९.	नानात्व की प्रतीति होतीहै
उच्यते ।	७.	कही जाती हैं (अतः इनके कारण)	प्रत्यक्आत्मनि ॥	८	अन्तरात्मा में जो

श्लोकार्थ—परीक्षित ! जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति ये तीनों अवस्थायें बुद्धि की कही जाती हैं । अतः इनके कारण अन्तरात्मा में जो नानात्व की प्रतीति होती है, वह केवल माया मात्र है ।

षड्विंशः श्लोकः

यथा जलधरा व्योम्नि भवन्ति न भवन्ति च ।
ब्रह्मणीदं तथा विश्वमवयव्युदयाव्ययात् ॥२६॥

पदच्छेद—

यथा जलधरा व्योम्नि भवन्ति न भवन्ति च ।
ब्रह्मणि इदम् तथा विश्वम् अवयवि आदय अव्ययात् ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	ब्रह्मणि	१२.	ब्रह्ममय होता है, कभी नहीं होता है ।
जलधरा	३.	मेघमाला			
			इदम्	९.	यह
व्योम्नि	२.	आकाश में	तथा	७.	वैसे ही
भवन्ति न	६.	कभी नहीं होती है	विश्वम्	११.	विश्व (कभी)
भवन्ति	४.	कभी होती है	अवयवि	१०.	अवयवी
च ।	५.	और	आदय-अव्ययात् ॥	८.	उत्पत्ति और प्रलय होने से

श्लोकार्थ—जैसे आकाश में मेघमाला कभी होती है और कभी नहीं होती है । वैसे ही उत्पत्ति और प्रलय होने से यह अवयवी विश्व कभी ब्रह्ममय होता है कभी नहीं होता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सत्यं ह्यवयवः प्रोक्तः सर्वावयविनामिह ।
विनार्थेन प्रतीयेरन् पटस्येवाङ्ग तन्तवः ॥२७॥

पदच्छेद—

सत्यम् हि अवयवः प्रोक्तः सर्व अवयविनाम् इह ।
विना अर्थेन प्रतीयेरन् पटस्य इवा अङ्ग तन्तवः ॥

शब्दार्थ—

सत्यम्	६.	सत्य	विनाअर्थेन	११.	अवयवी के न होने पर भी
हि अवयवः	५.	अवयव उनके न होने परभी	प्रतीयेरन्	१२.	प्रतीति होती है
प्रोक्तः	७.	कहा गया है	पटस्य	९.	वस्त्र रूप
सर्व	३.	सभी	इव	८.	जैसे
अवयविनाम्	४.	अवयवियों का	अङ्ग	१.	परीक्षित
इह ।	२.	जगत में	तन्तवः ॥	१०.	उनके कारण रूप सूत की

श्लोकार्थ—परीक्षित ! जगत में सभी अवयवियों का अवयव उनके न होने पर भी सत्य कहा गया है जैसे वस्त्र रूप उनके रूप सूत की अवयवी के न होने पर भी प्रतीति होती ॥

अष्टविंशः श्लोकः

यत् सामान्यविशेषाभ्यामुपलभ्येत सभ्रमः ।
अन्योन्यापाश्रयात् सर्वमाद्यन्तवदवस्तु यत् ॥२८॥

पदच्छेद—

यत् सामान्य विशेषाभ्याम् उपलभ्ययेत् सः भ्रमः ।
अन्योन्य अप आश्रयात् सर्वम् आद्यन्त वत् अवस्तु यत् ॥

शब्दार्थ—

यत्	१.	जो	अन्योन्य	७.	क्योंकि वे परस्पर
सामान्य	२.	सामान्य और	अपआश्रयात्	८.	आपेक्षिक हैं
विशेषाभ्याम्	३.	विशेष भाव से	सर्वम्	९.	सब
उपलभ्ययेत्	४.	प्राप्त हो	आद्यन्तवत्	११.	आदि और अन्त से युक्त हैं
सः	५.	वह	अवस्तु	१२.	अवस्तु हैं
भ्रमः ।	६.	भ्रम है	यत् ॥	१०.	जो

श्लोकार्थ—जो सामान्य और विशेष भाव से प्राप्त हो वह भ्रम है । क्योंकि वे परस्पर आपेक्षिक है । सब जो आदि और अन्त से युक्त हैं अवस्तु है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

विकारः ख्यायमानोऽपि प्रत्यगात्मानमन्तरा ।
न निरूप्योऽस्त्यणुरपि स्याच्चेच्चित्सम आत्मवत् ॥२९॥

पदच्छेद—

विकारः ख्यायमानः अपि प्रत्यक् आत्मानम् अन्तरा ।
न निरूप्यः अस्ति अणुः अपि स्यात् चेत् चित्सम् आत्मवत् ॥

शब्दार्थ—

विकारः	१.	प्रपञ्च रूप विकार	अस्ति	८.	है
ख्यायमानः	२.	प्रतीत होने पर	अणुः अपि	११.	आत्मा से भिन्न भी
अपि	३.	भी	स्यात्	१२.	मानलें (तो भी वह)
प्रत्यक्	४.	ब्रह्म	चेत्	१०.	यदि उसे
आत्मानम्	५.	स्वरूप से	चित्सम्	१३.	चिद्रूप आत्मा के समान स्वयं प्रकाश तथा
अन्तरा	६.	भिन्न रूप में			
न निरूप्यः	७.	निरूपण करने योग्य	आत्मवत् ॥	१४.	आत्मा की भाँति ही एक रूप होगा

श्लोकार्थ—प्रपञ्च रूप विकार प्रतीत होने पर भी ब्रह्म स्वरूप से भिन्न रूप में निरूपण करने योग्य नहीं है। यदि उसे आत्मा से भिन्न भी मानलें तो भी वह चिद्रूप आत्मा के समान स्वयं प्रकाश तथा आत्मा की भाँति ही एक रूप होगा ॥

त्रिंशः श्लोकः

नहि सत्यस्य नानात्वमविद्वान् यदि मन्यते ।
नानात्वं छिद्रयोर्यद्वज्ज्योतिषोर्वातयोरिव ॥३०॥

पदच्छेद—

नहि सत्यस्य नाना त्वम् विद्वान् यदि मन्यते ।
नानात्वम् छिद्रयोः यद्वत् ज्योतिषोः वातयोः इव ॥

शब्दार्थ—

नहि	३.	नहीं है	नानात्वम्	७.	वह नानात्व वैसा ही होगा
सत्यस्य	२.	सत्य वस्तु में	छिद्रयोः	९.	महाकाश और घटाकाश का
नानात्वम्	१.	अनेकता	यद्वत्	८.	जैसा
विद्वान्	५.	कोई अज्ञानी इसमें	ज्योतिषोः	११.	आकाश स्थित सूर्य और
यदि	४.	यदि	वातयोः	१२.	बाह्यवायु और अन्तर वायु का भेद मानना
मन्यते ।	६.	अनेकता मानता है तो	इव ॥	१०.	तथा

श्लोकार्थ—अनेकता सत्य वस्तु में नहीं है, यदि कोई अज्ञानी इसमें अनेकता मानता है तो वह नानात्व वैसा ही होगा, जैसा महाकाश और घटाकाश का तथा आकाश स्थित सूर्य और बाह्य वायु और अन्तर वायु का भेद मानना ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

यथा हिरण्यं बहुधा समीयते नृभिः क्रियाभिर्व्यवहारवर्त्मसु ।
एवं वचोभिर्भगवानधोक्षजो व्याख्यायते लौकिकवैदिकैर्जनैः ॥३१॥

पदच्छेद—

यथा हिरण्यम् बहुधा समीयते नृभिः क्रियाभिः व्यवहार वर्त्मसु ।
एवम् वचोभिः भगवान् अधोक्षजः व्याख्यायते लौकिक वैदिकैः जनैः ॥

शब्दार्थ—

यथा	१.	जैसे	एवम्	९.	उसी प्रकार
हिरण्यम्	५.	एक ही सोने को	वचोभिः	१३.	वचनों के द्वारा
बहुधा	६.	अनेक रूपों में	भगवान्	१५.	भगवान् का
समीयते	८.	तैयार कर लेते हैं	अधोक्षजः	१४.	इन्द्रियातीत
नृभिः	४.	मनुष्य	व्याख्यायते	१६.	अनेक रूपों में वर्णन करतेहैं
क्रियाभिः	७.	गढ़कर	लौकिक	११.	लौकिक और
व्यवहार	२.	व्यवहार के	वैदिकैः	१२.	वैदिक
वर्त्मसु ।	३.	मार्गों में	जनैः ॥	१०.	विद्वान लोग

श्लोकार्थ—जैसे व्यवहार के मार्गों में मनुष्य एक ही सोने को अनेक रूपों में गढ़कर तैयार कर लेते हैं । उसी प्रकार विद्वान लोग लौकिक और वैदिक वचनों के द्वारा इन्द्रियातीत भगवान् का अनेक रूपों में वर्णन करते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

यथा घनोऽर्कप्रभवोऽर्कदर्शितो ह्यर्कांशभूतस्य च चक्षुषस्तमः ।
एवं त्वहं ब्रह्मगुणस्तदीक्षितो ब्रह्मांशकस्यात्मन आत्मबन्धनः ॥३२॥

पदच्छेद—

यथा घनः अर्क प्रभवः अर्क दर्शितः हि अर्कांश भूतस्य च चक्षुषः तमः ।
एवम् तु अहम् बहुगुणः तत् ईक्षितः ब्रह्मांशकस्य आत्मनः आत्म बन्धनः ॥

शब्दार्थ—

यथा घनः	१.	जैसे बादल	एवम्	९.	उसी प्रकार
अर्क प्रभवः	२.	सूर्य से उत्पन्न होता है	तु अहम्	१०.	अहंकार
अर्क	३.	और सूर्य से ही	बहु गुणः	११.	ब्रह्म से उत्पन्न और
दर्शितः	४.	प्रकाशित होता है	तत् ईक्षितः	१२.	ब्रह्म से ही प्रकाशित होताहै
हि आर्कांश	५	फिर भी सूर्य के	ब्रह्मांशकस्यः	१३	फिर भी ब्रह्म के अंशभूत
भूतस्य च	६.	अंशभूत सूर्य दर्शन में बाधक	आत्मनः	१४.	जीव के लिये
चक्षुषः	७.	नेत्रों के लिये	आत्म	१६	आत्म साक्षात्कार में
तमः ।	८.	अन्धकार बन जाता है	बन्धनः ॥	१५.	बाधक बन जाता है

श्लोकार्थ—जैसे बादल सूर्य से उत्पन्न होता है, और सूर्य से ही प्रकाशित होता है। फिर भी सूर्य के अंश भूत सूर्य दर्शन में बाधक नेत्रों के लिये अन्धकार बन जाता है । उसी प्रकार अहंकार ब्रह्म से उत्पन्न और ब्रह्म से ही प्रकाशित होता है । फिर भी ब्रह्म के अंश भूत जीव के लिये आत्म साक्षात्कार में बाधक बन जाता है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

घनो यदार्कप्रभवो विदीर्यते चक्षुः स्वरूपं रविमीक्षते तदा ।
यदा ह्यहङ्कार उपाधिरात्मनो जिज्ञासया नश्यति तर्ह्यनुस्मरेत् ॥३३॥

पदच्छेद—
घनः यदा अर्क प्रभवः विदीर्यते चक्षुः स्वरूपम् रविम् ईक्षते तदा ।
यदा हि अहंकार उपाधिआत्मनः जिज्ञासया नश्यति तर्हि अनुस्मरेत् ॥

शब्दार्थ—

घनः यदा	२.	जब बादल	यदाहि	७.	वैसे ही जब
अर्क प्रभवः	१.	सूर्य से उत्पन्न होने वाला	अहंकार	१०.	अहंकार
विदीर्यते	३.	तितर-बितर हो जाता है	उपधिः आत्मनः	६.	आत्मा की उपाधि
चक्षु: स्वरूपम्	४.	नेत्र अपने स्वरूप	जिज्ञासया	८.	ब्रह्म जिज्ञासा से
रवि ईक्षते	५.	सूर्य का दर्शन कर लेता है	नश्यति तर्हि	११.	नष्ट हो जाता है तब जीव
तदा ।	६.	तब	अनुस्मरेत् ॥	१२.	अपने स्वरूप में लीन हो जाता है

श्लोकार्थ—सूर्य से उत्पन्न होने वाला जब बादल तितर-बितर हो जाता है, नेत्र अपने स्वरूप सूर्य का दर्शन कर लेता है। तब वैसे ही जब ब्रह्म जिज्ञासा से आत्मा की उपाधि अहंकार नष्ट हो जाता है तब जीव अपने स्वरूप में लीन हो जाता है ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

यदैवमेतेन विवेकहेतिना मायामयाहङ्करणात्मबन्धनम् ।
छित्त्वाच्युतात्मानुभवोऽवतिष्ठते तमाहुरात्यन्तिकमङ्ग सम्प्लवम् ॥३४॥

पदच्छेद—
यदा एवम् एतेन विवेक हेतिना मायामया अहङ्कारणात्म बन्धनम् ।
छित्त्वा अच्युत आत्म अनुभवः अवतिष्ठते तम आहुः अत्यन्तिकम् अङ्ग सम्प्लवम् ॥

शब्दार्थ—

यदा एवम्	२.	जब जीव इस प्रकार	अच्युत	६.	एकरस
एतेन विवेक	३.	इस विवेक के	आत्म अनुभवः	१०.	आत्म स्वरूप के अनुभव में
हेतिना	४.	खड्ग से	अवतिष्ठते तम्	११.	स्थित हो जाता है उसे
मायामया	५.	मायामय	अहुः	१४.	कहते हैं
अहङ्कारणात्म	६.	अहंकार का	अत्यन्तिकम्	१२.	अत्यन्तिक
बन्धनम् ।	७.	बन्धन	अङ्ग	१.	हे परीक्षित !
छित्वा	८.	काटकर	सम्प्लवम् ॥	१३.	प्रलय

श्लोकार्थ—हे परीक्षित ! जब जीव इस प्रकार इस विवेक के खड्ग से मायामय अहंकार का बन्धन काटकर एक रस आत्म स्वरूप के अनुभव मे स्थित हो जाता है। उसे अत्यन्तिक प्रलय कहते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नित्यदा सर्वभूतानां ब्रह्मादीनां परन्तप ।
उत्पत्तिप्रलयावेके सूक्ष्मज्ञाः सम्प्रचक्षते ॥३५॥

पदच्छेद—

नित्यदा सर्व भूतानाम् ब्रह्म आदीनां परन्तप ।
उत्पत्ति प्रलयौ ऐके सूक्ष्मज्ञाः सम्प्रचक्षते ॥

शब्दार्थ—

नित्यदा	११.	नित्य होते रहते हैं	उत्पत्ति	९.	उत्पत्ति और
सर्व	७.	सभी	प्रलयौ	१०.	प्रलय
भूतानाम्	८.	प्राणियों की	ऐके	२.	कोई
ब्रह्म	५.	ब्रह्मा से	सूक्ष्मज्ञाः	३.	सूक्ष्मदर्शी लोग
आदीनाम्	६.	लेकर तिनके तक	सम्प्रचक्षते ॥	४.	कहते हैं कि
परन्तपः ।	१.	हे शत्रुदमन !			

श्लोकार्थ—हे शत्रुदमन ! कोई सूक्ष्मदर्शी लोग कहते हैं कि ब्रह्मा से लेकर तिनके तक सभी प्राणियों की उत्पत्ति और प्रलय नित्य होते रहते हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

कालस्रोतोजवेनाशु ह्रियमाणस्य नित्यदा ।
परिणामिनामवस्थास्ता जन्मप्रलयहेतवः ॥३६॥

पदच्छेद—

काल स्रोतः जवेन आशु ह्रियमाणस्य नित्यदा ।
परिणामि नाम् अवस्थाः ताः जन्म प्रलय हेतवः ॥

शब्दार्थ—

काल	१.	कालरूप	परिणामि नाम्	१०.	परिणामी पदार्थों की
स्रोतः	२.	सोते के	अवस्थाः	१२.	अवस्थायें प्रलय हो रही है
जवेन	३.	वेग द्वारा	ताः	११.	प्रतिक्षण बदलती हुई वे
आशु	४.	शीघ्रता से	जन्म	७.	उत्पत्ति और
ह्रियमाणस्य	६.	बहाये जाते हुये देहादि की	प्रलय	८.	विनाश के
नित्यदा ।	५.	नित्य	हेतवः ॥	९.	कारण हैं

श्लोकार्थ—कालरूप सोते के वेग द्वारा शीघ्रता से नित्य बहाये जाते हुये देहादि की उत्पत्ति और विनाश के कारण हैं। परिणामी पदार्थों की प्रतिक्षण बदलती हुई वे अवस्थायें प्रलय हो रही हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

अनाद्यन्तवतानेन कालेनेश्वरमूर्तिना ।
अवस्था नैव दृश्यन्ते वियति ज्योतिषामिव ॥३७॥

पदच्छेद—

अनादि अन्तवत अनेन कालेन ईश्वर मूर्तिना ।
अवस्था न एव दृश्यन्ते वियति ज्योतिषाम् इव ॥

शब्दार्थ—

अनादि	४. अनादि	अवस्था	७. प्राणियों की अवस्थायें
अन्तवत्	५. अनन्त	न एव	११. नहीं है (किन्तु)
अनेन	३. इस	दृश्यन्ते	१२. दिखायी पड़ती है
कालेन	६. काल के कारण	वियति	८. आकाश में
ईश्वर	१. भगवान् के	ज्योतिषाम्	९. तारागणों की गति की
मूर्तिना ।	२. स्वरूप भूत	इव ॥	१०. भाँति

श्लोकार्थ—भगवान् के स्वरूप भूत इस अनादि-अनन्त काल के कारण प्राणियों की अवस्थायें आकाश में तारा गणों की गति की भाँति नहीं हैं, किन्तु दिखाई देती हैं ।

अष्टत्रिंशः श्लोकः

नित्यो नैमित्तिकश्चैव तथा प्राकृतिको लयः ।
आत्यन्तिकश्च कथितः कालस्य गतिरीदृशी ॥३८॥

पदच्छेद—

नित्यः नैमित्तिकः च एव तथा प्राकृतिकः लयः ।
आत्यन्तिकः च कथितः कालस्य गति ईदृशीः ॥

शब्दार्थ—

नित्यः	२. नित्य	आत्यन्तिकः	७. आत्यन्तिक (ये चार)
नैमित्तिकः	३. नैमित्तिक	च	८. प्रलय
च एव	१. और	कथितः	९. कही गयी हैं
तथा	६. तथा	कालस्य	१०. काल की
प्राकृतिकः	५. प्राकृतिक	गति	११. गति
लयः ।	४. प्रलय	ईदृशीः ॥	१२. ऐसी ही है

श्लोकार्थ—और नित्य-नैमित्तिक प्रलय-प्राकृतिक तथा आत्यन्तिक ये चार प्रलय कही गयी हैं, काल की गति ऐसी ही है ।

—ॐॐ—

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

एताः कुरुश्रेष्ठ जगद्विधातुर्नारायणस्याखिलसत्वधाम्नः ।
लीलाकथास्ते कथिताः समासतः कात्स्न्र्येन नाजोऽप्यभिधातुमीशः ॥३९॥

पदच्छेद—

एताः कुरुश्रेष्ठ जगद्विधातुः नारायणस्य अखिल सत्व धाम्नः ।
लीला कथाः ते कथिताः समासतः कात्स्न्र्येन न अजः अपि अभिधातुम् ईशः ।।

शब्दार्थ—

एताः	७.	इन	लीलाकथाः ते	८.	लीलाओं की कथाओं को आपसे
कुरुश्रेष्ठ	१.	कुरुश्रेष्ठ	कथिताः	१०.	कही
जगद्विधातुः	२.	संसार के विधाता	समासतः	९.	संक्षेप से
नारायणस्य	६.	नारायण की	कात्स्न्र्येन	११.	पूर्णतया
अखिल	३.	अखिल	न अजः अपि	१३.	ब्रह्मा जी भी नहीं
सत्व	४.	शक्तियों के	अभिधातुम्	१२.	कहने में तो
धाम्नः ।	५.	आश्रय	ईशः ।।	१४	समर्थ हैं

श्लोकार्थ—कुरुश्रेठ संसार के विधाता अखिल शक्तिओं के आश्रय नारायण की इन लीलाओं की कथाओं को आप से संक्षेप से कही, पूर्णतया कहने में तो ब्रह्मा जी भी समर्थ नहीं है ।।

चत्वारिंशः श्लोकः

संसारसिन्धुमतिदुस्तरमुत्तितीर्षोर्नान्यः प्लवो भगवतः पुरुषोत्तमस्य ।
लीलाकथारसनिषेवणमन्तरेण पुंसो भवेद् विविधदुःखदवार्दितस्य ॥४०॥

पदच्छेद—

संसार सिन्धुम् अति दुस्तरम् उत्तितीर्षोः न अन्यः प्लवः भगवतः पुरुषोत्तमस्य ।
लीला कथा रस निषेवणम् अन्तरेण पुंसः भवेद् विविध दुःख दवार्दितस्य ।।

शब्दार्थ—

ससारसिन्धुम्	२.	संसार सागर से	लीला कथारस	१०.	लीला कथा रस
अतिदुस्तरम्	१.	अत्यन्त दुस्तर	विषेवणम्	११.	सेवन के
उत्तीतोर्षोः	३.	पार करने के इच्छुक	अन्तरेण	१२.	अतिरिक्त
न अन्यः	१४.	और कोई साधन नहीं है	पुंसः भवेत्	७.	मनुष्य के लिये
प्लवः	१३.	नौका के अलावा	विविध	४.	अनेकों प्रकार के
भगवतः	९.	भगवान् की	दुःख	५.	दुःख रूपी
पुरुषोत्तमस्य ।	८.	पुरुषोत्तम	दवार्दितस्य ।।	६.	दावाग्नि से पीड़ित

श्लोकार्थ—अत्यन्त दुस्तर संसार-सागर से पार करने के इच्छुक अनेकों प्रकार के दुःख रूपी दावाग्नि से पीड़ित मनुष्य के लिये पुरुषोत्तम भगवान् की लीला कथा रस सेवन के अतिरिक्त नौका के अलावा और कोई साधन नहीं हैं ।

एकचत्वारिंशः श्लोकः

पुराणसंहितामेतामृषिर्नारायणोऽव्ययः ।
नारदाय पुरा प्राह कृष्णद्वैपायनाय सः ॥४१॥

पदच्छेद —

पुराण संहिताम् एताम् ऋषिः नारायणः अव्ययः ।
नारदाय पुरा प्राह कृष्ण द्वैपायनाय सः ॥

शब्दार्थ—

पुराण संहिताम्	२.	पुराण संहिता को	नारदाय	७.	नारद से
एताम्	१.	इस	पुरा	६.	पूर्व काल में
ऋषिः	४.	ऋषि	प्राह	८.	कहा था और
नारायणः	५.	नारायण ने	कृष्णद्वैपायनाय	१०.	कृष्ण द्वैपायन से कहा
अव्ययः ।	३.	अविनाशी	सः ॥	९.	उन्होंने

श्लोकार्थ—इस पुराण संहिता को अविनाशी ऋषि नारायण ने पूर्व काल में नारद से कहा था । और उन्होंने कृष्ण द्वैपायन से कहा ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

स वै मह्यं महाराज भगवान् बादरायणः ।
इमां भागवतीं प्रीतः संहितां वेदसम्मिताम् ॥४२॥

पदच्छेद—

सः वै मह्यम् महाराज भगवान् बादरायणः ।
इमां भागवतो प्रीतः संहिताम् वेद सम्मिताम् ॥

शब्दार्थ —

सः वै	२.	उन	इमाम्	८.	इस
मह्यम्	६.	मुझे	भागवतीम्	९.	भागवती
महाराज	१.	महाराज	प्रीतः	५.	प्रसन्न होकर
भगवान्	३.	भगवान्	संहिताम्	१०.	संहिता का उपदेश दिया
बादरायण ।	४.	श्रीकृष्ण द्वैपायन ने	वेदसम्मिताम् ॥	७.	वेद तुल्य

श्लोकार्थ—महाराज उन भगवान् श्री कृष्ण द्वैपायन ने प्रसन्न होकर मुझे वेद तुल्य इस भागवती संहिता का उपदेश दिया ।।

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

एतां वक्ष्यत्यसौ सूत ऋषिभ्यो नैमिषालये ।
दीर्घसत्रे कुरुश्रेष्ठ सम्पृष्टः शौनकादिभिः ॥४३॥

पदच्छेद—

एताम् वक्ष्यति असौ सूत ऋषिभ्यः नैमिषालये ।
दीर्घसत्रे कुरुश्रेष्ठ सम्पृष्टः शौनकः आदिभिः ॥

शब्दार्थ—

एताम्	१०.	यह संहिता	दीर्घसत्रे	३.	लम्बे यज्ञ के समय
वक्ष्यति	११.	बतायेंगे	कुरुश्रेष्ठ	१.	कुरुवंशियों में श्रेष्ठ
असौ	७.	वे	सम्पृष्टः	६.	प्रश्न किये जाने पर
सूत	८.	सूत जी	शौनकः	४.	शौनक
ऋषिभ्यः	९.	ऋषियों को	आदिभिः ॥	५.	आदि ऋषियों द्वारा
नैमिषालये ।	२.	नैमिषारण्य में			

श्लोकार्थ—कुरुवंशियों में श्रेष्ठ नैमिषारण्य में लम्बे यज्ञ के समय शौनक आदि ऋषियों द्वारा प्रश्न किये जाने पर वे सूत जी ऋषियों को यह संहिता बतायेंगे ॥

श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे
चतुर्थः अध्यायः ॥४॥

द्वादशः स्कन्धः

पञ्चमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

श्रीशुक उवाच—अत्रानुवर्ण्यतेऽभीक्ष्णं विश्वात्मा भगवान् हरिः ।
यस्य प्रसादजो ब्रह्मा रुद्रः क्रोधसमुद्भवः ॥१॥

पदच्छेद—

अत्र वर्णयते अभीक्ष्णम् विश्वात्मा भगवान् हरिः ।
यस्य प्रसादजः ब्रह्मा रुद्र क्रोध समुद्भवः ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	यहाँ	यस्य	७.	जिनकी
वर्णयते	६.	संकीर्तन किया गया है	प्रसादजः	८.	प्रसन्नता से
अभीक्ष्णम्	५.	बार-बार	ब्रह्मा	९.	ब्रह्मा और
विश्वात्मा	२.	विश्वात्मा	रुद्र	११.	रुद्र
भगवान्	३.	भगवान्	क्रोध	१०.	क्रोध से
हरिः ।	४.	हरि का	समुद्भवः ॥	१२.	उत्पन्न हुये हैं

श्लोकार्थ—यहाँ विश्वात्मा भगवान् हरिका बार-बार संकीर्तन किया गया है । जिनकी प्रसन्नता से ब्रह्मा और क्रोध से रुद्र उत्पन्न हुये हैं ॥

द्वितीयः श्लोकः

त्वं तु राजन् मरिष्येति पशुबुद्धिमिमां जहि ।
न जातः प्रागभूतोऽद्य देहवत्त्वं न नङ्क्ष्यसि ॥२॥

पदच्छेद—

त्वम् तु राजन् मरिष्ये इति पशु बुद्धिम् इमाम् जहि ।
न जातः प्राक्भूतः अद्य देहत् त्वम् न नङ्क्षयसि ॥

शब्दार्थ—

त्वम् तु	४.	तुम	न जातः	७.	तुम नहीं
राजन्	१.	हे राजन् !	प्राक्भूतः	८.	हुये
मरिष्ये इति	२.	मैं मरूँगा यह	अद्य	९.	पहले नहीं थे अब
पशु बुद्धिम्	३.	अविवेक मूलक धारणा है	देहत् त्वम्	१०.	शरीरधारी हो
इमाम्	५.	इसे	न	१२.	नहीं है
जहि ।	६.	छोड़ दो	नङ्क्षयसि ॥	११.	नष्ट हो जाओगे(ऐसी बात)

श्लोकार्थ—हे राजन् ! मैं मरूँगा यह अविवेक मूलक धारणा है । इसे छोड़ दो । तुम नहीं हुये पहले नहीं थे । अब शरीरधारी हो, नष्ट हो जाओगे, ऐसी बात नहीं है ॥

तृतीयः श्लोकः

न भविष्यसि भूत्वा त्वं पुत्रपौत्रादिरूपवान् ।
बीजाङ्कुरवद् देहादेर्व्यतिरिक्तो यथानलः ॥३॥

पदच्छेद—

न भविष्यसि भूत्वा त्वम् पुत्र पौत्र आदि रूपवान् ।
बीज अङ्कुरवत् देहादेः व्यतिरिक्तः यथा अनलः ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं (के समान)	बीज	८.	जैसे बीज से
भविष्यसि	७.	होओगे	अङ्कुर	९.	अङ्कुर होता है
भूत्वा	५.	होकर भी	वत्	१०	वैसे ही
त्वम्	१.	तुम	देहाद	११.	देह से देह उत्पन्न होता है
पुत्र-पौत्र	२.	पुत्र-पौत्र	व्यक्तिरिक्त	१४.	अलग रहता है वैह हो तुम भी अलग होगे
आदि	३.	आदि के	यथा	१२.	जैसे
रूपवान् ।	४.	रूप में उत्पन्न	अनलः ॥	१३.	अग्नि काष्ठ से

श्लोकार्थ—तुम पुत्र-पौत्र आदि के रूप में उत्पन्न होकर भी नहीं के समान होओगे । जैसे बीज से बीज अङ्कुर होना है, वैसे ही देह से देह उत्पन्न होता है । जैसे अग्नि काष्ठ से अलग रहता है । वैसे ही तुम भी अलग रहोगे ॥

चतुर्थः श्लोकः

स्वप्ने यथा शिरश्छेदं पञ्चत्वाद्यात्मनः स्वयम् ।
यस्मात् पश्यति देहस्य तत आत्मा ह्यजोऽमरः ॥४॥

पदच्छेद—

स्वप्ने यथा शिरश्छेद पञ्चत्व आदि आत्मनः स्वयम् ।
यस्मात् पश्यति देहस्य ततः आत्मा हि अजः अमरः ॥

शब्दार्थ—

स्वप्ने	२.	स्वप्न में (मनुष्य)	यस्मात्	८.	जिस प्रकार
यथा	१.	जैसे	पश्यति	९.	देखता है
शिरश्छेद	५.	सिर का कटना	देहस्य	७,	देह की अवस्थायें
पञ्चत्व आदि	६.	मृत्यु आदि	ततः	१०.	परन्तु इसलिये
आत्मनः	४.	अपने	आत्मा हि	११.	आत्मा तो
स्वयम् ।	३.	स्वयम्	अजः अमरः ॥	१२.	अजर-अमर है

श्लोकार्थ – स्वप्न में मनुष्य स्वयम् अपने सिर का कटना, मृत्यु-आदि देह की अवस्थायें जिस प्रकार देखता है । परन्तु आत्मा तो अजर-अमर है ॥

पञ्चमः श्लोकः

घटे भिन्ने यथाऽऽकाश आकाशः स्याद् यथा पुरा ।
एवं देहे मृते जीवो ब्रह्म सम्पद्यते पुनः ॥५॥

पदच्छेद—

घटे भिन्ने यथा आकाशः आकाशः स्याद् यथा पुरा ।
एवम् देहे मृते जीवः ब्रह्म सम्पद्यते पुनः ॥

शब्दार्थ—

घटे भिन्ने	२.	घड़ा फूट जाने पर	एवम्	७.	वैसे ही
यथा	१.	जैसे	देहे	८.	शरीर
आकाशः	३,	आकाश	मृते	९.	पात हो जाने पर
आकाशाः	५.	आकाश ही	जीवः	१०.	जीव
स्याद्	६,	हो जाता है ।	ब्रह्म सम्पद्यते	१२.	ब्रह्म हो जाता है
यथा पुरा ।	४.	पहले की भाँति	पुनः ॥	११.	पुनः

श्लोकार्थ—जैसे घड़ा फूट जाने पर आकाश पहले की भाँति आकाश हो जाता है । (अर्थात् घटाकाश महाकाश में मिल जाता है) । वैसे ही शरीर पात हो जाने पर जीव पुनः ब्रह्म हो जाता है ।

षष्ठः श्लोकः

मनः सृजति वै देहान् गुणान कर्माणि चात्मनः ।
तन्मनः सृजते माया ततो जीवस्य संसृतिः ॥६॥

पदच्छेद—

मनः सृजति वै देहान् गुणान् कर्माणि च आत्मनः ।
तत् मनः सृजते माया ततः जीवस्य संसृतिः ॥

शब्दार्थ—

मनः	१.	मन ही	तत् मनः	७.	उस मन की
सृजते	६	सृष्टि कर लेता है	सृजते	९.	सृष्टि करती है
वै देहान्	३.	देह की	माया	८.	अविद्या-माया
गुणान्	४.	गुणों की	ततः	१०.	इसलिये माया ही
कर्माणि	५.	कर्मों की	जीवस्य	११.	जीव के
च आत्मनः ।	२.	आत्मा के लिये	संसृतिः ॥	१२.	संसार चक्र में पड़ने का कारण है

श्लोकार्थ मन ही आत्मा के लिये देह की, गुणों की, कर्मों की सृष्टि कर लेता है । उस मन की अविद्या माया सृष्टि करती है । इसलिये माया ही जीव के संसार चक्र में पड़ने का कारण है ॥

सप्तमः श्लोकः

स्नेहाधिष्ठानवर्त्यग्निसंयोगो यावदीयते ।
ततो दीपस्य दीपत्वमेवं देहकृतो भवः ।
रजःसत्त्वतमोवृत्त्या जायतेऽथ विनश्यति ॥७॥

पदच्छेद—

स्नेह अधिष्ठान वर्ती अग्नि संयोगः यावत् ईयते ।
ततः दीपस्य दीपत्वम् एवम् देह कृतः भवः ॥
रजः सत्व तमः वृत्तया जायते अथा विनश्यति ॥

शब्दार्थ—

स्नेह अधिष्ठान	१.	तेल, तेल रखने का पात्र	देह कृतः	७.	देह में उत्पन्न
वर्ती अग्निसंयोग	२.	बत्ती और अग्नि का संयोग	भवः रजः	८.	जीव रजोगुण
यावत् ईयते	३.	जब तक रहता है	सत्व	९.	सत्व गुण और
ततः दीपस्य	४.	तभी तक दीप का	तमः वृत्तया	१०.	तमोगुण की वृत्ति से
दीपत्वम्	५.	दीपत्व होता है	जायते अथ	११.	उत्पन्न होता है और
एवम् ।	६.	इसी प्रकार	विनश्यति ॥	१२.	नष्ट हो जाता है

श्लोकार्थ—तेल, तेल रखने का पात्र, बत्ती और अग्नि का संयोग, जब-तक रहता है तभी तक दीपक का दीपत्व होता है । इसी प्रकार देह में उत्पन्न जीव रजोगुण, सत्वगुण और तमोगुण की वृत्ति से उत्पन्न होता है और नष्ट हो जाता है ।

अष्टमः श्लोकः

न तत्रात्मा स्वयंज्योतिर्यो व्यक्ताव्यक्तयोः परः ।
आकाश इव चाधारो ध्रुवोऽनन्तोपमस्ततः ॥८॥

पदच्छेद—

न तत्र आत्मा स्वयम् ज्योतिः यः व्यक्त अव्यक्तयोः परः ।
आकाश इव च आधारः ध्रुवः अनन्त उपमः ततः ॥

शब्दार्थ—

न	६.	नहीं है	आकाश	८.	वह आकाश के
तत्र आत्मा	५.	(आत्मा है वह)	इव	९.	समान
स्वयम् ज्योतिः	४.	स्वयम् प्रकाशित होने वाला	च आधारः	७.	और सब का आधार
यः व्यक्त	१.	जो व्यक्त और	ध्रुवः	१०.	ध्रुव
अव्यक्तयोः	२.	अव्यक्त से	अनन्त उपमः	११.	अनन्त उपमा वाला है
परः ।	३.	परे	ततः ॥	१२.	तथा

श्लोकार्थ—जो व्यक्त और अव्यक्त से परे स्वयम् प्रकाशित होने वाला आत्मा है । वह वहाँ नहीं है, और सबका आधार वह आकाश के समान ध्रुव तथा अनन्त उपमा वाला है ॥

नवमः श्लोकः

एवमात्मानमात्मस्थमात्मनैवामृश प्रभो ।
बुद्धयानुमानगर्भिण्या वासुदेवानुचिन्तया ॥९॥

पदच्छेद—

एवम् आत्मानम् आत्मस्थम् आत्मन एव आमृश प्रभो ।
बुद्धया अनुमान गर्भिण्या वासुदेव अनु चिन्तया ॥

शब्दार्थ—

एवम्	२.	इस प्रकार	प्रभो ।	१.	हे राजन् !
आत्मानम्	४.	आत्मा का	बुद्धया	९.	बुद्धि के द्वारा
आत्मस्थम्	३.	शरीर स्थित	अनुमान	७.	अनुमान से
आत्मन	१०.	स्वयम्	गर्भिण्या	८.	युक्त
एव	११.	ही	वासुदेव	५.	भगवान् के
आमृश	१२.	स्पर्श करो	अनु चिन्तया ॥	६.	सतत चिन्तन तथा

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इस प्रकार शरीर स्थित आत्मा का भगवान् के सतत चिन्तन तथा अनुमान से युक्त बुद्धि के द्वारा स्वयम् ही स्पर्श करो ॥

दशमः श्लोकः

चोदितो विप्रवाक्येन न त्वां धक्ष्यति तक्षकः ।
मृत्यवो नोपधक्ष्यन्ति मृत्यूनां मृत्युमीश्वरम ॥१०॥

पदच्छेद—

चोदितः विप्र वाक्येन न त्वाम् धक्ष्यति तक्षकः ।
मृत्यवः न उपधक्ष्यन्ति मृत्युनाम् मृत्युम् ईश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

चोदितः	३	प्रेरित	मृत्यवः	१०.	मृत्यु भी
विप्र	१.	ब्राह्मण के	न उपधक्ष्यन्ति	११.	नहीं जला सकेगी
वाक्येन	२.	वाक्य से	मृत्युनाम्	७.	मृत्यों के भी
न त्वाम्	५.	तुम्हें नहीं	मृत्युम्	८	मृत्यु तथा
धक्ष्यति	६.	भस्म कर सकेगा	ईश्वरम् ।	९.	ईश्वर रूप तुम्हें
तक्षकः ।	४.	तक्षक			

श्लोकार्थ—ब्राह्मण के वाक्य से प्रेरित तक्षक तुम्हें नहीं भस्म कर सकेगा । मृत्यों के भी मृत्यु तथा ईश्वर रूप तुम्हें मृत्यु भी जला सकेगी ॥

एकादशः श्लोकः

अहं ब्रह्म परं धाम ब्रह्माहं परमं पदम्।
एवं समीक्ष्यात्मानमात्मन्याधाय निष्कले ॥११॥

पदच्छेद—

अहम् ब्रह्म परम् धाम ब्रह्म अहम् परमम् पदम्।
एवम् समीक्षन् आत्मानम् आत्मनि आधाय निष्कले ॥

शब्दार्थ—

अहम्	१. मैं	एवम्	७. इस प्रकार
ब्रह्म	२. ब्रह्म हूँ	समीक्षन्	८. चिन्तन करते हुये
परम् धाम	३. सर्वाधिष्ठान	आत्मानम्	९. अपने आपको
ब्रह्म अहम्	४. ब्रह्म मैं हूँ	आत्मनि	११. आत्मा में
परमम्	५. परम	आधाय	१२. स्थित कर लो
पदम्।	६. पद भी मैं हूँ	निष्कले ॥	१०. एक रस

श्लोकार्थ—मैं ब्रह्म हूँ, सर्वाधिष्ठान ब्रह्म मैं हूँ। परम पद भी मैं हूँ। इस प्रकार चिन्तन करते हुये अपने आपको एक रस आत्मा में स्थित कर लो ॥

द्वादशः श्लोकः

दशन्तं तक्षकं पादे लेलिहानं विषाननैः ।
न द्रक्ष्यसि शरीरं च विश्वं च पृथगात्मनः ॥१२॥

पदच्छेद—

दशन्तम् तक्षकम् पादे लेलिहानम् विषाननैः ।
न द्रक्ष्यसि शरीरम् च विश्वम् च पृथक् आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

दशन्तम्	२. काटते हुये तथा	न द्रक्ष्यसि	१०. नही देखोगे
तक्षकम्	५. तक्षक को	शरीरम् च	६. अपने शरीर और
पादे	१. पैर में	विश्वम् च	७. विश्व को भी
लेलिहानम्	४. चाटते हुये	पृथक्	९. अलग
विषाननैः।	३. विषपूर्ण मुखों से	आत्मनः ॥	८. अपने से

श्लोकार्थ—पैर में काटते हुये तथा विषपूर्ण मुखों से चाटते हुये तक्षक को अपने शरीर और विश्व को भी अपने से अलग नहीं देखोगे ॥

त्रयोदशः श्लोकः

एतत्ते कथितं तात यथाऽऽत्मा पृष्टवान् नृप ।
हरेर्विश्वात्मनश्चेष्टां किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥१३॥

पदच्छेद—

एतत् ते कथितम् तात यथा आत्मा पृष्टवान् नृप ।
हरेः विश्वात्मनः चेष्टाम् किम् भूयः श्रोतुम् इच्छसि ॥

शब्दार्थ—

एतत् ते	९.	वह तुमसे	हरेः	६	भगवान् को
कथितम्	१०.	बता दिया	विश्वात्मनः	५.	विश्वात्मा
तात	२	तात	चेष्टाम्	७.	लीला के सम्बन्ध में
यथा	४.	स्वरूप तुमने	किम्	१२.	क्या
आत्मा	३.	आत्मा	भूयः	११.	पुनः अब
पृष्टवान्	८.	जो पूछा था	श्रोतुम्	१३.	सुनना
नृप ।	१.	हे राजन् !	इच्छसि ॥	१४.	चाहते हो

श्लोकार्थ—हे राजन् ! तात आत्मा स्वरूप तुमने विश्वात्मा भगवान् की लीला के सम्बन्ध में जो पूछा था, वह तुमसे बता दिया । पुनः अब क्या सुनना चाहते हो ॥

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशः स्कन्धः
पञ्चमः अध्यायः ॥५॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्
द्वादशः स्कन्धः
षष्ठः अध्यायः
प्रथमः श्लोकः

सूत उवाच—

एतन्निशम्य मुनिनाभिहितं परीक्षिद् व्यासात्मजेन निखिलात्मदृशा समेन ।
तत्पादमूलमुपसृत्य नतेन मूर्ध्ना बद्धाञ्जलिस्तमिदमाह स विष्णुरातः ॥१॥

पदच्छेद— एतत् निशम्यमुनिना अभिहितम् परीक्षित् व्यास आत्मजेन निखिल आत्म दृशा समेन ।
तत् पादमूलम् उपसृज्येन तेनमूर्ध्नाबद्धाञ्जलिः तम् इदम् आह सः विष्णुरातः ॥

शब्दार्थ—

एतत् निशम्य	६.	यह पुराण सुनकर	तत् पादमूलम्	९.	उनके चरण मूल में
मुनिना	४.	मुनि शुकदेव जी द्वारा	उपसृज्येन	१०.	पहुँच कर
अभिहितम्	५.	कथित	तेन मूर्ध्ना	११.	सिर झुकाकर
परीक्षित्	८	परीक्षित ने	बद्धाञ्जलिः	१२	अँञ्जलि बाँध कर
व्यास आत्मजेन	३.	व्यास पुत्र	तम्	१३.	उनसे
निखिल आत्म	१.	सम्पूर्ण जगत को आत्म	इदम् आह	१४.	यह कहा
दृशा		दृष्टि से			
समेन ।	२.	समभाव में देखने वाले	सः विष्णुरातः ॥	७.	उन भगवान् के द्वारा रक्षित राजा

श्लोकार्थ—सम्पूर्ण जगत को आत्मदृष्टि से समभाव में देखने वाले व्यास पुत्र मुनि शुकदेव जी द्वारा कथित यह पुराण सुनकर उन भगवान् के द्वारा रक्षित राजा परीक्षित ने उनके चरण मूल में पहुँच कर सिर झुकाकर अञ्जलि बाँधकर उनसे यह कहा ।

द्वितीयः श्लोकः

राजोवाच—**सिद्धोऽस्म्यनुगृहीतोऽस्मि भवता करुणात्मना ।**
श्रावितो यच्च मे साक्षादनादिनिधनो हरिः ॥२॥

पदच्छेद— सिद्धः अस्मि अनुगृहीतः अस्मि भवता करुण आत्मना ।
श्रावितः यत् चमेसाक्षात् अनादि निधनः हरिः ॥

शब्दार्थ—

सिद्धः	१३.	कृत कृत्य	श्रावितः	१०.	वर्णन किया है
अस्मि	१४	हो गया हूँ	यत् च	४.	जो
अनुगृहीतः	११.	इससे मैं अनुगृहीत	मे	५.	मुझसे
अस्मि	१२.	और	साक्षात्	६.	साक्षाद्
भवता	३.	आपने	अनादि	७.	अनादि
करुण	१.	दयालु	निधनः	८.	अनन्त
आत्मना ।	२.	आत्मन्	हरिः ॥	९	श्री हरि की लीलाओं का

श्लोकार्थ—दयालु आत्मन् आपने जो मुझसे साक्षाद् अनादि अनन्त श्रीहरि की लीलाओं का वर्णन किया है । इससे मैं अनुगृहीत और कृत कृत्य हो गया हूँ ।

तृतीयः श्लोक

नात्यद्भुतमहं मन्ये महतामच्युतात्मनाम् ।
अज्ञेषु तापतप्तेषु भूतेषु यदनुग्रहः ॥३॥

पदच्छेद—

न अति अद्भुतम् अहम् मन्ये महताम् अच्युत आत्मनाम् ।
अज्ञेषु ताप तप्तेषु भूतेषु यत् अनुग्रहः ॥

शब्दार्थ—

न अति	१०.	अत्यन्त	अज्ञेषु	६	अज्ञानी
अद्भुतम् अहम्	११	अद्भुत मैं नहीं	ताप	४.	विविध तापों से
मन्ये	१२.	मानता हूँ	तप्तेषु	५.	सन्तप्त
महताम्	३.	महात्माओं का	भूतेषु	७.	प्राणियों के प्रति
अच्युत	१.	भगवान में रमे हुये	यत्	८.	जो
आत्मनाम् ।	२.	आत्मा वाले	अनुग्रहः ॥	९.	अनुग्रह है उसे

श्लोकार्थ— भगवान् में बसे हुये आत्मा वाले महात्माओं का विविध तापों से सन्तप्त अज्ञानी प्राणियों के प्रति जो अनुग्रह है उसे अत्यन्त अद्भुत मैं नहीं मानता हूँ ।

चतुर्थः श्लोक

पुराणसंहितामेतामश्रौष्म भवतो वयम् ।
यस्यां खलूत्तमश्लोको भगवाननुवर्ण्यते ॥४॥

पदच्छेद—

पुराण संहिताम् एताम् अश्रौष्म भवतः वयम् ।
यस्याम् खलु उत्तम श्लोकः भगवान् अनुवर्ण्यते ॥

शब्दार्थ—

पुराण	४.	पुराण	यस्याम्	७.	जिसमें
संहिताम्	५	संहिता को	खलु	८.	निश्चित ही
एताम्	३.	इस	उत्तम श्लोकः	१०.	श्रीहरि का
अश्रौष्म	६.	सुना	भगवान्	९.	भगवान्
भवतः	१.	आपसे	अनुवर्ण्यते ॥	११.	वर्णन किया गया है
वयम् ।	२.	हम लोगों ने			

श्लोकार्थ—आपसे हम लोगों ने इस पुराण संहिता को सुना, जिसमें निश्चित ही भगवान् श्रीहरि का वर्णन किया गया है ॥

पञ्चमः श्लोकः

भगवंस्तक्षकादिभ्यो मृत्युभ्यो न बिभेम्यहम् ।
प्रविष्टो ब्रह्म निर्वाणमभयं दर्शितं त्वया ॥५॥

पदच्छेद—

भगवन् तक्षक आदिभ्यः मृत्युभ्यः न बिभेमि अहम् ।
प्रविष्टः ब्रह्म निर्वाणम् अभयम् दर्शितम् त्वया ॥

शब्दार्थ—

भगवन्	१.	भगवन्	प्रविष्टः	४.	प्राप्त
तक्षक	६.	तक्षक	ब्रह्म	२.	ब्रह्म और
आदिभ्यः	७.	आदि	निर्वाणम्	३.	मोक्ष को
मृत्युभ्यः	८.	मृत्युओं से	अभयम्	११.	अभय पद
न बिभेमि	९.	नहीं डरता हूँ	दर्शितम्	१२.	दिखा दिया है
अहम् ।	५.	मैं	त्वया ॥	१०.	आपने मुझे

श्लोकार्थ—भगवन् ! ब्रह्म और मोक्ष को प्राप्त मैं तक्षक आदि मृत्युओं से नहीं डरता हूँ । आपने मुझे अभय पद दिखा दिया है ॥

षष्ठः श्लोकः

अनुजानीहि मां ब्रह्मन् वाचं यच्छाम्यधोक्षजे ।
मुक्तकामाशयं चेतः प्रवेश्य विसृजाम्यसून् ॥६॥

पदच्छेद—

अनुजनिहि माम् ब्रह्मन् वाचम् यच्छामि अधोक्षजे ।
मुक्त कामा शयम् चेतः प्रवेश्य विसृजामि असून् ॥

शब्दार्थ—

अनुजानीहि	३	आज्ञा दीजिये कि	मुक्त	७.	रहित
माम्	२.	मुझे	कामा शयम्	६.	कामनाओं के संस्कार से
ब्रह्मन्	१	हे ब्रह्मन् !	चेतः	८.	चित्त को
वाचम्	४.	मैं अपनी वाणी को	प्रवेश्य	१०.	विलीन करके
यच्छामि	५.	बन्द कर लूँ और	विसृजामि	१२.	त्याग कर दूँ
अधोक्षजे ।	९	इन्द्रियातीत परमात्मा में	असुन् ॥	११.	प्राणों का

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! मुझे आज्ञा दीजिये कि मैं अपनी वाणी को बन्द करलूँ और कामनाओं के संस्कार से रहित चित्त को इन्द्रियातीत परमात्मा में विलीन करके प्राणों का त्याग कर दूँ ॥

सप्तमः श्लोकः

अज्ञानं च निरस्तं मे ज्ञानविज्ञाननिष्ठया ।
भवता दर्शितं क्षेमं परं भगवतः पदम् ॥७॥

पदच्छेद—

अज्ञानम् च निरस्तम् मे ज्ञान विज्ञान निष्ठया ।
भवता दर्शितम् क्षेमम् परम् भगवतः पदम् ॥

शब्दार्थ—

अज्ञानम् च	५.	अज्ञान	भवता	७.	आपने
निरस्तम्	६.	नष्ट हो गया है	दर्शितम्	१२.	दर्शन करा दिया है
मे	४.	मेरा	क्षेमम्	१०.	कल्याणमय
ज्ञान	१.	ज्ञान और	परम	९.	परम
विज्ञान	२.	विज्ञान में	भगवतः	८.	भगवान्
निष्ठया ।	३.	परिनिष्ठित हो जाने से	पदम् ॥	१०.	स्वरूप का

श्लोकार्थ—ज्ञान और विज्ञान में परिनिष्ठित हो जाने से मेरा अज्ञान नष्ट हो गया है। आपने भगवान् के परम कल्याणमय स्वरूप का दर्शन करा दिया है ॥

अष्टमः श्लोकः

सूत उवाच—इत्युक्तस्तमनुज्ञाप्य भगवान् बादरायणिः ।
जगाम भिक्षुभिः साकं नरदेवेन पूजितः ॥८॥

पदच्छेद—

इति युक्तः तम् अनुज्ञाप्य भगवान् बादरायणिः ।
जगाम भिक्षुभिः साकम् नर देवेन पूजितः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	जगाम	११.	चले गये
युक्तः	१.	कहे जाने पर	भिक्षुभिः	९.	भिक्षुओं के
तम्	७.	परीक्षित से	साकम्	१०.	साथ
अनुज्ञाप्य	८.	बिदा लेकर	नर देवेन	५.	राजा से
भगवान्	३	भगवान्	पूजितः ॥	६.	पूजित हो (और उन)
बादरायणिः ।	४.	श्रीशुकदेव जी			

श्लोकार्थ—इस प्रकार कहे जाने पर भगवान् शुकदेव जी राजा से पूजित हो और उन परीक्षित से बिदा लेकर भिक्षुओं के साथ चले गये ॥

नवमः श्लोकः

परीक्षिदपि राजर्षिरात्मन्यात्मानमात्मना ।
समाधाय परं दध्यावस्पन्दासुर्यथा तरुः ॥६॥

पदच्छेद—

परीक्षित अपि राजर्षिः आत्मनि आत्मानम् आत्मना ।
समाधाय परम् दध्यौ अस्पन्द असुः यथा तरुः ॥

शब्दार्थ—

परीक्षित	२.	परीक्षित	समाधाय	७.	समाहित करके
अपि	३.	भी	परम	८.	अत्यन्त
राजर्षिः	१.	राजर्षि	दध्यौ	६.	ध्यान मग्न हो गये
आत्मनि	६.	परमात्मा में	अस्पन्द असुः	११.	निष्प्राण
आत्मानम्	५.	अन्तरात्मा को	यथा	१०.	ऐसा जान पड़ता था मानों
आत्मना ।	४.	अपने	तरुः ॥	१२.	वृक्ष का ठूँठ हो

श्लोकार्थ—राजर्षि परीक्षित भी अपने अन्तरात्मा को परमात्मा में समाहित करके अत्यन्त ध्यान मग्न हो गये । ऐसा जान पड़ता था मानों निष्प्राण वृक्ष का ठूँठ हो ॥

दशमः श्लोकः

प्राक्कूले बर्हिष्यासीनो गङ्गाकूल उदङ्मुखः ।
ब्रह्मभूतो महायोगी निःसङ्गश्छिन्नसंशयः ॥१०॥

पदच्छेद—

प्राक्कूले बर्हिष आसीनः गङ्गाकूले उदङ्मुखः ।
ब्रह्मभूतः महायोगी निःसङ्ग छिन्न संशयः ॥

शब्दार्थ—

प्राक्कूले	२.	पूर्वाग्र	ब्रह्मभूतः	१०.	ब्रह्म स्वरूप हो गये
बर्हिष	३.	कुशों पर	महायोगी	६.	महान योगी परीक्षित
आसीनः	५.	बैठे हुये	निः सङ्ग	७.	सङ्ग रहित
गङ्गाकूले	१	गङ्गा के तट पर	छिन्न	९.	मुक्त होकर
उदङ्मुखे ।	४.	उत्तर मुँह होकर	संशयः ॥	८.	तथा सन्देह

श्लोकार्थ—गङ्गा के तट पर पूर्वाग्र कुशों पर उत्तर मुँह होकर बैठे हुये । महान योगी परीक्षित सङ्गरहित तथा सन्देह मुक्त होकर ब्रह्म स्वरूप हो गये ॥

एकादशः श्लोकः

तक्षकः प्रहितो विप्राः क्रुद्धेन द्विजसूनुना ।
हन्तुकामो नृपं गच्छन् ददर्श पथि कश्यपम् ॥११॥

पदच्छेद—

तक्षकः प्रहितः विप्राः क्रुद्धेन द्विज सूनुना ।
हन्तु कामः नृपम् गच्छन् ददर्श पथि कश्यपम् ॥

शब्दार्थ —

तक्षकः	६.	तक्षक नाग ने	हन्तुकामः	८.	मार डालने की इच्छा से
प्रहितः	५.	भेजे गये	नृपम्	७.	राजा को
विप्रा	१.	विप्रो	गच्छन्	९.	जाते हुये
क्रुद्धेन	२.	कुपित हुये	ददर्श	१२.	देखा
द्विज	३.	ब्राह्मण	पथि	१०.	मार्ग में
सूनुना	४.	पुत्र (शृङ्गी के द्वारा)	कश्यपम् ॥	११.	कश्यप नामक ब्राह्मण को

श्लोकार्थ—विप्रो ! कुपित हुये ब्राह्मण पुत्र शृङ्गी के द्वारा भेजे गये तक्षक नाग को राजा को मार डालने की इच्छा से जाते हुये मार्ग में कश्यप नामक ब्राह्मण ने देखा ।

द्वादशः श्लोकः

तं तर्पयित्वा द्रविणैर्निवर्त्य विषहारिणम् ।
द्विजरूपप्रतिच्छन्नः कामरूपोऽदशन्नृपम् ॥१२॥

पदच्छेद—

तम् तर्पयित्वा द्रविणैः निवर्त्य विष हारिणम् ।
द्विज रूप प्रतिच्छन्नः कामरूपः अदशत् नृपम् ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	उस	द्विजरूपः	९.	ब्राह्मण के रुप मे
तर्पयित्वा	५.	सन्तुष्ट करके	प्रतिच्छन्नः	१०.	छिप कर
द्रविणैः	४.	द्रव्यों से	काम	७.	इच्छानुसार
निवर्त्य	६.	लौटा दिया और	रूपः	८.	रूप धारण करने वाले तक्षक
विष	२.	विष	अदशत	१२.	डस लिया
हारिणम् ।	३.	चिकित्सक को	नृपम् ॥	११.	राजा को

श्लोकार्थ—उस विष चिकित्सक को द्रव्यों से सन्तुष्ट करके लौटा दिया । और इच्छानुसार रूप धारण करने वाले तक्षक ने ब्राह्मण के रूप में छिपकर राजा को डस लिया ॥

त्रयोदशः श्लोकः

ब्रह्मभूतस्य राजर्षेर्देहोऽहिगरलाग्निना ।
बभूव भस्मसात् सद्यः पश्यतां सर्वदेहिनाम् ॥१३॥

पदच्छेद—

ब्रह्म भूतस्य राजर्षेः देहः अहि गरल अग्निना ॥
बभूव भस्मसात् सद्यः पश्यताम् सर्व देहिनाम् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्म	१.	ब्रह्म में	बभूव	१२	हो गया
भूतस्य	२.	लीन हुये	भस्मसात्	११.	जल कर भस्म
राजर्षेः	३.	राजर्षि का	सद्यः	१०.	तत्काल
देहः	४.	शरीर	पश्यताम्	९.	देखते ही देखते
अहि गरल	५.	सर्प के विष की	सर्व	७.	सभी
अग्निना ।	६.	अग्नि से	देहिनाम् ॥	८	प्राणियों के

श्लोकार्थ—ब्रह्म में लीन हुये राजर्षि का शरीर सर्प के विष की अग्नि से सभी प्रणियों के देखते-देखते तत्काल जल कर भस्म हो गया ॥

चतुर्दशः श्लोकः

हाहाकारो महानासीद् भुवि खे दिक्षु सर्वतः ।
विस्मिता ह्यभवन् सर्वे देवासुरनरादयः ॥१४॥

पदच्छेद—

हा हा कारः महान् आसीत् भुवि खे दिक्षु सर्वतः ।
विस्मिताः हि अभवन् सर्वे देव असुर नर आदयः ।

शब्दार्थ—

हाहा कारः	५.	हाय-हाय की ध्वनि	विस्मिताः	११.	विस्मित
महान्	४.	बड़े जोर से	हि अभवन्	१२	हो गये
आसीत्	६.	होने लगी	सर्वे	१०.	सब के सब
भुवि	१.	पृथ्वी	देव	७.	देवता
खे दिक्षु	२.	आकाश और दिशाओं में	असुर	८.	असुर
सर्वतः ।	३.	सब ओर से	नर आदयः ॥	९.	मनुष्य आदि

श्लोकार्थ—पृथ्वी आकाश और दिशाओं में सब ओर से बड़े जोर से हाय-हाय की ध्वनि होने लगी । देवता, असुर, मनुष्य आदि सब के सब विस्मित हो गये ॥

पञ्चदशः श्लोकः

देवदुन्दुभयो नेदुर्गन्धर्वाप्सरसो जगुः ।
ववृषुः पुष्पवर्षाणि विबुधाः साधुवादिनः ॥१५॥

पदच्छेद—

देव दुन्दुभयः नेदुः गन्धर्वा अप्सरसः जगुः ।
ववृषुः पुष्प वर्षाणि विबुधाः साधु वादिनः ॥

शब्दार्थ—

देव	१. देवताओं की	ववृषुः	१२. करने लगे
दुन्दुभयः	२. दुन्दुभियाँ	पुष्प	१०. फूलों की
नेदुः	३. अपने आप बज उठीं	वर्षाणि	११. वर्षा
गन्धर्वा	४. गन्धर्व और	विबुधाः	७. देव गण
अप्सरसः	५. अप्सरायें	साधु	८ साधु-साधु
जगुः ।	६. गान करने लगीं	वादिनः ॥	९. कह कर

श्लोकार्थ—देवताओं की दुन्दुभियाँ अपने आप ही बज उठीं। गन्धर्व और अप्सरायें गान करने लगीं। देव गण साधु-साधु कह कर फूलों की वर्षा करने लगे ॥

षोडशः श्लोकः

जनमेजयः स्वपितरं श्रुत्वा तक्षकभक्षितम् ।
यथा जुहाव संक्रुद्धो नागान् सत्रे सह द्विजैः ॥१६॥

पदच्छेद—

जनमेजयः स्वपितरम् श्रुत्वा तक्षक भक्षितम् ।
यथा जुहाव संक्रुद्धः नागान् सत्रे सह द्विजैः ॥

शब्दार्थ—

जनमेजयः	५. जनमेजयः	यथा	८. विधि पूर्वक
स्वपितरम्	३. अपने पिता के बारे में	जुहाव	१०. हवन करने लगे
श्रुत्वा	४. सुनकर	संक्रुद्धः	६. अत्यन्त कुपित होकर
तक्षक	१. तक्षक के द्वारा	नागान् सत्रे	९. नागों का अग्नि कुण्ड में
भक्षितम् ।	२. भस्म किये गये	सह द्विजैः ॥	७. ब्राह्मणों के साथ

श्लोकार्थ तक्षक के द्वारा भस्म किये गये अपने पिता के बारे में सुनकर जनमेजय अत्यन्त कुपित होकर ब्राह्मणों के साथ विधि पूर्वक नागों का अग्नि कुण्ड में हवन करने लगे ॥

सप्तदशः श्लोकः

सर्पसत्रे समिद्धाग्नौ दह्यमानान् महोरगान् ।
दृष्ट्वेन्द्रं भयसंविग्नस्तक्षकः शरणं ययौ ॥१७॥

पदच्छेद—

सर्प सत्रे समिद्धाग्नौ दह्यमानान् महोरगान् ।
दृष्ट्वेन्द्रम् भयसंविग्नः तक्षकः शरणम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

सर्प	१.	सर्प	दृष्ट्वा	७.	देखकर
सत्रे	२.	याग के	इन्द्रम्	११.	इन्द्र की
समिद्ध	३.	प्रज्वलित	भय	८.	भय से
अग्नौ	४.	अग्नि में	संविग्नः	९.	घबराया हुआ
दह्यमानान्	५.	जलते हुये	तक्षकः	१०.	तक्षक
महोरगान् ।	६.	बड़े-बड़े सर्पों को	शरणम्	१२.	शरण में
			ययौ ॥	१३.	चला गया

श्लोकार्थ—सर्प याग के प्रज्वलित अग्नि में जलते हुये बड़े-बड़े सर्पों को देखकर भय से घबराया हुआ तक्षक इन्द्र की शरण में चला गया ॥

अष्टदशः श्लोकः

अपश्यंस्तक्षकं तत्र राजा पारीक्षितो द्विजान् ।
उवाच तक्षकः कस्मान्न दह्यतोरगाधमः ॥१८॥

पदच्छेद—

अपश्यन् तक्षकम् तत्र राजा पारीक्षितः द्विजान् ।
उवाच तक्षकः कस्मात् न दह्यते उरग अधमः ॥

शब्दार्थ—

अपश्यन्	३.	न देखते हुये	उवाच	७.	कहा
तक्षकम्	२.	तक्षक को	तक्षकः	१०.	तक्षक
तत्र	१.	वहां	कस्मात्	११.	क्यों
राजा	४.	राजा	न दह्यते	१२.	नहीं भस्म हो रहा है
पारीक्षितः	५.	जनमेजय ने	उरग	८.	सर्पों में
द्विजान् ।	६.	ब्राह्मणों से	अधमः ॥	९.	अधम

श्लोकार्थ—वहां तक्षक को न देखते हुये राजा जनमेजय ने ब्राह्मणों से कहा, सर्पों में अधम तक्षक क्यों नहीं भस्म हो रहा है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तं गोपायति राजेन्द्र शक्रः शरणमागतम् ।
तेन संस्तम्भितः सर्पस्तस्मान्नाग्नौ पतत्यसौ ॥१९॥

पदच्छेद—

तम् गोपायति राजेन्द्र शक्रः शरणम् आगतम् ।
तेन संस्तम्भितः सर्पः तस्मात् न अग्नौ पतति असौ ॥

शब्दार्थ—

तम्	४. उसकी	तेन	७. उन्होंने
गोपायति	५. रक्षा	संस्तम्भितः	९. संस्तम्भितकर दिया है
राजेन्द्र	१. हे राजन् !	सर्पः	८. सर्प को
शक्रः	६. इन्द्र कर रहे हैं	तस्मात्	१०. इसी से वह
शरणम्	२. शरण में	न अग्नौ	११. अग्नि में नहीं
आगतम् ।	३. आये हुये	पतति असौ ॥	१२. गिर रहा है

श्लोकार्थ—हे राजन् ! शरण में आये हुये उसकी रक्षा इन्द्र कर रहे हैं, उन्होंने सर्प को संस्तम्भित कर दिया है । इसी से वह अग्नि में नहीं गिर रहा है ॥

विंशः श्लोकः

पारीक्षित इति श्रुत्वा प्राहर्त्विज उदारधीः ।
सहेन्द्रस्तक्षको विप्रा नाग्नौ किमिति पात्यते ॥२०॥

पदच्छेद—

पारीक्षित इति श्रुत्वा प्राहः ऋत्विजः उदारधीः ।
सहेन्द्रः तक्षकः विप्राः न अग्नौ किमिति पात्यते ॥

शब्दार्थ—

पारिक्षित	४. जनमेजय ने	सहेन्द्रः	८. इन्द्र के साथ
इति	१. यह	तक्षकः	९. तक्षक को
श्रुत्वा	२. सुनकर	विप्राः	७. ब्राह्मणो
प्राह	६. कहा	न अग्नौ	११. नहीं अग्नि में
ऋत्विजः	५. ऋत्विजों से	किमिति	१०. क्यों
उदारधी ।	३. उदार बुद्धि वाले	पात्यते ॥	१२. गिरा देते

श्लोकार्थ—यह सुनकर उदार बुद्धि वाले जनमेजय ने ऋत्विजों से कहा । ब्राह्मणो ! इन्द्र के साथ तक्षक को क्यों नहीं अग्नि में गिरा देते ॥

एकविंशः श्लोकः

तच्छ्रुत्वाऽऽजुहुवुर्विप्राः सहेन्द्रं तक्षकं मखे ।
तक्षकाशु पतस्वेह सहेन्द्रेण मरुत्वता ॥२१॥

पदच्छेद—

तत् श्रुत्वा आजुहुवुः विप्राः सहेन्द्रम् तक्षकम् मखे ।
तक्षक आशु पतस्व इह सहेन्द्रेण मरुत्वता ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	वह	तक्षक	७	तक्षक तू
श्रुत्वा	२.	सुनकर	आशु	१०.	शीघ्र आ
आजुहुवुः	६	आवाहन किया	पतस्व	१२.	गिर जा
विप्राः	३.	ब्राह्मणों ने	इह	११	(यहाँ अग्नि कुण्ड में)
सहेन्द्रम्	५	इन्द्र के साथ	सहेन्द्रेण	९.	इन्द्र के साथ
तक्षकम् मखे ।	४.	यज्ञ में तक्षक का	मरुत्वता ॥	८.	मरुद्गण तथा

श्लोकार्थ—वह सुनकर ब्राह्मणों ने यज्ञ तक्षक का इन्द्र के साथ आवाहन किया । तक्षक तू मरुद्गण तथा इन्द्र के साथ शीघ्र आ, यहाँ अग्नि कुण्ड में गिर जा ॥

द्वाविंशः श्लोकः

इति ब्रह्मोदिताक्षेपैः स्थानादिन्द्रः प्रचालितः ।
बभूव सम्भ्रान्तमतिः सविमानः सतक्षकः ॥२२॥

पदच्छेद—

इति ब्रह्म उदित आक्षेपैः स्थानात् इन्द्रः प्रचालितः ।
बभूव सम्भ्रान्त मतिः सविमानः सतक्षकः ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	बभूव	११.	काटने लगी
ब्रह्म उदित	२.	ब्राह्मणों के द्वारा कथित	सम्भ्रान्त	९,	इन्द्र की
आक्षेपैः	३.	आकर्षण वाक्यों से	मतिः	१०.	बुद्धि चक्कर
स्थानात्	५	अपने स्थान से	सविमानः	७	और विमान तथा
इन्द्रः	४.	इन्द्र	सतक्षकः ॥	८.	तक्षक के साथ
प्रचालितः ।	६.	विचलित हो गये			

श्लोकार्थ—इस प्रकार ब्राह्मणों के द्वारा कथित आकर्षण वाक्यों से इन्द्र अपने स्थान से विचलित हो गये । और विमान तथा तक्षक के साथ इन्द्र की बुद्धि चक्कर काटने लगी ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

तं पतन्तं विमानेन सहतक्षकमम्बरात् ।
विलोक्याङ्गिरसः प्राह राजानं तं बृहस्पतिः ॥२३॥

पदच्छेद—

तम् पतन्तम् विमानेन सह तक्षकम् अम्बरात् ।
विलोक्य आङ्गिरसः प्राह राजानम् तम् बृहस्पतिः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	उन (इन्द्र) को	विलोक्य	७.	देखकर
पतन्तम्	६.	गिरते हुये	आङ्गिरसः	८.	अङ्गिरा पुत्र
विमानेन	५.	विमान से	प्राह	१२.	कहा
सह	४.	साथ	राजानम्	११.	राजा (जनमेजय) से
तक्षकम्	३.	तक्षक के	तम्	१०.	उस
अम्बरात् ।	२.	आकाश से	बृहस्पतिः ॥	९.	बृहस्पति ने

श्लोकार्थ—उन इन्द्र को आकाश से तक्षक के साथ विमान से गिरते हुये देखकर अङ्गिरा पुत्र बृहस्पति ने राजा जनमेजय से कहा ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

नैष त्वया मनुष्येन्द्र वधमर्हति सर्पराट् ।
अनेन पीतममृतमथ वा अजरामरः ॥२४॥

पदच्छेद—

न एष त्वया मनुष्य इन्द्र बधम् अर्हति सर्पराट् ।
अनेन पीतम् अमृतम् अथवा अजर अमरः ॥

शब्दार्थ—

न	७.	नहीं है	अनेन	८.	यह
एष	२.	यह	पीतम्	१०.	पी चुका है
त्वया	४.	आपके द्वारा	अमृतम्	९.	अमृत
मनुष्य इन्द्र	१.	नरेन्द्र	अथ	११.	इसलिये
बधम्	५.	मारा जाने	अजर	१२.	अजर और
अर्हति	६.	योग्य	अमर ॥	१३.	अमर है
सर्पराट् ।	३.	सर्पराज			

श्लोकार्थ—नरेन्द्र यह सर्पराज आपके द्वारा मारा जाने योग्य नहीं है । यह अमृत पी चुका है । इसलिये अजर और अमर है ।

पञ्चविंशः श्लोकः

जीवितं मरणं जन्तोर्गतिः स्वेनैव कर्मणा ।
राजंस्ततोऽन्यो नान्यस्य प्रदाता सुखदुःखयोः ॥२५॥

पदच्छेद—

जीवितम् मरणम् जन्तोः गतिः स्वेन एव कर्मणा ।
राजन् ततः अन्यः न अन्यस्य प्रदाता सुख दुःखयोः ॥

शब्दार्थ—

जीवितम्	३.	जीवन	राजन्	१.	हे राजन् !
मरणम्	४.	मरण और	ततः	८.	इसलिये
जन्तोः	२.	प्राणी को	अन्यः न	९.	दूसरा कोई नहीं
गतिः	५	मरणोत्तर गति	अन्यस्य	१०.	किसी को
स्वेन एव	६.	अपने ही	प्रदाता	१२.	देने वाला है
कर्मणा ।	७.	कर्म से प्राप्त होती है	सुखदुःखयोः ॥	११.	सुख और दुःख

श्लोकार्थ—हे राजन् ! प्राणी को जीवन मरण और मरणोत्तर गति अपने ही कर्म से प्राप्त होती है । इसलिये दूसरा कोई नहीं किसी को सुख दुःख देने वाला है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

सर्पचौराग्निविद्युद्भ्यः क्षुत्तृड्व्याध्यादिभिर्नृपः ।
पञ्चत्वमृच्छते जन्तुर्भुङ्क्त आरब्धकर्म तत् ॥२६॥

पदच्छेद—

सर्प चौर अग्नि विद्युद्भ्यः क्षुत्तृट् व्याध्यादिभिः नृपः ।
पञ्चत्वम् ऋच्छते जन्तुः भुङ्क्त आरब्ध कर्म तत् ॥

शब्दार्थ—

सर्प चौर	३.	सांप चोर	पञ्चत्वम्	८.	मृत्यु को
अग्नि	४.	अग्नि	ऋच्छते	९.	प्राप्त करता है
विद्युद्भ्यः	५.	बिजली	जन्तुः	२.	प्राणी
क्षुत्तृट्	६.	भूख-प्यास	भुङ्क्त	१२.	उपभोग करता हैं
व्याध्यादिभिः	७.	रोगादि से	आरब्ध कर्म	११.	प्रारब्ध कर्म का
नृप ॥	१.	हे राजन् !	तत् ॥	१०.	और उस

श्लोकार्थ—हे राजन् ! प्राणी, सांप, चोर, अग्नि, बिजली, भूख-प्यास, रोगादि से मृत्यु को प्राप्त करता हैं । और उस प्रारब्धकर्म का उपभोग करता है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तस्मात् सत्रमिदं राजन् संस्थीयेताभिचारिकम् ।
सर्पा अनागसो दग्धा जनैर्दिष्टं हि भुज्यते ॥२७॥

पदच्छेद—

तस्मात् सत्रम्‌इदम् राजन् संस्थीयेत अभिचारिकम् ।
सर्पाः अनागसः दग्धाः जनैः दिष्टम् हि भुज्यते ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	२. इसलिये	सर्पाः	८. सर्प
सत्रम्	४. यज्ञ को	अनागसः	७. निरपराध
इदम्	३. इस	दग्धाः	९. जलाये गये हैं
राजन्	१. राजन्	जनैः	१० प्राणी
संस्थीयेत	६. बन्द करो क्योंकि इससे	दिष्टम् हि	११. अपने प्रारब्ध का ही
अभिचारिकम् ।	५. प्राणी हिंसा वाले	भुज्यते ।	१२. भोग करते हैं

श्लोकार्थ—हे राजन् ! इसलिये इस प्राणी हिंसा वाले यज्ञ को बन्द करो । क्योंकि इसमें निरपराध सर्प जलाये गये हैं । प्राणी अपने प्रारब्ध का ही भोग करते हैं ।।

अष्टविंशः श्लोकः

सूत उवाच—इत्युक्तः स तथेत्याह महर्षेर्मानयन् वचः ।
सर्पसत्रादुपरतः पूजयामास वाक्पतिम् ॥२८॥

पदच्छेद—

इति उक्तः स तथा इति आह महर्षेः मानयन् वचः ।
सर्प सत्रात् उपरतः पूजयामास वाक्पतिम् ॥

शब्दार्थ—

इति उक्तः सः	१. ऐसा कहे जाने पर जनमेजय ने	वचः	४. वचन का
तथा	६. वैसा ही	सर्प	८. उन्होंने सर्प
इति	७. होगा	सत्रात्	९. यज्ञ से
आह	५. कहा	उपरतः	१०. विरत होकर
महर्षेः	३. बृहस्पति के	पूजयामास	१२. पूजा की
मानयन्	४. सम्मान करते हुये	वाक्पतिम् ॥	११. बृहस्पति की

श्लोकार्थ—ऐसा कहे जाने पर जनमेजय ने बृहस्पति के वचन का सम्मान करते हुये कहा, वैसा ही होगा । उन्होंने सर्प यज्ञ से विरत होकर बृहस्पति की पूजा की ।।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

सैषा विष्णोर्महामायाबाध्ययालक्षणा यया ।
मुह्यन्त्यस्यैवात्मभूता भूतेषु गुणवृत्तिभिः ॥२९॥

पदच्छेद—

सा एषा विष्णोः महामाया अबाध्यया अलक्षणा यया ।
मुह्यन्ति अस्य एव आत्म भूता भूतेषु गुणवृत्तिभिः ॥

शब्दार्थ—

सा एषा	१.	यह वही	मुह्यन्ति	१२.	मोहित हो जाते हैं
विष्णोः	२.	भगवान् विष्णु की	अस्य एव	७.	भगवान् ही के
महामाया	५	महामाया है	आत्मभूता	८.	स्वरूप भूत जीव
अबाध्यया	[illegible]	न टालने योग्य	भूतेषु	११.	शरीरो में
अलक्षणा	४.	अनिर्वचनीय	गुण	९	क्रोधादि गुण
यथा ।	६.	जिससे	वृत्तिभिः	१०.	वृत्तियों के द्वारा

श्लोकार्थ—यह वही भगवान् विष्णु की न टालने योग्य अनिर्वचनीय महामा[illegible] है। जिससे भगवान् ही के स्वरूप भूत जीव क्रोधादि गुण वृत्तियों के द्वारा शरीरों में मोहित हो जाते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

न यत्र दम्भीत्यभया विराजिता मायाऽऽत्मवादेऽसकृदात्मवादिभिः ।
न यद्विवादो विविधस्तदाश्रयो मनश्च सङ्कल्पविकल्पवृत्ति यत् ॥३०॥

पदच्छेद—

न यत्र दम्भीइति अभया विराजिता माया आत्मवादे असकृत् आत्म वादिभिः ।
न यत् विवादः विविधः तत् आश्रयः मनः च सङ्कल्प विकल्प वृत्ति यत् ॥

शब्दार्थ—

न यत्र	८.	वह नहीं रहती है	न यत्	१२.	परमात्मा के स्वरुप में नहीं है
दम्भीइति	१.	यह दम्भी है इस प्रकार बुद्धि में	विवादः	११.	विवाद
अभयाविराजिता	३.	निर्भय होकर रहती है	विविधः	१०.	नाना प्रकार के
माया	२.	माया	तत् आश्रयः	९.	माया के आश्रित
आत्मवादे	७.	आत्मचर्चा करने में	मनः च	१६.	मन भी शान्त हो जाता है
असकृत्	[illegible]	बार-बार	सङ्कल्प	१४.	सङ्कल्प
आत्म	४.	आत्म	विकल्पवृत्ति	१५.	विकल्प करने वाला
वादिभिः ।	५.	वादियों द्वारा	यत् ॥	१३.	जहाँ

श्लोकार्थ—यह दम्भी है ! इस प्रकार बुद्धि में माया निर्भय होकर रहती है। आत्मवादियों द्वारा बार-बार आत्म चर्चा करने में वह नहीं रहती है। माया के आश्रित नाना प्रकार के विवाद परमात्मा के स्वरूप में नहीं है। जहाँ सङ्कल्प-विकल्प करने वाला मन भी शान्त हो जाता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

न यत्र सृज्यं सृजतोभयोः परं श्रेयश्च जीवस्त्रिभिरन्वितस्त्वहम् ।
तदेतदुत्सादितबाध्यबाधकं निषिध्य चोर्मीन् विरमेत् स्वयं मुनिः ॥३१॥

पदच्छेद—

न यत्र सृज्यम् सृजत् उभयोः परम् श्रेयः च जीवः त्रिभिः अन्वितः अहम् ।
तत् एतत् उत्सादित बाध्य बाधकम् निषिध्य च ऊर्मीन् विरमेत् स्वयम् मुनिः ॥

शब्दार्थ—

न यत्र	८. जिसमें नहीं है	तत् एतत्	९.	वह आत्मस्वरूप परमात्मा
सृज्यम्	१. कर्म और उसके सामग्री	उत्सादितबाध्य	१०.	न तो बाध्य करने योग्य है
सृजतः	२. सम्पादन	बाधकम्	११.	और न बाधक है उस
उभयोः परम्	३. उन दोनों से परे	निषिध्य च	१५.	निषेध करके
श्रेयः च	४. कल्याणकारी साध्य कर्म	ऊर्मीन्	१४.	माया लहरियों का
जीवः	७ जीव	विरमेत्	१६.	विरत हो जाता है
त्रिभिः अन्वितःतु	५ तीनों से सम्बन्धित	स्वयम्	१३.	स्वयम्
अहम् ।	६. अहंकारात्मक	मुनिः ॥	१२.	(परमात्मा का) मनन करने वाला व्यक्ति

श्लोकार्थ—कर्म और उसके सम्पादन की सामग्री उन दोनों से परे कल्याणकारी साध्य कर्म उन तीनों से सम्बन्धित अहंकारात्मक जीव जिसमें नहीं है। वह आत्म स्वरूप परमात्मा न तो बाध्य करने योग्य है। और न बाधक है। उस परमात्मा का मनन करने वाला व्यक्ति स्वयम् माया लहरियों का निषेध करके विरत हो जाता है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

परं पदं वैष्णवमामनन्ति तद् यन्नेति नेतीत्यतदुत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यमनन्यसौहृदा हृदोपगुह्यावसितं समाहितैः ॥३२॥

पदच्छेद—

परम् पदम् वैष्णवम् आमनन्ति तद्यत् नेति-नेतिइति अतद् उत्सिसृक्षवः ।
विसृज्य दौरात्म्यम् अनन्य सौहृदा हृदा उपगुह्य अवसितम् समाहितैः ॥

शब्दार्थ—

परम् पदम्	११. परम् पद	विसृज्य	५.	मिटाकर
वैष्णवम्	१०. विष्णु का	दौरात्म्यम्	४.	अनात्म भावना को
आमनन्ति	१२. मानते हैं और	अनन्य सौहृदा	६.	अनन्य प्रेम से परिपूर्ण
तद्	१३. उसी को	हृदा	७.	हृदय के द्वारा
यत् नेति-नेति इति	२. जिसे नेतिनेति के द्वारा	उपगुह्य	८.	आलिङ्गन करके
अतद्	३. निषेध करके	अवसितम्	१४.	प्राप्त करते हैं
उत्सिसृक्षवः ।	१. मुमुक्षु व्यक्ति	समाहितैः ॥	९.	समाधिस्थ चित्त से

श्लोकार्थ—मुमुक्षु व्यक्ति जिसे नेति-नेति के द्वारा निषेध करके अनात्म भावना को मिटा कर अनन्य प्रेम से परिपूर्ण हृदय के द्वारा आलिङ्गन करके समाधिस्थ चित्त से विष्णु का परम पद मानते हैं और उसी को प्राप्त करते हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

त एतदधिगच्छन्ति विष्णोर्यत् परमं पदम् ।
अहं ममेति दौर्जन्यं न येषां देहगेहजम् ॥३३॥

पदच्छेद—

ते एतत् अधिगच्छन्ति विष्णोः यत् परमम् पदम् ।
अहम् मम इति दौर्जन्यम् न येषाम् देह गेहजम् ॥

शब्दार्थ—

ते एतत्	५.	उसेवे	अहम्	१०.	मैं और
अधिगच्छन्ति	६.	प्राप्त करते हैं	ममइति	११	मेरे पन की
विष्णोः	१.	भगवान् विष्णु का	दौर्जन्यम्	१२.	दुष्टता नहीं है
यत्	२.	जो	न येषाम्	७.	जिनके हृदय में
परमम्	३.	परम	देह	८.	शरीर और
पदम् ।	४.	पद है	गेहजम् ॥	९.	गृह से उत्पन्न होने वाले

श्लोकार्थ—भगवान् विष्णु का जो परम पद है। उसे वे प्राप्त करते हैं। जिनके हृदय में शरीर और गृह से उत्पन्न होने वाले मैं और मेरे पन की दुष्टता नहीं है॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अतिवादांस्तितिक्षेत नावमन्येत कञ्चन ।
न चेमं देहमाश्रित्य वैरं कुर्वीत केनचित् ॥३४॥

पदच्छेद—

अतिवादान् तितिक्षेत न अवमन्येत कञ्चन ।
न च इमम् देहम् आश्रित्य वैरम् कुर्वीत केनचित् ॥

शब्दार्थ—

अति वादान्	१.	दूसरों की कटुवाणी	इमम्	७.	इस
तितक्षेत्	२.	सहन करें	देहम्	८.	शरीर का
न	५.	न करे	आश्रित्य	९.	आश्रय लेकर
अवमन्येत	४.	अपमान	वैरम्	११.	वैर ही
कञ्चन ।	३.	किसी का	कुर्वीत	१२.	करें
न च	६.	और न	केनचित् ॥	१०.	किसी से

श्लोकार्थ—दूसरों की कटु वाणी सहन करें किसी का अपमान न करें और न इस शरीर का आश्रय लेकर किसी से वैर ही करें ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

नमो भगवते तस्मै कृष्णायाकुण्ठमेधसे ।
यत्पादाम्बुरुहध्यानात् संहितामध्यगामिमाम् ॥३५॥

पदच्छेद—

नमः भगवते तस्मै कृष्णाय अकुण्ठ मेधसे ।
यत् पाद अम्बुरुह ध्यानात् संहिताम् अध्यगाम् इमाम् ॥

शब्दार्थ—

नमो	६. नमस्कार है	यत्पाद	७. जिनके चरण
भगवते	४. भगवान्	अम्बुरुह	८. कमलों के
तस्मै	३. उन	ध्यानात्	९. ध्यान से
कृष्णाय	५. श्रीकृष्ण को	संहिताम्	११. श्रीमद्भागवत महापुराण का
अकुण्ठ	१. अनन्त	अध्यगाम्	१२. अध्ययन किया
मेधसे ।	२. ज्ञान वाले	इमाम् ॥	१०. मैंने इस

श्लोकार्थ—अनन्त ज्ञान वाले उन भगवान् श्रीकृष्ण को नमस्कार है । जिनके चरण कमलों के ध्यान से मैंने इस श्रीमद्भागवत महापुराण का अध्ययन किया ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

शौनक उवाच—पैलादिभिर्व्यासशिष्यैर्वेदाचार्यैर्महात्मभिः ।
वेदाश्च कतिधा व्यस्ता एतत् सौम्याभिधेहि नः ॥३६॥

पदच्छेद—

पैल आदिभिः व्यास शिष्यैः वेदाचार्यैः महात्मभिः ।
वेदाः च कतिधा व्यस्ताः एतत् सौम्य अभिधेहि नः ॥

शब्दार्थ—

पैल	६. पैल	वेदाः च	८. वेदों का
आदिभिः	७. आदि ने	कतिधा	९. कितने प्रकार से
व्यास	२. व्यास के	व्यस्ताः	१०. विभाजन किया
शिष्यैः	३. शिष्य]	एतत्	११. यह
वेदाचार्यैः	४. वेदाचार्य	सौम्य	१. हे सौम्य
महात्मभिः ।	५. महात्मा	अभिधेहि नः ॥	१२. हमें बताइये

श्लोकार्थ—हे सौम्य ! व्यास के शिष्य वेदाचार्य महात्मा पैल आदि ने वेदों का कितने प्रकार से विभाजन किया यह हमें बताइये ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

समाहितात्मनो ब्रह्मन् ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
हृद्याकाशादभून्नादो वृत्तिरोधाद् विभाव्यते ॥३७॥

पदच्छेद—

समाहित आत्मनः ब्रह्मन् ब्रह्मणः परमेष्ठिनः ।
हृद्याकाशात् अभूत् नादः वृत्तिरोधात् विभाव्यते ॥

शब्दार्थ—

समाहित	२. एकाग्र	आकाशात्	७. आकाश में
आत्मनः	३. चित्त हुये	अभूत्	६. हुआ
ब्रह्मन्	१. ब्रह्मन्	नादः	८. (अनाहतनाद) शब्द प्रकट
ब्रह्मणः	५. ब्रह्मा के	वृत्ति	११. वृत्तियों को
परमेष्ठिनः ।	४. परमेष्ठी	रोधात्	१२. रोकलेने से (जीवको होता है) ।
हृदि	६. हृदय	विभाव्यते ॥	१०. जिसका अनुभव

श्लोकार्थ— ब्रह्मन् ! एकाग्रचित्त हुये परमेष्ठी ब्रह्मा के हृदयाकाश में अनाहत नाद शब्द प्रकट हुआ । जिसका अनुभव वृत्तियों को रोक लेने से जीव को होता है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

यदुपासनया ब्रह्मन् योगिनो मलमात्मनः ।
द्रव्यक्रियाकारकाख्यं धूत्वा यान्त्यपुनर्भवम् ॥३८॥

पदच्छेद—

यत् उपासनया ब्रह्मन् योगिनः मलम् आत्मनः ।
द्रव्य क्रिया कारक आख्यम् धूत्वा यान्ति अपुनर्भवम् ॥

शब्दार्थ—

यत्	२. जिस (अनाहतनाद की)	द्रव्य क्रिया	६. द्रव्य, अधिभूत, क्रिया
उपासनया	३. उपासना से	कारक	७. और कारक
ब्रह्मन्	१. ब्रह्मन्	आख्यम्	८. नामक
योगिनः	४. योगी लोग	धूत्वा	१०. नष्ट करके
मलम्	६. मल को	यान्ति	१२. प्राप्त करते हैं
आत्मनः ।	५. अन्तः करण के	अपुनर्भवम् ॥	११. मोक्ष

श्लोकार्थ—ब्रह्मन् ! जिस अनाहतनाद की उपासना से योगी लोग अन्तःकरण के अधिभूत द्रव्य क्रिया और अध्यात्मकारक अधिदैव नामक मल को नष्ट करके मोक्ष को प्राप्त करते हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

ततोऽभूत्त्रिवृदोङ्कारो योऽव्यक्त प्रभवः स्वराट् ।
यत्तल्लिङ्गं भगवतो ब्रह्मणः परमात्मनः ॥३९॥

पदच्छेद—

ततः अभूत् त्रिवृद् ओंकारः यः अव्यक्त प्रभवः स्वराट् ।
यत्-तत् लिङ्गम् भगवतः ब्रह्मणः परमात्मनः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	उस (अनाहतनाद से)	यत्-तत्	७.	वही
अभूत्	४.	प्रकट हुआ	लिङ्गम्	११.	बोधक चिह्न है
त्रिवृद्	२.	अकार-उकार और मकार रूप	भगवतः	८.	भगवान्
ओंकार	३.	ओंकार	ब्रह्मणः	९.	ब्रह्म
यः अव्यक्त	५.	वह ओंकार प्रकृति का	परमात्मनः ॥	१०.	परमात्मा का
प्रभवः स्वराट् ।	६.	उद्गम तथा स्वयं प्रकाश है			

श्लोकार्थ—उस अनाहतनाद से अकार-उकार और मकार रूप ओंकार प्रकट हुआ, वह ओंकार प्रकृति का उद्गम तथा स्वयं प्रकाश है। वही भगवान् ब्रह्म परमात्मा का बोधक चिह्न है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

शृणोति य इमं स्फोटं सुप्तश्रोत्रे च शून्यदृक् ।
येन वाग् व्यज्यते यस्य व्यक्तिराकाश आत्मन ॥४०॥

पदच्छेद—

शृणोति यः इमम् स्फोटम् सुप्तश्रोत्रे च शून्य दृक् ।
येन वाक् व्यज्यते यस्य व्यक्तिः आकाश आत्मनः ॥

शब्दार्थ—

शृणोति	६.	सुनता है	येनवाक्	७.	वही ओंकार वेद रूप वाणी को
यः	१.	जो	व्यज्यते	८.	अभिव्यक्त करता है
इमम्	४.	इस (अर्थ प्रकाशक)	यस्य	९.	और उसका
स्फोटम्	५.	स्फोट को	व्यक्तिः	१०.	प्राकट्य
सुप्तश्रोत्रे च	२.	श्रवणेन्द्रियों के नष्ट हो जाने पर	आकाश	१२.	हृदयाकाश में होता है
शून्यदृक् ।	३	शून्य दृष्टि होकर	आत्मनः ॥	११.	परमात्मा से

श्लोकार्थ—जो श्रवणेन्द्रियों के नष्ट हो जाने पर शून्य दृष्टि होकर इस अर्थ प्रकाशकस्फोट को सुनता है। वही ओंकार वेदरूपा वाणी को अभिव्यक्त करता है। और उसका प्राकट्य परमात्मा से हृदयाकाश में होता है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

स्वधाम्नो ब्रह्मणः साक्षाद् वाचकः परमात्मनः ।
स सर्वमन्त्रोपनिषद्वेदबीजं सनातनम् ॥४१॥

पदच्छेद—

स्वधाम्नः ब्रह्मणः साक्षात् वाचकः परमात्मनः ।
सः सर्वमन्त्र उपनिषद् वेद बीजम् सनातनम् ॥

शब्दार्थ—

स्वधाम्नः	१.	ॐकार अपने धाम	सर्व	७.	सम्पूर्ण
ब्रह्मणः	३.	ब्रह्म का	मन्त्र	८.	मन्त्र
साक्षात्	४.	साक्षात्	उपनिषद	९.	उपनिषद और
वाचकः	५.	वाचक है	वेद	१०.	वेदों का
परमात्मनः ।	२.	परमात्म	बीजम्	१२.	बीज है
सः	६.	वह	सनातनम् ॥	११.	सनातन

श्लोकार्थ—ॐकार अपनेधाम परमात्म ब्रह्म का साक्षात् वाचक है, वह सम्पूर्णमन्त्र उपनिषद और वेदों का सनातन बीज है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तस्य ह्यासंस्त्रयो वर्णा अकाराद्या भृगूद्वह ।
धार्यन्ते यैस्त्रयो भावा गुणनामार्थवृत्तयः ॥४२॥

पदच्छेद—

तस्य हि आसन् त्रयः वर्णा अकार आद्याः भृगूद्वह ।
धार्यन्ते यैः त्रयः भावाः गुण नाम अर्थ वृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

तस्य हि	२.	उस ओंकार के	धार्यन्ते	१३.	धारण करते हैं
आसन्	६.	हैं	यैः	७.	जो
त्रयः	४.	तीन	त्रयः	११.	तीन-तीन की संख्या वाले
वर्णा	५.	वर्ण (अ. उ म)	भावाः	१२.	भावों को
अकार आद्याः	३.	अकार आदि	गुणनाम	८.	सत्व, रज तमइनतीन गुणों और (ऋक्-यजु-साम इन तीन नामों)
भृगुद्वह ।	१.	हे शौनक जी !	अर्थ	९	भुःभुवःस्वः इन तीन अर्थों तथा जाग्रत स्वप्न,सुषुप्ति इन तीन
			वृत्तयः ॥	१०.	(वृत्तियो के रूप में)

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! उस ओंकार के अकार आदि तीन वर्ण (अ उ म) हैं। जो सत्त्व, रज, तम इन तीन गुणों और ऋक, यजु, साम तीन नामों से भुः भूवः स्वः इन तीन अर्थों तथा (जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति इन तीन वृत्तियों के रूप में तीन-तीन संख्या वाले भावों को धारण करते हैं ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

ततोऽक्षरसमाम्नायमसृजद् भगवानजः ।
अन्तःस्थोष्मस्वरस्पर्शह्रस्वदीर्घादिलक्षणम् ॥४३॥

पदच्छेद—

ततः अक्षर समाम्नायम् सृजद् भगवान् अजः ।
अन्तःस्थः ऊष्म स्वर स्पर्श ह्रस्व दीर्घ आदि लक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तत्पश्चात्	अन्तःस्थः	४.	य र ल व
अक्षर	१०.	वर्ण	ऊष्म	५.	श ष स ह
समाम्नायम्	११.	माला की	स्वर स्पर्श	६.	अ से औ तक क से म तक
सृजद्	१२.	सृष्टि की	ह्रस्व	७.	ह्रस्व
भगवान्	२.	भगवान्	दीर्घ आदि	८.	और दीर्घ आदि
अजः ।	३.	ब्रह्मा ने	लक्षणम् ॥	९.	लक्षणों से युक्त

श्लोकार्थ—तत्पश्चात् भगवान् ब्रह्मा ने य र ल व, श ष स ह, अ से औ तक क से म तक ह्रस्व दीर्घ आदि लक्षणों से युक्त वर्ण माला की सृष्टि की ॥

चतुःचत्वारिंशः श्लोकः

तेनासौ चतुरो वेदांश्चतुर्भिर्वदनैर्विभुः ।
सव्याहृतिकान् सोङ्कारांश्चातुर्होत्रविवक्षया ॥४४॥

पदच्छेद—

तेन असौ चतुराः वेदान् चतुर्भिः वदनैः विभुः ।
स व्याहृतिकान् स ओङ्कारान् चातुर्होत्र विवक्षया ॥

शब्दार्थ—

तेन असौ	१.	उसी वर्ण माला के द्वारा उन	सः	७.	साथ
चतुराः	१०.	चार	व्याहृतिकान्	६.	व्याहृतियों के
वेदान्	११.	वेद प्रकट किये	स ओङ्कारान्	५.	ओंकार और
चतुर्भिः	३.	अपने चार	चातुर्होत्र	८.	चार ऋत्विजों के कर्म
वदनैः	४.	मुखों से	विवक्षया ॥	९.	बतलाने के लिये
विभुः ।	२.	प्रभु ब्रह्मा ने			

श्लोकार्थ—उसी वर्ण माला के द्वारा उन प्रभु ब्रह्मा ने अपने चार मुखों से ओंकार और व्याहृतियों के साथ होता अध्वर्यु-उद्गाता-ब्रह्मा, इन चार ऋत्विजों के कर्म बतलाने के लिये चार वेद प्रकट किये ।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

पुत्रानध्यापयत्तांस्तु ब्रह्मर्षीन् ब्रह्मकोविदान् ।
ते तु धर्मोपदेष्टारः स्वपुत्रेभ्यः समादिशन् ॥४५॥

पदच्छेद—

पुत्रान् अध्यापयत् ताम् तु ब्रह्मर्षीन् कोविदान् ।
ते तु धर्म उपदेष्टारः स्वपुत्रेभ्यः समादिशन् ॥

शब्दार्थ—

पुत्रान्	१. अपने पुत्र	ते तु	६. उन्होंने भी
अध्यापयत्	५. वेद पढ़ाये	धर्म	७. धर्म के
तान् तु	४. उन्हें	उपदेष्टारः	८. उपदेशक होने पर
ब्रह्मर्षीन्	२. ब्रह्मर्षि मरीचि आदि	स्वपुत्रेभ्यः	९. अपने पुत्रों को
ब्रह्मकोविदान् ।	३. वेद के अध्ययन मे कुशल-जानकर	समादिशन् ॥	१०. उनका अध्ययन कराया

श्लोकार्थ—अपने पुत्र ब्रह्मर्षि मरीचि आदि वेद के अध्ययन में कुशल जानकर उन्हें वेद पढाये उन्होंने भी धर्म के उपदेशक होने पर अपने पुत्रों को उनका अध्ययन कराया ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

ते परम्परया प्राप्तास्तत्तच्छिष्यैर्धृतव्रतैः ।
चतुर्युगेष्वथ व्यस्ता द्वापरादौ महर्षिभिः ॥४६॥

पदच्छेद—

ते परमपरया प्राप्ताः तत्-तत् शिष्यैः धृतव्रतैः ।
चतुर्युगेषु अथ व्यस्ता द्वापर आदौ महर्षिभिः ॥

शब्दार्थ—

ते	६. वे (वेद)	चतुर्युगेषु	५. चारों युगों के
परमपरया	७. परम्परा से	अथ	१. अनन्तर
प्राप्ताः	८. प्राप्त होते रहे	व्यस्ता	१२. वेदों का विभाजन कर दिया
तत्-तत्	२. उन्हीं लोगों के	द्वापर	९. द्वापर युग के
शिष्यैः	४. शिष्य प्रशिष्यों के द्वारा	आदौ	१०. आदि में
धृतव्रतैः ।	३. व्रतधारी	महर्षिभिः ॥	११. महर्षियों ने

श्लोकार्थ—अनन्तर उन्हीं लोगों के व्रतधारी शिष्य प्रशिष्यों के द्वारा चारों युगों के वे वेद परम्परा से प्राप्त होते रहे । द्वापर युग के आदि में महर्षियों ने वेदों का विभाजन कर दिया ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

क्षीणायुषः क्षीणसत्त्वान् दुर्मेधान् वीक्ष्य कालतः ।
वेदान् ब्रह्मर्षयो व्यस्यन् हृदिस्थाच्युतचोदिताः ॥४७॥

पदच्छेद—

क्षीण आयुषः क्षीण सत्वान् दुर्मेधान् वीक्ष्य कालतः ।
वेदान् ब्रह्मर्षयः व्यस्यन् हृदिस्थ अच्युत चोदिताः ॥

शब्दार्थ—

क्षीण आयुषः	२.	क्षीण आयु वाले	वेदान्	११.	वेदों के
क्षीण	३.	क्षीण	ब्रह्मर्षयः	१०.	ब्रह्मर्षियों ने
सत्वान्	४.	शक्ति वाले तथा	व्यस्यन्	१२.	विभाग कर दिये
दुर्मेधान्	५.	मन्द बुद्धि लोगों को	हृदिस्थ	७.	हृदय में विराजमान
वीक्ष्य	६.	देखकर	अच्युत	८.	भगवान से
कालतः ।	१.	काल के प्रभाव से	चोदिताः ॥	९.	प्रेरित होकर

श्लोकार्थ- काल के प्रभाव से क्षीण आयुवाले क्षीण शक्ति वाले तथा मन्द बुद्धि लोगों को देखकर हृदय में विराजमान भगवान् से प्रेरित होकर ब्रह्मर्षियों ने वेदों के विभाग कर दिये ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

अस्मिन्नप्यन्तरे ब्रह्मन् भगवांल्लोकभावनः ।
ब्रह्मेशाद्यैर्लोकपालैर्याचितो धर्मगुप्तये ॥४८॥

पदच्छेद—

अस्मिन् अपि अन्तरे ब्रह्मन् भगवान् लोक भावनः ।
ब्रह्मेश आद्यैः लोक पालैः याचितः धर्म गुप्तये ॥

शब्दार्थ—

अस्मिन्	२.	इस	ब्रह्मेश	७.	ब्रह्मा-शङ्कर
अपि	४.	भी	आद्यैः	८.	आदि
अन्तरे	३.	(वैवस्वत) मन्वन्तर में	लोक पालैः	९.	लोक पालों की
ब्रह्मन्	१.	हे शौनक जी !	याचितः	१०.	प्रार्थना से
भगवान्	५.	भगवान् ने	धर्म	११.	धर्म की
लोक भावनः ।	६.	लोकों के जीवन दाता	गुप्तये ॥	१२.	रक्षा के लिये (वेदों के) विभाग किये ।

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! इस वैवस्वत मन्वन्तर में भी भगवान् ने लोकों के जीवन दाता ब्रह्मा-शङ्कर आदि लोक पालों की प्रार्थना से धर्म की रक्षा के लिये वेदों के विभाग किये ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

पराशरात् सत्यवत्यामंशांशकलया विभुः ।
अवतीर्णो महाभाग वेदं चक्रे चतुर्विधम् ॥४९॥

पदच्छेद—

पराशरात् सत्यवत्याम् अशांश कलया विभुः ।
अवतीर्णो महाभाग वेदम् चक्रे चतुर्विधम् ॥

शब्दार्थ—

पराशरात्	२. पराशर से		अवतीर्ण	६. व्यासरूप में अवतीर्ण होकर
सत्यवत्याम्	३. सत्यवती में		महाभाग	१. महाभाग
अशांश	४. अपने अशांश		वेदम्	८. वेद के
कलया	५. कला से		चक्रे	१०. कर दिये
विभुः ।	७. भगवान् ने		चतुर्विधम् ॥	९. चार भाग

श्लोकार्थ—महाभाग पराशर से सत्यवती में अपने अंशांश कला से व्यास रूप में अवतीर्ण होकर भगवान् ने वेद के चार भाग कर दिये ॥

पञ्चाशः श्लोकः

ऋगथर्वयजुःसाम्नां राशीनुद्धृत्य वर्गशः ।
चतस्रः संहिताश्चक्रे मन्त्रैर्मणिगणा इव ॥५०॥

पदच्छेद—

ऋक अथर्व यजुः साम्नाम् राशीन् उद्धृत्य वर्गशः ।
चतस्रः संहिताः चक्रे मन्त्रैः मणिगणा इव ॥

शब्दार्थ—

ऋक्-अथर्व	४. ऋग्वेद अथर्ववेद	चतस्रः	१०. चार
यजुः	५. यजुर्वेद और	संहिताः	११. संहितायें
साम्नाम्	६. सामवेद की	चक्रे	१२. बनायीं
राशीन्	७. राशियों को	मन्त्रैः	२. मन्त्रों से मणि मणियों के
उद्धृत्य	९. छांट कर	मणिगणा	३. समूहों में से छांटकर मणियां अलग करली जाती हैं वैसे ही)
वर्गशः ।	८. वर्ग के अनुसार	इव ॥	१. जैसे

श्लोकार्थ—जैसे मणियों के समूह में से छांटकर मणियां अलग कर ली जाती हैं। वैसे ही ऋग्वेद, अथर्ववेद, यजुर्वेद और सामवेद की राशियों को वर्ग के अनुसार छांटकर चार संहितायें बनायीं ॥

एकपञ्चाशः श्लोकः

तासां स चतुरः शिष्यानुपाहूय महामतिः ।
एकैकां संहितां ब्रह्मन्नेकैकस्मै ददौ विभुः ॥५१॥

पदच्छेद—

तासाम् स चतुरः शिष्यान् उपाहूय महामतिः ।
एक एकाम् संहिताम् ब्रह्मन् एक एकस्मै ददौ विभुः ॥

शब्दार्थ—

तासाम्	९.	उन संहिताओं में से	एक-एकाम्	१०.	एक-एक
सः	४.	व्यास देव ने	संहिताम्	११.	संहिता की शिक्षा
चतुरः	५.	अपने चार	ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !
शिष्यान्	६.	शिष्यों को	एक-एकस्मै	८	एक-एक को
उपाहूय	७.	बुलाकर	ददौ	१२.	दी
महामतिः !	२.	महा बुद्धिमान्	विभुः ॥	३.	भगवान्

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! महा बुद्धिमान् भगवान् व्यास देव ने अपने चार शिष्यों को बुलाकर एक-एक को उन संहिताओं में से एक-एक संहिता की शिक्षा दी ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

पैलाय संहितामाद्यां बह्वृचाख्यामुवाच ह ।
वैशम्पायनसंज्ञाय निगदाख्यं यजुर्गणम् ॥५२॥

पदच्छेद—

पैलाय संहिताम् आद्याम् बह्वृच आख्याम् उवाच ह ।
वैशम्पायन संज्ञाय निगद आख्यम् युजुः गणम् ॥

शब्दार्थ—

पैलाय	५.	पैल नाम के शिष्य को तथा	वैशम्पायन	१०.	वैशम्पायन
संहिताम्	४.	ऋक् संहिता	संज्ञाय	११.	नामक शिष्य को
आद्याम्	३.	पहली	निगद	६.	निगद
बह्‌वृच	१.	बहवृच	आख्यम्	७.	नाम की
आख्याम्	२.	नाम की	यजुः	८.	यजुः
उवाचह ।	१२.	पढ़ाई	गणम् ॥	९.	संहिता

श्लोकार्थ—बह्वृच नाम की पहली ऋक् संहिता पैलनाम के शिष्य को तथा निगद नाम की यजुः संहिता वैशम्पायन नामक शिष्य को पढ़ाई ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

साम्नां जैमिनये प्राह तथा छन्दोगसंहिताम् ।
अथर्वाङ्गिरसीं नाम स्वशिष्याय सुमन्तवे ॥५३॥

पदच्छेद—

साम्नाम् जैमिनये प्राह तथा छन्दोग संहिताम् ।
अथर्व अङ्गिरसीम् नाम स्व शिष्याय सुमन्तवे ॥

शब्दार्थ—

साम्नाम्	१. सामश्रुतियों की	अथर्व	६. अथर्व
जैमिनये	४. जैमिनी को	आङ्गिरसीम्	७. आङ्गिरस
प्राह	१२. पढ़ायी	नाम	८. नामक संहिता
तथा	५. तथा	स्व	९. अपने
छन्दोग	२. छन्दोग	शिष्याय	१०. शिष्य
संहिताम् ।	३. संहिता	सुमन्तवे ॥	११. सुमन्तु को

श्लोकार्थ—साम श्रुतियों की छन्दोग संहिता जैमिनी को तथा अथर्व अङ्गिरस नामक संहिता अपने शिष्य सुमन्तु को पढ़ायी ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

पैलः स्वसंहितामूचे इन्द्रप्रमितये मुनिः ।
बाष्कलाय च सोऽप्याह शिष्येभ्यः संहितां स्वकाम् ॥५४॥

पदच्छेद—

पैलः स्व संहिताम् ऊचे इन्द्र प्रमितये मुनिः ।
बाष्कलाय च सः अपि आह शिष्येभ्यः संहितां स्वकाम् ॥

शब्दार्थ—

पैलः	१. पैल	बाष्कलाय	७. तथा बाष्कल को
स्व	३. अपनी	च सः	९. और उन्होंने
संहिताम्	४. संहिता	अपि	१०. भी
ऊचे	८. पढ़ायी	आह	१४. पढ़ायी
इन्द्र	५. इन्द्र	शिष्येभ्यः	१३. अपने शिष्यों को
प्रमितये	६. प्रमिति	संहिताम्	१२. संहिता
मुनिः ।	२. मुनि ने	स्वकाम् ॥	११. अपनी

श्लोकार्थ—पैल मुनि ने अपनी संहिता इन्द्र प्रमिति तथा बाष्कल को पढ़ायी । और उन्होंने भी अपनी संहिता अपने शिष्यों को पढ़ायी ॥

पञ्चपञ्चाशः श्लोकः

चतुर्धा व्यस्य बोध्याय याज्ञवल्क्याय भार्गव ।
पराशरायाग्निमित्रे इन्द्रप्रमितिरात्मवान् ॥५५॥

पदच्छेद—

चतुर्धा व्यस्य बोध्याय याज्ञ वाल्क्याय भार्गव ।
पराशराय अग्निमित्रे इन्द्र प्रमितिः आत्मवान् ॥

शब्दार्थ—

चतुर्धा	१.	वाष्कलायन ने अपनी शाखा को) चार भागों में	पराशराय	६.	पराशर तथा
व्यस्य	३.	विभक्त करके	अग्निमित्रे	७.	अग्निमित्र को (पढ़ाया।)
बोध्याय	४.	बोध्य	इन्द्र	९.	इन्द्र
याज्ञवाल्क्याय	५.	याज्ञ वल्क्य	प्रमितिः	१०.	प्रमिति ने मार्कण्डेयको पढ़ाया)
भार्गव ।	१.	शौनक जी !	आत्मवान् ॥	८.	परम संयमी

श्लोकार्थ—शौनक जी ! वाष्कलायन ने अपनी शाखा को चार भागों में विभक्त करके बोध्य याज्ञवल्क्य, पारशर तथा अग्निमित्र को पढ़ाया परम संयमी इन्द्र प्रमिति ने मार्कण्डेय को पढ़ाया ॥

षट्पञ्चाशः श्लोकः

अध्यापयत् संहितां स्वां माण्डूकेयमृषिं कविम् ।
तस्य शिष्यो देवमित्रः सौभर्यादिभ्य ऊचिवान् ॥५६॥

पदच्छेद—

अध्यापयत् संहिताम् स्वाम् माण्डूकेयम् ऋषिम् कविम् ।
तस्य शिष्यः देवमित्रः सौभरि आदिभ्यः ऊचिवान् ॥

शब्दार्थ—

अध्यापयत्	६.	पढ़ायी	तस्य	७.	उनके
संहिताम्	५.	संहिता	शिष्यः	८.	शिष्य
स्वाम्	४.	अपनी	देवमित्रः	९.	देवमित्र ने
माण्डूकेयम्	३.	माण्डकेय को	सौभरि	१०.	सोभरि
ऋषिम्	२.	ऋषि	आदिभ्यः	११.	आदि को
कविम् ।	१.	प्रतिभाशाली	ऊचिवान् ॥	१२.	पढ़ायी

श्लोकार्थ—प्रतिभाशाली ऋषि माण्डूकेय को अपनी संहिता पढ़ाई। उनके शिष्य देव मित्र ने सौभरि आदि को पढ़ायी ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

शाकल्यस्तत्सुतः स्वां तु पञ्चधा व्यस्य संहिताम् ।
वात्स्यमुद्गलशालीयगोखल्यशिशिरेष्वधात् ॥५७॥

पदच्छेद—

शाकल्यः तत् सुतः स्वाम् तु पञ्चधा व्यस्य संहिताम् ।
वात्स्य मुद्गल शालीय गोखल्य शिशिरेषु अधात् ॥

शब्दार्थ—

शाकल्यः	२. शाकल्य ने	वात्स्य	७ वात्स्य
तत् सुतः	१. माण्डूकेय के पुत्र	मुद्गल	८. मुद्गल
स्वाम् तु	३. अपनी	शालीय	९. शालीय
पञ्चधा	५. पाँच	गोखल्य	१०. गोखल्य और
व्यस्य	६. विभाग करके	शिशिरेषु	११. शिशिरेषु नामक शिष्यों को
संहिताम् ।	४. संहिता का	अधात् ॥	१२. पढ़ाया

श्लोकार्थ—माण्डूकेय के पुत्र शाकल्य ने अपनी संहिता के पाँच विभाग करके वात्स्य, मुद्गल, शालीय गोखल्य और शिशिरेषु नामक पाँच शिष्यों को पढ़ाया ॥

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

जातूकर्ण्यश्च तच्छिष्यः सनिरुक्तां स्वसंहिताम् ।
बलाकपैजवैतालविरजेभ्यो ददौ मुनिः ॥५८॥

पदच्छेद—

जातुकर्णयः च तत् शिष्यः सनिरूक्ताम् स्व संहिताम् ।
बलाक पैंज वैताल विरजेभ्यः ददौ मुनिः ॥

शब्दार्थ—

जातुकर्णयः	३. जातुकर्ण्य	बलाक	८. बलाक
च तत्	१. शाकल्य के एक और	पैंज	९. पैंज
शिष्यः	२. शिष्य थे	बैताल	१०. बैताल और
सनिरूक्ताम्	५. निरूक्त संहिता	विरजेभ्यः	११. विरज को
स्व	६. अपनी	ददौ	१२. दी
संहिताम् ।	७. संहिता	मुनिः ॥	४. मुनि (उन्होंने)

श्लोकार्थ—शाकल्य के एक और शिष्य थे, जातूकर्ण्य मुनि उन्होंने निरूक्त संहित अपनी संहिता बलाक, पैज, बेताल और विरज को दी ॥

एकोनषष्ठितमः श्लोकः

वाष्कलिः प्रतिशाखाभ्यो बालखिल्याख्यसंहिताम् ।
चक्रे बालायनिर्भव्यः कासारश्चैव तां दधुः ॥५९॥

पदच्छेद—

वाष्कलिः प्रति शाखाभ्यः बालखिल्या आख्य संहिताम् ।
चक्रे बालायनिः भव्य कासारः च एव ताम् दधुः ॥

शब्दार्थ—

वाष्कलिः	१. वाष्कल के पुत्र (वाष्कलि ने)	चक्रे	७.	रची
प्रति	२. सब	बालायनिः	८.	बालमनि
शाखाभ्यः	३. शाखायों से	भव्य	९.	भव्य एवं
बालखिल्य	४. बालखिल्य	कासारः चएव	१०.	कासार ने
आख्य	५. नामक	ताम्	११.	उसे
संहिताम् ।	६. एक शाखा	दधुः ॥	१२.	ग्रहण की

श्लोकार्थ—वाष्कल के पुत्र बाष्कलि ने सब शाखाओं से बाल खिल्य नामक एग शाखा रची, बालमनि, भव्य, एवं कासार ने उसे ग्रहण की ॥

षष्ठितमः श्लोकः

बह्वृचाः संहिता ह्येता एभिर्ब्रह्मर्षिभिर्धृताः ।
श्रुत्वैतच्छन्दसां व्यासं सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥६०॥

पदच्छेद —

बह्वृचाः संहिता हि एताः एभिः ब्रह्मर्षिभिः धृताः ।
श्रुत्वा एतत् छन्दसाम् व्यासम् सर्व पापैः प्रमुच्यते ॥

शब्दार्थ—

बह्वृचाः	४. ऋग्वेद सम्बन्धी बह्वृच	श्रुत्वा	१०.	सुनकर (मनुष्य)
संहिताः	५. शाखाओं को	एतत्	८.	इस
हि एताः	३. इन	छन्दसाम्	७.	वेदों के
एभिः	१. इन	व्यासम्	९.	विभाजन को
ब्रह्मर्षिभिः	२. ब्रह्मर्षियों ने	सर्व पापैः	११.	समस्त पापों से
धृताः ।	६. धारण किया	प्रमुच्यते ॥	१२.	मुक्त हो जाता है

श्लोकार्थ—इन ब्रह्मर्षियों ने इन ऋग्वेद सम्बन्धी बह्वृच शाखाओं को धारण किया वेदों के इस विभाजन को सुनकर मनुष्य समस्त पापों से मुक्त हो जाता है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

वैशम्पायनशिष्या वै चरकाध्वर्यवोऽभवन् ।
यच्चेरुर्ब्रह्महत्यांहःक्षपणं स्वगुरोर्व्रतम् ॥६१॥

पदच्छेद—

वैशम्पायन शिष्या वै चरकाध्वर्य वो अभवन् ।
यत् चेरुः ब्रह्म हत्या अहः क्षपणम् स्व गुरोः व्रतम् ॥

शब्दार्थ—

वैशम्पायन	१.	वैशम्पायन के	ब्रह्महत्या	६.	ब्रह्महत्या जनित
शिष्या वै:	२.	शिष्य	अहः	७.	पाप का
चरकाध्वर्यवः	३.	चरकाध्वर्यु	क्षपणम्	८.	प्रायश्चित करने के लिये उन्होंने
अभवन् ।	४.	हुये	स्व	९.	अपने
यत्	५.	क्योंकि	गुरोः	१०.	गुरू के
चेरुः	१२.	अनुष्ठान किया	व्रतम् ॥	११.	एकव्रत का

श्लोकार्थ—वैशम्पायन के शिष्य चरकाध्वर्यु हुये क्योंकि ब्रह्महत्या जनित पाप का प्रायश्चित करने के लिये उन्होंने अपने गुरू के एक व्रत का अनुष्ठान किया ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

याज्ञवल्क्यश्च तच्छिष्य आहाहो भगवन् कियत् ।
चरितेनाल्पसाराणां चरिष्येऽहं सुदुश्चरम् ॥६२॥

पदच्छेद—

याज्ञवल्क्यः च तत् शिष्य आह अहो भगवन् कियत् ।
चरितेन अल्प साराणाम् चरिष्ये अहम् सुदुश्चरम् ॥

शब्दार्थ—

याज्ञवल्क्यः	३.	याज्ञवल्क्य ने	चरितेन	८.	व्रत पालन से
च तत्	१.	उनके	अल्प	६.	थोड़ी
शिष्य	२.	एक और शिष्य	साराणाम्	७.	शक्ति रखने (चरकाध्वर्युके)
आह-अहो	४.	कहा-अहो	चरिष्ये	१२.	करूँगा
भगवन्	५.	भगवन्	अहम्	१०.	मैं
कियत् ।	९.	कितना लाभ होगा	सुदुश्चरम् ॥	११.	बहुत ही कठिन तप

श्लोकार्थ—उनके एक और शिष्य याज्ञवल्क्य ने कहा, अहो भगवन् थोड़ी शक्ति रखने वाले चरकाध्वर्यु के व्रत पालन से कितना लाभ होगा, मैं बहुत ही कठिन तप करूँगा ॥

त्रयषष्टितमः श्लोकः

इत्युक्तो गुरुरप्याह कुपितो याह्यलं त्वया ।
विप्रावमन्त्रा शिष्येण मदधीतं त्यजाश्विति ॥६३॥

पदच्छेद—

इति आक्तः गुरूः अपि आह कुपितः याहि अलम् त्वया ।
विप्रावमन्त्रा शिष्येण मत् अधीतम् त्यज आशु इति ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	यह	विप्रा	६.	ब्राह्मणों का
आक्तः	२.	कहे जाने पर	अवमन्त्रा	७.	अपमान करने वाले
गुरू अपि	३.	गुरू ने भी	शिष्येण	९.	शिष्य की
आह कुपितः	४.	कुपित होकर कहा	मत्	११.	मुझसे
याहि	५.	जाओ	अधीतम्	१२.	पढ़े हूये (वेद) का
अलम्	१०.	आवश्यकता नहीं है	त्यज	१४.	त्याग कर दो
त्वया ।	८.	तुझ	आशुइति ॥	१३.	शीघ्र

श्लोकार्थ—यह कहे जाने पर गुरू ने भी कुपित होकर कहा जाओ, ब्राह्मणों का अपमान करने वाले तुझ शिष्य की आवश्यकता नहीं है ! मुझसे पढ़े हुये वेद का शीघ्र त्याग कर दो ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

देवरातसुतः सोऽपिच्छर्दित्वा यजुषां गणम् ।
ततो गतोऽथ मुनयो ददृशुस्तान् यजुर्गणान् ॥६४॥

पदच्छेद—

देवरात सुतः सः अपि छर्दित्वा यजुषाम् गणम् ।
ततो गतोअथ मुनये ददृशु तान् यजुः गणान् ॥

शब्दार्थ—

देवरात	१.	देवरात के	ततः	७.	वहाँ से
सुतः	२.	पुत्र	गतः	८.	अन्यत्र चले गये
सः अपि	३.	वे भी	अथ	९.	तदनन्तर
छर्दित्वा	६.	वमन करके	मुनयः	१०.	मुनियों ने
यजुषाम	४.	यजुर्वेद के	ददृशु	१२.	देखा
गणम् ।	५.	मन्त्रों का	तान्यजुःगणान्॥	११.	उन यर्जुमन्त्रों को

श्लोकार्थ—देवरात के पुत्र वे भी यजुर्वेद के मन्त्रों का बमन करके वहाँ से अन्यत्र चले गये । तदनन्तर मुनियों ने यजुर्वेद के मन्त्रों को देखा ॥

पञ्चषष्ठितमः श्लोकः

यजूंषि तित्तिरा भूत्वा तल्लोलुपतयाऽऽददुः ।
तैत्तिरीया इति यजुःशाखा आसन् सुपेशलाः ॥६५॥

पदच्छेद—

यजूंषि तित्तिरा भूत्वा तत् लोलुपतया आददुः ।
तैत्तिरीया इति यजुः शाखा आसन् सुपेशला ॥

शब्दार्थ—

यजूंषि	५. यजुर्मन्त्रों को	तैत्तिरीया	१०. तैत्तरीय
तित्तिरा	३. उन्होंने तीतर	इति	११. इस नाम से प्रख्यात
भूत्वा	४. होकर	यजुः	७. यजुर्वेद की
तत्	१. यजुर्मन्त्रों को	शाखाः	८. शाखायें
लोलुपतया	२. लोभी होने के कारण	आसन्	१२. हुई
आददुः ।	६. चुग लिया (अतएव)	सुपेशला ॥	९. अत्यन्त रमणीय

श्लोकार्थ—यजुमन्त्रों को लोभी होने के कारण उन्होंने तीतर होकर यजुर्मन्त्रों को चुग लिया। अतएव यजुवेद की शाखायें अत्यन्त रमणीय तैत्तरीय इस नाम से प्रख्यात हुई ॥

षष्ठषष्ठितमः श्लोकः

याज्ञवल्क्यस्ततो ब्रह्मन् छन्दांस्यधिगवेषयन् ।
गुरोरविद्यमानानि सूपतस्थेऽर्कमीश्वरम् ॥६६॥

पदच्छेद—

याज्ञवल्क्यः ततः ब्रह्मन् छन्दांसि अधिग वेषयन् ।
गुरोः अविद्यमानानि सुउपतस्थे अर्कम् ईश्वरम् ॥

शब्दार्थ—

याज्ञवल्क्यः	७. याज्ञवल्क्य	गुरोः	३. गुरू के पास भी
ततः	२. तदनन्तर	अविद्यमानानि	४. अविद्यमान
ब्रह्मन्	१. ब्रह्मन् !	सुउपतस्थे	१०. उपस्थान करने लगे
छन्दांसि	५. श्रुतियों का	अर्कम्	८. सूर्य
अधिग वेषयन् ।	६. अन्वेषण करते हुये	ईश्वरम् ॥	९. भगवान् का

श्लोकार्थ—ब्रह्मन् ! तदनन्तर गुरू के पास भी अविद्यमान श्रुतियों का अन्वेषण करते हुये याज्ञवल्क्य सूर्य भगवान् का उपस्थान करने लगे ॥

सप्तषष्टितम: श्लोकः

याज्ञवल्क्य उवाच—

ॐ नमो भगवते आदित्यायाखिलजगतामात्म-स्वरूपेण कालस्वरूपेण चतुर्विधभूतनिकायानां ब्रह्मादिस्तम्बपर्यन्ता-नामन्तर्हृदयेषु बहिरपि चाकाश इवोपाधिनाऽव्यवधीयमानो भवानेक एव क्षणलवनिमेषावयवोपचितसंवत्सरगणेनापा-मादानविसर्गाभ्यामिमां लोकयात्रामनुवहति ।६७।

पदच्छेद—

ॐ नमः भगवते आदित्याय अखिल जगताम् आत्म स्वरूपेण काल स्वरूपेण चतुर्विध भूत निकाया नाम् ब्रह्मादिस्तम्ब पर्यन्तानाम अन्तः हृदयेषु बहिः अपि च आकाश इव उपाधिना अव्यवधीयमानः भवान् एवक्षण लव निमेष अवयव उपचित्त संवत्सर गणेन अपाम् अदान विसर्गाभ्याम् इमाम् लोक यात्रा अनम वहति ॥

शब्दार्थ—

ॐ	१.	ओंकार स्वरूप	अव्यवधीयमानः	१७.	असंङ्ग रहने वाले
नमः	४.	नमस्कार है	भवान्	१८.	आप
भगवते	२.	भगवान्	एकः एव	१९.	अकेले ही
आदित्याय	३.	सूर्य को	क्षणलव	२०.	क्षण-लव
अखिल जगताम्	५.	सम्पूर्ण जगत के	निमेष	२१.	निमेष रूप
आत्मस्वरूपेण	६.	आत्म स्वरूप एवं	अवयव	२२.	अवयवों से
काल स्वरूपेण	७.	काल स्वरूप से	उपचित्त	२३.	संघटित
चतुर्विध	१०.	चार प्रकार के	संवत्सर	२४.	संवत्सर
भूतनिकायानाम्	११.	(जरायुध-अण्डज-स्वदज उद्बिज प्राणी समूहों के)	गणेन	२५.	समूह के द्वारा एवं
ब्रह्मादि	८.	ब्रह्मा से लेकर	अपाम्	२६.	जल के
स्तम्ब पर्यन्तानाम्	९.	तृण पर्यन्त	आदान	२७.	आदान
अन्तः हृदयेषु	१२.	हृदय देश में	विसर्गाभ्याम्	२८.	प्रदान् के द्वारा
बहिः अपि च	१३.	और बाहर भी	इमाम्	२९.	इस
आकाश	१४.	आकाश के	लोक	३०.	लोक
इव	१५.	समान	यात्राम्	३१.	जीवन-यात्रा को
उपाधिना	१६.	उपाधि के धर्मों से	अनुवहति ॥	३२.	चलाते हैं

श्लोकार्थ—ओंकार स्वरूप भगवान् सूर्य को नमस्कार है। सम्पूर्ण जगत के आत्म स्वरूप एवं काल स्वरूप से ब्रह्मा से लेकर तृण पर्यन्त चार प्रकार के जरायुध, अण्डज, स्वेदज, उद्बिज्ज प्राणी समूहों के हृदय देश में और बाहर भी आकाश के समान उपाधि के धर्मों से असंङ्ग रहने वाले आप अकेले ही क्षण-लव निमेषरूप अवयवों से संघटित संवत्सर समूह के द्वारा एवं जल के आदान-प्रदान के द्वारा इस लोक जीवन यात्रा को चलाते हैं ॥

अष्टषष्ठितमः श्लोकः

यदु ह वाव विबुधर्षभ सवितरदस्तपत्यनुसव
नमहरहराम्नायविधिनोपतिष्ठमानानामखिलदुरित-
वृजिनबीजावभर्जन भगवतः समभिधीमहि तपन
मण्डलम् ॥६८॥

पदच्छेद—

यत उह वाव विबुध ऋषभ सवितः अदः तपति अनुसवनम् अहः अहः
आम्नाय विधिना उपतिष्ठमानानाम् अखिल दुरित वृजिन बीज अवभर्जन
भगवतः समभि धीमहि तपन मण्डलम् ॥

शब्दार्थ—

यत उहवाव	१	निश्चित रूप से	उपतिष्ठमानानाम्	९.	उप स्थान करने वालों
विबुध	२.	देवताओं में	अखिल दुरित	१०.	सम्पूर्ण पाप और
ऋषभ सवितः	३.	श्रेष्ठ सूर्य देव	वृजिनबीज	११.	दुःख के बीज को
अदः तपति	६.	तपते रहते हैं	अवभर्जन	१२.	भून डालने वाले
अनुसवनम्	५.	तीनों समय	भगवतः	१३.	आपके
अहः अहः	४.	प्रतिदिन	समभिधीमहि	१६.	हम सम्यक् प्रकार से ध्यान करते है
आम्नाय	७.	वेद	तपन	१४.	तेजोमय
विधिना	८.	विधि से	मण्डलम् ॥	१५.	मण्डल का

श्लोकार्थ—निश्चित रूप से देवताओं में श्रेष्ठ सूर्य देव प्रतिदिन तीनों समय तपते रहते हैं। वेद विधि से उपस्थान करने वालो के पाप और दुःख के बीज को भून डालने वाले आपके तेजोमय मण्डल का हम सम्यक् प्रकार से ध्यान करते हैं ॥

एकोनसप्ततितमः श्लोकः

य इह वाव स्थिरचरनिकराणां निजनिकेतनानां
मनइन्द्रियासुगणाननात्मनः स्वयमात्मान्तर्यामी
प्रचोदयति ॥६९॥

पदच्छेद—

यः इह वाव स्थिर चर निकराणाम् निजनिकेतनानाम् मन इन्द्रिय।
असुगणान् अनात्मनः स्वयम् अनात्मनः स्वयम आत्म अन्तर्यामि प्रचोदयति ॥

शब्दार्थ—

यः इहवाव	१.	आप यहाँ निश्चित रूप	असुगणान्	१०.	प्राण समूह और
स्थिर	२.	स्थावर और	अनात्मनः	११.	आत्मा के
चरनिकाराणाम्	३.	जङ्गम समूहों के	स्वयम्	५.	आप स्वयं
निजनिकेतनानाम्	४.	अपना आश्रम स्थान है	आत्म	६.	परमात्मा तथा
मनः	८.	मन	अन्तर्यामि	७.	अन्तर्यामी होने से
इन्द्रियः	९.	इन्द्रिय	प्रचोदयति ॥	१२.	प्रेरक है

श्लोकार्थ—आप यहाँ निश्चित रूप से स्थावर और जङ्गम समूहों के अपना आश्रम स्थान है। आप स्वयं तथा परमात्मा तथा अन्तर्यामी होने से मन इन्द्रिय प्राण समूह और आत्मा के प्रेरक हैं ॥

सप्तितमः श्लोकः

य एवेमं लोकमतिकरालवदनान्धकारसंज्ञाजगरग्रह-
गिलितं मृतकमिव विचेतनमवलोक्यानुकम्पया
परमकारुणिक ईक्षयैवोत्थाप्याहरहरनुसवनं श्रेयसि
स्वधर्माख्यात्मावस्थाने प्रवर्तयत्यवनिपतिरिवासाधूनां
भयमुदीरयन्नटति ॥७०॥

पदच्छेद—

यः एव इमम् लोकम् अतिकराल वदन अन्धकार संज्ञा अजगर ग्रह गिलितम् मृतकम् इव विचेतनम् अवलोक्य अनुकम्पया परम् कारुणिकः ईक्षया एव उत्थाप्य अहः अहः अनुसवनन् श्रेयसिस्वधर्म आख्य आत्म अवस्थाने प्रवर्तयति अव निपतिः इव आसाधूनाम् भयम् उदीरयन् अटति ॥

शब्दार्थ—

यः एव	१५.	आप ही	ईक्षया	१७	दृष्टि मात्र से
इमम्	१.	इस	एव	१८.	ही
लोकम्	२.	लोक के	उत्थाप्य	१९.	उठाकर
अतिकराल	३.	अत्यन्त भयंकर	अहः अहः	२०.	प्रतिदिन
वदन	४.	मुख वाले	अनुसवनम्	२१.	तीनों काल में
अन्धकार	५.	अन्धकार	श्रेयसि	२२.	कल्याण साधक
संज्ञा	६.	नामक	स्वधर्म	२३.	स्वधर्म पालन
अजगर ग्रह	७.	अजगर रूपी ग्रह के द्वारा	आख्य	२४.	नामक
गिलितम्	८.	निगल लिये जाने पर	आत्म	२५.	आत्म
मृतकम्	९.	मृतक के	अवस्थाने	२६.	उत्थान् के कार्य में
इव	१०.	समान	प्रवर्तयति	२७.	लगाते हैं और
विचेतनम्	११.	अचेत	अनिपतिः	३१.	राजा के
अवलोक्य	१२.	देखकर	इव	३२.	समान
अनुकम्पया	१६.	दयावश	आसाधूनाम्	२८.	दुष्टों को
परम्	१३.	अत्यन्त	भयम्	१९.	भयभीत
कारुणिकः	१४.	दयालु	उदीरयन्	३०.	करते हुये
			अटति ॥	३२.	विचरण करते हैं

श्लोकार्थ—इस लोक के अत्यन्त भयंकर मुख वाले अन्धकार नामक अजगर रूपी ग्रह के द्वारा निगल लिये जाने पर मृतक के समान अचेत देखकर अत्यन्त दयालु आप ही दयावश दृष्टि-मात्र से ही उठाकर प्रतिदिन तीनों काल में कल्याण साधक स्वधर्म पालक नामक आत्म उत्थान् के कार्य में लगाते हैं। और दुष्टों को भयभीत करते हुये राजा के समान विचरण करते हैं ॥

एकसप्तितमः श्लोकः

परित आशापालैस्तत्र तत्र कमलकोशाञ्जलिभि-
रुपहृतार्हणः ॥७१॥

पदच्छेद—

परित आशा पालैः तत्र-तत्र कमल कोश अञ्जलिभिः उपहृत्य
अर्हणः ॥

शब्दार्थ—

परित	१. चारों ओर	कोश	६. कोश के समान अपनी
आशा	२. दिक	अञ्जलिभिः	७. अञ्जलियों से
पालैः	३. पाल गण	उपहृत्य	८. आपके उपहार
तत्र-तत्र	४. स्थान-स्थान पर	अर्हणः ॥	९. समर्पित करते हैं
कमल	५. कमल		

श्लोकार्थ—चारों ओर दिक्पालगण स्थान-स्थान पर कमल कोश के समान अपनी अञ्जलियों से आपको उपहार समर्पित करते हैं ॥

द्विसप्तितमः श्लोकः

अथ ह भगवंस्तव चरणनलिनयुगलं त्रिभुवन-
गुरुभिर्वन्दितमहमयातयामयजुःकाम उपसरा-
मीति ॥७२॥

पदच्छेद—

अथ ह भगवन् तव चरण नलिन युगलम् त्रिभुवन गुरुभिः वन्दितम्
अहम् अयात याम यजुः काम उपसरा मि इति ॥

शब्दार्थ—

अथाह	१. अब	वन्दितम्	५. वन्दित
भगवन्	२. भगवन्	अहम्	९. मैं
तव	६. आपके	अयातयाम्	१२. नया बिल्कुल नवीन
चरणनलिन	८. चरण कमलों की	यजुः	१३. यजुर्वेद
युगलम्	७. दोनों	काम	१४. प्राप्त कर सकूँ
त्रिभुवन	३. तीनों लोकों के	उपसरामि	१०. शरण लेता हूँ
गुरुभिः	४. महानुभावों से	इति ॥	११, जिससे

श्लोकार्थ—अब भगवन् तीनों के महानुभावों से वन्दित आपके दोनों चरण कमलों की मैं शरण लेता हूँ । जिससे नयी बिल्कुल नवीन यजुर्वेद प्राप्त कर सकूँ ॥

त्रियसप्ततितमः श्लोकः

सूत उवाच—एवं स्तुतः स भगवान् वाजिरूपधरो हरिः ।
यजूंष्ययातयामानि मुनयेऽदात् प्रसादितः ॥७३॥

पदच्छेद—

एवम् स्तुतः सः भगवान् वाजि रूपधरः हरिः ।
यजूंषि अयात यामानि मुनये अदात् प्रसादितः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	यजूंषि	११.	यजुर्वेद के मन्त्र
स्तुतः	२.	स्तुति किये जाने पर	अयात्	६.	न बीते हुये
सःभगवान्	५.	उन भगवान्	यामानि	१०.	अभूतपूर्व
वाजि	३.	अश्व	मुनये	८.	याज्ञवल्क्य मुनि को
रूपधरः	४.	रूपधारी	अदात्	१२.	दिये
हरिः ।	६.	श्री हरि ने	प्रसादितः ॥	७.	प्रसन्न होकर

श्लोकार्थ—इस प्रकार स्तुति किये जाने पर अश्व रूपधारी उन भगवान् श्री हरि ने प्रसन्न होकर याज्ञवल्क्य मुनि को न बीते हुये अभूतपूर्व यजुर्वेद के मन्त्र दिये ॥

चतुःसप्ततितमः श्लोकः

यजुर्भिरकरोच्छाखा दशपञ्च शतैर्विभुः ।
जगृहुर्वाजसन्यस्ताः काण्वमाध्यन्दिनादयः ॥७४॥

पदच्छेद—

यजुर्भिः अकरोत् शाखादश पञ्च शतैः विभुः ।
जगृहुः वाजसन्यस्ताः काण्वमाध्यन्दि नादयः ॥

शब्दार्थ—

यजुर्भिः	३.	यजुर्मन्त्रों से	जगृहुः	१२.	ग्रहण किया
अकरोत्	६.	रचना की	वाज	७.	वाज
शाखा	५.	शाखाओं की	सन्यस्ताः	८.	सनेय नाम से प्रसिद्ध उन शाखाओं को
दशपञ्च	४.	यजुर्वेद की (पन्द्रह)	काण्व	६.	काण्व
शतैः	२.	सैकड़ों	माध्यन्दि	१०.	माध्यन्दिन
विभुः ।	१.	प्रभु याज्ञवल्क्य ने	नादयः ॥	११.	आदि ऋषियों ने

श्लोकार्थ—प्रभु याज्ञवल्क्य ने सैकड़ों यजुर्मन्त्रों से यजुर्वेद की पन्द्रह शाखाओं की रचना की। वाजसनेय नाम से प्रसिद्ध उन शाखाओं को काण्वमाध्यन्दिन आदि ऋषियों ने ग्रहण किया ॥

पञ्चसप्ततितमः श्लोकः

जैमिनेः सामगस्यासीत् सुमन्तुस्तनयो मुनिः ।
सुन्वांस्तु तत्सुतस्ताभ्यामेकैकां प्राह संहिताम् ॥७५॥

पदच्छेद—

जैमिनेः सामगस्य आसीत् सुमन्तुः तनयः मुनिः ।
सुन्वान् तु तत् सुतः ताभ्याम् एक एकाम् प्राह संहिताम् ॥

शब्दार्थ—

जैमिनेः	२. जैमिनि मुनि के	सुन्वान् तु	८. सुन्वान्
सामगस्य	१. सामगान करने वाले	तत् सुतः	७. उनके पुत्र थे
आसीत्	४. थे	ताभ्याम्	९. (जैमिनि ने) उन दोनों को
सुमन्तुः	५. सुमन्तु	एक-एकाम्	१०. एक-एक
तनयः	३. पुत्र	प्राह	१२. पढ़ायी
मुनिः ।	६. मुनि	संहिताम् ॥	११. संहिता

श्लोकार्थ—सामगान करने वाले जैमिनि मुनि के पुत्र थे सुमन्तु मुनि उनके पुत्र थे। सुन्वान् जैमिनी ने उन दोनों को एक-एक संहिता पढ़ायी ॥

षट्सप्तितमः श्लोकः

सुकर्मा चापि तच्छिष्यः सामवेदतरोर्महान् ।
सहस्रसंहिताभेदं चक्रे साम्नां ततो द्विजः ॥७६॥

पदच्छेद—

सुकर्मा च अपि ततशिष्यः सामवेद तरोः महान् ।
सहस्र संहिता भेद चक्रे साम्नाम् ततः द्विजः ॥

शब्दार्थ—

सुकर्मा	५. सुकर्मा ने	सहस्र	९. एक हजार
च अपि	६. भी	संहिता भेदम्	११. संहितायें
तत् शिष्यः	३. जैमिनि के शिष्य	चक्रे	१२. बना दी
सामवेद	७. सामवेद रूपी	साम्नाम्	१०. साम
तरोः	८. वृक्ष की (शाखाओं के समान)	ततः	२. तदनन्तर
महान् ।	४. महापुरुष	द्विजः ॥	१. द्विजगण

श्लोकार्थ—द्विजगण! तदनन्तर जैमिनी के शिष्य महापुरुष सुकर्मा ने भी सामवेद-रूपी वृक्ष की शाखाओं के समान एक हजार साम संहितायें बना दीं ॥

सप्तसप्तितमः श्लोकः

हिरण्यनाभः कौशल्यः पौष्यञ्जिश्च सुकर्मणः ।
शिष्यौ जगृहतुश्चान्य आवन्त्यो ब्रह्मवित्तमः ॥७७॥

पदच्छेद—

हिरण्यनाभः कौशल्यः पौष्यञ्जिः च सुकर्मणः ।
शिष्यौ जगृहतुः च अन्य आवन्त्यः ब्रह्म वितमः ॥

शब्दार्थ—

हिरण्यनाभः	४.	हिरण्यनाभ	शिष्यौ	२.	शिष्य
कौशल्यः	३.	कौशल देशवासी	जगृहतुः	१०.	(उन शाखाओं को) ग्रहण किया
पौष्यञ्जिः	५.	पौष्यञ्जि	च अन्यः	७.	और दूसरे
च	६.	तथा	आवन्त्यः	९.	आवन्त्य ने
सुकर्मणः ।	१.	सुकर्मा के	ब्रह्मवित्तमः ॥	८.	ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—सुकर्मा के शिष्य कौशल देशवासी हिरण्यनाभ पौष्यञ्जि तथा और दूसरे ब्रह्म वेत्ताओं में श्रेष्ठ उन शाखाओं को ग्रहण किया ॥

सप्त अष्ठितमः श्लोकः

उदीच्याः सामगाः शिष्या आसन् पञ्चशतानि वै ।
पौष्यञ्ज्यावन्त्ययोश्चापि तांश्च प्राच्यान् प्रचक्षते ॥७८॥

पदच्छेद—

उदीच्याः साममाः शिष्याः आसन् पञ्चशतानि वै ।
पौष्यञ्जि आवन्त्योः च अपि तान् च प्राच्यान् प्रचक्षते ॥

शब्दार्थ—

उदीच्याः	५.	उत्तर दिशा वासी	पौष्यञ्जि	१.	पौष्यञ्जि और
सामगाः	६.	सामवेदी	आवन्त्योः	२.	आवन्त्य के
शिष्याः	७.	शिष्य	च अपि	३.	भी
आसन्	८.	थे	तान् च	९.	और उन्हें
पञ्चशतानि वै ।	४.	पाँच सौ	प्राच्यान्	१०.	पूर्व दिशा वासी भी
			प्रचक्षते ॥	११.	कहते हैं

श्लोकार्थ—पौष्यञ्जि और आवन्त्य के भी पाँच सौ उत्तर दिशा वासी सामवेदी शिष्य थे और उन्हें पूर्व दिशा वासी भी कहते है ॥

एकाशीतितमः श्लोकः

लौगाक्षिर्माङ्गलिः कुल्यः कुसीदः कुक्षिरेव च ।
पौष्यञ्जिशिष्या जगृहुः संहितास्ते शतं शतम् ।।७६।।

पदच्छेद—

लौगाक्षिः माङ्गलिः कुल्यः कुसीदः कुक्षिः एव च ।
पौष्यञ्जि शिष्या जगृहुः संहिताः ते शतम्-शतम् ।।

शब्दार्थ—

लौगाक्षिः	१.	लोगाक्षि	पौष्यञ्जि	७.	पौष्यञ्जि के
माङ्गलिः	२.	माँगलि	शिष्या	८.	शिष्य थे
कुल्यः	३.	कुल्य	जगृहुः	१२	ग्रहण किया
कुसीदः	४.	कुसीद	संहिताः	११.	संहिताओं को
कुक्षिः	६.	कुक्षि (ये पाँच)	ते शतम्	९.	उन्होंने सौ
एव च ।	५.	और	शतम् ।।	१०.	सौ

श्लोकार्थ—लौगाक्षि, माँगलि, कुल्य, कुसीद और कुक्षि ये पाँच पौष्यञ्जि के शिष्य थे। उन्होंने सौ-सौ संहिताओं को ग्रहण किया ।।

अष्टशीतितमः श्लोकः

कृतो हिरण्यनाभस्य चतुर्विंशतिसंहिताः ।
शिष्य ऊचे स्वशिष्येभ्यः शेषा आवन्त्य आत्मवान् ।।८०।।

पदच्छेद—

कृतः हिरण्य नाभस्य चतुर्विंशति संहिताः ।
शिष्य ऊचे स्वशिष्येभ्यः शेषाः आवन्त्यः आत्मवान् ।।

शब्दार्थ—

कृतः	४.	कृत ने	शिष्य	३.	शिष्य
हिरण्य	१.	हिरण्य	ऊचे	८.	पढ़ायी और
नामस्य	२.	नाम के	स्वशिष्येभ्यः	७.	अपने शिष्यों को
चतुर्विंशीत	६.	चौबीस	शेषाः	९.	शेष संहितायें
संहिताः !	६.	संहियायें	आवन्त्यः	११.	आवन्त्य ने (अपने शिष्यों को दीं)
			आत्मवान् ।।	१०.	परम संयमी

श्लोकार्थ—हिरण्यनाभ के शिष्य कृत ने चौबीस संहितायें अपने शिष्यों को पढ़ायी और शेष संहितायें परमसंयमी आवन्त्य ने अपने शिष्यों को दी ।।

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
द्वादशस्कन्धे वेद शाखाप्रणयनं नाम
षष्ठः अध्यायः ।।६।।

द्वादशः स्कन्धः

सप्तमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

सूत उवाच—अथर्ववित् सुमन्तुश्च शिष्यमध्यापयत् स्वकाम् ।
संहितां सोऽपि पथ्याय वेददर्शाय चोक्तवान ॥१॥

पदच्छेद—

अथर्ववित् सुमन्तुः च शिष्यम् अध्यापयत् स्वकाम् ।
संहिताम् सः अपि पथ्याय वेद दर्शाय च उक्तवान् ॥

शब्दार्थ—

अथर्ववित्	१. अथर्ववेद के ज्ञाता		संहिताम्	५. संहिता
सुमन्तु च	२. सुमन्त ने (अपने)		सः अपि	७. उन्होंने भी
शिष्यम्	३ शिष्य (कबन्ध) को		पथ्याय	८. पथ्य और
अध्यापयत्	६. पढ़ायी		वेद दर्शाय	९. वेददर्श को
स्वकाम् ।	४. अपनी		च उक्तवान् ॥	१ . उसका अध्ययन कराया

श्लोकार्थ—अथर्ववेद के ज्ञाता सुमन्तु ने अपने शिष्य कबन्ध को अपनी संहिता पढ़ायी उन्होंने भी पथ्य और वेददर्श को उसका अध्ययन कराया ॥

द्वितीयः श्लोकः

शौक्लायनिर्ब्रह्मबलिर्मोदोषः पिप्पलायिनिः ।
वेददर्शस्य शिष्यास्ते पथ्यशिष्यानथो शृणु ॥२॥

पदच्छेद—

शौक्ला यनिः ब्रह्मवलिः मोदोषः पिप्पलायिनिः ।
वेद दर्शाय शिष्याः ते पथ्य शिष्यान् अथो शृणु ॥

शब्दार्थ—

शौक्लायनिः	१ शौक्ला यनि	शिष्याः	७. शिष्य थे,
ब्रह्मवलिः	२. ब्रह्मवलि	ते	५. ये
मोदोषः	३. मोदोष और	पथ्य	९. पथ्य के
पिप्पलायनिः ।	४. पिप्पलायनि	शिष्यान्	१०. शिष्यों के नाम
वेद दर्शाय	६. वेददर्श के	अथो	८. अब
		शृणु ॥	११. सुनो

श्लोकार्थ—शौक्लायनि, ब्रह्मवलि, मोदोष और पिप्पलायनि ये वेददर्श के शिष्य थे, अब पथ्य के शिष्यों के नाम सुनो ॥

तृतीयः श्लोकः

कुमुदः शुनको ब्रह्मन् जाजलिश्चाप्यथर्ववित् ।
बभ्रुः शिष्योऽथाङ्गिरसः सैन्धवायन एव च ।
अधीयेतां संहिते द्वे सावर्ण्याद्यास्तथापरे ॥३॥

पदच्छेद—

कुमुदः शुनकः ब्रह्मन् जाञ्जलिः च अपि अर्थवित् ।
बभ्रुः शिष्यः अथ आङ्गिरसः सैन्धवायनः एव च ॥
अधीयेताम् संहिते द्वे सावर्ण्य आद्याः तथा परे ॥

शब्दार्थ—

कुमुदः	२.	(पथ्य के तीन शिष्य थे) कुमुद	अथआङ्गिरसः	७.	अङ्गिरा गोत्रिय
शुनकः	३.	शुनक और	सैन्धवायनः	१०.	सैन्धवायन भी
ब्रह्मन्	१.	ब्रह्मन् !	एव च	९	और
जाञ्जलिः	५.	जाञ्जलि	अधीयेताम्	१३.	अध्ययन किया
च अपि	६.	भी	संहिते द्वे	१२.	दो संहिताओं का
अर्थवित् ।	४.	अथर्ववेत्ता	सावर्ण्य	१५.	सावर्ण्य
बभ्रुः	८.	बभ्रु	आद्या	१६.	आदि भी शिष्य थे
शिष्यः	११.	शिष्य थे (उन लोगों ने)	तथापरे ॥	१४.	और दूसरे

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! पथ्य के तीन शिष्य थे, कुमुद, शुनक और अथर्ववेत्ता जाञ्जलि भी तथा अङ्गिरा गोत्रिय बभ्रु और सैन्धवायन भी शिष्य थे, उन लोगों ने दो संहिताओं का अध्ययन किया । और दूसरे सावर्ण्य आदि भी शिष्य थे ॥

चतुर्थः श्लोकः

नक्षत्रकल्पः शान्तिश्च कश्यपाङ्गिरसादयः ।
एते आथर्वणाचार्याः शृणु पौराणिकान् मुने ॥४॥

पदच्छेद—

नक्षत्रकल्पः शन्तिः च कश्यप अङ्गिरस आदयः ।
एते आथर्वण आचार्यः श्रृणु पौराणिकान् मुनेः ॥

शब्दार्थ—

नक्षत्रकल्पः	२.	नक्षत्र कल्प	एते	७.	ये
शान्तिः च	३.	शान्ति और	आथर्वण	८.	अथर्ववेद के
कश्यप	४.	कश्यप	आचार्यः	९.	आचार्य हुये
आङ्गिरस	५.	आंङ्गिरस	श्रृणु	११.	सुनो
आदयः ।	६.	आदि	पौराणिकान्	१०.	अब (पौराणिकों के सम्बन्ध में)
			मुनेः ॥	१.	मुने !

श्लोकार्थ—मुने ! नक्षत्र, कल्प, शन्ति और कश्यप आंङ्गिरस आदि ये अथर्ववेद के आचार्य हुये । अब पौराणिकों के सम्बन्ध में सुनो ॥

पञ्चमः श्लोकः

त्रय्यारुणिः कश्यपश्च सावर्णिरकृतव्रणः ।
वैशम्पायनहारीतौ षड् वै पौराणिका इमे ॥५॥

पदच्छेद—

त्रय्यारुणिः कश्यपः च सावर्णिः अकृतव्रणः ।
वैशम्पायन हारीतौ षट् वै पौराणिका इमे ॥

शब्दार्थ—

त्रय्यारुणिः	१. त्रय्यारुणि		वैशम्पायन	५. वैशम्पाइन
कश्यपः च	२. कश्यप और		हारीतौ	६. हारीत
सावर्णिः	३. सावर्णि		षट् वै	८. छहों
अकृतव्रणः ।	४. अकृत व्रण		पौराणिका	९. पुराणों के आचार्य हैं
			इमे ॥	७. ये

श्लोकार्थ—त्रय्यारुणि कश्यप और सावर्णि अकृत व्रण वैशम्पाइन, हारीत ये छहों पुराणों के आचार्य हैं ॥

षष्ठः श्लोकः

अधीयन्त व्यासशिष्यात् संहितां मत्पितुर्मुखात् ।
एकैकामहमेतेषां शिष्यः सर्वाः समध्यगाम् ॥६॥

पदच्छेद—

अधीयन्त व्यास शिष्यात् संहिताम् मत् पितुः मुखात् ।
एक एकाम् अहम् एतेषाम् शिष्यः सर्वाः समध्यगाम ॥

शब्दार्थ—

अधीयन्त	७. पढ़ी थी		एक-एकाम्	५. एक-एक
व्यास	१. व्यास के		अहम्	१०. मैंने इनसे
शिष्यात्	२. शिष्य		एतेषाम्	८. इनके
संहिताम्	६. पुराण संहिता		शिष्यः	९. शिष्य
मत् पितुः	३. मेरे पिता के		सर्वा	११. सभी संहिताओं का
मुखात् ।	४. मुख से		समध्यगाम ॥	१२. अध्ययन किया था

श्लोकार्थ—व्यास के शिष्य मेरे पिता के मुख से एक-एक पुराण संहिता पढ़ी थी । इनके शिष्य मैंने इनसे सभी संहिताओं का अध्ययन किया था ॥

सप्तमः श्लोकः

कश्यपोऽहं च सावर्णी रामशिष्योऽकृतव्रणः ।
अधीमहि व्यासशिष्याच्चतस्रो मूलसंहिताः ॥७॥

पदच्छेद—

कश्यपः अहम् च सावर्णी रामशिष्यः अकृतव्रणः ।
अधीमहि व्यास शिष्यात् चतस्रः मूल संहिताः ॥

शब्दार्थ—

कश्यपः	१. कश्यप	अधीमहि	१२. पढ़ी थीं
अहम्	६. मैंने	व्यास	७. व्यास के
च	५. और	शिष्यात्	८. शिष्य से
सावर्णी	२. सावर्णि	चतस्रः	६. चार
रामशिष्यः	३. परशुराम के शिष्य	मूल	१०. मूल
अकृतव्रणः ।	४. अकृतव्रण	संहिताः ॥	११. संहितायें

श्लोकार्थ—कश्यप, सावर्णि, परशुराम के शिष्य अकृतव्रण और मैंने व्यास के शिष्य से चार मूल संहितायें पढ़ी थी ॥

अष्टमः श्लोकः

पुराणलक्षणं ब्रह्मन् ब्रह्मर्षिभिर्निरूपितम् ।
शृणुष्व बुद्धिमाश्रित्य वेदशास्त्रानुसारतः ॥८॥

पदच्छेद—

पुराण लक्षणम् ब्रह्मन् ब्रह्मर्षिभिः निरूपितम् ।
शृणुष्व बुद्धिम् आश्रित्य वेद शास्त्र अनुसारतः ॥

शब्दार्थ—

पुराण	५. पुराणों का	शृणुष्व	१०. सुनो
लक्षणम्	६. लक्षण	बुद्धिम्	८. बुद्धि का
ब्रह्मन्	१. ब्रह्मन्	आश्रित्य	६. आश्रय लेकर
ब्रह्मर्षिभिः	२. ब्रह्मर्षियों ने	वेद शास्त्र	३. वेद और शास्त्र के
निरूपितम् ।	७. बतलाया है	अनुसारतः ॥	४. अनुसार

श्लोकार्थ—ब्रह्मन् ! ब्रह्मर्षियों ने वेद और शास्त्र के अनुसार पुराणों का लक्षण बतलाया है बुद्धि का आश्रय लेकर सुनो ॥

नवमः श्लोकः

सर्गोऽस्याथ विसर्गश्च वृत्ती रक्षान्तराणि च ।
वंशो वंशानुचरितं संस्था हेतुरपाश्रयः ॥९॥

पदच्छेद—

सर्गः अस्य अथ विसर्गः च वृत्ती रक्षान्तराणि च ।
वंशः वंश अनुचरितम् संस्था हेतुः अपाश्रयः ॥

शब्दार्थ—

सर्गः	२.	सृष्टि	वंशः	७.	वंश
अस्य अथ	१.	इस पुराण संहिता के (दस लक्षण हैं)	वंश अनुचरितम्	८.	वंशानुचरित
विसर्गः च	३.	संहार	संस्था	९.	संस्था (प्रलय)
वृत्ती	४.	वृत्ति	हेतुः	१०.	हेतु और
रक्षान्तराणि	६.	रक्षा, मन्वन्तर	अपाश्रयः ॥	११.	अपाश्रय
च ।	५.	और			

श्लोकार्थ—इस पुराण संहिता के दस लक्षण हैं । संहार, वृत्ति और रक्षा, मन्वन्तर, वंश वंशानुचरित, संस्था, प्रलय, हेतु और अपाश्रय ॥

दशमः श्लोकः

दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः ।
केचित् पञ्चविधं ब्रह्मन् महदल्पव्यवस्थया ॥१०॥

पदच्छेद—

दशभिः लक्षणैः युक्तम् पुराणम् तत् विदः विदुः ।
केचित् पञ्चविधम् ब्रह्मन् महत् अल्प व्यवस्थया ॥

शब्दार्थ—

दशभिः	३.	दस	केचित्	८.	कोई
लक्षणैः	४.	लक्षणों से	पञ्चविधम्	१२.	पुराणों के पांच लक्षण मानते हैं
युक्तम्	५.	युक्त	ब्रह्मन्	७.	ब्रह्मन्
पुराणम्	५.	पुराण को	महत्	९.	महान् और
तत्-विद	१.	पुराणों के विद्वानों ने	अल्प	१०.	अल्प के
विदुः ।	६.	बतलाया है	व्यवस्थया ॥	११.	भेद से

श्लोकार्थ—पुराणों के विद्वानों ने पुराण के दस लक्षणों से युक्त बतलाया है । ब्रह्मन् कोई महान और अल्प के भेद से पुराणों के पांच लक्षण मानते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

अव्याकृतगुणक्षोभान्महतस्त्रिवृतोऽहमः ।
भूतमात्रेन्द्रियार्थानां सम्भवः सर्ग उच्यते ॥११॥

पदच्छेद—

अव्याकृत गुणक्षोभात् महतः त्रिवृतः अहमः ।
भूतमात्र इन्द्रिय अर्थानाम् सम्भवः सर्ग उच्यते ॥

शब्दार्थ—

अव्याकृत	१. मूल प्रकृति में	भूतमात्र	६. उसी से पञ्चतन्मात्रा
गुणक्षोभात्	२. गुणों के क्षुब्ध होने से	इन्द्रिय	७. इन्द्रिय और
महतः	३. महत्तत्व की उत्पत्ति होती है	अर्थानाम्	८. विषयों की
त्रिवृतः	४. उससे (राजस, तामस, सात्विक तीन प्रकार के)	सम्भवः	९. उत्पत्ति होती है
अहमः ।	५. अंहकार बनते हैं	सर्ग उच्यते ॥	१०. (इसी) को सर्ग कहते हैं

श्लोकार्थ—मूल प्रकृति में गुणों के क्षुब्ध होने से महत्तत्व की उत्पत्ति होती है। उससे राजस, तामस, सात्विक-तीन प्रकार के अहंकार बनते हैं। उसी से पञ्च तन्मात्रा इन्द्रिय और विषयों की उत्पत्ति होती है। इसी को सर्ग कहते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

पुरुषानुगृहीतानामेतेषां वासनामयः ।
विसर्गोऽयं समाहारो बीजाद् बीजं चराचरम् ॥१२॥

पदच्छेद—

पुरुष अनुगृहीतानाम् एतेषाम् वासना मयः ।
विसर्गः अयम् समाहाराः बीजाद् बीजम् चराचरम् ॥

शब्दार्थ—

पुरुष	१. परमेश्वर के	विसर्गः	११. विसर्ग कहलाता है
अनुगृहीतानाम्	२. अनुग्रह से	अयम्	४. यह
एतेषाम्	३. इनका	समाहारः	८. समूह
वासना	५. वासना	बीजाद्	९. एक बीज से
मयः ।	६. मय	बीजम्	१०. दूसरे बीज के समान
		चराचरम् ॥	७. चर-अचर जगत का

श्लोकार्थ—परमेश्वर के अनुग्रह से इनका यह वासनामय चर अचर जगत् का समूह एक बीज से दूसरे बीज के समान विसर्ग कहलाता है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

वृत्तिर्भूतानि भूतानां चराणामचराणि च ।
कृता स्वेन नृणां तत्र कामाच्चोदनयापि वा ॥१३॥

पदच्छेद—

वृत्ति भूतानि भूतानाम् चराणाम चराणि च ।
कृता स्वेन नृणाम् तत्र कामात् चोदनया अपि वा ॥

शब्दार्थ—

वृत्ति	५.	जीवन निर्वाह की सामग्री है	स्वेन	११.	स्वयम् ही सामग्री
भूतानि	२.	पदार्थ	नृणाम्	७.	मनुष्यों ने
भूतानाम्	४.	प्राणियों की	तत्र	६.	इनमें से
चराणाम	३.	चर	कामात्	८.	कामना के अनुसार
अचराणि च ।	१.	अचर	चोदनया	१०.	शास्त्र कीआज्ञा से
कृता	१२.	निश्चित कर ली है	अपिवा ॥	९.	अथवा

श्लोकार्थ— अचर पदार्थ चर प्राणियों की जीवन निर्वाह की सामग्री है । इनमें से मनुष्यों के कामना के अनुसार अथवा शास्त्र की आज्ञा से स्वयम् ही सामग्री निश्चित कर ली है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

रक्षाच्युतावतारेहा विश्वस्यानु युगे युगे ।
तिर्यङ्मर्त्यर्षिदेवेषु हन्यन्ते यैस्त्रयीद्विषः ॥१४॥

पदच्छेद—

रक्षा अच्युत अवतार ईहा विश्वस्य अनु युगे-युगे ॥
तिर्यक् मर्त्य ऋषि देवेषु हन्यन्ते यैः त्रयी द्विषः ॥

शब्दार्थ—

रक्षा	३.	रक्षा के लिये	तिर्यक	५.	पशु-पक्षी
अच्युत	४.	भगवान् में	मर्त्य ऋषि	६.	मनुष्य, ऋषि और
अवतार	८.	अवतार लेने की	देवेषु	७.	देवता में
ईहा	९.	इच्छा होती है	हन्यन्ते	१२.	हत्या की जाती है
विश्वस्य	२.	संसार की	यैः	१०.	जिनके द्वारा
अनु युगे-युगे ।	१.	प्रत्येक युग में	त्रयीद्विषः ॥	११.	वेद द्रोहियों की

श्लोकार्थ—प्रत्येक युग में संसार की रक्षा के लिये भगवान् में पशु-पक्षी, मनुष्य ऋषि और देवता में अवतार लेने की इच्छा होती है। जिनके द्वारा वेद द्रोहियों की हत्या की जाती है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

मन्वन्तरं मनुर्देवा मनुपुत्राः सुरेश्वरः ।
ऋषयोंऽशावतारश्च हरेः षड्विधमुच्यते ॥१५॥

पदच्छेद—

मन्वन्तरम् मनुः देवाः मनुपुत्राः सुरेश्वरः ।
ऋषयः अंशावतार च हरेः षड् विधम् उच्यते ॥

शब्दार्थ—

मन्वन्तरम्	९.	मन्वन्तर	ऋषयः	५.	ऋषिगण और
मनुः	१.	मनु	अंशावतार च	७.	अंशावतार यह
देवाः	२.	देवगण	हरेः	६.	विष्णु के
मनु पुत्राः	३.	मनु के पुत्र	षड् विधम्	८.	छह प्रकार का
सुरेश्वरः ।	४.	देवराज	उच्यते ॥	१०.	कहा जाता है

श्लोकार्थ—मनु, देवगण, मनु के पुत्र. देवराज, ऋषिगण और विष्णु का अंशावतार यह छह प्रकार का मन्वन्तर कहा जाता है ॥

षोडशः श्लोकः

राज्ञां ब्रह्मप्रसूतानां वंशस्त्रैकालिकोऽन्वयः ।
वंशानुचरितं तेषां वृत्तं वंशधराश्च ये ॥१६॥

पदच्छेद—

राज्ञाम् ब्रह्म प्रसूतानाम् वंशः त्रैकालिकः अन्वयः ।
वंशानुचरितम् तेषाम् वृत्तम् वंशधराः च ये ॥

शब्दार्थ—

राज्ञाम्	४.	राजाओं की	वंशनुचरितम्	१२.	वंशानुचरित कहलाता है
ब्रह्म	२.	ब्रह्मा से	तेषाम्	७.	उन राजाओं के
प्रसुतानाम्	३.	उत्पन्न	वृत्तम्	११.	चरित
वंशः	६.	वंश कहते हैं	वंशधराः	१०.	वंशधर हैं (उनका)
त्रैकालिकः	१.	तीनों काल में	च	८.	तथा
अन्वयः ।	५.	सन्तान परम्परा को	ये ॥	९.	जो

श्लोकार्थ—तीनों काल में ब्रह्मा से उत्पन राजाओं की सन्तान पराम्परा को वंश कहते हैं ! उन राजाओं के तथा जो वंशधर हैं । उनका चरित्र वंशानुचरित कहलाता है ॥

सप्तदशः श्लोकः

नैमित्तिकः प्राकृतिको नित्य आत्यन्तिको लयः ।
संस्थेति कविभिः प्रोक्ता चतुर्धास्य स्वभावतः ॥१७॥

पदच्छेद—

नैमित्तिकः प्राकृत्तिकः नित्य आत्यन्तिकः लयः ॥
संस्थेति कविभिः प्रोक्ता चतुर्धाः अस्य स्वभावतः ॥

शब्दार्थ—

नैमित्तिकः	४. नैमित्तिक	संस्थेति	१०. संस्था ऐसा
प्राकृत्तिकः	५. प्राकृतिक	कविभिः	८. विद्वानों ने
नित्य	६. नित्य	प्रोक्ता	११. कहा है
आत्यन्तिकः	७. आत्यन्तिक	चतुर्धाः	३. चार प्रकार का होता है
लयः ।	१. प्रलय	अस्य	९. इस समूह को
		स्वभावतः ॥	१ स्वभावतः

श्लोकार्थ—प्रलय स्वभावतः चार प्रकार का होता है, नैमित्तिक, प्राकृतिक, नित्य, आत्यन्तिक विद्वानों ने इस समूह को संस्था ऐसा कहा है ॥

अष्टादशः श्लोकः

हेतुर्जीवोऽस्य सर्गादेरविद्याकर्मकारकः ।
यं चनुशयिनं प्राहुरव्याकृतमुतापरे ॥१८॥

पदच्छेद—

हेतुः जीवः अस्य सर्गादेः अविद्या कर्मकारकः ।
यम् च अनुशयिनम् प्राहुः अव्याकृतम् उत अपरे ॥

शब्दार्थ—

हेतुः	३. हेतु	यम् च	७. उसे
जीवः	४. जीव कहलाता है	अनुशयिनम्	९. अनुशयी (प्रकृति में शयन करने वाला)
अस्य	१. इस	प्राहुः	१२. कहते हैं
सर्गादेः	२. सृष्टि आदि का	अव्याकृतम्	१०. अव्याकृत
अविद्या	५. ब्रह्म विद्यावश	उत	११. अथवा (प्रकृतिरूप)
कर्म कारकः ।	६. कर्म करने वाला है	अपरे ॥	८. दूसरे लोग

श्लोकार्थ—इस सृष्टि आदि का हेतु जीव कहलाता है। वह अविद्यावश कर्म करने वाला है, उसे दूसरे लोग अनुशयी प्रकृति में शयन करने वाला अथवा अव्याकृत प्रकृति रूप कहते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

व्यतिरेकान्वयो यस्य जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु ।
मायामयेषु तद् ब्रह्म जीववृत्तिष्वपाश्रयः ॥१९॥

पदच्छेद—

व्यातिरेक अन्वयः अस्य जाग्रत स्वप्न सुषुप्तिः ।
माया मयेषु तद् ब्रह्म जीव वृत्तिषु अपाश्रयः ॥

शब्दार्थ -

व्यतिरेक	३.	भेद	माया मयेषु	९	मायामय रूपों में प्रतीत होती है
अन्वयः	२.	सम्बन्ध और	तद्	१०.	वही
अस्य	१.	जिसका	ब्रह्म	११.	ब्रह्म है
जाग्रत	६.	जाग्रत	जीव	४.	जीव की
स्वप्न	७	स्वप्न और	वृत्तिषु	५.	वृत्तियों
सुषुप्तिः ।	८.	सुषुप्ति अवस्थाओं में	अपाश्रयः ॥	१२.	(उसको) असहाय कहते हैं

श्लोकार्थ—जिसका सम्बन्ध और भेद जीव की वृत्तियों जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओं में मायामय रूपों में प्रतीत होती है, वही ब्रह्म है। उसको असहाय कहते हैं ॥

विंशः श्लोकः

पदार्थेषु यथा द्रव्यं सन्मात्रं रूपनामसु ।
बीजादिपञ्चतान्तासु ह्यवस्थासु युतायुतम् ॥२०॥

पदच्छेद—

पदार्थेषु यथा द्रव्यम् सन्मात्रम् रूप नामसु ।
बीजादि पञ्चतान्तासु अवस्था सु युत अयुतम् ॥

शब्दार्थ—

पदार्थेषु	३.	पदार्थों पर विचार करने से	बीजादि	७.	उसी प्रकार बीज उत्पत्ति से लेकर
यथा	६.	रूप में जैसे सिद्ध होते हैं	पञ्चतान्तासु	८.	मृत्यु पर्यन्त
द्रव्यम्	५.	वस्तु के	अवस्थासु	९.	सभी अवस्थाओं में और
सन्मात्रम्	४.	वे सत्तामात्र	युत	१०.	ब्रह्म ही प्रतीत होता है
रूप	२.	रूप से युक्त	अयुतम् ॥	११.	वह उनसे पृथक भी है
नामसु ।	१.	नाम और			

श्लोकार्थ—नाम और रूप से युक्त पदार्थों पर विचार करने से वे सत्तामात्र वस्तु के रूप में जैसे सिद्ध होते हैं। उसी प्रकार बीज उत्पत्ति से लेकर मृत्युपर्यन्त सभी अवस्थाओं में ब्रह्म ही प्रतीत होता है और वह उनसे पृथक भी है ॥

एकविंशः श्लोकः

विरमेत यदा चित्तं हित्वा वृत्तित्रयं स्वयम् ।
योगेन वा तदाऽऽत्मानं वेदेहाया निवर्तते ॥२१॥

पदच्छेद —

विरमेत यदा चित्तम् हित्वा वृत्तित्रयम् स्वयम् ।
योगेन वा तदाऽऽत्मानम् वेद ईहयाः निवर्तते ।

शब्दार्थ—

विरमेत	८.	अलग हो जाता है	योगेन	५,	योगभ्यास के द्वारा
यदा	१.	जब	वा	४.	अथवा
चित्तम्	२.	चित्त	तदा	९.	तब
हित्वा	७.	छोड़कर	आत्मानम्	१०.	आत्मा को
वृत्तित्रयम्	६.	तीनों वृत्तियों को	वेद ईहया	११.	जान लेता है और वासनासे
स्वयम् ।	३.	स्वयम्	निवर्तते ॥	१२.	निवृत्त हो जाता है

श्लोकार्थ—जब चित्त स्वयम् अथवा योगाभ्यास के द्वारा तीनों वृत्तियों को छोड़कर अलग हो जाता है। तब आत्मा को जान लेता है और वासना से निवृत्त हो जाता है।

द्वाविंशः श्लोकः

एवंलक्षणलक्ष्याणि पुराणानि पुराविदः ।
मुनयोऽष्टादश प्राहुः क्षुल्लकानि महान्ति च ॥२२॥

पदच्छेद—

एवम् लक्षण लक्ष्याणि पुराणानि पुराविदः ।
मुनयः अष्टादश प्राहुः क्षुल्लकानि महान्ति च ॥

शब्दार्थ—

एवम्	३.	इस प्रकार के	मुनयः	२.	विद्वान लोग
लक्षण	४.	लक्षणों से	अष्टादश	९.	अठारह
लक्ष्याणि	५.	युक्त	प्राहुः	१०.	बतलाते हैं
पुराणानि	८.	पुराणों की संख्या	क्षुल्लकानि	६.	छोटे और
पुराविदः ।	१.	पुरावेत्ता	महान्ति च ॥	७.	बड़े

श्लोकार्थ—पुरावेता विद्वान लोग इस प्रकार के लक्षणों से युक्त छोटे और बड़े पुराणों की संख्या अठारह बतलाते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च शैवं लैङ्गं सगारुडम् ।
नारदीयं भागवतमाग्नेयं स्कान्दसंज्ञितम् ॥२३॥

पदच्छेद—

ब्राह्मम् पाद्मम् वैष्णवम् च शैवम् लैङ्गम् सगारुडम् ।
नारदीयम् भागवतम् आग्नेयम् स्कान्द संज्ञितम् ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मम्	२, ब्रह्म पुराण	नारदीयम्	८. नारद पुराण
पाद्मम्	३. पद्म पुराण	भागवतम्	९. भागवत पुराण
वैष्णवम्	४. विष्णु पुराण	आग्नेयम्	१०. अग्नि पुराण (तथा)
च शैवम्	५. और शिव पुराण	स्कान्द	११. स्कन्द पुराण
लैङ्गम्	६. लिङ्ग पुराण	संज्ञितम् ॥	१. उनके नाम ये हैं
स गारुडम् ।	७. गरुड़ पुराण		

श्लोकार्थ—उनके नाम ये हैं । ब्रह्म पुराण, पद्म पुराण, विष्णु और शिव-पुराण, लिङ्ग पुराण, गरुड पुराण, नारद पुराण, भागवत पुराण, तथा स्कन्दपुराण हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

भविष्यं ब्रह्मवैवर्तं मार्कण्डेयं सवामनम् ।
वाराहं मात्स्यं कौर्मं च ब्रह्माण्डाख्यमिति त्रिषट् ॥२४॥

पदच्छेद—

भविष्यम् ब्रह्म वैवर्तम् मार्कण्डेयम् सवामनम् ॥
वाराहम् मात्स्यम् कौर्मम् च ब्रह्माण्ड आख्यम् इति त्रिषट् ।

शब्दार्थ—

भविष्यम्	१, भविष्य पुराण	कौर्मम्	७. कूर्म पुराण
ब्रह्म वैवर्तम्	२. ब्रह्मवैवर्त पुराण	च	८. और
मार्कण्डेय	३. मार्कण्डेय पुराण	ब्रह्माण्ड	९. ब्रह्माण्ड पुराण
सवामनम् ।	४. वामन पुराण	आख्यम्	१०. नामक
वाराहम्	५. वाराह पुराण	इति	११. ये
मात्स्यम्	६. मत्स्य पुराण	त्रिषट् ॥	१२. अठारह पुराण हैं

श्लोकार्थ—भविष्य पुराण, ब्रह्मवैवर्त पुराण, मार्कण्डेय पुराण, वामन पुराण, वाराह पुराण, मत्स्य पुराण, कूर्म पुराण और ब्रह्माण्ड पुराण नामक ये अठारह पुराण हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

ब्रह्मन्निदं समाख्यातं शाखाप्रणयनं मुनेः ।
शिष्यशिष्यप्रशिष्याणां ब्रह्मतेजोविवर्धनम् ॥२५॥

पदच्छेद—

ब्रह्मन् इदम् समाख्यातम् शाखा प्रणयनम् मुनेः ।
शिष्य शिष्य प्रशिष्याणाम् ब्रह्म तेजः विवर्धनम् ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मन्	१.	ब्रह्मन्	शिष्य	४.	शिष्यों के
इदम्	२.	यह	शिष्य	५.	शिष्य और
समाख्यातम्	६.	बताया है जो	प्रशिष्याणाम्	६.	शिष्य परम्परा के द्वारा
शाखा	७.	शाखाओं का	ब्रह्म	१०.	ब्रह्म
प्रणयनम्	८.	निर्माण	तेजः	११.	तेज को
मुनेः ।	३.	व्यास जी के	विवर्धनम् ॥	१२.	बढ़ाने वाला है ।

श्लोकार्थ—ब्रह्मन् यह व्यास जी के शिष्यों के शिष्य और शिष्य परम्परा के द्वारा शाखाओं का निर्माण बताया है, जो ब्रह्म तेज को बढ़ाने वाला है ॥

श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे
सप्तमः अध्यायः ॥७॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वादशः स्कन्धः

अष्टमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

शौनक उवाच—सूत जीव चिरं साधो वद नो वदतां वर ।
तमस्यपारे भ्रमतां नृणां त्वं पारदर्शनः ॥१॥

पदच्छेद—

सूत जीव चिरम् साधो वदनः वदताम् वर ।
तमस्य पारे भ्रमताम् नृणाम् त्वम् पार दर्शनः ॥

शब्दार्थ—

सूत	३.	सूत जी (आप)	तमस्य पारे	६.	अपार अन्धकार में
जीव	५.	जियें	भ्रमताम्	७.	भटकते हुये
चिरम्	४.	चिरकाल तक	नृणाम्	८.	लोगों को
साधो	२.	महात्मन्	त्वम्	९.	आप
वद नः	१२.	हमे (एक बात बतायें)	पार	१०.	किनारा
वदताम् वर ।	१.	वक्ताओं में श्रेष्ठ	दर्शनः ॥	११.	दिखाने वाले हैं

श्लोकार्थ—वक्ताओं में श्रेष्ठ महात्मन् सूत जी आप चिरकाल तक जियें। अपार अन्धकार में भटकते हुये लोगों को आप किनारा दिखाने वाले हैं॥

द्वितीयः श्लोकः

आहुश्चिरायुषमृषिं मृकण्डतनयं जनाः ।
यः कल्पान्ते उर्वरितो येन ग्रस्तमिदं जगत् ॥२॥

पदच्छेद—

आहु चिरायुषम् ऋषिम् मृकन्ड तनयम् जनाः ।
यः कल्पान्ते उर्वरितः येन ग्रस्तम् इदम् जगत् ॥

शब्दार्थ—

आहु	६.	कहते हैं	यः	७.	जो
चिरायुषम्	५.	चिराय	कल्पान्ते	८.	कल्प के अन्त में
ऋषिम्	४.	मार्कण्डेय ऋषि को	उर्वरितः	९.	बचे रहे
मृकन्ड	२.	मृकन्ड ऋषि के	येन	१०.	जिस (प्रलय) ने
तनयम्	३.	पुत्र	ग्रस्तम्	१२.	निगल लिया था
जनाः ।	१.	लोग	इदम् जगत् ॥	११.	इस जगत् को

श्लोकार्थ—लोग मृकन्ड ऋषि के पुत्र मार्कण्डेय ऋषि को चिरायु कहते हैं। जो कल्प के अन्त में बचे रहे। जिस प्रलय ने इस जगत को निगल लिया था।

तृतीयः श्लोकः

स वा अस्मत्कुलोत्पन्नः कल्पेऽस्मिन् भार्गवर्षभः।
नैवाधुनापि भूतानां सम्प्लवः कोऽपि जायते ॥३॥

पदच्छेद—

स वै अस्मत् कुल उत्पन्नः कल्पे अस्मिन् भार्गव ऋषभः।
न एव अधुनापि भूतानाम् सम्प्लवः कः अपि जायते ॥

शब्दार्थ—

स वै	१. वे निश्चित रूप से	न एव	११. नहीं
अस्मत्	४. हमारे	अधुनापि	७. अब-तक
कुल उत्पन्नः	५. कुल में उत्पन्न हुये	भूतानाम्	८. प्राणियों का
कल्पे	३. कल्प में	सम्प्लवः	१०. प्रलय
अस्मिन्	२. इस	कः अपि	९. कोई भी
भार्गव ऋषभः।	६. एक श्रेष्ठ भृगु वंशी हैं	जायते ॥	१२. हुआ है

श्लोकार्थ—वे निश्चित रूप से इस कल्प में हमारे कुल में उत्पन्न हुये एक श्रेष्ठ भृगुवंशी हैं। अब-तक प्राणियों का कोई भी प्रलय नहीं हुआ है ॥

चतुर्थः श्लोकः

एक एवार्णवे भ्राम्यन् ददर्श पुरुषं किल।
वटपत्रपुटे तोकं शयानं त्वेकमद्भुतम् ॥४॥

पदच्छेद—

एक एव अर्णवे भ्राम्यन् ददर्श पुरुषम् किल।
वट पत्र पुटे तोकम् शयानम् तु एकम् अद्भुतम् ॥

शब्दार्थ—

एक	१. एक	वटपत्र	४. अक्षय वट के
एव अर्णवे	२. ही बने हुये समुद्र में	पुटे	५. पत्ते के दोने में
भ्राम्यन्	३. चक्कर काटते हुये	तोकम्	१०. बालमुकुन्द को
ददर्श	१२. देखा	शयानम्	७. सोये हुये
पुरुषम्	९. पुरुष	तु एकम्	६. अकेले
किल।	१०. खेलते हुये	अद्भुतम् ॥	८. अद्भुत

श्लोकार्थ—एक ही बने हुये समुद्र में चक्कर काटते हुये मार्कण्डेजी ने अक्षयवट के पत्ते के दोनों में अकेले सोये हुये अद्भुत परुष बालमुकुन्द को देखा ॥

पञ्चमः श्लोकः

एष नः संशयो भूयान् सूत कौतूहलं यतः ।
तं नश्छिन्धि महायोगिन् पुराणेष्वपि सम्मतः ॥५॥

पदच्छेद—

एषः नः संशयः भूयान् सूतकौतूहलम् यतः ।
तम् नः छिन्धिः महायोगिन् पुराणेषु अपि सम्मतः ॥

शब्दार्थ—

एषः नः	२.	यह हमारा	तम् नः	७.	हमारे इस सन्देह को
संशयः	४.	सन्देह	छिन्धिः	८	मिटा दीजिये
भूयान्	३.	बड़ा	महायोगिन्	९.	हे महायोगी !
सूत	१	सूत जी	पुराणेषु	१०.	आप पौराणिकों में
कौतूहलम्	६.	उत्कण्ठा है	अपि	११.	भी
यतः ।	५	और इसे जानने की	सम्मतः ॥	१२.	सम्मानित हैं

श्लोकार्थ—हे सूत जी ! यह हमारा बड़ा सन्देह है । और इसे जानने की उत्कण्ठा है । हमारे सन्देह को मिटा दीजिये । हे महा योगी ! आप पौराणिकों में भी सम्मानित हैं ।

षष्ठः श्लोकः

प्रश्नस्त्वया महर्षेऽयं कृतो लोकभ्रमापहः ।
नारायणकथा यत्र गीता कलिमलापहा ॥६॥

पदच्छेद—

प्रश्नः त्वया महर्षे अयम् कृतः लोकभ्रम आपहः ।
नारायण कथा यत्र गीता कलिमल आपहः ॥

शब्दार्थ—

प्रश्नः	४.	प्रश्न	नारायण	१०.	नारायण की
त्वया	२.	आपका	कथा	११.	कथा
महर्षे अयम्	१.	शौनक जी यह	यत्र	७.	जिसमें
कृतः	३.	किया हुआ	गीता	१२.	गायी गई है
लोकभ्रम	५.	लोगों का भ्रम	कलिमल	८.	कलि के मल को
आपहः ।	६.	मिटाने वाला है	आपहः ॥	९.	नष्ट करने वाली

श्लोकार्थ—शौनक जी यह आपका किया हुआ प्रश्न लोगों का भ्रम मिटाने वाला है । जिसमें कलि के मल को नष्ट करने वाली नारायण की कथा गायी गयी है ॥

सप्तमः श्लोकः

प्राप्तद्विजातिसंस्कारो मार्कण्डेयः पितुः क्रमात् ।
छन्दांस्यधीत्य धर्मेण तपः स्वाध्यायसंयुतः ॥७॥

पदच्छेद—

प्राप्त द्विजाति संस्कारः मार्कण्डेयः पितुः क्रमात् ।
छन्दांसि अधीत्य धर्मेण तपः स्वाध्याय संयुतः ॥

शब्दार्थ—

प्राप्त	६. प्राप्त करके	छन्दांसि	८. वेदों का
द्विजाति	४. ब्राह्मण का	अधीत्य	९. अध्ययन करके
संस्कारः	५. संस्कार	धर्मेण	७. धर्म पूर्वक
मार्कण्डेयः	१. मार्कण्डेय मुनि	तपः	१०. तपस्या और
पितुः	२. पिता के द्वारा	स्वाध्याय	११. स्वाध्याय से
क्रमात् ।	३. क्रमानुसार	संयुतः ॥	१२. सम्पन्न हो गये

श्लोकार्थ—मार्कण्डेय मुनि पिता के द्वारा क्रमानुसार ब्राह्मण का संस्कार प्राप्त करके और धर्म पूर्वक वेदों का अध्ययन करके तपस्या और स्वाध्याय से सम्पन्न हो गये ॥

अष्टमः श्लोकः

बृहद्व्रतधरः शान्तो जटिलो वल्कलाम्बरः ।
बिभ्रत् कमण्डलुं दण्डमुपवीतं समेखलम् ॥८॥

पदच्छेद—

बृहत् व्रतधरः शान्तः जटिलः वल्कल अम्बरः ।
बिभ्रत् कमण्डलुम् दण्डम् उपवीतम् स मेखलम् ॥

शब्दार्थ—

बृहत्	१. वे महान	बिभ्रत	११. धारण करने वाले थे
व्रतधरः	२. व्रतधारी	कमण्डलुम्	१०. कमण्डल
शान्तः	३. शान्त	दण्डम्	९. दण्ड
जटिलः	४. जटाधारी	उपवीतम्	८. यज्ञोपवीत और
वल्कल	५. वल्कल	समेखलम् ॥	७. मेखला सहित
अम्बरः ।	६. वस्त्र पहिनने वाले		

श्लोकार्थ—वे महान् व्रतधारी, शान्त, जटाधारी वल्कल वस्त्र पहिनने वाले, मेखला सहित यज्ञोपवीत और दण्ड कमण्डल धारण करने वाले थे ॥

नवमः श्लोकः

कृष्णाजिनं साक्षसूत्रं कुशांश्च नियमर्द्धये ।
अग्न्यर्कगुरुविप्रात्मस्वर्चयन् सन्ध्ययोर्हरिम् ॥९॥

पदच्छेद—

कृष्ण अजिनम् स अक्ष सूत्रम् कुशान् च नियम ऋद्धये ।
अग्नि अर्क गुरु विप्र आत्मसु अर्चयन् सन्ध्ययोः हरिम् ॥

शब्दार्थ—

कृष्ण	३.	उन्होंने काला	अग्नि अर्क	८.	अग्नि-सूर्य
अजिनम्	४.	मृगचर्म	गुरुविप्र	९.	गुरु ब्रह्मण और
स अक्षसूत्रम्	५.	और रुद्राक्ष की माला	आत्मसु	१०.	आत्मा में
कुशान् च	६.	तथा कुश धारण किये	अर्चयन्	१२.	अर्चना करते थे
नियम्	१.	व्रत की	सन्ध्ययोः	७.	सायं काल और प्रातःकाल
ऋद्धये ।	२.	सम्पन्नता के लिये	हरिम् ।	११.	श्री हरि का

श्लोकार्थ—व्रत की सम्पन्नता के लिये उन्होंने काला मृग चर्म और रुद्राक्ष की माला तथा कुश धारण किये सायंकाल; और प्रातःकाल अग्नि-सूर्य, गुरु, ब्राह्मण और आत्मा में श्री हरि की अर्चना करते थे ॥

दशमः श्लोकः

सायं प्रातः स गुरवे भैक्ष्यमाहृत्य वाग्यतः ।
बुभुजे गुर्वनुज्ञातः सकृन्नो चेदुपोषितः ॥१०॥

पदच्छेद—

सायं-प्रातः सः गुरवे भैक्ष्यम् आहृत्य वाग्यतः ।
बुभुजे गुरु अनुज्ञातः सकृत् नोचेत् उपोषितः ॥

शब्दार्थ—

सायं-प्रातः	२.	सायंकाल और प्रातःकाल	बुभुजे	१०.	भोजन करते
सः	१.	वे	गुरु	७.	गुरु की
गुरवे	६.	गुरुदेव को समर्पित कर देते	अनुज्ञातः	८.	आज्ञा से
भैक्ष्यम्	३.	भिक्षा	सकृत्	९.	एक बार
आहृत्य	४.	लेकर	नोचेत्	११.	अन्यथा
वाग्यतः ।	५	मौन हो जाते थे और	उपोषितः ॥	१२.	उपवास कर जाते थे

श्लोकार्थ—वे सायं काल और प्रातः काल भिक्षा लेकर मौन हो जाते थे । और गुरु की आज्ञा से भोजन करते, अन्यथा उपवास करते थे ॥

एकादशः श्लोकः

एवं तपःस्वाध्यायपरो वर्षाणामयुतायुतम् ।
आराधयन् हृषीकेशं जिग्ये मृत्युं सुदुर्जयम् ॥११॥

पदच्छेद—

एवम् तपः स्वाध्याय परः वर्षाणाम् अयुत अयुतम् ।
आराधयन् हृषीकेशम् जिग्ये मृत्युम् सुदुर्जयम् ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	आराधयन् परः	८.	आराधना करते हुये
तपः	५.	तपस्या और	हृषीकेशम्	७.	भगवान की
स्वाध्याय परः	६.	स्वाध्याय परायण	जिग्ये	११.	जीत लिया
वर्षाणाम्	४.	वर्षों तक	मृत्युम्	१०.	मृत्यु को
अयुत	३.	करोड़	सुदुर्जयम् ॥	९.	अत्यन्त दुर्जय
अयुतम् ।	२.	करोड़ों			

श्लोकार्थ—इस प्रकार करोड़ो-करोड़ वर्षों तक तपस्या और स्वाध्याय परायण भगवान् की आराधना करते हुये अत्यन्त दुर्जय मृत्यु को जीत लिया ॥

द्वादशः श्लोकः

ब्रह्मा भृगुर्भवो दक्षो ब्रह्मपुत्राश्च ये परे ।
नृदेवपितृभूतानि तेनासन्नतिविस्मिताः ॥१२॥

पदच्छेद—

ब्रह्मा भृगुः भवः दक्षः ब्रह्म पुत्राः च ये परे ।
नृदेव पितृ भूतानि तेन आसन् अति विस्मिताः ॥

शब्दार्थ—

ब्रह्मा	१.	ब्रह्मा	नृदेव	७.	मनुष्य देवता
भृगुः	२.	भृगु	पितृ	८.	पितर तथा
भवः	३.	शङ्कर	भूतानि	९.	सभी प्राणी
दक्षः	४.	दक्ष प्रजापतिः और	तेन	१०.	उस (मृत्यु विजय) से
ब्रह्मपुत्राः	६.	ब्रह्मा के पुत्र थे वे	आसन्	१२.	हो गये
चये पराः ।	५.	जो दूसरे	अतिविस्मिताः ॥	११.	अत्यन्त विस्मित

श्लोकार्थ—ब्रह्मा, भृगु, शङ्कर, दक्ष प्रजापतिः और जो दूसरे ब्रह्मा के पुत्र थे, वे मनुष्य, देवता, पितर, तथा सभी प्राणी उस मृत्यु विजय से अत्यन्त विस्मित हो गये ॥

त्रयोदशः श्लोकः

इत्थं बृहद्व्रतधरस्तपः स्वाध्यायसंयमैः ।
दध्यावधोक्षजं योगी ध्वस्तक्लेशान्तरात्मना: ॥१३॥

पदच्छेद—

इत्थम् बृहत् व्रतधरः तपः स्वाध्याय संयमैः ।
दध्यौ अधोक्षजम् योगी ध्वस्त क्लेशान्तः आत्मना: ॥

शब्दार्थ—

इत्थम्	१.	इस प्रकार	दध्यौ	१२.	ध्यान करने लगे
बृहत्	२.	महान्	अधोक्षजम्	११.	इन्द्रियातीत भगवान् का
व्रतधरः	३.	व्रतधारी	योगी	४.	योगी (मार्कण्डेय जी)
तपः	५.	तपस्या	ध्वस्त	८.	नष्ट
स्वाध्याय	६.	स्वाध्याय और	क्लेशान्तः	९.	क्लेशवाले
संयमैः ।	७.	संयम के द्वारा	आत्मना: ॥	१०.	अन्तःकरण से

श्लोकार्थ—इस प्रकार महान् व्रतधारी योगी मार्कण्डेय जी तपस्या, स्वाध्याय और संयम के द्वारा नष्ट क्लेशवाले अन्तःकरण से इन्द्रियातीत भगवान् का ध्यान करने लगे ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्यैवं युञ्जतश्चित्तं महायोगेन योगिनः ।
व्यतीयाय महान् कालो मन्वन्तरषडात्मकः ॥१४॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् युञ्जतः चित्तम् महायोगेन योगिनः ।
व्यतीयाय महान् कालः मन्वन्तर षडात्मकः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	६.	मार्कण्डेय जी का	व्यतीयाय	११.	बीत गया
एवम्	१.	इस प्रकार	महान्	७.	बहुत सा
युञ्जतः	४.	भगवान् में जोड़ते हुये	कालः	८.	समय
चित्तम्	३.	चित्त को	मन्वन्तर	१०.	मन्वन्तर रूप
महायोगेन	२.	महायोग के द्वारा	षडात्मकः ॥	९.	छः
योगिनः ।	५.	योगी			

श्लोकार्थ—इस प्रकार महायोग के द्वारा चित्त को भगवान् में जोड़ते हुये योगी मार्कण्डेय जी का बहुत सा समय छः मन्वन्तर रूप बीत गया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

एतत् पुरन्दरो ज्ञात्वा सप्तमेऽस्मिन् किलान्तरे ।
तपोविशङ्कितो ब्रह्मन्नारेभे तद्विघातनम् ॥१५॥

पदच्छेद—

एतत् पुरन्दरः ज्ञात्वा सप्तमे अस्मिन् किल अन्तरे ।
तपः विशङ्कितः ब्रह्मन् आरेभे तत् विघातनम् ॥

शब्दार्थ—

एतत्	६.	यह	तपः	८.	उनकी तपस्या से
पुरन्दरः	५.	इन्द्र ने	विशङ्कितः	९.	शंङ्कित होकर
ज्ञात्वा	७.	जानकर	ब्रह्मन्	१.	ब्रह्मन् !
सप्तमे	३.	सातवें	आरेभे	१२.	आरम्भ किया
अस्मिन् किल	२.	कहते हैं कि इस	तत्	१०.	तप में
अन्तरे ।	४	मन्वन्तर में	विघातनम् ॥	११.	विघ्न डालना

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! कहते हैं कि इस सातवें मन्वन्तर में इन्द्र ने यह जानकर उनकी तपस्या से शंकित होकर तप में विघ्न डालना आरम्भ किया ॥

षोडशः श्लोकः

गन्धर्वाप्सरसः कामं वसन्तमलयानिलौ ।
मुनये प्रेषयामास रजस्तोकमदौ तथा ॥१६॥

पदच्छेद—

गन्धर्व अप्सरसः कामम् वसन्त मलय अनिलौ ।
मुनये प्रेषयामास रजस्तोकः अदौ तथा ॥

शब्दार्थ—

गन्धर्व	१.	इन्द्र ने गन्धर्व	मुनये	१०.	मुनि के (तप में विघ्न डालने के लिये)
अप्सरसः	२.	अप्सरायें	प्रेषयामास	१०.	भेजा
कामम्	३.	काम	रजस्तोकः	७.	लोभ
वसन्त	४.	वसन्त	अदौ	९.	मद को
मलय	५.	मलय और	तथा ॥	८.	तथा
अनिलौ ।	६.	अनिल			

श्लोकार्थ—इन्द्र ने गन्धर्व, अप्सरायें, काम, वसन्त, मलय और अनिल, लोभ तथा मद को मुनि के तप में विघ्न डालने के लिये भेजा ॥

सप्तदशः श्लोकः

ते वै तदाश्रमं जग्मुर्हिमाद्रेः पार्श्व उत्तरे ।
पुष्पभद्रा नदी यत्र चित्राख्या च शिला विभो ॥१७॥

पदच्छेद—

ते वै तत् आश्रमम् जग्मुः हिमाद्रेः पार्श्व उत्तरे ।
पुष्पभद्रा नदी यत्र चित्रा आख्या च शिला विभो ॥

शब्दार्थ—

ते वै	२.	वे लोग	पुष्पभद्रा	१०.	पुष्प भद्रा नाम की
तत्	३.	उनके	नदी	११.	नदी बहती है और
आश्रमम्	४.	आश्रम में	यत्र	६.	जहाँ
जग्मुः	५.	गये जो	चित्रा	१२.	चित्रा
हिमाद्रेः	६.	हिमालय के	आख्या च	१३.	नाम की
पार्श्व	८.	और स्थित था	शिला	१४.	एक शिला है
उत्तरे ।	७.	उत्तर की	विभो ॥	१.	हे प्रभो !

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! वे लोग उनके आश्रम में गये जो हिमालय के उत्तर की ओर स्थित था । जहाँ पुष्पभद्रा नाम की नदी बहती है । और चित्रा नाम की एक शिला है ॥

अष्टादशः श्लोकः

तदाश्रमपदं पुण्यं पुण्यद्रुमलताश्चितम् ।
पुण्यद्विजकुलाकीर्णं पुण्यामलजलाशयम् ॥१८॥

पदच्छेद—

तत् आश्रम पदम् पुण्यम् पुण्यद्रुम लतान् चितम् ।
पुण्य द्विज कुल आकीर्णम् पुण्य अमल जलाशयम् ॥

शब्दार्थ—

तत्	१.	उनका	पुण्य	१०.	पुण्यात्मा
आश्रम	२.	आश्रम	द्विजकुल	११.	ऋषिगणों से
पदम्	३.	स्थान	आकीर्णम्	१२.	व्याप्त है
पुण्यम्	४.	पवित्र है और	पुण्य	६.	पवित्र
पुण्यद्रुम् लतान्	५.	पवित्र वृक्षों लताओं एवम्	अमल	७.	निर्मल
चितम् ।	६.	युक्त तथा	जलाशयम् ॥	८.	जलाशयों से

श्लोकार्थ—उनका आश्रम, स्थान पवित्र है । और पवित्र वृक्षों, लताओं एवम् पवित्र निर्मल जलाशयों से युक्त तथा पुण्यात्मा ऋषिगणों से व्याप्त है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

मत्तभ्रमरसङ्गीतं मत्तकोकिलकूजितम् ।
मत्तबर्हिनटाटोपं मत्तद्विजकुलाकुलम् ॥१९॥

पदच्छेद—

मत्त भ्रमर संङ्गीतम् मत्त कोकिल कूजितम् ।
मत्तबर्हि नट आटोपम् मत्त द्विज कुलम् आकुलम् ॥

शब्दार्थ—

मत्त	१.	वहाँ मतवाले	मत्त	७.	मतवाले
भ्रमर	२.	भौंरें	बर्हि	८.	मयूर
संङ्गीतम्	३.	गूंज रहें थे	नट आटोपम्	९.	कलापूर्ण नृत्य कर रहे थे
मत्त	४.	मतवाले	मत्त	१०.	और मतवाले
कोकिल	५.	कोकिल	द्विज कुल	११.	पक्षियों का झुंड
कूजितम् ।	६.	कूक रहे थे	आकुलम् ॥	१२.	खेलता रहता था

श्लोकार्थ—वहाँ मतवाले भौरें गूंज रहे थे, मतवाले कोकिल कूक रहे थे । मतवाले मयूर कला पूर्ण नृत्य कर रहे थे, और मतवाले पक्षियों का झुन्ड खेलता रहता था ॥

विंशः श्लोकः

वायुः प्रविष्ट आदाय हिमनिर्झरशीकरान ।
सुमनोभिः परिष्वक्तो ववावुत्तम्भयन् स्मरम् ॥२०॥

पदच्छेद—

वायुः प्रविष्ट आदाय हिम निर्झर शीकरान् ।
सुमनोभिः परिष्वक्तः ववो उत्तम्भयन् स्मरम् ॥

शब्दार्थ—

वायुः	५.	वायु ने	सुमनोभिः	७.	फिर वह (सुगन्धित) पुष्पोंसे
प्रविष्ट	६.	प्रवेश किया	परिष्वक्तः	८.	आलिङ्गित होकर
आदाय	४.	लेकर	ववो	११.	बहने लगा
हिम	१.	वहाँ शीतल	उत्तम्भयन्	१०.	उत्तेजित करते हुये
निर्झर	२.	झरनों के	स्मरम् ॥	९.	कामभाव को
शीकरान् ।	३.	जलकणों (फुहारों) को			

श्लोकार्थ—वहाँ शीतल झरनों के जलकणों (फुहारों) को लेकर वायु ने प्रवेश किया फिर वह सुगन्धित पुष्पों से आलिङ्गित होकर काम-भाव को उत्तेजित करते हुये बहने लगा ॥

एकविंशः श्लोकः

उद्यच्चन्द्रनिशावक्त्रः प्रवालस्तबकालिभिः ।
गोपद्रुमलताजालैस्तत्रासीत् कुसुमाकरः ॥२१॥

पदच्छेद—

उद्यत् चन्द्र निशावक्त्रः प्रवाल स्तबक आलिभिः ।
गोपद्रुम लता जालैः तत्र आसीत् कुसुमाकरः ॥

शब्दार्थ—

उद्यत्	२.	उगते हुये	गोपद्रुम्	८.	सहस्र डालियों वाले वृक्षों एवं
चन्द्र	३.	चन्द्रमा से युक्त	लता	९.	लता
निशावक्त्रः	४.	सायंकाल वाला (तथा)	जालैः	१०.	जालों से शोभित
प्रवाल	५.	नये पल्लवों और	तत्र	१.	वहाँ
स्तबक	६.	गुच्छों के	आसीत्	१२.	आ गया
आलिभिः ।	७	समूहों से युक्त	कुसुमाकरः ॥	११.	वसन्त

श्लोकार्थ—वहाँ उगते हुये चन्द्रमा से युक्त सायंकाल वाला तथा नये पल्लवों और गुच्छों के समूहों से युक्त सहस्र डालियों वाले वृक्षों एवं लता जालों से शोभित वसन्त आ गया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

अन्वीयमानो गन्धर्वैर्गीतवादित्रयूथकैः ।
अदृश्यतात्तचापेषुः स्वःस्त्रीयूथपतिः स्मरः ॥२२॥

पदच्छेद—

अन्वीयमानः गन्धर्वैः गीत वादित्र यूथकैः ।
अदृश्यत आत्तचापेषु स्वः स्त्रीयूथ पतिः स्मरः ॥

शब्दार्थ—

अन्वीयमानः	११.	अनुसरण कर रहे थे	अदृश्यत	६.	दिखाई पड़ा (उसका)
गन्धर्वैः	९.	गन्धर्वों के	आत्त	२.	लिये हुये
गीत	७.	गाने	चापेषु	१.	फिर हाथ में धनुष और वाण
वादित्र	८.	बजाने वाले	स्वः	३.	स्वर्ग की
यूथकैः ।	१०.	झुन्ड	स्त्रीयूथ पतिः	४.	अप्सराओं का पति
			स्मरः ॥	५.	काम देव

श्लोकार्थ—फिर हाथ में धनुष और वाण लिये हुये स्वर्ग की अप्सराओं का पति कामदेव दिखाई पड़ा । उसका गाने बजाने वाले गन्धर्वों के झुन्ड अनुसरण कर रहे थे ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

हुत्वाग्निं समुपासीनं ददृशुः शक्रकिङ्कराः ।
मीलिताक्षं दुराधर्षं मूर्तिमन्तमिवानलम् ॥२३॥

पदच्छेद—

हुत्वा अग्निम् सम् उपासीनम् ददृशुः शक्र किङ्कराः ।
मीलिताक्षम् दुराधर्षम् मूर्तिमन्तम् इव अनलम् ॥

शब्दार्थ—

हुत्वा	२.	हवन करके	मीलित	८.	बन्द करके
अग्निम्	१.	अग्नि में	अक्षम्	७.	नेत्र
सम उपासीनम्	९.	उपासना करते हुये	दुराधर्षम्	६.	अत्यन्त तेजस्वी मुनि को
ददृशुः	१२.	देखा	मूर्तिमन्तम्	३.	मूर्तिमान
शक्र	१०.	इन्द्र के	इव	५.	समान
किङ्कराः ।	११.	सेवकों ने	अनलम् ।	४.	अग्नि के

श्लोकार्थ—अग्नि में हवन करके मूर्तिमान अग्नि के समान अत्यन्त तेजस्वी मुनि को नेत्र बन्द करके उपासना करते हुये इन्द्र के सेवकों ने देखा ।।

चतुर्विंशः श्लोकः

नन्तृतुस्तस्य पुरतः स्त्रियोऽथो गायका जगुः ।
मृदङ्गवीणापणवैर्वाद्यं चक्रुर्मनोरमम् ॥२४॥

शब्दार्थ—

ननृतुः तस्य पुरतः स्त्रियः अथो गायका जगुः ।
मृदङ्ग वीणा पणावैः वाद्यम् चक्रुः मनोरथम् ॥

शब्दार्थ—

ननृतुः	५.	नाचनें लगीं और	मृदङ्ग	७.	तथा मृदङ्ग
तस्य	३.	उनके	वीणा	८.	वीणा
पुरतः	४.	आगे	पणवैः	९.	ढोल आदि
स्त्रियः	२.	अप्सरायें	वाद्यम्	१०.	बाजे
अथो	१.	अब	चक्रुः	१२.	बजने लगे
गायकाः जगुः ।	६.	गन्धर्व गाने लगे	मनोरथम् ॥	११.	मनोहर स्वर में

श्लोकार्थ—अब अप्सरायें उनके आगे नाचनें लगीं और गन्धर्व गाने लगे । तथा मृदङ्ग, वीणा, ढोल बाजे मनोहर स्वर में बजने लगे ।।

पञ्चविंशः श्लोकः

सन्दधेऽस्त्रं स्वधनुषि कामः पञ्चमुखं तदा ।
मधुर्मनो रजस्तोक इन्द्रभृत्या व्यकम्पयन् ॥२५॥

पदच्छेद—

सन्दधे अस्त्रम् स्वधनुषि कामः पञ्च मुखम् तदा ।
मधुः मनः रजस्तोक इन्द्र भृत्या व्यकम्पयन् ॥

शब्दार्थ—

सन्दधे	६.	चढ़ाया और	मधुः	६.	बसन्त तथा
अस्त्रम्	५.	वाण	मनः	११.	(मुनि के) मन को
स्वधनुषि	३.	अपने धनुष पर	रजस्तोक	१०.	लोभ
कामः	२.	कामदेव ने	इन्द्र	७.	इन्द्र के
पञ्चमुखम्	४.	पञ्चमुख	भृत्या	८.	सेवक
तदा ।	१.	तब	व्यकम्पयन् ॥	१२.	विचलित करने लगे

श्लोकार्थ—तब कामदेव ने अपने धनुष पर पञ्चमुख वाण चढ़ाया और इन्द्र के सेवक बसन्त तथा लोभ मुनि के मन को विचलित करने लगे ॥

षट्विंशः श्लोकः

क्रीडन्त्याः पुञ्जिकस्थल्याः कन्दुकैः स्तनगौरवात् ।
भृशमुद्विग्नमध्यायाः केशविस्रंसितस्रजः ॥२६॥

पदच्छेद—

क्रीडन्त्याः पुञ्जिकस्थल्याः कन्दुकैः स्तन गौरवात् ।
भृशम् उद्विग्न मध्यायाः केश विस्रंसित स्रजः ॥

शब्दार्थ—

क्रीडन्त्याः	२.	क्रीडा करती हुई	भृशम्	७.	बार-बार
पुञ्जिकस्थल्याः	३.	पुञ्जिकस्थली नामक अप्सरा की	उद्विग्न	८.	लचक जाया करती थी
कन्दुकैः	१.	गेदों से	मध्यायाः	४.	कमर
स्तन	५.	कुचों के	केश	९.	और वालों से
गौरवात् ।	६.	भार से	विस्रंसित	११.	गिरती जा रहीं थी
			स्रजः ॥	१०.	पुष्प मालायें

श्लोकार्थ—गेदों से क्रीडा करती हुई पुञ्जिकस्थली नामक अप्सरा की कमर कुचों के भार से बारम्बार लचक जाया करती थी । और बालों से पुष्प मालायें गिरती जा रही थीं ।

सप्तविंशः श्लोकः

इतस्ततोभ्रमद्दृष्टेश्चलन्त्या अनुकन्दुकम् ।
वायुर्जहार तद्वासः सूक्ष्मं त्रुटितमेखलम् ॥२७॥

पदच्छेद—

इतः ततः भ्रमद् दृष्टेः चलन्त्या अनुकन्दुकम् ।
वायुः जहार तत् वासः सूक्ष्मम् त्रुटित मेखलम् ॥

शब्दार्थ—

इतः ततः	३. इधर-उधर	जहार	१२. शरीर से अलग कर दिया
भ्रमद्	५. घुमाती हुई	तत्	९. उसके
दृष्टेः	४. दृष्टि	वासः	१०. वस्त्र को
चलन्त्या	२. चलती हुई और	सूक्ष्मम्	११. सूक्ष्म
अनुकन्दुकम् ।	१. गेंद के पीछे	त्रुटित	७. टूट जाने से
वायुः	८. वायु ने	मेखलम् ॥	६. उसकी कर धनी

श्लोकार्थ—गेंद के पीछे चलती हुई और इधर-उधर दृष्टि घुमाती हुई उसकी कर धनी टूट जाने से वायु ने उसके वस्त्र को सूक्ष्म शरीर से अलग कर दिया ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

विससर्ज तदा बाणं मत्वा तं स्वजितं स्मरः ।
सर्वं तत्राभवन्मोघमनीशस्य यथोद्यमः ॥२८॥

पदच्छेद—

विससर्ज तदा बाणम् मत्वा तम् स्वजितम् स्मरः ।
सर्वम् तत्र अभवत् मोघम् अनीशस्य यथा उद्यमः ॥

शब्दार्थ—

विससर्ज	७. छोड़ दिया	सर्वम्	९. सब
तदा	१. उस समय	तत्र	८. परन्तु वहाँ
बाणम्	६. बाण को	अभवत्	११. हुआ
मत्वा	५. मानकर	मोघम्	१०. व्यर्थ
तम्	३. मुनि को	अनीशस्य	१३. असमर्थ का
स्वजितम्	४. अपने से जीता हुआ	यथा	१२. जैसे
स्मरः ।	२. कामदेव ने	उद्यमः ॥	१४. प्रयत्न (व्यर्थ हो जाता है)

श्लोकार्थ—उस समय कामदेव ने मुनि को अपने से जीता हुआ मानकर बाण को छोड़ दिया। परन्तु वहाँ सब व्यर्थ हुआ, जैसे असमर्थ का प्रयत्न व्यर्थ हो जाता है ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

तं इत्थमपकुर्वन्तो मुनेस्तत्तेजसा मुने ।
दह्यमाना निवव्रुतुः प्रबोध्याहिमिवार्भकाः ॥२९॥

पदच्छेद—

तम् इत्थम् अपकुर्वन्तः मुनेः तत् तेजसा मुने ।
दह्यमाना निवव्रुतुः प्रबोध्या अहिम् इव अर्भकाः ॥

शब्दार्थ—

तम्	२.	उन (मुनि) का	दह्यमाना	७.	जलते हुये उसी प्रकार
इत्थम्	३.	इस प्रकार	निवव्रुतुः	८.	भाग गये
अपकुर्वन्तः	४.	अपकार करते हुये वे काम आदि)	प्रबोध्या	११.	जगाकर
मुनेः	५.	मुनि के	अहिम्	१०	सांप को
तत् तेजसा	६.	उस तेज से	इव	९.	जैस
मुने ।	१.	शौनक जी !	अर्भकाः ॥	१२.	छोटे-छोटे बच्चे भाग जातेहैं

श्लोकार्थ—शौनक जी ! उन मुनि का इस प्रकार अपकार करते हुये, वे काम आदि मुनि के उस तेज से जलते हुये उसी प्रकार भाग गये जैसे सांप को जगाकर छोडे-छोटे बच्चे भाग जाते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

इतीन्द्रानुचरैर्ब्रह्मन् धर्षितोऽपि महामुनिः ।
यन्नागादहमो भावं न तच्चित्रं महत्सु हि ॥३०॥

पदच्छेद—

इति इन्द्र अनुचरैः ब्रह्मन् धर्षितः अपि महामुनिः ।
यत् न अगात् अहमः भावम् न तत् चित्रम् महत्सु हि ॥

शब्दार्थ—

इति	२.	इस प्रकार	यत्	७.	जो
इन्द्र	३.	इन्द्र के	न अगात्	१०.	नहीं प्राप्त हुये
अनुचरैः	४.	सेवकों द्वारा	अहमः	८.	अहंकार के
ब्रह्मन्	१.	हे ब्रह्मन् !	भावम्	९.	भाव को
धर्षितः अपि	५.	उकसाये जाने पर भी	न तत् चित्रम्	१२.	यह आश्चर्य की बात नहीं है
महामुनिः ।	६.	महामुनि ने	महत्सु हि ॥	११.	महापुरुषों के लिये

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! इस प्रकार सेवकों द्वारा उकसाये जाने पर भी महामुनि ने जो अहंकार के भाव को नहीं प्राप्त हुये । महापुरुषों के लिये यह आश्चर्य की बात नहीं है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

दृष्ट्वा निस्तेजसं कामं सगणं भगवान् स्वराट् ।
श्रुत्वानुभावं ब्रह्मर्षेर्विस्मयं समगात् परम् ॥३१॥

पदच्छेद —

दृष्ट्वा निस्तेज सम् कामम् सगणम् भगवान् स्वराट् ।
श्रुत्वा अनुभावम् ब्रह्मर्षे विस्मयम् समगात् परम् ॥

शब्दार्थ —

दृष्ट्वा	६.	तथा देखकर	श्रुत्वा	९.	सुनकर
निस्तेज सम्	५.	निस्तेज होकर	अनुभावम्	८.	प्रभाव
कामम्	३.	कामदेव को	ब्रह्मर्षे	७.	और ब्रह्मर्षि का
सगणम्	४.	अपनी सेना के साथ	विस्मयम्	११.	आश्चर्य को
भगवान्	१.	भगवान्	समगात्	१२.	प्राप्त हुये
स्वराट् ।	२.	इन्द्र	परम् ॥	१०.	बड़े

श्लोकार्थ—भगवान् इन्द्र कामदेव को अपनी सेना के साथ निस्तेज होकर तथा देखकर और ब्रह्मर्षि का प्रभाव सुनकर बड़े आश्चर्य को प्राप्त हुये ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तस्यैवं युञ्जतश्चित्तं तपःस्वाध्यायसंयमैः ।
अनुग्रहायाविरासीन्नरनारायणो हरिः ॥३२॥

पदच्छेद—

तस्य एवम् युञ्जतः चित्तम् तपः स्वाध्याय संयमैः ।
अनुग्रहाय आवीः आसीत् नर-नारायणः हरिः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	७.	उन (मारकण्डेय) पर	अनुग्रहाय	८.	अनुग्रह करने के लिये
एवम्	१.	इस प्रकार	आवीः	१२.	प्रकट
युञ्जतः	६.	भगवान् में लगाते हुये	आसीत्	१३.	हुये
चित्तम्	५.	चित्त को	नर	९.	नर और
तपः	२.	तपस्या	नारायण	१०.	नारायण
स्वाध्याय	३.	स्वाध्याय और	हरिः ॥	११.	श्री हरि
संयमैः ।	४.	संयम के द्वारा			

श्लोकार्थ—इस प्रकार तपस्या, स्वाध्याय और संयम के द्वारा चित्त को भगवान् में लगाते हुये उन मार्कण्डेय पर अनुग्रह करने के लिये नर और नारायण श्रीहरि प्रकट हुये ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तौ शुक्लकृष्णौ नवकञ्जलोचनौ चतुर्भुजौ रौरववल्कलाम्बरौ ।
पवित्रपाणी उपवीतकं त्रिवृत् कमण्डलुं दण्डमृजुं च वैणवम् ॥३३॥

पदच्छेद—

तौ शुक्ल कृष्णौ नवकञ्ज लोचनौ चतुर्भुजौ रौरव वल्कल अम्बरौ ।
पवित्र पाणी उपवीतकम् त्रिवृत् कमण्डलु दण्डम् ऋजुम् च वैणवम् ॥

शब्दार्थ—

तौ	१.	वे दोनों	पवित्र	१०	कुश लिये हुये
शुक्ल कृष्णौ	२.	गौरवर्ण और श्यामवर्ण के समान	पाणी	६.	हाथों में
नवकञ्ज	३.	नये कमल	उपवीतकम्	११.	यज्ञोपवीत
लोचनौ	४.	नेत्र वाले	त्रिवृत्	११.	तीन-तीन सूत के
चतुर्भुजौ	५.	चार भुजाओं वाले	कमण्डलु	१३.	कमण्डल
रौरव	६.	रुरुमृग की चर्म और	दण्डम्	१ .	दण्ड धारण किये हुये थे
वल्कल	७.	वृक्ष की	ऋजुम्	१५.	सीधा
अम्बरौ ।	८.	छाल पहने हुए	च वैणवम् ॥	१४.	और बाँस का

श्लोकार्थ—वे दोनों गौरवर्ण और श्याम वर्ण के समान नये कमल के समान नेत्र वाले चार भुजाओं वाले रुरु मृग की चर्म और वृक्ष की छाल पहने हुये हाथों में कुश लिये हुये तीन-तीन सूत के यज्ञोपवीत पहने हुए कमण्डल और बाँस का सीधा दण्ड धारण किये हुये थे ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

पद्माक्षमालामुत जन्तुमार्जनं वेदं च साक्षात्तप एव रूपिणौ ।
तपत्तडिद्वर्णपिशङ्गरोचिषा प्रांशू दधानौ विबुधर्षभार्चितौ ॥३४॥

पदच्छेद—

पद्माक्ष मालाम् उत जन्तु मार्जनम् वेदं च साक्षात् तप एव रूपिणौ ।
तपतडिदवर्ण पिशङ्ग रोचिषा प्रांशु दधानौ विबुध ऋषभ अर्चितौ ॥

शब्दार्थ—

पद्माक्षमालाम्	७.	कमलगट्टे की माला	तपतडिदवर्ण	३.	चमकती हुई बिजली के समान
उत जन्तु	८.	और जीवोंको हटाने केलिये	पिशङ्ग	४.	पीले-पीले रङ्गकी
मार्जनम्	६.	वस्त्र की कूंची तथा	रोचिषा	५.	कान्ति से युक्त
वेदं च	१०.	वेद को	प्रांशु	६.	ऊँचे शरीर वाले वे दोनों
साक्षात्	१२.	साक्षात्	दधानौ	११.	धारण किये हुये
तप एव	१३.	तपस्या के ही	विबुध ऋषभ	१.	देव श्रेष्ठों से
रूपिणौ ।	१४.	रूप प्रतीत होते थे	अर्चितौ ॥	२.	पूजित

श्लोकार्थ—देव श्रेष्ठों से पूजित चमकती हुई बिजली के समान पीले-पीले रङ्ग की कान्ति से युक्त ऊँचे शरीर वाले वे दोनों कमलगट्टे की माला और जीवों को हटाने के लिये वस्त्र की कूंची तथा वेद को धारण किये हुये साक्षात् तपस्या के ही रूप प्रतीत होते थे ।

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

ते वै भगवतो रूपे नरनारायणावृषी ।
दृष्ट्वोत्थायादरेणोच्चैर्ननामाङ्गेन दण्डवत् ॥३५॥

पदच्छेद—

ते वै भगवतः रूपे नर नारायणौ ऋषी ।
दृष्ट्वा उत्थाय आदरेण उच्चैः ननाम अङ्गेन दण्डवत् ॥

शब्दार्थ—

ते	१.	वे दोनों	दृष्ट्वा	७.	उन्हें देखकर
वै	४.	निश्चित रूप से	उत्थाय	९.	उठ कर
भगवतः	५.	भगवान् के	आदरेण	८.	आदर भाव से
रूपे	६.	स्वरूप थे	उच्चैः	१२.	उच्च स्वर से
नर नारायणौ	२.	नर और नारायण	ननाम	१३.	प्रणाम किया
ऋषी ॥	३.	ऋषि	अङ्गेन	१०.	शरीर से
			दण्डवत् ॥	११.	लेटकर

श्लोकार्थ—वे दोनों नर और नारायण ऋषी निश्चित रूप से भगवान के स्वरूप थे। उन्हें देखकर आदर भाव से उठकर शरीर से लेटकर उच्च स्वर से प्रणाम किया ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

स तत्सन्दर्शनानन्दनिर्वृतात्मेन्द्रियाशयः ।
हृष्टरोमाश्रुपूर्णाक्षो न सेहे तावुदीक्षितुम् ॥३६॥

पदच्छेद—

सः तत् सन्दर्शन आनन्द निर्वृता आत्म इन्द्रिय आशयः ।
हृष्टरोमा अश्रुपूर्ण अक्षः न सेहे तौ उदीक्षितुम् ॥

शब्दार्थ—

सः तत्	१.	वे उनके	हृष्टरोमा	७.	रोमाञ्चित
सन्दर्शन	२.	दर्शनजन्य	अश्रुपूर्ण	८.	अश्रु पूर्ण
आनन्द	३.	आनन्द से	अक्षः	९.	नेत्र होने से
निर्वृता	४.	शान्त	न सेहे	१२.	नही सके
आत्म इन्द्रिय	५.	आत्मा इन्द्रिय और	तौ	१०.	उन दोनों को
आशयः ।	६.	चित्त वाले तथा	उदीक्षितुम् ॥	११.	देख

श्लोकार्थ—वे उनके दर्शन जन्य आनन्द से शान्त आत्मा इन्द्रिय और चित्त वाले तथा रोमाञ्चित अश्रु पूरित नेत्र होने से उन दोनों को देख नहीं सके।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

उत्थाय प्राञ्जलिः प्रह्व औत्सुक्यादाश्लिषन्निव ।
नमो नम इतीशानौ बभाषे गद्गदाक्षरः ॥३७॥

पदच्छेद—

उत्थाय प्राञ्जलिः प्रह्व औत्सुक्याद आश्लिषन् इव ।
नमोनमः इति ईशानौ बभाषे गद्-गद् अक्षरः ॥

शब्दार्थ—

उत्थाय	१.	उठकर	नमोनमः	१०.	नमस्कार है नमस्कार है
प्राञ्जलिः	२.	हाथ जोड़कर	इति	११.	यह
प्रह्व	३.	झुककर	ईशानौ	९.	उन दोनों प्रभुओं को
औत्सुक्याद	४.	उत्सुकता से	बभाषे	१२.	कहा
आश्लिषन्	६.	आलिङ्गन करते हुये	गद् गद्	७	गद-गद्
इव ।	५.	मानो	अक्षरः ॥	८.	वाणी से

श्लोकार्थ— तदनन्तर उठकर हाथ जोड़ कर झुककर उत्सुकता से मानों आलिङ्गन करते हुये गद्-गद् वाणी से उन दोनों प्रभुओं को नमस्कार है, नमस्कार है ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

तयोरासनमादाय पादयोरवनिज्य च ।
अर्हणेनानुलेपेन धूपामाल्यैरपूजयत् ॥३८॥

पदच्छेद—

तयोः आसनम् आदाय पादयोः अवनिज्य च ।
अर्हणेन अनुलेपेन धूप माल्यैः अपूजयत् ॥

शब्दार्थ—

तयोः	१.	तदनन्तर उन दोनों को	अर्हणेन	६.	फिर अर्घ्य
आसनम्	२.	आसन	अनुलेपेन	७.	चन्दन
आदाय	३.	देकर	धूप	८.	धूप और
पादयोः	४.	चरण	माल्यै	९.	माला से
अवनिज्य च ।	५.	पखारे	अपूजयत् ॥	१०.	उनकी पूजा की

श्लोकार्थ— तदनन्तर उन दोनों को आसन देकर चरण पखारे । फिर अर्घ्य चन्दन, धूप और माला से उनकी पूजा की ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

सुखमासनमासीनौ प्रसादाभिमुखौ मुनी ।
पुनरानम्य पादाभ्यां गरिष्ठाविदमब्रवीत ॥३६॥

पदच्छेद—

सुखम् आसनम् आसीनौ प्रसाद अभिमुखौ मुनी ।
पुनः आनम्य पादाभ्याम् गरिष्ठौ इदम् अब्रवीत् ॥

शब्दार्थ—

सुखम्	२.	सुख पूर्वक	पुनः	६.	फिर मार्कण्डेय ऋषि
आसनम्	१.	आसन पर	आनम्य	१०.	प्रणाम करके
आसीनौ	३.	बैठे हुये	पादाभ्याम्	८.	चरणों में
प्रसाद	४.	कृपा प्रसाद करने के लिये	गरिष्ठौ	६.	उन सर्व श्रेष्ठ
अभिमुखौ	५.	सम्मुख	इदम्	१ .	यह
मुनी ।	७.	दोनों मुनियों के	अब्रवीत् ॥	१२.	बोले

श्लोकार्थ—आसन पर सुख पूर्वक बैठे हुये कृपा प्रसाद करने के लिये सम्मुख उन सर्वश्रेष्ठ दोनों मुनियों के चरणों में फिर मार्कण्डेय ऋषि प्रणाम करके यह बोले ।

चत्वारिंशः श्लोकः

मार्कण्डेय उवाच—किं वर्णये तव विभो यदुदीरितोऽसुः
संस्पन्दते तमनु वाङ्मनइन्द्रियाणि ।
स्पन्दन्ति वै तनुभृतामजशर्वयोश्च
स्वस्याप्यथापि भजतामसि भावबन्धुः ॥४०॥

पदच्छेद—

किम् वर्णये तव विभो यत् उदीरितः असुः संस्पन्दते तम् अनु वाङ्मनः इन्द्रियाणि ।
स्पन्दन्ति वै तनु भृताम् अज शर्वयोः च स्वस्य अपि अथापि भजताम् असि भाव बन्धुः ॥

शब्दार्थ—

किम्	२.	क्या	स्पन्दन्ति वै	१२.	संञ्चार होता है
वर्णये तव	३.	आपका वर्णन करूँ	तनु भृताम्	५.	प्राणियों में
विभो	१.	प्रभो (मैं)	अज शर्वयोः च	१०.	ब्रह्मा-शिव तथा
यत् उदीरितः	४.	आपकी प्रेरणा से ही	स्वस्य अपि	११.	मेरे शरीर में भी
असुःसंस्पन्दते	६.	प्राण का सञ्चार होता है	अथापि	१३.	फिर भी आप
तम् अनु	७.	उसके पीछे	भजताम्	१४.	भजन करने वालों के
वाङ्मनः	८.	वाणी-मन तथा	असि	१६.	हैं
इन्द्रियाणि ।	६.	इन्द्रियों में और	भाव बन्धुः ॥	१५.	भावनात्मक बन्धु

श्लोकार्थ—प्रभो मैं क्या आपका वर्णन करूँ आपकी प्रेरणा से ही प्राणियों में प्राण का सञ्चार होता है। उसके पीछे वाणी-मन तथा इन्द्रियों में और ब्रह्मा, शिव तथा मेरे शरीर में भी सञ्चार होता है । फिर भी आप भजन करने वालों के भावनात्मक बन्धु हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

मूर्ती इमे भगवतो भगवंस्त्रिलोक्याः
क्षेमाय तापविरमाय च मृत्युजित्यै ।
नाना बिभर्ष्यवितुमन्यतनूर्यथेदं
सृष्ट्वा पुनर्ग्रससि सर्वमिवोर्णनाभिः ॥४१॥

पदच्छेद—मूर्ती इमे भगवतः भगवन् त्रिलोक्याः क्षेमाय ताप विरमाय च मृत्यु जित्यै ।
नाना बिभर्षि अवितुम अन्य तनूः यथा इदम् सृष्ट्वा पुनः ग्रससि सर्वं मिवोर्ण नाभिः ॥

शब्दार्थ—					
मूर्ती इमे	८.	दोनों रूप	नाना	४.	अनेक
भगवतः	७.	आपके ये	बिभर्षि	६.	धारण करते हैं वैसे ही
भगवन्	१.	भगवन्	अवितुम	३.	विश्व की रक्षा के लिये
त्रिलोक्याः	९.	तीनों ल क के	अन्य तनूः	५.	अन्य शरीरों को
क्षेमाय	१०.	कल्याण के लिये तथा	यथा	२.	जैसे आप
ताप विरमाय	११.	ताप की शान्ति के लिये	इदम् सृष्ट्वा	१५.	इस जगत की सृष्टि करके
च मृत्यु	१२.	और मृत्यु को	पुनः ग्रससि	१६.	पुनः ग्रस लेते हैं
जित्यै ।	१३.	जीतने के लिये है आप	सर्वमिवोर्ण नाभिः ॥	१४.	मकड़ी के समान सबको

श्लोकार्थ—भगवन् जैसे आपविश्व की रक्षा के लिये अनेक अन्य शरीरों को धारण करते हैं । वैसे ही आपके ये नोनों :रूप तीनों लोक के कल्याण के लिये ताप की शान्ति के लिये और मृत्यु को जीतने के लिये है । आप मकड़ी के समान इस जगत की सृष्टि करके सबको पुनः ग्रस लेते हैं ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

तस्यावितुः स्थिरचरेशितुरङ्घ्रिमूलं
यत्स्थं न कर्मगुणकालरुजः स्पृशन्ति ।
यद् वै स्तुवन्ति निनमन्ति यजन्त्यभीक्ष्णं
ध्यायन्ति वेदहृदया मुनयस्तदाप्त्यै ॥४२॥

पदच्छेद— तस्य अवितुः स्थिर चर ईशितुः अङ्घ्रिमूलम् यत् स्थम् न कर्म गुण कालरुजः स्पृशन्ति।
यद् वै स्तुवन्ति निनमन्ति यजन्ति अभीक्ष्णम् ध्यायन्ति वेदहृदयाः मुनयः तत् आप्त्यै ॥

शब्दार्थ—					
तस्य	३.	आपके	यद्वै	९.	और
अवि तुः	२.	रक्षक	स्तुवन्ति	१३.	स्तवन
स्थिर चर ईशितः	१.	स्थावर और जङ्गम के स्वामी एवं	निनमन्ति	१४.	प्रणाम
अङ्घ्रि मूलम्	४.	चरण मूल में	यजन्ति	१५.	पूजन तथा
यत् स्थम्	५.	स्थित हाने पर	अभीक्ष्णम्	१२.	निरन्तर (आपका)
न कर्म गुण	६.	कर्म गुण और	ध्यायन्ति	१६.	ध्यान किया करते हैं
कालरुजः	७.	काल जनित कलेश	वेदहृदयाःमुनयः	१०.	वेद के मर्मज्ञ ऋषि
स्पृशन्ति ।	८.	भक्तका स्पर्श भी नहीं कर सकते	तत् आप्त्यै ॥	११.	आपकी प्राप्ति के लिये

श्लोकार्थ—स्थावर और जङ्गम के स्वामी एवं रक्षक आपके चरण मूल में स्थित होने पर कर्म गुण और काल जनित क्लेश भक्त का स्पर्श भी नहीं कर सकते और वेद के मर्मज्ञ ऋषि आपकी प्राप्ति के लिये निरन्तर आपका स्तवन पूजन तथा ध्यान किया करते हैं ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

नान्यं तवाङ्घ्र्युपनयादपवर्गमूर्तेः क्षेमं जनस्य परितोभिय ईश विद्मः ।
ब्रह्मा बिभेत्यलमतो द्विपरार्धधिष्ण्यःकालस्य ते किमुत तत्कृतभौतिकानाम् ४३

पदच्छेद—

न अन्यम् तवअङ्घ्रि उपनयात् अपवर्ग मूर्तेः क्षेमम् जनस्य परितोभियः ईश विद्मः ।
ब्रह्मा विभेति अलम अतः द्विपरार्ध धिष्ण्यः कालस्य ते किमुत तत् कृत भौतिकानाम् ।।

शब्दार्थ—

न अन्यम्	१५.	अतिरिक्त दूसरा कोई	ब्रह्मा विभेति	४.	ब्रह्मा भी भयभीत रहते हैं
तवअङ्घ्रि	१३.	आपके चरणों को	अलम	५.	अत्यन्त
उपनयात्	१४.	शरण ग्रहण करने के	अतः	९.	इसलिये
अपवर्ग मूर्तेः	१२.	मोक्ष स्वरूप	द्विपरार्धधिष्णयः	३.	दो परार्ध की आयु वाले
क्षेमम्	१६.	कल्याण का मार्ग	कालस्य ते	२.	आपके काल स्वरूप से
जनस्य	११	मनुष्य के लिये	किमुत	८.	कहना ही क्या है
परितोभय	१०.	चारों ओर भय से युक्त	तत् कृत	६.	उनके बनाये हुये
ईश	१.	प्रभो !	भौतिकानाम् ।।	७	भौतिक शरीर वाले प्राणियों का तो
विद्मः ।	१७.	हम नहीं समझते हैं			

श्लोकार्थ—प्रभो ! आपके कल्याण स्वरूप से दो परार्ध की आयुवाले ब्रह्मा भी अत्यन्त भयभीत रहते हैं। उनके बनाये हुये भौतिक शरीर वाले प्राणियों का तो कहना ही क्या है इसलिये चारों ओर भय से युक्त मनुष्य के लिये मोक्ष स्वरूप आपके चरणों की शरण ग्रहण करने के अतिरिक्त दूसरा कोई कल्याण का मार्ग हम नहीं समझते हैं ।।

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

तद् वै भजाम्यृतधियस्तव पादमूलं हित्वेदमात्मच्छदि चात्मगुरोः परस्य ।
देहाद्यपार्थमसदन्त्यमभिज्ञमात्रं विन्देत ते तर्हि सर्वमनीषितार्थम् ।।४४।।

पदच्छेद—

तत् वै भजामि ऋतधियः तव पाद मूलम् हित्वा इदम् आत्मच्छदि च आत्म गुरोः परस्य ।
देहादि अपार्थम् असत् अन्त्यम् अभिज्ञमात्रम् विन्देत ते तर्हि सर्वमनीषित अर्थम् ।।

शब्दार्थ—

तत	९.	उस	देहादि	२.	देह आदि
वैभजामि	११.	निश्चित रूप से	अपार्थम्	३.	निष्फल
ऋतधियः	१२.	भजता हूँ	असत्अन्त्यम्	४.	असत्य नाशवान
तव पादमूलम्	१०.	आपके चरण मूल को	अभिज्ञमात्रम्	५.	और प्रतीति मात्र
हित्वा इदम्	६.	इस जगत को त्याग कर	विन्देत	१६	प्राप्त कर लेता है
आत्मच्छदि च	१.	आत्म स्वरूप को ढक देने वाले	ते तर्हि	१३.	ऐसा करने वाला व्यक्ति
आत्म गुरोः	७.	मैं जीवों के गुरु और	सर्वमनीषित	१४.	सारे अभीष्ठ
परस्य ।	८.	सबसे श्रेष्ठ	अर्थम् ।।	१५.	पदार्थ

श्लोकार्थ—आत्म स्वरूप को ढक देने वाले देह आदि निष्फल, असत्य, नाशवान और प्रतीतिमात्र इस जगत को त्याग कर मैं जीवों के गुरु और सब से श्रेष्ठ उस आपके चरण मूल को निश्चित रूप से भजता हूँ। ऐसा करने वाला व्यक्ति सारे अभीष्ठ पदार्थ प्राप्त कर लेता है ।।

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

सत्त्वं रजस्तम इतीश तवात्मबन्धो
मायामयाः स्थितिलयोदयहेतवोऽस्य ।
लीला धृता यदपि सत्त्वमयी प्रशान्त्यै
नान्ये नृणां व्यसनमोहभियश्च याभ्याम् ॥४५॥

पदच्छेद—

सत्त्वम् रजः तमः इति ईश तव आत्म बन्धो माया मयाः स्थितिलयः उदय हेतवः अस्य ।
लीला धृता यदपि तत्त्वमयो प्रशान्त्यै न अन्ये नृणाम् व्यसन मोहभियः च याभ्याम् ॥

शब्दार्थ—

सत्त्वम्	३.	सत्त्व	लीला धृता	६.	लीलायें करते हैं
रजः तमः	४.	रज और तम	यदपि	१०.	यद्यपि
इति	५.	ये गुण	सत्त्वमयी	११.	सत्त्वमयी लोला ही
ईश तव	२.	प्रभो आपके	प्रशान्त्यै	१३.	शान्ति प्रदान करती हैं
आत्म बन्धो	१	जीवों के बन्धु	न अन्ये	१४.	अन्य नहीं करती हैं
मायामयाः	८.	माया मयी	नृणाम्	१२.	मनुष्यों को
स्थितिलयः	७.	स्थिति और लय के कारण	व्यसन मोह भियः च	१६.	दुःख मोह और भय ही बढ़ाते है
उदयहेतवे अस्य।	६.	इस संसार की उत्पत्ति	याभ्याम् ॥	१५.	उनसे तो

श्लोकार्थ– जीवों के बन्धु प्रभो ! आपके सत्त्वरज और तम ये गुण इस संसार की उत्पत्ति स्थिति और लय के कारण मायामयी लीलायें करते हैं । यद्यपि सत्त्वमयो लीला ही मनुष्यों को शान्ति प्रदान करती हैं । अन्य नहीं करती है । उनसे तो दुःख मोह और भय ही बढ़ते हैं ।

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

तस्मात्तवेह भगवन्नथ तावकानां शुक्लां तनुं स्वदयितां कुशला भजन्ति ।
यत् सात्वताः पुरुषरूपमुशन्ति सत्त्वं लोको यतोऽभयमुतात्मसुखं न चान्यत् ४६

पदच्छेद—

तस्मात् तव इह भगवन् अथ तावकानाम् शुक्लाम् तनुम् स्वदयिताम् कुशलाः भजन्ति ।
यत् सात्वताः पुरुष रूपम् उशन्ति सत्त्वम् लोकः अभयम्आत्मसुखम् न च अन्यत् यतः ॥

शब्दार्थ—

तस्मात्	२.	इसलिये	यत् सात्वताः	६.	क्योंकि भक्त लोग
तव इह	४.	यहाँ आपकी	पुरुष रूपम्	११.	आपका श्री विग्रह
भगवन्	१.	भगवन्	उशन्ति	१२.	मानते हैं
अथ तावकानाम्	५.	और आपके भक्तों की	सत्त्वम्	१०.	विशुद्ध सत्त्व को ही
शुक्लाम् तनुम्	७.	शुद्ध मूर्ति नर-नारायण की	लोकः	१४.	उनका धाम होने पर भी वे
स्वदयिताम्	६.	प्रिय एवम्	यतः अभयम्	१३.	यद्यपि भय रहित और
कुशलाः	३.	बुद्धिमान् पुरुष	आत्मसुखम्	१५.	आत्मानन्द से परिपूर्ण है
भजन्ति ।	८.	उपासना करते हैं	न च अन्यत् ॥	१६.	अतः वे अन्य गुणों को आपकी मूर्ति नहीं मानते हैं

श्लोकार्थ—भगवन् इसलिये बुद्धिमान पुरुष यहाँ आपकी और आपके भक्तों की प्रिय एवम् शुद्ध मूर्ति (नर-नारायण) की उपासना करते हैं । क्योंकि भक्त लोग विशुद्ध सत्त्व को ही आपका श्री विग्रह मानते हैं । यद्यपि उनको प्राप्य आपका धाम होने पर भी वे भय रहित और आत्मानन्द से परिपूर्ण हैं । अतः वे अन्य गुणों को आपकी मूर्ति नहीं मानते हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

तस्मै नमो भगवते पुरुषाय भूम्ने विश्वाय विश्वगुरवे परदेवतायै ।
नारायणाय ऋषये च नरोत्तमाय हंसाय संयतगिरे निगमेश्वराय ॥४७॥

पदच्छेद — तस्मै नमः भगवते पुरुषाय भूम्ने विश्वाय विश्वगुरवे पर देवतायै ।
नारायणाय ऋषये च नरोत्तमाय हंसाय संयत गिर निगम ईश्वराय ॥

शब्दार्थ —

तस्मै	१.	उन	नारायणाय	८.	नारायण
नमः	१६.	नमस्कार है	ऋषये	९.	ऋषि को
भगवते	२.	भगवान्	च	१०.	और
पुरुषाय	३.	पुरुष	नरोत्तमाय	१५.	नरोत्तम नर को
भूम्ने	४.	सर्वव्यापक	हंसाय	११.	शुद्ध स्वरूप
विश्वाय	५.	सर्व स्वरूप	संयत गिरे	१२.	संयतवाणी वाले
विश्वगुरवे	६.	जगद्गुरु एवम्	निगम	१३.	वेदमार्ग के
पर देवतायै ।	७.	श्रेष्ठ देवता	ईश्वराय ॥	१४.	प्रवर्तक

श्लोकार्थ—उन भगवान् पुरुष, सर्वव्यापक, सर्वस्वरूप, जगद्गुरु एवम् श्रेष्ठ देवता नारायण ऋषि को और शुद्ध स्वरूप संयतवाणी वाले वेद मार्ग के प्रवर्तक नरोत्तम नर को नमस्कार है ।

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

यं वै न वेद वितथाक्षपथैर्भ्रमद्धीः सन्तं स्वखेष्वसुषु हृद्यपि दृक्पथेषु ।
तन्माययाऽऽवृतमतिः स उ एव साक्षा दाद्यस्तवाखिलगुरोरुपसाद्य वेदम् ॥४८॥

पदच्छेद—

यम् वै न वेद वितथ अक्षपथैः भ्रमद्धीः सन्तम् स्वखेषु असुषु हृदि अपिदृक् पथेषु ।
तत् मायया आवृतम् अतिः सः उ एव साक्षात् आद्यः तव आखिल गुरोः-उपसाद्य वेदम् ॥

शब्दार्थ—

यम् वै	८.	जिन आपको निश्चित रूपसे	तव मायया	११.	आपकी माया से
न वेद	९.	नहीं जान पाता है	आवृतम्	१२.	ढकी हुई
वितथ	१.	निष्फल और झूंठो	अतिः	१३.	बुद्धि वाला
अक्षपथैः	२.	इन्द्रियों के	सः उ एव	१०.	वह ही
भ्रमद्धिः	३.	चक्कर में घूमती बुद्धि वाला व्यक्ति	साक्षात्	१८.	साक्षात्कार कर लेता है
सन्तम्	७.	विद्यमान्	आद्यः	१४.	पहला व्यक्ति
स्वखेषु	५.	अपनी इन्द्रियों	तव अखिलगुरोः	१५.	सब के गुरू आप से
असुषुहृदि अपि	६.	प्राणों और हृदय में भी	उपसाद्य	१७.	प्राप्त करके (आपका)
दृक् पथेषु ।	४.	विषयों	वेदम् ॥	१६.	वेद को

श्लोकार्थ—निष्फल और झूंठो, इन्द्रियों के चक्कर में घूमती बुद्धिवाला व्यक्ति विषयों, अपनी इन्द्रियों, प्राणों और हृदय में भी विद्यमान जिन आपको निश्चित रूप से नहीं जान पाता है । वह ही आप की माया से ढकी हुई बुद्धि वाला पहला व्यक्ति सबके गुरु आप से वेद को प्राप्त करके आपका साक्षात्कार कर लेता है ॥

—११०—

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

यद्दर्शनं निगम आत्मरहःप्रकाशं मुह्यन्ति यत्र कवयोऽजपरा यतन्तः ।
तं सर्ववादविषयप्रतिरूपशीलं वन्दे महापुरुषमात्मनि गूढबोधम् ॥४९॥

पदच्छेद—

यत् दर्शनम् निगम आत्मरहः प्रकाशम् मुह्यन्ति यत्र कवयः अज परायतन्तः ।
तम् सर्ववाद विषय प्रति रूप शीलम् वन्दे महापुरुषम् आत्मनिगूढ बोधम् ॥

शब्दार्थ—

यत् दर्शनम्	१.	जिनका दर्शन	तम्	१५.	उन (आप)
निगम	२.	वेद में	सर्ववाद	११.	तथा समस्त वादों के
आत्म रहः	३.	आत्मा का रहस्य	विषय	१२.	विषय के
प्रकाशम्	४,	प्रकट करता है	प्रतिरूप	१३.	अनुरूप
मुह्यन्ति	८.	मोह में पड़ जाते हैं	शीलम्	१४.	शीलस्वभाव वाले
यत्र	५.	जिन्हें पाने के लिये	वन्दे महापुरुषम्	१६.	वन्दनाकरता हूँ महापुरुष की
कवयः अजपरा	६.	मनीषी ब्रह्मादि	आत्म	९.	जो देहादि उपाधियों मे
यतन्तः ।	७.	यत्न करते हुये	निगूढबोधम् ॥	१०.	छिपे हुये विज्ञान घन हैं

श्लोकार्थ—जिनका दर्शन वेद में आत्मा का रहस्य प्रकट करता है। जिन्हें पाने के लिये ब्रह्मादि मनीषी यत्न करते हुये मोह में पड़ जाते है। जो देहादि उपाधियों में छिपे हुये विज्ञान घन हैं। तथा समस्त वादों के विषय के अनुरूप शील स्वभाव वाले हैं। उन आप महापुरुष की वन्दना करता हूँ ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशः स्कन्धः
अष्टमः अध्यायः ॥८॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वादशः स्कन्धः

नवमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

सूत उवाच—**संस्तुतो भगवानित्थं मार्कण्डेयेन धीमता ।**
नारायणो नरसखः प्रीत आह भृगूद्वहम् ॥१॥

पदच्छेद—

संस्तुतः भगवान् इत्थम् मार्कण्डेयेन धीमता ।
नारायणः नरसखः प्रीतआह भृगु उद्वहम् ॥

शब्दार्थ—

संस्तुतः	४. स्तुति किये जाने पर	नारायणः	७.	नारायण ने
भगवान्	६. भगवान्	नरसखः	५.	नर के मित्र
इत्थम्	३. इस प्रकार	प्रीतआह	८.	प्रसन्न होकर
मार्कण्डेयेन	२. मार्कण्डेय मुनि द्वारा	भृगु	९.	कहा भृगु
धीमता ।	१. विद्वान्	उद्वहम् ॥	१०.	वंशी (मार्कण्डेय) से

श्लोकार्थ—विद्वान् मार्कण्डेय मुनि द्वारा इस प्रकार स्तुति किये जाने पर नर ने मित्र नारायण ने प्रसन्न होकर भृगु वंशी मार्कण्डेय से कहा ॥

द्वितीयः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—**भो भो ब्रह्मर्षिवर्योसि सिद्ध आत्मसमाधिना ।**
मयि भक्तयानपायिन्या तपःस्वाध्यायसंयमैः ॥२॥

पदच्छेद—

भो भो ब्रह्मर्षिवर्य असि सिद्ध आत्म समाधिना ।
मयि भक्त्या अनपायिन्या तपः स्वाध्याय संयमैः ॥

शब्दार्थ—

भो भो	१. सम्मान्य	मयि	८.	मुझमें
ब्रह्मर्षिवर्य	२. ब्रह्मर्षि श्रेष्ठ (तुम)	भक्त्या	१०.	भक्ति रखने के कारण
असि	१२. हो गये हो	अनपायिन्या	९.	अविनाशिनी
सिद्ध	११. सिद्ध	तपः	५.	तपस्या
आत्म	३. चित्त की	स्वाध्याय	६.	स्वाध्याय
समाधिना ।	४. एकाग्रता	संयमैः ॥	७.	संयम और

श्लोकार्थ—सम्मान्य ब्रह्मर्षि श्रेष्ठ तुम चित्त की एकाग्रता, तपस्या, स्वाध्याय संयम और मुझमें अविनाशिनी भक्ति रखने के कारण सिद्ध हो गये हो ॥

तृतीयः श्लोकः

वयं ते परितुष्टाः स्म त्वद्बृहद्व्रतचर्यया ।
वरं प्रतीच्छ भद्रं ते वरदेशादभीप्सितम् ॥३॥

पदच्छेद—

वयम् ते परितुष्टाः स्मः त्वद् बृहत् व्रतचर्यया ।
वरम् प्रतीच्छ भद्रम् ते वरदेशात् अभीप्सितम् ॥

शब्दार्थ—

वयम्	३.	हम	वरम्	११.	वर
ते	४.	तुम पर	प्रतीच्छ	१२.	माँग लो
परितुष्टाः	५.	बहुत ही प्रसन्न हुये	भद्रम्	८.	कल्याण हो तुम
स्मः	६.	हैं	ते	७.	तुम्हारा
त्वद् बृहत्	१.	तुम्हारे महान्	वरदेशात्	९.	वर देने वालों के स्वामी मुझसे
व्रतचर्यया ।	२.	व्रताचरण से	अभिप्सितम् ॥	१०.	अभीष्ठ

श्लोकार्थ—तुम्हारे महान् व्रताचरण से हम तुम पर बहुत ही प्रसन्न हुये हैं। तुम्हारा कल्याण हो, तुम वर देने वालों के स्वामी मुझसे अभीष्ठ वर माँग लो ॥

चतुर्थः श्लोकः

ऋषिरुवाच—जितं ते देवदेवेश प्रपन्नार्तिहराच्युत ।
वरेणैतावतालं नो यद् भवान् समदृश्यत ॥४॥

पदच्छेद—

जितम् ते देव देवेश प्रपन्न आर्तिहर अच्युत ।
वरेण एतावता अलम् नः यत् भवान् सम दृश्यत् ॥

शब्दार्थ—

जितम्	६.	जय हो	वरेण	९.	वर
ते	५.	आपकी	एतावता	८.	इतना
देव देवेश	१.	हे देव देवेश्वर !	अलम्	१०.	पर्याप्त है
प्रपन्न	२.	शरणागत	नः	७.	हमारे लिये
आर्तिहर	३.	भयहारी	यत् भवान्	११.	कि आपने
अच्युत ।	४.	भगवन्	सम दृश्यत् ॥	१२.	दर्शन दिया

श्लोकार्थ—हे देव देवेश्वर ! शरणागत भयहारी भगवन् आपकी जय हो। हमारे लिये इतना वर पर्याप्त है कि आपने दर्शन दिया ॥

पञ्चमः श्लोकः

गृहीत्वाजाद्यो यस्य श्रीमत्पादाब्जदर्शनम् ।
मनसा योगपक्वेन स भवान् मेऽक्षगोचरः ॥५॥

पदच्छेद—

गृहीत्वा अज आद्यः यस्य श्रीमत् पादाब्ज दर्शनम् ।
मनसा योग पक्वेन सः भवान् मे अक्ष गोचरः ॥

शब्दार्थ—

गृहीत्वा	९.	पाकर कृतार्थ हो गये	मनसा	४.	एकाग्र मन से
अज	१.	ब्रह्मा	योग पक्वेन	३.	योग साधना के द्वारा
आद्यः	२.	आदि (देवगण)	सः	१०.	वे ही
यस्य	५.	जिनके	भवान्	११.	आप
श्रीमत्	६.	शोभा सम्पन्न	मे	१२.	मेरे
पादाब्ज	७.	चरण कमलों का	अक्ष	१३.	दृष्टि
दर्शनम् ।	८.	दर्शन	गोचरः ॥	१४.	गोचर हुये हैं

श्लोकार्थ—ब्रह्मा आदि देवगण योग साधना के द्वारा एकाग्र मन से जिनके शोभा सम्पन्न चरण कमलों का दर्शन पाकर कृतार्थ हो गये । वे ही आप मेरे दृष्टिगोचर हुये हैं ।

षष्ठः श्लोकः

अथाप्यम्बुजपत्राक्ष पुण्यश्लोकशिखामणे ।
द्रक्ष्ये मायां यया लोकः सपालो वेद सद्भिदाम् ॥६॥

पदच्छेद—

अथ अपि अम्बुज पत्राक्ष पुण्य श्लोक शिखामणे ।
द्रक्ष्ये मायाम् ययालोकः सपालो वेद सद्भिदाम् ॥

शब्दार्थ—

अथ-अपि	५.	फिर भी (मैं आपकी)	द्रक्ष्ये	७.	देखूंगा
अम्बुज	३.	कमल	मायाम्	६.	माया
पत्राक्ष	४.	नयन	ययालोकः	८.	जिससे लोक और
पुण्य श्लोक	१.	हे पवित्र कीर्ति वालों में	सपालो	९.	लोकपाल
शिखामणे ।	२.	श्रेष्ठ	वेद	११.	जानते हैं
			सद्भिदाम् ॥	१०.	ब्रह्म में अनेक प्रकार के भेद

श्लोकार्थ—हे पवित्र कीर्ति वालों में श्रेष्ठ कमल नयन फिर भी मैं आपकी माया देखूंगा जिससे लोक और लोक पाल ब्रह्म में अनेक प्रकार के भेद जानते हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

सूत उवाच—इतीडितोऽर्चितः काममृषिणा भगवान् मुने ।
तथेति स स्मयन् प्रागाद् बदर्याश्रममीश्वरः ॥७॥

पदच्छेद—

इति ईडितः अर्चितः कामम् ऋषिणा भगवान् मुने ।
तथा इति सः स्मयन् प्रागाद् बदर्याश्रमम् ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

इति	३.	इस प्रकार	तथा	११.	ठीक हैं
ईडितः	५.	स्तुत और	इति	१२.	ऐसा कहकर
अर्चितः	६.	पूजित होने पर	सः	७.	वे
कामम्	४.	इच्छानुसार	स्मयन्	१०.	मुस्कराते हुए
ऋषिणा	२.	मार्कण्डेय ऋषि के द्वारा	प्रागाद्	१४.	चले गये
भगवान्	८.	भगवान्	बदर्याश्रमम्	१३.	बदरिकाश्रम
मुने ।	१.	मुनि	ईश्वरः ॥	९.	नर-नारायण

श्लोकार्थ—मुनि मार्कण्डेय ऋषि के द्वारा इस प्रकार इच्छानुसार स्तुत और पूजित होने पर वे भगवान् नर-नारायण मुस्कराते हुये ठीक है, ऐसा कहकर बदरिकाश्रम चले गये ॥

अष्टमः श्लोकः

तमेव चिन्तयन्नर्थमृषिः स्वाश्रम एव सः ।
वसन्नग्न्यर्कसोमाम्बुभूवायुवियदात्मसु ॥८॥

पदच्छेद—

तम एव चिन्तयन् अर्थम् ऋषिः स्वाश्रमे एव सः ।
वसन् अग्नि अर्क सोमअम्बु भूः वायु वियत् आत्मसु ॥

शब्दार्थ—

तम एव	१०.	उसी	वसन्	४.	रहकर
चिन्तयन्	१२.	चिन्तन करते हुये रहने लगे	अग्नि अर्क	५.	अग्नि सूर्य
अर्थम्	११.	माया के दर्शन का	सोम अम्बु	६.	चन्द्रमा, जल
ऋषिः	२.	मार्कण्डेय ऋषि	भूः वायु	७.	पृथ्वी, वायु
स्व आश्रमे	३.	अपने आश्रम में ही	वियत्	८.	आकाश एवम्
एव सः ।	१.	वे	आत्मसु ॥	९.	अन्तःकरण में

श्लोकार्थ—वे मार्कण्डेय ऋषि अपने आश्रम में ही रहकर अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा जल, पृथ्वी, वायु, आकाश एवम् अन्तःकरण में उसी माया के दर्शन का चिन्तन करते हुये रहने लगे ॥

नवमः श्लोकः

ध्यायन् सर्वत्र च हरिं भावद्रव्यैरपूजयत् ।
क्वचित् पूजां विसस्मार प्रेमप्रसरसम्प्लुतः ॥६॥

पदच्छेद—

ध्यायन् सर्वत्र च हरिम् भाव द्रव्यैः अपूजयत् ।
क्वचित् पूजाम् विसस्मार प्रेम प्रसर सम्प्लुतः ॥

शब्दार्थ—

ध्यायन्	३. ध्यान करते हुये	क्वचित्	७. और कहीं
सर्वत्र च	१. वे सर्वत्र	पूजाम्	११. पूजा करना भी
हरिम्	२. भगवान् का	विसस्मार	१२. भूल जाते थे
भाव	४. मानसिक	प्रेम	८. प्रेम की
द्रव्यैः	५. वस्तुओं से	प्रसर	६. बाढ़ में
अपूजयत् ।	६. उनका पूजन करते	सम्प्लुतः ॥	१०. डूबते-उतराते रहने से

श्लोकार्थ—वे सर्वत्र भगवान् का ध्यान करते हुये मानसिक वस्तुओं से उनका पूजन करते और कहीं प्रेम की बाढ़ में डूबते-उतराते रहने से पूजा करना भी भूल जाते थे ॥

दशमः श्लोकः

तस्यैकदा भृगुश्रेष्ठ पुष्पभद्रातटे मुनेः ।
उपासीनस्य सन्ध्यायां ब्रह्मन् वायुरभून्महान् ॥१०॥

पदच्छेद—

तस्य एकदा भृगु श्रेष्ठ पुष्प भद्रा तटे मुनेः ।
उपासीनस्य सन्ध्यायाम् ब्रह्मन् वायुः अभूत् महान् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	६. उन	उपासीनस्य	६. करने में निरत होने पर
एकदा	३. एक बार	सन्ध्यायाम्	८. सन्ध्योपासन
भृगुश्रेष्ठ	२. शौनक जी !	ब्रह्मन्	१. ब्रह्मन्
पुष्पभद्रा	४. पुष्पभद्रा नदी के	वायुः	११. आँधी
तटे	५. तट पर	अभूत्	१२. चलने लगी
मुनेः ।	७. मुनि (मार्कण्डेय) के	महान् ॥	१०. बड़े जोर की

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! शौनक जी एकबार पुष्पभद्रा नदी के तट पर उन मुनि मार्कण्डेय के सन्ध्योपासन करने में निरत होने पर बड़े जोर की आँधी चलने लगी ॥

एकादशः श्लोकः

तं चण्डशब्दं समुदीरयन्तं बलाहका अन्वभवन् करालाः ।
अक्षस्थविष्ठा मुमुचुस्तडिद्भिः स्वनन्त उच्चैरभिवर्षधाराः ॥११॥

पदच्छेद—

तम चण्ड शब्दम् समुदीरयन्तः बलाहकाः अन्वभवन् करालाः ।
अक्षस्थविष्ठा मुमुचुः तडिद्भिः स्वनन्त उच्चैः अभिवर्षधाराः ॥

शब्दार्थ—

तम्	१.	वह	अक्षस्थविष्ठा	१०.	रथ के धुरे के समान मोटी-मोटी
चण्डशब्दम्	२.	भयंकर शब्द	मुमुचुः	१२.	छोड़ने लगे
समुदीरयन्तः	३.	करते हुये	तडिद्भिः	७.	बिजलियों के कारण
बलाहकाः	४	मेघ	स्वनन्तः	९.	कड़कते हुये
अन्वभवन्	६.	हो गये (और)	उच्चैः	८.	जोर से
करालाः ।	५.	विकराल	अभिवर्षधाराः॥	११.	वर्षा-जल की धारायें

श्लोकार्थ—वह भयंकर शब्द करते हुये मेघ विकराल हो गये और बिजलियों के कारण जोर से कड़कते हुये रथ के धुरे के समान मोटी-मोटी वर्षा जल की धारायें छोड़ने लगे ॥

द्वादशः श्लोकः

ततो व्यदृश्यन्त चतुःसमुद्राः समन्ततः क्ष्मातलमाग्रसन्तः ।
समीरवेगोर्मिभिरुग्रनक्र महाभयावर्तगभीरघोषाः ॥१२॥

पदच्छेद—

ततः व्यदृश्यन्त चतुः समुद्राः समन्ततः क्ष्मातलम् अग्रसन्तः ।
समीरवेग उर्मिभिः उग्रनक्र महाभय आवर्त गभीर घोषाः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	समीरवेग	५.	वायु के वेग से उत्पन्न
व्यदृश्यन्त	१२.	दिखाई पड़े	उर्मिभिः	६.	लहरों के कारण
चतुःसमुद्राः	११.	चारों समुद्र	उग्रनक्र	७.	भयंकर मगर
समन्ततः	२.	सब ओर से	महाभय	८.	महान भयानक
क्ष्मातलम्	३.	पृथ्वी को	आवर्त	९.	भँवर एवम्
अग्रसन्तः ।	४.	निगलते हुये	गभीरघोषाः॥	१०.	गंम्भीर ध्वनि वाले

श्लोकार्थ—तदनन्तर सब ओर से पृथ्वी को निगलते हुये वायु के वेग से उत्पन्न लहरों के कारण भयंकर मगर महाभयानक भँवर एवम् गम्भीर ध्वनि वाले चारों समुद्र दिखाई पड़े ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अन्तर्बहिश्चाद्भिरतिद्युभिः खरैः शतह्रदाभीरुपतापितं जगत् ।
चतुर्विधं वीक्ष्य सहात्मना मुनिर्जलाप्लुतां क्ष्मां विमनाः समत्रसत् ॥१३॥

पदच्छेद— अन्तः बहि च अद्भिः अतिद्युभिः खरैः शतह्रदाभिः क्ष्मां उपतापितम् जगत् ।
चतुर्विधम् वीक्ष्य सह आत्मना मुनिः जल आप्लुताम् विमनाः समत्रसत् ॥

शब्दार्थ—

अन्तः बहिः च	५.	भीतर-बाहर	चतुर्विधम्	९.	चार प्रकार के जीवों को
अद्भिः	३.	जल से तथा	वीक्ष्य	१२.	देखकर
अतिद्युभिः	२.	अत्यन्त कान्ति वाले	सह आत्मना	८.	अपने सहित
खरैः	१.	तीक्ष्ण और	मुनिः	१३.	मार्कण्डेय मुनि
शतह्रदाभिः	४.	बिजलियों से	जलआप्लुताम्	१०.	जल मग्न एवं
उपतापितम्	६.	सन्तप्त	क्ष्माम्	११.	पृथ्वी को भी
जगत् ।	७.	जगत् को	विमनाः	१४.	उदास होकर
			समत्रसत् ॥	१५.	डर गये

श्लोकार्थ—तीक्ष्ण और अत्यन्त कान्ति वाले जल से तथा बिजलियों से बाहर भीतर सन्तप्त जगत् को अपने सहित चार प्रकार के जीवों को जल मग्न एवं पृथ्वी को भी देखकर मार्कण्डेय मुनिः उदास होकर डर गये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

तस्यैवमुद्वीक्षत ऊर्मिभीषणः प्रभञ्जनाघूर्णितवार्महार्णवः ।
आपूर्यमाणो वरषद्भिरम्बुदैः क्ष्मामप्यधाद् द्वीपवर्षाद्रिभिः समम् ॥१४॥

पदच्छेद— तस्य एवम् उद्वीक्षत ऊर्मि भीषणः प्रभञ्जन आघूर्णित वार्महार्णवः ।
आपूर्यमाणः वरषद्भिः अम्बुदैः क्ष्माम् अपि अधात् द्वीपवर्षा अद्रिभिः समम् ॥

शब्दार्थ—

तस्य	१.	उनके	आपूर्यकामः	९.	भरे जाते हुये
एवम्	२.	इस प्रकार	वरषद्भिः	७.	एवं बरसते हुये
उद्वीक्षत	३.	देखते हुये	अम्बुदैः	८.	बादलों से
ऊर्मिभीषणः	४.	लहरों से भयंकर	क्ष्माम् अपि	१३.	पृथ्वी को भी
प्रभञ्जन	५.	आंधी के कारण	अधात्	१४.	डुबा दिया
आघूर्णित	६.	नाचते हुये जल वाले	द्वीपवर्षा	११.	द्वीप वर्षा और
वार्महार्णवः ।	१०.	प्रलय समुद्र ने	अद्रिभिः समम् ॥	१२.	पर्वतों के साथ

श्लोकार्थ—उनके इस प्रकार देखते हुये लहरों से भयंकर आंधी के कारण नाचते हुये जल वाले एवं बरसते बादलों से भरे जाते हुये प्रलय समुद्र ने द्वीप, वर्षा और पर्वतों के साथ पृथ्वी को भी डुबा दिया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

सूक्ष्मान्तरिक्षं सदिवं सभागणं त्रैलोक्यमासीत् सह दिग्भिराप्लुतम् ।
स एक एवोर्वरितो महामुनिर्बभ्राम विक्षिप्य जटा जडान्धवत् ॥१५॥

पदच्छेद—
सूक्ष्मा अन्तरिक्षम् सदिवम् सभागणम् त्रैलोक्यम् आसीत् सह दिग्भिः ।
सः एकः एव उर्वरितः महामुनिः बभ्राम विक्षिप्य जटाः जडअन्ध वत् आप्लुतम् ॥

शब्दार्थ—

सूक्ष्मा	१. पृथ्वी	सःएकएव	१०. वे अकेले ही
अन्तरिक्षम्	२. अन्तरिक्ष	उर्वरितः	९. बचे हुये
सदिवम्	३. स्वर्ग	महामुनिः	११. महामुनि
सभागणम्	४. ज्योतिर्मण्डल तथा	बभ्राम	१६. चक्कर काटने लगे
त्रैलोक्यम्	५. तीनों लोक	विक्षिप्य	१३. फैलाकर
आसीत्	८. थे	जटाः	१२. जटाओं को
सहदिग्भिः	६. दिशाओं के साथ	जड	१४. पागल और
आप्लुतम् ।	७. जल में डूब गये	अन्धवत् ॥	१५. अन्धे के समान

श्लोकार्थ—पृथ्वी अन्तरिक्ष, स्वर्ग, ज्योतिर्मण्डल तथा तीनों लोक दिशाओं के साथ जल में डूब गये थे। बचे हुये वे अकेले ही महामुनि जटाओं को फैलाकर पागल और अन्धे के समान चक्कर काटने लगे ॥

षोडशः श्लोकः

क्षुत्तृट्परीतो मकरैस्तिमिङ्गिलैरुपद्रुतो वीचीनभस्वता हतः ।
तमस्यपारे पतितो भ्रमन् दिशो न वेद खं गां च परिश्रमेषितः ॥१६॥

पदच्छेद— क्षुत्र् ट् परीतः मकरैः तिमिङ्गिलैः उपद्रुतः वीची नभस्वात हतः ।
तमसि अपारे पतितः भ्रमन् दिशः न वेद खम् गाम् च परिश्रम ईषितः ॥

शब्दार्थ—

क्षुतृट्	१. भूख-प्यास से	तमसिअपारे	९. अपार अन्धकार में
परीतः	२. व्याकुल	पतितः	१० गिर कर
मकरैः	३. मगरों और	भ्रमन्	११. भटकते हुये तथा
तिमिङ्गिलैः	४. बड़े-बड़े मच्छों से	दिशाः	१५. दिशाओं को
उपद्रुतः	५. पीडित	न वेद	१६. नहीं जाना
वीची	६. लहरों के	खम् गाम् च	१४. आकाश, पृथ्वी एवम्
नभस्वता	७. थपेड़ों से	परिश्रमः	१२. परिश्रम से
हतः ।	८. आहत	ईषितः ॥	१३. थके हुये मुनि ने

श्लोकार्थ—भूख, प्यास से व्याकुल, मगरों और बड़े-बड़े मच्छों से पीड़ित लहरों के थपेड़ों से आहत अपार अन्धकार में गिर कर भटकते हुये तथा परिश्रम से थके हुये मुनि ने आकाश, पृथ्वी एवम् दिशाओं को नहीं जाना ॥

सप्तदशः श्लोकः

क्वचिद् गतो महावर्ते तरलैस्ताडितः क्वचित् ।
यादोभिर्भक्ष्यते क्वापि स्वयमन्योन्यघातिभिः ॥१७॥

पदच्छेद—

क्वचित् गतः महावर्ते तरलैः ताडितः क्वचित् ।
यादोभिः भक्ष्यते क्वापि स्वयम् अन्योन्य घातिभिः ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	वे कहीं	यादोभिः	११.	जलचरों द्वारा
गतः	३.	पड़ जाते	भक्ष्यते	१२.	खाये जाते थे
महावर्ते	२.	बड़े भारी भँवर में	क्वापि	७.	कहीं
तरलैः	५.	तरल तरङ्गों से	स्वयम्	८.	स्वयम्
ताडितः	६.	आहत होते	अन्योन्य	९.	एक दूसरे को
क्वचित् ।	४.	कहीं	घातिभिः ॥	१०.	मार देने वाले

श्लोकार्थ—वे कहीं बड़े भारी भँवर में पड़ जाते, कहीं तरल तरङ्गों से आहत होते, कहीं स्वयं एक दूसरे को मार देने वाले जलचरों द्वारा खाये जाते थे ॥

अष्टादशः श्लोकः

क्वचिच्छोकं क्वचिन्मोहं क्वचिद् दुःखं सुखं भयम् ।
क्वचिन्मृत्युमवाप्नोति व्याध्यादिभिरुतार्दितः ॥१८॥

पदच्छेद—

क्वचित् शोकम् क्वचित् मोहम् क्वचित् दुःखम् सुखम् भयम् ।
क्वचित् मृत्युमवाप्नोति व्याध्यादिभिः उत अर्दितः ॥

शब्दार्थ—

क्वचित्	१.	कहीं	क्वचित्	८.	कहीं
शोकम्	२.	शोक को	मृत्यु	९.	मृत्यु को
क्वचित्	३.	कहीं	अवाप्नोति	१०.	प्राप्त होते
मोहम्	४.	मोह को	व्याधि	१२.	रोग
क्वचित्	५.	कहीं	आदिभिः	१३.	आदि से
दुःखम्-सुखम्	६.	सुख-दुःख और	उत	११.	और कहीं
भयम् ॥	७.	भय को	अर्दितः ॥	१४.	पीड़ित होते थे

श्लोकार्थ—कहीं शोक को, कहीं मोह को, कहीं सुख-दुःख और भय को कहीं मृत्यु को प्राप्त होते। और-कहीं रोग आदि से पीड़ित होते थे ॥

एकोनविंशः श्लोकः

अयुतायुतवर्षाणां सहस्राणि शतानि च ।
व्यतीयुर्भ्रमतस्तस्मिन् विष्णुमायावृतात्मनः ॥१९॥

पदच्छेद—

अयुत अयुत वर्षाणाम् सहस्राणि शतानि च ।
व्यतीयुः भ्रमतः तस्मिन् विष्णु माया आवृत आत्मनः ।

शब्दार्थ—

अयुत	६.	करोड़ो	व्यतीयुः	१०.	बीत गये
अयुत वर्षाणाम्	७.	करोड़ों वर्ष	भ्रमतः	९.	भटकते हुये
सहस्राणि	३.	सैंकड़ों	तस्मिन्	८.	उस समुद्र में
शतानि	५.	हजारों	विष्णु माया	१.	विष्णु की माया से
च ।	४.	और	आवृत आत्मनः ॥	२	आच्छादित बुद्धि वाले मुनि को

श्लोकार्थ—विष्णु की माया से आच्छादित बुद्धि वाले मुनि को सैकड़ों और हजारों, करोड़ों, करोड़ों वर्ष उस समुद्र में भटकते हुये बीत गये ॥

विंशः श्लोकः

सः कदाचिद् भ्रमंस्तस्मिन् पृथिव्याः ककुदि द्विजः ।
न्यग्रोधपोतं ददृशे फलपल्लवशोभितम् ॥२०॥

पदच्छेद—

सः कदाचित् भ्रमन् तस्मिन् पृथिव्याः ककुदि द्विजः ।
न्यग्रोध पोतम् ददृशे फल पल्लव शोभितम् ॥

शब्दार्थ—

सः	३.	उस	न्यग्रोध	११.	बरगद का
कदाचित्	५.	किसी समय	पोतम्	१२.	एक छोटा सा पेड़
भ्रमन्	२.	भटकते हुये	ददृशे	१३.	देखा
तस्मिन्	१.	वहाँ	फल	८.	फलों और
पृथिव्याः	६.	पृथ्वी के	पल्लव	९.	पल्लवों से
ककुदि	७.	एक टीले पर	शोभितम् ॥	१०.	सुशोभित
द्विजः ।	४.	ब्राह्मण ने			

श्लोकार्थ—वहां भटकते हुये उस ब्राह्मण ने किसी समय पृथ्वी के एक टीले पर फलों और पल्लवों से सुशोभित बरगद का एक छोटा सा वृक्ष देखा ॥

एकविंशः श्लोकः

प्रागुत्तरस्यां शाखायां तस्यापि ददृशे शिशुम् ।
शयानं पर्णपुटके ग्रसन्तं प्रभया तमः ॥२१॥

पदच्छेद—

प्राक् उत्तरस्याम् शाखायाम् तस्य अपि ददृशे शिशुम् ।
शयानम् पर्ण पुटके ग्रसन्तम् प्रभया तमः ॥

शब्दार्थ—

प्राक्	२.	पूर्व	शयानम्	७.	सोये हुये
उत्तरस्याम्	३.	उत्तर (ईशान) कोणवाली	पर्ण	५.	पत्तों के
शाखायाम्	४.	शाखा में	पुटके	६.	दोने में
तस्य अपि	१.	उस वृक्ष की	ग्रसन्तम्	१०	नष्ट करते हुये
ददृशे	१२.	देखा	प्रभया	८.	अपनी कान्ति से
शिशुम् ।	११.	एक शिशु को	तमः ॥	९.	अन्धकार को

श्लोकार्थ—उस वृक्ष की पूर्व उत्तर ईशान कोण वाली शाखा में पत्तों के दोने में सोये हुये अपनी कान्ति से अन्धकार को नष्ट करते हुये एक शिशु को देखा ।

द्वाविंशः श्लोकः

महामरकतश्यामं श्रीमद्वदनपङ्कजम् ।
कम्बुग्रीवं महोरस्कं सुनासं सुन्दरभ्रुवम् ॥२२॥

पदच्छेद—

महा मरकत श्यामम् श्रीमद् वदन पङ्कजम् ।
कम्बु ग्रीवम् महोरस्कम् सुनासम् सुन्दर भ्रुवम् ॥

शब्दार्थ—

महा	१.	महा	कम्बु	७.	शंख के समान
मरकत	२.	मरकत मणि के समान	ग्रीवम्	८.	उतार-चढ़ाव वाली गरदन वाले
श्यामम्	३.	सांवले	महोः	९.	विशाल
श्रीमद्	४.	शोभायमान्	अस्कम्	१०.	छाती वाले तथा
वदन	५.	मुख	सुनासम	११.	सुन्दर नाम वाले
पङ्कजम् ।	६.	कमल वाले	सुन्दर भ्रुवम्॥	१२.	सुन्दर भौहों वाले (शिशुको-देखा)

श्लोकार्थ—महा मरकत मणि के समान सांवले और शोभायमान मुख कमल वाले, शंख के समान उतार-चढ़ाव वाली गरदन वाले, विशाल छाती और सुन्दर नाक वाले, सुन्दर भौहों वाले शिशु को देखा ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

श्वासैजदलकाभातं कम्बुश्रीकर्णदाडिमम् ।
विद्रुमाधरभासेषच्छोणायितसुधास्मितम् ॥२३॥

पदच्छेद—

श्वास एजत अलक आभातम् कम्बु श्री कर्ण दाडिमम् ।
विद्रुम अधर भास ईषत् | शोणायित सुधा स्मितम् ॥

शब्दार्थ—

श्वासएजत्	१.	श्वास से हिलती हुई	विद्रुम	७.	मूंगे के समान
अलक	२.	अलकों से	अधर	८.	लाल होठों की
आभातम्	३.	शोभायमान	भास ईषत्	९.	कान्ति से कुछ
कम्बु	४.	शंख के समान	शोणायित	१०.	लालिमा लिये
श्रीकर्ण	५.	घुमावदार कानों में	सुधा	११.	सुधामय
दाडिमम् ।	६.	अनार के फूलों से शोभित	स्मितम्॥	१२.	मुसकान वाले शिशु को देखा

श्लोकार्थ—श्वास से हिलती हुई अलकों से शोभायमान शंख के समान घुमावदार कानों में अनार के फूलों से शोभित मूंगे के समान लाल होठों की कान्ति से कुछ लालिमा लिये सुधामय मुसकान वाले शिशु को देखा ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

पद्मगर्भारुणापाङ्गं हृद्यहासावलोकनम् ।
श्वासैजद्वलिसंविग्ननिम्ननाभिदलोदरम् ॥२४॥

पदच्छेद—

पद्मगर्भ अरुण अपाङ्गम् हृद्य हास अवलोकनम् ।
श्वास एजद्वलि संविग्न निम्न नाभि दल उदरम् ॥

शब्दार्थ—

पद्मगर्भ	१.	कमल के भीतरी भाग के समान	श्वास	७.	श्वास लेने के समय
अरुण	२.	लाल	एजद्वलि	८.	हिलती हुई
अपाङ्गम्	३.	नेत्र प्रान्त वाले	संविग्न	९.	तथा बड़ो
हृद्य	४.	आकर्षक	निम्न नाभि	१०.	गंभीर नाभि वाले
हास	५.	मुसकान और	दल	११.	पीपल के पत्ते के समान
अवलोकनम् ।	६.	चितवन वाले	उदरम् ॥	१२.	पेट वाले (शिशु को देखा)

श्लोकार्थ—कमल के भीतरी भाग के समान लाल नेत्र प्रान्त वाले आकर्षक मुसकान और चितवन वाले, श्वास लेने के समय हिलती हुई, तथा बड़ो गम्भीर नाभि वाले, पीपल के पत्ते के समान पेट वाले शिशु को देखा ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

चार्वङ्गुलिभ्यां पाणिभ्यामुन्नीय चरणाम्बुजम् ।
मुखे निधाय विप्रेन्द्रो धयन्तं वीक्ष्य विस्मितः ॥२५॥

पदच्छेद—

चारु अङ्गुलिभ्याम् पाणिभ्याम् उन्नीय चरण अम्बुजम् ।
मुखे निधाय विप्रेन्द्रः धयन्तम् वीक्ष्य विस्मितः ॥

शब्दार्थ—

चारु	१.	अपनी सुन्दर	मुखे	७.	मुख में
अङ्गुलिभ्याम्	२.	अगुँलियों वाले	निधाय	८	डालकर
पाणिभ्याम्	३.	हाथों से	विप्रेन्द्र	१०.	मार्कण्डेय मुनि
उन्नीय	६.	उठाकर	धयन्तम्	९.	चुसते हुये (उस शिशुको)
चरण	४.	चरण	वीक्ष्य	११.	देखकर
अम्बुजम् ।	५.	कमल को	विस्मितः ॥	१२.	आश्चर्य में पड़ गये

श्लोकार्थ—अपनी सुन्दर अंगुलियों वाले हाथों से चरण कमल उठाकर मुख में डालकर चूसते हुये उस शिशु को माकण्डेय मुनि देखकर आश्चर्य में पड़ गये ॥

षड्विंशः श्लोकः

तद्दर्शनाद् वीतपरिश्रमो मुदा प्रोत्फुल्लहृत्पद्मविलोचनाम्बुजः ।
प्रहृष्टरोमाद्भुतभावशङ्कितः प्रष्टुं पुरस्तं प्रससार बालकम् ॥२६॥

पदच्छेद—

तत् दर्शनात् वीत परिश्रमः मुदा प्रोत्फुल्लहृत पद्म विलोचन अम्बुजः ।
प्रहृष्टरोम अद्भुत भावशङ्कित प्रष्टुम् पुरस्तम् प्रससार बालकम् ॥

शब्दार्थ—

तत् दर्शनात्	१.	उस शिशु के दर्शन से उनकी	प्रहृष्ट रोमा	८.	शरीर रोमञ्चित हो गया
वीत परिश्रमः	२.	थकावट दूर हो गई	अद्भुतभाव	९.	शिशु के अद्भुत भाव से
मुदा	६.	हर्ष से	शङ्कितः	१०.	शङ्कित होकर
प्रोत्फुल्ल	७.	खिल गये	प्रष्टुम्	१२.	पूछने के लिये
हृतपद्म	३.	उनका हृदय तथा	पुरः तम्	१३.	उसके सामने
विलोचन	४.	नेत्र	प्रससार	१४.	सरक गये
अम्बुजः ।	५.	कमल	बालकम् ॥	११.	उस बालक से

श्लोकार्थ—उस शिशु के दर्शन से उनकी थकावट दूर हो गई उनका हृदय तथा नेत्र कमल हर्ष से खिल गये। शरीर रोमाञ्चित हो गया। शिशु के अद्भुत भाव से सशंकित होकर उस बालक से पूछने के लिये उसके सामने सरक गये ॥

सप्तविंशः श्लोकः

तावच्छिशोर्वै श्वसितेन भार्गवः सोऽन्तःशरीरं मशको यथाविशत् ।
तत्राप्यदो न्यस्तमचष्ट कृत्स्नशो यथा पुरा मुह्यदतीव विस्मितः ॥२७॥

पदच्छेद—

तावत् शिशोः वै श्वसितेन भार्गव सोऽन्तः शरीरम् मशको यथा विशत् ।
तत्र अपि अदः न्यस्तम् अचष्ट कृत्स्नशः यथा पुरा मुह्यत् अतीव विस्मितः ॥

शब्दार्थ—

तावत् शिशोःवै	१.	तभी शिशु के	अदःन्यस्तम्	१०.	जगत् को पहले जैसा
श्वसितेन	२.	श्वास के साथ	अचष्ट	११.	देखकर
भार्गवः सः	३.	वे मार्कण्डेय मुनि	कृत्स्नशः	९.	सम्पूर्ण
अन्तःशरीरम्	४.	उसके शरीर के भीतर	यथा पुरा	८.	पूर्व की भाँति
मशकः यथा	५.	मच्छर के समान	मुह्यत्	१४.	वे मोह में पड़ गये
अविशत् ।	६.	घुस गये	अतीव	१२.	अत्यन्त
तत्र अपि	७.	वहाँ भी	विस्मितः ॥	१३.	आश्चर्य चकित होकर

श्लोकार्थ—तभी शिशु के श्वास के साथ वे मार्कण्डेय मुनि उसके शरीर के भीतर मच्छर के समान घुस गये । वहाँ भी पूर्व की भाँति सम्पूर्ण जगत को पहले जैसा देखकर अत्यन्त आश्चर्य चकित होकर वे मोह में पड़ गये ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

खं रोदसी भगणानद्रिसागरान् द्वीपान् सवर्षान् ककुभः सुरासुरान् ।
वनानि देशान् सरितः पुराकरान् खेटान् व्रजानाश्रमवर्णवृत्तयः ॥२८॥

पदच्छेद—

खम् रोदसी भगणान् अद्रि सागरान् द्वीपान् सवर्षान् कुकुभः सुर असुरान् ।
वनानि देशान् सरितः पुर आकरान् खेटान् व्रजान् आश्रम वर्णवृत्तयः ॥

शब्दार्थ—

खम्	१.	आकाश	वनानि देशान्	८.	वन-देश
रोदसी	२.	अन्तिरिक्ष, पृथ्वी	सरितः	९.	नदियाँ
भगणान् अद्रि	३.	नक्षत्र गण, पर्वत	पुर आकरान्	१०.	नगर खानें
सागरान्	४.	समुद्र	खेटान्	११.	किसानों के गाँव
द्वीपान्	५.	द्वीप	व्रजान्	१२.	अहीरों की बस्तियाँ
सवर्षान्कुकुभः	६.	वर्ष, दिशायें	आश्रमवर्ण	१३.	आश्रम वर्ण
सुर असुरान् ।	७.	देवता, दैत्य	वृत्तयः ॥	१४.	उनके आचार व्यवहार देखे

श्लोकार्थ—मुनि ने शिशु के उदर में आकाश, अन्तरिक्ष, पृथ्वी, नक्षत्रगण, पर्वत, समुद्र द्वीप, वर्ष, दिशायें, देवता, दैत्य, वन, देश, नदियाँ, नगर, खाने, किसानों के गाँव अहीरों की बस्तियाँ, आश्रम वर्ण और उनके आचार व्यवहार देखे ॥

एकोनत्रिंशः श्लोकः

महान्ति भूतान्यथ भौतिकान्यसौ कालं च नानायुगकल्पकल्पनम् ।
यत् किञ्चिदन्यद् व्यवहारकारणं ददर्श विश्वं सदिवावभासितम् ॥२९॥

पदच्छेद—

महान्ति भूतानि अथ भौतिकानि असौ कालम् च नानायुगकल्पकल्पनम् ।
यत् किञ्चित् अन्यत् व्यवहारकारणम् ददर्श विश्वम् सदिव अवभासितम् ॥

शब्दार्थ —

महान्ति	३.	पञ्चमहा	यत्किञ्चित्	९.	जो कुछ
भूतानि	४.	भूत	अन्यत्	१०.	अन्य
अथ	१.	और	व्यवहार	११.	सांसारिक व्यवहार का
भौतिकानि	५.	भूतों से निर्मित पदार्थ	कारणम्	१२.	कारण है उसे तथा
असौ	२.	उन्होंने	ददर्श	१६.	देखा
कालम् च	८.	युक्त काल	विश्वम्	१५.	विश्व को
नानाकल्प	६.	अनेक युग और कल्पों के	सदिव	१३.	सत्य के समान
कल्पनम् ।	७.	भेद से	अवभासितम् ॥	१४.	प्रतीत होने वाले

श्लोकार्थ — और उन्होंने पञ्चमहाभूत, भूतों से निर्मित पदार्थ अनेक युग और कल्पों के भेद से युक्त काल जो कुछ अन्य सांसारिक व्यवहार का कारण है उसे तथा सत्य के समान प्रतीत होने वाले विश्व को देखा ॥

त्रिंशः श्लोकः

हिमालयं पुष्पवहां च तां नदीं निजाश्रमं तत्र ऋषीनपश्यत् ।
विश्वं विपश्यञ्छ्वसिताच्छिशोर्वै बहिर्निरस्तो न्यपतल्लयाब्धौ ॥३०॥

पदच्छेद—

हिमालयम् पुष्पवहाम् च ताम् नदीम् निज आश्रमम् तत्र ऋषीन् पश्यत् ।
विश्वम् विपश्यत् श्वसितात् शिशोः वै बहिः निरस्तः न्यपतत् लयअब्धौ ॥

शब्दार्थ—

हिमालयम्	१.	हिमालय पर्वत	विश्वम्	९.	इस प्रकार विश्व को
पुष्पवहाम् च	३.	पुष्प भद्रा	विपश्यत्	१०.	देखते-देखते (मुनि)
ताम्	२.	वही	श्वसितात्	११.	श्वास के द्वारा
नदीम्	४.	नदी	शिशोः वै	१२.	शिशु के
निज आश्रमम्	६.	अपना आश्रम तथा	बहिः	१४.	बाहर
तत्र	५.	वहाँ	निरस्तः	१४.	आगये और
ऋषीन्	७.	ऋषियों को भी	न्यपतत्	१६.	गिर गये
पश्यत् ।	८.	देखा	लय अब्धौ ॥	१५.	प्रलय कालीन समुद्र में

श्लोकार्थ—हिमालय पर्वत, वही पुष्पभद्रा नदी, वहाँ अपना आश्रम तथा ऋषियों को भी देखा ! इस प्रकार विश्व को देखते-देखते (मार्कण्डेय मुनि) श्वास के द्वारा शिशु के बाहर आगये, और प्रलय कालीन समुद्र में गिर गये ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

तस्मिन् पृथिव्याः ककुदि प्ररूढं वटं च तत्पर्णपुटे शयानम् ।
तोकं च तत्प्रेमसुधास्मितेन निरीक्षितोऽपाङ्गनिरीक्षणेन ॥३१॥

पदच्छेद—

तस्मिन् पृथिव्याः ककुदि प्ररूढम् वटम् च तत्पर्णपुटे शयानम् ।
तोकम् च तत् प्रेमसुधास्मितेन निरीक्षतः अपाङ्ग निरीणणेन ॥

शब्दार्थ—

तस्मिन्	१. उस समुद्र में	तोकम्	६. शिशु (देखा)
पृथिव्याः	२. पृथ्वी के	च तत्	१०. और उसके
ककुदि	३. टीले पर	प्रेम	११. प्रेम
प्ररूढम्	४. उगा हुआ	सुधा	१२. अमृत से पूर्ण
वटम्	५. बरगद का पेड़	स्मितेन	१३. मुसकराहट तथा
च तत्	६. उसके	निरीक्षितः	१६. मुनि को देख रहा है
पर्णपुटे	७. पत्तों के दोने में	अपाङ्ग	१ . आँखों के किमारे से
शयानम् ।	८. सोया हुआ	निरीक्षणेन् ॥	१५. निरीक्षण के लिये

श्लोकार्थ—उस समुद्र में पृथ्वी के टीले पर उगा हुआ बरगद का पेड़ और उमके पत्तों के दोने में सोया हुआ शिशु देखा । और उसके प्रेम अमृत से पूर्ण मुसकराहट है तथा वह आखों के किनारे से निरीक्षण के लिये मुनि को देख रहा है ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

अथ तं बालकं वीक्ष्य नेत्राभ्यां धिष्ठितं हृदि ।
अभ्ययादतिसंक्लिष्टः परिष्वक्तुमधोक्षजम् ॥३२॥

पदच्छेद—

अथ तम् बालकम् वीक्ष्य नेत्राभ्याम् धिष्ठितम् हृदि ।
अभ्ययात् अतिसंकिलिष्टः परिष्वक्तुम् अधोक्षजम् ॥

शब्दार्थ—

अथतम्	१. तदनन्तर उस	हृदि	४. हृदय में
बालकम्	२. बालक को	अभ्ययात्	१०. आगे बढ़े
वीक्ष्य	३. देखकर	अति संकिलिष्टः	६. बड़े क्लेश से
नेत्राभ्याम्	५. नेत्रों द्वारा	परिष्वक्तुम्	८. आलिङ्गन करने के लिये
धिष्ठितम्	६. विराजमान किये हुये	अधोक्षजम् ॥	७. भगवान् का

श्लोकार्थ—तदनन्तर उस बालक को देखकर हृदय में नेत्रों द्वारा विराजमान किये हुये भगवान्, का आलिङ्गन करने के लिये बड़े क्लेश से आगे बढ़े ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

तावत् स भगवान् साक्षाद् योगाधीशो गुहाशयः ।
अन्तर्दध ऋषेः सद्यो यथेहानीशनिर्मिता ॥३३॥

पदच्छेद—

तावत् स भगवान् साक्षाद् योग अधीशः गुहाशयः ।
अन्तर्दधे ऋषेः सद्यः यथा इह अनीश निर्मिता ॥

शब्दार्थ—

तावत्	१.	तब तक	अन्तर्दधे	९.	अन्तर्ध्यान हो गये
सः	५.	वे	ऋषेः	७.	मार्कण्डेयजी के सामने से
भगवान्	६.	भगवान्	सद्यः	८.	तुरन्त
साक्षाद्	४.	साक्षात्	यथाइह	१०.	जैसे यहां
योगअधीशः	३.	योग के स्वामी	अनीश	११.	असमर्थ पुरुष का
गुहाशयः ।	२.	सब के हृदय में छिपे रहने वाले	निर्मिता ॥	१२.	परिश्रम (बिना फल दिये गायब हो जाता है

श्लोकार्थ—तब-तक सबके हृदय में छिपे रहने वाले योग के स्वामी साक्षात् वे भगवान् मार्कण्डेय जी के सामने से तुरन्त अंतर्ध्यान हो गये ! जैसे यहां असमर्थ पुरुष को परिश्रम बिना फल दिये गायब हो जाता है ॥

चतुर्त्रिंशः श्लोकः

तमन्वथ वटो ब्रह्मन् सलिलं लोकसम्प्लवः ।
तिरोधायि क्षणादस्य स्वाश्रमे पूर्ववत् स्थितः ॥३४॥

पदच्छेद—

यम् अनुअथ वटः ब्रह्मन् सलिलम् लोकसम्प्लवः ।
तिरोधायि क्षणात् अस्य स्व आश्रमे पूर्व वत् स्थितः ॥

शब्दार्थ—

तम् अनु	२.	उस शिशु के गायब होतेही	तिरोधायि	९.	अन्तर्हित हो गया और मुनि
अथ	३.	तदनन्तर वह	क्षणात्	८.	क्षण भर में
वटः	४.	बरगद का वृक्ष तथा	अस्य	७.	उसके
ब्रह्मन्	१.	हे शौनक जी !	स्व आश्रमे	१०.	अपने आश्रम में
सलिलम्	६.	जल	पूर्व वत्	११.	पहले के समान
लोकसम्प्लवः।	५.	लोक विनाशकारी	स्थितः ॥	१२.	स्थित हो कर बैठे हैं

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! उस शिशु के गायब होते हो तदनन्तर वह बरगद का वृक्ष तथा लोक विनाशकारी जल उसके क्षणभर में अन्तर्हित हो गया, और मुनि अपने आश्रम में पहले के समान स्थित होकर बैठे हैं ।

श्री मद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां
द्वादश स्कन्धे नवमः अध्यायः ॥९॥

श्रीमद्भागवत महापुराणम्

द्वादशः स्कन्धः

दशमः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

सूत उवाच—स एवमनुभूयेदं नारायणविनिर्मितम् ।
वैभवं योगमायायास्तमेव शरणं ययौ ॥१॥

पदच्छेद—

सः एवम् अनुभूय इदम् नारायण विनिर्मितम् ।
वैभवम् योगमायायास्तम् एव शरणम् ययौ ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	मार्कण्डेय मुनि	वैभवम्	६.	वैभव का
एवम्	२.	इस प्रकार	योग	८.	योग
अनुभुय	७.	अनुभव करके	मायाया	९.	माया के
इदम्	५.	इस	तम् एव	१०.	उन्हीं (भगवान्) की
नारायण	३.	नारायण	शरणम्	११.	शरण में
विनिर्मितम् ।	४.	निर्मित	ययौ ॥	१२.	स्थित हो गये

श्लोकार्थ—मार्कण्डेय मुनि इस प्रकार नारायण निर्मित इस वैभव का अनुभव करके माया के उन्हीं भगवान् की शरण में स्थित हो गये ॥

द्वितीयः श्लोकः

मार्कण्डेय उवाच—प्रपन्नोऽस्म्यङ्घ्रिमूलं ते प्रपन्नाभयदं हरे ।
यन्माययापि विबुधा मुह्यन्ति ज्ञानकाशया ॥२॥

पदच्छेद—

प्रपन्नः अस्मि अङ्घ्रि मूलम् ते प्रपन्न अभयदम् हरे ।
यत् मायया अपि विबुधाः मुह्यन्ति ज्ञान काशया ॥

शब्दार्थ—

प्रपन्नः अस्मि	६.	मैं प्राप्त हूँ	यत्	७.	जिन (आपकी प्राप्ति होने
अङ्घ्रि	५.	चरणों को	मायया अपि	१०.	माया से
मूलम्	४.	आपके	विबुधाः	११.	विद्वान् भी
प्रपन्न	२.	शरणागतों को	मुह्यन्ति	१२.	मोहित हो जाते हैं
अभयदम्	३.	अभयदान करने वालों में	ज्ञान	८.	सत्य ज्ञान के समान
हरे ।	१.	हे प्रभो !	काशया ॥	९.	प्रकाशित होने वाली

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! शरणागतों के अभयदान करने वालों में आपके चरणों को मैं प्राप्त हूँ । जिन आपकी प्रतीति होने पर भी सत्य ज्ञान के समान प्रकाशित होने वाली माया से विद्वान् भी मोहित हो जाते हैं ।।

तृतीयः श्लोकः

सूत उवाच—तमेवं निभृतात्मानं वृषेण दिवि पर्यटन् ।
रुद्राण्या भगवान् रुद्रो ददर्श स्वगणैर्वृतः ॥३॥

पदच्छेद—

तम् एवम् निभृतात्मानम् वृषेण दिवि पर्यटन् ।
रुद्राण्या भगवान् रुद्रो ददर्श स्वगणैः वृतः ॥

शब्दार्थः—

तम् एवम्	९. उन्हें इस प्रकार	रुद्राण्या	६. पार्वती के साथ
निभृत	१०. ध्यानस्थ	भगवान्	७. भगवान्
आत्मानम्	११. चित्त	रुद्रो	८. शंकर ने
वृषेण	१. नन्दी पर सवार होकर	ददर्श	१२. देखा
दिवि	२. आकाश में	स्वगणैः	४. अपने गणों से
पर्यटन् ।	३. परिभ्रमण करते हुये	वृतः ॥	५. घिरे

श्लोकार्थ—नन्दीश्वर पर सवार होकर आकाश में परिभ्रमण करते हुये अपने गणों से घिरे पार्वती के साथ भगनान् शङ्कर ने उन्हें इस प्रकार ध्यानस्थचित्त देखा ॥

चतुर्थः श्लोकः

अथोमा तमृषिं वीक्ष्य गिरीशं समभाषत ।
पश्येमं भगवन् विप्रं निभृतात्मेन्द्रियाशयम् ॥४॥

पदच्छेद—

अथ उमा तमृषिम् वीक्ष्य गिरीशम् समभाषत ।
पश्य इमम् भगवान् विप्रम् निभृता आत्म इन्द्रिय आशयम् ॥

शब्दार्थ—

अथ उमा	१. तदनन्तर पार्वती ने	इमम्	१०. इस
तमृषिम्	२. उन ऋषि को	भगवान्	६. भगवन्
वीक्ष्य	३. देखकर	विप्रम्	११. ब्राह्मण को
गिरीशम्	४. शङ्कर से	निभृत आत्मा	७. शान्त शरीर
समभाषत ।	५. कहा	इन्द्रिय	८. इन्द्रिय और
पश्य	१२. देखिये	आशयम् ॥	९. अन्तःकरण वाले

श्लोकार्थ—तदनन्तर पार्वती ने उन ऋषि को देखकर शङ्कर से कहा, भगवन् शान्त शरीर इन्द्रिय और अन्तः करण वाले इस ब्राह्मण को देखिये ॥

पञ्चमः श्लोकः

निभृतोदझषव्रातं वातापाये यथार्णवम् ।
कुर्वस्य तपसः साक्षात् संसिद्धिं सिद्धिदो भवान् ॥५॥

पदच्छेद—

निभृतः उद झषव्रात व्रात अपाये यथा अर्णवम् ।
कुर्वस्य तपसः साक्षत् संसिद्धिं सिद्धिः भवान् ॥

शब्दार्थ—

निर्भृतःउद्	४.	जल लहरों और	कुर्वस्य	७.	इनकी
झषव्रातम्	५.	मत्स्यादि जल जन्तुओं समेत	तपसः	८.	तपस्या का
व्रात	२.	तूफान	साक्षात्	९.	प्रत्यक्ष
अपाये	३.	शान्त हो जाने पर	संसिद्धिम्	१०.	फल
यथा	१.	जैसे	सिद्धिदः	११.	सिद्धियों के दाता
अर्णवम् ।	६.	समुद्र शान्त हो जाता है	भवान् ॥	१२.	आप दें

श्लोकार्थ—जैसे तूफान शान्त हो जाने पर जल लहरों और मत्स्यादि जल जन्तुओं समेत समुद्र शान्त हो जाता है। इनकी तपस्या का प्रत्यक्ष फल सिद्धियों के दाता आप दें ॥

षष्ठः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—नैवेच्छत्याशिषः क्वापि ब्रह्मर्षिर्मोक्षमप्युत ।
भक्तिं परां भगवति लब्धवान् पुरुषेऽव्यये ॥६॥

पदच्छेद—

न एव इच्छति अशीशः क्वापि ब्रह्मर्षि मोक्षम् अपिउत ।
भक्तिम् परा भगवति लब्धवान् पुरुषे अव्यये ॥

शब्दार्थ—

न एव	६.	नहीं	भक्तिम्	१२.	भक्ति
इच्छति	७.	चाहते हैं (क्योंकि इन्हें)	परा	११.	परम
अशिषः	३.	कोई वस्तु	भगवति	९.	भगवान्
क्वापि	२.	कहीं भी	लब्धवान्	१३.	प्राप्त हो चुकी है
ब्रह्मर्षि	१.	ये ब्रह्मर्षि	पुरुषे	१०.	परमात्मा में
मोक्षम्	४.	मोक्ष भी	अव्यये ॥	८.	अविनाशी
अपि उत ।	५.	या			

श्लोकार्थ—ये ब्रह्मर्षि कही भी कोई वस्तु या मोक्ष भी नहीं चाहते हैं। क्यों कि इन्हें अविनाशी भगवान् परमात्मा में परम भक्ति प्राप्त हो चुकी है ॥

सप्तमः श्लोकः

अथापि संवदिष्यामो भवान्येतेन साधुना ।
अयं हि परमो लाभो नृणां साधुसमागमः ॥७॥

पदच्छेद—

अथापि संवदिष्यामः भवान्ये तेन साधुना ।
अयम् ही परमः लाभः नृणाम् साधु समागतः ॥

शब्दार्थ—

अथापि	२.	तो भी मैं	परमः	७.	यह महान्
संवदिष्नामः	६.	बात करूँगा	लाभः	८.	लाभ की बात है कि
भवानि	१.	हे देवि !	नृणाम्	९.	मनुष्यों के लिये
एतेन	३.	इस	साधु	१०.	साधु पुरुष का
साधुना	४.	साधु पुरुष से	समा	११.	समागम
अयम् हि ।	५.	यह ही	गतः ॥	१२.	प्राप्त हो

श्लोकार्थ—हे देवि ! तो भी मैं इस साधु पुरुष से यह ही बात करूँगा । यह महान लाभ की बात है कि मनुष्यों के लिये साधु पुरुष का समागम प्राप्त हो ॥

अष्टमः श्लोकः

सूत उवाच—इत्युक्त्वा तमुपेयाय भगवान् स सतां गतिः ।
ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वदेहिनाम् ॥८॥

पदच्छेद—

इति उक्त्वा तम् उपेयाय भगवान् सः सताम् गतिः ।
ईशानः सर्व विद्यानाम् ईश्वरः सर्व देहिनाम् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	यह	ईशानः	६.	स्वामी तथा
उक्त्वा	२	कह कर	सर्व	५.	सभी
तम्	११.	मुनि के	विद्यानाम्	७.	विद्याओं के
उपेयाय	१२.	पास गये	ईश्वरः	१०.	शासक हैं
भगवान्	८.	वे भगवान्	सर्व	८.	सभी
सः सताम्	३.	वे सज्जनों के	देहिनाम् ॥	९.	प्राणियों के
गतिः ।	४.	आश्रय			

श्लोकार्थ—यह कहकर वे सज्जनों के आश्रय, सभी विद्याओं के स्वामी तथा सभी प्राणियों के शासक हैं । वे भगवान् मुनि के पास गये ॥

नवमः श्लोकः

तयोरागमनं साक्षादीशयोर्जगदात्मनोः ।
न वेद रुद्धधीवृत्तिरात्मानं विश्वमेव च ॥६॥

पदच्छेद—

तयो आगमनम् साक्षाद् ईशयोः जगत् आत्मनो ।
न वेद रुद्धधी वृत्तिः आत्मानम् विश्वम् एव च ॥

शब्दार्थ—

तयोः	६.	उन दोनों	न वेद	३.	नहीं जाना
आगमनम्	६.	आगमन	रुद्धधी	१.	अवरुद्ध बुद्धि
साक्षाद्	५.	स्वयम्	वृत्तिः	२.	वृत्ति वाले मुनि ने
ईशयो	८.	गौरी शङ्कर के	आत्मानाम्	१०.	अपने शरीर क
जगत्	३.	विश्व के	विश्वम्	११.	और विश्व को
आत्मनोः ।	४.	आत्मा	एव च ॥	१२.	भी

श्लोकार्थ – आगमन अवरुद्ध बुद्धि वृत्तिवाले मुनि ने विश्वात्मा स्वयम् उन दोनों को (गौरी शङ्कर को) अपने शरीर और विश्व के आत्मा को भी नहीं जाना ॥

दशमः श्लोकः

भगवांस्तदभिज्ञाय गिरीशो योगमायया ।
आविशत्तद्गुहाकाशं वायुश्छिद्रमिवेश्वरः ॥१०॥

पदच्छेद—

भगवान् तत् अभिज्ञाय गिरीशः योग मायया ।
आविशत् तद् गुहा काशम् वायुः छिद्रम् इव ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	२.	भगवान्	अविशत्	१०.	प्रवेश कर गये
तत्	६	यह	तद् गुह	८.	उनके हृदय
अभिज्ञाय	७.	जानकर	आकाशम्	६.	आकाश में (उसी तरह)
गिरीशः	३.	शङ्कर	वायुः	१२.	वायु (छिद्र में प्रविष्ट हो जाता है)
योग	४.	योग	छिद्रम्	११.	जैसे
मायया ।	५.	माया के द्वारा	इव ईश्वरः ॥	१.	सर्व शक्तिमान्

श्लोकार्थ—शर्व शक्ति मान् भगवान् शङ्कर योग माया के द्वारा वह जानकर उनके हृदय आकाश में उसी तरह प्रवेश कर गये, जैसे वायु छिद्र में प्रविष्ट हो जाता है ॥

एकादशः श्लोकः

आत्मन्यपि शिवं प्राप्तं तडित्पिङ्गजटाधरम् ।
त्र्यक्षं दशभुजं प्रांशुमुद्यन्तमिव भास्करम् ॥११॥

पदच्छेद—

आत्मनि अपि शिवम् प्राप्तं तडित् पिङ्ग जटाधरम् ।
त्र्यक्षम् दश भुजम् प्रांशुमुद्यन्तम् इव भास्करम् ॥

शब्दार्थ—

आत्मनि	१२. हृदय में		त्र्यक्षम्	४. तीन नेत्रों वाले
अपि	१३. भी		दश	५. दश
शिवम्	११. शिव को		भुजम्	६. भुजाओं वाले
प्राप्तम्	१४. विराजमान देखा		प्रांशु	७. उच्च शरीर वाले
तडित्	१. बिजली समान		उद्यन्तम्	८. उदीयमान
पिङ्ग	२. चमकीली पीली-पीली		इव	१०. समान
जटाधरम् ।	३. जटाधारण करने वाले		भास्करम् ॥	९. सूर्य के

श्लोकार्थ—बिजली के समान चमकीली पीली-पीली जटाधारण करने वाले, तीन नेत्रों वाले, दश भुजाओं वाले, उच्च शरीर वाले, उदीयमान, सूर्य के समान, शिव को हृदय में भी विराजमान देखा ॥

द्वादशः श्लोकः

व्याघ्रचर्माम्बरधरं शूलखट्वाङ्गचर्मभिः ।
अक्षमालाडमरुककपालासिधनुः सह ॥१२॥

पदच्छेद—

व्याघ्र चर्माम्बरं धरम् शूल खटवाङ्ग चर्मभिः ।
अक्षमाला डमरुक कपाल असिधनुः सह ॥

शब्दार्थ—

व्याघ्र	१. शंकर	अक्षमाला	७. रुद्राक्ष
चर्माम्बरम्	२. वाघम्बर	डमरुक	८. डमरु
धरम्	३. धारण किये हुये	कपाल	९. खप्पर
शूल	४. तथा त्रिशूल	असि	१०. तलवार और
खट्वाङ्ग	५. खट्वांग	धनुः	११. धनुष
चर्मभिः ।	६. ढाल	सह ॥	१२. लिये हुये थे

श्लोकार्थ—शङ्कर बाघम्बर धारण किये हुये तथा त्रिशूल, खटवांग, ढाल, रुद्राक्ष, डमरु, खप्पर, तलवार और धनुष लिये हुये थे ।

त्रियोदशः श्लोकः

विभ्राणं सहसा भातं विचक्ष्य हृदि विस्मितः ।
किमिदं कुत एवेति समाधेर्विरतो मुनिः ॥१३॥

पदच्छेद—

विभ्राणम् सहसा भातम् विचक्ष्य हृदि विस्मितः ।
किमिदम् कुत एवेति समाधेविरतो मुनिः ॥

शब्दार्थ—

विभ्राणम्	१. ऐसा रूप धारण किये हुये	किम्इदम्	८. क्या है
सहसा	२, अकस्मात्	कुत	७. यह
भातम्	३. शंकर को विराजमान	एवेति	६. कहां से
विचक्ष्य	४. देखकर	समाधेः	१०. आया है यह सोचकर
हृदि	५. अपने हृदय में	विरतः	११. समाधि से
विस्मितः ।	६. आश्चर्य चकित हो गये	मुनिः ॥	१२. विरत हो गये

श्लोकार्थ—ऐसा रूप धारण किये हुये अकस्मात् शंकर को विराजमान देखकर अपने हृदय में आश्चर्य चकित हो गये । यह क्या है, कहां से आया है, यह सोचकर समाधि से विरत हो गये ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नेत्रे उन्मीलय ददृशे सगणं सोमयाऽऽगतम् ।
रुद्रं त्रिलोकैकगुरुं ननाम शिरसा मुनिः ॥१४॥

पदच्छेद—

नेत्रे उन्मीलय ददृशो सगणम् सोमया आगतम् ।
रुद्रम् त्रिलोकैक गुरुम् ननाम शिरसा मुनिः ॥

शब्दार्थ—

नेत्रे	१. आंखें	रुद्रम्	६. शङ्कर को
उन्मीलय	२. खोलने पर	त्रिलोकैक	७. तीनों लोक के
ददृशेः	१३. देखा (तथा)	गुरुम्	८. गुरु
सगणम्	४. गणों के साथ	ननाम	१२. प्रणाम किया
सोमया	५. पार्वती तथा	शिरसा	११. उन्हें सिर से
आगतम् ।	६. आये हुये	मुनिः ॥	३. मुनि ने

श्लोकार्थ—आंखें खोलने पर मुनि ने गणों के साथ पार्वती तथा आये हुये तीनों लोक के गुरु शङ्कर को देखा तथ उन्हें सिर से प्रणाम किया ॥

पञ्चदशः श्लोकः

तस्मै सपर्यां व्यदधात् सगणाय सहोमया ।
स्वागतासनपाद्यार्घ्यगन्धस्रग्धूपदीपकैः ॥१५॥

पदच्छेद—

तस्मै सपर्या व्यदधात् सगणाय सहोमया ।
स्वागतासन पाद्यअर्घ्य गन्धस्रग्धूप दीपकैः ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	९.	शंकर जी की	स्वागता	१.	स्वागत
सपर्या	१०.	पूजा	आसन	२.	आसन
व्यदधात्	११.	की	पाद्या	३.	पाद्य
सगणाय	८.	गणों के साथ	अर्घ्यं	४.	अर्घ्य, गन्ध
सहोमया ।	९.	पार्वती और	गन्ध स्रक्	५.	पुष्प और
			धूप दीपकैः ॥	६.	धूप दीप से

श्लोकार्थ—स्वागत आसन, पाद्य, अर्घ्य, गन्ध, पुष्प और धूप दीप से गण के साथ पार्वती और शंकर जी की पूजा की ॥

षोडशः श्लोकः

आह चात्मानुभावेन पूर्णकामस्य ते विभो ।
करवा किमीशमान येनेदं निर्वृतं जगत् ॥१६॥

पदच्छेद—

आह च आत्मा अनुभावेन पूर्ण कामस्य ते विभो ।
करवाम् किमईशान येन इदम् निर्वृतम् जगत् ॥

शब्दार्थ—

आह	२.	कहा	करवाम्	१०.	सेवा करूँ
च	१.	और	किम्	९.	मैं क्या
आत्मा	४.	आत्मा	ईशान	३.	सर्व व्यापक प्रभो !
अनुभावेन	५.	अनुभूति से	येन	११.	जिन्होंने
पूर्ण	६.	पूर्ण	इदम्	१२.	इस
कामस्य	७.	कामना वाले	निर्वृतम्	१४.	शान्ति स्थापित की है
ते विभो ।	८.	आपकी हे विभो	जगत् ।	१३.	संसार में

श्लोकार्थ—और कहा आत्मा अनुभूति से पूर्ण कामना वाले आपकी हे विभो ! मैं क्या सेवा करूँ । जिन्होंने इस संसार में शान्ति स्थापित की है ॥

सप्तदशः श्लोकः

नमः शिवाय शान्ताय सत्त्वाय प्रमृडाय च ।
रजोजुषेऽप्यघोराय नमस्तुभ्यं तमोजुषे ॥१७॥

पदच्छेद—

नमः शिवाय शान्ताय सत्त्वाय प्रमृडाय च ।
रजोः जुषे अपि अधोराय नमःस्तुभ्यम् तमोजुषे ॥

शब्दार्थ—

नमः	२. नमस्कार है	रजोः	७. रजो गुण से
शिवाय	१. शिव को	जुषेअपि	८. युक्त
शान्ताय	३. शान्त स्वरूप	अघोराय	९. तथा अघोर स्वरूप
सत्त्वाय	४. सत्त्व गुण से युक्त	नम स्तुभ्यम्	१२. नमस्कार है
प्रमडाय	५. सर्व प्रर्वतक	तमो	१०. आपको
च ।	६. और	जुषे ॥	११. तमोगुण से युक्त

श्लोकार्थ—शिव को नमस्कार है। शान्त स्वरुप सर्व गुण से युक्त सर्व प्रर्वतक और रजोगुण से युक्त तथा अघोर स्वरूप आपको तमो गुण से युक्त नमस्कार है ॥

अष्टादशः श्लोकः

सूत उवाच—एवं स्तुतः स भगवानादिदेवः सतां गतिः ।
परितुष्टः प्रसन्नात्मा प्रहसंस्तमभाषत ॥१८॥

पदच्छेद—

एवम् स्तुतः सः भगवान् आदि देवः सतां गतिः ।
परितुष्टः प्रसन्नात्मा प्रहसन् तम् अभाषत ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	गतिः ।	७. आश्रय
स्तुतः	२. स्तुति किये जाने पर	परितुष्टः	८. अत्यन्त सन्तुष्ट
सः	३. वे	प्रसन्नात्मा	९. प्रसन्न चित्त से
भगवान्	४. भगवान्	प्रहसन्	१०. हंसते हुये
आदि देवः	५. आदि देव	तम्	११. उनसे
सताम्	६. सज्जनों के	अभाषत ॥	१२. कहने लगे

श्लोकार्थ—इस प्रकार स्तुति किये जाने पर वे भगवान् आदि देव सज्जनों के आश्रय अत्यन्त-सन्तुष्ट प्रसन्न चित्त से हंसते हुये उनसे कहने लगे ॥

एकविंशः श्लोकः

श्रीभगवानुवाच—वरं वृणीष्व नः कामं वरदेशा वयं त्रयः।
अमोघं दर्शनं येषां मर्त्यो यद् विन्दतेऽमृतम् ॥१९॥

पदच्छेद—

वरम् वृणीष्व नः कामं वर देशा वयम् त्रयः ।
अमोघम् दर्शनम् येषाम् मर्त्यो यद् विन्दते अमृतम् ॥

शब्दार्थ—

वरम्	६. वर	अमोघम्	१०. कभी व्यर्थ नहीं जाता है
वृणीष्व	७. मांग लो	दर्शनम्	९. दर्शन
नः	४. हमसे	येषाम्	८. हमारा
कामम्	५. यथेष्ट	मर्त्यो	११. मनुष्य
वरदेशा	३. वर दाताओं के स्वामी हैं	यद्	१२. हम से
वयम्	१. हम	विन्दते	१४. प्राप्त कर लेता है
त्रयः।	२. तीनों	अमृतम् ॥	१३. अमृत को

श्लोकार्थ—हम तीनों वर दाताओं के स्वामी हैं। हमसे यथेष्ठ वर मांगलो। हमारा दर्शन कभी व्यर्थ नहीं जाता है। मनुष्य हमसे अमृत को प्राप्त कर लेता है।

विंशः श्लोकः

ब्राह्मणाः साधवः शान्ताः निःसङ्गा भूतवत्सलाः।
एकान्तभक्ता अस्मासु निर्वैराः समदर्शिनः ॥२०॥

पदच्छेद—

ब्राह्मणाः साधवः शान्ताः निसङ्गा भूत वत्सला ।
एकान्त भक्ताः अस्मासुः निर्वैरा समदर्शिनः ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मणाः	१. ब्राह्मण	एकान्त	७. अनन्य
साधवः	२. साधु	भक्ताः	८. भक्त
शान्ताः	३. शान्ति चित्त	अस्मासुः	९. हमारे
निसङ्गा	४. संगरहित	निर्वैराः	१०. वैर रहित
भूत	५. प्राणियों के	सम	११. सम
वत्सलाः।	६. प्रेमी	दर्शिनः ॥	१२, दर्शी होते हैं

श्लोकार्थ—ब्राह्मण, साधु, शान्त चित्त, संग रहित, प्राणियों के प्रेमी हमारे अनन्य भक्त वैर रहित और समदर्शी होते हैं।

एकविंशः श्लोकः

सलोका लोकपालास्तान् वन्दन्त्यर्चन्त्युपासते ।
अहं च भगवान् ब्रह्मा स्वयं च हरिरीश्वरः ॥२१॥

पदच्छेद—

सलोका लोक पालास्तान् वन्दन्ती अर्चन्ति उपासते ।
अहं च भगवान् ब्रह्मा स्वयं च हरिः ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

सलोका	१. सारे लोक	अहम् च	७. मैं
लोकपालाः	२. और सारे लोक पाल	भगवान्	८. भगवान्
तान्	३. ऐसे ब्राह्मणों की	ब्रह्मा	९. ब्रह्मा
वदन्ति	४. वन्दना	स्वयम् च	१०. तथा साक्षात्
अर्चन्ति	५. अर्चना और	हरिः	१२. विष्णु भी उनकी सेवा करते हैं)
उपासते ।	६. उपासना करते हैं	ईश्वरः ॥	११. ईश्वर और

श्लोकार्थ—सारे लोक, सारे लोकपाल ऐसे ब्राह्मणों की वन्दना, अर्चना और उपासना करते हैं। मैं, भगवान ब्रह्मा तथा साक्षात् विष्णु भी और ईश्वर भी उनकी सेवा करते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

न ते मय्यच्युतेऽजे च भिदामण्वपि चक्षते ।
नात्मनश्च जनस्यापि तद् युष्मान् वयमीमहि ॥२२॥

पदच्छेद—

न ते मयि अच्युते अजे च भिदाम् अणु अपि चक्षते ।
न आत्मनः जनस्य अपि तत् युष्मात् वयम् ईमहि ॥

शब्दार्थ—

न ते	६. नहीं	न	८. न
मयि	१. वे मुझमें	आत्मन	९. और अपने में
अच्युते	२. विष्णु में	जनस्य	१०. सब जीवों में
अजे च	३. ब्रह्मा में	अपि तत्	११. भी इसलिये
भिदाम्	५. भेद	युष्मात्	१२. तुम्हारे जैसे महात्माओं को
अणु अपि	४. अणुमात्र भी	वयम्	१३. हम स्तुति
चक्षते ।	७. देखते हैं	ईयहि ॥	१४. करते हैं

श्लोकार्थ—वे मुझ में, विष्णु में, ब्रह्मा में अणुमात्र भी भेद नहीं देखते हैं। न अपने में और सब जीवों में भी इसलिये तुम्हारे जैसे महात्माओं की हम स्तुति करते हैं ॥

त्रयविंशः श्लोकः

न ह्यम्मयानि तीर्थानि न देवाश्चेतनोज्झिताः ।
ते पुनन्त्युरुकालेन यूयं दर्शनमात्रतः ॥२३॥

पदच्छेद—

नहि अम्मयानि तीर्थानि न देवाः चेतन उज्झिताः ।
ते पुनन्ति उरु कालेन यूयम् दर्शन मात्रतः ॥

शब्दार्थ—

न हि	३.	नहीं होते और	ते पुनन्ति	७.	क्योंकि वे
अम्मयानि	१.	जलमय	उरु	९.	पवित्र करते हैं
तीर्थानि	२.	तीर्थ ही तीर्थ	कालेन	८.	बहुत दिनों में
न देवाः	६.	देवता नहीं होती	यूयम्	१०.	किन्तु आप लोग
चेतन	४.	चेतना	दर्शनम्	११.	दर्शन
उज्झितः ।	५.	विहीन मूर्तियाँ ही	मात्रतः॥	१२.	मात्र से पवित्र कर देते हैं

श्लोकार्थ—जलमय तीर्थ ही तीर्थ नहीं होते और चेतना विहीन मूर्तियाँ ही देवता नहीं होती। क्योंकि वे बहुब दिनों में पवित्र करते हैं। किन्तु आप लोग दर्शन मात्र से पवित्र कर देते हैं ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

ब्राह्मणेभ्यो नमस्यामो येऽस्मद्रूपं त्रयीमयम् ।
बिभ्रत्यात्मसमाधानतपःस्वाध्यायसंयमैः ॥२४॥

पदच्छेद—

ब्राह्मणेभ्यः नमस्यामः ये अस्मद्रूपम् त्रयीमयम् ।
बिभ्रत्यात्म समाधान तपः स्वाध्याय संयमैः ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मणेभ्यः	१.	हम ब्राह्मणों को	बिभ्रति	११.	धारण करते हैं
नमस्यामः	२.	नमस्कार करते हैं	आत्मसमाधान	७.	चित्त की एकाग्रता को
ये	३.	जो हमारे	तपः	८.	तपस्या
अस्मत्	६.		स्वाध्याय	९.	स्वाध्याय और
रूपम्	५.	रूप को	संयमैः ॥	१०.	संयम के द्वारा
त्रयीमयम् ।	४.	वेदमम			

श्लोकार्थ—हम ब्राह्मणों को नमस्कार करते हैं, जो हमारे चित्त की एकाग्रता, तपस्या, स्वाध्याय और संयम के द्वारा हमारे वेदमय रूप को धारण करते हैं।

पञ्चविंशः श्लोकः

श्रवणाद् दर्शनाद् वापि महापातकिनोऽपि वः ।
शुध्येरन्नन्त्यजाश्चापि किमु सम्भाषणादिभिः ॥२५॥

पदच्छेद—

श्रवणात् दर्शनात् व अपि महा पातकिन अपि वः ।
शुध्येरन् अन्त्यजाः च अपि किमु सम्भावणादिभिः ॥

शब्दार्थ—

श्रवणात्	२.	श्रवण से	शुध्येरन्	९.	शुद्ध हो जाते हैं
दर्शनात्	४.	दर्शन से	अन्त्यजाः	७.	अन्त्यज
वः अपि	३.	अथवा	च अपि	८.	भी
महापातकिनः	५.	महापातकी	किमु	१०.	फिर आपके
अपि	६.	भी	सम्भाषणा	११.	सम्भाषण
वः ॥	७.	आपके चरित्रों के	आदिभिः ॥	१२.	आदि से शुद्ध हो जाये तो कहना ही क्या है

श्लोकार्थ—आपके चरित्रों के श्रवण से अथवा दर्शन से महा पातकी भी और अन्त्यज भी शुद्ध हो जाते हैं। फिर आपके सम्भाषण आदि से शुद्ध हो जाये तो कहना ही क्या है।

षड्विंशः श्लोकः

सूत उवाच—इति चन्द्रललामस्य धर्मगुह्योपबृंहितम् ।
वचोऽमृतायनमृषिर्नातृप्यत् कर्णयोः पिबन् ॥२६॥

पदच्छेद—

इति चन्द्रललामस्य धर्म गुह्योऽपबृंहितम् ।
वचः अमृतायनम् ऋषिः अतृप्यत् कर्णयोः पिबन् ॥

शब्दार्थ—

इति	१.	इस प्रकार	अमृतायनम्	६.	अमृत का सागर था
चन्द्रललामस्य	२.	चन्द्र भूषण शिव का	ऋषिः	५.	ऋषि की
धर्म गुह्यः	३.	धर्म के रहस्य से	अतृपयत्	९.	तृप्ति नहीं हुई
उपबृंहितम् ।	४.	परिपूर्ण तथा	कर्णयोः	७.	कानों के द्वारा
वचः	५.	वचन	पिबन् ॥	८.	उसका पान करते रहे

श्लोकार्थ—इस प्रकार चन्द्र भूषण शिव का वचन धर्म के रहस्य से परिपूर्ण तथा वचन अमृत का सागर था। ऋषि को उससे तृप्ति नहीं हुई। कानों के द्वारा उसका पान करते रहे ॥

सप्तविंशः श्लोकः

स चिरं मायया विष्णोर्भ्रामितः कर्शितो भृशम् ।
शिववागमृतध्वस्तक्लेशपुञ्जस्तमब्रवीत् ॥२७॥

पदच्छेद—

स चिरम् मायया विष्णो भ्रामितः कर्शितः भृशम् ।
शिव वागमृत ध्वस्त क्लेश पुञ्जः तम अब्रवीत ॥

शब्दार्थ—

सः	१.	वे	शिववाक्	८.	शिव की वाणी का
चिरम्	२.	चिरकाल तक	अमृत	९.	अमृत पान करने से
मायया	४.	माया से	ध्वस्त	१०.	नष्ट
विष्णोः	३.	विष्णु की	क्लेश	११.	क्लेश
भ्रमितः	५.	भटक चुके थे	पुञ्जः	१२.	समूह वाले उन्होंने
कर्शितः	७.	क्षीण हो गये थे	तम्	१३.	शंकर से
भृशम् ।	६.	और बहुत ही	अब्रवीत् ।	१४.	कहा

श्लोकार्थ—वे चिरकाल तक विष्णु की माया से भटक चुके थे, और बहुत ही क्षीण हो गये थे । शिव की वाणी का अमृतपान से नष्टक्लेश समूह वाले उन्होंने शंकर से कहा ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

ऋषिरुवाच—अहो ईश्वरलीलेयं दुर्विभाव्या शरीरिणाम् ।
यन्नमन्तीशितव्यानि स्तुवन्ति जगदीश्वराः ॥२८॥

पदच्छेद—

अहो ईश्वरः लीला इयम् दुर्विभाव्या शरीरिणाम् ।
यम् नमन्ती ईशितव्यानि स्तुवन्ति जगद् ईश्वराः ॥

शब्दार्थ—

अहो	१.	आश्चर्य है कि	यम्	६.	क्योंकि
ईश्वर	२.	ईश्वर की	नमन्ती	९.	नमस्कार
लीला इयम्	३.	यह लीला	ईशितव्यानि	७.	अधीनस्थ व्यक्तियों को
दुर्विभाव्या	५.	समक्ष के परे हैं	स्तुवन्ति	१०.	और स्तुति करते हैं
शरीरिणाम् ।	४.	शरीरधारियों की	जगदईश्वराः ॥	८.	संसार के स्वामी होकर भी

श्लोकार्थ—आश्चर्य है कि ईश्वर की यह लीला शरीरधारियों के समक्ष के परे है । क्योंकि अधीनस्थ व्यक्तियों को संसार के स्वामी होकर भी नमस्कार और स्तुति करते हैं ॥

एकोनविंशः श्लोकः

धर्मं ग्राहयितुं प्रायः प्रवक्तारश्च देहिनाम् ।
आचरन्त्यनुमोदन्ते क्रियमाणं स्तुवन्ति च ॥२९॥

पदच्छेद—

धर्मं ग्राहयितुं प्रायः प्रवक्तारश्च देहिनाम् ॥
आचरन्त्यनु मोदन्ते क्रियमाणम् स्तुवन्ति च ॥

शब्दार्थ—

धर्मम्	४. धर्म	आचरन्ति	६. आचरण और
ग्राहयितुम्	५. ग्रहण कराने के लिये	अनुमोदन्ते	७. अनुमोदन करते हैं
प्रायः	२. प्रायः	क्रियमाणम्	९. आचरण करने वालों की
प्रवक्तारश्च	१. प्रवचन कराने वाले लोग	स्तुवन्ति	१०. प्रशंसा करते हैं
देहिनाम् !	३. प्राणियों को	च ॥	८. तथा

श्लोकार्थ—प्रवचन कराने वाले लोग प्रायः प्राणियों को धर्म ग्रहण कराने के लिये आचरण और अनुमोदन करते हैं । तथा आचरण करने वालों की प्रशंसा करते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

नैतावता भगवतः स्वमायामयवृत्तिभिः ।
न दुष्येतानुभावस्तैर्मायिनः कुहकं यथा ॥३०॥

पदच्छेद—

न एतावता भगवतः स्वमाया मय वृत्तिभिः ।
न दुष्येतानु भावस्तैमायिनः कुहकम् यथा ॥

शब्दार्थ—

न	१२. दूषित नहीं होता है	दुष्येतानु	७. दूषित होता है
एतावता	१. इतने से	अनुभाव	५. उनका प्रभाव
भगवतः	२. भगवान् की		११. उन खेलों से
स्वमायामय	३. अपनी मायामयी	मायिनः	९. जादूगर का
वृत्तिभिः ।	४. वृत्तियों से	कुहकम्	१०. जादू
न	६. नहीं	यथा ॥	८. जैसा कि

श्लोकार्थ—इतने से भगवान् की अपनी मायामयी वृत्तियों से उनका प्रभाव नहीं दूषित होता है। जैसा कि जादूगर का जादू उन खेलों से दूषित नहीं होता है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

सृष्ट्वेदं मनसा विश्वमात्मनानुप्रविश्य यः ।
गुणैः कुर्वद्भिराभाति कर्तेव स्वप्नदृग् यथा ॥३१॥

पदच्छेद—

सृष्ट्वेदम् मनसा विश्वमात्मना अनुप्रविश्य यः ।
गुणैः कुर्वद्भिः आभाति कर्ता इव स्वप्न दृक् यथा ॥

शब्दार्थ—

सृष्ट्वेदम्	८. सृष्टि करके		गुणैः	१२. गुणों के द्वारा।
मनसा	४. इस मन से		कुर्वद्भि	१०. कर्म करने वाले
विश्वम्	५. संसार की		आभाति	१३. प्रतीत होते हैं
आत्मना	७. स्वयम्		कर्ता इव	११. कर्ता के समान
अनुप्रविश्य	९. प्रविष्ट होकर		स्वप्न	२. स्वप्न
यः ।	१. जो आप		दृक्यथा ॥	३. द्रष्टा के समान

श्लोकार्थ—जो आप स्वप्न द्रष्टा के समान इस मन से संसार की स्वयम् सृष्टि करके प्रविष्ट होकर कर्म करने वाले कर्ताके समान गुणों के द्वारा प्रतीत होते हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

तस्मै नमो भगवते त्रिगुणाय गुणात्मने ।
केवलायाद्वितीयाय गुरवे ब्रह्ममूर्तये ॥३२॥

पदच्छेद—

तस्मै नमो भगवते त्रिगुणाय गुणात्मने ।
केवलाय अद्वितीयाय गुरवे ब्रह्म मूर्तये ॥

शब्दार्थ—

तस्मै	८. उन	केवलाय	७. केवल
नमो	१०. नमस्कार है	अद्वितीयाय	५. अद्वितीय
भगवते	९. भगवान् को	गुरवे	६. गुरु
त्रिगुणाय	१. त्रिगुण स्वरूप	ब्रह्म	३. ब्रह्म
गुणात्मने ।	२. गुणों की आत्मा के रूप में स्थित	मूर्तये ॥	४. मूर्ति

श्लोकार्थ—त्रिगुण स्वरूप गुणों की आत्मा के रूप में स्थित ब्रह्म मूर्ति अद्वितीय गुरु केवल उन भगवान् को नमस्कार है ।

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

कं वृणे नु परं भूमन् वरं त्वद् वरदर्शनात् ।
यद्दर्शनात् पूर्णकामः सत्यकामः पुमान् भवेत् ॥३३॥

पदच्छेद—

कम् वृणे नु परम् भूमन् वरम् त्वद् वर दर्शनात् ।
यत् दर्शनात् पूर्णकामः सत्यकामः पुमान् भवेत् ॥

शब्दार्थ—

कम्	४. कौन सा	यत्	७.	जिन आपके
वृणेनु	६. मांगू	दर्शनात्	८.	दर्शन से
परम्	३. बढ़कर	पूर्णकामः	६.	पूर्णकाम और
भूमन्	१. हे अनन्त !	सत्यकामः	६०.	सत्य संकल्प
वरम्	५. वर मैं	पुमान्	११.	मनुष्य हो
त्वत् वरदर्शनात्	२. आपके श्रेष्ठ दर्शन से	भवेत् ॥	१२.	जाता है

श्लोकार्थ—हे अनन्त ! आपके श्रेष्ठ दर्शन से बढ़कर कौन सा वर मैं मांगूं । जिन आपके दर्शन से पूर्णकाम और सत्य संकल्प मनुष्य हो जाता है ॥

चतुस्त्रिंशः

वरमेकं वृणेऽथापि पूर्णात् कामाभिवर्षणात् ।
भगवत्यच्युतां भक्तिं तत्परेषु तथा त्वयि ॥३४॥

पदच्छेद—

वरमेकम् वृणेथापि पूर्णात् कामाभि वर्षणात् ।
भगवति अच्युताम् भक्तिम् तत् परेषु तथात्वम् ॥

शब्दार्थ—

वरम् एकम्	४. एकवर	भगवति	७.	भगवान् में
वृणेअथापि	६. मांगता हूँ कि	अच्युतम्	११.	अविचल भक्ति हो ।
पूर्णात्	३. स्वतः पूर्ण रूपेण आप से	भक्तिम्	८.	भक्ति हो
कामाभि	१. कामनाओं को	तत् परेषु	६.	उनके शरणागतों में
वर्षणात् ।	२. पूर्ण करने वाले	तथात्वम् ॥	१०.	तथा आप में मेरी

श्लोकार्थ—कामनाओं को पूर्ण करने वाले स्वतः पूर्ण रूपेण आपसे एक वर मांगता हूँ कि भगवान में अविचल भक्ति हो और उनके शरणागतों में तथा आप में मेरी अविचल भक्ति हो ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

सूत उवाच—इत्यर्चितोऽभिष्टुतश्च मुनिना सूक्तया गिरा ।
तमाह भगवाञ्छर्वः शर्वया चाभिनन्दितः ॥३५॥

पदच्छेद—

इति अर्चितः अभिष्टुतः च मुनिना सुक्तया गिरा ।
तम आह भगवान् शर्वः शर्वया च अभि नन्दितः ॥

शब्दार्थ—

इति	१. इस प्रकार	तम् आह	१२. उन मुनि से कहा
अर्चितः	५. पूजा स्तुति	भगवान्	११. भगवान् शङ्कर ने
अभिष्टुतः	६. की जाने पर	शर्वः	७. शङ्कर ने
च मुनिनाः	२. और मुनि के द्वारा	शर्वया	८. पार्वती से
सूक्तया	३. सुन्दर उक्ति वाली	च अभि	९. प्रेरित
गिरा ।	४. वाणी से	नन्दितः ॥	१०. होकर कहा

श्लोकार्थ—इस प्रकार और मुनि के द्वारा सुन्दर उक्तिवाली वाणी से पूजा स्तुति की जाने पर शङ्कर ने पार्वती से प्रेरित होकर कहा । भगवान् शङ्कर ने मुनि से कहा ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

कामो महर्षे सर्वोऽयं भक्तिमांस्त्वमधोक्षजे ।
आकल्पान्ताद्यशः पुण्यमजरामरता तथा ॥३६॥

पदच्छेद—

कामः महर्षे सर्वः अयम् भक्तिमान् त्वम् अधोक्षजे ।
आ कल्पान्तात् यशः पुण्यम् अजर अमरता तथा ॥

शब्दार्थ—

कामः	३. मनोरथ पूर्ण	आ	८. तुम्हारा
महर्षे	१. महर्षि जी	कल्पान्तात्	९. कल्पान्त तक
सर्वे	२. सब	यशः	१०. यश फैले
अयम्	४. हों	पुण्यम्	१२. पवित्र
भक्तिमान्	६. तुम्हारी यह	अजर	१३. अजर
त्वम्	७. भक्ति बनी रहे सब	अमरता	१४. अमर हो जाओ
अधोक्षजे ।	५. भगवान् में	तथा	१०. और तुम

श्लोकार्थ—महर्षि जी सब मनोरथ पूर्ण हो तथा भगवान में तुम्हारी यह भक्ति बनी रहे । सब मनोरथ पूर्ण हों । तुम्हारा कल्पान्त तक यश फैले और तुम पवित्र अजर अमर हो जाओ ।

सप्तत्रिंशः श्लोकः

ज्ञानं त्रैकालिकं ब्रह्मन् विज्ञानं च विरक्तिमत् ।
ब्रह्मवर्चस्विनो भूयात् पुराणाचार्यतास्तु ते ॥३७॥

पदच्छेद—

ज्ञानं त्रैकालिकम् ब्रह्मन् विज्ञानम् च विरक्तिमत् ।
ब्रह्म वर्चस्विनो भूयात् पुराण आचार्यता अस्तु ते ॥

शब्दार्थ—

ज्ञानं	३.	ज्ञान	ब्रह्म	७.	ब्रह्म
त्रैकालिकम्	२.	तीनों काल का	वर्चस्विनः	८.	तेज से सम्पन्न
ब्रह्मन्	१.	ब्रह्मन् तुम्हें	भूयात्	९.	प्राप्त हो
विज्ञानम्	४.	विज्ञान	पुराण	१०.	पुराण का
च	५.	और	आचार्यता	११.	आचायत्व भी
विरक्तिमत् ।	६.	वैराग्यम्	अस्तु ते ॥	१२.	तुम्हें प्राप्त हो

श्लोकार्थ—ब्रह्मन् ! तुम्हें तीनों काल का ज्ञान विज्ञान और वैराग्य भी प्राप्त हो । ब्रह्म तेज से सम्पन्न पुराण का आचार्यत्व भी तुम्हें प्राप्त हो ॥

अष्टात्रिंशः श्लोकः

सूत उवाच—एवं वरान् स मुनये दत्वागात्त्र्यक्ष ईश्वरः ।
देव्यै तत्कर्म कथयन्ननुभूतं पुरामुना ॥३८॥

पदच्छेद—

एवं वरान् स मुनये दत्वाअगात् त्र्यक्ष ईश्वरः ॥
देव्यै तत् कर्म कथयन् अनुभूतम् पुरा मुना ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	देव्यै	१२.	पार्वती से
वरान्	६.	वर	तत्	१०.	उस
सः	२.	वे	कर्म	११.	कर्म को
मुनये	५.	मुनि को	कथयन्	१३.	वरणन करते हुये
दत्वा	७.	देकर	अनुभूतम्	१४.	अनुभव किया था
अगात्	८.	चले गये	पुरा	८.	पहले जो
त्र्यक्ष	३.	त्रिनेत्र	मुना ॥	९.	मुनि ने
ईश्वरः ।	४.	महादेव			

श्लोकार्थ—इस प्रकार वे त्रिनेत्र महादेव मुनि को वर देकर चले गये । पहले जो मुनि ने उस कर्म को पार्वती से वर्णन करते हुये अनुभव किया था ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

सोऽप्यवाप्तमहायोगमहिमा भार्गवोत्तमः ।
विचरत्यधुनाप्यद्धा हरावेकान्ततां गतः ॥३९॥

पदच्छेद—

सः अपि अवाप्त महायोग महिमा भार्गव उत्तमः ।
विचरन्ति अधुना अपि अद्धा हरौः कान्तताम् गतः ॥

शब्दार्थ—

सः अपि	२. वे मुनि भी	विचरन्ति	१२. पृथ्वी पर विचरण करते हैं
अवाप्त	५. प्राप्त करके	अधुना	१०. अब
महायोग	३. महायोग की	अपि	११. भी
महिमा	४. महिमा को	अद्धा	६. शीघ्र
भार्गव	१. भृगुवंशियों में	हरौः	७. भगवान् के
उत्तमः ।	२. श्रेष्ठ	कान्तताम्	९. अनन्य प्रेमी
		गतः ॥	८. होकर

श्लोकार्थ—वे मुनि भी महायोग की महिमा को प्राप्त करके शीघ्र भगवान् के अनन्य प्रेमी होकर अब भी पृथ्वी पर विचरण करते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

अनुवर्णितमेतत्ते मार्कण्डेयस्य धीमतः ।
अनुभूतं भगवतो मायावैभवमद्भुतम् ॥४०॥

पदच्छेद—

अनुवर्णितम् एतत् ते मार्कण्डेयस्य धीमतः ॥
अनुभूतम् भगवतः माया वैभवम अद्भुतम् ॥

शब्दार्थ—

अनुवर्णितम्	१०. बता दिया	अनुभूतम्	७. अनुभव किया था
एतत्	८. वह मैंने	भगवतः	३. भगवान् की
ते	९. आप लोगों को	माया	४. योगमाया के
मार्कण्डेयस्य	२. मार्कण्डेय मुनि ने	वैभवम्	५. वैभव का
धीमतः ।	१. बुद्धिमान	अद्भुतम् ॥	६. जो अद्भुत

श्लोकार्थ—बुद्धिमान् मार्कण्डेय मुनि ने भगवान् की योगमाया के वैभव का जो अद्भुत अनुभव किया था। वह मैंने आप लोगों को बता दिया ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

एतत् केचिदविद्वांसो मायासंसृतिमात्मनः ।
अनाद्यावर्तितं नृणां कादाचित्कं प्रचक्षते ॥४१॥

पदच्छेद—

एतत् केचित् अविद्वांसः माया संसृतिम् आत्मनः ।
अनादि अवर्तितम् नृणाम् कादाचित्कम् प्रचक्षते ॥

शब्दार्थ—

एतत्	६. इस प्रलय को	अनादि	७. अनादि काल से
केचित्	५. कुछ लोग	अविर्तिम्	८. बार-बार होने वाले
अविद्वासः	४. न जानने वाले	नृणाम्	६. मनुष्यों को
माया	२. माया के	कदाचित्कम्	१०. कभी-कभी होने वाला
संसृतिम्	३. वेभव को	प्रचक्षते ॥	११. कहते है
आत्मनः ।	१. आत्मा की		

श्लोकार्थ—आत्म की माया के वैभव को न जानने वाले कुछ लोग मनुष्यों की अनादि काल से बार-बार होने वाले इसे प्रलय को कभी-कभी होने वाला कहते हैं ॥

द्वाचत्वारिंशः श्लोकः

य एवमेतद् भृगुवर्य वर्णितं रथाङ्गपाणेरनुभावभावितम् ।
संश्रावयेत् संशृणुयादु तावुभौ तयोर्न कर्माशयसंसृतिर्भवेत् ॥४२॥

पदच्छेद—

यः एवम् एतद् भृगुवर्य वर्णितम् रथाङ्गपाणेः अनुभाव भावितम् ।
संश्रावयेत् संशृणुयात् तौ उभौ तयोः न कर्माशय संसृति भवेत् ॥

शब्दार्थ—

यः एवम्	२. जो इस प्रकार	संश्रावयेत्	६. सुनाये और
एतद्	६. इस	संशृणुयात्	८. सुने एवम्
भृगुवर्य	१. भृगुवंश शिरोमणि	तौ उभौ	१०. वे दोनों ही (श्रेष्ठ हैं)
वर्णितम्	७. वर्णन को	तयोःन	११. उन दोनों को
रथाङ्गपाणेः	३. भगवान् के	कर्माशय	१२. कर्म वासनाओं के कारण
अनुभाव	४. प्रभाव से	संसृति	१३. संसार में (आवागमन नहीं)
भावितम् ।	५. परिपूर्ण	भवेत् ॥	१४. होता है

श्लोकार्थ—भृगुवंश शिरोमणि जो इस प्रकार भगवान् के प्रभाव से परिपूर्ण इस वर्णन को सुने एवम् सुनाये और वे दोनों ही श्रेष्ठ हैं । उन दोनों की कर्म वासनाओं के कारण संसार में आवागमन नहीं होता है ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे
दशमः अध्यायः ॥१०॥

एकादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

शौनक उवाच—अथेममर्थं पृच्छामो भवन्तं बहुवित्तमम् ।
समस्ततन्त्रराद्धान्ते भवान् भागवततत्त्ववित् ॥१॥

पदच्छेद—

अथ इमम् अर्थमं पृच्छामो भवन्तम् बहुवित्तमम् ।
समस्त तन्त्र राद्धान्ते भवान् भागवत तत्त्ववित्त ॥

शब्दार्थ—

अथ	१.	तदनन्तर	समस्त	५.	समस्त
इमम् अर्थम्	७.	इस अर्थ को	तन्त्र	६.	शास्त्रों के
पृच्छामः	८.	जानाना चाहते है	राद्धान्ते	१०.	सिद्धान्त के सम्बन्ध में
भवतन्म्	४.	आपसे	भवान्	९.	क्योंकि आप
बहु	२.	बहुत	भगवान्	११.	भागवतं
वित्तमम् ।	३.	जानने वाले में श्रेष्ठ	तत्त्ववित्त	१२.	तत्त्व को जानने वाले हैं

श्लोकार्थ—तदनन्तर बहुत जानने वालों में श्रेष्ठ आपसे समस्त शास्त्रों के इसको जानना चाहते हैं। क्योंकि आप सिद्धान्त के सम्बन्ध में भागवत तत्व को जानने वाले हैं।

द्वितीयः श्लोकः

तान्त्रिकाः परिचर्यायां केवलस्य श्रियः पतेः ।
अङ्गोपाङ्गायुधाकल्पं कल्पयन्ति यथा च यैः ॥२॥

पदच्छेद—

तान्त्रिकाः परिचर्यायाम् केवलस्य श्रियः पतेः ।
अङ्ग उपाङ्ग आयुध अकल्पम् कल्पयन्ति यथा च यैः ॥

शब्दार्थ—

तन्त्रिकाः	१. पञ्चरात्र आदि तत्वों के ज्ञाता	अङ्ग	६. उनके चरणादि अङ्ग
परिचर्यायाम्	५. आराधना में	उपाङ्ग	७. गरुडादि उपाङ्ग
केवलस्य	२. केवल	आयुध	८. सुदर्शनादि आयुध
श्रियः	३. लक्ष्मी	अकल्पम्	९. कौस्तुभादि, आभूषण को
पतेः ।	४. पति भगवान् की	कल्पयन्ति	११. कल्पना करते हैं वह बताएँ
		यथा च यैः ।	१०. जिस प्रकार जिन साधनों से

श्लोकार्थ—पञ्चरात्र आदि तत्वों के ज्ञाता केवल लक्ष्मीपति भगवान् की आराधना में उनके चरणादि अङ्ग गरूडादि उपाङ्ग, सुदर्शनादि आयुद्ध और कौस्तुभादि आभूषणं को कल्पना करते हैं। जिस प्रकार जिन साधनों से कल्पना करते हैं वह बतायें।

तृतीयः श्लोकः

तन्नो वर्णय भद्रं ते क्रियायोगं बुभुत्सताम् ।
येन क्रियानैपुणेन मर्त्यो यायादमर्त्यताम् ॥३॥

पदच्छेद—

तत् न वर्णय भद्रम् ते क्रियायोगम् बभूत्सताम् ।
येन क्रिया नै पुणेन मर्त्यः यायात् अमर्त्यताम् ॥

शब्दार्थ—

तत् नः	३. हमें यह	येन क्रिया	६. जिसका कुशलतापूर्वक
वर्णये	४. बता दें	नै पुणेन्	७. आचरण करने से
भद्रम् ते	५. आपका कल्याण हो	मर्त्यः	८. मनुष्य
क्रियायोगम्	१. क्रिया योग को	यायात्	१०. प्राप्त कर लेता है
बुभुत्सताम् ।	२. समझने के इच्छुक	अमर्त्यताम् ।	९. अमरत्व को

श्लोकार्थ—क्रिया योग को समझने के इच्छुक हमें यह बता दें, आपका कल्याण हो कि जिसका कुशलतापूर्वक आचरण करने से मनुष्य अमरतत्व को प्राप्त कर लेता है ।

चतुर्थः श्लोकः

नमस्कृत्य गुरून् वक्ष्ये विभूतीर्वैष्णवीरपि ।
याः प्रोक्ता वेदतन्त्राभ्यामाचार्यैः पद्मजादिभिः ॥४॥

पदच्छेद—

नमस्कृत्य गुरून् वक्ष्ये विभूतीःवैष्णवीर अपि ।
याः प्रोक्ताः वेदतन्त्र अभ्यामाचार्यैः पद्मजादिभिः ॥

शब्दार्थ—

नमस्कृत्य	१०. नमस्कार करके	याः	६. जिन
गुरून्	९. गुरुओं को	प्रोक्ताः	८. वर्णन किया है (उनका मैं)
वक्ष्ये	११. वर्णन करूंगा	वेदतन्त्रा	३. वेदों और पाञ्चरात्रादि तन्त्रों ने
विभूतीः	७. विभूतियों का	अभ्यामाचार्यै	२. आचार्यों ने
वैष्णवीः	५. विष्णु भगवान् की	पद्मजादिभिः ।	१. आदि ब्रह्मा तथा
अपि ।	४. भी		

श्लोकार्थ—आदि ब्रह्मा तथा आचार्यों ने वेदों और पाञ्चरात्रादि तन्त्रों ने भी विष्णु भगवान् की जिन विभूतियों का वर्णन किया है । (उनका मैं) गुरुओं को नमस्कार करके वर्णन करूंगा ।

पञ्चमः श्लोकः

मायाद्यैर्नवभिस्तत्त्वैः स विकारमयो विराट् ।
निर्मितो दृश्यते यत्र सचित्के भुवन त्रयम् ॥५॥

पदच्छेद—

मायाद्यैः नवभिः तत्वैः स विकारमयोः विराट् ।
निर्मितः दृश्यते यत्र सचित्के भुवन त्रयम् ॥

शब्दार्थ—

मायाद्यैः	१.	प्रकृति आदि	निर्मितः	६.	बना हुआ है
नवभिः	२.	नौ	दृश्यते	१०.	दिखाई पड़ते थे
तत्वैः	३.	तत्वों से	यत्र	७.	जिस
स विकारमयः	४.	वह विकारमय	सचित्के	८.	चेतनाधिष्ठित (विराट् रूपों में)
विराट् ।	५.	विराट्	भुवन त्रयम् ॥	९.	तीनों लोक

श्लोकार्थ— प्रकृति आदि नौ तत्वों से वह विकारमय विराट बना हुआ है जिस चेतनाधिष्ठित विराट रूप में तीनों लोक दिखाई पड़ते थे ।

षष्ठः श्लोकः

एतद् वै पौरुषं रूपं भूः पादौ द्यौः शिरो नभः ।
नाभिः सूर्योऽक्षिणी नासे वायुः कर्णौ दिशः प्रभोः ॥६॥

पदच्छेद—

एतद् वै पौरुषं रूपम् भूः पादौ द्यौः शिरो नभः ।
नाभिः सूर्यः अक्षिणी नासे वायुः कर्णौ दिशः प्रभोः ॥

शब्दार्थ—

एतद्	१.	यह	नाभिः	७.	नाभि है
वै पौरुषम्	२.	ही पुरुष	सूर्यः अक्षिणी	८.	सूर्य नेत्र हैं
रूपम्	३.	रूप है	नासे वायुः	९.	वायु नासिका है
भूः पादौ	४.	पृथ्वी उनके चरण हैं	कर्णौ	१२.	कान हैं
द्यौः शिरः	५.	स्वर्ग मस्तक है	दिशः	१०.	दिशायें
नभः ।	६.	अन्तरिक्ष	प्रभोः ॥	११.	भगवान के

श्लोकार्थ—यह ही पुरुष रूप है, पृथ्वी उनके चरण हैं, स्वर्ग मस्तक है, अन्तरिक्ष नाभि है, सूर्य नेत्र हैं, वायु नासिका है, दिशायें भगवान् के कान हैं ।

सप्तमः श्लोकः

प्रजापतिः प्रजननमपानो मृत्युरीशितुः ।
तद्बाहवो लोकपाला मनश्चन्द्रो भ्रुवौ यमः ॥७॥

पदच्छेद—

प्रजापतिः प्रजननम् अपानः मृत्युः ईंशितुः ।
तत् बहवः लोकपाला मनः चन्द्र भ्रुवौ यमः ॥

शब्दार्थ —

प्रजापतिः	२. प्रजापति	तत्	७. उनकी
प्रजननम्	३. लिङ्ग है	बहवः	८. भुजायें हैं
अपानः	५. गुदा है	लोकपाला	६. लोकपालगण
मृत्युः	४. मृत्यु	मनः	१०. मन है और
ईंशितुः ।	१ प्रभु के	चन्द्रः	६. चन्द्रमा
		भ्रुवौ यमः ॥	११. भौहें हैं यमराज

श्लोकार्थ—प्रभु के प्रजापति लिङ्ग हैं । मृत्यु गुदा है । लोकपालगण भुजायें हैं । चन्द्रमा मन है और यमराज भौहें हैं ।

अष्टमः श्लोकः

लज्जोत्तरोऽधरो लोभो दन्ता ज्योत्स्ना स्मयो भ्रमः ।
रोमाणि भूरुहा भूम्नो मेघाः पुरुषमूर्धजाः ॥८॥

पदच्छेद—

लज्जा उत्तरः अधरः लोभः दन्ता ज्योत्स्ना स्मयः भ्रमः ।
रोमाणि भूरुहा भूम्नः मेघाः पुरुषः मूर्धजाः ॥

शब्दार्थ—

लज्जा उत्तरः	१. ऊपर का ओठ लज्जा है	रोमाणि	१०. रोम हैं
अधरःलोभः	२. नीचे का ओठ लोभ है	भूरुहा	८. वृक्ष
दन्ता	४. दांत हैं	भूम्नः	६. भूमा पुरुष के
ज्योत्सना	३. चांदनी	मेघाः	११. और बादल हो
स्मयः	७. मुसकान	पुरुषः	१२. विराट पुरुष के
भ्रमः	६. भ्रमः	मूर्धजाः ॥	१३. सिर के बाल हैं

श्लोकार्थ—ऊपर का ओठ लज्जा है, नीचे का ओठ लोभ है । चांदनी दांत है, भ्रम मुसकान है । वृक्ष भूमा पुरुष के रोम हैं । और बादल ही विराट पुरुष के सिर के बाल हैं ।

नवमः श्लोकः

यावानयं वै पुरुषो यावत्या संस्थया मितः ।
तावानसावपि महापुरुषो लोकसंस्थया ॥९॥

पदच्छेद—

यावान् अयम् वै पुरुषः यावत्या संस्थया मितः ।
तावान् असौअपि महापुरुषः लोक संस्थया ॥

शब्दार्थ—

यावान्	१.	जितना	तावान्	७.	उतने ही
अयम्	२.	व्यष्टि	असौ	८.	वह समष्टि से
वै पुरुषः	३.	पुरुष	अपि	१२.	भी है
यावत्या	४.	जितने	महापुरुषः	११.	महापुरुष
संस्थया	५.	परिमाण से	लोक	९.	लोक
मितः ।	६.	परिमित सात वित्ते का है	संस्थया ॥	१०.	परिमाण से युक्त है

श्लोकार्थ—जितना व्यष्टि पुरुष जितने परिमाण से परिमित सात वित्ते का है, उतने ही वह समष्टि लोक परिमाण से युक्त है । वह महापुरुष भी है । ॥

दशमः श्लोकः

कौस्तुभव्यदेशेन स्वात्मज्योतिर्बिभर्त्यजः ।
तत्प्रभा व्यापिनी साक्षात् श्रीवत्समुरसा विभुः ॥१०॥

पदच्छेद—

कौस्तुभ व्यपदेशेन स्वात्मज्योतिः विभर्ति अजः ।
तत् प्रभा व्यापिनी साक्षात् श्रीवत्समुरसा विभु ॥

शब्दार्थ—

कौस्तुभ	३.	कौस्तुभमणि के	तत्	८.	उनकी
व्यपदेशेन	४.	बहाने	प्रभा	१०.	प्रभा के
स्वात्म	५.	अपनी आत्म	व्यपिनी	९.	सर्वव्यापिनी
ज्योतिः	६.	ज्योति को	साक्षात्	१.	स्वयम्
विभर्ति	७.	धारण करते हैं और	श्रीवत्सम्	११.	श्रीवत्स चिह्न को
अजः ।	२.	अजन्मा भगवान्	उरसाविभुः ॥	१२.	वक्षःस्थल पर धारण करते हैं

श्लोकार्थ—स्वयम् अजन्मा भगवान् कौस्तुभमणि के बहाने अपनी आत्मज्योति को धारण करते हैं । और उनकी सर्वव्यापिनी प्रभा के श्रीवत्स चिह्न को वक्षः स्थल पर धारण करते हैं ॥

एकादशः श्लोकः

स्वमायां वनमालाख्यां नानागुणमयीं दधत् ।
वासश्छन्दोमयं पीतं ब्रह्मसूत्रं त्रिवृत् स्वरम् ॥११॥

पदच्छेद—

स्वमायाम् वनमालाख्यां नाना गुणमयीम् दधत् ।
वाशः छन्दोमयम् पीतम् ब्रह्मसूत्रम् त्रिवृत स्वरम् ॥

शब्दार्थ—

स्वमायाम्	३.	अपनी माया को	वाशः	७.	स्वर के रूप में
वनमाला	४.	वनमाला के	छन्दोमयम्	६.	छन्द को
आख्याम्	५.	रूप में	पीतम्	८.	पीताम्बर तथा
नाना	१.	अनेक	ब्रह्मसूत्रम्	११.	यज्ञोपवीत के रूप मे
गुणमयीम्	२.	गुणों वाली	त्रिवृत	१०.	तीन मात्रा वाले
दधत् ।	१२.	धारण करते हैं	स्वरम् ॥	९.	स्वर प्रणव को

श्लोकार्थ—अनेक गुणों वाली अपनी माया को वन माला के रूप में, छन्द को स्वर के रूप में पीताम्बर तथा स्वर प्रणव को तीन मात्रा वाले यज्ञोपवीत के रूप में धारण करते हैं ॥

द्वादशः श्लोकः

बिभर्ति सांख्यं योगं च देवो मकरकुण्डले ।
मौलिं पदं पारमेष्ठ्यं सर्वलोकाभयङ्करम् ॥१२॥

पदच्छेद—

बिभर्ति सांख्यम् योगम् च देव मकर कुण्डले ।
मौलिम् पदम् पारमेष्ठ्यम् सर्वलोक अभयङ्करम् ॥

शब्दार्थ—

बिभर्ति	११.	धारण करते हैं	मौलिम्	९.	मुकुट के
सांख्यम्	२.	सांख्य और	पदम्	१०.	रूप में
योगम्	३.	योग को	पारमेष्ठ्यम्	८.	ब्रह्मलोक को
च देव	१.	और देवादिदेव भगवान्	सर्वलोक	६.	सब लोकों को
मकर	४.	मकर कृत	अभयङ्करम् ॥	७.	अभय कर देने वाले
कुण्डले ।	५.	कुण्डल के रूप में			

श्लोकार्थ—और देवादिदेव भगवान् सांख्य और योग को मकरकृत कुण्डल के रूप में सब लोकों को अभय कर देने वाले ब्रह्म लोक को मुकुट के रूप धारण करते हैं ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अव्याकृतमनन्ताख्यमासनं यदधिष्ठितः।
धर्मज्ञानादिभिर्युक्तं सत्त्वं पद्ममिहोच्यते ॥१३॥

पदच्छेद—

अव्याकृतम् अनन्त आख्यम् आसनम् यद धिष्ठित :।
धर्मज्ञान आदिभिः युक्तम् सत्त्वम् पद्ममिहोच्यते ॥

शब्दार्थ—

अव्याकृतम्	१.	मूल प्रकृति हो	धर्मज्ञान	८.	धर्मज्ञान
अनन्त	२.	अनन्त	आदिभिः	९.	आदि से
आख्यम्	३.	नामक	युक्तम्	१०.	युक्त
आसनम्	४.	शय्या है	सत्त्वम्	११.	सत्त्व गुण ही
यद	६.	जिस पर वे	पद्मम्	१२.	यहाँ उनका नाभि कमल
धिष्ठित् ।	७.	विराजमान हैं	इहउच्यते ॥	१३.	कहा जाता है

श्लोकार्थ—मूल प्रकृति हो अनन्त नामक शय्या है, जिस पर वे विराजमान हैं। धर्मज्ञान आदि से युक्त सत्त्वगुण ही यहाँ उनका नाभि कमल कहा जाता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

ओजःसहोबलयुतं मुख्यतत्त्वं गदां दधत्।
अपां तत्त्वं दरवरं तेजस्तत्त्वं सुदर्शनम् ॥१४॥

पदच्छेद—

ओजः सहोबल युतम् मख्यं तत्त्वम् गदाम् दधत्।
अपाम् तत्त्वम् दखरम् तेजः तत्त्वम् सुदर्शनम् ॥

शब्दार्थ—

ओजः	१.	वे मन	अपाम्	७.	जल
सहोबल	२.	इन्द्रिय और बल से	तत्त्वम्	८.	तत्त्व रूप
युतम्	३.	युक्त	दखरम्	९.	पञ्चजन शंख और
मुख्यम्	४.	प्राण	तेजः	१०.	तेजस
तत्त्वम्	५.	तत्वस्वरूप	सत्त्वम्	११.	तत्त्व रूप
गदाम् दधत्।	६.	कौमोदकी गदा	सुदर्शनम् ॥	१२.	सुदर्शनचक्र को धारण करते हैं

श्लोकार्थ—वे मन, इन्द्रिय और बल से युक्त प्राण तत्व स्वरूप कौमोदकी गदा, जल तत्त्व रूप पञ्चजन शंख और तेजस तत्वरूप सुदर्शन चक्र को धारण करते हैं ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नभोनिभं नभस्तत्त्वमसिं चर्म तमोमयम् ।
कालरूपं धनुः शार्ङ्गं तथा कर्ममयेषुधिम् ॥१५॥

पदच्छेद—

नभःनिभम् नभः तत्त्वम् असिम् चर्म तमोमयम् ।
कालरूपम् धनुः शार्ङ्गं तथा कर्ममय ईषुधिम् ॥

शब्दार्थ—

नभः	१. आकाश के	काल	८. काल
निभम्	२. समान निर्मल एवं	रूपम्	९. रूप
नभः	३. आकाश	धनुः	१०. धनुष
तत्त्वम्	४. तत्व रूप	शार्ङ्गं	११. शार्ङ्गम्
असिम्	५. खड्ग	तथा	१२. तथा
चर्म	६. ढाल	कर्ममय	१३. कर्ममय
तमोमयम् ।	७. तमोमय (अज्ञान रूप)	ईषुधिम् ॥	१४. ईषुधिम् (तरकस धारण करते हैं)

श्लोकार्थ—आकाश के समान निर्मल एवं आकाश तत्त्व रूप खड्ग ढाल तमोमय अज्ञान कालरूप धनुष शाङ्र्ग तथा कर्ममय तरकस धारण करते हैं ॥

षोडशः श्लोकः

इन्द्रियाणि शरानाहुराकूतीरस्य स्यन्दनम् ।
तन्मात्राण्यस्याभिव्यक्तिं मुद्रयार्थक्रियात्मताम् ॥१६॥

पदच्छेद—

इन्द्रियाणि शरान आहुः आकूतीः अस्य स्यन्दनम् ।
तन्मात्राणि अस्य अभिव्यक्तिम् मुद्रयार्थं क्रियात्मताम् ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रियाणि	१. इन्द्रियों को भगवान् के	तन्मात्राणि	७. तनमात्रायें
शरान्	२. बाणों के रूप में	अस्य	८. उस रथ का
आहुः	३. कहा गया है	अभिव्यक्तिम्	९. बाहरी भाग है
आकूतीः	४. क्रिया शक्ति	मुद्रयार्थं	१०. वर अभय आदि मुद्राओं से
अस्य	५. उनका	क्रियात्	११. वरदान आदि के रूप में उनकी
स्पन्दनम् ।	६. रथ है	आत्मताम् ॥	१२. क्रिया शीलता प्रकट होती है

श्लोकार्थ—इन्द्रियों को भगवान् के बाणों के रूप में कहा गया है। क्रिया शक्ति उनका रथ है। तन्मात्रायें उस रथ का बाहरी भाग है। वर अभय आदि मुद्राओं से वरदान आदि के रूप में उनकी क्रिया शीलता प्रकट होती है ॥

सप्तदशः श्लोकः

मण्डलं देवयजनं दीक्षा संस्कार आत्मनः।
परिचर्या भगवत आत्मनो दुरितक्षयः ॥१७॥

पदच्छेद—

मण्डलम् देव यजनम् दीक्षा संस्कार आत्मनः ।
परिचर्या भगवत आत्मनः दुरित क्षयः ॥

शब्दार्थ—

मण्डलम्	१. सूर्य मण्डल	परिचर्या	१०. परिचर्या है
देव यजनम्	२. भगवान् की पूजा का स्थान है	भगवत	९. भगवान की
दीक्षा	५. मन्त्र दीक्षा है	आत्मनः	६. अपने
संस्कार	४. शुद्धिः	दुरित	७. पापों को
आत्मनः।	३. अन्तःकरण की	क्षयः॥	८. नष्ट कर देना

श्लोकार्थ—सूर्य मण्डल भगवान् की पूजा का स्थान है। अन्तःकरण की शुद्धि मन्त्र दीक्षा है। अपने पापों को नष्ट कर देना भगवान् की परिचर्या है॥

अष्टादशः श्लोकः

भगवान् भगशब्दार्थं लीलाकमलमुद्वहन् ।
धर्मं यशश्च भगवांश्चामरव्यजनेऽभजत् ॥१८॥

पदच्छेद—

भगवान् भग शब्द अर्थं लीला कमलम् उद्वहन् ।
धर्मम् यशः च भगवान् चामर व्यजने अभजत् ॥

शब्दार्थ—

भगवान्	१. भगवान्	धर्मम्	७. धर्म और
भगशब्द	२. भगशब्द के	यशः च	८. यश को
अर्थम्	३. अर्थ को	भगवान्	९. भगवान्
लीला	४. लीला	चामर	१०. चंवर एवम्
कमलम्	५. कमल रूप से	व्यजने	११. पंखे के रूप से
उद्वहन्।	६. धारण करते हैं	अभजत्॥	१२. धारण करते हैं

श्लोकार्थ—भगवान् भगशब्द के अर्थ को (ऐश्वर्य, धर्म, यश, लक्ष्मी, ज्ञान और वैराग्य को) लीला कमल रूप से धारण करते हैं. धर्म और यश को भगवान् चंवर एवम् पंखे के रूप में धारण करते हैं॥

एकोनविंशः श्लोकः

आतपत्रं तु वैकुण्ठं द्विजा धामाकुतोभयम् ।
त्रिवृद्वेदः सुपर्णाख्यो यज्ञं वहति पूरुषम् ॥१६॥

पदच्छेद—

आतपत्रम् तु वैकुण्ठम् द्विजा धाम अकुतोभयम् ।
त्रिवृद् वेदः सुपर्णाख्यः यज्ञम् वहति पूरुषम् ॥

शब्दार्थ—

आतपत्रम्	५.	छत्र रूप से	त्रिवृद्	७.	तीन
तु	६.	धारण करते हैं ये	वेदः	८.	वेदों का
वैकुण्ठम्	४.	वैकुण्ठ को	सुपर्णाख्यः	९.	नाम गरुड है
द्विजा	१.	द्विजगण	यज्ञम्	१०.	वही यज्ञ
धाम	३.	धाम	वहति	१२.	वहन करता है
अकुतोभयम् ।	२.	निर्भय अपने	पूरुषम् ॥	११.	पुरुष (परमात्मा) का

श्लोकार्थ—हे द्विजगण ! अपने निर्भय धाम वैकुण्ठ को छत्ररूप से धारण करते हैं। तीन वेदों का नाम गरुड है। वही यज्ञ पुरुष परमात्मा का वहन करता है ॥

विंशः श्लोकः

अनपायिनी भगवती श्रीः साक्षादात्मनो हरेः ।
विष्वक्सेनस्तन्त्रमूर्तिर्विदितः पार्षदाधिपः ।
नन्दादयोऽष्टौ द्वाःस्थाश्च तेऽणिमाद्या हरेर्गुणाः ॥२०॥

पदच्छेद—

अनपायिनी भगवती श्रीः साक्षात् आत्मनः हरेः ।
विष्वक्सेनः तन्त्रमूर्तिः विदितः पार्षद अधिपः ।
नन्दादयोऽष्टौ द्वाःस्थाः च तेऽणि माद्या हरेः गुणाः ॥

शब्दार्थ—

अनपायिनी	३.	कभी न बिछुड़ने वाली शक्ति	विदितः	९.	विश्व विश्रुत
भगवती	५.	भगवती	पार्षद	७.	विष्णु के पार्षदों के
श्रीः	६.	लक्ष्मी है	अधिपः ।	८.	नायक
साक्षात्	४.	साक्षात्	नन्दादयो	१०.	नन्द आदि
आत्मनः	१.	आत्म स्वरूप	अष्टौ	१३.	आठ
हरेः ।	२.	भगवान् की	द्वाः स्थाः	१४.	द्वार पाल हैं
विष्वक्सेनः	१०.	विष्वक्सेन	च ते अणि माद्या	१२.	वे अणिमा आदि
तन्त्रमूर्तिः ।	११.	पाञ्चरात्रादि (आगमरूप है)	हरे र्गुणाः ॥	१५.	हरि के गुण

श्लोकार्थ—आत्म स्वरूप भगवान् की कभी न बिछुड़ने वाली शक्ति साक्षात् भगवती लक्ष्मी है। विष्णु के पार्षदों के नायक विश्व विश्रुत विष्वक्सेन पाञ्चरात्रादि आगम रूप है। हरि के गुण वे अणिमा आदि आठ द्वारपाल हैं ॥

एकविंशः श्लोकः

वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नः पुरुषः स्वयम् ।
अनिरुद्ध इति ब्रह्मन् मूर्तिव्यूहोऽभिधीयते ॥२१॥

पदच्छेद—

वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नः पुरुषः स्वयम् ।
अनिरुद्ध इति ब्रह्मन् मूर्तिव्यूहः अभिधीयते ॥

शब्दार्थ—

वासुदेवः	४. वासुदेव	अनिरुद्ध	७. और अनिरुद्ध
सङ्कर्षणः	५. संङ्कर्षण	इति	८. यह
प्रद्युम्नः	६. प्रद्युम्न	ब्रह्मन्	१. हे ब्रह्मन् !
पुरुषः	३. भगवान्	मूर्तिव्यूहः	९. मूर्तिव्यूह (चतुर्व्यूह)
स्वयम् ।	२. स्वयम्	अभिधीयते ॥	१०. कहलाते हैं

श्लोकार्थ—हे ब्रह्मन् ! स्वयम् भगवान् वासुदेव, संङ्कर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध यह मूर्तिव्यूह (चतुर्व्यूह) कहलाते हैं ॥

द्वाविंशः श्लोकः

स विश्वस्तैजसः प्राज्ञस्तुरीय इति वृत्तिभिः ।
अर्थेन्द्रियाशयज्ञानैर्भगवान् परिभाव्यते ॥२२॥

पदच्छेद—

सः विश्वः तैजसः प्राज्ञस्तुरीय इति वृत्तिभिः ।
अर्थेन्द्रियाशय ज्ञानैर्भगवान् परि भाव्यते ॥

शब्दार्थ—

सः विश्वः	१. वे विश्व	अर्थेन्द्रियाशय	६. विषय इन्द्रिय
तैजसः	२. तैजस	ज्ञानैर्भगवान्	७. चित्त और ज्ञान के द्वारा
प्राज्ञस्तुरीय	३. प्राज्ञ और तुरीय	परि	८. भगवान् समझे
इति	४. इन	भाव्यते ॥	९. जाते हैं
वृत्तिभिः ।	५. वृतियों से		

श्लोकार्थ—वे विश्व तैजस प्राज्ञ और तुरीय इन वृत्तियों से विषय इन्द्रिय चित्त और ज्ञान के द्वारा भगवान् समझे जाते हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

अङ्गोपाङ्गयुधाकल्पैर्भगवांस्तच्चतुष्टयम् ।
बिभर्ति स्म चतुर्मूर्तिर्भगवान् हरिरीश्वरः ॥२३॥

पदच्छेद—

अङ्ग उपाङ्ग आयुध आकल्पैः भगवान् तत् चतुष्टयम् ।
बिभर्ति स्म चतुर्मूर्तिः भगवान् हरि ईश्वरः ॥

शब्दार्थ—

आङ्गः	१.	इस प्रकार अङ्ग	बिभर्तिस्म	१२.	धारण करते है
उपाङ्गः	२.	उपाङ्ग	चतुर्मूर्तिः	५.	चार रूपों में
आयुध	३.	आयुध और	भगवान्	७.	इन चार मूर्तियों के रूप में प्रकट
आकल्पैः	४.	आभूषणों से युक्त तथा			
भगवान्	११.	वही भगवान है	हरिः	८.	भगवान हरि
तत्	६.	उन	ईश्वरः ॥	६.	सर्व शक्तिमान
चतुष्टयम् ।	१०.	चार रूपों को			

श्लोकार्थ—इस प्रकार अङ्ग, उपाङ्ग, आयुध और आभूषणों से युक्त तथा चाररूपों में वासुदेव, संङ्कर्षण और प्रद्युम्न, अनिरुद्ध इन चार मूर्तियों के रूप में प्रकट सर्वशक्ति मान भगवान् हरि उन चार रूपों को (विश्व, तैजस, प्राज्ञ, तुरीय रूप को) वही भगवान् धारण करतेहैं॥

चतुर्विंशः श्लोकः

द्विजऋषभ स एष ब्रह्मयोनिः स्वयंदृक् स्वमहिमपरिपूर्णो माययाच स्वयैतत्
सृजतिहरतिपातीत्याख्ययानावृताक्षो विवृत इव निरुक्तस्तत्परैरात्मलभ्यः

पदच्छेद—

द्विज ऋषभः सः एषब्रह्मयोनिः स्वयंदृक् स्वमहिम परिपूर्णः मायया च स्वया एतत् ।
सृजति हरति पाति इति आख्यया अनावृत अक्षः विवृत इव निरुक्तः तत्परैः आत्मलभ्यः ॥

शब्दार्थ—

द्विजऋषभ	१.	हे ब्राह्मण श्रेष्ठ	सृजति हरति	६.	सृष्टि और संहार करते हैं
सः एष	२.	वही भगवान्	पाति इति	१०.	पालन सृष्ट ब्रह्मादि
ब्रह्मयोनिः	३.	वेदों के मूल	आख्यया	११.	रूपों तथा नाम से
स्वयंदृक्	४.	स्वयम् प्रकाश	अनावृत अक्षः	१२.	उनका ज्ञान तिरोहित नहीं होता है
स्वमहिम्	५.	एवम् अपनी महिमा से	विवृत इव	१३.	यद्यपिशास्त्रों में वे भिन्न के समान
परिपूर्णः	६.	परिपूर्ण हैं और	निरुक्तः	१४.	वर्णित हुये हैं
मायया च	७.	माया से	तत्परैः	१५.	किन्तु अपने परायणभक्तों को
स्वया एतत् ।	८.	अपनी इस विश्व की	आत्मलभ्यः ॥	१६.	आत्म स्वरूप से वे प्राप्तहोतेहै

श्लोकार्थ—हे ब्राह्मण श्रेष्ठ ! वही भगवान् वेदों के मूल स्वयं प्रकाश एवं अपनी महिमा से परिपूर्ण हैं। और माया से अपनी इस विश्व की सृष्टि और संहार करते हैं। पालन सृष्टा ब्रह्मादि रूपों ताथ नाम से उनका ज्ञान तिरोहित नहीं होता है। यद्यपि शास्त्रों में वे भिन्न के समान वर्णित हुये हैं। किन्तु अपने परायण भक्तों को आत्म रूप से वे प्राप्त होते हैं ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

श्रीकृष्ण कृष्णसख वृष्ण्यृषभावनिध्रुग्राजन्यवंशदहनानपवर्गवीर्य ।
गोविन्द गोपवनिताव्रजभृत्यगीततीर्थश्रवः श्रवणमङ्गल पाहि भृत्यान् ।२५।

पदच्छेद—

श्री कृष्ण कृष्णसख वृष्णि ऋषभ अवनिध्रुग् राजन्य वंशदहन अनपवर्गवीर्य ।
गोविन्द गोपवनिता व्रज भृत्य गीत तीर्थश्रवः श्रवणमङ्गल पाहि भृत्यान् ॥

शब्दार्थ—

श्रीकृष्ण	१.	हे श्रीकृष्ण	गोविन्द	८.	गोविन्द
कृष्णसख	२.	अर्जुन के सखा	गोपवनिता	९.	गोपबालाओं तथा
वृष्णिऋषभ	३.	यदुवंश में श्रेष्ठ	व्रजभृत्य	१०.	व्रजके प्रेमी(नारदि के द्वारा)
अवनिध्रुग	४.	पृथ्वी के द्रोही	गीत	११.	गाये गये
राजन्यवंश	५.	राजाओं के वंश को	तीर्थश्रवः	१२.	पवित्र यशवाले
दहन	६.	जलाने वाले	श्रवणमङ्गल	१३.	श्रवण करने से मङ्गल देने वाले
अनपवर्गवीर्य ।	७.	एकरस पराक्रम वाले	पाहि भृत्यान् ॥	१४.	हमसेवकों की रक्षा कीजिये

श्लोकार्थ—हे श्रीकृष्ण ! अर्जुन के सखा यदुवंश में श्रेष्ठ पृथ्वी के द्रोही राजाओं के वंश को जलाने वाले एकरस पराक्रम वाले गोविन्द गोपबालाओं तथा व्रज के प्रेमी नारदादि के द्वारा गाये गये पवित्र यशवाले श्रवण करने योग्य मङ्गल देने वाले हम सेवकों की रक्षा कीजिये ॥

षट्विंशः श्लोकः

य इदं कल्य उत्थाय महापुरुषलक्षणम् ।
तच्चित्तः प्रयतो जप्त्वा ब्रह्म वेद गुहाशयम् ॥२६॥

पदच्छेद—

य इदम् कल्प उत्थाय महा पुरुष लक्षणम् ।
तत् चितः प्रयतः जप्त्वा ब्रह्म वेद गुहाशयम् ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो मनुष्य	तत्	६.	भगवान् में
इदम्	४.	इस	चित्तः	५.	मन को
कल्य	२.	प्रातः काल	प्रयतः	७.	लगाकर
उत्थाय	३.	उठकर	जप्त्वा	१०.	पवित्र होकर जप या पाठ करेगा
महापुरुष	८.	महा पुरुष	ब्रह्मवेद	१२.	परमात्मा को जान लेगा
लक्षणम् ।	९.	चिह्नभूत इस वर्णन का	गुहाशयम् ॥	११.	हृदय रूपीगुफा में रहने वाले

श्लोकार्थ—जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर इस मन को भगवान् में लगा कर पवित्र होकर महापुरुष के इस वर्णन का चिह्न भूत जप या पाठ करेगा वह हृदय रूपी गुफा में रहने वाले परमात्मा को जान लेगा ॥

सप्तविंशः श्लोकः

शौनक उवाच—शुको यदाह भगवान् विष्णुराताय शृण्वते ।
सौरो गणो मासि मासि नाना वसति सप्तकः ॥२७॥

पदच्छेद—

शुकः यद् आह भगवान् विष्णुराताय शृण्वते ।
सौरो गणो मासि मासि नाना वसति सप्तकः ॥

शब्दार्थ—

शुकः	४.	शुकाचार्य ने	सौरो	७.	ऋजि, गन्धर्व आदि सातों का एक सौर
यत्	५.	जो	गणो	८.	गण होता है
आह	६.	कहा था कि	मासि मासि	९.	प्रत्येक मास में
भगवान्	३.	भगवान्	नाना	११.	बदलते
विष्णुराताय	१.	परीक्षित से (५स्कन्ध में)	वसति	१२.	रहते हैं
शृण्वते ।	२.	भागवत सुनते हुये	सप्तकः ॥	१०.	ये सातों

श्लोकार्थ—भागवत सुनते हुये परीक्षित से ५ स्कन्ध में भगवान् शुकाचार्य ने जो कहा था कि, ऋजि, गन्धर्व आदि सातों का एक सौर गण होता है । प्रत्येक मास में ये सातों बदलते रहते हैं ।

अष्टाविंशः श्लोकः

तेषां नामानि कर्माणि संयुक्तानामधीश्वरैः ।
ब्रूहि नः श्रद्दधानानां व्यूहं सूर्यात्मनो हरेः ॥२८॥

पदच्छेद—

तेषाम् नामानि कर्माणि संयुक्तानाम् अधीश्वरैः ।
ब्रूहि नः श्रद्धधानानाम् व्यूहम् सूर्यात्मनः हरेः ॥

शब्दार्थ—

तेषाम्	३.	उन बारह गणों के	ब्रूहि	११.	बता दीजिये
नामानि	४.	नाम और	नः	९.	हमें
कर्माणि	५.	कर्म तथा	श्रद्धधानानाम्	१०.	श्रद्धालुओं को
संयुक्तानाम्	१.	संयुक्त	व्यूहम्	८.	विभाग
अधिईश्वरैः ।	२.	स्वमी आदित्यों से	सूर्यात्मनः	६.	सूर्य स्वरूप
			हरेः ॥	७.	भगवान हरि का

श्लोकार्थ—अपने स्वामी आदित्यों से संयुक्त उन बारह गणों के नाम और कर्म तथा सूर्य स्वरूप भगवान् हरि का विभाग हम श्रद्धालुओं को बता दीजिये ।

एकोनत्रिंशः श्लोकः

सूत उवाच—अनाद्यविद्यया विष्णोरात्मनः सर्वदेहिनाम् ।
निर्मितो लोकतन्त्रोऽयं लोकेषु परिवर्तते ॥२९॥

पदच्छेद—

अनादि अविद्यया विष्णोः आत्मनः सर्व देहिनाम् ।
निर्मितो लोकतन्त्रो अयम् लोकेषु परिवर्तते ॥

शब्दार्थ—

अनादि	५.	अनादि	निर्मितः	७.	निर्मित
अविद्यया	६.	अविद्यया द्वारा	लोकतन्त्रः	८.	लोकों के व्यवहार प्रवर्तक सूर्य मण्डल
विष्णोः	४.	विष्णु की	अयम्	९.	यह
आत्मानः	३.	आत्मा	लोकेषु	१०.	लोकों में
सर्व	१.	समस्त	परि	११.	भ्रमण
देहिमाम् ।	२.	प्राणियों की	वर्तते ॥	१२.	किया करते हैं

श्लोकार्थ—समस्त प्राणियों की आत्मा विष्णु की अनादि अविद्या के द्वारा निर्मित लोकों के व्यवहार में प्रवर्तक सूर्य मण्डल यह लोकों में भ्रमण किया करते हैं ॥

त्रिंशः श्लोकः

एक एव हि लोकानां सूर्य आत्माऽऽदिकृद्धरिः ।
सर्ववेदक्रियामूलमृषिभिर्बहुधोदितः ॥३०॥

पदच्छेद—

एक एव हि लोकानाम् सूर्यः आत्मा आदिकृत् हरिः ॥
सर्व वेद क्रिया मूलम् ऋषिभः बहुधा उदितः ॥

शब्दार्थ—

एक-एव हि	४.	एक-मात्र	सर्ववेद	७.	वे समस्त वैदिक
लोकानाम्	१.	लोकों के	क्रिया	८.	क्रियायों के
सूर्यः	५.	सूर्य हैं	मूलम्	९.	मूल हैं
आत्मा	२.	आत्मा एवम्	ऋषिभिः	१०.	ऋषियों ने उनका
आविकृत्	३.	आदि कर्त्ता	बहुधाः	११.	बहुत रूपों में
हरिः ।	६.	हरि ही	उदितः ॥	१२.	वर्णन किया है

श्लोकार्थ—लोकों के आत्मा एवं आदिकर्ता एक मात्र हरि ही सूर्य हैं । वे समस्त वैदिक क्रियायों के मूल हैं । ऋषियों ने उनका बहुत रूपों में वर्णन किया है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

कालो देशः क्रिया कर्ता करणं कार्यमागमः ।
द्रव्यं फलमिति ब्रह्मन् नवधोक्तोऽजया हरिः ॥३१॥

पदच्छेद—

कालः देशः क्रियाः कर्ता करणम् कार्यम् आगमः ।
द्रव्यम् फलम् इति ब्रह्मन् नवधा उक्तः अजया हरिः ॥

शब्दार्थ—

कालः	४.	काल	द्रव्यम्	११.	द्रव्य और
देशः	५.	देश	फलम्	१२.	फल
क्रियाः	६.	क्रिया	इति	१३.	रूप से
कर्ता	७.	कर्ता	ब्रह्मन्	१.	हे शौनक जी !
करणम्	८.	करण	नवधा	१४.	नौ प्रकार के कहे गये हैं
कार्यम्	९.	कार्यम् (यागादि कर्म)	उक्तः	३.	माया के द्वारा
आगमः ।	१०.	वेद मन्त्र	अजया हरिः ॥	२.	भगवान् ही

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! भगवान ही माया के द्वारा काल, देश, क्रिया, कर्ता, करण, यागादि कर्म, वेद मन्त्र द्रव्य और फल रूप से नौ प्रकार से कहे गये हैं ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

मध्वादिषु द्वादशसु भगवान् कालरूपधृक् ।
लोकतन्त्राय चरति पृथग्द्वादशभिर्गणैः ॥३२॥

पदच्छेद—

मधु आदिषु द्वादशसु भगवान् काल रूप धृक् ।
लोक तन्त्राय चरति पृथक् द्वादशभिः गणैः ॥

शब्दार्थ—

मधु	६.	चैत्र	लोक	४.	लोकों का
आदिषु	७.	आदि	तन्त्राय	५.	व्यवहार चलाने के लिये
द्वादशसु	८.	बारह मासों में से	चरति	१२.	चक्कर लगाया करते हैं
भगवान्	३.	भगवान् सूर्य	पृथक्	९.	भिन्न-भिन्न
कालरूप	१.	काल रूप	द्वादशभिः	१०.	बारह
धृक् ।	२.	धारी	गणैः ॥	११.	गणों के साथ

श्लोकार्थ—काल रूप धारी भगवान् सूर्य लोकों का व्यवहार चलाने के लिये चैत्र आदि बारह मासों में से भिन्न-भिन्न बारह गणों के साथ चक्कर चलाया करते हैं ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

धाता कृतस्थली हेतिर्वासुकी रथकृन्मुने ।
पुलस्त्यस्तुम्बुरुरिति मधुमासं नयन्त्यमी ॥३३॥

पदच्छेद—

धाता कृतस्थली हेतिः वासुकी रथकृत् मुने ।
पुलस्त्यः तुम्बुरुः इति मधुमासम् नयन्त्यमी ॥

शब्दार्थ—

धाता	२. धाता नामक सूर्य	पुलस्त्य	७. पुलस्त्य ऋषि और
कृतस्थली	३. कृतस्थलो अप्सरा	तुम्बुरु	८. तुम्बुरु गन्धर्व
हेति	४. हेति राक्षस	इति	६. आदि
वासुकी	५. वासुकी सर्प	मधु	१०. ये चैत्र
रथकृत्	६. रथकृत यक्ष	मासम	११. मास का
मुने ।	१. हे शौनक जो	नयन्त्यमी ॥	१२. कार्य सम्पन्न करते हैं

श्लोकार्थ—हे शौनक जी ! धाता नामक सूर्य कृतस्थली अप्सरा हेति राक्षस वासुकि सर्प रथकृत् यक्ष पुलस्त्य ऋषि और तुम्बुरु गन्धर्व आदि ये चैत्रमास का कार्य सम्पन्न करते हैं ॥

चतुस्त्रिंशः श्लोकः

अर्यमा पुलहोऽथौजाः प्रहेतिः पुञ्जिकस्थली ।
नारदः कच्छनीरश्च नयन्त्येते स्म माधवम् ॥३४॥

पदच्छेद—

अर्यमा पुलहः अथौजाः प्रहेतिः पुञ्जिकस्थली ।
नारदः कच्छनीरः च नयन्ति एते स्म माधवम् ॥

शब्दार्थ—

अर्यमा	१. अर्यमा सूर्य	नारदः	७. नारद गन्धर्व,
पुलह	२. पुलह ऋषि	कच्छनीरः	८. और कच्छनीर सर्प
अथौजाः	३. अथौजा यक्ष	चनयन्ति	११. कार्य सम्पन्न करते हैं
प्रहेति	४. प्रहेति राक्षस	एतेस्म	६. ये
पुञ्जिक	५. पुञ्जिक स्थलो नामक	माधवम् ॥	१०. बैसाख मास का
स्थली ।	६. अप्सरा		

श्लोकार्थ—अर्यमा सूर्य पुलह ऋषि अथौजा यक्ष प्रहेति राक्षस पुञ्जिकस्थली नामक अप्सरा नारद गन्धर्व और कच्छनीर सर्प बैसाख मास का कार्य सम्पन्न करते हैं ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

मित्रोऽत्रिः पौरुषेयोऽथ तक्षको मेनका हहा ।
रथस्वन इति ह्येते शुक्रमासं नयन्त्यमी ॥३५॥

पदच्छेद—

मित्रः अत्रिः पौरुषेयः अथतक्षकः मेनका हहा ।
रथस्वन इति ह्येते शुक्र मासम् नयन्त्यमी ॥

शब्दार्थ—

मित्र	१. मित्र सूर्य	रथस्वन	८. रथस्वन यक्ष		
अत्रिः	२. अत्रि ऋषि	इति	९. ये		
पौरुषेयः	३. पौरुषेय राक्षस	ह्येते	१०. ही		
अथ	४. तदन्तर	शुक्र	११. ज्येष्ठ		
तक्षक	५. तक्षक सर्प	मासम्	१२. मास के		
मेनका	६. मेनका	नयन्त्यि	१३. कार्य		
हहा ।	७. हाहा गन्धर्व	अमी ॥	१४. निर्वाहक है		

श्लोकार्थ—मित्रसूर्य, अत्रि ऋषीः पौरुषेय राक्षस तदनन्तर तक्षक सर्प मेनका अप्सरा हाहा गन्धर्व और रथस्वन यक्ष ये ही ज्येष्ठ मास के कार्य निर्वाहक हैं ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

वसिष्ठो वरुणो रम्भा सहजन्यस्तथा हुहूः ।
शुक्रश्चित्रस्वनश्चैव शुचिमासं नयन्त्यमी ॥३६॥

पदच्छेद—

वशिष्ठ वरुणः रम्भा सहजन्य स्तथा हुहूः ।
शुक्रः चित्रस्वनःचएव शुचिमासं नयन्ति अमी ॥

शब्दार्थ—

वशिष्ठ	१. वशिष्ठ ऋषि	शुक्र	७. शुक्र नाग और
वरुणः	२. वरुण नामक सूर्य	चित्रस्वन	८. चित्रस्वन यक्ष
रम्भा	३. रम्भा अप्सरा	एव	९. ही
सहजन्यः	४. सह जन्यः यक्ष	शुचि	११. आषाढ़
तथा	५. तथा	मासम्	१२. मास के कार्य का
हुहूः ।	६. हू हू गन्धर्व	नयन्ति	१३. निर्वाह करते हैं
		अमी ॥	१०. ये

श्लोकार्थ—वशिष्ठ ऋषि, वरुण नामक सूर्य, रम्भा अप्सरा, सहजन्य यक्ष तथा हूहू गन्धर्व, शुक्र नाग और चित्रस्वन राक्षस ही ये आषाढ़ मास का कार्य निर्वाह करते हैं ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

इन्द्रो विश्वावसुः श्रोता एलापत्रस्तथाङ्गिरा ।
प्रम्लोचा राक्षसो वर्यो नभोमासं नयन्त्यमी ॥३७॥

पदच्छेद—

इन्द्रो विश्वावसु श्रोता एलापत्रः तथा अङ्गिराः ।
प्रम्लोचा राक्षसः वर्यः नभो मासम् नयन्त्यिमीः ॥

शब्दार्थ—

इन्द्रः	१.	इन्द्र नामक सूर्य	प्रम्लोचा	७.	प्रम्लोचा अप्सरा
विश्वावसुः	२.	विश्वावसु गन्धर्व	राक्षसः	९.	राक्षस
श्रोता	३.	श्रोता यक्ष	वर्यः	८.	एवंवर्य नामक
एलापत्रः	४.	एलापत्र नाग	नभो	१०.	ये श्रावण
तथा	५.	तथा	मासम्	११.	मास का
अङ्गिरा ।	६.	अङ्गिरा ऋषि	नयन्ति	१२.	कार्य
			अमी ॥	१३.	करते हैं

श्लोकार्थ—इन्द्र नामक सूर्य, विश्ववसु गन्धर्व, श्रोतायक्ष, एलापत्र नाग तथा अङ्गिरा ऋषि, प्रम्लोचा अप्सरा, एवं वर्य नामक राक्षस ये श्रावण मास के कार्य करते हैं ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

विवस्वानुग्रसेनश्च व्याघ्र आसारणो भृगुः ।
अनुम्लोचा शङ्खपालो नभस्याख्यं नयन्त्यमी ॥३८॥

पदच्छेद—

विवस्वान् उग्रसेनः च व्याघ्र आसारणः भृगुः ।
अनुम्लोचा शङ्खपालः नभस्याख्यम् नयन्ति अमी ॥

शब्दार्थ—

विवस्वान्	१.	विवस्वान् सूर्य	शङ्खपालः	७.	शङ्खपाल नाग
उग्रसेन'	२.	उग्रसेन गन्धर्व	नभस्य	८.	मास
च व्याघ्र	३.	व्याघ्र राक्षस	आख्यम्	१०.	भाद्रपद
आसारणः	४.	असारण यक्ष	नयन्ति	११.	नामक मास का कार्य करते हैं
भृगु ।	५.	भृगु ऋषि	अमी ॥	९.	ये
अनुम्लोचा ।	६.	अनुम्लोचा अप्सरा			

श्लोकार्थ—विवस्वान् सूर्य उग्रसेन गन्धर्व, व्याघ्र राक्षस, आसारण यक्ष, भृगु ऋषि, अनुम्लोचा अप्सरा, शङ्खपाल नाग ये भाद्रपद नामक मास का कार्य करते हैं ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

पूषा धनञ्जयो वातः सुषेणः सुरुचिस्तथा ।
घृताची गौतमश्चेति तपोमासं नयन्त्यमी ॥३९॥

पदच्छेद—

पूषा धनञ्जयः वातः सुषेणः सुरुचिः तथा ।
घृताची गौतमः च इति तपो मासम् नयन्ति अमी ॥

शब्दार्थ—

पूषा	१.	पूषा सूर्य	घृताची	७.	घृताची अप्सरा
धनञ्जयः	२.	धनञ्जय नाग	गौतमः	८.	गौतम ऋषि
वातः	३.	वात राक्षस	च इति	९.	और
सुषेण	४.	सुषेण गन्धर्व	तपो	१०.	माघ
सुरुचिः	५.	सुरुचि यक्ष	मासम्	११.	मास के
तथा ।	६.	तथा	नयन्तिअमी ॥	१२.	कार्य सम्पन्न करते हैं

श्लोकार्थ—पूषा सूर्य, धनञ्जय नाग, वात राक्षस, सुषेण गन्धर्व, सुरुचि यक्ष तथा घृताची अप्सरा और गौतम ऋषि, माघ मास में कार्य सम्पन्न करते हैं ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

ऋतुर्वर्चा भरद्वाजः पर्जन्यः सेनजित्तथा ।
विश्व ऐरावतश्चैव तपस्याख्यं नयन्त्यमी ॥४०॥

पदच्छेद—

ऋतुर्वर्चा भरद्वाजः पर्जन्यः सेनजित्तथा ।
विश्व ऐरावतश्चैव तपस्याख्यं नयन्त्यमी ॥

शब्दार्थ—

ऋतुः	१.	ऋतु यक्ष	विश्व	७.	विश्व गन्धर्व
वर्चाः	२.	वर्चा राक्षस	ऐरावत	९.	ऐरावत सर्प
भारद्वाजः	३.	भारद्वाज ऋषि	च एव	८.	और
पर्जन्यः	४.	पर्जन्य नामक सर्प	तपस्य	१०.	फाल्गुन
सेनजित्	५.	सेनजित् अप्सरा	आख्यम्	११.	नामक मास के कार्य
तथा ।	६.	तथा	नयन्तिअमी ॥	१२.	पूर्ण करते हैं

श्लोकार्थ—ऋतु यक्ष, वर्चा राक्षस, भारद्वाज ऋषि, पर्जन्य नामक सर्प, सेनजित अप्सरा तथा विश्व गन्धर्व, और ऐरावत सर्प फाल्गुन नामक मास के कार्य पूर्ण करते हैं ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

अथांशुः कश्यपस्तार्क्ष्य ऋतसेनस्तथोर्वशी ।
विद्युच्छत्रुर्महाशङ्खः सहोमासं नयन्त्यमी ॥४१॥

पदच्छेद—

अथांशुः कश्यपः तार्क्ष्य ऋतसेनः तथा उर्वशी ।
विद्युच्छत्रु महाशङ्खः सहोमासम् नयन्ति अमी ॥

शब्दार्थ—

अथांशुः	१. अंशु सूर्य	विद्युत्छत्रु	७. विद्यु च्छत्रु राक्षस
कश्यपः	२. कश्यप ऋषि	महाशङ्खः	८. महाशङ्ख नाग
तार्क्ष्य	३. तार्क्ष्य यक्ष	सहोमासम्	१०. मार्गशीर्ष मास के
ऋतसेन	४. ऋतसेन गन्धर्व	नयन्ति	११. कार्य पूर्ण करते हैं
तथा	५. तथा	अमी ॥	९. ये
उर्वशी ।	६. उर्वशी अप्सरा		

श्लोकार्थ—अंशु सूर्य, कश्यप ऋषि, तार्क्ष्य यक्ष, ऋतसेन गन्धर्व तथा उर्वशी अप्सरा, विद्युच्छत्रु राक्षस; महाशङ्ख नाग ये मार्गशीर्ष मास के कार्य पूर्ण करते हैं ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

भगः स्फूर्जोऽरिष्टनेमिरूर्ण आयुश्च पञ्चमः ।
कर्कोटकः पूर्वचित्तिः पुष्यमासं नयन्त्यमी ॥४२॥

पदच्छेद—

भगः स्फूर्जः अरिष्ट नेमिः ऊर्ण आयुः च पञ्चमः ।
कर्कोटकः पूर्व चित्तिः पुष्य आसम् नयन्ति अमी ॥

शब्दार्थ—

भगः	१. भग नामक सूर्य	कर्कोटकः	७. कर्कोटक नाग
स्फूर्जः	२. स्फूर्ज राक्षस	पूर्वचित्ति	८. पूर्वचित्ति अप्सरा
अरिष्टनेमि	३. अरिष्टनेमि गन्धर्व	पुष्य	१०. पौष
ऊर्ण	४. ऊर्ण यक्ष	मासम्	११. मास के
आयुः च	६. आयुः ऋषि	नयन्ति	१२. कार्य करते हैं
पञ्चम ।	५. और पञ्चमः	अमी ॥	९. ये

श्लोकार्थ—भग नामक सूर्य, स्फूर्ज राक्षस, अरिष्ट नामक गन्धर्व, ऊर्ण यक्ष और आयु ऋषि, कर्कोटक नाग, पूर्वचित्ति अप्सरा ये पौष मास के काम करते हैं ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

त्वष्टा ऋचीकतनयः कम्बलश्च तिलोत्तमा।
ब्रह्मापेतोऽथ शतजिद् धृतराष्ट्र इषम्भराः ॥४३॥

पदच्छेद—

त्वष्टा ऋचीकतनयः कम्बलः च तिलोत्तमा।
ब्रह्मापेतोऽथ शतजिद् धृतराष्ट्र इषम्भराः ॥

शब्दार्थ—

त्वष्टा	१. त्वष्टा सूर्य	ब्रह्मापेतः	७. ब्रह्मापेत राक्षस
ऋचीक	२. जमदग्नि	अथ	८. और
तनयः	३. ऋषि	शतजिद्	९. शतजिद् यक्ष
कम्बलः	४. कम्बल नाग	धृतराष्ट्र	१०. तथा धृतराष्ट्र गन्धर्व
च	५. और	इषम्भराः ॥	११. आश्विन मास के पूरक हैं
तिलोत्तमा।	६. तिलोत्तमा अप्सरा		

श्लोकार्थ—त्वष्टा सूर्य, जमदग्नि ऋषि और कम्बल नाग, तिलोत्तमा अप्सरा, ब्रह्मापेत राक्षस और शतजिद् यक्ष तथा धृतराष्ट्र गन्धर्व, आश्विन मास के पूरक हैं ॥

चतुश्चत्वारिंशः श्लोकः

विष्णुरश्वतरो रम्भा सूर्यवर्चाश्च सत्यजित्।
विश्वामित्रो मखापेत ऊर्जमासं नयन्त्यमी ॥४४॥

पदच्छेद—

विष्णुः अश्वतरः रम्भा सूर्यवर्चाः च सत्यजित्।
विश्वामित्रः मखापेत ऊर्जमासम् नयन्ति अमी ॥

शब्दार्थ—

विष्णुः	१. विष्णु नामक सूर्य	विश्वामित्रः	७. विश्वामित्र ऋषि और
अश्वतरः	२. अश्वतर नाग	मखापेत	८. मखापेत राक्षस
रम्भा	३. रम्भा अप्सरा	ऊर्जमासम्	१०. कार्तिक मास के
सूर्यवर्चाः	४. सूर्यवर्चा गन्धर्व	नयन्ति	११. कार्य वाहक हैं
च	५. और	अमी ॥	९. ये
सत्यजित।	६. सत्यजित यक्ष		

श्लोकार्थ—विष्णु नामक सूर्य, अश्वतर नाग, रम्भा अप्सरा, सूर्यवर्चा गन्धर्व और सत्यजित यक्ष, विश्वामित्र ऋषि और मखापेत राक्षस ये कार्तिक मास के कार्य वाहक हैं ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

एता भगवतो विष्णोरादित्यस्य विभूतयः ।
स्मरतां सन्ध्ययोर्नृणां हरन्त्यंहो दिने दिने ॥४५॥

पदच्छेद—

एता भगवतः विष्णोः आदित्यस्य विभूतयः ।
स्मरताम् सन्ध्ययोः नृणाम् हरन्ति अंहः दिने-दिने ॥

शब्दार्थ—

एता	२.	ये	स्मरताम्	८.	स्मरण करने वाले
भगवतः	३.	भगवान्	सन्ध्ययोः	७	प्रातःकाल और सायंकाल
विष्णोः	४.	विष्णु की	नृणाम्	९.	लोगों के
आदित्यस्य	१.	सूर्य रूप	हरन्ति	११.	हरण कर लेती हैं
विभूतयः ।	५.	विभूतियाँ	अंहः	१०.	पाप को
			दिने-दिने ॥	६.	प्रति-दिन

श्लोकार्थ—सूर्य रूप ये भगवान् विष्णु की विभूतियाँ प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल स्मरण करने वाले लोगों के पाप को हरण कर लेती है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

द्वादशस्वपि मासेषु देवोऽसौ षड्भिरस्य वै ।
चरन् समन्तात्तनुते परत्रेह च सन्मतिम् ॥४६॥

पदच्छेद—

द्वादशसु अपि मासेषु देवः असौ षड्भिः अस्य वै ।
चरन् समन्तात् तनुते परत्र इह च सन्मतिम् ॥

शब्दार्थ—

द्वादशसुअपि	५.	बारहों	चरन्	८.	विचरते हुये
मासेषु	६.	महीनों	समन्तात्	७.	सब ओर
देवः	२.	सूर्य देव	तनुते	१२.	विस्तार करते हैं
असौ	१.	ये	परत्र	१०.	परलोक में
षड्भिः	४.	छह गणों के साथ	इह च	९.	इस लोक तथा
अस्य वै ।	३.	अपने	सन्मतिम् ॥	११.	सन्मति का

श्लोकार्थ— ये सूर्यदेव अपने छह गणों के साथ बारहों महीनों सब ओर से विचरते हुये, इस लोक तथा परलोक में सन्मति का विस्तार करते हैं ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

सामर्ग्यजुर्भिस्तल्लिङ्गैर्ऋषयः संस्तुवन्त्यमुम् ।
गन्धर्वास्तं प्रगायन्ति नृत्यन्त्यप्सरसोऽग्रतः ॥४७॥

पदच्छेद—

साम ऋग्यजुर्भिः तत् लिङ्गैः ऋषयः संस्तुवन्ति अमुम् ।
गन्धर्वाः तम् प्रगायन्ति नृत्यन्ति अप्सरसः अग्रतः ॥

शब्दार्थ—

सामऋग्यजुर्भिः	३.	सामवेद, ऋग्वेद और यजुर्वेद से	गन्धर्वाःतम्	६.	गन्धर्व उनके यश का
तत् लिङ्गैः	२.	उनके चिह्न स्वरूप	प्रगायन्ति	७.	गायन करते हैं
ऋषयः	१.	ऋषि लोग	नृत्यन्ति	८.	नृत्य करती हैं
संस्तुवन्ति.	५.	स्तुति करते हैं	अप्सरसः	१०.	और अप्सरायें
अमुम् ।	४.	उनकी	अग्रतः ॥	९.	आगे-आगे

श्लोकार्थ—ऋषि लोग सामवेद, ऋग्वेद और यजुर्वेद से उनके चिह्न स्वरूप उनकी स्तुति करते हैं। गन्दर्व उनके यश का गायन करते हैं। और अप्सरायें आगे-आगे नृत्य करती हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

उन्नह्यन्ति रथं नागा ग्रामण्यो रथयोजकाः ।
चोदयन्ति रथं पृष्ठे नैऋर्ता बलशालिनः ॥४८॥

पदच्छेद—

उन्नह्यन्ति रथम् नागा ग्रामण्यो रथ योजकाः ।
चोदयन्ति रथम् नैऋर्ता बल शालिनः ॥

शब्दार्थ—

उन्नह्यन्ति	३.	कसे रहते हैं	चोदयन्ति	११.	ढकेलते हैं
रथम्	२.	रथ को	रथम्	१०.	रथ को
नागा	१.	नाग गण	नैऋर्ताः	९.	राक्षस गण पीछे से
ग्रामण्यो	४.	यक्ष गण	बल	७.	बल
रथ	५.	रथ का	शालिनः ॥	८.	शाली
योजकाः ।	६.	साज सजाते हैं			

श्लोकार्थ—नाग गण रथ को कसे रहते हैं। यक्ष गण रथ का साज सजाते हैं बलशाली राक्षस गण पीछे से रथ को ढकेलते हैं ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

बालखिल्याः सहस्राणि षष्टिर्ब्रह्मर्षयोऽमलाः ।
पुरतोऽभिमुखं यान्ति स्तुवन्ति स्तुतिभिर्विभुम् ॥४६॥

पदच्छेद—

बालखिल्याः सहस्राणि षष्टिः ब्रह्मर्षयः आमलाः ।
पुरतः अभिमुखम् यान्ति स्तुवन्ति स्तुतिभिः विभुम् ॥

शब्दार्थ—

बालखिल्याः	१.	बालखिल्य नाम के	पुरतः	६.	आगे से
सहस्राणि	३.	हजार	अभिमुखम् यान्ति	७.	सूर्य की ओर मुंह करके चलते हैं
षष्टिः	२.	साठ	स्तुवन्ति	१०.	स्तुति करते हैं
ब्रह्मर्षयः	४.	ब्रह्मर्षि	स्तुतिभिः	८.	स्तुतियों द्वारा
आमलाः ।	५.	निर्मल स्वभाव वाले	विभुम् ॥	६.	प्रभु की

श्लोकार्थ—बाल खिल्य नाम के साठ हजार ब्रह्मर्षि निर्मल स्वभाव वाले आगे से सूर्य की ओर मुहँ करके चलते हैं। स्तुतियों द्वारा प्रभु की स्तुति करते हैं ॥

पञ्चाशः श्लोकः

एवं ह्यनादिनिधनो भगवान् हरिरीश्वरः ।
कल्पे कल्पे स्वमात्मानं व्यूह्य लोकानवत्यजः ॥५०॥

पदच्छेद—

एवम् अनादि निधनः भगवान् हरिः ईश्वरः ।
कल्पे-कल्पे स्वम् आत्मानम् व्यूह्य लोकान् अवतियजः ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१.	इस प्रकार	कल्पे-कल्पे	८.	कल्प-कल्प में
अनादि	२.	आदि	स्वम्	६.	अपने
निधनः	३.	अन्त से रहित	आत्मानम्	१०.	स्वरूप का
भगवान्	४.	भगवान्	व्यूह्य	११.	विभाग करके
हरिः	५.	हरि	लोकान्	१२.	लोकों का
ईश्वरः ।	६.	ईश्वरः	अवतियजः ॥	७.	अजन्मा रक्षण करते हैं

श्लोकार्थ—इस प्रकार आदि अन्त से रहित भगवान् हरि ईश्वर अजन्मा कल्प-कल्प में अपने स्वरूप का विभाग करके लोकों का रक्षण करते हैं ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशः स्कन्धे
आदित्यव्यूह विवरण नाम एकादश अध्यायः ॥११॥

—११८—

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वादशः स्कन्धः

द्वादशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

नमो धर्माय महते नमः कृष्णाय वेधसे ।
ब्राह्मणेभ्यो नमस्कृत्य धर्मान् वक्ष्ये सनातनान् ॥१॥

पदच्छेद—

नमः धर्माय महते नमः कृष्णाय वेधसे ।
ब्रह्मणेभ्यः नमस्कृत्य धर्मान् वक्ष्ये सनातनान् ॥

शब्दार्थ—

नमः	३.	नमस्कार	ब्राह्मणेभ्यः	७.	ब्राह्मणों को
धर्माय	२.	धर्म को	नमस्कृत्य	८.	नमस्कार करके
महते	१.	महान्	धर्मान्	१०.	धर्मों का
नमः	६.	नमस्कार है	वक्ष्ये	११.	वर्णन करूँगा
कृष्णाय	५.	श्रीकृष्ण को	सनातनान् ॥	९.	सनातन
वेधसे ।	४.	विश्व विधाता			

श्लोकार्थ—महान धर्म को नमस्कार है। विश्व विधाता श्रीकृष्ण को नमस्कार है ब्राह्मणों को नमस्कार करके सनातन धर्मों का वर्णन करूँगा ॥

द्वितीयः श्लोकः

एतद् वः कथितं विप्रा विष्णोश्चरितमद्भुतम् ।
भवद्भिर्यदहं पृष्टो नराणां पुरुषोचितम् ॥२॥

पदच्छेद—

एतद वः कथितं विप्राः विष्णोः चरितम् अद्भुतम् ।
भवद्भिः यत् अहम् पृष्टः नराणाम् पुरुषो चितम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्	१२.	वह सब	भवद्भिः	९.	आप लोगों ने
वः	१३.	आप लोगों से	यत्	८.	जो
कथितम्	१४.	कह दिया	अहम्	१०.	मुझसे
विप्राः	१.	हे विप्रगण !	पृष्टः	११.	पूछा था
विष्णोः	५.	विष्णु का	नराणाम्	२.	मनुष्यों के लिये
चरितम्	७.	चरित्र	पुरुषो	३.	श्रवण
अद्भुतम् ।	६.	अद्भुत	चितम् ॥	४.	करने योग्य

श्लोकार्थ—हे विप्रगण ! मनुष्यों के लिये श्रवण करने योग्य यह विष्णु का चरित्र जो आप लोगों ने मुझसे पूछा था । वह सब आप लोगों से कह दिया ॥

तृतीयः श्लोकः

अत्र सङ्कीर्तितः साक्षात् सर्वपापहरो हरिः ।
नारायणो हृषीकेशो भगवान् सात्वतां पतिः ॥३॥

पदच्छेद—

अत्र सङ्कीर्तितः साक्षात् सर्वपाप हरः हरिः ।
नारायणः हृषीकेशः भगवान् सात्वताम् पतिः ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	इस पुराण में	नारायणः	४.	नारायण
सङ्कीर्तितः	११.	संकीर्तन हुआ है	हृषीकेशः	५.	हृषीकेश
साक्षात्	९.	साक्षात्	भगवान्	८.	भगवान्
सर्वपाप	२.	सब के पापों का	सात्वताम्	६.	भक्तों के
हरः	३.	हरण करने वाले	पतिः ॥	७.	स्वामी
हरिः ।	१०.	विष्णु हरि का ही			

श्लोकार्थ—इस पुराण में सब के पापों का हरण करने वाले नारायण हृषीकेश, भक्तों के स्वामी भगवान् साक्षात् विष्णु हरि का ही संकीर्तन हुआ है ॥

चतुर्थः श्लोकः

अत्र ब्रह्म परं गुह्यं जगतः प्रभवाप्ययम् ।
ज्ञानं च तदुपाख्यानं प्रोक्तं विज्ञानसंयुतम् ॥४॥

पदच्छेद—

अत्र ब्रह्म परम् गुह्यम् जगतः प्रभवाप्ययम् ।
ज्ञानम् च तत् उपाख्यानम् प्रोक्तं विज्ञान संयुक्तम् ॥

शब्दार्थ—

अत्र	१.	इस पुराण में	ज्ञानम्	७.	उसका ज्ञान और
ब्रह्म	४.	ब्रह्मतत्व का वर्णन हुआ है	च तत्	८.	उसका
परम्	२.	अत्यन्त	उपाख्यानम्	११.	उपाख्यान् भी
गुह्यम्	३.	गुह्य	प्रोक्तम्	१२.	इसमें कहा गया है
जगतः	५.	संसार की	विज्ञान	९.	विज्ञान
प्रभवाप्ययम् ॥	६.	उत्पत्ति स्थिति और प्रलय की प्रतीति भी उसी ब्रह्म में होती है	संयुक्तम् ॥	१०.	समन्वित

श्लोकार्थ—इस पुराण में अत्यन्त गुह्य ब्रह्मतत्त्व का वर्णन हुआ है। संसार की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय की प्रतीति भी उसी ब्रह्म में होती है। उसका ज्ञान और उसका विज्ञान समन्वित उपाख्यान भी इसमें कहा गया है ॥

पञ्चमः श्लोकः

भक्तियोगः समाख्यातो वैराग्यं च तदाश्रयम् ।
पारीक्षितमुपाख्यानं नारदाख्यानमेव च ॥५॥

पदच्छेद—

भक्ति योगः समाख्यातः वैराग्यम् च तत् आश्रयम् ।
पारीक्षितम् उपाख्यानम् नारद आख्यानम् एव च ॥

शब्दार्थ—

भक्ति	१. इसके प्रथम स्कन्ध में	पारिक्षितम्	७. फिर परीक्षित की
योगः	२. भक्ति योग	उपाख्यानम्	८. कथा एवं
समाख्यातः	६. बताया गया है	नारद	१०. नारद
वैराग्यम्	५. वैराग्य भी	आख्यानाम्	११. चरित्र का भी
च तत्	३. और उस पर	एव	१२. वर्णन हुआ है
आश्रयम् ।	४. अवलम्बित	च ॥	९. और

श्लोकार्थ—इसके प्रथम स्कन्ध में भक्ति योग और उस पर अवलम्बित वैराग्य भी बताया गया है। फिर परीक्षित की कथा एवम् और नारद चरित्र का भी वर्णन हुआ है ॥

षष्ठः श्लोकः

प्रायोपवेशो राजर्षेर्विप्रशापात् पारीक्षितः ।
शुकस्य ब्रह्मर्षभस्य संवादश्च पारीक्षितः ॥६॥

पदच्छेद—

प्रायः उपवेशः राजर्षेः विप्रशापात् पारीक्षितः ।
शुकस्य ब्रह्मर्षभस्य संवादः च पारीक्षितः ॥

शब्दार्थ—

प्रायः	५. अनशन व्रत लेकर	शुकस्य	९. शुकदेव जी का
उपवेशः	६. बैठ जाना तथा	ब्रह्मर्षभस्य	८. ऋषि प्रवर
राजर्षेः	३. राजर्षि	संवादः	१०. संवाद भी
विप्र	१. ब्राह्मण के	च	११. इसी स्कन्ध में वर्णित है
शापात्	२. शाप से	पारीक्षितः ।	७. पारीक्षित और
पारीक्षितः ।	४. पारीक्षित का		

श्लोकार्थ—ब्राह्मण के शाप से राजर्षि पारीक्षित का अनशनव्रत लेकर बैठ जाना तथा पारीक्षित और ऋषि प्रवर शुकदेव जी का संवाद भी इसी स्कन्ध में वर्णित है ॥

सप्तमः श्लोकः

योगधारणयोत्क्रान्तिः संवादो नारदाजयोः ।
अवतारानुगीतं च सर्गः प्राधानिकोऽग्रतः ॥७॥

पदच्छेद—

योग धारणया उत्क्रान्तिः संवादः नारदः अजयोः ।
अवतारानु गीतम् च सर्गः प्राधानिकः अग्रतः ॥

शब्दार्थ—

योग	१. योग		अवतार	७. अवतारों की
धारणया	२. धारणा के द्वारा		अनुगीतम्	८. संक्षिप्त चर्चा
उत्क्रान्तिः	३. शरीर त्याग		च	९. तथा
संवादः	६. संवाद		सर्गः	११. सर्गों की सृष्टि
नारदः	४. नारद और		प्राधानिकः	१०. प्राकृतिक
अजयोः ।	५. ब्रह्मा का		अग्रतः ॥	१२. उत्पत्ति आदि विषयों का वर्णन (द्वितीय स्कन्ध में हुआ है)

श्लोकार्थ—योगधारणा के द्वारा शरीर त्याग नारद और ब्रह्मा का संवाद अवतारों की संक्षिप्त चर्चा तथा प्राकृतिक सर्गों की सृष्टि, प्राकृतिक उत्पत्ति आदि विषयों का वर्णन द्वितीय स्कन्ध में हुआ है ॥

अष्टमः श्लोकः

विदुरोद्धवसंवादः क्षत्तमैत्रेययोस्ततः ।
पुराणसंहिताप्रश्नो महापुरुषसंस्थितिः ॥८॥

पदच्छेद—

विदुरः उद्धव संवादः क्षत्तृ मैत्रेययोः ततः ।
पुराण संहिता प्रश्नः महा पुरुष संस्थितिः ॥

शब्दार्थ—

विदुरः	१. विदुर और	पुराण	७. पुराण
उद्धव	२. उद्धव का	संहिता	८. संहिता के विषय में
संवादः	३. संवाद	प्रश्नः	९. प्रश्न तथा
क्षत्तृ	५. विदुर और	महा	१०. महा
मैत्रेययोः	६. मैत्रेय का संवाद	पुरुष	११. पुरुष (परमात्मा) की
ततः ।	४. तदनन्तर	संस्थितिः ॥	१२. स्थिति का (तृतीय स्कन्ध में निरूपित है)

श्लोकार्थ—विदुर और उद्धव का संवाद तदनन्तर विदुर और मैत्रेय का संवाद पुराण संहिता के विषय में प्रश्न तथा महापुरुष परमात्मा की स्थिति का तृतीय स्कन्ध में निरूपित है ॥

नवमः श्लोकः

ततः प्राकृतिकः सर्गः सप्त वैकृतिकाश्च ये ।
ततो ब्रह्माण्डसम्भूतिर्वैराजः पुरुषो यतः ॥९॥

पदच्छेद—

ततः प्राकृतिकः सर्गः सप्त वैकृतिकाः च ये ।
ततः ब्रह्माण्ड सम्भूतिः वैराजः पुरुषः यतः ॥

शब्दार्थ—

ततः	१.	तदनन्तर	ततः	७.	इसके बाद
प्राकृतिक	२.	प्राकृतिक	ब्रह्माण्ड	८.	ब्रह्माण्ड की
सर्गः	३.	सृष्टि	सम्भूतिः	९.	उत्पत्ति और
सप्त	४.	सात	वैराजः	१०.	विराट
वैकृतिकाः	५.	प्रकृति विकृतियों के द्वारा कार्य सृष्टि करती हैं	पुरुषः	११.	पुरुष की स्थिति का वर्णन
च ये ।	६.	और	यतः ॥	१२.	किया गया है

श्लोकार्थ—तदनन्तर प्राकृतिक सृष्टि सात प्रकृति-विकृतियों के द्वारा कार्य सृष्टि करती है। और इसके बाद ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति और विराट पुरुष की स्थिति का वर्णन किया गया है ॥

दशमः श्लोकः

कालस्य स्थूलसूक्ष्मस्य गतिः पद्मसमुद्भवः ।
भुव उद्धरणेऽम्भोधेर्हिरण्याक्षवधो यथा ॥१०॥

पदच्छेद—

कालस्य स्थूल सूक्ष्मस्य गतिः पद्म समुद्भवः ।
भुव उद्धरणे अम्भोधः हिरण्याक्ष वधः यथा ॥

शब्दार्थ—

कालस्य	१.	काल की	भुव	८.	पृथ्वी का
स्थूल	२.	स्थूल और	उद्धरणे	९.	उद्धार करते समय
सूक्ष्मस्य	३.	सूक्ष्म	अम्भोधेः	७.	समुद्र से
गतिः	४.	गति	हिरण्याक्ष	१०.	हिरण्याक्ष का
पद्म	५.	लोक पद्म की	वधः	११.	वध
समुद्भवः ।	६.	उत्पत्ति और	यथा ॥	१२.	जिस प्रकार हुआ था वर्णित है

श्लोकार्थ—काल की स्थूल और सूक्ष्म गति लोक पद्म की उत्पत्ति और समुद्र से पृथ्वी का उद्धार करते समय हिरण्याक्ष का वध जिस प्रकार हुआ था वह वर्णित है ॥

एकादशः श्लोकः

ऊर्ध्वतिर्यगवाक्सर्गो रुद्रसर्गस्तथैव च ।
अर्धनारीनरस्याथ यतः स्वायम्भुवो मनुः ॥११॥

पदच्छेद—

ऊर्ध्वतिर्यंक अवाक्सर्गः रुद्र सर्ग स्तथैव च ।
अर्ध नारीश्वरस्य अथ यतः स्वयम्भुवः मनुः ॥

शब्दार्थ—

ऊर्ध्व	१.	देवता	अर्ध	७.	अर्ध
तिर्यक्	२.	पशु-पक्षी	नारी	८.	नारी और
अवाक्सर्गः	३.	और मनुष्यों की सृष्टि	नरश्च	९,	नर का विवेचन है
रुद्र	५.	रुद्रों की	अथ	१०.	पश्चात्
सर्गः	६.	उत्पत्ति	यतः	११.	जिससे
स्तथैव च ।	४.	एवम्	स्वायम्भुवः मनुः॥	१२.	स्वायम्भुव मनु की सृष्टि हुई

श्लोकार्थ—देवता, पशु-पक्षी और मनुष्यों की सृष्टि, रुद्रों की उत्पत्ति आर्धनारी और नरका विवेचन है । पश्चात् जिससे स्वायम्भुव मनु की सृष्टि हुई ॥

द्वादशः श्लोकः

शतरूपा च या स्त्रीणामाद्या प्रकृतिरुत्तमा ।
सन्तानो धर्मपत्नीनां कर्दमस्य प्रजापतेः ॥१२॥

पदच्छेद—

शतरूपा च या स्त्रीणाम आद्या प्रकृतिः उत्तमा ।
सन्तानः धर्म पत्नीनाम् कदर्मस्य प्रजापतेः ॥

शब्दार्थ—

शतरूपा	१.	शतरूपा	सन्तानः	९.	सन्तति का तथा
च या	२.	जो	धर्म	७.	धर्म की
स्त्रीणाम्	३.	स्त्रियों की	पत्नीनाम्	८.	पत्नियों की
आद्या	५.	आद्या	कदर्मस्य	१०.	कर्दम
प्रकृतिः	६.	प्रकृति है उसकी	प्रजापतेः ॥	११.	प्रजापति का वर्णन है
उत्तमा ।	४.	उत्तम			

श्लोकार्थ—शतरूपा जो स्त्रियों की उत्तम आद्या प्रकृति है, उसकी धर्म की पत्नियों की सन्तति का तथा कर्दम प्रजापति का वर्णन है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

अवतारो भगवतः कपिलस्य महात्मनः।
देवहूत्याश्च संवादः कपिलेन च धीमता ॥१३॥

पदच्छेद—

अवतारः भगवतः कपिलस्य महात्मनः ।
देवहूत्याः च संवादः कपिलेन च धीमताः ॥

शब्दार्थ—

अवतारः	४. अवतारः	च	८. तथा
भगवतः	३. भगवान् का	संवादः	१०. संवाद वर्णित है
कपिलस्य	२. कपिल	कपिलेन	७. कपिल
महात्मनः ।	१. महात्मा	च	५. और
देवहूत्याः	९. देवहूति का	धीमताः ॥	६. बुद्धिमान्

श्लोकार्थ—इसमें महात्मा कपिल भगवान् का अवतार और बुद्धिमान कपिल तथा देवहूति का संवाद वर्णित है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

नवब्रह्मसमुत्पत्तिर्दक्षयज्ञविनाशनम् ।
ध्रुवस्य चरितं पश्चात्पृथोः प्राचीनबर्हिषः ॥१४॥

पदच्छेद—

नव ब्रह्म समुत्पत्तिः दक्ष यज्ञ विनाशनम् ।
ध्रुवस्य चरितम् पश्चात् पृथोः प्राचीन वर्हिषः ॥

शब्दार्थ—

नवब्रह्म	१. (चौथे स्कन्ध में) नौ प्रजापतियों की	ध्रुवस्य	६. ध्रुव का
समुत्पत्तिः	२. उत्पत्ति	चरितम्	७. चरित्र
दक्ष	३. दक्ष के	पश्चात्	८. पश्चात्
यज्ञ	४. यज्ञ का	पृथोः	९. पृथु का चरित्र
विनाशनम् ।	५. विध्वंस	प्राचीनवर्हिषः ॥	१०. और प्रचीन वर्हिष का संवाद है

श्लोकार्थ—चौथे स्कन्ध में नौ प्रजापतियों की उत्पत्ति, दक्ष के यज्ञ का विध्वंस, ध्रुव का चरित्र, पश्चात् पृथु का चरित्र और प्राचीन वर्हिषका संवाद है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

नारदस्य च संवादस्ततः प्रैयव्रतं द्विजाः ।
नाभेस्ततोऽनुचरितमृषभस्य भरतस्य च ॥१५॥

पदच्छेद—

नारदस्य च संवादः ततः प्रियव्रतम् द्विजाः ।
नाभे ततः अनुचरितम् ऋषभस्य भरतस्य च ॥

शब्दार्थ—

नारदस्य च	४.	नारद का	ततः	६.	तत्पश्चात्
संवादः	५.	संवाद	अनुचरितम्	११.	चरित्र वर्णित है
ततः	२.	तदनन्तर (पांचवे स्कन्ध में)	ऋषभस्य	८.	ऋषभ
प्रियव्रतम्	३.	प्रियव्रत का उपाख्यान्	भरतस्य	१०.	भरत का
द्विजाः	१.	हे द्विजगण !	च ।	९.	और
नाभे ।	७.	नाभि			

श्लोकार्थ—हे द्विजगण ! तदनन्तर पांचवें स्कन्ध में प्रियव्रत का उपाख्यान् नारद का संवाद तत्पश्चात् ऋषभ और भरत का चरित्र वर्णित है ॥

षोडशः श्लोकः

द्वीपवर्षसमुद्राणां गिरिनद्युपवर्णनम् ।
ज्योतिश्चक्रस्य संस्थानं पातालनरकस्थितिः ॥१६॥

पदच्छेद—

द्वीप वर्ष समुद्राणाम् गिरि नदी उपवर्णनम् ।
ज्योतिश्चक्रस्य संस्थानम् पाताल नरक स्थितिः ॥

शब्दार्थ—

द्वीप	१.	द्वीप	ज्योति-	७.	ज्योति-
वर्ष	२.	वर्ष	श्चक्रस्य	८.	श्चक्र के
समुद्राणाम्	३.	समुद्र,	संस्थानम्	९.	विस्तार एवम्
गिरि	४.	पर्वत और	पाताल	१०.	पाताल तथा
नदी	५.	नदियों का	नरक	११.	नरक की
उपवर्णनम् ।	६.	वर्णन	स्थितिः ॥	१२.	स्थिति का (निरूपण है)

श्लोकार्थ—द्वीप, वर्ष, समुद्र, पर्वत और नदियों का वर्णन, ज्योतिश्चक्र के विस्तार एवम् पाताल तथा नरक की स्थिति का निरूपण है ॥

सप्तदशः श्लोकः

दक्षजन्म प्रचेतोभ्यस्तत्पुत्रीणां च सन्ततिः ।
यतो देवासुरनरास्तिर्यङ्नगखगादयः ॥१७॥

पदच्छेद—

दक्ष जन्म प्रचेतोभ्यः तत् पुत्रीणाम् च सन्ततिः ।
यतः देवः असुरः नरस्तिर्यङ् नग खगादयः ॥

शब्दार्थ—

दक्ष जन्म	२.	दक्ष की उत्पत्ति	यतः	७.	जिनसे
प्रचेतोभ्यः	१.	(छठे स्कन्ध में) प्रचेताओंसे	देवः	८.	देवता
तत्	३.	उनकी	असुरः	९.	असुर
पुत्रीणाम्	४.	पुत्रियों	नराः	१०.	मनुष्य
च	६.	तथा	तिर्यङ्	११.	पशु
सन्तति ।	५.	सन्तान	नग	१२.	पर्वत और
			खगादयः ॥	१३.	पक्षी आदि का जन्म हुआ

श्लोकार्थ—(छठे स्कन्ध में) प्रचेताओं से दक्ष की उत्पत्ति उनकी पुत्रियों की सन्तान तथा जिनसे देवता, असुर, मनुष्य, पशु, पर्वत और पक्षी आदि का जन्म हुआ ॥

अष्टादशः श्लोकः

त्वाष्ट्रस्य जन्म निधनं पुत्रयोश्च दितेर्द्विजाः ।
दैत्येश्वरस्य चरितं प्रह्लादस्य महात्मनः ॥१८॥

पदच्छेद—

त्वाष्ट्रस्य जन्म निधनम् पुत्रयोः च दितेः द्विजाः ।
दैत्येश्वरस्य चरितम् प्रह्लादस्य महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

त्वाष्ट्रस्य	२.	सातवें स्कन्ध में वृत्तासुर की	दैत्य	७.	तथा दैत्य
जन्म	३.	उत्पत्ति और	ईश्वरस्य	८.	राज
निधनम्	४.	मृत्यु	चरितम्	११.	चरित्र का वर्णन है
पुत्रयोः च	६.	पुत्रों (हिरण्यकशिपु)	प्रह्लादस्य	१०.	प्रह्लाद के
दितेः	५.	दिति के (हिरण्याक्ष)	महात्मनः ॥	९.	महात्मा
द्विजाः ।	१.	द्विज गण			

श्लोकार्थ— द्विज गण ! सातवें स्कन्ध में वृत्रासुर की उत्पत्ति और मृत्यु, दिति के पुत्रों हिरण्यकशिपु हिरण्याक्ष की मृत्यु तथा दैत्य राज महात्मा प्रह्लाद के चरित्र का वर्णन है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

मन्वन्तरानुकथनं गजेन्द्रस्य विमोक्षणम् ।
मन्वन्तरावतारारश्च विष्णोर्हयशिरादयः ॥१९॥

पदच्छेद—

मन्वन्तर अनुकथनम् गजेन्द्र विमोक्षणम् ।
मन्वन्तर अवताराः च विष्णोः हय शिरादयः ॥

शब्दार्थ—

मन्वन्तर	१.	(आठवें स्कन्ध में)	अवताराः	१०.	अवतारों का वर्णन है
अनुकथनम्	२.	कथा मन्वन्तरों की	च	६.	और
गजेन्द्र	३.	गजेन्द्र	विष्णोः	७.	विष्णु के
विमोक्षणम्	४.	मोक्ष	हय	८.	हयग्रीव
मन्वन्तर ।	५.	मन्वन्तरों में होने वाले	शिरादयः ॥	९.	आदि

श्लोकार्थ—आठवें स्कन्ध में मन्वन्तरों की कथा गजेन्द्र मोक्ष मन्वन्तरों में होने वाले और विष्णु के हयग्रीव आदि अवतारों का वर्णन है ॥

विंशः श्लोकः

कौर्मं धान्वन्तरं मात्स्यं वामनं च जगत्पतेः ।
क्षीरोदमथनं तद्वदमृतार्थे दिवौकसाम् ॥२०॥

पदच्छेद—

कौर्मम् धान्वन्तरम् मात्स्यम् वामनम् च जगत्पतेः ।
क्षीरोद मथनम् तत् वत् अमृत अर्थे दिवौकसाम् ॥

शब्दार्थ—

कौर्मम्	३.	कूर्म	क्षीरोद	११.	क्षीर सागर
धान्वन्तरम्	४.	धन्वन्तरि	मथनम्	१२.	मन्थन (वर्णित है)
मात्स्यम्	५.	मत्स्य	तद्-वत्	७.	उसी प्रकार
वामनम्	६.	वामन अवतार तथा	अमृत	८.	अमृत
च	१.	और	अर्थे	९.	के लिये
जगत्पते ।	२.	जगदीश्वर विष्णु के	दिवौकसाम् ॥	१०.	देवताओं का

श्लोकार्थ—और जगदीश्वर विष्णु के कूर्म, धन्वन्तरि, मत्स्य, वामन अवतार तथा उसी प्रकार अमृत के लिये देवताओं का क्षीर सागर मन्थन वर्णित है ॥

एकविंशः श्लोकः

देवासुरमहायुद्धं राजवंशानुकीर्तनम् ।
इक्ष्वाकुजन्म तद्वंशः सुद्युम्नस्य महात्मनः ॥२१॥

पदच्छेद—

देवासुर महा युद्धम् राजवंश अनुकीर्तनम् ।
इक्ष्वाकु जन्म तत् वंशः सुद्युम्न महात्मनः ॥

शब्दार्थ—

देवासुर	१.	देवासुर	इक्ष्वाकु	६.	इक्ष्वाकु के
महा	२.	महान्	जन्म	७.	जन्म और
युद्धम्	३.	युद्धम् (नवमें स्कन्ध में)	तत्वंश	८.	उनके वंश तथा
राजवंश	४.	राजवंश का	सुद्युम्नस्य	१०.	सुद्युम्न का वर्णन है
अनुकीर्तनम् ।	५.	वर्णन है	महात्मनः ॥	६.	महात्मा

श्लोकार्थ—देवासुर महान् युद्ध नवमें स्कन्ध में राजवंश का वर्णन है इक्ष्वाकु के जन्म और उनके वंश तथा महात्मा सुद्युम्न का वर्णन है ॥

द्वाविंशः श्लोकः

इलोपाख्यानमत्रोक्तं तारोपाख्यानमेव च ।
सूर्यवंशानुकथनं शशादाद्या नृगादयः ॥२२॥

पदच्छेद—

इला उपाख्यान् मत्रोक्तम् तारा उपाख्यानम् एव च ।
सूर्य वंश अनुकथनम् शशाद आद्याः नृग आदयः ॥

शब्दार्थ—

इला	१.	इला का	सूर्य वंश	७.	सूर्य वंश
उपाख्यानम्	२.	उपाख्यान	अनुकथनम्	१२.	कथा भी वर्णित है
अत्र उक्तम्	६.	यहाँ वर्णित है	शशाद	८.	शशाद
तारा	४.	तारा का	आद्याः	६.	आदि तथा
उपाख्यानम्	५.	उपाख्यान	नृग	१०.	नृग
एव च ।	३.	और	आदयः ॥	११.	आदि की

श्लोकार्थ—इला का उपाख्यान, और तारा उपाख्यान यहाँ वर्णित है । सूर्य वंश, शशाद आदि तथा नृगादि की कथा भी वर्णित है ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

सौकन्यं चाथ शर्यातेः ककुत्स्थस्य च धीमतः।
खट्वाङ्गस्य च मान्धातुः सौभरेः सगरस्य च: ॥२३॥

पदच्छेद—

सौकन्यम् च अथ शर्यातेः ककुत्स्थस्य च धीमतः।
खट्वाङ्गस्य च मान्धातुः सौभरेः सगरस्य च ॥

शब्दार्थ—

सौकन्यम्	२.	सुकन्या	खटवाङ्गस्य च	७.	खटवांङ्ग
च अथ	१.	अनन्तर	मान्धातुः	८.	मान्धाता
शर्यातेः	३.	शर्याति	सौभरेः	९.	सौभरि
ककुत्स्थस्य	४.	ककुत्स्थस्य	सगरस्य	१०.	सगर के आख्यान का
च	५.	और	च ॥	११.	वर्णन है
धीमतः ।	६.	बुद्धिमान			

श्लोकार्थ—अनन्तर सुकन्या, शर्याति, काकुत्स्थस्य और बुद्धिमान खटवाङ्ग, मान्धाता, सौभरि तथा सगर का आख्यान का वर्णन है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

रामस्य कोसलेन्द्रस्य चरितं किल्विषापहम्।
निमेरङ्गपरित्यागो जनकानां च सम्भवः ॥२४॥

पदच्छेद—

रामस्य कोसलेन्द्रस्य चरितम् किल्विषा अपहम्।
निमेः अङ्ग परित्यागः जनकानाम् च सम्भवः ॥

शब्दार्थ—

रामस्य	१.	राम का	निमेः	६.	निमि का
कोसलेन्द्रस्य	२.	कौशलेन्द्र	अङ्गपरित्यागः	७.	देह त्याग
चरितम्	५.	चरित्र	जनकानाम्	८.	जनकों की
किल्विषा	३.	पाप	च	९.	और
अपहम्	४.	हारी	सम्भवः ॥	१०.	उत्पत्ति का वर्णन है

श्लोकार्थ—राम का कोशलेन्द्र पाप हारी चरित्र, निमि का देह त्याग, जनकों की और उत्पत्ति का वर्णन है ॥

पञ्चविंशः श्लोकः

रामस्य भार्गवेन्द्रस्य निःक्षत्रकरणं भुवः ।
ऐलस्य सोमवंशस्य ययातेर्नहुषस्य च ॥२५॥

पदच्छेद—

रामस्य भार्गवेन्द्रस्य निःक्षत्र करणम् भुवः ।
ऐलस्य सोमवंशस्य ययातेः नहुषस्य च ॥

शब्दार्थ—

रामस्य	२. परशुराम का		ऐलस्य	७. पुरूरवा
भार्गवेन्द्रस्य	१. भृगुवंश शिरोमणि		सोमवंशस्य	६. चन्द्रवंशी राजा
निः क्षत्र	४. क्षत्रिय विहीन		ययातेः	८. ययाति तथा
करणम्	५. करना		नहुषस्य	९. नहुष की कथा
भुवः ।	३. पृथ्वी को		च ।	१०. वर्णित है

श्लोकार्थ—भृगुवंश शिरोमणि परशुराम का पृथ्वी को क्षत्रिय विहीन करना, चन्द्रवंशी राजा पुरूरवा का ययाति तथा नहुष की कथा वर्णित है ॥

षट्विंशः श्लोकः

दौष्यन्तेर्भरतस्यापि शन्तनोस्तत्सुतस्य च ।
ययातेर्ज्येष्ठपुत्रस्य यदोर्वंशोऽनुकीर्तितः ॥२६॥

पदच्छेद—

दौष्यन्तेः भरतस्य अपि शन्तनोः तत् सुतस्य च ।
ययातेः ज्येष्ठ पुत्रस्य यदोः वंशः अनुकीर्तितः ॥

शब्दार्थ—

दौष्यन्तेः	१. दुष्यन्त पुत्र	ययातेः	७. ययाति के
भरतस्य	२. भरत	ज्येष्ठ	८. ज्येष्ठ
अपि	४. और	पुत्रस्य	९. पुत्र
शन्तनोः	३. शान्तनु	यदोः वंशः	१०. यदु के वंश का विस्तार
तत्	५. उनके	अनुकीर्तितः ।	११. कहा गया है
सुतस्य च ।	६. पुत्र (भीष्म आदि)		

श्लोकार्थ—दुष्यन्त पुत्र भरत शान्तनु और उनके पुत्र भीष्मादि ययाति के ज्येष्ठ पुत्र यदु के वंश का विस्तार से कहा गया है ॥

सप्तविंशः श्लोकः

यत्रावतीर्णो भगवान्कृष्णाख्यो जगदीश्वरः ।
वसुदेवगृहे जन्म ततो वृद्धिश्च गोकुले ॥२७॥

पदच्छेद—

यत्र अवतीर्णः भगवान् कृष्ण आख्याः जगद्ईश्वरः ।
वसुदेव गृहे जन्म ततः वृद्धिः च गोकुले ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१. (दशम स्कन्ध में) जिस	वसुदेव	७. उन्होंने वसुदेव के
अवतीर्णः	९. अवतार ग्रहण किया	गृहे	८. घर
भगवान्	५. भगवान्	जन्म	९. जन्म लिया और
कृष्ण	३. श्री कृष्ण	ततः	१०. तदनन्तर
आख्याः	४. नामक	वृद्धि	११. बड़े हुये
जगद् ईश्वरः ।	६. जगत्पति ने	च गोकुले ॥	१२. गोकुल में जाकर

श्लोकार्थ—दशम स्कन्ध में जिस यदुवंश में अवतार ग्रहण किया, श्री कृष्ण नामक भगवान् जगत्पति ने उन्होंने वसुदेव के घर जन्म लिया और तदनन्तर गोकुल में जाकर बड़े हुये ॥

अष्टाविंशः श्लोकः

तस्य कर्माण्यपाराणि कीर्तितान्यसुरद्विषः ।
पूतनासुपयःपानं शकटोच्चाटनं शिशोः ॥२८॥

पदच्छेद—

तस्य कर्माणि अपाराणि कीर्तितानि असुर द्विषः ।
पूतना असुपयः पानम् शकटः उच्चाटनम् शिशोः ॥

शब्दार्थ—

तस्य	३. उन भगवान् के	पूतना असु	७. पूतना के प्राण सहित
कर्माणि	४. कर्म	पयः	८. दूध
अपराणि	५. अनन्त	पानम्	९. पीना
कीर्तितानि	६. कहे गये जैसे	शकटः	११. छकरे को
असुर	१. असुरों से	उच्चाटनम्	१२. उलट देना आदि
द्विषः ।	२. द्वेष करने वाले	शिशोः ॥	१०. दूधमुंहे बच्चे का

श्लोकार्थ—असुरों से द्वेष करने वाले उन भगवान् के कर्म अनन्त हैं । जैसे पूतना के प्राण सहित दूध पीना, दूधमुंहे बच्चे का छकरे को उलट देना आदि ॥

एकोनविंशः श्लोकः

तृणावर्तस्य निष्पेषस्तथैव वकवत्सयोः ।
धेनुकस्य सहभ्रातुः प्रलम्बस्य च संक्षयः ॥२९॥

पदच्छेद—

तृणावर्तस्य निष्पेषः तथैव वक वत्सयोः ।
धेनुकस्य सह भ्रातुः प्रलम्बस्य च संक्षयः ॥

शब्दार्थ—

तृणावर्तस्य	१.	तृणावर्त	धेनुकस्य	७.	धेनुकासुर
निष्पेषः	५.	पीस डालना	सह भ्रातु	६.	भाई सहित
तथैव	३.	एवम्	प्रलम्बस्य	९.	प्रलम्बासुर को
वक	२.	वकासुर	च	८.	और
वत्सयो ।	४.	वत्सासुर को	संक्षय ॥	१०.	मार डालना

श्लोकार्थ—तृणावर्त, वकासुर को एवम् वत्सासुर को पीस डालना भाई सहित धेनुकासुर और प्रलम्बासुर को मार डालना आदि ॥

त्रिंशः श्लोकः

गोपानां च परित्राणं दावाग्नेः परिसर्पतः ।
दमनं कालियस्याहेर्महाहेर्नन्दमोक्षणम् ॥३०॥

पदच्छेद—

गोपानाम् च परित्राणम् दावाग्नेः परिसर्पतः ।
दमनम् कालियस्याहेः महाहेः नन्द मोक्षणम् ॥

शब्दार्थ—

गोपानाम्	३.	गोपों की	कालियः	५.	कालिया
परित्राणम्	४.	रक्षा करना	स्याहेः अहे	६.	नाग का
दावाग्नेः	१.	अग्नि से	महाहेः	८.	अजगर
परिसर्पतः	२.	घिरे	नन्द	९.	नन्द जी को
दमनम् ।	७.	दमन	मोक्षणम् ॥	१०.	छुड़ाना आदि है

श्लोकार्थ—अग्नि से घिरे गोपों की रक्षा करना । कालिय नाग का दमन, अजगर से नन्द जी को छुड़ाना आदि है ॥

एकत्रिंशः श्लोकः

व्रतचर्या तु कन्यानां यत्र तुष्टोऽच्युतो व्रतैः ।
प्रसादो यज्ञपत्नीभ्यो विप्राणां चानुतापनम् ॥३१॥

पदच्छेद—

व्रतचर्या तु कन्यानाम् यत्र तुष्टः अच्युतो व्रतैः ।
प्रसादो यज्ञ पत्नीभ्यः विप्राणाम् च अनुतापनम् ॥

शब्दार्थ—

व्रतचर्या तु	२.	व्रतों से	प्रसादः	७.	भगवान् की कृपा की
कन्यानाम्	१.	गोप-कन्याओं का	यज्ञ पत्नीभ्यः	६.	यज्ञ पत्नीयों पर
यत्र तुष्टः	३.	जहां सन्तुष्ट होकर	विप्राणाम्	९.	ब्राह्मणों को
अच्युतो	५.	हरि ने अभिमत वर दिया	च	८.	और उनके पत्रियों पर
व्रतैः ।	४.	व्रतों से	अनुतापनम् ॥	१०.	पश्चाताप हुआ

श्लोकार्थ—गोप कन्याओं का जहां व्रतों से जहां सन्तुष्ट हरि ने उन्हें अभिमत वर दिया, यज्ञ पत्नियों पर भगवान् ने कृपा की और उनके पतियों पर पश्चाताप हुआ ॥

द्वात्रिंशः श्लोकः

गोवर्धनोद्धारणं च शक्रस्य सुरभेरथ ।
यज्ञाभिषेकं कृष्णस्य स्त्रीभिः क्रीडा च रात्रिषु ॥३२॥

पदच्छेद—

गोवर्धन उद्धारणम् च शक्रस्य सुरभे अथ ।
यज्ञ अभिषेकम् कृष्णस्य स्त्रीभिः क्रीडा च रात्रिषु ॥

शब्दार्थ—

गोवर्धन	१.	गोवर्धन पर्वत	यज्ञ	८.	यज्ञ
उद्धारणम्	२.	धारण करने के लिये	अभिषेकम्	९.	अभिषेक किया
च	५.	और	कृष्णस्य	७,	श्रीकृष्ण का
शक्रस्य	४.	इन्द्र	स्त्रीभिः	११.	व्रजसुन्दरियों के साथ
शुरभे	६.	कामधेनु ने	क्रीडा	१२.	रासक्रीडा की
अथ ।	३.	तदनन्तर	च रात्रिषु ॥	१०.	और रात्रियों में

श्लोकार्थ—गावर्धन पर्वत धारण करने के लिये तदनन्तर इन्द्र और कामधेनु ने श्री कृष्ण का यज्ञ अभिषेक किया और रात्रियों में व्रज सुन्दरियों के साथ रास क्रीडा की ॥

त्रयस्त्रिंशः श्लोकः

शङ्खचूडस्य दुर्बुद्धेर्वधोऽरिष्टस्य केशिनः ।
अक्रूरागमनं पश्चात् प्रस्थानं रामकृष्णयोः ॥३३॥

पदच्छेद—

शङ्ख चूडस्य दुर्बुद्धे वधः अरिष्टस्य केशिनः ।
अक्रूर आगमनम् पश्चात् प्रस्थानम् रामकृष्णयोः ॥

शब्दार्थः—

शङ्ख चूडस्य	२.	शंखचूड का	अक्रूर	७.	अक्रूर
दुर्बुद्धे	१.	दुर्बुद्धे दुष्ट	आगमनम्	८.	वृन्दावन में आये
वधः	५.	वध किया	पश्चात्	६.	पश्चात्
अरिष्टस्य	३.	अरिष्ट और	प्रस्थानम्	१०.	मथुरा को प्रस्थान किया
केशिनः ।	४.	केशो का	रामकृष्णयोः ॥	९.	बलराम और कृष्ण ने

श्लोकार्थ—दुर्बुद्धे दुष्ट शंखचूड का अरिष्ट और केशी का वध किया, इसके पश्चात् अक्रूर वृन्दावन में आये । बलराम और श्रीकृष्ण ने मथुरा को प्रस्थान किया ।

चतुर्विंशः श्लोकः

व्रजस्त्रीणां विलापश्च मथुरालोकनं ततः ।
गजमुष्टिकचाणूरकंसादीनां च यो वधः ॥३४॥

पदच्छेद—

व्रजस्त्रीणाम् विलापः च मथुरा आलोकनम् ततः ।
गज मुष्टिक चाणूर कंसआदीनाम् यः वधः ॥

शब्दार्थ—

व्रजस्त्रीणाम्	१.	व्रज सुन्दरियों के	गज	७.	कुवलयापीड हाथी
विलापः	२.	विलाप का वर्णन कृष्ण	मुष्टिक	८.	मुष्टिक
च मथुरा	३.	बलराम का मथुरा	चाणूर	९.	चाणूर
आलोकनम्	४.	अवलोकन	कंसआदीनाम्	१०.	कंस आदि का
ततः ।	५.	तदनन्तर	यः वधः ॥	११,	जो वध हुआ उसका वर्णन

श्लोकार्थ—व्रज सुन्दरियों के विलाप का वर्णन कृष्ण और बलराम का अवलोकन, तदनन्तर कुवलया पीड हाथी मुष्टिक, चाणर कंस आदि का जो वध हुआ उसका वर्णन है ॥

पञ्चत्रिंशः श्लोकः

मृतस्यानयनं सूनोः पुनः सान्दीपनेर्गुरोः ।
मथुरायां निवसतां यदुचक्रस्य यत्प्रियम् ।
कृतमुद्धवरामाभ्यां युतेन हरिणा द्विजाः ॥३५॥

पदच्छेद—

मृतस्य आनयनम् सूनोः पुनः सान्दीपनेः गुरोः ।
मथुरायाम् निवसताम् यदुचक्रस्य यत्प्रियम् ।
कृतम् उद्धव रामाभ्याम् युतेन हरिणा द्विजाः ॥

शब्दार्थ —

मृतस्य	७. गुरु के मृत	यदुचक्रस्य	१४. यदुवंशियों का
आनयनम्	९. लौटा लाये	यत्प्रियम् ।	१५. जो हित
सूनोः	८. पुत्र को	कृतम्	१६. किया उसका वर्णन है
पुनः	१०. पुनः उन्होंने	उद्धव	११. उद्धव और
सान्दीपनेः	३. सान्दीपनि	रामाभ्याम्	१२. बलराम के
गुरोः ।	४. गुरु के यहाँ	युतेन	१३. साथ
मथुरायाम्	२. मथुरा में	हरिणा	६. श्रीकृष्ण
निवसताम्	५. रहते हुये	द्विजाः ।।	१. हे द्विजगण !

श्लोकार्थ—हे द्विजगण ! मथुरा में सान्दीपनि गुरु के यहाँ रहते हुये श्रीकृष्ण गुरु के मृत पुत्र को लौटा लाये, पुनः उन्होंने उद्धव और बलराम के साथ यदुवंशियों का जो हित किया उसका वर्णन है ॥

षट्त्रिंशः श्लोकः

जरासन्धसमानीतसैन्यस्य बहुशो वधः ।
घातनं यवनेन्द्रस्य कुशस्थल्या निवेशनम् ॥३६॥

पदच्छेद—

जरासन्ध समानीत सैन्यस्य बहुशो वधः ।
घातनम् यवनेन्द्रस्य कुशस्थल्याः निवेशनम् ॥

शब्दार्थ—

जरासन्ध	१. जरासन्ध के द्वारा	घातनम्	७. विनाश और
समानीत	२. लाये गये	यवनेन्द्रस्य	६. कालयवन का
सैन्यस्य	४. सैनिकों का	कुशस्थल्याः	८. द्वारका पुरी को
बहुशो	३. बहुत से	निवेशनम् ।।	९. बसाना वर्णित है
वधः ।	५. वध		

श्लोकार्थ—जरासन्ध के द्वारा लाये गये बहुत से सैनिकों का वध, कालयवन विनाश और द्वारका पुरी को बसाना वर्णित है ॥

सप्तत्रिंशः श्लोकः

आदानं पारिजातस्य सुधर्मायाः सुरालयात् ।
रुक्मिण्या हरणं युद्धे प्रमथ्य द्विषतो हरेः ॥३७॥

पदच्छेद—

आदानम् पारिजातस्य सुधर्मायाः सुरालयात् ।
रुक्मिण्या हरणम् युद्धे प्रमथ्य द्विषतः हरेः ॥

शब्दार्थ—

आदानम्	४.	ले आना और	हरणम्	१०.	हरण करना भ वर्णित है
पारिजातस्य	२.	कल्पवृक्ष एवम्	युद्धे	७.	युद्ध में
सुधर्मायाः	३.	सुधर्मा सभा को	प्रमथ्य	८.	कुचल कर
सुरालयात् ।	१.	स्वर्ग से	द्विषतः	६.	द्वेष करने वालों को
रुक्मिण्या	९.	रुक्मणि का	हरेः ॥	५.	श्रीकृष्ण से

श्लोकार्थ— स्वर्ग से कल्पवृक्ष एवम् सुधर्मा सभा को ले आना और श्रीकृष्ण से द्वेष करने वालों को युद्ध में कुचल कर रुक्मणि को हरण करना भी वर्णित है ॥

अष्टत्रिंशः श्लोकः

हरस्य जृम्भणं युद्धे बाणस्य भुजकृन्तनम् ।
प्राग्ज्योतिषपतिं हत्वा कन्यानां हरणं च यत् ॥३८॥

पदच्छेद—

हरस्य जृम्भणम् युद्धे बाणस्य भुजकृन्तनम् ।
प्राग्ज्योतिष पतिम् हत्वाकन्यानाम् हरणम् च यत् ॥

शब्दार्थ—

हरस्य	२.	शङ्कर पर	प्राग्ज्योतिष पतिम्	७.	प्राग्ज्योतिषपुर के स्वामी को
जृम्भणम्	३.	जम्भास्त्र चलाना	हत्वा	८.	मारकर
युद्धे	१.	युद्ध के प्रसंङ्ग में	कन्यानाम्	११.	कन्याओं का
बाणस्य	४.	बाणासुर की	हरणम्	१२.	हरणकरना उसका वर्णन है
भुज	५.	भुजाओं को	च	१०.	और
कृन्तनम् ।	६.	काटना तथा	यत् ॥	९.	जो

श्लोकार्थ—युद्ध के प्रसंग में शङ्कर पर जम्भास्त्र चलाना बाणासुर की भुजाओं को काटना तथा प्राग्ज्योतिषपुर के स्वामी को मारकर जो और कन्याओं का हरण करना उसका वर्णन है ॥

एकोनचत्वारिंशः श्लोकः

चैद्यपौण्ड्रकशाल्वानां दन्तवक्त्रस्य दुर्मतेः ।
शम्बरो द्विविदः पीठो मुरः पञ्चजनादयः ॥३९॥

पदच्छेद—

चैद्य पौण्ड्रक शाल्वानाम् दन्तवक्त्रस्य दुर्मतेः ।
शम्बरः द्विविदः पीठः मुरः पञ्चजन आदयः ॥

शब्दार्थ—

चैद्य	१. शिशुपाल	शम्बरः	६. शम्बर
पौन्ड्रक	२. पौन्ड्रक	द्विविदः	७. द्विविद
शाल्वानाम्	३ शाल्व	पीठः	८. पीठः
दन्तवक्त्रस्य	४. दन्तवक्त्र	मुरः	९. मुरः
दुर्मतेः ।	५. दुष्ट बुद्धि	पञ्चजन	१०. पञ्चजन
		आदायः ॥	११. आदिका वर्णन है

श्लोकार्थ—शिशुपाल, पौन्ड्रक, शाल्व, दन्तवक्त्र, दुष्ट बुद्धि शम्बर, द्विविद, पीठः, मुरः पञ्चजन आदि का वर्णन है ॥

चत्वारिंशः श्लोकः

माहात्म्यं च वधस्तेषां वाराणस्याश्च दाहनम् ।
भारावतरणं भूमेर्निमित्तीकृत्य पाण्डवान् ॥४०॥

पदच्छेद—

महात्म्यम् च बधः स्तेषाम् वाराणस्या च दाहनम् ।
भारावतरणम् भूमेः निमित्तीकृत्य पाण्डवान् ॥

शब्दार्थ—

महात्म्यम्	४. भगवान् का महात्म्य	दाहनम् ।	७. जलाना
च	३. और	भारावतारणम्	११. भार उतारना वर्णित है
बधः	२. बध	भूमेः	११. पृथ्वी का
स्तेषाम्	१. उन राक्षसों का	निर्मित्ती	९. निमित्त
वाराणस्या	६. वाराणसी को	कृत्य	१०. बनाकर
च ।	५. तथा	पाण्डवान् ॥	८. पाण्डवों को

श्लोकार्थ—उन राक्षसों का वध और भगवान् का महात्म्य तथा वाराणसी को जलाना, पाण्डवों को निमित्त बनाकर पृथ्वी का भार उतारना वर्णित है ॥

एकचत्वारिंशः श्लोकः

विप्रशापापदेशेन संहारः स्वकुलस्य च ।
उद्धवस्य च संवादो वासुदेवस्य चाद्भुतः ॥४१॥

पदच्छेद—

विप्रशाप अपदेशेन संहारः स्वकुलस्य च ।
उद्धवस्य च संवादः वासुदेवस्य च अद्भुतः ॥

शब्दार्थ—

विप्रशाप	१.	इसमें ब्राह्मणों के शाप के	उद्धवस्य	७.	उद्धव का
अपदेशेन	२.	बहाने	च	८.	और
संहारः	४.	संहार	संवादः	९.	संवाद
स्वकुलस्य	३.	अपने कुल का	वासुदेवस्य	६.	श्रीकृष्ण और
च ।	५.	तथा	च अद्भुतः ॥	१०.	अद्भुत है

श्लोकार्थ—इसमें ब्राह्मणों के शाप के बहाने अपने कुल का संहार तथा श्रीकृष्ण और उद्धव का सम्वाद अद्भुत है ॥

द्विचत्वारिंशः श्लोकः

यत्रात्मविद्या ह्यखिला प्रोक्ता धर्मविनिर्णयः ।
ततो मर्त्यपरित्याग आत्मयोगानुभावतः ॥४२॥

पदच्छेद—

यत्र आत्म विद्या हि अखिला प्रोक्ता धर्म विनिर्णयः ।
ततः मर्त्य परित्यागः आत्मयोग अनुभावतः ॥

शब्दार्थ—

यत्र	१.	जिसमें	विनिर्णयः ।	६.	निर्णय
आत्म	३.	आत्म	ततः	८.	तदनन्तर श्रीकृष्ण के द्वारा
विद्या	४.	ज्ञान	मर्त्य	११.	मर्त्यलोक का
हि अखिला	२.	सम्पूर्ण	परित्यागः	१२.	परित्याग बताया गया है
प्रोक्ता	७.	निरूपित है	आत्मयोग	९.	आत्मयोग के
धर्म	५.	तथा धर्म का	अनुभावतः ॥	१०.	प्रभाव से

श्लोकार्थ—जिसमें सम्पूर्ण आत्म ज्ञान तथा धर्म का निर्णय निरूपित है तदनन्तर श्रीकृष्ण के द्वारा आत्म योग के प्रभाव से मर्त्य लोक का परित्याग बताया गया है ॥

त्रयश्चत्वारिंशः श्लोकः

युगलक्षणवृत्तिश्च कलौ नृणामुपप्लवः
चतुर्विधश्च प्रलय उत्पत्तिस्त्रिविधा तथा ॥४३॥

पदच्छेद—

युग लक्षण वृत्तिः च कलौ नृणाम् उपप्लवः ।
चतुर्विधः च प्रलयः उत्पत्ति स्त्रिविधा तथा ॥

शब्दार्थ—

युग	१.	युगों के	चतुर्विधः	७.	चार प्रकार के
लक्षण	२.	लक्षण	च प्रलयः	८.	प्रलय
वृत्तिः च	५.	व्यवहार का	उत्पत्ति	११.	उत्पत्ति का वर्णन है
कलौ	३.	कलियुग में	स्त्रिविधा	१०.	तीन प्रकार की
नृणाम्	४.	मनुष्यों के	तथा ॥	९.	और
उपप्लवः ।	६.	वर्णन			

श्लोकार्थ—युगों के लक्षण कलियुग में मनुष्यों के व्यवहार का वर्णन, चार प्रकार के प्रलय और तीन प्रकार की उत्पत्ति का वर्णन है ॥

चतुर्विंशः श्लोकः

देहत्यागश्च राजर्षेर्विष्णुरातस्य धीमतः ।
शाखाप्रणयनमृषेर्मार्कण्डेयस्य सत्कथा ।
महापुरुषविन्यासः सूर्यस्य जगदात्मनः ॥४४॥

पदच्छेद—

देह त्यागः च राजर्षे विष्णुरातस्य धीमतः ।
शाखा प्रणयनम् ऋषेः मार्कण्डेयस्य सत्कथा ।
महा पुरुष विन्यासः सूर्यस्य जगदात्मनः ॥

शब्दार्थ—

देहत्यागः	४.	शरीर त्याग	मार्कण्डेयस्य	८.	मार्कण्डेय की
च राजर्षे	२.	राजर्षि	सत्कथा	९.	सुन्दर कथा
विष्णुरातस्य	३.	परीक्षित का	महापुरुष	१०.	भगवान् के
धीमतः ।	१.	धीमान्	विन्यासः	११.	अङ्ग-उपाङ्गों का स्वरूपतया कथन
शाखा	५.	वेदों के शाखा	सूर्यस्य	१४.	सूर्य के गणों का वर्णन है
प्रणयनम्	६.	विभाजन का प्रसंग	जगद्-	१२.	तथा विश्वात्मा
ऋषे	७.	ऋषि	आत्मनः ॥	१३.	भगवान् के

श्लोकार्थ—धीमान् राजर्षि परीक्षित का शरीर त्याग, वेदों के शाखा विभाजनका प्रसङ्ग, ऋषि मार्कण्डेय की सुन्दर कथा भगवान् के अङ्ग उपाङ्गों का स्वरूपतया कथन, तथा विश्वात्मा भगवान् सूर्य के गणों का वर्णन है ॥

पञ्चचत्वारिंशः श्लोकः

इति चोक्तं द्विजश्रेष्ठा यत्पृष्टोऽहमिहास्मि वः ।
लीलावतारकर्माणि कीर्तितानीह सर्वशः ॥४५॥

पदच्छेद—

इति च उक्तम् द्विजश्रेष्ठा यत् पृष्ठः अहम् इह अस्मि वः ।
लीला अवतार कर्माणि कीर्ति तानीह सर्वशः ॥

शब्दार्थ—

इतिंच उक्तम्	६. वह बता दिया	लीला	९. भगवान् की लीला
द्विज श्रेष्ठा	१. हे द्विज श्रेष्ठ !	अवतार	१०. अवतार
यत् पृष्ठः	३. जो कुछ पूछा	कर्माणि	११. कर्मों का ही
अहम् इह	२. मुझसे यहाँ	कीर्ति	१२. कीर्तन किया है
अस्मि	४. था	तानीह	७. इसमें
वः ।	५. आप लोगों को	सर्वशः ।	८. सब प्रकार से

श्लोकार्थ—हे द्विज श्रेष्ठ ! मुझसे यहाँ जो कुछ पूछा था। वह आप लोगों को बता दिया । इसमें भगवान् की लीला अवतार ओर कर्मों का ही सब प्रकार से कीर्तन किया है ॥

षट्चत्वारिंशः श्लोकः

पतितः स्खलितश्चार्तः क्षुत्त्वा वा विवशो ब्रुवन् ।
हरये नम इत्युच्चैर्मुच्यते सर्वपातकात् ॥४६॥

पदच्छेद—

पतितः स्खलितः च आर्तः क्षुत्वा वा विवशः ब्रुवन् ।
हरये नमः इति उच्चैः मुच्यते सर्व पातकात् ॥

शब्दार्थ—

पतितः	१. जो मनुष्य (गिरते पड़ते)	हरयेनमः	६. हरये नमः
स्खलित	२. फिसलते	इति	७. वह
च आर्तः	३. पीड़ित होते	उच्चैः	८. ऊंचे स्वर से
क्षुत्वा वा	४. अथवा छींकते	मुच्यते	१२. मुक्त हो जाता है
विवशः	५. विवशता से भी	सर्व	१०. वह सभी प्रकार के
ब्रुवन् ।	९. बोल उठता है	पातकात् ॥	११. पापों से

श्लोकार्थ—जो मनुष्य गिरते पड़ते फिसलते पीड़ित होते अथवा छींकते विवशता से भी हरये नमः वह ऊंचे स्वर से बोल उठता है। वह सभी प्रकार के पापों से मुक्त हो जाता है ॥

सप्तचत्वारिंशः श्लोकः

सङ्कीर्त्यमानो भगवाननन्तः श्रुतानुभावो व्यसनं हि पुंसाम् ।
प्रविश्य चित्तं विधुनोत्यशेषं यथा तमोऽर्कोऽभ्रमिवातिवातः ॥४७॥

पदच्छेद—

संकीर्त्यमानः भगवान् अनन्तः श्रुत अनुभावः व्यसनम् हि पुंसाम् ।
प्रविश्य चित्तम् विधुनोति अशेषम् यथा तमः अर्क अभ्रम इव अतिवातः ॥

शब्दार्थ—

संकीर्त्यमानः	३.	कीर्तन करने पर	प्रविश्य चित्तम्	१०.	प्रवेश करके चित्त में
भगवान्	२.	भगवान् के नाम आदि का	विधुनोति	८.	मिटा देते हैं
अनन्तः	१.	अनन्त	अशेषम्	११.	सम्पूर्ण
श्रुत	५.	श्रवण करने पर	यथा	९.	जैसे
अनुभावः	४.	तथा प्रभाव आदि का	तमः अर्क	१२.	अन्धकार को सूर्य
व्यसनम्	७.	दुःख को उसी प्रकार	अभ्रम इव	१४.	बादल मिटा देते हैं
हि पुंसाम् ।	६.	निश्चित रूप से मनुष्यों के	अतिवातः ॥	१३.	और आंधी पानी को

श्लोकार्थ—अनन्त भगवान् के नाम आदि का कीर्तन करने पर तथा प्रभाव आदि का श्रवण करने पर निश्चित रूप से मनुष्यों के दुःख को उसी प्रकार मिटा देते हैं। जैसे चित्त में प्रवेश करके सम्पूर्ण अन्धकार का सूर्य और आंधी पानी को बादल मिटा देते हैं ॥

अष्टचत्वारिंशः श्लोकः

मृषा गिरस्ता ह्यसतीरसत्कथा न कथ्यते यद् भगवानधोक्षजः ।
तदेव सत्यं तदुहैव मङ्गलं तदेव पुण्यं भगवद्गुणोदयम् ॥४८॥

पदच्छेद— मृषा गिरस्ताः हि सतीः असत्कथा न कथ्यते यत् भगवान् अधोक्षजः ।
तदेव सत्यम् तत् उह मङ्गलम् तत् एव पुण्यम् भगवत् गुण उदयम् ॥

शब्दार्थ—

मृषा	३.	मिथ्या है	तदेव	८.	और वही वचन
गिरस्ताः	२.	वाणी	सत्यम्	९.	सत्य है
हि सतीः	१.	वह निश्चित रूप से	तत् उह	१०.	वही
असत्कथा	४.	सारहीन एवं	मङ्गलम्	११.	मङ्गलमय है
न कथ्यते	५.	असत्कथा है	तत् एव	१२.	एवं वही
यत् भगवान्	६.	जिससे भगवान्	पुण्यम्	१३.	पवित्र है जो
अधोक्षजः ।	७.	कृष्ण के नाम आदि का कथन नहीं किया जाता	भगवत् गुण	१४.	भगवान् के गुणों से
			उदयम् ॥	१५.	परिपूर्ण है

श्लोकार्थ—वह वाणी निश्चित रूप से मिथ्या है, सारहीन एवं असत्कथा है। जिससे भगवान् कृष्ण के नाम आदि का कथन नहीं किया जाता है। और वही वचन सत्य है वही मङ्गलमय है। एवं वही पवित्र है जो भगवान् के गुणों से परिपूर्ण है ॥

एकोनपञ्चाशः श्लोकः

तदेव रम्यं रुचिरं नवं नवं तदेव रम्यं शश्वन्मनसो महोत्सवम् ।
तदेव शोकार्णवशोषणं नृणां यदुत्तमश्लोकयशोऽनुगीयते ।।४९।।

पदच्छेद— तदेव रम्यम् रुचिरम् नवम् नवम् तदेव रम्यम् शश्वन्मनसः महोत्सवम् ।
तदेव शोकार्णव शोषणम् नृणाम् यत् उत्तमश्लोक यशः अनुगीयते ।।

शब्दार्थ—

तदेव	५. वही	तदेव	१३. और वही
रम्यम्	६. रमणीय	शोकार्णव	१५. शोक सागर को
रुचिरम्	७. रुचिकर एवम्	शोषणम्	१६. सुखाने वाला है
नवम्-नवम्	८. नया-नया जान पड़ता है	नृणाम्	१४. मनुष्यों के
तदेव	९. वही	यत्	१. जिस वचन से
रम्यम्	१०. रमणीय	उत्तमश्लोक	२. भगवान् के
शाश्वत् मनसः	११. निरन्तर मन को	यशः	३. यश का
महोत्सवम् ।	१२. परमानन्द देने वाले है	अनुगीयते ।।	४. गान किया जाता है

श्लोकार्थ—जिस वचन से भगवान् के यश का गान किया जाता है। वही रमणीय रुचिकर एवम् नया-नया जान पड़ता है। वही रमणीय निरन्तर मन को परमानन्द देने वाला है। और वही मनुष्य के शोक सागर को सुखाने वाला है ।।

पञ्चाशः श्लोकः

न तद् वचश्चित्रपदं हरेर्यशो जगत्पवित्रं प्रगृणीत कर्हिचित् ।
तद् ध्वाङ्क्षतीर्थं न तु हंससेवितं यत्राच्युतस्तत्र हि साधवोऽमलाः ।।५०।।

पदच्छेद— न तद् वचः चित्र पदम् हरेः यशः जगत्पवित्रम् प्रगृह्णीत कर्हिचित् ।
तद्ध्वाङ्क्षतीर्थम् न तु हंस सेवितम् यत्र अच्युतः तत्र हि साधवा अमलाः ।।

शब्दार्थ—

न तद्	२. नहीं जिस	तत्	८. वह
वचः	३. वाणी से	ध्वाङ्क्षतीर्थम्	९. कौओं के लिये उच्छिष्ट फेकने का स्थान है
चित्रपदम्	१. रस आदि से युक्त होने पर भी	न तु हंस	१०. न कि परम हंसों से
हरेः यशः	६. भगवान् के यश का	सेवितम्	११. सेवित स्थान है
जगत्पवित्रम्	४. संसार को पवित्र	यत्र अच्युतः	१२. जहाँ भगवान् रहते हैं वहीं
प्रगृह्णीत	५. करने वाले	तत्र हि साधवाः	१४. साधुजन निवास करते है
कर्हिचित् ।	७. कभी गान नहीं होता	अमलाः ।।	१३. निर्मल हृदय वाले

श्लोकार्थ—रस आदि से युक्त होने पर भी जिस वाणी से संसार को पवित्र करने वाले भगवान् के यश का कभी गान नहीं होता, वह कौओं के लिये अच्छिष्ठ फेंकने का स्थान है। न कि परम हंसों से सेवित स्थान है। जहाँ भगवान् रहते हैं वहीं निर्मल हृदय वाले साधु जन निवास करते हैं।

एकपञ्चाशः श्लोकः

स वाग्विसर्गो जनताघसंप्लवो यस्मिन्प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि ।
नामान्यनन्तस्य यशोऽङ्कितानि यच्छृण्वन्ति गायन्ति गृणन्ति साधवः ॥५१॥

पदच्छेद—सः वाक् विसर्गः जनता अघ सम्प्लवः यस्मिन् प्रतिश्लोकम् अवद्ध वति अपि ।
नामानि अनन्तस्य यशः अंकितानि यच्छृण्वन्ति गायन्ति गृणन्ति साधवः ॥

शब्दार्थ—

सः वाक्	१.	वह वाणी का	नामानि	११.	नाम
विसर्गः	२.	प्रयोग	अनन्तस्य	९.	अनन्त भगवान के
जनता	३.	लोगों के	यशः	१०.	सुयश सूचक
अघ सम्प्लवः	४.	पाप का	अंकितानि	१२.	जड़े हुये हैं
यस्मिन्	५.	नाश करने वाला है	यत्	१३.	क्योंकि
प्रति श्लोकम्	८.	जिसको प्रत्येक श्लोक में	शृण्वन्ति	१५.	उसी को सुनते
अवद्ध वति-	६.	सुन्दर रचना न होने	गायन्ति	१६.	गाते और
अपि ।	७	पर भी	गृणन्ति	१७.	कीर्तन करते हैं
			साधवः ॥	१४.	सत्पुरुष

श्लोकार्थ—वह वाणी का प्रयोग लोगों के पाप का नाश करने वाला है । जिसके प्रत्येक श्लोक में सुन्दर रचना न होने पर भी अनन्त भगवान् के सुयश सूचक नाम जड़े हुये हैं । क्योंकि सत्पुरुष उसी को सुनते, गाते और कीर्तन करते हैं ॥

द्विपञ्चाशः श्लोकः

नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं न शोभते ज्ञानमलं निरञ्जनम् ।
कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे न ह्यर्पितं कर्म यदप्यनुत्तमम् ॥५२॥

पदच्छेद—नैष्कर्म्यम् अपि अच्युत भाववर्जितम् न शोभते ज्ञानमलम् निरञ्जनम् ।
कुतः पुनः शश्वद् अभद्रम् ईश्वरे नहि अर्पितम् कर्मयत् अपि अनुत्तमम् ॥

शब्दार्थ—

नैष्कर्म्यम्	१.	निष्काम कर्म तथा	कुतः पुनः	१४.	शोभा कैसे हो सकती है
अपि	४.	भी	शश्वद्	८.	सर्वदा
अच्युत	५.	भगवान की भक्ति से	अभद्रम्	९.	अमङ्गल रूप
भाववर्जितम्	६.	रहित होने पर भी	ईश्वरे	१२.	भगवान् को
न शोभते	७.	शोभा नहीं देता है	नहि अर्पितम्	१३.	अर्पण नहीं किया गया हैवह
ज्ञानमलम्	२.	पर्याप्त	कर्म यत्	११.	जो भी कर्म
निरञ्जनम् ।	३.	निर्मल ज्ञान	अपि अनुत्तमम् ।	१०.	बहुत उत्तम

श्लोकार्थ—निष्काम कर्म तथा पर्याप्त निर्मल ज्ञान भी भगवान् को भक्ति से रहित होने पर भी शोभा नहीं देता है । फिर सर्वदा अमङ्गल रूप बहुत उत्तम जो भी कर्म भगवान् को अर्पण नहीं किया गया है वह शोभा कैसे हो सकती है ॥

त्रिपञ्चाशः श्लोकः

यशःश्रियामेव परिश्रमः परो वर्णाश्रमाचारतपःश्रुतादिषु ।
अविस्मृतिः श्रीधरपादपद्मयोर्गुणानुवादश्रवणादिभिर्हरेः ॥५३॥

पदच्छेद—यशः श्रियाम् एव परिश्रमः परः वर्णाश्रम आचार तपः श्रुत आदिषु ।
अविस्मृतिः श्रीधर पाद पद्मयोः गुण अनुवाद श्रवण आदिभि हरेः ॥

शब्दार्थ—

यशः श्रियाम्	८.	यश और लक्ष्मी की प्राप्ति	अविस्मृतिः	१५.	अविचल स्मृति प्रदान करता है
एव	७.	उसका फल है केवल			
परिश्रमः परः	६.	परिश्रम किया जाता है—जो बड़ा	श्रीधर	१३.	श्री हरि के
			पादपद्मयोः	१४.	चरण कमलों की
वर्णश्राम्	१.	वर्णाश्रम के अनुकूल	गुणानुवादः	१०.	गुण लीला नाम आदिका
आचार	२.	आचरण	श्रवण	११.	श्रवण और कीर्तन
तपः	३.	तपस्या और	आदिभि	१२	आदि तो
श्रुत	४.	अध्ययन	हरेः ॥	९.	किन्तु भगवान् का
आदिषु ।	५.	आदि के लिये			

श्लोकार्थ—वर्णाश्रम के अनुकुल, आचरण, तपस्या और अध्ययन आदि के लिये जो बड़ा परिश्रम किया जाता है। उसका फल है केवल यश और लक्ष्मी की प्राप्ति। किन्तु भगवान् के गुण, लीला, नाम आदि का श्रवण और कीर्तन आदि तो श्री हरि के चरण कमलों की अविचल स्मृति प्रदान करता है ॥

चतुःपञ्चाशः श्लोकः

अविस्मृतिः कृष्णपदारविन्दयोः क्षिणोत्यभद्राणि शमं तनोति च ।
सत्त्वस्य शुद्धिं परमात्मभक्तिं ज्ञानं च विज्ञानविरागयुक्तम् ॥५४॥

पदच्छेद— अविस्मृतिः कृष्ण पदारविन्दयोः क्षिणोति अभद्राणि शमम् तनोति च ।
सत्त्वस्य शुद्धिम् परमात्म भक्तिम् ज्ञानम् च विज्ञान विराग युक्तम् ॥

शब्दार्थ—

अविस्मृतिः	३.	अविचल स्मृति	सत्त्वस्य	९.	इससे अन्तःकरण की
कृष्ण	१	श्री कृष्ण के	शुद्धिम्	१०.	शुद्धि
पदारविन्दयोः	२.	चरणों की	परमात्म	११.	परमात्मा की
क्षिणोति	५.	नाश करती है	भक्तिम्	१२.	भक्ति
अभद्राणि	४.	अमङ्गलों का	ज्ञानम् च	१६.	ज्ञान की प्राप्ति होती है
शमम्	७.	शान्ति का	विज्ञान	१३.	विज्ञान
तनोति	८.	विस्तार करती है	विराग	१४.	तथा वैराग्य से
च ।	६.	और	युक्तम् ॥	१५.	युक्त

श्लोकार्थ—श्री कृष्ण के चरणों की अविचल स्मृति अमङ्गलों का नाश करती है और शान्ति का विस्तार करती है। इससे अन्तःकरणकी शुद्धि परमात्मा की भक्ति, विज्ञान तथा वैराग्य से युक्त ज्ञान की भी प्राप्ति होती है ॥

पञ्च-पञ्चाशः श्लोकः

यूयं द्विजाग्र्या बत भूरिभागा यच्छश्वदात्मन्यखिलात्मभूतम् ।
नारायणं देवमदेवमीशमजस्रभावा भजताविवेश्य ॥५५॥

पदच्छेद—

यूयम् द्विजाग्र्याः बत भूरिभागा यत् शाश्वत् आत्मनि अखिल आत्मभूतम् ।
नारायणम् देवम् अवेदम् ईशम् अजस्र भावा भजत अविवेश्य ॥

शब्दार्थ —

यूयम्	३.	आप लोग	नारायणम्	९.	नारायण
द्विजग्र्याः	१.	द्विज श्रेष्ठों	देवम् अदेवम्	१०.	आराध्यदेव तथा स्वयं आराध्यदेव से रहित
बत	२.	हर्ष की बात है कि			
भूरिभागा	४.	बड़े भाग्यवान हैं	ईशम्	११.	भगवान् को
यत् शाश्वत्	५.	क्योंकि आप लोग निरन्तर	अजस्त्रभावा	१२.	बड़े प्रेम से
आत्मनि	६.	अपने हृदय में	भजत	१४.	भजन करते रहते हैं
अखिल	७.	सबके	अविवेशम् ॥	१३.	स्थापित करके
आत्मभूतम् ।	८.	आत्म स्वरूप			

श्लोकार्थ—द्विज श्रेष्ठों ! हर्ष की बात है कि आप लोग बड़े भाग्यवान हैं क्योंकि आप लोग निरन्तर अपने हृदय में सबके आत्मस्वरूप नारायण आराध्यदेव तथा स्वयं आराध्यदेव से रहित भगवान् को बड़े प्रेम से स्थापित करके भजन करते रहते हैं ।

षट्पञ्चाशः श्लोकः

अहं च संस्मारित आत्मतत्त्वं श्रुतं पुरा मे परमर्षिवक्त्रात् ।
प्रायोपवेशे नृपतेः परीक्षितः सदस्यृषीणां महतां च शृण्वताम् ॥५६॥

पदच्छेद—

अहम् च संस्मारित आत्मतत्त्वम् श्रुतम् पुरा मे परमर्षि वक्त्रात् ।
प्रायोपवेशे नृपतेः परीक्षितः सदसि ऋषिणाम् महताम् च शृण्वताम् ॥

शब्दार्थ—

अहम् च	१३.	आप लोगों ने मुझे	प्रायोपवेशे	२.	अनशन पर बैठे हुये
संस्मारित	१४.	स्मरण करा दिया है	नृपतेः	३.	राजा
आत्मतत्त्वम्	११.	जिस आत्मतत्व का	परीक्षितः	४.	परीक्षित की
श्रुतम्	१२.	श्रवण किया था	सदसि	५.	सभा मे
पुरा मे	१.	पूर्वकाल में मैंने	ऋषिणाम्	९.	ऋषियों के
परमर्षि	६.	परमर्षि के	महताम् च	८.	महान्
वक्त्रात् ।	७.	मुख से	शृण्वताम् ॥	१०.	सुनते हुये

श्लोकार्थ—पूर्वकाल में मैंने अनशन पर बैठे हुये राजा परीक्षित की सभा में परमर्षि के मुख से महान् ऋषियों के सुनते हुये जिस आत्मतत्व का श्रवण किया था, उसे आप लोगों ने मुझे स्मरण करा दिया है ॥

सप्तपञ्चाशः श्लोकः

एतद्वः कथितं विप्राः कथनीयोरुकर्मणः ।
माहात्म्यं वासुदेवस्य सर्वाशुभविनाशनम् ॥५७॥

पदच्छेद—

एतद्वः कथितम् विप्राः कथनीय उरु कर्मणः ।
माहात्म्यं वासुदेवस्य सर्व अशुभ विनाशनम् ॥

शब्दार्थ—

एतद्वः	१०.	यह आप लोगों को	माहात्म्यं	९.	महात्म्य
कथितम्	११.	बता दिया	वासुदेवस्य	५.	श्रीकृष्ण का
विप्राः	१.	विप्र वृन्द	सर्व	६.	समस्त
कथनीय	२.	कहने के योग्य	अशुभ	७.	अमङ्गल
उरु	३.	विशाल	विनाशनम् ॥	८.	नाशक
कर्मणः ।	४.	कर्म वाले			

श्लोकार्थ—विप्र वृन्द कहने के योग्य विशाल कर्म वाले श्रीकृष्ण का समस्त अमङ्गल नाशक महात्म्य यह आप लोगों को बता दिया है ।

अष्टपञ्चाशः श्लोकः

य एवं श्रावयेन्नित्यं यामक्षणमनन्यधीः ।
श्रद्धावान् योऽनुशृणुयात् पुनात्यात्मानमेव सः ॥५८॥

पदच्छेद—

यः एवम् श्रावयेत् नित्यम् यामक्षणम् अनन्यधीः ।
श्रद्धावान् यः अनुशृणुयात् पुनाति आत्मानम् एव सः ॥

शब्दार्थ—

यः	१.	जो	श्रद्धावान्	९.	श्रद्धालु व्यक्ति
एवम्	२.	इस प्रकार	यः	८.	और जो
श्रावयेत्	७.	सुनता है	अनुशृणुयात्	१०.	इसका श्रवण करता है
नित्यम्	३.	नित्य	पुनाति	१४.	पवित्र कर लेता है
याम-	४.	एक पहर	आत्मानम्	१३.	अन्तःकरण को
क्षणम्	५.	एक क्षण	एव	१२.	अवश्य ही
अनन्यधीः ।	६.	एकाग्रचित्त से इसे	सः	११.	वह

श्लोकार्थ—जो इस प्रकार नित्य एक पहर या एक क्षण एकाग्रचित्त से इसे सुनता है । और जो श्रद्धालु व्यक्ति इसका श्रवण करता है, वह अवश्य ही अन्तःकरण को पवित्र कर लेता है ।

एकोनषष्टितमः श्लोकः

द्वादश्यामेकादश्यां वा शृण्वन्नायुष्यवान् भवेत् ।
पठत्यनश्नन् प्रयतस्ततो भवत्यपातकी ॥५९॥

पदच्छेद—

द्वादश्याम् एकादश्याम् वा शृण्वन् आयुष्यवान् भवेत् ।
पठति अनश्नन् प्रयतः ततः भवति अपातकी ॥

शब्दार्थ—

द्वादश्याम्	१.	द्वादशी	पठति	९.	पाठ करता है
एकादश्याम्	३.	एकादशी को		७.	और जो
वा	२.	अथवा	अनश्नन्	८.	निराहार रहकर
शृण्वन्	४.	इसका श्रवण करने वाला व्यक्ति	प्रयतः	१०.	वह पवित्र और
			ततः	११.	पश्चात्
आयुष्यवान्	५.	आयुष्यवान्	भवति	१३.	होता है
भवेत् ।	६.	होता है	अपातकी ॥	१२.	अपातकी (पापशून्य)

श्लोकार्थ—द्वादशी अथवा एकादशी को इसका श्रवण करने वाला व्यक्ति आयुष्यवान होता है । और जो निराहार रहकर पाठ करता है वह पवित्र और पश्चात् अपातकी पापशून्य होता है ।

षष्टितमः श्लोकः

पुष्करे मथुरायां च द्वारवत्यां यतात्मवान् ।
उपोष्य संहितामेतां पठित्वा मुच्यते भयात् ॥६०॥

पदच्छेद—

पुष्करे मथुरायाम् च द्वारवत्यां यत् आत्मवान् ।
उपोष्य संहिताम् एताम् पठित्वा मुच्यते भयात् ॥

शब्दार्थ—

पुष्करे	३.	पुष्कर क्षेत्र	उपोष्य	७	उपवास करके
मथुरायाम्	५.	मथुरा और	संहिताम् एताम्	८	संहिता का
च	४.	और	पठित्वा	९.	पाठ करता है
द्वारवत्याम्	६.	द्वारकापुरी में	मुच्यते	११.	मुक्त हो जाता है
यत्	२.	वश में करके	भयात् ॥	१०.	वह भय से
आत्मवान् ।	१.	जो व्यक्ति इन्द्रियों को			

श्लोकार्थ—जो व्यक्ति इन्द्रियों को वश में करके पुष्कर क्षेत्र और मथुरा और द्वारका पुरी में उपवास करके इस संहिता का पाठ करता है, वह भय से मुक्त हो जाता है ॥

एकषष्टितमः श्लोकः

देवता मुनयः सिद्धाः पितरो मनवो नृपाः ।
यच्छन्ति कामान् गृणतः श्रृण्वतो यस्य कीर्तनात् ॥६१॥

पदच्छेद—

देवता मुनयः सिद्धाः पितरः मनवः नृपाः ।
यच्छन्ति कामान् गृणतः श्रृण्वतः यस्य कीर्तनात् ॥

शब्दार्थ—

देवता	५. देवता	यच्छन्ति	१२. प्रदान करते हैं
मुनयः	६. मुनि	कामान्	११. कामना
सिद्धाः	७. सिद्ध	गृणतः	२. उच्चारण
पितरः	८. पितर	श्रृण्वतः	३. और श्रवण करने वाले के
मनवः	९. मनु और	यस्य	१. इसके
नृपाः ।	१०. राजा	कीर्तनात् ॥	४. कीर्तन से

श्लोकार्थ—इसके उच्चारण और श्रवण करने वाले के कीर्तन से देवता, मुनि, सिद्ध, पितर, मनु और राजा कामना प्रदान करते हैं ॥

द्विषष्टितमः श्लोकः

ऋचो यजूंषि सामानि द्विजोऽधीत्यानुविन्दते ।
मधुकुल्या घृतकुल्याः पयःकुल्याश्च तत्फलम् ॥६२॥

पदच्छेद—

ऋचः यजूंषि सामानि द्विजः अधीत्य अनुविन्दते ।
मधुकुल्या घृतकुल्याः पयः कुल्याः च तत् फलम् ॥

शब्दार्थ—

ऋचः	२. ऋग्वेद	मधुकुल्या	८. शहद की नदी
यजूंषि	३. यजुर्वेद	घृतकुल्या	९. घी की नदी और
सामानि	४. सामवेद को	पयः	१०. दूध की नदी
द्विजः	१. द्विज	कुल्याः	८. अर्थात्
अधीत्य	५. पढ़कर उसके	च तत्	७. सुख समृद्धि
अनुविन्दते ।	११. प्राप्त करता है	फलम् ॥	६. फल स्वरूप

श्लोकार्थ—द्विज ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद को पढ़कर उसके फलस्वरूप सुख-समृद्धि अर्थात् शहद की घी की और दूध की नदी प्राप्त करता है ॥

त्रिषष्टितमः श्लोकः

पुराणसंहितामेतामधीत्य प्रयतो द्विजः ।
प्रोक्तं भगवता यत्तु तत्पदं परमं व्रजेत् ॥६३॥

पदच्छेद—

पुराण संहिताम् एताम् अधीत्य प्रयतः द्विजः ।
प्रोक्तम् भगवता यत् तु तत् पदम् व्रजेत् ॥

शब्दार्थ—

पुराण	३. पुराण	प्रोक्तम्	१२. बताया है
संहिताम्	४. संहिता का	भगवता	११. भगवान् ने
एताम्	२. इस	यत् तु	१०. जिसे स्वयम्
अधीत्य	६. अध्ययन करता है	तत्	७. उसे
प्रयतः	५. पवित्र होकर	पदम्	८. उसी पद की
द्विजः ।	१. जो द्विज	व्रजेत् ॥	९. प्राप्ति होती है

श्लोकार्थ—जो द्विज इस पुराण संहिता का पवित्र होकर अध्ययन करता है। उसे उसी पद की प्राप्ति होतो है। जिसे स्वयम् भगवान् ने बताया है ॥

चतुःषष्टितमः श्लोकः

विप्रोऽधीत्याप्नुयात् प्रज्ञां राजन्योदधिमेखलाम् ।
वैश्यो निधिपतित्वं च शूद्रः शुद्धयेत पातकात् ॥६४॥

पदच्छेद—

विप्रः अधीत्य अप्नुयात् प्रज्ञाम् राजन्यः उदधि मेखलाम् ।
वैश्यः निधि पतित्वम् च शूद्रः शुद्धयेत् पातकात् ॥

शब्दार्थ—

विप्रः	१. ब्राह्मण	वैश्य	८. वैश्य
अधीत्य	२. इसे पढ़कर	निधि	९. खजाने का
आप्नुयात्	४. लाभ प्राप्त करे	पतित्वम्	१०. स्वामित्व
प्रज्ञाम्	३. विवेक बुद्धि से	च शूद्र	११. और शूद्र
राजन्यः	५. क्षत्रिय	शुद्धयेत्	१३. शुद्ध हो जाता है
उदधि	६. समुद्र पर्यन्त	पातकात् ॥	१२. पातकों से
मेखलाम् ।	७. भूमण्डल का राज्य करे		

श्लोकार्थ—ब्राह्मण इसे पढ़कर विवेक बुद्धि से लाभ प्राप्त करे। क्षत्रिय समुद्र पर्यन्त भूमण्डल का राज्य करेगा, वैश्य खजाने का स्वामित्व और शूद्र पातकों से शुद्ध हो जाता है ॥

पञ्चषष्टितमः श्लोकः

कलिमलसंहतिकालनोऽखिलेशो हरिरितरत्र न गीयते ह्यभीक्ष्णम् ।
इह तु पुनर्भगवानशेषमूर्तिः परिपठितोऽनुपदं कथाप्रसङ्गैः ॥६५॥

पदच्छेद—

कलिमल संहति कालनः अखिलेशः हरिः इतरत्र न गीयते हि अभीक्ष्णम् ।
इहतु पुनः भगवान् शेषमूर्तिः परिपठितः अनुपदम् कथा प्रसङ्गैः ॥

शब्दार्थ—

कलिमल	१.	कलि के मलों के	इह तु	१०.	इस पुराण में तो
संहति	२.	समूह को	पुनः	९.	फिर
कालनः	३.	ध्वस्त करने वाले	भगवान्	१४.	भगवान् का ही
अखिलेशः	४.	सब के प्रभु	शेष मूर्तिः	१५.	सर्व स्वरूप
हरिः	५.	हरि	परिपठितः	१६.	वर्णन हुआ है
इतरत्र	६.	अन्य पुराणों में	अनुपदम्	११.	प्रत्येक
न गीयते	८.	नहीं गाये गये हैं	कथा	१२.	कथा
हि अभीक्ष्णम् ।	७.	निरन्तर	प्रसङ्गैः ॥	१३.	प्रसङ्ग में

श्लोकार्थ—कलिमलों के समूह को ध्वस्त करने वाले सब के प्रभु हरि अन्य पुराणों में निरन्तर गाये गये हैं। फिर प्रत्येक कथा प्रसङ्ग में भगवान् का ही सर्व स्वरूप वर्णन हुआ है ॥

षट्षष्टितमः श्लोकः

तमहमजमनन्तमात्मतत्त्वं जगदुदयस्थितिसंयमात्मशक्तिम् ।
द्युपतिभिरजशक्रशङ्कराद्यैर्दुरवसितस्तवमच्युतं नतोऽस्मि ॥६६॥

पदच्छेद—

तम् अहम् अजम् अनन्तम् आत्मतत्त्वम् जगत् उदय स्थिति संयमात्म शक्तिम् ।
द्युपतिभिः अजशक्र शङ्कराद्यैः दुरवसित स्तवम् अच्युतम् नतः अस्मि ॥

शब्दार्थ—

तम् अहम्	१.	मैं उन	द्युपतिभिः	८.	तथा सूर्य
अजम् अनन्तम्	२.	अजन्मा अनन्त	अजशक्र	९.	ब्रह्मा, इन्द्र
आत्म तत्त्वम्	३.	आत्म तत्वम् स्वरूप	शङ्कराद्यैः	१०.	शङ्कर आदि के द्वारा
जगत् उदय	४.	संसार की उत्पत्ति	दुरवसित	११.	अशम्य
स्थिति	५.	स्थिति और	स्तवम्	१२.	स्तुति वाले
संयमात्म	६.	प्रलय करने वाली	अच्युतम्	१३.	अच्युत को
शक्तिम् ।	७.	आत्म शक्ति स्वरूप	नतः अस्मि ॥	१४.	नमस्कार करता हूँ

श्लोकार्थ—मैं उन अजन्मा अनन्त आत्मतत्व स्वरूप संसार की उत्पत्ति स्थिति और प्रलय करने वाली आत्म शक्ति स्वरूप तथा सूर्य, ब्रह्मा, इन्द्र, शङ्कर आदि के द्वारा अशम्य स्तुति वाले अच्युत को नमस्कार करता हूँ ॥

सप्तषष्टितमः श्लोकः

उपचित्तनवशक्तिभिः स्व आत्मन्युपरचितस्थिरजङ्गमालयाय ।
भगवत उपलब्धिमात्रधाम्ने सुरऋषभाय नमः सनातनाय ॥६७॥

पदच्छेद—

उपचित्त नव शक्तिभिः स्व आत्मनि उपरचित्त स्थिर जङ्गम आलयाय ।
भगवते उपलब्धिमात्र धाम्ने सुर ऋषभाय नमः सनातनाय ॥

शब्दार्थ—

उपचित्त	२.	बढ़ी हुई (प्रकृति आदि)	भगवते	१३.	भगवान् को
नवशक्तिभिः	३.	नौशक्तियों द्वारा	उपलब्धि	९.	अनुभूति स्वरूप
स्वआत्मनि	१.	अपनी स्वरूप में	मात्र	८.	केवल
उपरचित्त	७.	सृष्टि करने वाले	धाम्ने	१०.	परम पदवाले
स्थिर	५.	अचर	सुर	११.	देवताओं में
जङ्गम	४.	चर	ऋषभाय	१२.	श्रेष्ठ
आलयाय ।	६.	जगत् की	नमः सनातनाय॥	१४	सनातन नमस्कार है ।

श्लोकार्थ—अपनी स्वरुप में बढ़ी हुई प्रकृति आदि नौशक्तियों द्वारा चर-अचर जगत की सृष्टि वाले केवल अनुभूति स्वरुप परम पद वाले देवताओं में श्रेष्ठ सनातन भगवान को नमस्कार है ॥

अष्टषष्टितमः श्लोकः

स्वसुखनिभृतचेतास्तद्व्युदस्तान्यभावो ऽप्यजितरुचिरलीलाकृष्टसारस्तदीयम् ।
व्यतनुत कृपया यस्तत्त्वदीपं पुराणं तमखिलवृजिनघ्नं व्याससूनुं नतोऽस्मि॥६८॥

पदच्छेद—

स्व सुख निभृत चेताः तद् व्युदस्त अन्य भावः अपि अजित रुचिरलीला आकृष्टसारस्तदीयम् ।
व्यतनुत कृपयायस्तत्त्वदीपम् पुराणम् तम अखिल वृजिनघ्नम् व्याससूनुम् नतः अस्मि ॥

शब्दार्थ—

स्वसुख	१.	अपने आनन्द में	व्यतनुत	१०.	विस्तार किया
निभृतचेताः	२.	निमग्न	कृपया	९.	कृपया
तद्व्युदस्त	३.	चित्त वाले	यः तत्त्वदीपम्	११.	जिन्होंने तत्व को प्रकाशित करने वाले इस
अन्यभावः	४.	इसलिये निवृत्त	पुराणम्	१२.	महापुराण का
अपिअजित	५.	द्वैतभाव होने पर भी	तम अखिल	१२.	उन समस्त
रुचिर लीला	६.	भगवान् की मनोहर लीलाओं से	वृजिनघ्नम्	१३.	पापों का नाश करने वाले
आकृष्ट सारः	७.	आकृष्ट वृत्ति वाले	व्यास सूनुम्	१४.	व्यास पुत्र शुक्राचार्य को
तदीयम् ।	८.	भगवान् ने	नतः अस्मि ॥	१५.	मैं नमस्कार करता हूँ

श्लोकार्थ—अपने आनन्द में निमग्न चित्त वाले इसलिये निवृत्त द्वैतभाव होने पर भी भगवान् की मनोहर लीलाओं से आकृष्ट वृत्तिवाले भगवान् ने कृपया विस्तार किया । जिन्होंने तत्त्व को प्रकाशित करने वाले इस महापुराण का उन समस्त पापों का नाश करने वाले व्यास पुत्र शुक्राचार्य को मैं नमस्कार करता हूँ ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे
अर्थ निरूपण नाम द्वादशः अध्यायः ॥१२॥

श्रीमद्भागवतमहापुराणम्

द्वादशः स्कन्धः

त्रयोदशः अध्यायः

प्रथमः श्लोकः

यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवैः
वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुःसुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥१॥

पदच्छेद—

यं ब्रह्मा वरुण इन्द्र रुद्र मरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै वेदैः ॥
साङ्गपद क्रमोपनिषदैः गायन्ति यम सामगाः ॥
ध्यानो अवस्थितदग्दतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो ।
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥

शब्दार्थ—

यम्	१.	जिनको	ध्यान अवस्थित	१४.	ध्यान में स्थित होकर
ब्रह्मा-वरुण	२.	ब्रह्मा-वरुण	तग्दतेन मनसा	१५.	तल्लीन मन से
इन्द्र रुद्र	३.	इन्द्र-रुद्र	पश्यन्तियम्	१६.	दर्शन करते हैं
मरुतः	४.	और मरुदगण	योगिनः	१३.	जिनका योगी लोग
स्तुन्वन्ति	५.	स्तुति करते हैं	यस्य	१६.	जिनका
दिव्यैः स्तवैः	८.	दिव्य स्तुतियों से	अन्तम्	२०.	अन्तःकरण (वास्तविक रूप से)
वेदैः ।	९.	वेदों द्वारा	न विदुः	२१.	नहीं जानते हैं
साङ्गपदक्रम	७.	अंग-पद-क्रम एवन्	सुर-असुर	१७	देवता तथा दैत्य
उप निषदैः	१०.	उपनिषदों के सहित	गणाः	१८.	गण
गायन्ति	१२.	गायन करते है	देवाय	२३.	देव को
यम्	११.	जिनका	तस्मै	२२.	उन
सामगाः ।	६.	सामवेद के गायक	नमः ॥	२४.	नमस्कार है

श्लोकार्थ—जिनकी ब्रह्मा-वरुण, इन्द्र-रुद्र और मरुद्गण स्तुति करते हैं। सामवेद के गायक अंग-पद-क्रम एवम् दिव्य स्तुतियों से वेदों द्वारा उपनिषदों के सहित जिनका गायन करते हैं। जिनका योगी लोग ध्यान में स्थित होकर तल्लीन मन से दर्शन करते हैं। देवता तथा दैत्यगण जिनका अन्तः करण वास्तविक रूप से नहीं जानते हैं ॥ उन देव को नमस्कार है ॥

द्वितीयः श्लोकः

पृष्ठे भ्राम्यदमन्दमन्दरगिरिग्रावाग्रकण्डूयना-
न्निद्रालोः कमठाकृतेर्भगवतः श्वासानिलाः पान्तु वः ।
यत्संस्कारकलानुवर्तनवशाद् वेलानिभेनाम्भसां
यातायातमतन्द्रितं जलनिधेर्नाद्यापि विश्राम्यति ॥२॥

पदच्छेद—

पृष्ठे भ्राम्यद् मन्द-मन्दरगिरि ग्रावाग्र कण्डूय ना
न्निद्रालोः कमठाकृतेर्भगवतः श्वासानिलाः पान्तु वः,
यत् संस्कार कलानुवर्तन वशाद् वेलानिभेनाम्भसां ।
यातायातम तन्द्रितं जलनिधेर्नाद्यापि विश्राम्यति ॥

शब्दार्थ—

पृष्ठे	१.	पीठ पर	यत् संस्कार	१३.	जिनके संस्कार की
भ्राम्यद्	२.	घूमते हुये	कलानुवर्तन	१४.	कला के थपेड़ों से पड़ने वाले
मन्द-मन्द	३.	विशाल	वशाद	१५.	शेष रहने से
मन्दरगिरि	४.	मंदराचल की	वेलानिभेन	१६.	ज्वार भाटे के रूप में
ग्रावा अग्रवाग	५.	चट्टानों की नोक से	अम्भसाम	१८.	जल
कण्डूयना	६.	खुजलाने के कारण	यात	२०.	चढ़ता और
न्निद्रालोः	७.	सो जाने वाले	अयाताम्	२१.	उतरता है
कमठाअकृतेः	८.	कच्छपाकार	अतन्द्रितम्	२६.	निरन्तर
भगवतः	९.	भगवान् के	जलनिधे	१७.	समुद्र का
श्वासः	१०.	श्वास	न आद्य	२२.	आज
अनिला	११.	वायु	अपि	२३.	भी नहीं
पान्तु वः ॥	१२.	आप लोगों की रक्षा करें	विश्राम्यति ॥	२४.	विश्राम लेता है

श्लोकार्थ—पीठ पर घूमते हुये विशाल मंदराचल की चट्टानों की नोक से खुजलाने के कारण सो जाने वाले कच्छपाकार भगवान् के श्वास वायु आप लोगों की रक्षा करें। जिनके संस्कार की कला के थपेड़ों से पड़ने वाले शेष रहने से समुद्र का जल ज्वार भाटे के रुप में निरन्तर चढ़ता उतरता रहता है। आज भी नहीं विश्राम लेता है ॥

तृतीयः श्लोकः

पुराणसंख्यासम्भूतिमस्य वाच्यप्रयोजने ।
दानं दानस्य माहात्म्यं पाठादेश्च निबोधत ॥३॥

पदच्छेद—

पुराण संख्या सम्भूतिमस्य वाच्य प्रयोजने ।
दानम् दानस्य महात्म्यम् पाठादेः च निबोधत ॥

शब्दार्थ—

पुराण	१.	पुराणों की	दानम	७.	दान
संख्या	२.	संख्या	दानस्य	८.	दान का
सम्भुतिम्	३.	उनका जोड़	माहात्म्यम्	११.	महात्म्य के
अस्य	४.	इस ग्रन्थ का	पाठा दे	१०.	पाठ आदि को
वाच्य	५.	प्रति पाद्य विषय	च	९.	और
प्रयोजने ।	६.	प्रयोजन	निबोधत ॥	१२.	सुनिये

श्लोकार्थ—पुराणों की संख्या उनका जोड़ इस ग्रन्थ का प्रतिपाद्य विषय प्रयोजन दान, दान का और पाठादि का माहात्म्य को सुनिये ॥

चतुर्थः श्लोकः

ब्राह्मं दशसहस्राणि पाद्मं पञ्चोनषष्टि च ।
श्रीवैष्णवं त्रयोविंशच्चतुर्विंशति शैवकम् ॥४॥

पदच्छेद—

ब्राह्मम् दशसहस्राणि पाद्मम् पञ्चोन षष्टि च ।
श्रीवैष्णवम् त्रयोविंशत् चतुर्विंशति शैवकम् ॥

शब्दार्थ—

ब्राह्मम्	१.	ब्रह्मपुराण में	श्रीवैष्ठावम्	६.	श्री विष्णु पुराण में
दशसहस्राणि	२.	दस हजार श्लोक	त्रयोविंशत्	७.	तेईस हजार
पाद्मम्	३	पद्म पुराण में	चतुर्विंशति	९.	चौबीस हजार हैं
पञ्चोन	४.	पाँच कम	शैवकम् ॥	८.	शिव पुराण में
षष्टि च ।	५.	साठ पचपन हजार और			

श्लोकार्थ—ब्रह्म पुराण में दस हजार श्लोक, पद्म पुराण में पाँच कम साठ पचपन हजार और श्रीविष्णु पुराण में तेईस हजार, चौबिस हजार शिव पुराण में हैं ॥

पञ्चमः श्लोकः

दशाष्टौ श्रीभागवतं नारदं पञ्चविंशतिः ।
मार्कण्डं नव वाह्नं च दशपञ्च चतुःशतम् ॥५॥

पदच्छेद—

दश अष्टौ श्री भागवतम् नारदम् पञ्चविंशतिः ।
मार्कण्डयम् नव वाह्नम् च दश पञ्च चतुःशतम् ॥

शब्दार्थ—

दश अष्टौ	२. अठारह हजार	मार्कण्डयम्	७. मार्कण्डेय पुराण में और
श्रीभागवतम्	१. श्रीमद्भागवत में	नववाह्नम्	८. नौ हजार अग्नि पुराण में
नारदम्	३. नारद पुराण में	च दश पञ्च	९. पन्द्रह हजार
पञ्च	५. पाच्चीस	चतुःशतम् ॥	१०. चार सौ श्लोक हैं
विंशतिः ।	६. हजार		

श्लोकार्थ—श्रीमद्भागवत में अठारह हजार, नारद पुराण में पच्चीस हजार मार्कण्डेय पुराण में नौ हजार और अग्नि पुराण में, पन्द्रह हजार चार सौ श्लोक संख्या है ॥

षष्ठः श्लोकः

चतुर्दश भविष्यं स्यात्तथा पञ्चशतानि च ।
दशाष्टौ ब्रह्मवैवर्तं लिङ्गमेकादशैव तु ॥६॥

पदच्छेद—

चतुर्दशः भविष्यम् स्यात तथा पञ्च शतानि च ।
दशाष्टौ ब्रह्मवैवर्तम् लिङ्गम् एकादश एव तु ॥

शब्दार्थ—

चतुर्दशः	२. चौदह हजार	दशाष्टौ	७. अठारह हजार
भविष्यम्	१. भविष्य पुराण में	ब्रह्मवैवर्तम्	६. ब्रह्मवैवर्त में
स्यात्	५. होने चाहिये	लिङ्गम्	८. लिङ्ग पुराण में
तथा	३. तथा	एकादश	९. ग्यारह हजार
पञ्चशतानि च।	४. केवल पाँच सौ श्लोक	एव	११. ही
		तु ॥	११. हैं

श्लोकार्थ—भविष्य पुराण में चौदह हजार तथा केवल पाँच सौ श्लोक होने चाहिये ब्रह्मवैवर्त में अठारह हजार, लिङ्ग पुराण में ग्यारह हजार ही हैं ॥

सप्तमः श्लोकः

चतुर्विंशति वाराहमेकाशीतिसहस्रकम् ।
स्कान्दं शतं तथा चैकं वामनं दश कीर्तितम् ॥७॥

पदच्छेद—

चतुः विंशति वाराहम् एकाशीति सहस्रकम् ।
स्कान्दम् शतम् तथा च ऐकम् वामनम् दशकीर्तितम् ॥

शब्दार्थ—

चतुः विंशति	२. चौबीस हजार	शतम्	७. सौ
वारहम्	१. वाराह पुराण में	तथा च	८. तथा
एकाशीति	४. इक्यासी	एकम्	६. एक
सहस्त्रकम्	५. हजार	वामनम्	९. वामन पुराण में
स्कान्दम्	३. स्कन्द पुराण में	दशकीर्तितम् ॥	१०. दश हजार हैं

श्लोकार्थ—वाराहपुराण में चौबीस हजार, स्कन्द पुराण में इक्यासी हजार एक सौ तथा वामन पुराण में दस हजार हैं ॥

अष्टमः श्लोकः

कौर्मं सप्तदशाख्यातं मात्स्यं तत्तु चतुर्दश ।
एकोनविंशत्सौपर्णं ब्रह्माण्डं द्वादशैव तु ॥८॥

पदच्छेद—

कौर्मम् सप्त दशाख्यातम् मात्स्यम् तत् तु चतुर्दश ।
एकोनविंशति सौवर्णम् ब्रह्माण्डम् द्वादश एव तु ॥

शब्दार्थ—

कौर्मम्	१. कूर्म पुराण	एकोनविंशति	८. उन्नीस हजार
सप्तदश	२. सत्रह हजार का	सौवर्णम्	७. गरुड़ पुराण में
आख्यातम्	३. कहा गया है	ब्रह्माण्डम्	९. ब्रह्माण्ड पुराण में
मात्स्यम्	४. मत्स्य	द्वादश	१०. बारह हजार
तत् तु	५. पुराण में	एव	१२. ही श्लोक संख्या है
चतुर्दश ।	६. चौदह हजार श्लोक हैं	तु ॥	११. और

श्लोकार्थ—कूर्म पुराण सत्रह हजार का कहा गया है। मत्स्य पुराण में चौदह हजार श्लोक हैं। गरुड़ पुराण में उन्नीस हजार और ब्रह्माण्ड पुराण में बारह हजार ही श्लोक संख्या है ॥

नवमः श्लोकः

एवं पुराणसन्दोहश्चतुर्लक्ष उदाहृतः ।
तत्राष्टादशसाहस्रं श्रीभागवतमिष्यते ॥९॥

पदच्छेद—

एवम् पुराण सन्दोहः चतुर्लक्ष उदाहृतः ।
तत्र अष्टादश साहस्रम् श्री भागवत मिष्यते ॥

शब्दार्थ—

एवम्	१. इस प्रकार	तत्र	६. उनमें
पुराण	२. पुराणों के श्लोक	अष्टादश	७. अठारह
सन्दोहः	३. समूह को	साहस्रम्	८. हजार श्लोकों का
चतुर्लक्ष	४. चार लाख	श्रीभागवत	९. श्री भागवत
उदाहृतः ।	५. बताया गया है	मिष्यते ॥	१०. कहा जाता है

श्लोकार्थ—इस प्रकार पुराणों के श्लोक समूह को चार लाख बताया गया है। उनमें अठारह हजार श्लोकों का श्रीभागवत कहा जाता है ॥

दशमः श्लोकः

इदं भगवता पूर्वं ब्रह्मणे नाभिपङ्कजे ।
स्थिताय भवभीताय कारुण्यात् सम्प्रकाशितम् ॥१०॥

पदच्छेद—

इदम् भगवता पूर्वम् ब्रह्मणे नाभि पङ्कजे ।
स्थिताय भव भीताय कारुण्यात् सम्प्रकाशितम् ॥

शब्दार्थ—

इदम्	२. यह पुराण	स्थिताय	६. स्थित एवं
भगवता	३. भगवान् विष्णु को	भव	७. संसार से
पूर्वम्	१. पहले पहल	भीताय	८. भयभीत
ब्रह्मणे	६. ब्रह्मा पर	कारुण्यात्	१०. करुणा वश
नाभि	४. अपने नाभि	सम्प्रकाशितम् ॥	११. प्रकाशित किया था
पङ्कजे ।	५. कमल		

श्लोकार्थ—पहले पहल यह पुराण भगवान विष्णु को।अपने नाभि कमल ब्रह्मा पर संसार सागर से भयभीत स्थित एवम् करुणा वश प्रकाशित किया था ॥

एकादशः श्लोकः

आदिमध्यावसानेषु वैराग्याख्यानसंयुतम् ।
हरिलीलाकथाव्रातामृतानन्दितसत्सुरम् ॥११॥

पदच्छेद—

आदि मध्य अवसानेषु वैराग्य आख्यान संयुतम् ।
हरि लीला कथा व्रात अमृत आनन्दित सत्सुरम् ॥

शब्दार्थ—

आदि	१.	यह पुराण आदि	हरि लीला	७.	भगवान् की लीला
मध्य	२.	मध्य और	कथा	८.	कथा
अवसानेषु	३.	अन्त में	व्रात	९.	रूपी
वैराग्य	४.	वैराग्य उत्पन्न करने वाली	अमृत	१०.	अमृत से
आख्यान	५.	कथाओं से	आनन्दित	११.	आनन्दित
संयुतम् ।	६.	युक्त है और	सत्सुरम् ॥	१२.	सज्जन तथा देवता वालाहै

श्लोकार्थ—यह पुराण आदि मध्य और अन्त में वैराग्य उत्पन्न करने वाली कथाओं से युक्त है और भगवान् की लीला कथा रूपी अमृत से आनन्दित सज्जन तथा देवता वाला है ॥

द्वादशः श्लोकः

सर्ववेदान्तसारं यद् ब्रह्मात्मैकत्वलक्षणम् ।
वस्त्वद्वितीयं तन्निष्ठं कैवल्यैकप्रयोजनम् ॥१२॥

पदच्छेद—

सर्व वेदान्त सारम् यद् ब्रह्मात्म एकत्व लक्षणम् ।
वस्तु अद्वितीयम् तन्निष्ठं कैवल्य एकम् प्रयोजनम् ॥

शब्दार्थ—

सर्व	२.	सम्पूर्ण	वस्तु	९.	वस्तु
वेदान्त	३.	वेदान्त का	अद्वितीयम्	८.	अद्वितीय
सारम्	४.	सार है	तत्निष्ठम्	१०.	वही इसका परिपाद्य विषय है
यद्	१.	जो	कैवल्य	१२.	तथा केवल्य मोक्ष
ब्रह्मात्म	५.	ब्रह्म और आत्मा का	एकम्	११.	एक मात्र
एकत्व	६.	एकत्व	प्रयोजनम् ॥	१३.	प्रयोजन है ।
लक्षणम् ।	७.	रूप			

श्लोकार्थ—जो सम्पूर्ण वेदान्त का सार है । ब्रह्म और आत्मा का एकतत्त्व रूप अद्वितीय वस्तु वही इसका परिपाद्य विषय है । तथा एक मात्र कैवल्य मोक्ष इसका प्रयोजन है ॥

त्रयोदशः श्लोकः

प्रौष्ठपद्यां पौर्णमास्यां हेमसिंहसमन्वितम् ।
ददाति यो भागवतं स याति परमां गतिम् ॥१३॥

पदच्छेद—

प्रौष्ठ पद्याम् पौर्णमास्याम् हेम सिंह समन्वितम् ।
ददाति यो भागवतम् सः याति परमाम् गतिम् ॥

शब्दार्थ—

प्रौष्ठ	२. भाद्र	ददाति	६. दान करता है
पद्याम्	३. पद मास की	यो	१. जो पुरुष
पौर्णमस्याम्	४. पूर्णिमा के दिन	भागवताम्	८. भागवत का
हेम	५. सोने के	सः याति	१२. वह प्राप्त करता है
सिंह	६. सिंहासन पर	परमाम्	१०. परम
सतन्वितम् ।	७. रखकर	गतिम् ।	११. गति को

श्लोकार्थ—जो पुरुष भाद्र पद मास की पूर्णिमा के दिन सोने के सिंहासन पर रखकर भागवत को दान करता है । वह परम गति को प्राप्त करता है ॥

चतुर्दशः श्लोकः

राजन्ते तावदन्यानि पुराणानि सतां गणे ।
यावन्न दृश्यते साक्षाच्छ्रीमद्भागवतं परम् ॥१४॥

पदच्छेद—

राजन्ते तावत् अन्यानि पुराणानि सताम् गणे ।
यावत् न दृश्यते साक्षात् श्री मद्भागवतम् परम् ॥

शब्दार्थ—

राजन्ते	६. शोभित होते हैं	यावत्	७. जब तक
तावत्	५. तभी तक	न दृश्यते	१२. नहीं दिखाई देता है
अन्यानि	३. अन्य	साक्षात्	६. स्वयम्
पुराणानि	४. पुराण	श्रीमद्	१०. श्रीमद्
सताम्	१. सज्जनों की	भागवतम्	१०. भागवत पुराण
गणे ।	२. गोष्ठी में	परम् ॥	८. सर्व श्रेष्ठ

श्लोकार्थ—सज्जनों की गोष्ठी में अन्य पुराण तभी तक शोभित होते हैं । जब तक सर्व श्रेष्ठ स्वयम् श्रीमद्भागवतपुराण नहीं दिखाई देता है ॥

पञ्चदशः श्लोकः

सर्ववेदान्तसारं हि श्रीभागवतमिष्यते ।
तद्रसामृततृप्तस्य नान्यत्र स्याद्रतिः क्वचित् ॥१५॥

पदच्छेद—

सर्ववेदान्त सारम् हि श्री भागवतमिष्यते ।
तत् रसामृत तृप्तस्य न अन्यत्र स्यात् रतिः क्वचित् ॥

शब्दार्थ—

सर्व	१. सर्व	रसामृत	७. रस रूप अमृत से
वेदान्त	२. वेदान्तों का	तृप्तस्य	८. तृप्त हुए व्यक्ति का
सारम् हि	३. सार (निचोड़)	न अन्यत्र	११. और पुराण में नहीं
श्री भागवत-	४. श्रीमद्भागवत	स्यात्	१२. होता
मिष्यते ।	५. माना जाता है	रतिः	९. अनुराग
तत्	६. इसके	क्वचित् ॥	१०. किसी

श्लोकार्थ—सर्व वेदान्तों का सार निचोड़कर श्रीमद्भागवत माना जाता है । इसके रस रूप अमृत से तृप्त हुये व्यक्ति का अनुराग किसी और पुराण में नहीं होता है ॥

षोडशः श्लोकः

निम्नगानां यथा गङ्गा देवानामच्युतो यथा ।
वैष्णवानां यथा शम्भुः पुराणानामिदं तथा ॥१६॥

पदच्छेद—

निम्नगानाम् यथा गङ्गा देवानाम् अच्युतो यथा ।
वैष्णवानाम् यथा शम्भुः पुराणानाम् इदम् तथा ॥

शब्दार्थ—

निम्नगानाम्	२. नदियों में	वैष्णवानाम्	८. वैष्णवों में
यथा	१. जैसे	यथा	७. जैसे
गङ्गा	३. गङ्गा हैं	शम्भुः	९. शङ्कर श्रेष्ठ हैं
देवानाम्	५. देवताओं में	पुराणानाम्	११. पुराणों में
अच्युतो	६. विष्णु हैं	इदम्	१२. यह श्रीमद्भागवत है
यथा ।	४. वैसे ही	तथा ॥	१०. वैसे ही

श्लोकार्थ—जैसे नदियों में गङ्गा हैं, वैसे ही देवताओं में विष्णु हैं । जैसे वैष्णवों में शङ्कर हैं । वैसे ही पुराणो में यह श्रीमद्भागवत है ॥

सप्तदशः श्लोकः

क्षेत्राणां चैव सर्वेषां यथा काशी ह्यनुत्तमा ।
तथा पुराणव्रातानां श्रीमद्भागवतं द्विजाः ॥१७॥

पदच्छेद—

क्षेत्राणाम् च एव सर्वेषाम् यथा काशी हि अनुत्तमा ।
तथा पुराण व्रातानाम् श्रीमद् भागवतम् द्विजाः ॥

शब्दार्थ—

क्षेत्राणाम्	५.	क्षेत्रों में	तथा	८.	वैसे ही
च एव	४.	ही	पुराण	९.	पुराण
सर्वेषाम्	३.	सब	व्रातानाम्	१०.	समूहों में
यथा	२.	जैसे	श्रीमद्	११.	श्रीमद्
काशी	६.	काशी	भागवतम्	१२.	भागवत है
हि अनुत्तमा ।	७.	सर्व श्रेष्ठ है	द्विजाः ॥	१.	हे द्विजगण

श्लोकार्थ—

हे द्विजगण ! जैसे सब ही क्षेत्रों में काशी सर्व श्रेष्ठ है । वैसे ही पुराण समूह में श्रीमद्भागवत सर्व श्रेष्ठ है ॥

अष्टादशः श्लोकः

श्रीमद्भागवतं पुराणममलं यद्वैष्णवानां प्रियं
यस्मिन् पारमहंस्यमेकममलं ज्ञानं परं गीयते ।
तत्र ज्ञानविरागभक्तिसहितं नैष्कर्म्यमाविष्कृतं
तच्छृण्वन् विपठन् विचारणपरो भक्त्या विमुच्येन्नरः ॥१८॥

पदच्छेद—

श्रीमद्भागवतम् पुराणम् अमलम् यत् वैष्णवानाम् प्रियम् ।
यस्मिन् पारमहंस्यमेकममलम् ज्ञानम् परम् गीयते ॥
तत्र ज्ञान विराग भक्ति सहितम् नैष्कर्म्यम् आविष्कृतम् ।
तत् शृण्वन् विपठन् विचारणपरः भक्त्या विमुच्येत् नरः ॥

शब्दार्थ—

श्रीमद्भागवतम्	१.	श्रीमद्भागवत	तत्र	१२.	इस पुराण में
पुराणम्	२.	पूराण	ज्ञान विराग	१३.	ज्ञान वैराग्य और
अमलम्	३.	निर्दोष है	भक्ति	१४.	भक्ति
यत् वैष्णावानाम्	४.	जो वैष्णवों का	सहितम्	१५.	सहित
प्रियम् यस्मिन्	५.	प्रिय है जिसमें	नैष्कर्म्यम्	१६.	कर्मों की आत्यन्तिक निवृत्ति का
पारमहंस्यम्	६.	परमहंस सम्बन्धी	आविष्कृतम्	१७.	आविष्कार किया गया है
एकम्	७.	अद्वितीय तथा	तत् शृण्वन्	१८.	इसका श्रवण
अमलम्	८.	माया क्लेश से रहित	विपठन्	१९.	पठन और
ज्ञानम्	९.	ज्ञान का	विचारण	२०.	मनन
			परः भक्त्या	२१.	भक्ति पूर्वक करने से
परम्	१०.	सर्वश्रेष्ठ	विमुच्येत्	२३.	मुक्त हो जाता है
गीयते ।	११.	मान किया गया है	नरः ॥	२२.	मनुष्य

श्लोकार्थ—श्री मद्भागवत पुराण निर्दोष है । जो वैष्णावों का प्रिय है, जिसमें परमहंस सम्बन्धी अद्वितीय तथा माया क्लेश से रहित ज्ञान का सर्वश्रेष्ठ गान किया गया है । इस पुराण में ज्ञान, वैराग्य और भक्ति सहित कर्मों की आत्यन्तिक निवृत्ति का आविष्कार किया गया है । इसका श्रवण, पठन और मनन भक्ति पूर्वक करने से मनुष्य मुक्त हो जाता है ॥

एकोनविंशः श्लोकः

कस्मै येन विभासितोऽयमतुलो ज्ञानप्रदीपः पुरा
तद्रूपेण च नारदाय मुनये कृष्णाय तद्रूपिणा ।
योगीन्द्राय तदात्मनाथ भगवद्राताय कारुण्यत-
स्तच्छुद्धं विमलं विशोकममृतं सत्यं परं धीमहि ॥१९॥

पदच्छेद—

कस्मै येन विभासितः अयम् अतुलः ज्ञान प्रदीपः पुरा ।
तत् रूपेण च नारदाय मुनये कृष्णाय तत् रूपिणा ॥
योगीन्द्राय तत् आत्मना अथ भगवद्राताय कारुण्यतः ।
तत् शुद्धम् विमलम् विशोकम् अमृतम् सत्यम् परम धीमहि ॥

शब्दार्थ—

कस्मै	२.	ब्रह्मा के लिये	योगीन्द्राय	१५.	योगीन्द्र शुक को और
येन	३.	नारायण ने	तत्	१४.	व्यास ने
विभासितः	७.	प्रकाशित किया	आत्मना अथ	१३.	पुनः उसी रूप से
अयम्	४.	उस	भगवद्राताय	१७.	राजा परीक्षित को उपदेश किया
अतुलः	५.	अनुपम	कारुण्यतः	१६.	उन्होंने करुणा वश
ज्ञान प्रदीपः	६.	ज्ञान रूप दीपक को	तत् शुद्धम्	१८.	उन शुद्ध
पुरा	१.	पूर्व काल में	विमलम्	१९.	माया मल से शून्य
तत् रूपेण	८.	फिर उसी ब्रह्मा के रूप से नारायण ने	विशोकम्	२०.	शोक रहित
च नारदाय	९.	और नारद	अमृतम्	२१.	अमृत स्वरूप
मुनये	१०.	मुनि को	सत्यम्	२२.	सत्य स्वरूप
कृष्णाय	१२.	कृष्ण द्वैपायन को	परम धीमहि ॥	२३.	परमेश्वर का हम ध्यान करते हैं
तत्रूपिणा ॥	११.	उसी रूप से			

श्लोकार्थ—पूर्वकाल में ब्रह्मा के लिये नारायण ने इस अनुपम ज्ञानरूप दीपक को प्रकाशित किया। फिर उसी ब्रह्मा के रूप से नारायण ने और नारद मुनि को कृष्ण द्वैपायन को उसी रूप से फिर उसी से व्यास ने, योगीन्द्र शुक को और राजा परीक्षित को उपदेश किया। उन्होंने करुणावश उन शुद्ध मायामय से शून्य शोक रहित, अमृत स्वरूप, सत्य स्वरूप परमेश्वर का हम ध्यान करते हैं ॥

विंशः श्लोकः

नमस्तस्मै भगवते वासुदेवाय साक्षिणे ।
यः इदं कृपया कस्मै व्याचचक्षे मुमुक्षवे ॥२०॥

पदच्छेद—

नमः तस्मै भगवते वासुदेवाय साक्षिणे ।
यः इदम् कृपया कस्मै व्याचचक्षे मुमुक्षवे ॥

शब्दार्थ—

नमः	५.	नमस्कार है	यः	६.	जिन्होंने
तस्मै	१.	उन	इदम्	१०.	इस पुराण का
भगवते	३.	भगवान्	कृपया	७.	कृपा करके
वासुदेवाय	४.	वासुदेव को	कस्मै	८.	ब्रह्मा जी को
साक्षिणे ।	२.	साक्षिरूप	व्याचचक्षे	११.	व्याख्यान किया था
			मुमुक्षवे ॥	९.	मोक्षाभिलाषी

श्लोकार्थ—उन साक्षिरूप भगवान् वासुदेव को नमस्कार है। जिन्होंने कृपा करके ब्रह्मा जी को मोक्षाभिलाषी इस पुराण का व्याख्यान किया था ॥

एकविंशः श्लोकः

योगीन्द्राय नमस्तस्मै शुकाय ब्रह्मरूपिणे ।
संसारसर्पदष्टं यो विष्णुरातममूमुचत् ॥२१॥

पदच्छेद—

योगीन्द्राय नमः तस्मै शुकाय ब्रह्म रूपिणे ।
संसार सर्प दष्टम् यः विष्णु रातम् अमूमुचत् ॥

शब्दार्थ—

योगीन्द्राय	४.	योगीन्द्र	संसार	८.	संसार रूपी
नमः	६.	नमस्कार है	सर्प	९.	सर्प से
तस्मै	१.	उन	दष्टम्	१०.	डसे हुये
शुकाय	५.	शुक को	यः	७.	जिन्होंने
ब्रह्म	२.	ब्रह्म	विष्णुरातम्	११.	परीक्षित को
रूपिणे ।	३.	रूपी	अमूमुचत् ॥	१२.	मुक्त किया

श्लोकार्थ—उन ब्रह्मरूपी योगीन्द्र शुक को नमस्कार है। जिन्होंने संसार रूपी सर्प से डसे हुये परीक्षित को मुक्त किया ॥

द्वाविंशः श्लोकः

भवे भवे यथा भक्तिः पादयोस्तव जायते ।
तथा कुरुष्व देवेश नाथस्त्वं नो यतः प्रभो ॥२२॥

पदच्छेद—

भवे भवे यथा भक्तिः पादयोः तव जायते ।
तथा कुरुष्व देवेश नाथः त्वं नः यतः प्रभो ॥

शब्दार्थ—

भवे-भवे	२.	बार-बार जन्म ग्रहण करते रहने पर भी	तथा	८.	वैसा आप
			कुरुष्व	९.	करें
यथा	३.	जिस प्रकार	देवेश	११.	हे देवे वर !
भक्तिः	४.	मेरी भक्ति	नाथः	१३.	स्वामी हैं
पादयोः	६.	चरणों में	त्वं नः	१२.	आप हमारे
तव	५	आपके	यतः	१०.	क्योंकि
जायते ।	७.	बनी रहे	प्रभो ॥	१.	हे प्रभो !

श्लोकार्थ—हे प्रभो ! बार-बार जन्म ग्रहण करते रहने पर भी जिस प्रकार मेरी भक्ति आपके चरणों में बनी रहे । वैसा ही आप करें क्योंकि हे देवेश्वर आप हमारे स्वामी हैं ॥

त्रयोविंशः श्लोकः

नामसङ्कीर्तनं यस्य सर्वपापप्रणनाशनम् ।
प्रणामो दुःखशमनस्तं नमामि हरिं परम् ॥२३॥

पदच्छेद —

नाम सङ्कीर्तनम् यस्य सर्व पाप प्रणनाशनम् ।
प्रणामः दुःख शमनः तम् नमामि हरिम् परम् ॥

शब्दार्थ—

नाम	२.	नामों का	प्रणामः	६.	और जिनके चरणों में प्रणाम
सङ्कीर्तनम्	३.	सङ्कीर्तन	दुःख	७.	दुःखों का
यस्य	१.	जिनके	शमनः तम्	८.	शमन करने वाला है उस
सर्व पाप	४.	सभी पापों को	नमामि	१०.	नमस्कार करता हूं
प्रणनाशनम् ।	५.	नष्ट कर देता है	हरिम् परम् ॥	९.	परमतत्व स्वरूप हरि को

श्लोकार्थ—जिनके नामों का सङ्कीर्तन सभी पापों को नष्ट कर देता । और जिनके चरणों में प्रणाम, दुःखों का शमन करने वाला है । उस परम तत्त्व स्वरूप हरि को नमस्कार करता हूं ॥

श्रीमद्भागवते महापुराणे वैयासिक्याम् अष्टादश साहस्रयाम्
पारमहंस्यां संहितायां द्वादशस्कन्धे त्रयोदशः अध्यायः ॥

इति श्री द्वादशः स्कन्धः समाप्तः ।

सम्पूर्णोऽयं ग्रन्थः (हरि ॐ तत्सत्)